सर्व सेवा संघ का साप्ताहिक मुख पत्र
नई दिल्ली, सोमवार, ७ अक्टूबर '७४

गान्धी जयन्ती विशेषांक
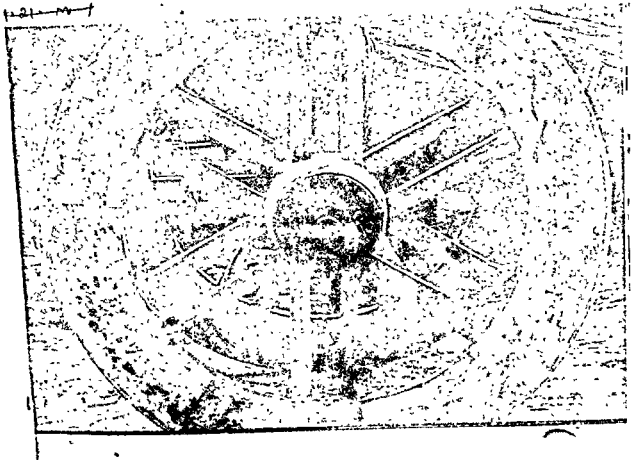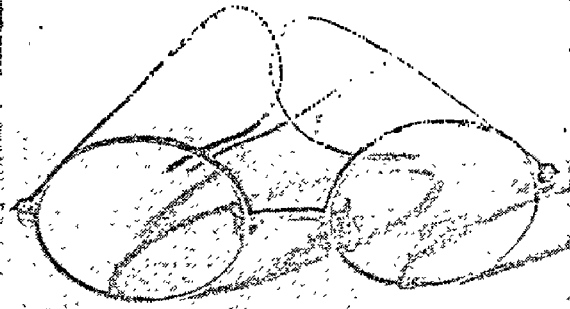
सम्पादक

राममूर्ति : भवानी प्रसाद मिश्र

कार्यकारी सम्पादक : प्रभाष जोशी

वर्ष २१ ७ अक्तूबर, '७४ अंक १

१६ राजघाट, गांधी स्मारक निधि, नई दिल्ली-११०००१

कृतज्ञ विश्वास के क्षण में

"भूदान-यज्ञ" प्रस्तुत अंक से अपने २१वें वर्ष में प्रवेश कर रहा है। यह वास्तव में उत्तरप्रदेश के 'भूदान' और 'भूदान यज्ञ बिहार' के सम्मिलित रूप में १३ अक्टूबर १९५४ को पहली बार प्रकाशित हुआ था। इसका बीस वर्ष तक किसी न किसी रूप में उन्नति की दिशा में बढ़ते रहकर निकलते जाना अपने आप में एक उपलब्धि है। किन्तु जैसा कि 'भूदान यज्ञ' के पाठक जानते हैं यह एक स्वतन्त्र पत्र रहा है, धूमायित नहीं। अर्थात् इसकी लौ जलती रही है, धुआं देती नहीं। अपने जन्म क्षण में इसे सम्पादक के रूप में धीरेन्द्र मजूमदार जैसे महान् व्यक्तित्व और विचारक प्राप्त हुए और तब से आज तक प्रत्यक्ष रूप से आचार्य विनोबा भावे, दादा धर्माधिकारी, जयप्रकाशनारायण सभी विचारक इससे जुड़े हुए हैं। 'भूदान-यज्ञ' के वे वर्ष जिनमें भूमि समस्या से सम्बन्धित हमारा अनोखा आन्दोलन गतिमान् रहा सर्वोदय की शक्ति को बड़े प्रभावकारी ढंग से प्रतिबिम्बित करते हैं। भूदान से सम्बन्धित प्रवृत्तियां उत्तरोत्तर विविध और तीव्र होती चली गयीं तथा भूदान की यह गंगा अन्त में ग्राम-स्वराज्य के सागर में समाहित हुई। इस प्रकार इस आन्दोलन के एक छोर पर किसी भी वेगवती सरिता की चरम गति और प्रवाह तथा दूसरी ओर अथाह और अपार सागर की शान्ति के दर्शन किये जा सकते हैं। बापू के नवजीवन, यंग इण्डिया, हरिजन और हरिजन सेवक पत्रों के बाद इस क्षेत्र में पत्र ने उस परम्परा को कम-ज्यादा बनाए रखा, ऐसा बिना किसी अभिमान के साथ कहा जा सकता है। जिस प्रकार उद्गम से विलय तक सरित्-प्रवाह में उत्थान-पतन और मोड़ आते हैं उसी प्रकार आन्दोलन से जुड़े हुए इस पत्र में भी समय-समय पर परिवर्तन आते रहे। किन्तु इसकी धारा कभी विलुप्त नहीं हुई, कभी सूक्ष्म तो कभी विस्तारशील-यह सदा प्रवाहित होती रही। इसकी धारा में, अहिंसक क्रान्ति के संदेशवाहक, एक ध्येय से दूसरे ध्येय तक अपनी नौकाएं चलाते रहे।

पत्र प्रारम्भ में पटना से निकला, फिर यह वाराणसी गया और उसके बाद दिल्ली आया। स्थान परिवर्तन की दृष्टि से देखें तो कहा जा सकता है कि गंगा उल्टी बही, किन्तु नदी या धारा की उपमा आखिरकार उपमा है और सभी उपमाओं की तरह यह अधूरी है। आन्दोलन का रूप जैसे-जैसे अपने केन्द्र-बिन्दु बदलता गया, कहा जा सकता है वैसे-वैसे इस साप्ताहिक पत्र के केन्द्र भी परिवर्तित होते गये। जब वाराणसी से यह साप्ताहिक पत्र दिल्ली लाया गया तब भूदान-आन्दोलन की गति में एक प्रकार का विराम आ गया था और इस बात के लक्षण प्रकट होने लगे थे कि आगे-पीछे हमारा आन्दोलन कार्यकर्ता-निष्ठ न रहकर अधिक लोकनिष्ठ होनेवाला है। दिल्ली आने के बाद साप्ताहिक के कलेवर और सामग्री में भी क्रमशः परिवर्तन दृष्टिगोचर होने लगा क्योंकि तब तक भारत सरकार के प्रति जनता के विश्वास में बहुत कुछ फर्क पड़ गया था। दिल्ली आने के बाद इसीलिए भूदान यज्ञ का स्वर केवल रचनात्मक न रहकर थोड़ा सैद्धान्तिक भी हो गया। इससे पत्र के पाठकों में दो प्रतिक्रियाएं हुई हैं। एक प्रतिक्रिया के अनुसार यह मोड़ अनिवार्य और दूसरी प्रतिक्रिया के अनुसार यह हमारे रचनात्मक दृष्टिकोण से उतना मेल खाता हुआ नहीं है। जयप्रकाशजी द्वारा बिहार में भ्रष्टाचार आदि के विरोध में आन्दोलन होने से पत्र का स्वर कुछ लोगों को राजनीतिक लगने लगा। सम्पादकों की ओर से इस बात की सदा कोशिश रही है कि गांधीजी की दृष्टि के अनुसार राजनैतिक स्वर भी नैतिक स्वर बना रहे। इसमें सन्देह नहीं है कि जयप्रकाशजी के आन्दोलन की महत्वाकांक्षा सर्वथा अहिंसात्मक आन्दोलन बने रहने की है। सर्व सेवा संघ का मुखपत्र होने के नाते भूदान यज्ञ ने अपनी यत्किंचित् शक्ति का उपयोग इस दृष्टि को स्पष्ट करने में किया है। इस विशिष्ट क्षण में हम पाठकों को यह विश्वास दिलाना चाहते हैं कि हमारा प्रयत्न सदा ही इस पत्र को अहिंसक क्रान्ति का संदेशवाहक बनाने की दिशा में रहेगा।

विनोबा ने १९५५ में ही 'भूदान यज्ञ' पत्रिका के ग्राहकों की संख्या बढ़ाने के सम्बन्ध में कहा था कि हर गांव में इसकी एक-एक प्रति जानी चाहिए। और हर शहर में भी कुछ। कुल मिलाकर देश भर में एक लाख प्रतियां जानी चाहिए। उन्होंने यह भी कहा था जब तक एक लाख प्रतियां नहीं बिकतीं तब तक काम शुरू हुआ, यह मैं नहीं मानता। इस दृष्टि से उन्होंने जगह-जगह जीवनदानियों की कल्पना की थी और सोचा था कि जब तक साहित्य प्रचार और भूदान यज्ञ के अधिक से अधिक ग्राहक बनाने की दिशा में कई लोकसेवक अपना पूरा समय और शक्ति नहीं लगाते, तब तक यह काम बनेगा नहीं। स्वीकार करना चाहिए कि बाबा की दृष्टि से अभी भूदान यज्ञ 'शुरू ही नहीं हुआ।' किन्तु यह निवेदन करना भी आवश्यक है कि पत्र-पत्रिकाओं की ग्राहक संख्या बढ़ाने का आज की दुनिया में अपना एक शास्त्र है, हम लोग अनेक कारणों से उस शास्त्र को हस्तगत नहीं कर सके। जो इस शास्त्र को अच्छी से अच्छी तरह हस्तगत करके भी गुणात्मक विकास को ही ध्यान में रखते हैं, उनके भी असफल होने के उदाहरण हैं जैसे विश्वविख्यात 'लाइफ'।

इतिहास के अंधेरे में

गाधी तुम फिक्र मत करो
हम तुम्हे जिला देंगे !
जिंदा आदमी को एक-एक क्षण जिंदा रखना
आज मुश्किल है
पर तुम तो मुर्दा हो !
तुम चाहो जब तक जी लो
एक क्षण, एक दिन, एक सप्ताह या
पूरा साल, छूट है तुम्हें पूरी-पूरी
पिरामिडों में शताब्दियों तक लाश को
जिंदा रखने का मसाला मिलता है !
बापू हम तुम्हे जिला देंगे
भाषण कविता कहानी से किंवदन्तियो
सतरानियों, शगूफों से।
'अथवा चला कर चर्खा, या कात कर सूत
या हरिजनोद्धार के नाम पर, कर
किसी हरिजन के साथ भोजन एकाध बार
अथवा किसी झोपड़ी को बुहार
या लगवा कर बत्ती
हम तुम्हारे नाम को चमका देंगे !
और यदि जिंदा रहने के इन
टोटको से सन्तोष न हो तो कोई बात नही
'विविध भारती' से भी हम
करा सकते हैं तुम्हारा विज्ञापन कि—
दूरदर्शी बनने के लिए गांधी छाप चश्मा पहनें
या मिनी के इस अगले जमाने में
उत्तम मिनी धोती के लिए
केवल एक नाम—गांधी !
अथवा समय को कैद रखने के लिए
गाधी मार्का घडी पहनें !
दूसरे जूते-चप्पल मचाते हैं शोर, कौआ रोर
उपद्रव अशांति।
शांति बनाये रखने के लिए
सरे आम फेंके या पहनें गाधी छाप चप्पल गेरण्टेड।
खरीदिए महात्मा छाप सुकाठी
अपने शीशमहल या दूकान की चौकस सुरक्षा के लिए।
बापू बहुत किया है त्याग तुमने
देश के लिए।
सह गये तीन-तीन गोलियां!
अगर लगता हो तुम्हें
हमने बरती है न्यूनता
तुम्हारे मूल्यांकन मे
और नही हो तुम्हे सन्तोष अपनी
परख के इतने पैमानो से तो
हम ढलवा कर तुम्हारे नाम का सिक्का
कर देंगे अमर हम तुम्हे इतिहास के सफो मे
हमेशा-हमेशा के लिए !
और जब कोई भूकम्प या प्रकृति का प्रकोप
लील जायगा हमें
खो जायगे हम हजारो वर्षों के धुंधलके मे
तब नयी दुनिया के लोग
उत्खनन मे पायेंगे तुम्हे नही, तुम्हारे आदर्श को नही
पर तुम्हारा सिक्का
और तब भावी इतिहासकार
कर शोध बोध उस पर, देगा वक्तव्य कि
बीसवी शताब्दी मे हिन्दुस्तान हुआ था
एक बादशाह—नाम था गाधी, सीधा-सादा
जिसे नकद कलदार की तरह समय
पड़ने पर आखरी हदों तक कैश किया गया
और मौका सध जाने पर
खोटे सिक्के की तरह फेंक दिया गया
इतिहास के अंधेरे मे
छटपटाने के लिए निरन्तर।

—विनोद गोदरे—

इसलिए हमारी कोशिश यदि संख्यात्मक विकास के स्थान पर गुणात्मक विकास को बनी रहे तो इससे भी एक प्रकार का सन्तोष मिलेगा। गीताई और गीता प्रवचन तथा स्त्री-शक्ति जागरण के लिए निकलनेवाली पद-यात्राएं और देश के विशाल राजनीतिक वातावरण को बदलने का भगीरथ प्रयत्न गुणात्मक विकास को ठीक आधार दे सकेंगे है, ऐसी हमारी श्रद्धा है। हम भविष्य मे इस श्रद्धा को अधिकाधिक दृढ करते हुए भूदान यज्ञ (सर्वोदय) के प्रकाशन का प्रयत्न करते रहेंगे।

कठिनाइयां अनन्त हैं, विशेषकर आर्थिक। किन्तु कठिन क्षण मे सहजगति को साध सकना ही पुरुषार्थ है। हम प्रयत्न करेंगे कि काम्य दिशा में कठिनाइयों के बीच भी हमारी दिशा कुंठित न हो। लेखकों और पाठकों की ओर से हमें शब्दशः जो अमूल्य सहयोग मिलता रहा है, हम इस अवसर पर उसके प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करना चाहते हैं कि हमें यह सदा की भांति भविष्य में भी मिलता रहेगा।

अहिंसा गणना नहीं गुण की शक्ति

(सुरेश ठकराल के प्रश्न, जैनेन्द्र कुमार के उत्तर)

प्रतिरोध का आन्दोलन गुजरात में हुआ, बिहार में चल रहा है और बाहर भी फैलता दीखता है। स्थानीय मुद्दे पीछे पड़ गये हैं और विधान सभा के विघटन की माग बिहार तक ही सीमित रह गयी है। प्रश्न राष्ट्रव्यापी सामने आये हैं जैसे, मुद्रा-स्फीति, महगाई, नित्य उपयोग की वस्तुओं की कमी, भ्रष्टाचार इत्यादि। जयप्रकाश नारायण बिहार मे जन सघर्ष समिति और छात्र सघर्ष समिति के द्वारा अपने आन्दोलन का सचालन कर रहे हैं। यद्यपि ग्राम-सभाओं के गठन और इस प्रकार ग्राम-स्वराज्य के सस्थापन का दूरगामी लक्ष्य उनके पास है और आगामी चुनावों में वह अपेक्षा रखते हैं कि ग्राम सभाओं के जन-सगठन अपने उम्मीदवार खड़े करेंगे और वे ही चुनाव द्वारा धारासभाओं में भेजे जायेंगे। लेकिन कुल मिलाकर ऊपर वातावरण निर्माण से अधिक सघर्ष का है और राजनीतिक दलों के लिए वह अनुकूल ही पड़ता है। मानना होगा कि आन्दोलन में मुख्यता से उन दलों की जन-धन शक्ति काम आ रही है और मानस सरकार विरोध का है। पर यदि आन्दोलन को सफल और सत्वशील बनना है तो दृष्टि को ही नहीं उसके स्वरूप को भी विधायक बनना होगा।

दिल्ली में आन्दोलन की प्रतिक्रिया होनी ही थी। कुछ पहले यहां 'सिटीजन्स फार डिमोक्रेसी (जनतत्र)' समाज की प्रस्थापना हुई थी। जयप्रकाशजी का उसमे प्रमुख भाग था और उसके सविधान में था कि राजनीतिक दलों के व्यक्ति सम्मिलित नहीं किये जा सकेंगे। सघर्ष के आरम्भ की बात इसी सी० एफ० डी० ने उठायी थी। फिर और सभाएं हुई जिनमे राजनीतिक दल भी शामिल थे। आखिर आचार्य कृपलानी के नेतृत्व में नागरिक संघर्ष समिति का निर्माण हुआ और मुझे तनिक अचरज हुआ कि इसमें जैनेन्द्रजी का भी नाम है। पहले नवनिर्माण समिति बनी थी और वहां उनके नाम की उपयुक्तता समझ में आती थी। वे गाधी-विचार के जाने-माने प्रवक्ता हैं, इसलिए उनसे मिलना आवश्यक हुआ और बातचीत आरम्भ इस प्रकार हुई—

"जैनेन्द्रजी, दिल्ली में सघर्ष समिति का निर्माण हुआ है और उसमें आपका भी नाम है। क्या आप सघर्ष वृत्ति को अहिंसक भावना के अनुकूल मानते हैं ?"

"नहीं, अनुकूल नहीं मानता।"

"फिर ?"

"फिर भी अनिवार्य मानता हू। अर्थात् सघर्ष आयेगा, लाया नहीं जायेगा।" मैं समझा नहीं, अत उनसे पूछा कि इन दो स्थितियों मे अन्तर क्या है ?

बोले, "आन्तरिकता की ओर इन दोनों मे बहुत बड़ा अन्तर है। ऊपर से वह सिर्फ शाब्दिक-सा मालूम होता होगा। राजनीतिक जन सदा ही सघर्ष की बात करते हैं और गाधीजी का जीवन भी तो सघर्षों से भरा था। पर दोनों क्या एक थे। उनमें उत्तर दक्षिण ध्रुव का सा अंतर था। गाधीजी मे बैर-विरोध का भाव नहीं था। इतना ही नहीं सचेष्ट प्रेम या अर्थात् दीखनेवाले प्रतिरोध के नीचे सघन सहानुभूति और सहयोग की आकांक्षा थी। इसके प्रतिकूल राजनीतिक सघर्षों में अन्दर तक विरोध की, विद्वेष तक की प्रेरणा रहा करती है।"

"तब आप किस आशा से सघर्ष समिति मे हैं ?" मैंने पूछा।

बोले, "मैं यदि उसमे हूँ तो इस आशा से कि समिति का मानस सघर्ष झेलेगा, उससे मुँह नहीं मोड़ेगा, पर सज्जनता, सहानुभूति से विहीन नहीं बनेगा। सत्याग्रह तो वही कहलायेगा।"

"सन्त विनोबा ने भी कुछ ऐसा ही कहा है।"

"मुझे मालूम है कि विनोबा ने संशोधनपूर्वक सत्याग्रही को सत्यग्राही बनने को कहा है। ग्रहण में आग्रह की कठोरता नहीं है, केवल सौम्यता है। विनोबा सौम्य को भी सौम्यतम चाहेंगे। पर आत्यन्तिक मृदुता अहिंसा को प्रिय हो सकती है, सत्य उससे निश्चित है।"

"अर्थात् ?"

"अर्थात्, सत्य का जहा प्रश्न है वहां आग्रह की आवश्यकता रहती ही चली जायेगी। यदि और नहीं तो इसलिए कि सम्पूर्ण सत्य अगम्य है। देह रहते सापेक्ष सत्य ही सुलभ हो सकता है। उसी के साथ व्यक्ति को जीना है और मरना है।"

"आपने अभी कहा कि ग्रहण मे आग्रह की कठोरता नहीं है, केवल सौम्यता है। फिर ग्रहण से आप कैसे सत्य के प्रति आग्रह का समर्थन कर सकते हैं ?"

"ग्रहण में सत्य के प्रति कुछ दावा भी समा सकता है। और सत्याग्रह मे वह दावा सत्य के प्रति नहीं रहता, अपने प्रति सिमट आता है। यद्यपि हम गुंजाइश रख पाते हैं कि प्रतिपक्ष को प्रतीत होनेवाला भी उतना ही नहीं बल्कि उच्चतर सत्य हो सकता है। इसमें नम्रता की मात्रा कुछ विशेष दीख पड़ती है। पर इस सूक्ष्मता को छोड़िए। मैं नहीं मानता कि सघर्ष को बचाया जा सकता है। धर्म की राह मे अधर्म से सघर्ष आ ही जायेगा, सत्य की प्रतिष्ठा में असत्य की चुनौती सामने खड़ी दिखाई देगी।"

इसी सदर्भ मे मैंने बात को विदुगत करने के लिए पूछा, "आज की स्थिति मे आप स्वय को कहां पाते हैं ?"

प्रश्न सुना और बोले, 'आज स्थिति नागरिक दृष्टि से मेरे लिए असह्य बन आयी है। पग-पग पर लगता है कि मेरी स्वाधीनता पर राज्य की पराधीनता लदी जा रही है। मेरा यह हाल है तो औरों का क्या होगा ? कारण, मैं सत्याग्रही भी हू। मुझे लगता है लोगों को उठकर भाग्य को अपने हाथ मे लेना होगा, राज्य के भरोसे नहीं चलेगा।'

राजा प्रजा के सीधे संघर्ष में कुछ अर्थ नहीं

यह सुनकर मैं मौन हो रहा। वास्तव में ही औरों का क्या हाल होगा ?

उन्होंने आगे कहा, "लोक-शक्ति के जागरण में राज्य-शक्ति के विस्तार की नीति से मुठ-भेड आये बिना रहेगी नहीं। लोक के और जनता के पास शक्ति संकल्प की ही एक हो सकती है। यह संकल्प और साहस उथला और झूठा होगा, अगर हिंसा का सहारा लेने बढेगा। ऐसे वह सबका नहीं रह जायेगा, मुट्ठी भर का हो जायेगा। उसका परिणाम लोकतन्त्रात्मक से उल्टा आयेगा। अर्थात् व्यवस्था और भी राजकेन्द्रित और तन्त्रकेन्द्रित बनेगी, स्वतन्त्र नहीं होगी।"

मैंने कहा, मैंने आपका ध्यान संघर्ष-समिति की ओर खींचा था—

तो बोले, "संघर्ष समिति में राजनीतिक दल हैं और खूब प्रमुखता से हैं। उन दलों का अहिंसा में विश्वास नहीं है। नीति के तौर पर भी अगर अहिंसा उन्हें मान्य हो तो भी उसका रूप नैतिक नहीं राजनीतिक है। उनमें विरोध ऊपर हो सकता है और निर्वैर भाव का तो अभाव तक भी संभव है। यह खतरा है। लेकिन नागरिक भूमिका पर चल रहे काम से कोई क्यों बाहर रहे ?

मुझे लगता है कि अब राजकीय और नागरिक दो ही भूमिकाएं रह गयी हैं। मध्यवर्तिता के लिए जगह नहीं बची है। या तो, आप राशन देते हैं या लेते हैं। कर अदा करते हैं, या वसूल करते हैं। यानी राजा और प्रजा की साफ दो श्रेणियां बन गयी हैं। तन्त्र यों प्रजातंत्र है, पर प्रजा ही है जो मामूली रहने-सहने के बारे में कृपाधीन और असहाय हो आयी है।

मैं नागरिक हूं, गृहस्थ हूं। भिक्षा पर नहीं जीता, पैसे पर जीता हूं। इस पैसे को लेकर हर कदम पर कानून से आमना-सामना होता है। शुद्ध अध्यात्म की भूमिका ही है जहां नितान्त अपरिग्रही और नितान्त राज्य-निरपेक्ष होकर कोई जी सकता है"। नागरिक तौर पर मैं तटस्थ रहा हूं, रहूंगा। प्रेम अर्थात् अहिंसा में मेरा विश्वास अडिग है। मेरी जीविका अब तक अनायास ही चलती रही है। पर वस्तुओं का अभाव, महंगाई और क्यू में पत्नी के घंटों खड़े रहने की परेशानी में वह अनायास किंचित डिग आयी है। प्रश्न इस तरह वैचारिक या राष्ट्रीय आदि मेरे लिए नहीं रह गया है। एकदम निजी बन गया है। भारत की प्रजा "कोऊ नृप होय हमें का हानी" की शिक्षा के तले पली-पुसी है। आज के दिन उसकी वह सन्तुष्टि की हालत नहीं रह गयी है। कुछेक खुशहालों के नीचे वह अपनी बदहाली से बेचैन हो आयी है। उसकी शान्ति भंग हो गयी है। चारों ओर अपराध बढ रहा है। भ्रष्टाचार का फैलाव हद पार कर गया है। वह सब क्षोभ एक व्यापक बदनामी और अराजकता में फूटे, इससे पहले कुछ होना चाहिए।"

मैंने कहा कि इसका अर्थ यह है कि आप दिल्ली में बनी संघर्ष समिति को बुरा नहीं मानते ?

बोले, 'हां, दिल्ली में नागरिक संघर्ष समिति के निर्माण को मैं अशुभ नहीं मानता। सर्वथा शुभ होगा वह निर्माण अगर उसका नेतृत्व अहिंसा के सम्बन्ध में सावधान रहेगा। राजा प्रजा के सीधे संघर्ष में कुछ अर्थ नहीं है।

आज का राजा मानता है कि प्रजा के मन के आधार पर वह वहां है। उसके पास फौज है, पुलिस है, कानून और दण्ड का सारा अमला है, तो वह सब का सौंपा हुआ ही तो है। ऐसा माननेवाला राजा स्वयं गद्दी से नीचे आ जाता है अगर प्रजा एक स्वर में ऐसी इच्छा प्रकट करती है। प्रश्न है कि वह इच्छा कैसे प्रकट हो ? विधान सभाओं और सदनों में शासनस्थ दल का बहुमत पड़ा है। बहस-भर वहां हो सकती है, आगे कुछ नहीं हो सकता। प्रजा सत्तात्मक संस्थाएं स्वयं प्रजा के वश की नहीं रह गयी हैं। वह उस सिक्के के प्रभाव में हो आयी हैं जो राज्य की टकसाल में ढलता और घिसता है। उस मुद्रा की स्थिति से ही आज का काम चल रहा है और धन उजले से काला ज्यादा बन गया है। ऐसी स्थिति में प्रजा के पास सीधा उपाय बचता है—असहयोग और उसके परिणाम में मिला कष्टभोग। वैधानिक रास्ता रहा नहीं, छापामार हिंसा फल नहीं ला सकती। यदि लायेगी भी तो वह फल अनिष्ट होगा।'

मैंने पूछा, 'तो फिर क्या मार्ग है ?'

बोले, 'मार्ग वही संकल्प का, बलिदान और तपश्चरण का बचता है। मेरी उसमें गहरी श्रद्धा है। उसमें हिंसा होगी तो केवल राज्य की ओर से होगी, इधर से केवल शुद्ध सत्याग्रह होगा। प्रजा स्वामी होकर अपने ही कर से पलनेवाले अफसर के नाम पर तैनात नौकरों से लड़ने तक नीचे नहीं आ सकती। वह बदजबानी तक भी नहीं उतरेगी। यह प्रजा का राजद्रोह नहीं होगा, प्रत्युत प्रजा के प्रति राज्य का ही वह द्रोह होगा। अन्त में देखा जायेगा कि प्रकृत स्वामियों के प्रति आश्रितों और अनुचरों द्वारा किया गया विद्रोह निरा निराधार और दम्भपूर्ण था। तन्त्र को फलतः आगे अधिकाधिक प्रजानुवर्ती होना होगा, अधिशासनिक वह नहीं रह सकेगा ?'

'अच्छा जैनेन्द्रजी' 'मैंने पूछा, 'बिहार में संघर्ष जो रूप ले रहा है उससे आप पूरी तरह से आश्वस्त हैं ?'

'मैं बिहार गया नहीं हूं। पर सुनता हूं कि ५ अप्रैल को मौन और मौन जुलूस निकलने पर जो वातावरण बना था, वह अब नहीं है। कार्यक्रम उग्रतर बना सुनते हैं, पर स्निग्धता उसकी कम हो रही है। अहिंसक आंदोलन की जीत इसमें नहीं है कि आप प्रतिपक्ष पर भारी पड़ जाते हैं, बल्कि इसमें है कि आपकी स्निग्धता और कष्टसहिष्णुता प्रतिपक्ष के मन पर भारी बनती है। वर्तमान आंदोलन से प्रतिपक्ष के मन की कसावट पिघलती नहीं दीखती। न लोक सामान्य का मन भीगता और विगलित हुआ सुना जाता है। प्रचार है और उसका परिणाम भी है। संघर्ष में जो एक युद्ध की ललक जाग आया करती है वैसी प्रेरणा भी है। पर समाचारों से लगता है कि जेल में बंदी सत्याग्रह के आदर्श सिद्ध नहीं हो रहे हैं। उन पर जरूर सख्ती हो रही होगी, जुल्म भी हो रहा होगा। पर्याप्त कारण दिखा होगा कि उनका संतुलन डिग जाये। पर

परीक्षा की घड़ियां भी यही होती हैं। सामने का बल भौतिक है, पाशविक है। मुकाबला होगा, इसका एक मानवीय और नैतिक बल से। इन परस्पर सम्मुख आये बलों में गुणात्मक यह अन्तर एक बार जन-मानस पर अंकित और प्रतिष्ठित हो जाता है तो समझ लीजिये कि जीत हुई रखी है।

मुझे भय है कि आंदोलन की प्रखरता को अपने ऊपर लिये जाने की बजाय उसे दूसरे के ऊपर तो नहीं पटके दिया जाता है। असेम्बली-भंग का मुद्दा आदि कुछ ऐसी चीजें हैं कि जिनमें खिंचकर आंदोलन कहीं मात्रा से ज्यादा बहिर्मुख और प्रदर्शनाभिमुख न हो जाये।...

आह्वान समूह शक्ति को दीखता है। आत्मशक्ति के प्रति वह उतना नहीं है। संयमशीलता और मर्यादाओं के प्रति अहिंसक आंदोलन में जितना भी अधिक बल हो उतना थोड़ा है। ऐसा होने से केवल राजनीतिक उद्देश्य रखनेवाले तत्व आप ही झड़ जायेंगे, आंदोलन पर हावी नहीं रह सकेंगे।

सुनता हूं कि इस प्रकार की कुछ कठिनाई जे.पी. को बिहार में अनुभव हो रही है। उनके व्यक्तित्व को तो एक नैतिक वरिष्ठता प्राप्त है। इससे काम सध जाता है। *दिल्ली में तो वैसा कुछ है नहीं।* कोई इस प्रकार का व्यक्तित्व नहीं है। इसलिए आंदोलन के स्तर के राजनीतिक बन आने का खतरा और भी बड़ा है। पर खतरे से बचना है, बल्कि अहिंसा की ओर पराक्रमी बनकर दिखाने के लिए वह खतरा चुनौती का काम दे सकता है। अहिंसा की शक्ति हमें याद रखनी चाहिए। वह गणना की नहीं, गुण की है। भीड़ की नहीं जिसमें आदमी खो जाता है। वह उस जनता की है जिसमें जन-जन अपनी अन्तःशक्ति के प्रति जाग आता है। उस दिशा की सावधानी रही तो डिमांस्ट्रेशन *कम होंगे, जिसके लिए फण्ड की जरूरत हुआ* करती है। राजनीति उस रास्ते फिसलकर भ्रष्टाचार में जा पहुंची है। मानना होगा कि पग-पग पर पैसे की जरूरत पड़ती है, बड़े काम के लिए बड़े पैसे की जरूरत होती है। सरकार को सदा बड़े से और बड़े कामों की अपेक्षा करती है। इसलिए बड़ा रुपया उसे चाहिए। रास्ते में उसके भ्रष्टाचार आता है *तो क्या किया जाये? यह तर्क है* जहां से अनजाने जीवन में भ्रष्टता घुस आया करती है। वैसे बड़े काम की महत्वाकांक्षा में यह आंदोलन भी फिसल जा सकता है। मुझे लगता है कि नैतिक और राजनीतिक आसन का मूलभूत अन्तर यही है। नैतिक चित्त-वृत्ति के लिए कोई काम छोटा नहीं रहता, इसलिए कोई बड़ा हो नहीं हो पाता। *सहज प्राप्त जो हो वह ही उसके लिए सर्वस्व* बनता है। प्रत्येक को अपने कर्तव्य के प्रति जाग्रत होना है। वह जागरण हुआ तो हो सकता है कि विद्यार्थी क्लास छोड़ें, विधायक त्यागपत्र दें, आचार्य अपनी संस्था बंद करें और दूसरे जन अपने शिल्प-वृत्ति का काम छोड़कर एक दिन के लिए आत्मावगाहन में लगें। पर वह सब भीतर से और नीचे से स्वतः होगा। ऊपर से कराये जाने की आवश्यकता कम होती जायेगी। शस्त्रावलम्बी होकर कोई प्रतिरोध या प्रतिकार राज्यसत्ता के समक्ष टिक नहीं पायेगा। वह सब बल तो राज्य के पास ही बेहद जमा हुआ पड़ा है। कुछ वही अतिरिक्त शक्ति काम देगी, जिसका राज्य के पास दिवाला है। वह है श्रद्धा और विश्वास और उत्सर्ग की शक्ति। यदि इसमें तृष्णा-लालसा मिलेगी तो सब ढहा रखा है। जे.पी. इस पहलू के प्रति शुरू से जागरूक हैं और इस कारण मैं बिहार आन्दोलन के प्रति आशान्वित ही रहना चाहता हूं।'

अहिंसा विद्यालय का शिविर

इन्दौर से प्राप्त जानकारी के अनुसार स्थानीय गांधी शांति प्रतिष्ठान केन्द्र के सहयोग से राजघाट अहिंसा विद्यालय के ३० छात्र-छात्राओं का दस दिवसीय एक शिविर ५ से १५ अक्टूबर तक निकटस्थ ग्राम-मांचला में आयोजित किया जा रहा है। शिविर का उद्देश्य गांधी-दर्शन के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन, ग्रामीण जीवन से सम्पर्क, सामुदायिक जीवन, अन्तरप्रान्तीय संबंध-सम्पर्क बढ़ाना है।

बिहार : एक सामाजिक सर्वेक्षण

बिहार की सामाजिक संरचना इस प्रकार की है कि कोई आन्दोलन उसके सभी अंगों में पहुंचे, यह एक मुश्किल काम है। क्योंकि संरचना के भीतर कार्य कर रही सामाजिक व्यवस्थाएं इस प्रकार की हैं कि उन्होंने अनेक घेरे निर्मित कर लिये हैं। जाति का घेरा, राजनीतिक दलों का घेरा और ऐसे ही घेरे हैं जो किसी विचार या आवाज को सारे समाज की बनने में बाधा पहुंचाते हैं। परन्तु आश्चर्य है कि फिर भी छात्र आन्दोलन सारे समाज का आन्दोलन बनता जा रहा है।

बिहार की ८० प्रतिशत जनता यहां के लगभग पौने लाख गांवों में रहती है। इतने विशाल ग्राम्य समुदाय के प्रमुख तीन अंग हैं —

(१) मालिक-किसान-समूह, (२) साधारण किसान-समूह और (३) भूमिहीन-मजदूर-समूह। मालिक किसान-समूह ग्राम्य समुदाय की आबादी का २० प्रतिशत है। इस समूह के परिवारों के पास ५० से २०० एकड़ तक प्रति परिवार जमीन की भूमि पाई जाती है। ग्राम्य सामाजिक व्यवस्था में इस समूह का स्थान सर्वोच्च है। साधारण-किसान-समूह मालिक किसान समूह से नीचे का समूह है। यह आबादी का ४० प्रतिशत है। इस समूह के परिवारों के पास प्रति परिवार ५ से ५० एकड़ तक जोत की भूमि है। यह समूह मालिक-किसान समूह पर आर्थिक मामलों में आश्रित है। कृषि के कामों के लिए ऋण लेना, विवाह और मौत के अवसर पर ऋण लेना, रोग बीमारी में ऋण आदि लेना एक सामान्य बात है। इन आर्थिक मामलों में ही नहीं सामाजिक मामलों में भी मालिक किसान-समूह अपना प्रभाव-क्षेत्र स्थापित कर रखता है।

ग्राम्य समुदाय का तीसरा, सबसे निचला भाग भूमिहीन-मजदूर-समूह है। यह समूह आबादी का ४० प्रतिशत भाग है। यह समूह भूमिहीन है। इस समूह के परिवार मालिक किसान-समूह और साधारण किसान

(लेखक गांधी शांति प्रतिष्ठान के केन्द्रीय कार्यालय, दिल्ली के मंत्री का आदेश मिलने पर डेढ़ महीना के लिए बिहार छात्र-आन्दोलन का जायजा लेने की दृष्टि से बिहार गये थे। कार्य की प्रक्रिया में आन्दोलन का रूप जिस तरह उनकी आंखों में साफ हुआ, यहां उसी की झलक दी जा रही है। डेढ़ माह की लघु अवधि में उन्होंने बिहार के १६१ शहरों और ६७,१२५ गांववाले समाज के प्रत्येक अंग में आन्दोलन के रूप को देखने की कोशिश की है। सं)

समूह के खेतों में काम करते हैं। समाज का यह नंगा, भूखा और दबा हुआ समूह है। इस समूह के बच्चे मालिक किसान-परिवारों में खलिहान की सफाई और मवेशी चराने का काम करते हैं। वे स्कूल में शिक्षा लेने नहीं जा सकते। छात्र-आन्दोलन से समाज का यह भाग अछूता है। क्योंकि इस भाग के परिवार सूर्योदय से सूर्यास्त तक अपना समय मालिक किसानों के खेतों में बिताते हैं। ऊपर के दोनों समूह भी ऐसा चाहते हैं कि खेत मजदूरों को बाहर की कोई हवा न लगे। क्योंकि ऐसा होने से उपरोक्त दोनों समूहों की अर्थ-व्यवस्था लड़खड़ा हो जायेगी। इस नीचे के समूह की चमार, मुसहर और मोहार जातियां मालिक किसान परिवारों के ऋण पर बिकी हुई हैं। अतः ग्राम्य समुदाय की आबादी का ४० प्रतिशत भाग छात्र आन्दोलन में नहीं आया है और न आगे भविष्य में आने की संभावना है।

साधारण किसान-परिवारों और मालिक किसान परिवारों के लड़के शिक्षा लेने निकट के कस्बों में स्थापित हाई स्कूलों और कालिजों में आते हैं। कस्बों में ४२ प्रतिशत छात्र गांवों के हैं। शेष २१ प्रतिशत छात्र दुकानदारों व किसानों के पुत्र हैं। गांवों से आने छात्रों में से ७० प्रतिशत छात्र आन्दोलन में सक्रिय हो गये हैं। ६ प्रतिशत छात्र घर के कामों में व्यस्त होने के कारण या उनके परिवार के किसी सदस्य के सरकारी नौकरी में होने के कारण आन्दोलन में भाग लेने से कतराते हैं। दुकानदारों के घरों के १५ प्रतिशत छात्र आन्दोलन में आ गये हैं और २ प्रतिशत छात्र प्रशासक परिवारों के भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से आन्दोलन में भाग ले रहे हैं। इस प्रकार ८७ प्रतिशत ग्राम्य समुदाय के छात्र आन्दोलन में आ गये हैं। अब गांवों में नहीं, कस्बों में आन्दोलन की विचार व्याप्त हो चुकी है।

अब प्रश्न उठता है कि किस विचार से आबद्ध होकर इस समुदाय के छात्र एक ही आन्दोलन में सक्रिय हैं? दूसरे शब्दों में बिहार के आन्दोलन की आइडियोलोजी क्या है? इस प्रश्न के जवाब की भूमिका में यह बता देना उचित होगा कि पिछले २७ वर्षों में राजनीतिक दलों एवं सत्तारूढ़ दल ने वोट प्राप्त करने के असामाजिक तरीकों से बिहारी समाज को इतने टुकड़ों में विभक्त कर दिया है कि समाज का शरीर टूट सा गया है। जाति, धर्म, दल और वर्ग के लगभग ६०० टुकड़ों में विभाजित बिहारी समाज कष्ट से कराह रहा है। उस पर भी भ्रष्टाचार की काली छाया समाज को इस सीमा तक आच्छादित कर चुकी है कि समाज अत्यन्त पीड़ित होकर अपनी सुरक्षा की खातिर शक्ति की ओर बढ़ने के लिए मार्ग पर निकल पड़ा है। अतः इस समग्र समाज की पीड़ा, उसका कष्ट ही उसकी सर्वोपरि आइडियोलोजी है जिस ने उसे आन्दोलन का रास्ता पकड़ा दिया है।

आन्दोलन की मंजिल क्या होगी? उस मंजिल की आइडियोलोजी क्या होगी, यह तो समाजशास्त्री और राष्ट्रभक्त विचारक तय करेंगे। आम जनता तो किसी मसीहा का सहारा पाकर दुख से त्राण पाने के लिए घर से निकल, सड़क पर आ जाती है। दिशा देना नेता का काम है। अतः बिहार का आईडियोलोजी समाज के भविष्य की तरफ बढ़ते हुए कदम से पैदा होती चलती है, वह कहीं अलग से नहीं आयेगी।

ग्राम्य समाज के समूहों मे निहित संघर्ष की स्थिति पर एक दृष्टि डालना आवश्यक है।

ग्राम्य समुदाय शोषण की अर्थ-व्यवस्था पर आधारित होने से उसके तीनो अंगो मे संघर्ष की स्थिति बनी रहती है। समुदाय मुख्य रूप से जाति और अर्थ-व्यवस्था के आधार पर दो भागो मे विभाजित हो गया है—एक फारवर्ड-कास्ट-ग्रुप, दूसरा बैकवर्ड कास्ट ग्रुप। प्रथम ग्रुप में समुदाय के उच्च जाति समूह हैं, ब्राह्मण, राजपूत, भूमिहार, वैश्य और कायस्थ आदि। दूसरे ग्रुप में समुदाय के नीचे के जाति समूह हैं, जैसे—ग्वाला, कोरी, कुरमी, मल्लाह, कुम्हार, तेली, धोबी, चमार, कादर, मुसहर, सोनार, पासवान, डोम और हाडी आदि। फारवर्ड-कास्ट-समूह के विचार और क्रिया इस प्रकार के हैं कि नीचे के जाति-समूह समाज के मामलो मे प्रगति नहीं कर सकें। वे इनके खेतो में काम करते रहने की हालत मे बने रहें। यदि बैकवर्ड-कास्ट-समूह अर्थ सम्पन्न बनता है तो ऊपर के समूहो की अर्थ व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो जाने की सम्भावना है। अतः बैकवर्ड-कास्ट-समूह की प्रगति पर फारवर्ड-कास्ट-समूह का अंकुश सदा लगा रहता है। परिणामस्वरूप बिहार के ग्राम्य-समुदाय मे फारवर्ड और बैकवर्ड समूहो की लड़ाई व्यापक है। ऊपर के जाति समूहो मे भी जाति के स्तर पर संघर्ष की स्थिति रहती है। भूमिहार और राजपूत जाति समूहो का संघर्ष बिहार का व्यापक एवं पुराना रोग है। नीचे के समूहों मे भी जातिस्तर पर संघर्ष है। समाज की संरचना मे हर स्तर पर संघर्ष की आग निहित रहते हुए भी सभी जाति समूहो के छात्र बिहार के आन्दोलन मे एक-दूसरे के सहयोगी बन गये हैं। ऐसा क्यों? ऐसा इसलिए कि वे सबके सब सत्ताईस वर्षों से सरकार के कार्यों एवं समाजविरोधी नीतियो से तंग आ गये हैं। अतः समाज के सभी समूह सरकार के खिलाफ छात्रो को मदद पहुँचाने मे सुख अनुभव करते हैं। न्याय और समाज के जीवन की सुविधाओं के क्षेत्र मे ग्राम्य-समुदाय के सभी समूहो का सरकार द्वारा खुलकर शोषण हो रहा है। पहले न्याय को लीजिए। ग्राम्य

आन्दोलन से आशान्वित

सदियों से उच्च वर्ग के शोषण का शिकार बिहार का निचले वर्ग का एक सीधा-सादा किसान

समुदाय मे ६५ प्रतिशत झगड़े जमीन के होते हैं। ५ प्रतिशत मे चोरी, डकैती और यौन अपराधो के मामले रहते हैं। ग्राम्य-समुदाय को अनुमंडल अधिकारी की अदालत से ज्यादा वास्ता रहता है। बांका अनुविभाग के २१ परिवारो के मुखियाओं से सूचना प्राप्त करने पर पता चला है कि उनमे से १६ परिवार इसलिए बरबाद हो गये कि न्याय पाने के लिए वे अदालत मे गये। मामला जमीन का था, न्याय की आशा मे रिश्वत भरते-भरते उनकी सारी जायदाद बिक गयी। इतना ही नहीं, उन परिवारो में पाच परिवार ऐसे थे जिनके मुखियाओ का खून विपक्षी दलो ने पुलिस को रिश्वत देकर करवाया था। पैसा बनाने के उद्देश्य से ऐसा व्यवहार सबके साथ होता है। न्याय अधिकारियों एवं पुलिस विभाग के व्यवहार की इस प्रक्रिया से ग्राम्य-समुदाय का जीवन उजड़ता जा रहा है। अपने को विनाश से बचाने, आन्दोलन का सहारा अब लेने लगे हैं।

दूसरे किसान परिवारो को खेती की उन्नति के लिए सरकार की ओर से अनेक प्रकार के ऋण दिये जाने का प्रावधान है। इन ऋणो को लेने मे समुदाय के लोगो को सम्बन्धित अधिकारी की जेब भरनी पड़ती है। इस प्रक्रिया से ऋण की आधी रकम तो उन जेबों मे ही रह जाती है, शेष जो बचती है वह किसान के घर मे खर्च हो जाती है। परिणामस्वरूप समुदाय के अधिकांश परिवार ऋण मे दबे हुए हैं। भूमि की सिंचाई का कर भी बहुत बढ़ा दिया गया है। खाद की कीमत भी दुगनी तीन-गुनी कर दी गयी है। मालगुजारी के साथ शिक्षा कर व अन्य प्रकार के कर लगाकर किसान समाज को सरकार ने क्षुब्ध कर दिया है। इसके अतिरिक्त सेवा-व्यवस्था, वस्तुओं की बढ़ती कीमतें जीवन के नये दुख हैं जिनसे किसान समाज दुखी है। ये प्रमुख कारण हैं जो इस समुदाय को आन्दोलन मे ले आये हैं।

ग्राम्य-समुदाय के सामने बेकारी का घना अंधेरा, स्कूल व कालिजों का बिगड़ना, पर्यावरण और नये युग की प्रवृत्ति ग्राम्य समुदाय के तरुणो को इस आन्दोलन मे ले आयी है। उनको अपने समुदाय के परिवारों से

तन-मन और धन से समर्थन मिल रहा है।

अब आइये बिहार के नगर-समुदाय में। जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, यह समुदाय राज्य के १६१ शहरों में बसा हुआ है। इस समुदाय की संरचना के प्रमुख चार अंग हैं —१ उद्योगपति वर्ग, २ व्यापारी वर्ग, ३. प्रशासक वर्ग और ४ मजदूर वर्ग। समाज के इस भाग की अर्थ-व्यवस्था भी शोषण पर खड़ी है, इसलिए इन वर्गों में भी आपस में संघर्ष की स्थिति रहती है। इसके बावजूद भी सरकार से संबंधित इन वर्गों के दुख समान हैं।

भ्रष्टाचार सबको काट रहा है। उद्योगपति इसलिए परेशान हैं कि उन पर करों व रिश्वत का इतना अधिक नियंत्रण है कि वे न तो उद्योग के नये प्लांट लगा सकते हैं जिससे उत्पादन बढ़े और न वर्तमान प्लांटों को निरन्तर चला पाते हैं। अत: उनके प्लांट जो भी हैं वे भी प्राय: बन्द हो चले हैं। यह वर्ग घाटे के भय से सदा भयभीत रहता है।

तीन वर्गों में ६५ प्रतिशत छात्र-छात्राएं *आन्दोलन में आ गये हैं। १५ प्रतिशत छात्र* ग्राम्य समुदाय के पूरे के पूरे आन्दोलन में लग गये हैं। प्रशासक वर्ग में भी ३ प्रतिशत प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से आन्दोलन में भाग लेते हैं। इस प्रकार नगर समुदाय में पढ़ने वाले ८३ प्रतिशत छात्र-छात्राएं आन्दोलन के मैदान में आ गये हैं। इनको सभी वर्गों से समर्थन मिल रहा है।

अब आइये राजनीतिक दलों में। जनसंघ, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, संगठन कांग्रेस, *संसोपा और एस. पी. आदि राजनीतिक दल* बिना किसी शर्त के आन्दोलन में आ गये हैं। छात्रों को उनसे सहयोग मिल रहा है।

समाज के विभिन्न वर्गों तथा राजनीतिक दलों के आन्दोलन में आने के यद्यपि अपने अपने उद्देश्य हो सकते हैं परन्तु सभी वे सरकार के खिलाफ एक हो गये हैं।

आंदोलन के कार्यक्रमों पर प्रकाश डालना भी आवश्यक है। जैसा कि जयप्रकाशजी बोलकर लोगों को दिशा देने का काम करते हैं।

कार्यक्रम का दूसरा भाग है 'संगठन'। संगठन के कार्य में बिहारी समाज के हर स्तर पर छात्र संघर्ष समितियां लगी हुई हैं। राज्य के प्रत्येक कालिज में ये समितियां बन चुकी हैं और अब तो हाई स्कूलों में भी ये फैलती जा रही हैं। वहां से ग्राम-पंचायतों और गांवों में पहुंच रही हैं। संगठन के कार्य में राज्य का तरुण एवं तरुणी-समुदाय क्रियाशील है।

'संघर्ष' कार्यक्रम का तीसरा भाग है। इसके अन्तर्गत राज्य के हर स्तर पर (ग्राम पंचायत से लेकर विधानसभा तक) सरकार के खिलाफ शांतिपूर्ण संघर्ष निरंतर बनाये रखना मुख्य उद्देश्य है। बिहार में यह संघर्ष त्याग पर चल रहा है। छात्र एवं छात्राएं अपनी जिन्दगी की परवाह न कर, एक प्रकार से उसे त्यागकर शांतिपूर्ण आन्दोलन में लगे हुए हैं। कहा जाता है कि त्याग तो बहुत

भ्रष्टाचार सबको काट रहा है

व्यापारी को उत्पादकों के पास तैयार माल नहीं रहने से समय पर नहीं मिलता, इसलिए उन्हें दुकान चलाना परेशानी का विषय बन गया है। उत्पादक और दूकानदार के बीच की एजेंसियां भी प्राय बन्द हो रही हैं।

बढ़ती महंगाई में मजदूर का काम बन्द हो रहा है। उसे वेतन वृद्धि की जगह पर बेकारी मिल रही है। इस प्रकार बिहारी समाज के नगर समुदाय में लोग सरकार की नीति से पिछले २७ वर्षों में तंग आ गये हैं। यही कारण है जो नगर समुदाय के सभी लोगों को सरकार के खिलाफ एक प्लेट-फार्म पर ले आये हैं। इस समुदाय के कालिजों और विश्वविद्यालयों में पढ़नेवाले छात्र और छात्राओं की संख्या उपरोक्त चार वर्गों से इस प्रकार है,—उद्योगपति वर्ग से १५ प्रतिशत, व्यापारी वर्ग से ४० प्रतिशत, मजदूर वर्ग से २० प्रतिशत और प्रशासक वर्ग से १० प्रतिशत छात्र छात्राएं आते हैं। शेष १५ प्रतिशत छात्र ग्राम्य समुदाय के यहां शिक्षा लेते हैं। प्रशासक वर्ग को छोड़कर उपरोक्त ने ५ जून १९७४ को पटना के गांधी मैदान में पांच लाख जन-समूह के बीच भाषण करते हुए बताया था कि बिहार के तरुण *समुदाय को आन्दोलन में पूरी तरह से लगने* के उद्देश्य से एक वर्ष तक बिहार के विश्वविद्यालयों को बन्द कर दिया जाये। साथ ही विधान सभा को विघटित करने के लिए छात्र-गिरफ्तारी चालू रहे। घोषणा के *अनुसार आन्दोलन के कार्यक्रम को चार भागों* में विभाजित करके निरंतर चलाया जा रहा है।

प्रथम जागृति लाने का कार्यक्रम है जिसके अन्तर्गत समाज की संरचना के सभी अंगों में लोगों के अन्दर जागृति पैदा करना प्रमुख उद्देश्य है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए *प्रदर्शन, रैली, आमसभाएं और साहित्य* वितरण जैसी क्रियाएं की जाती हैं जिनमें लोगों को आन्दोलन की दिशाएं और उसके महत्व समझाये जाते हैं। लोग आन्दोलन की कुल क्रियाओं से परिचित रहें, ऐसा प्रयास रहता है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत जे. पी. राज्य के प्रमुख शहरों में जाकर आमसभा में थोड़े लोग करते हैं, पर मैंने अपनी आंखों से देखा कि बिहार में ऐसा त्याग लाखों की संख्या में लोग कर रहे हैं। बन्दूक के मुंह के *आगे सीना तानकर, निर्मम लाठीचार्ज की* मार सहकर लाखों लोग जेल जा रहे हैं। आन्दोलन को शांतिपूर्ण ढंग से चलाने की खातिर छोटे से लेकर बड़े तक प्रत्येक व्यक्ति कुछ न कुछ त्याग कर रहा है। इस समय मुख्य रूप से संघर्ष का बोझ छात्रों पर कालिजों और विश्वविद्यालयों का बहिष्कार करने में है। ११ और १२ अगस्त को राज्य के ३२००० छात्र एवं छात्राओं ने इन्टरमीडिएट की परीक्षा का सफलता के साथ बहिष्कार किया। बिहार राज्य के तीन लाख से भी ऊपर छात्र-छात्राओं का ८५ प्रतिशत भाग शांति-पूर्ण *संघर्ष में क्रियाशील है।*

दूसरे विधान सभा के विघटन के लिए पटना में शांतिपूर्ण गिरफ्तारी दे रहे हैं। इसके अतिरिक्त विधायकों के क्षेत्र में पहुंच कर मतदाताओं में ज्ञान फैला रहे हैं कि इन विधायकों को *वापस बुलाने में सब सहयोग* दें। जरूरी होने पर उन विधायकों का

शान्तिपूर्ण घिराव भी छात्र करते है। ऐसा वे उनके घर पर जाकर करते हैं। इसने काय को करने मे (शांति के रास्ते से) छात्र शक्ति लगी हुई है। कार्यकी प्रक्रिया मे उनको पुलिस के लाठीचार्ज और गुण्डो के प्रकोपों से गुजरना पड रहा है।

तीसरे रोज के ग्राम जनता के जीवन से सबधित सरकारी कार्यालयो को छोड़कर (जैसे कचहरी और राहत के कार्यालय), अन्य सबको (जहाँ कि भ्रष्टाचार के केन्द्र हैं) बद कराने मे छात्र लगे हैं। समाज के तीनो समुदायो (नगर समुदाय, ग्राम्य समुदाय और जन-जाति समुदाय) मे कर, तगावी, और मालगुजारी को रोक रखने का छात्रों का अभियान चल पडा है। इस क्रिया का उद्देश्य राजस्व को रोककर सरकार की मशीनरी को ठप्प करना है। अन्य प्रत्यक्ष एव अप्रत्यक्ष सभी प्रकार के करों का नियंत्रण का कार्य व्यापक रूप से शुरू हो चुका है।

'निर्माणकारी कार्य' यह कार्यक्रम का चौथा भाग है। इसके अन्तर्गत छात्र निम्न-लिखित किया करते हैं भ्रष्टाचार रोकना, शराब की दूकानें बद कराने के लिए धरना, कालाबाजारी, रोकना, राशन की दूकानो की अनियमितता रोकना, मतदाताओं को प्रजातन्त्र की स्वस्थ परम्परा डालने का शिक्षण देना, ग्रामीण किसानो को कम्पोस्ट बनाने की विधि बताना (एग्रीकल्चर के छात्र यह क्रिया बताते हैं), गोबर गैस का प्लाट लगाने की विधि बताना, हरिजन एव भूमिहीन वर्गो का अध्ययन करना, चेचक का टीका लगाना (केवल मैडिकल कालिज के छात्र), औरतो, छात्राओ एवं महिला कैदियो की देखरेख रखना व उनके बीच जाकर उनके स्वास्थ्य की रक्षा के कार्य करना, साहित्य वितरण का कार्य करना आदि। ये क्रियाए निर्माणकारी कार्यों के अन्तर्गत हैं।

कालिजो और विश्वविद्यालयो को छोड़ने के बाद छात्र शक्ति भटकने न पाये या गलत दिशा न पकड़े, इसके लिए जे० पी० को पूर्ण सजग देखा। परन्तु यह कहना कि यह आन्दोलन जयप्रकाश का आन्दोलन है, पूर्ण असत्य है। तथ्य की बात तो यह है कि समाज का आन्दोलन है, जे० पी० ने उसे अहिंसा की दिशा दे दी है, अन्यथा बिहारी समाज का रूप एक धधकती आग का रुप होता जिसमे समाज और राष्ट्र को कितनी हानि उठानी पड़ती, यह कल्पनातीत है। —भरत

विनोबा जयन्ती संपन्न

छतरपुर मे गाधी स्मारक भवन मे भवन व जिला सर्वोदय मडल की ओर से सामूहिक सफाई, साहित्य-प्रचार तथा प्रार्थना के अलावा एक सभा मे सर्वोदय आन्दोलन और युवा-शक्ति पर भाषण हुए।

वाराणसी मे सस्कृत विश्वविद्यालय के कुलपति करुणापति त्रिपाठी की अध्यक्षता मे आयोजित समारोह मे गाधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र के मन्त्री रामवृक्ष शास्त्री, सर्वसेवासघ के प्रकाशन सचालक कृष्णराज मेहता, श्री गो देशपाडे, डा युगेश्वर, प्यारेकृष्ण जुत्शी, कैलाशचन्द्र मिश्र तथा भाई-बहनो ने सर्वोदय के विभिन्न पक्षो पर विचार व्यक्त किये।

चेचक के टीके लगाने का काम

पटना मे समाचार है कि मेडिकल छात्रो की बहुत बडी टीम ने लाखो की तादाद मे चेचक के टीके लगाये। मेडिकल कालेज के स्वयसेवी छात्रो की सेवाओं के उपयोग को लेकर श्रीमती सुमन वग व डा० सिनयन के साथ एक टीम ने मेडिकल कालेज से सम्पर्क किया है। कार्य-क्षेत्र की दृष्टि से देहातो मे भी सर्वेक्षण किया जा रहा है।

एक सहज व्यक्तित्व – जे. पी.

—डा० लक्ष्मीनारायण लाल

जे. पी. को देखकर जो पहली बात महसूस होती है—यह कितने सादे और सहज हैं। बिल्कुल साधारण मनुष्य। इनके पहनावे से लेकर, इनके लिखने पढ़ने, बोलने और रहन-सहन तक इनके सारे व्यवहार और कार्यों में चारों ओर वही साधारण सहज मनुष्य दीखता है। उदास थका हुआ, फिर भी सहज। बायन बिल्कुल अकेला फिर भी धैर्यवान। शान्त, सज्जन। युद्धरत, संघर्षरत। फिर भी संघर्ष और सज्जनता का योग कभी खण्डित नहीं होता।

पहली ही भेंट में प्रभावित करने के गुण उनके व्यक्तित्व में हैं। यों वह शास्त्रीय अर्थों में रूपवान नहीं कहे जा सकते, लेकिन कुल मिलाकर उनकी मुखमुद्रा में एक रहस्यमय मधुरता है। एक भोलापन है और सबसे ज्यादा सुगमता का भाव है। गेहुआ रंग उस सुगमता को बढ़ाता है।

जरा हम उनके नजदीक जायें, ताकि उनके भीतर झांक सकें, पर वह ऐसा कतई नहीं होने देंगे। आपको अपने से थोड़ा दूर रखेंगे। हमेशा एक अन्तर बनाये रखेंगे। कभी अन्तरंग नहीं होने देंगे। फिर भी न जाने कैसे कहीं से यह सहज अनुभव देंगे कि जे पी का मुझसे कोई व्यक्तिगत सम्बन्ध जरूर है, और उस सम्बन्ध की एक मर्यादा है।

अब तक अपने पूरे जीवन में जे पी केवल एक से ही सम्बन्धातीत हुए हैं—'प्रभा' से।

प्रभा माने प्रकाश।

प्रभा माने प्रभावती।

उसी प्रभा के ही सहारे जे पी के भीतर झांका जा सकता है। इसके अलावा और कोई तरीका नहीं। उस झांकने में जो पहली चीज चमकती है, वह यह कि जे. पी. की शक्ति के मूल में करुणा की एक सहज धारा बहती है। इसीलिए इनके आवेश और रोष का भी एक आनन्द है। बुद्धि और हृदय, करुणा और ओजस्विता का अद्भुत सामंजस्य है इनके मनुष्य में। जिस समय जो सत्य देखते हैं, उसे अपने सम्पूर्ण चित्त से ग्रहण कर लेते

हैं। उसको कार्य में परिणत करने के लिए अन्य सब कुछ भूलकर प्राणपण से लग जाते हैं। इसी का परिणाम है कि जे पी को कोई मतवाद, कोई सम्प्रदाय, कोई संस्था या संगठन अपनी सीमाओं में नहीं बांध सका। जे. पी का ख्याल है, यह जो 'आइडियोलोजिकल ब्लिकर्स' होते हैं, उनकी वजह से यह होता है कि लोग अपने को एक आइडियोलोजी के कटघरे में या पॉकेट में बांध लेते हैं। फिर वह 'फ्रीली थिंकिंग' कर नहीं पाते। और आज मैं किसी पार्टी में नहीं हूं। और सर्वोदय मूवमेंट में होते हुए भी उसमें बंधा हुआ नहीं हूं, तो कुछ फ्रीली सोच सकता हूं और अगर उसमें 'सेल्फ' का भाव न हो तो मेरा ख्याल है—...तो पण्डितजी के लिए जो मेरे दिल में बराबर आदर रहा, बड़ा भाई मानता रहा, आज भी मानता हूं। लेकिन उनकी थिंकिंग में वह अपने को बीच में जरूर रखकर सोचते थे। अपने को बीच से हटाकर सोचना और 'आइडियोलाजिकल ब्लिंकर्स न हों तो मैं समझता हूं कि उससे ज्यादा सही होते हैं।'

दूसरे की भूमिका समझने की तत्परता जे पी. की बुद्धिनिष्ठा का स्थायी भाव है। तभी उनके स्वभाव में उत्कटता होते हुए भी असहिष्णुता नहीं है। अनाग्रह के कारण उनका सौहार्द मतभेदों को चीरकर प्रतिपक्षी के भी हृदय को स्पर्श करता है।

सरदार पटेल, डा. लोहिया से जे पी के बीच में कुछ ऐसे पत्र-व्यवहार हुए हैं जो काफी कटु हैं। लेकिन जब जब उनके बारे में बातें हुई हैं, उन दोनों के प्रति, विशेषकर 'राममनोहर' के प्रति जे पी के चित्त की गहराई में जो सौहार्द था, सहज प्रेम, वह सदा अक्षुण्ण है।

'यह शख्स देना ही जानता है, लेने या पाने पर दृष्टि ही नहीं जाती।'

'इसका जीवन खोये हुए अवसरों की कहानी है।'

'राजनीति में इस प्रकार प्रच्छन्न रूप से हस्तक्षेप करने में जे पी को मजा आता है।'

'जयप्रकाश तो जब तब, बस चूक जाता है।'

'सर्वोच्च पद की घुड़दौड़ में जयप्रकाश हमेशा गलत घोड़े का चुनाव करता आया है।'

'जे पी. तो अब सुधारवादी हो गये, अब वह क्रान्तिकारी नहीं रहे।' जे पी ने लिखकर दिया है—'अब इन सब लोगों को कैसे समझाऊं "यह मेरे स्वभाव में ही नहीं है। मैं कभी भी सनिवादी नहीं रहा हूं—जब मार्क्सवादी था तब भी नहीं और उन्नीस सौ बयालीस में भूमिगत कार्य करता था तब भी नहीं। एक क्रान्तिकारी के रूप में मेरा दिल, मार्क्सवादी जिसे 'मासवर्क' (जनता के बीच में रहकर काम करना) कहते हैं, उसी में जुड़ा रहा हूं।'

किसी न किसी बहाने जयप्रकाश का नाम पूरा देश जानता है। ग्रामदान, भूमिदान के लिए जब वह गांव गांव घूमे, तो उनके पैरों से धूल उड़कर माथे पर आ बैठी। वह जैसे एक गांव से दूसरे गांव के लिए चलते हैं, बीच में न जाने कितने लोग अपने दुखों,

साध्य और साधन

—श्रीमन्नारायण

महात्मा गांधी ने हमसे बार-बार यह कहा कि विभिन्न साध्यों की प्राप्ति के साधन भी साध्य की तरह ही शुद्ध होने चाहिए। उन्होंने बल प्रदान करते हुए कहा था "साधनों और साध्य के बीच ठीक उसी प्रकार का अनुल्लंघनीय सम्बन्ध है कि जैसा बीज और वृक्ष में होता है।" महात्माजी ने कभी इस सिद्धान्त को मान्यता नहीं दी कि साधनों का औचित्य परिणाम प्रमाणित कर देते हैं। भारत के स्वतंत्रता-संग्राम के दौरान भी एक बार उन्होंने टिप्पणी की थी, "मैं अपने देश की मुक्ति के लिए हर वस्तु का बलिदान करने को तैयार हूं, लेकिन सत्य और अहिंसा का नहीं।"

मेरी दृष्टि में, हाल के वर्षों में देखी गयी सबसे बड़ी त्रासदी हमारे राष्ट्रीय जीवन में साधनों की शुद्धता पर दिये जानेवाले बल का यही क्षीणत्व है। यह सच है कि आज हम मुद्रास्फीति, दरिद्रता, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार और बासी पड़ चुकी शिक्षाप्रणाली जैसी बहुत कठिन समस्याओं का सामना कर रहे हैं। फिर भी अपने संकीर्ण और स्वार्थपूर्ण उद्देश्य प्राप्त करने के लिए व्यक्तियों, समूहों तथा राजनीतिक दलों की झूठे, विवेकहीन तथा छलपूर्ण तरीके अपनाने की प्रवृत्ति सर्वाधिक क्षोभकारक है। कालाधन विशाल मात्रा में एकत्र किया जा रहा है और वोट लेने के लिए चुनावों के दौरान वितरित किया जाता है, राजनीतिक आन्दोलनों को सघन करने के लिए हिंसा, लूट तथा आगजनी का आश्रय लिया जा रहा है, 'घेराव' जैसे यातनापूर्ण तरीके सर्वोदय अभियानों तक में प्रयोग किये जा रहे हैं। जीवन के लगभग सभी क्षेत्रों में भ्रष्टाचार व्याप्त है। यह वास्तव में ऐसी कथा है कि आंसू भी नहीं बहाये जा सकते।

कभी-कभी यह विचार किया जाता है कि साधनों की पवित्रता पर गांधीजी का जोर एक 'उच्च दर्शन' था। मेरे मस्तिष्क में यह सम्पूर्ण और व्यावहारिक बुद्धिमत्ता है। अपवित्र साधन कुछ समय के लिए सफल होते दीख सकते हैं, लेकिन दिन के बाद रात आने जितना ही यह भी निश्चित है कि इस प्रकार के गलत साधन बिना किसी छूट के असफलता और यहां तक कि विनाश तक ले जाते हैं। वाटरगेट प्रकरण मानव-जीवन के इस अपरिवर्तनीय नियम का एक शास्त्रीय उदाहरण है। भूतपूर्व अमरीकी राष्ट्रपति श्री रिचर्ड निक्सन लज्जास्पद मिथ्याचारों में लिप्त हो गये और एक झूठ पर पर्दा डालने के प्रयास में सौ झूठ बोलने लगे। अन्त में उन्हें बहुत बेआबरू होकर अलग होना पड़ा। नये राष्ट्रपति श्री जेराल्ड फोर्ड ने अपने उद्घाटन भाषण में प्रभावी ढंग से घोषित किया 'मेरा विश्वास है कि सत्य वह गोंद है जो सरकार को एक साथ जोड़े रहती है, मात्र हमारी सरकार नहीं, वरन सभ्यता को ही... मैं आशा करता हूं कि आपके राष्ट्रपति के रूप में अपने सभी सार्वजनिक और निजी कृत्यों में पूरे आत्मविश्वास के साथ खुलेपन और स्पष्टवादिता की अपनी इस अन्तःप्रेरणा का पालन करूंगा कि अन्त में ईमानदारी ही हमेशा सर्वोत्तम नीति होती है।"

हमारे अपने देश में ऐसे कितने ही 'वाटरगेट' दबे ही रह गये हैं। हमारे युवा और निर्भीक पत्रकारों में से कुछ, एक स्वतंत्र न्यायपालिका के समर्थन से, संभवतः भविष्य में उन पर से परदा उठाने में समर्थ हो सकेंगे। कम्पनी कानून में इस आशय के परिवर्तन ने कि व्यापारिक संस्थान राजनीतिक दलों को खुले रूप में दान नहीं दे सकेंगे, कालेधन के प्रवाह और परिणामस्वरूप भ्रष्टाचार के ऊपर से नीचे आने में बाढ़ के द्वारों का काम किया है। हमारे चुनावों में भोली जनता के मत पाने के लिए जातिवाद, सम्प्रदायवाद व धार्मिक कट्टरता को प्रोत्साहन वास्तव में एक मर्मान्तक दृश्य रहा है। अहिंसा के अलावा सत्य भी हमारे लिए सद्गुण और गौरव की बात नहीं रह गया यद्यपि 'सत्यमेव जयते' अभी भी हमारा राष्ट्रीय बोध-वाक्य बना हुआ है। इन अफसोसनाक उदाहरणों में एक बहुत हाल का योग नयी दिल्ली में अभी सम्पन्न हुई कांग्रेस की युवक रैली रही है। उसके बारे में जितना कम कहा जाये उतना बेहतर है।

मुझे इसमें लेशमात्र संशय नहीं है कि गांधीजी की इस चेतावनी की उपेक्षा करके भारत और विश्व बहुत बड़ी क्षति उठायेगा कि तथाकथित उच्च लक्ष्यों को प्राप्त करने के प्रयासों में अपवित्र साधन कभी नहीं

समस्याओं और हारे हुए सवालों को लेकर उन्हें घेर लेते हैं। वह स्वीकार करते चलते हैं। मगर वे एक ऐसे प्राणी होते चले जाते हैं—जिनके लिए राजनीतिज्ञ सोचता है यह मुझे मिनिस्टर बना देंगे। किसान सोचता है: यह कलक्टर साहब हैं, मेरे गये हुए खेत को वापस दिला देंगे। मजबूर किसान दौड़ता है—सरकार हमरा के खेत मे पानी नपिछे। मजदूर सोचता है यही है वह कामरेड जो मेरा हक दिला देंगे। स्त्री को विश्वास है—यह मेरे भागे हुए पति को वापस घर ला देंगे। बच्चे सोचते हैं, बाबा हैं दुआ दे देंगे तो गांव में हवाई जहाज उतर पड़ेगा। ऐसा क्यों है?

जे० पी० अपने लिए कुछ नहीं चाहते।

यह सबसे विनम्र हैं। किसी से नहीं डरते।

यह दूसरों से अपने आपको जोड़कर, मिलाकर ही जे० पी० से जयप्रकाश होते हैं।

भूमिगत नागाओं ने इसी जयप्रकाश में अपना हितकारी दोस्त पाया। शेख अब्दुल्ला ने इसमें मेरा हमदम मेरा दोस्त देखा। चम्बल घाटी के डाकुओं ने अपना रिश्तेदार पाया। और अब सारे उदास निराश युवकों ने इसमें अपना खोया हुआ पिता और गुरु पाया।

[मैकमिलन एंड कम्पनी, दिल्ली द्वारा जे० पी० की बहत्तरवीं वर्षगांठ ग्यारह अक्तूबर को प्रकाशित होनेवाली 'जयप्रकाश जीवन-चरित' पुस्तक से]

है' 'हमला चाहे जैसा होगा,'हाथ हमारा नही उठेगा' इत्यादि घोष जब हजारो युवक लगाते है तब सुनते ही बनता है। सारा जमा हुआ निराश समाज चालित होकर उसके ऊपर नये-नये मेधावी छात्र युवकों की फ्रीम ऊपर आकर कार्यरत हो रही है, यह इस ग्रान्दोलन की सबसे अमूल्य उपलब्धि मानी जायेगी। मदद के लिए बिहार के बाहर से कार्यकर्ता पर्याप्त सख्या मे आये हैं। अर्थ इक्ट्ठा हो रहा है। इस ग्रान्दोलन के कारण सर्वोदय की पूछ बढी है और ग्राम स्वराज्य के मूल्य जनता मे—विशेषकर युवको मे-सुप्रतिष्ठित होने का १९५७ के बाद सुनहला अवसर प्रथमबार हाथ मे आया है। अन्याय के प्रतिकार की एव राजनीति के प्रति सजगता की जो कमियां सर्वोदय आन्दोलन मे रह गयी थी, उनकी पूर्ति जन-आन्दोलन से अनायास ही हो जाने के कारण सर्वोदय कार्यक्रमो मे पूर्णता आयी है।

इन उपलब्धियो के साथ-साथ यह भी कबूल करना होगा कि अभी इस आन्दोलन यतो मे एव गाँवो में बनना बाकी है। कई स्थानों पर वे निष्क्रिय हैं। इनके सयोजक कई स्थानो पर राजनीतिक दल के सदस्य होने से अन्य दलवालो का उत्साह कई प्रखडो मे क्षीण हुआ है। सर्वोदयी एव निर्दलीय कार्यकर्ता अधिक सक्रिय हों तो सारे प्रदेश मे प्रखड स्तर पर जन-सघर्ष समितियां तक बनाना कठिन नही है। विधान सभा जल्दी भंग हो, अधिक तेज कार्यक्रम आदि की बार-बार रट लगाकर 'बिहार बद' सरीखे कार्यक्रम मे ढकेला जाता है। इससे सपूर्ण असहयोग की तैयारी मे बाधा पडती है। 'लेफ्ट एडवन-चरिस्ट' के कार्यक्रमो मे ग्रान्दोलन को न ढकेलें, इसकी सावधानी बरती जानी चाहिए। चन्द शहरो मे आतक फैलाना एव आन्दोलन को ठप्प करना सरकार के लिए आसान है। लगानबन्दी के कार्यक्रम को हजारो मे फैले हुए देहातो मे दबाना सरकार के लिए मुश्किल है। आगे आन्दोलन की यही दिशा एव व्यूहरचना हो। साथ साथ शहर के आज के कार्यक्रम भी चलते रहे। इस आन्दोलन मे असहयोग के २५ से ५० सघन प्रखंड बनाने चाहिए। इनमे से कइयों मे सघन ग्राम-स्वराज्य एव आन्दोलन का सुखद सयोग किया जाय। इससे दोनो लाभान्वित होंगे।

यह लडाई लम्बी चलेगी। सपूर्ण क्रांति साल दो साल मे हो भी नहीं सकती। पाच साल की मर्यादा मानकर इसके बारे मे सोचना चाहिए। जाहिर है, पांच साल तक एक जैसा उत्साह या एक ही कार्यक्रम रह नही सकेगा। भविष्य मे यह कार्यक्रम भारत भर मे फैलेगा, ऐसे आसार नजर आ रहे है। बिहार के कार्यक्रमो एव मागो की ठीक नकल अन्य राज्यो मे करने की जरूरत है नहीं। भारत के अन्य हिस्सो मे आदोलन स्वप्रेरणा से युवको द्वारा शुरू होगा, लेकिन वह जगह-जगह शुरू हो, इसके लिए जन-जागृति, लोक-शिक्षण, हर प्रदेश मे एक बार जे० पी० की यात्रा आदि कार्यक्रम भारत भर मे चलाये जाने चाहिए। इससे बिहार के आन्दोलन को तो बल मिलेगा ही, भारत भर की समस्यायें दूर होने मे मदद मिलेगी और

युद्धवादी हुए बिना शुद्धि का आग्रह

में कई कमिया हैं जिनकी ओर त्वरित ध्यान दिया जाना जरूरी है। अभी तक सपूर्ण क्रांति का नारा दिया गया था, लेकिन कार्यक्रमो की दृष्टि से इसका सामाजार्थिक आशय नाममात्र था। २६ अगस्त की बैठक के निवेदन के बाद यह कमी कम हुई है। अभी इस दिशा मे काफी गुंजाइश है, जो धीरे-धीरे आवश्यकतानुसार पूरी होती जायेगी। बल्कि एक ही समय मे सब कार्यक्रम न देकर समाज के कुछ वर्गों को एव दलो को आदोलन का विरोधी नही बनाया गया, यह नेता की व्यूहरचना की कुशलता का द्योतक ही माना जायेगा। यह आन्दोलन अभी शहरो तक एवं कस्बो तक ही अधिकतर सीमित है। हजारो देहातो मे और गरीब तबको मे इसे अभी जाना काफी बाकी है। जैसे-जैसे इसका सामाजिक एव आर्थिक आशय बलवान होगा, वैसे-वैसे यह न्यूनता पूरी होगी। संगठन अभी ठीक से बना ही नही है। अब सभी प्रखड स्तर पर जनसघर्ष समितियां बनना बाकी है। कई पचायतो मे एव गाँवो मे जन-सघर्ष समितियां बनी हैं। लेकिन अभी अनेक पंचा- तालमेल का काफी अभाव रहा है। कई विद्यार्थियों ने प्रशसनीय कुरबानी की है। तो भी छात्रों में एव प्रजा मे और अधिक निर्भयता का सचार होने की जरूरत है। वैसे ही युद्धवादी हुए बिना शुद्धि का आग्रह निरतर रखा जाना चाहिए। इस ओर जय-प्रकाशजी का निरतर ध्यान रहता है, यह खुशी की बात है।

भविष्य मे काम की दिशा क्या हो? आज के कार्यक्रम तो चलने ही चाहिए। साथ-साथ विद्यार्थियो से एव युवको मे से चयन कर १००० विद्यार्थी-युवको को छोटे-छोटे पाठ्य-क्रमो द्वारा प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। इससे सालभर समय देने वाले १००० प्रशिक्षित कार्यकर्त्ता मिलेंगे, जिनमे से कई आगे भी नये बिहार के बनाने मे कार्यरत रहेंगे। यह इस आन्दोलन की ठोस उपलब्धि होगी। वैसे ही हर जिले मे एक, आधा दिन के 'अध्ययन मंडल' शुरू होने चाहिए। पटना शहर एवं सहरसा-मुजफ्फर पुर आदि जिलो मे यह कार्यक्रम शुरू हुआ है। जगह-जगह इसे किया जाना चाहिए। वैसे ही सपूर्ण राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक क्षेत्रों मे नयी व्यवस्था का सूत्रपात जनशक्ति द्वारा होगा। भारत भर मे फैलने से ही सपूर्ण क्रांति चरितार्थ होगी। कई प्रदेशो मे सरकार का एव कांग्रेसजनो का साथ भी इसमे रहेगा। ऐसा प्रयत्न आग्रहपूर्वक किया जाय। तमिलनाडु के मुख्य मन्त्री श्री करुणानिधि, ने सार्वजनिक रूप से कहा था कि यदि जय-प्रकाश भ्रष्टाचार, महगाई आदि के विरुद्ध आन्दोलन करने के लिए तमिलनाडु आते हैं तो उनकी सरकार इसका स्वागत करेगी और सहयोग भी देगी। इस प्रकार लोक-क्षोभ का समाज-रचना बदलने के लिए शांतिमय आन्दोलनो द्वारा विधायक उपयोग भारत भर मे किया जाना चाहिए। इससे बापू के सपनो का भारत बनाने में राष्ट्र एक लम्बी छलाग ले सकेगा। सत्ताइस साल कूर्मगति से चलने के बाद या सोने के बाद अब समय आ गया है कि राष्ट्र एक लम्बी छलांग मारे।

—ठाकुरदास बग

लोकनिष्ठ नागरिकों से

दादा धर्माधिकारी

बिहार के छात्र और जन आंदोलन के प्रति सरकार ने जो क्रूरतापूर्ण और अनियंत्रित दमन नीति अपनायी है उसे देखकर कोई भी तटस्थ और लोकनिष्ठ नागरिक का चित्त सतर्क और व्यथित हुए बिना कैसे रह सकता है? सरकार जिस आन्दोलन को शांतिपूर्ण लोकजीवन के लिए घातक समझे, विधानसम्मत दंडप्रयोग से दबाने का उसे अधिकार है। परन्तु विधान और कानून की सारी मर्यादाएँ तोड़कर जब कोई शासन दंड प्रयोग नहीं, लाठी-गोली का प्रयोग करता है तो वह लोक द्रोह का दोषी होता है। आज बिहार में लोकान्दोलन को कुचलने के लिए जिन उपायों और तरीकों से काम लिया जा रहा है, वे सौम्य से सौम्य भाषा में, आसुरी हैं।

यह तो स्पष्ट ही है कि बिहार का आन्दोलन लोकान्दोलन है। वह मुट्ठी भर लोगों का आन्दोलन होता तो अब तक बिखर गया होता। थोड़ी देर के लिए यह भी मान लें कि लोग डर के मारे उसका विरोध नहीं करेंगे, इसलिए मुट्ठी भर उत्पाती लोगों की बात चलती है लेकिन उस हालत में लोग सहमकर या डरकर चुप रहेंगे, आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग न लेंगे। बिहार के आन्दोलन को लोगों का व्यापक और सक्रिय समर्थन है। इसका स्पष्ट अर्थ यह हुआ कि सरकार और जनता आमने सामने हैं। जिस सरकार का दुराग्रह जनता से हो वह जनता के आन्दोलन का विरोध लोकतंत्र के नाम से करे इससे अधिक हास्यास्पद और मनोरंजक और क्या हो सकता है?

संविधान पवित्र इसलिए है कि उसमें लोगों के मूलभूत अधिकारों और स्वतंत्रता का निश्चित आश्वासन है। यदि संवैधानिकता की दुहाई देकर लोगों के अधिकार और जीवन के साथ ही निर्दयता से खिलवाड़ किया जाय तो उस लोकतंत्र में से 'लोक' का ही लोप हो जाता है। लोकविहीन लोकतंत्र केवल एक सुन्दर मकबरा हो सकता है वह लोकसत्ता का पवित्र मंदिर नहीं हो सकता।

आज वस्तुस्थिति क्या है? लोगों के निर्वाचित प्रतिनिधि अपने चुनाव-क्षेत्रों में जाने से डरते हैं, उन्हें मतदाता से डर लगता है। उनकी सुरक्षा के लिए पुलिस भी पर्याप्त नहीं है। सैनिक संगठनों को तैनात करना पड़ता है। दिन में कई बार कई जगह गोली चलानी पड़ती है। कैदखानों में सत्याग्रहियों पर अशोभनीय और गैरकानूनी अनाचार होते हैं। और यह सब लोकतंत्र की रक्षा के लिए!

वर्तमान शासनारूढ़ पार्टी अगर दरअसल लोकतंत्र में विश्वास करती हो तो उसे सत्ता त्याग करने के लिए इतना काफी होना चाहिए कि रोज गोली चलाये बिना वह शासन नहीं कर सकती।

आमात्यिक लोकनिष्ठा का यह तकाजा है कि वे स्वेच्छा से सम्मान पूर्वक शासन के सूत्र नीचे रख दें। जनता और सरकार एक दूसरे के विपक्षी! क्या लोकतंत्र में इस स्थिति की भी कल्पना की जा सकती है? यह सूर्य-प्रकाश के समान स्पष्ट है कि बिहार की जनता का विश्वास वर्तमान विधायकों में नहीं रह गया है। वह उन्हें हटाना चाहती है। तो फिर उन स्थानों से चिपटे रहने में कौन सी शान और शोभा है?

क्या सरकार जनता को प्रतिपक्षी समझकर हराना चाहती है? हिंसा और अत्याचार से आतंकित और पराभूत नागरिक जिस लोकतंत्र का अधिष्ठाता होगा, उस लोकतंत्र में कोई सत्व रहेगा? श्री इंदिराजी को हमने पुरोगामी सत्तावादों और प्रतिक्रियावादियों के प्रतिकूल माना है। जबसे वे प्रधान मंत्री बनी, उनकी चेष्टा देश में प्रगतिशील प्रयोग करने की रही है। जिन नागरिकों के कल्याण और उत्थान के लिए ये सारे प्रयोग आरम्भ किये गए थे, उन्हीं को निस्तेज और निःसत्व बनाकर वे किस लोकतंत्र का संरक्षण करना चाहती हैं? क्या इस अवसर पर लोकनिष्ठा का तकाजा नहीं है कि हजारों लोगों को कारावास की यंत्रणाएं देकर और सैकड़ों लोगों को लाठी-गोली के शिकार बनाकर लोकतंत्र के संरक्षण का असमानुपीय प्रपंच रचने के बदले वे अविलम्ब बिहार विधान-सभा का विसर्जन कर दें और लोगों की प्रतिष्ठा बढ़ायें। लोकान्दोलन दबाया जा सकता है शायद परन्तु पराजित कदापि नहीं हो सकता। लोगों को दबाने और हराने में कौन सी शान है? यह तो तानाशाह के लिए भी शुभ नहीं हो सकता।

जो लोग बिहार आन्दोलन को गलत और अवांछनीय मानते हैं वे भी लोकनिष्ठ तो हैं ही? वे भी जनता की सत्व हानि के साक्षी तो नहीं होना चाहते? वे राज्य द्वारा दंड प्रयोग में भले ही विश्वास करते हों परन्तु निरंकुश बलप्रयोग के हिमायती तो नहीं हैं? उन्हें भी इस अवसर पर अपनी सारी प्रतिष्ठा और सामर्थ्य की बाजी लगाकर सरकार को बिहार विधान सभा के विसर्जन के लिए बाध्य करना चाहिए। लोकनिष्ठा और लोकतंत्रनिष्ठा का यही तकाजा है। जो सत्ताधारी दल के विधायक हैं वे भी दल से लोक को तो श्रेष्ठ मानते ही हैं। लोक ही ही सजीवता नहीं होगी, तो दलों में क्या दम रहेगा?

जो लोग बिहार के आन्दोलन को लोकतंत्र विरोधी मानते हैं, वे भी तो लोकनिष्ठा के कारण ही उसका विरोध करते हैं? क्या सरकार की आसुरी दमननीति और अत्याचारों से लोकतंत्र का परिरक्षण होगा? और क्या भी ऐसी निष्प्रभ और निःसत्व विधान-सभा के कलेवर के परिरक्षण के लिए कि जिस विधानसभा में लोक प्रतिनिधित्व की प्रतिच्छाया भी शेष नहीं रह गयी है?

जे० पी० जैसे अलौकिक और अद्वितीय

लोकनेता को थोड़ी देर के लिए छोड़ भी दें तो भी क्या बिहार की जनता का उत्पीड़न लोकतंत्र के नाम पर समर्थनीय है ? देश के सभी दलों के और दल निरपेक्ष नागरिकों को इस अवसर पर बुलन्द आवाज से सरकार की नीति का निषेध करना चाहिए और बिहार विधानसभा का विसर्जन करके भ्रष्टाचार-निवारण के लिए दोनों पक्षों के सहयोग का मार्ग प्रशस्त करने को प्रेरित करना चाहिए।

श्री इंदिराजी से भी मेरा साग्रह अनुरोध है कि वे बिहार विधानसभा का विसर्जन तुरन्त करें और इस प्रकार अपनी प्रगतिशीलता तथा लोकनिष्ठा का परिचय दें। लोकतंत्रनिष्ठा का यह लक्षण है कि हिंसक आन्दोलन के प्रतिकार के लिए भी राज्य विधान विहित हिंसा का ही प्रयोग करे। वहां भी अवैध और अतिरिक्त हिंसा का प्रयोग निषिद्ध है। आखिर हिंसा भी शिष्ट और अशिष्ट, विधिसम्मत और विधान विरोधी होती है। आज सरकार द्वारा एक शान्तिमय आन्दोलन को कुचलने के लिए जिस अमर्यादित और अवैध हिंसा का प्रयोग हो रहा है वह सर्वथा असमर्थनीय है। अत: यह निवेदन किया जा रहा है।

—दादा धर्माधिकारी

लोकयात्री दल श्रीलंका में

(भारत में पिछले आठ वर्ष से पदयात्रा कर रही लोकयात्रियों की टोली ने इस माह के प्रारम्भ में श्रीलंका में प्रवेश किया। वहां से आये उनके पत्र का अंश उनकी यात्रा का वर्णन करता है। —स०)

पूज्य बाबा कहते हैं कि भारत इतना बड़ा द्वीप, फिर भी कश्मीर से कन्याकुमारी तक कहीं भी जायें, कोई पूछताछ नहीं। भारत की इस विशेषता का भारत में रहनेवालों को भान नहीं है। हमें भी इसका अनुभव तब आया जब श्रीलंका में जाने के लिए लम्बी कार्रवाई से गुजरना पड़ा। सामने आया पासपोर्ट-वीसा के लिए चक्कर काटना, पत्र-व्यवहार करना, खर्चा, टीके लगवाकर मेडिकल सर्टीफिकेट लेना, मुद्रा बदलवाना आदि। पोर्ट में खिड़कियों के अलावा हैं अनेक मेज कुर्सियां लगाये बैठे कर्मचारी। एक के बाद एक करके सबको सलामी देते बढ़ते जाना और उनकी दी पर्चियों को भी आगे बढ़ाते जाना। अन्त में नाविक का सामना, तब तक 2-3 घन्टे हो जाते हैं। कड़ी धूप में बैठक, फिर जहाज में गये। तीन घन्टे लगते हैं, तीस मील की दूरी पर स्थित, श्रीलंका को पार करने में। हम निश्चिन्त बैठे थे कि पता चला कि श्रीलंका में तो यह कार्रवाई और सख्ती से होती है याने इतने नजदीक देश जाने में पूरा दिन समाप्त।

जहाज तो आलीशान चलते-फिरते मकान की तरह है—लोग सोते थे, खाते-पीते थे बातें करते थे। रामेश्वरम के मकान, मन्दिर, पेड़-पौधे, दूर होते-होते गायब ही हो गये थे, और दर्शन होता था विराट समुद्र में बसी सरस्वती का-मानो सारी पृथ्वी जल-मग्न हो गयी हो। बाइबिल में दी प्रलय की कहानी याद आ जाती है।

अब फिर पृथ्वीलोक का दूर से दर्शन होने लगा। हम समझ गये कि अब श्रीलंका आ रहा है—जिसके साथ भारत का पुराना "मैत्री" का संबन्ध है, जिसे संघमित्रा और महेन्द्र की बुद्ध वाणी ने पावन किया था-मानों हम बुद्ध भूमि में प्रवेश कर रहे थे, बुद्ध के चरणों में बुद्धवासियों के दर्शन करने। तलेमन्नार में जहां श्रीलंका का बंदरगाह है, श्रीलंका का झंडा सामने किये पुनीत जनता के प्रथम दर्शन से हम गद्‌गद् हो रहे थे। प्रेम से अभिवादन कर पुष्प, पान और नीबू दिये गये। सबकी आंखों में थी जिज्ञासा? हमारा रिश्ता क्या है? खून का, भाषा, धर्म, देश का? फिर भी वे चिर-परिचित लगे। रवीन्द्रनाथ टैगोर की कविता याद आयी 'नूतनेर माझे तुमि पुरातन' नये के बीच वही पुरातन है। जनता सब जगह समान है। बैठे बैठे नजर गयी एक भाई पर जिसके हृदय में कुछ चल रहा था। सकुचाते हुए वे उठे और हमारे हाथ में एक एक छाता देकर उन्हें समाधान हुआ। एक दूसरे भाई ने बड़े बड़े नारियल लाकर रखे थे, पिला-पिलाकर वे गद्‌गद् हो रहे थे।

श्रीलंका सर्वोदय श्रमदान संघ के प्रमुख श्री आर्यरत्ने तथा उनकी पत्नी, नीना बहन तथा सरकारी प्रतिनिधियों द्वारा आयोजित इस कार्यक्रम में टोली ने अपने उद्‌गार प्रकट करते हुए कहा, "भारत-श्रीलंका मैत्री की कड़ी प्राचीन इतिहास की देन है। हम यहां उपदेश करने नहीं, आपसे सीखने आये हैं, आपके दर्शन के लिए आये हैं।" सबने अपनी प्रसन्नता जाहिर करते हुए यात्रा को खूब अच्छी तरह चलाने का आश्वासन दिया। उन्होंने चार माह यात्रा चलाने की मांग की। समुद्र या जंगल पार करने में यात्रा की अवधि खत्म हो जाती, इसलिए हमने तीन महीने मान्य किये हैं।

सामने ही एक बड़ा गोला खींचा गया था और फावड़े आ गये थे। सभा का अन्त श्रमदान में हुआ—आज कुएँ का उद्‌घाटन हो गया। 'श्रमदान' यहां के सर्वोदय आन्दोलन की बुनियाद है। यात्री बहनों ने कार्यक्रम के साथ इसे जोड़ दिया है। गांव के भाई-बहन इसमें खुशी खुशी शामिल हो जाते हैं, गांव की हवा बदल जाती है और निर्माण कार्य सहज हो जाता है।

शिविर तक जाते जाते किशोरियां श्रीलंका के और 'सर्वोदय' के मधुर गीतों से रास्ते को गुंजाती चलीं। सर्वोदय के गीत यहां सुनने को मिले। अपार हर्ष हुआ। प्रथम दिन ही स्त्री-शक्ति का दर्शन हुआ।

हमारी आरंभ की यात्रा जंगल व समु‍द्र के साथ साथ चल रही है। समुद्र का इतना दर्शन पहले कभी नहीं हुआ था। उसे पार करने में कभी नाव, कभी फेरी और कभी समुद्र को चीरती सड़क। कभी पृथ्वीलोक की यात्रा चलती है तो कभी समुद्रलोक की। 'मानार', 'जाफना' जिलों की भाषा है तमिल, इसलिए लगता है जैसे हम तमिल नाडु-भारत की यात्रा कर रहे हैं। पूज्य बापू, पूज्य बाबा के अन्तरंग के साथ में लोग इतने

जुड़े हैं कि यात्रा को अपना ही मानते हैं और हर प्रकार का सहयोग देते हैं। पूज्य बापू के नाम से कई संस्थाएं सेवा में रत हैं। भारत का दर्शन करने आनेवाले लोग भी खूब मिलते हैं। यहां से शिक्षण लेनेवाले भी खूब हैं। यहां की वेशभूषा में हिन्दू, मुसलमान व ईसाई लड़कियां स्कर्ट-ब्लाउज बढ़िया कपड़े का पहनावा पहनती हैं, स्त्रियां साड़ी व पुरुष कमीज-धोती। पुराने लोगों में सादगी है। नयी पीढ़ी भी सम्हली हुई है।

दूध का अभाव है—पशुपालन में रुचि कम है क्योंकि मछली समुद्र में मिल जाती है। उसमें मसाले व खटाई डालकर 'सोदी' (एक प्रकार की रसम) भोजन के प्रत्येक समय बनाते हैं। सुबह शाम "ईडीयपम" चावल की उबली सेवैया खाते हैं। जितनी सब्जियां बाजार में मिलती होंगी उतनी सारी 10-12 सब्जियां बनाकर खिलाते हैं। नारियल के दूध के कारण उसमें मधुर स्वाद रहता है। नारियल का पानी पीने का रिवाज नहीं है (वह भी सब्जी में डाल देते हैं)। चाय यहां अब कम मिलती है, पहले बाहर से आती थी। यहां की मुख्य पैदावार है—चावल, नारियल, मछली, ताड़-फल (प्लैमेरा)। बाकी सारी चीजें विदेश से आती हैं। दूध पाउडर, ब्रेड, कपड़े, विदेशी वस्तुएं अब सरकारी नियन्त्रण के कारण कम आती हैं। अब स्थानीय उद्योगों की दिशा में प्रयास चल रहे हैं।

यहां की एक विशेषता है कि हमारे पड़ाव ईसाई मिशनरियों के बीच तथा परिवारों में, मुसलमानों के बीच तथा हिन्दुओं के बीच में रहे। गांव का प्रतिनिधित्व तीनों सम्मिलित रूप से करते हैं। जनता में धार्मिक भेद नहीं, सहज सम्मिश्रण है। कान्वेंट स्कूल खूब हैं। धर्मों में अनेक मत-मतान्तर, गांव में पार्टियों के झगड़े यहां भी हैं। यहां भी स्वागत सभा, स्कूल सभा, ग्राम सभा होती है। व्यवस्था करने में लोग कोई कसर नहीं रखते।

थोलका में मातृक प्रथा है। सम्पत्ति की मालिक लड़की बनती है। लड़का पत्नी के घर चला जाता है। बाप अपनी प्रत्येक लड़की को घर, खेत देना चाहता है। माता-पिता की जिम्मेदारी विशेषत सम्पत्ति का हक लड़के को नहीं लड़की को मिलता है फिर भी शादी में दहेज की माग खूब होती है। इसलिए गांव में बड़ी उम्र की लड़कियां बैठी हुई हैं। यही अच्छा है कि उन्हें भटकना नहीं पड़ेगा। माता-पिता का घर, खेत तो रहेगा। पढ़े लिखे व अमीरों में यह प्रश्न अधिक जटिल है।

अभी 10-12 दिन और हमारी यात्रा 'तमिल' क्षेत्र में चलनेवाली है। सिंहली लोगों में पहुंचने के पूर्व यात्रा में 'सिंहली' सीखना आरम्भ हो गया है। बुद्ध-संस्कृति के दर्शन की जिज्ञासा बढ़ रही है।

जन संघर्ष समितियां

भागलपुर नगर में ३२ वार्डों में २६ जन-संघर्ष समितियां बनी चुकी हैं। नगर में ५५ क्षेत्रों में व ५६ संस्थाओं में छात्र संघर्ष समितियां बनी हैं। जिले के २२ प्रखंडों में से १६ में सभी पंचायतों में जन-संघर्ष समितियां बन चुकी हैं। १४ प्रखंडों में प्रखंड स्तरीय संघर्ष समितियां बनी हैं।

मूलभूत नीति से भाष्य की संगति वांछनीय

—चारु भंडारी

११ जुलाई, ७४ की सर्व सेवा संघ की बैठक में जो विषम स्थिति पैदा हुई उसको सुलझाने के लिए बाबा ने जो व्यवस्था की, उसकी व्याख्या में मतभेद पैदा हुआ है। उस सम्बन्ध में मान्यवर दादा का (श्रीदादा धर्माधिकारी) एक लेख ("दूसरों के भाष्य अपने-अपने हैं") इस पत्रिका में (ता० ६ सितम्बर, ७४) को निकला। उसमें उन्होंने कहा 'अपने कथन का जो अर्थ बाबा बतलावें—वह सही मानना चाहिए। दूसरों के भाष्य अपने-अपने हैं।" यह बात ठीक है। लेकिन उन्होंने फिर लिखा है—"दूसरों की वे व्याख्याएं जब तक बाबा नहीं खंडन करते तब तक उन अर्थ को भी मूल अर्थ के लिए उपकारक ही समझना चाहिए।" इस बारे में मैं उनके साथ सहमत नहीं हो सकता हूं। सर्व सेवा संघ की मूल नीति के साथ किसी व्याख्या की असंगति हो जाय तो वह भाष्य सर्व सेवा संघ और सर्वोदय के लिए हानिकारक ही होगा, यह मेरा दृढ़ अभिमत है।

बाबा से की गयी उस व्यवस्था के सम्बन्ध में संघ के महामंत्री बंग साहब का एक पत्रक निकला। वह १५ जुलाई को मुझे पवनार, ब्रह्मविद्या मन्दिर में प्राप्त हुआ। मैंने तुरन्त जवाब में उनको लिखा—'उस परिपत्र में एक वाक्य है, जिसके प्रति मैं आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं। वह है: "इसलिए ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य एवं जन समस्याओं को लेकर चलनेवाले आन्दोलन ये दोनों ही सर्व संघ के मान्य कार्यक्रम हो गये हैं।" यह वाक्य विभ्रान्तिकर है, क्योंकि उसमें "जन-समस्याओं को लेकर कार्यक्रम को लेकर चलनेवाला आन्दोलन" को सर्व सेवासंघ का मान्य कार्यक्रम कहा गया है और संघ के कार्यक्रम की दृष्टि से उसको ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के पर्याय भुक्त बनाया गया है। यह पूज्य विनोबाजी की सलाह की गलत व्याख्या है। उन्होंने जो कहा उसका तात्पर्य यह है कि बिहार आन्दोलन में जो शामिल होना चाहते हैं प्रयोग के तौर उसमें भाग ले सकते हैं। इसलिए वह कार्यक्रम सामयिक और प्रयोगात्मक है। अगर बिहार आन्दोलन विजयी हो जाये और उसमें काफी अच्छी जनशक्ति बन जाये, तो तब वह संघ का कार्यक्रम बन सकता है क्योंकि सर्व सेवा संघ के के विधान में (संघटन पत्रक, अन्तिम कण्डिका) यह है—"अपने उपर्युक्त उद्देश्य की पूर्ति के लिए संघ समय-समय पर विधायक कार्यक्रम तय करेगा।" दूसरी बात, आपके परिपत्र में कहा गया: "जन समस्याओं को लेकर चलनेवाले आन्दोलन", इसके माने है जन-समस्याओं को लेकर जितने आन्दोलन देश में चल रहे हैं या चलेंगे वे सब। लेकिन पूज्य बाबा ने सिर्फ बिहार आन्दोलन की बात कही है। सिर्फ उसमें शामिल होने के लिए आजादी दी गयी है। इसलिए ऐसा सामान्यीकरण करना ठीक नहीं है, यह मेरा नम्र निवेदन है। इसलिए, मेरी विनती है कि आप इस परिपत्र को तुरत संशोधित करें और संशोधित परिपत्र सबको भेजें।'

लेकिन अब तक उस परिपत्र में कोई संशोधन नहीं किया गया। पूज्य बाबा के उस दिन के भाषण में यह शब्दावली है:

"इस वास्ते प्रयोग के लिए जायें। अपने-अपने ढंग से दोनों प्रयोग करें। यह आज हमने कह दिया, सब प्रसन्न हो गये।"

'अगर अनुभव आया कि पटना क्षेत्र विजयी हुआ और काफी अच्छी जनशक्ति बनी है, तो उससे जो प्रभावित नहीं थे वे प्रभावित होंगे और उसके साथ हो जायेंगे। अगर ऐसा नहीं हुआ तो उसका खास लाभ नहीं हुआ। उसकी शक्ति निखरती नहीं है, तो उसे छोड़ देंगे और दूसरा जो अपना प्रोग्राम है, वह अपना है ही, उसमें फिर से दुबारा जोर लगायेंगे।' अतएव बिहार आंदोलन में शामिल होने की जो सर्वानुमति मिली वह सिर्फ बिहार आन्दोलन के लिए और प्रयोग के वास्ते और उनके बयान में ग्रामस्वराज्य के कार्यक्रम को ही अपना कार्यक्रम बताया गया।

सर्व-सेवा संघ के विधान संगठन-पत्रक में बताया गया कि संघ का उद्देश्य है: 'साम्ययोगी अहिंसक क्रांति" और उस उद्देश्य की पूर्ति के लिए विधायक-कार्यक्रम घोषित किये जायेंगे। इसलिए जब-तक बिहार आन्दोलन विधायक-कार्यक्रम साबित नहीं होगा तब-तक उसको सर्वोदय या सर्व सेवा संघ का कार्यक्रम मानना सर्व-सेवा संघ के विधान का विरोधी होगा।

आन्दोलन के कारण बिहार विधान सभा विघटित हो जाये तो भी पटना क्षेत्र सर्वोदय और सर्व सेवा संघ की दृष्टि से विजयी हुआ, ऐसा नहीं माना जायेगा। उससे विधायक जनशक्ति पैदा हुई या नहीं, यह देखना चाहिए। अब तक गांवों के लोग अपने अभिक्रम से, खास लोग भी ग्राम-स्वराज्य बनाने में उदासीन रहे हैं। अगर आन्दोलन के प्रभाव से अपने अभिक्रम से उनको ग्राम-स्वराज्य बनाने में प्रेरणा आ जाये और वे तुरन्त अपने-अपने

बंगाल के वयोवृद्ध सर्वोदय सेवक चारु भंडारी स्वतन्त्रता संग्राम के सक्रिय सैनिक और राज्य मंत्रिमंडल के सदस्य रहे हैं। बंगला में अनेक पुस्तकें प्रकाशित, जिनमें से कुछ हिन्दी में भी अनूदित।

गांवों में ग्रामस्वराज्य बनाने में लग जायें तो समझा जायेगा कि आन्दोलन से विधायक लोकशक्ति बनी है और आन्दोलन सफल होने वाला है। अनन्तर यद्यपि तुरत पूरी तरह ग्रामदान पुष्टि या ग्रामदान नहीं हो सके, तो भी विधान सभा के निर्वाचन के क्षेत्रों के हर गांव में सर्व-सम्मति से ग्राम सभा बन जाना, हर ग्राम की सर्व-सम्मति से एक प्रतिनिधि चुना जाना और सब ग्राम-प्रतिनिधि मिलकर एकमत से हर विधान सभा निर्वाचन क्षेत्र के लिए एक उम्मीदवार नामजद करना चाहिए। सभी निर्वाचन क्षेत्र के लिए यह सम्भव नहीं हो सके तो कम से कम कई क्षेत्रों में तो ऐसा होना चाहिए। तब ही समझा जायेगा कि आन्दोलन विधायक जनशक्ति पैदा हुई है। नहीं तो सर्वोदय की दृष्टि से वह सफल नहीं हुआ। इसलिए जब तक बिहार आन्दोलन इस माने में सफल नहीं बने, तब तक बिहार का आन्दोलन सर्व सेवा संघ और सर्वोदय के नाम पर नहीं चल सकता है। सिर्फ उनको प्रयोग के तौर पर उसमें शामिल होने का विकल्प है।

अब तक इस देश में ऐसा एक भी आन्दोलन नहीं हुआ जिसमें हिंसा और असत्य की छाया न रही हो, यह बात सही है, लेकिन अब तक सिर्फ इस देश में नहीं, दुनिया में ऐसा कोई भी आन्दोलन नहीं हुआ जिसका उद्देश्य है: साम्ययोगी अहिंसक क्रांति याने जिसकी बुनियाद है आध्यात्मिक और जिसका उपाय है सत्य और अहिंसा।

१९२२ में कांग्रेस में 'पार्लियामेंटरी प्रोग्राम' के सम्बन्ध में मतभेद के कारण परिवर्तनवादी और अपरिवर्तनवादी बन गये। उस बारे में गांधीजी की भूमिका और १२ जुलाई की विनोबाजी की भूमिका में कोई साम्य नहीं है। गांधीजी के समय का आन्दोलन कांग्रेस के लिए राजनैतिक था। लड़ाई के दरमियान सरकार की बनावट के किसी हिस्से में घुसकर उसपर से लड़ाई करना या नहीं करना, यह व्यूह-रचना का प्रश्न था। वहां परिवर्तन में कोई मूल नीति का प्रश्न नहीं था याने उस परिवर्तन में कोई प्रकारगत भेद नहीं था। लेकिन बिहार आन्दोलन और सर्वोदय आन्दोलन के बीच प्रकार-भेद है। मूलनीति का प्रश्न उसमें निहित है। बिहार आन्दोलन भी विधायक है—यह बाबा को किया जाता था। इसलिए १२ जुलाई को बाबा ने कहा—"इस वास्ते प्रयोग के लिए जायें।" अगर बाबा ऐसा नहीं कहता तो बाबा की सलाह के बावजूद सर्वसम्मति या सर्वानुमति शायद नहीं हो पाती।

सर्वोदय की मूलनीति क्या है, वह इस प्रसंग में दोहराने की जरूरत है? विनोबाजी ने चाण्डील सर्वोदय सम्मेलन में अपने प्रथम भाषण में इस सम्बन्ध में विस्तार से विचार प्रकट किये थे। उन्होंने राज्य सत्ता या राज्य शक्ति का नाम दिया—"दण्ड शक्ति"। उन्होंने बताया कि हमारा ध्येय है, "स्वतन्त्र लोकशक्ति"। वह राज्य शक्ति याने दण्डशक्ति से भिन्न और हिंसा शक्ति की विरोधी है। दण्ड शक्ति से भिन्नता का अर्थ यह है कि जो कुछ सरकार से होना अपेक्षित है वह 'स्वतन्त्र लोकशक्ति' से बन जायेगा। अगर वहां 'स्वतन्त्र लोकशक्ति' पैदा होगी तो बिहार आन्दोलन का कोई कारण नहीं रहता। ग्राम स्वावलम्बी बनने पर मूल्य वृद्धि इतनी नहीं हो पाती और भ्रष्टाचार का मौका बहुत कम हो जाता लेकिन स्वतन्त्र लोकशक्ति पैदा करने में याने ग्रामस्वराज्य की प्रतिष्ठा में कठिनाई और देर क्यों हो रही है? उसका मुख्य कारण यह है कि जन-मानस में सरकार के प्रति अत्याशक्ति है। याने सरकार से ही सब हो सकता है। यह मानसिकता हटाने में बहुत कठिनाई लगती है। सरकार पर भरोसा सबका है। कौन सी पार्टी की सरकार पर भरोसा रखना चाहिए, सिर्फ इस सम्बन्ध में जनता में मतभेद है। कई को लगता है—फलानी पार्टी की सरकार बनने पर सब मिलेगा, दूसरे कई को लगता है कि दूसरी किसी पार्टी की सरकार बनने से जो कुछ चाहिए वह सब हो जायेगा और तीसरे कई का विश्वास है कि तीसरी फलानी पार्टी की सरकार सभी कर देगी, दूसरी पार्टी से यह सम्भव नहीं होनेवाला है। इस हालत को ध्यान रखकर बिहार के आन्दोलन की तरफ देखना चाहिए कि यह आन्दोलन सर्वोदय और सर्व-सेवा संघ की मूलनीति से क्या विपरीत मार्ग पर चलता है? इस आन्दोलन से जनमानस पर क्या असर हो सकता है? आन्दोलन जनमानस में यह भावना पैदा करना चाहता है कि ग्राम-स्वराज्य पूर्ण है और सरकार शून्य है। लेकिन बिहार का आन्दोलन सरकार को इतना महत्व देता है कि जैसे सरकार पूर्ण है और हम याने सर्वोदय (ग्राम स्वराज्य) शून्य है, खास करके इस कारण से कि जयप्रकाश नारायण जैसे व्यक्तित्व सम्पन्न महान पुरुष और एक वरिष्ठ सर्वोदय नेता इस काम में लग गये हैं और उन्होंने आन्दोलन का नेतृत्व भी अपनाया है। जहां जनता को उत्तर की तरफ मुंह करके चलना चाहिए, वहां उनको दक्षिण की तरफ मुंह रख कर चलना सिखाया जाता है।

यह प्रश्न उठ सकता है कि आज बिहार सरकार की जो स्थिति है उसके प्रतिकार के वास्ते कुछ करना चाहिए या नहीं? जरूर कुछ करना चाहिए। लेकिन सर्वोदय की तरफ से वह नहीं होना चाहिए। विरोधी पार्टियां हैं, दूसरे लोग भी हैं। वे वह कर सकते हैं। वह उनका फर्ज भी हो सकता है। बिहार की सरकार की जो स्थिति है, उसमें लोकमानस ग्राम स्वराज्य की तरफ मोड़ने का अच्छा मौका आया। लेकिन उस सुयोग का सदुपयोग करने के बजाय जो मानसिकता उसमें रूढ़ है, उसको और दृढ़ बनाया जा रहा है।

इसलिए मैं कहता हूं कि १२ जुलाई के बाबा के कथन का भाष्य हमारी मूलभूत नीति से संगति में होना चाहिए।

दिल्ली रैली अब ६ अक्टूबर को

दिल्ली नागरिक जन संघर्ष समिति ने २ अक्टूबर को होने वाली रैली की तिथि को बढ़ाकर ६ अक्टूबर कर दी है। ईरान के शाह गांधी जयन्ती के अवसर पर आ रहे हैं, इसलिए इन्दिराजी ने समिति के अध्यक्ष आचार्य कृपलानी से रैली न करने का अनुरोध किया था।

अब २ अक्टूबर को राजघाट समाधि पर प्रार्थना और प्रात ९ बजे रामलीला मैदान में सामूहिक बैठक होगी। रैली शाह ईरान के ५ अक्टूबर को स्वदेश लौट जाने पर ६ अक्टूबर को होगी।

बीच की बात : जनवादी आधार

अब तक जयप्रकाशजी द्वारा समर्थन किसने के बिहार का मन्त्री रह और फलतः यह तो सभी को लगता था। उन्होंने उसे कतिपय मोड़ दिया पर कांग्रेस के लोगों ने भी माना हालांकि इधर कुछ बातें ऐसी हुई हैं जिनसे इस आन्दोलन के बारे में विवाद पैदा हुआ है। इसको लेकर शासन के समर्थक और विरोधी दोनों अपने-अपने ढंग की सफाई दे रहे हैं। यह हमारी बदकिस्मती है कि जनतंत्र, समाजवाद, संविधान, धर्मनिरपेक्षता, गरीबी व भुखमरी हटाने में समान उद्देश्य रखनेवाले दो तरह के लोगों में बट रहे हैं और दोनों तरफ से आक्रमक उग्र हो चले हैं। जनता की परेशानियां, मध्यमवर्ग की चिढ़ाई और बुद्धिवादियों तथा छात्रों का आक्रोश पिछले कुछ बरसों से इतने तेज हो रहे थे कि उनका विस्फोट कहीं न कहीं से होना ही था। 'पैट्रियट' अखबार नेहरू भक्त माना जाता है और इन्दिराजी के समर्थन में उसने अपनी कलम बन्द नहीं की है, पर उसमें आज के जन असंतोष की जो तस्वीर निकलती रही है वह बहुत साफ और नसीहत देने वाली है। सबसे पहले इसी अखबार ने जयप्रकाशजी को खुला पत्र लिखकर आंदोलन चलाने की मांग की थी। गुजरात में पहला विस्फोट हुआ और जयप्रकाशजी सामने आये। गुजरात का आंदोलन जे. पी. के मार्गदर्शन में नहीं था, पर बिहार में जो कुछ हो रहा है उस पर उनका काफी असर है। वे शुरू तो इस आंदोलन को भी अपना न कहकर छात्रों का चलाया हुआ मानते हैं। सर्वोदय क्षेत्र में इसे लेकर जो बहस हुई उसमें भी उन्होंने अपनी बात साफ करने की कोशिश की। सर्व सेवा संघ के कई प्रमुख कार्यकर्ता उनकी तरफ खिंचे। बहुतों के मन में इस आंदोलन के बारे में कुशंकाएं बनी रहीं। पूज्य विनोबा ने बीच का रास्ता सुझाया। व्यक्तिगत रूप से इस आंदोलन में जो जाना चाहे जाये, इस पर सहमति हुई। इसीलिए यह आंदोलन सर्वोदय का न माना जाकर जे. पी. का है, इसी पर जोर दिया जा रहा है और बहुत से जे. पी. के पूरे इतिहास को उभारकर उसमें से अच्छी या बुरा कही जाने वाली बातें ढूंढो ऐसे के अखबारों में सुर्खी से छप रही हैं। डर यही है कि लोकतंत्र बचाने या जे. पी. का रास्ता सही है या गलत, या मौजूदा संसदीय लोकतंत्र, उसकी संसद या विधान सभाओं का विघटन करा के कोई दूसरा लोकतंत्रीय ढांचा बन सकता है या नहीं, इस बहस में पड़कर देश अपनी आज की समस्याओं को हल करने की ताकत और पहल न खो बैठे।

जबसे गुजरात भड़का तभी से मैं उद्विग्नता से सोच रहा हूं कि क्या कोई रास्ता निकल सकता है जिस पर सरकार, बुद्धिवादी, राजनैतिक दल और जनता के वह लोग जो आज के सवालों पर कुछ न कुछ विचार करते हैं और अपने अपने सुझाव देते हैं, ये सब राजी हो सकें और महगाई, भ्रष्टाचार, जमाखोरी मुनाफाखोरी और काले धन को रोकने के लिए सर्वसम्मत और असरदार कदम उठाया जा सके। पहले तो हमें यह मानना पड़ेगा कि हमारी तीन बुनियादी समस्यायें हैं। पहली है अनाज और जरूरी चीजों की कमी और इनके उत्पादन बढ़ाने का सवाल। यह कमी उतनी नहीं है जितनी बतायी जाती है, फिर भी उत्पादन बढ़ना चाहिए, यह तो सभी कहते हैं। दूसरी समस्या अनाज और जरूरी चीजों की वितरण प्रणाली की है जिसमें हमने पिछले बरसों में कई तरह की नीतियां अपनायीं और सभी असफल होती गयीं। उद्योगपति और व्यापारी समाज पर इस बुरी तरह हावी हो गये हैं कि मौजूदा प्रशासन का ढांचा उन्हें काबू में कर नहीं पा रहा है। एक अजीब मजाक चल रहा है कि अनाज, तेल, साबुन, किरासिन आदि भूमिगत हो जाते हैं जबकि सबको मालूम है कि वह जिस तरह दूकानों में जमीन के ऊपर थे, उसी तरह दूकानों से हटाये जाने के बाद भी जमीन पर ही रहते हैं। भूमिगत तहखाने जहां कोई आसानी से न जा सके किसी शहर में शायद दस पांच ही हों। जमाखोरी का ९९ फीसदी माल जमीन के ऊपर ही है और आसपास रहनेवाले जानते हैं। शासन की छापामार नीति अब तक इतनी असरदार नहीं हो पायी है कि जिससे दाम का बढ़ना रोका जा सके। इसलिए यह राय बनती जा रही है कि सरकार प्रभावशाली कदम उठाना ही नहीं चाहती।

पर असलियत यह है कि आज सरकार के पास जितने अफसर, कर्मचारी व पुलिस वाले हैं वे पूरे देश के कोने-कोने से जमा माल को निकाल नहीं सकते और जिस तरह का जनसहयोग मांगा और लिया जा रहा है, उसमें कोई स्थायी तरीका न होने से छापामार योजना व्यापारी को डरा और दबा नहीं पाती। अगर हम बड़े किसानों और व्यापारियों के दबाये हुए माल का ७५ फीसदी भी बाहर निकाल सकें यानी उसे बिक्री पर ले आयें तो दाम इतने घट जायें कि हमारी अर्थव्यवस्था के पैर जम जायें और मुद्रा स्फीति पर बहुत बड़ी रोक लग सके। जो मूल्य सूचकांक १९६० के हिसाब से तीन गुने से ऊपर हो गया है वह २०० के आसपास तो कुछ ही हफ्तों में पहुंच जाये। इससे जन असंतोष कितना कम हो सकता है और अर्थव्यवस्था की और कोसियों बीमारियां किस प्रकार रुक जायेंगी यह कोई मामूली अर्थशास्त्री भी बता देगा। यह मान लेने पर हमें वितरण प्रणाली के व्यापक दोषों के लिए व्यापक इलाज ढूंढना चाहिए और इस पर भी सर्वसम्मति हो सकती है।'

तीसरा सवाल सार्वजनिक क्षेत्र में फैली बुराइयों का है जिसको लेकर जनतंत्रीय समाजवाद का सम्पूर्ण मामला ही घोटाले में पड़ रहा है। राष्ट्रीयकृत उद्योगों में अफसरशाही, प्रशासनिक शिथिलता, उत्पादन में कमी, चोरी, कामचोरी, पक्षपात आदि की शिकायतें उठती रहती हैं और कुछ बढ़ा-चढ़ाकर भी बतायी जाती हैं क्योंकि निजी क्षेत्र को इनकी कामयाबी में अपनी मौत दिखायी देती है। वे तो इन्हें असफल करने के लिए हर कोशिश और षड्यंत्र करेंगे ही, पर समाजवादी सरकार और समाज के सभी समाजवादियों के लिए यह चुनौती है कि वह देश में फैली इस मान्यता को दूर करें कि सार्वजनिक क्षेत्र और

सारे देश में जन-समितियों का जाल फैल जायगा....

राष्ट्रीयकृत कामों में ईमानदारी, सूक्ष्मता और चुस्ती नहीं आ सकती। सर्वोदय के लोग भी इस चुनौती के भाने को दूर नहीं रख सकते। अहिंसात्मक तरीके से सार्वजनिक क्षेत्र का विस्तार करना तो गांधीमार्ग के प्रमुख आधारों में से एक होना ही चाहिए। यदि सार्वजनिक उद्योगों को ठीक से चलाने का तरीका निकल आये तो अनाज के अलावा दूसरी चीजों का उत्पादन हम इतना कर सकते हैं कि अपनी जरूरत पूरी करने के बाद काफी माल बाहर भी भेज सकें।

किसी भी विकासशील देश के लिए ये तीनों सवाल बुनियादी हैं और इन्हीं को लेकर असमंजस है जिसके कारण लोगों में संसदीय जनतन्त्र, राजनीति व चुनाव पर काले धन के प्रभाव व शिक्षा प्रणाली के बारे में अविश्वास बढ़ता है। मेरे ख्याल से इन तीन सवालों पर सहमति (कन्सेन्सस) हो सकती है, यदि हम जानकारी के आधार पर चिन्तन करें। शिक्षा प्रणाली, चुनाव पद्धति संसदीय जनतन्त्र या उसका विकल्प इन पर बहस तो ठीक है पर इनका इलाज या विकल्प ढूँढ़ना और उसे लागू करना इतना आसान नहीं है। इसीलिए सरकारी और विरोधी पक्षों में इन प्रश्नों पर बहुत ही बड़े मतभेद दिखायी दे रहे हैं और आरोप-प्रत्यारोप चल पड़े हैं। यही विवाद जे० पी० के आन्दोलन के उद्देश्य, कार्यक्रम और तौर तरीकों के बारे में भ्रान्तियाँ पैदा करता है और जो मूल सवाल महँगाई, भ्रष्टाचार व जमाखोरी का है वह गौण हो जाता है। आज मुझे जे० पी० और सरकार के बीच समझौते का जो आधार सूझा है वह संक्षेप में रख देता हूँ।

अनाज का उत्पादन बढ़ाने के लिए हमें छोटे किसान पर ध्यान देना होगा। हरित-क्रान्ति के लिए सिंचाई, बीज और नये औजार अधिक से अधिक उन किसानों को दिए जायें जो १० या १२ एकड़ से कम जमीनवाले हैं। इसकी मांग भी आ सकती है और किसी भी सरकार को इसके लिए मजबूर किया जाना चाहिए कि खेती की तरक्की के लिए जो रुपया और साधन पंचवर्षीय योजनाओं में निर्धारित करती है उसका ८०-८५ फीसदी छोटे किसानों को मिलना चाहिए। और इस रुपये का अधिकांश छोटी व मध्यम सिंचाई पर खर्च होना चाहिए जिससे साल दो साल में कम से कम १ करोड़ छोटे किसानों को फायदा पहुँचे। तब आप देखेंगे कि इस देश का अनाज, दूध, फल, सब्जी का सवाल पन्द्रह बीस बरसों के लिए हल हो गया है। खाद्य समस्या को सन्तुलित आहार की कसौटी पर सोचना चाहिए न कि सिर्फ अनाज को लेकर।

दूसरी बात सार्वजनिक इकाइयों की है। इसमें जो कर्मचारी या मजदूर (प्रशिक्षित) लगे हैं वे पढ़े लिखे या साक्षर हैं। सार्वजनिक क्षेत्र में श्रमिकों की प्रबन्ध में भागीदारी पर बहुत कहा गया है। पर उसका प्रयोग बड़े पैमाने पर और कारखाने के हर स्तर पर करने की जरूरत है। यूगोस्लाविया से हम इसमें कुछ नुसखे ले सकते हैं। यह भी किसी भी जनवादी आन्दोलन की प्रमुख मांग होना चाहिए।

तीसरी बुनियादी बात जमाखोरी और महँगाई रोकने की है। भ्रष्टाचार, काला धन, कालेधन की राजनीति से सांठ-गांठ प्रशासन में सांठगांठ, ये सब जमाखोरी के बगल बच्चे हैं। जमाखोरी और तस्करी व्यापक और भयानक रोग हैं। इन दोनों के बारे में पिछले कुछ महीनों में सरकारी प्रवक्ता भी कहने लगे हैं कि बिना जनता के सहयोग के ये रोग दूर नहीं होंगे। हम सर्वोदय वाले भूदान ग्रामदान के माध्यम से लोकशक्ति के निर्माण की बात करते रहे हैं। उसी लोक-शक्ति का आह्वान जे० पी० ने आन्दोलनों में किया है। यदि यह आन्दोलन जमाखोरों के खिलाफ प्रमुख रूप से होता तो अब तक सफल भी हो जाता क्योंकि सरकार खुद कह रही है कि जन सहयोग चाहिए। यही जगह है जो बीच की बात को ज्यादा साफ करती है। महँगाई, जमाखोरी, भ्रष्टाचार के खिलाफ जो कानून बने हैं, वे काफी हैं, उनका अमल नहीं हो पाने से व्यापारी और कारखानेदार का हौसला बढ़ता गया है। सरकारी मशीनरी और जनशक्ति का समन्वय कानूनी (स्टेचुटरी) आधार पर कर दिया जाये तो प्रशासन चुस्त हो जाये। मेरा सुझाव है और आम चर्चा के बाद इसमें फेरबदल भी किया जा सकता है कि ब्लाक से लेकर तहसील, नगर, जिला व राजधानी के स्तर तक जन समितियाँ बनायी जायें जिनको यह जिम्मेदारी और अधिकार रहे कि वह सरकारी अफसरों व पुलिस के साथ सहयोग करके जमाखोरी के माल को ऊपर लायें। इन जन समितियों को किस आधार पर बनाया जाय यही सवाल है। इसका आधार राजनैतिक नहीं होना चाहिए और कुछ ऐसा हो कि इसमें समाज के हर तबके का प्रतिनिधित्व हो जाय। इसलिए हर ब्लाक में, हर कस्बे, शहर और बहुत बड़े शहरों के उपनगर में एक समिति बने जिसमें उसके क्षेत्र में जितने भी पंजीकृत संगठन हैं उनकी कार्यकारिणी का एक प्रतिनिधि लिया जाये। ये संगठन, व्यावसायिकों, श्रमिकों, शिक्षकों, वकीलों, कर्मचारियों आदि के होंगे। इन प्रतिनिधियों का उनके खिलाफ शिकायत होने पर हटाया भी जा सकता है और उनकी कार्यकारिणी से दूसरा प्रति-निधि भेजने के लिए लिखा जा सकता है। इसके साथ उस क्षेत्र के विधायक, संसद सदस्य, पालिका या नगर निगम सदस्य भी रह सकते हैं। जिस क्षेत्र में इन प्रतिनिधियों की संख्या बहुत हो वहाँ उपसमिति बनाकर काम का बंटवारा किया जा सकता है।

इस तरह सारे देश में जन समितियों का एक जाल सा फैल जायगा। ये समितियाँ अपने इलाके की जमाखोरी, मुनाफाखोरी, कालाबाजारी के मामले में सरकारी मशीनरी को जो भी सुझाव देंगी उस पर अमल किया जायेगा।

आज जो दाममार अभियान चलता है वह अफसरों की मर्जी पर है इसीलिए वह इतना व्यापक नहीं हो पाता कि व्यापारी डरे। देश के सारे इलाकों में जनसमितियाँ बनने पर व्यापारी या बड़ा किसान अपना गल्ला, तेल, साबुन, शक्कर आदि कहाँ छुपायगा। अफ-सरों के पास तो राजनैतिक नेता सिफारिश करके अपने लोगों को बचा लेते हैं, जन-समितियों से छूट मिलना मुमकिन नहीं है। तहसील जिला या राजधानी के स्तर पर जो समितियाँ बनेंगी, वे सरकारी सार्वजनिक,

रेणु की याचिका विचारार्थ मंजूर

ज्ञात हुआ है कि सुप्रसिद्ध साहित्यकार पद्मश्री फणीश्वरनाथ 'रेणु' की गिरफ्तारी की वैधता को चुनौती देने के लिए दायर की गयी बन्दी प्रत्यक्षीकरण याचिका को पटना उच्च न्यायालय के न्यायाधीश श्री एन॰एन॰ मुखर्जी तथा श्री भुवनेश्वरसहाय ने विचारार्थ स्वीकार कर लिया है। रेणु को फारबिसगंज में धरना देते समय गिरफ्तार किया गया था। अभी वे पूर्णिया जेल में हैं।

लेवी वसूली, थोक व्यापारियों व चिल्लर व्यापारियों के बीच की उलझनों आदि पर विचार करेंगी। रोजमर्रा का काम याने जमाखोरी व मुनाफाखोरी पर रोक लगाने के काम में हर इलाके की जन समिति सक्रिय रहेगी और नीतियों के मामले में तहसील, जिला या राज्य स्तर की समिति जिम्मेदार रहेगी। ऊपर की इन समितियों के लिए इलाकों की जन समितियों से लोग चुनकर आ जायेंगे।

यही किसी आन्दोलन की, किसी भी राजनैतिक दल के जनवादी तबके की या प्रगतिशील बुद्धिवादियों की माग होनी चाहिए कि जनता को जो बात ज्यादा असर करती है या खटकती है, उसका प्रशासन उन जन प्रतिनिधियों के हाथ में होना चाहिए जिन्हें हम जानते हैं, जो हमारे बीच रहते हैं और जिन्हें हम हटा सकते हैं। मतलब यह कि खाद्य वस्तुएं और जरूरी चीजों के वितरण की व्यवस्था जनवादी आधार पर जनता के उन प्रतिनिधियों के हाथों में हो जिनपर लगातार अंकुश लगाया जा सकता है।

मुझे लगता है कि श्रद्धेय जयप्रकाशजी के मनमें निर्दलीय या दल विहीन जनतंत्र की जो कल्पना है, उसकी कुछ शुरूआत मेरे इस सुझाव में है। अहिंसक आंदोलन समझौते पर विश्वास करके चलता है, उसके लिए एक कदम काफी होता है बशर्ते कि उसमें सामाजिक परिवर्तन की कोई एक दिशा निकले।

—महेशदत्त मिश्र

हरिजन को भूमि मिली

छतरपुर के गुरसारी ग्राम के मगन हरिजन को जगत लोधी की उस २·३५ एकड़ भूमि का पक्का पट्टा भूदान में मिल गया है जिस पर वह दो वर्ष से खेती कर रहा था और जिसमें उसने परिश्रम करके पक्का कुआ भी बना लिया था। मध्यप्रदेश भूदान यज्ञ मंडल द्वारा तैयार पट्टे का वितरण मंडल के सदस्य तथा राज्य गांधी स्मारक निधि के मंत्री बालकृष्ण जोशी के हाथों एक सभा में किया गया।

सर्वोदय प्रकाशनों की पुनर्गठन योजना

सर्व सेवा संघ, गांधी शांति प्रतिष्ठान और गांधी स्मारक निधि के संयुक्त तत्वावधान में तारीख २७ और २८ सितम्बर, १९७४ को देश के सर्वोदय साहित्य प्रकाशन तथा सर्वोदय पत्र-पत्रिकाओं के सम्पादकों एवं प्रकाशकों की एक आवश्यक बैठक पवनार आश्रम में आयोजित की गयी। उसमें विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं के लगभग ३० सम्पादक व प्रकाशक उपस्थित थे। इस बैठक को पूज्य विनोबाजी, आचार्य काका साहब कालेलकर, धीरेन्द्र भाई मजूमदार और श्री अण्णासाहब सहस्रबुद्धे का मार्गदर्शन भी प्राप्त हुआ।

विस्तृत चर्चा के बाद बैठक में सर्वानुमति के आधार पर नीचे लिखी सिफारिशें की गयीं

(१) केन्द्रीय संगठन

(अ) देश में सर्वोदय साहित्य का अधिक व्यापक प्रसार करने की दृष्टि से सर्व सेवा संघ, गांधी स्मारक निधि, गांधी शांति प्रतिष्ठान, कुछ अन्य अखिल भारतीय और प्रादेशिक संस्थाएं व खादी ग्रामोद्योग संस्थाएं मिलकर एक केंद्रीय (फेडरल) संगठन स्थापित करें जो प्रारंभ में मुख्यतः विभिन्न संस्थाओं की प्रकाशन योजनाओं का समन्वय करे। साथ ही यह संगठन देश के शहरों और गांवों में सर्वोदय साहित्य की व्यापक बिक्री की व्यवस्था करे।

(आ) खादी संस्थाओं द्वारा साहित्य प्रचार के लिए प्रारंभ की गयी बिक्री पर आधा प्रतिशत मार्जिन आधारित, सर्वोदय साहित्य योजना को व्यवस्थित रूप दिया जाय। इसके अन्तर्गत खादी संस्थाओं से सम्पर्क किया जाय ताकि खादी भंडारों को साहित्य बिक्री का सक्षम माध्यम बनाया जा सके।

(इ) केन्द्रीय संगठन द्वारा प्रादेशिक संस्थाओं के प्रकाशनों व प्रकाशन समितियों को आवश्यक प्रोत्साहन व सुविधाएं दी जाएं।

(ई) इस सम्मिलित प्रयास का अनुभव प्राप्त करने के पश्चात् यदि सब सम्बद्ध संस्थाओं की राय हो तो इस केन्द्रीय संगठन द्वारा विभिन्न सर्वोदय संबंधी पुस्तकों की छपाई और प्रकाशन का भी प्रबंध किया जा सकेगा।

(उ) इस केन्द्रीय संगठन की स्थापना के लिए सर्व सेवा संघ पहल करे ताकि एक निश्चित योजना द्वारा गांधी स्मारक निधि, गांधी शान्ति प्रतिष्ठान, खादी संस्थाओं व अन्य संस्थाओं का सहयोग सम्पादित किया जा सके।

इस योजना के अन्तर्गत सम्बद्ध संस्थाओं के बीच सहयोग और समन्वय स्थापित करना, उनके प्रकाशित साहित्य की बिक्री के लिए संगठन, तंत्र विकसित करना, वर्तमान साहित्य भंडारों को ज्यादा सुदृढ और सक्षम बनाना, नये भंडार कायम करना, कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण देना, पूंजी, कागज, मुद्रण आदि प्रकाशन सम्बन्धी कठिनाइयों को दूर करने में सहायता देना आदि मुख्य कार्य समझे जायेंगे।

(२) 'भूदान-यज्ञ' (सर्वोदय)

(अ) इस समय सर्व सेवा संघ द्वारा 'भूदान-यज्ञ (सर्वोदय)' हिन्दी में प्रकाशित किया जा रहा है। इस साप्ताहिक पत्र को अधिक व्यापक बनाने का पूरा प्रयत्न किया जाय। यदि आवश्यक हो तो उसके प्रकाशन स्थान के परिवर्तन के बारे में भी विचार किया जा सकता है। ऊपर लिखे केन्द्रीय संगठन के मार्फत इसकी ग्राहक संख्या बढ़ाने की भी पूरी कोशिश की जाय।

(आ) वर्तमान साप्ताहिक 'भूदान यज्ञ' (सर्वोदय) को फिलहाल यथावत चलाया जाय और उसको ठीक तौर से प्रकाशित करने के लिए आन्तरिक व्यवस्था की जाय।

(इ) सर्व सेवा संघ 'भूदान-यज्ञ' के लिए एक संचालन समिति नियुक्त करे जिसमें गांधी स्मारक निधि, गांधी शांति प्रतिष्ठान तथा अन्य रचनात्मक संस्थाओं के प्रतिनिधि हों। यह समिति आगे की योजना बनावे और १८ अप्रैल, १९७५ से 'भूदान-यज्ञ' को पूज्य विनोबाजी द्वारा सुझाये गये नये रूप में प्रकाशित करने की व्यवस्था करे। इस व्यवस्था के अन्तर्गत सम्पादन, मुद्रण, प्रकाशन, पूंजी का इन्तजाम, व्यापक प्रचार संगठन के कार्य सम्मिलित होंगे।

(ई) यदि इस सम्मिलित प्रयास के अनुभव के बाद संभव लगे तो 'भूदान-यज्ञ' (सर्वोदय) का हिन्दी और अंग्रेजी संस्करण केन्द्रीय संगठन द्वारा भी प्रकाशित करने का निर्णय लिया जा सकता है।

(३) पत्र-पत्रिकाएं

(अ) केन्द्रीय संगठन—'भूदान यज्ञ' (सर्वोदय) तथा कुछ अन्य अखिल भारतीय सर्वोदय पत्रिकाओं के लिए ऐसे विज्ञापन भी प्राप्त करने का प्रयास करे जिनका सर्वोदय विचार से कोई विरोध न हो। इस समय विभिन्न प्रान्तों में जो साप्ताहिक, पाक्षिक और मासिक पत्र-पत्रिकाएं प्रकाशित हो रही हैं उनका 'भूदान-यज्ञ' (सर्वोदय) से अधिक नजदीक संबंध स्थापित किया जाय ताकि 'भूदान-यज्ञ' (सर्वोदय) की कुछ अखिल भारतीय महत्व की सामग्री प्रादेशिक पत्रिकाओं को भी जल्द उपलब्ध हो सके और महत्वपूर्ण प्रान्तीय समाचार 'भूदान-यज्ञ' (सर्वोदय) में भी देश की जानकारी के लिए छापे जा सकें।

इस दृष्टि से वर्तमान सर्वोदय प्रेस सर्विस को अधिक मजबूत बनाया जाय और जरूरत हो तो उसका कार्यालय भी किसी दूसरे स्थान पर लाया जाय।

(आ) ऊपर लिखी सिफारिशें सर्व सेवा संघ, गांधी स्मारक निधि, गांधी शांति प्रतिष्ठान, खादी व अन्य संस्थाओं को भेजी जाय, ताकि वे अपनी कार्य-समितियों द्वारा योग्य निर्णय ले सकें और इस सम्मिलित योजना को आगे बढ़ाने के लिए कुछ ठोस कदम शीघ्र उठायें।

विश्व हिन्दी-सम्मेलन के मूल में सद्भावना का प्रसार

जयपुर में गांधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र में एक सभा में अनन्तगोपाल शेवड़े ने कहा कि मौजूदा संकट का हल गांधी मार्ग में संभव है। आपने विश्व हिन्दी-सम्मेलन के मूल में राष्ट्रीय एकता तथा विश्व में सद्भावना प्रसार की भावना बतायी। अध्यक्षता विष्णुदत्त शर्मा ने की और स्वागत रामेश्वर विद्यार्थी ने। सम्पन्नप्रसाद व्यास की उपस्थिति उल्लेखनीय रही।

आन्दोलन बिहार का, नज़र आचार्यकुल की

युवा समाज का सर्वाधिक संवेदनशील तत्व है। समाज की अस्वस्थता के विरुद्ध सबसे पहले उसी की ओर से आवाज उठती है। युवा जागरण अस्वस्थ समाज को स्वस्थ बनाने की तीव्र आकांक्षा की अभिव्यक्ति है। इससे समाज को एक गति प्राप्त होती है, जिसके अभाव में जड़ हो जाने की सम्भावना रहती है। जब किसी देश का युवा गलत परिस्थितियों के विद्रोह में खड़ा होता है तो प्रचंड शक्ति का निर्माण होता है जिसे यदि सही दिशा दी जाये तो वह राष्ट्र के पुनर्निर्माण का अत्यन्त शक्तिशाली साधन सिद्ध हो जाती है, लेकिन आवश्यक नहीं है कि युवा-आक्रोश की यह अभिव्यक्ति स्वयमेव कल्याणकारी हो। इस प्रकार की अभिव्यक्ति जहां राष्ट्र और समाज के लिए वरदान सिद्ध हो सकती है वहीं वह अभिशाप भी बन सकती है। इस संदर्भ में भारत के विशेषत: गुजरात और बिहार के युवा-वर्ग के आन्दोलनों को देखना है।

भारत में स्वाधीनता के पश्चात् गलत अर्थनीति, राजनीतिक दलों की सत्ता लोलुपता, जनता की उदासीनता एवं सामाजिक और रचनात्मक कार्यकर्ताओं की प्रभावहीनता के कारण जो गिरावट आयी है उसके फलस्वरूप बेरोजगारी, महंगाई, अभाव एवं वर्तमान शिक्षा की व्यर्थता और सबसे अधिक नौकरशाही के सभी स्तरों पर व्याप्त भ्रष्टाचार के कारण समाज में बहुसंख्यक व्यक्तियों के लिए जीवन असह्नीय हो गया है। इससे युवकों में नैराश्य और विक्षोभ की भावना उत्पन्न होना सहज और स्वाभाविक है। कदाचित् इसलिए उनमें से कुछ पलायनवाद के शिकार होकर सारहीन कामों में लग गये थे या जो अधिक संवेदनशील थे, वे हिंसा और विध्वंस में ही समस्याओं का समाधान ढूंढने लगे थे। ऐसी स्थिति में भारत के तरुणों को एक ऐसे नेतृत्व की आवश्यकता थी जो उनमें आत्मविश्वास की भावना उत्पन्न कर सके और उनको समाज परिवर्तन के लिए अहिंसक और रचनात्मक साधन अपनाने की ओर ले जा सके। बिहार छात्र-आन्दोलन में, जो अब धीरे-धीरे जन-आन्दोलन का रूप लेता जा रहा है, जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व को इसी पृष्ठभूमि में देखना है।

देश की आज की परिस्थिति में युवा-शक्ति की सम्भावनाएं असीम हैं। इस शक्ति के समुचित उपयोग से राष्ट्र वांछित लक्ष्यों को प्राप्त कर सकता है। फिर भी इस युवा शक्ति की मर्यादाओं और सम्भावित खतरों की उपेक्षा नहीं की जा सकती। जिन कारणों से गुजरात के आन्दोलन में गतिरोध आ गया उससे सबक लेना चाहिए। बिहार के विषय में अधिक सावधानी की आवश्यकता इसलिए भी है कि आन्दोलन अधिक व्यापक और गहरा है। युवा-शक्ति को जब रचनात्मक दिशा नहीं मिल पाती है तो उसकी परिणति शांति में न होकर विप्लव में हो जाती है, और वह व्यर्थ के प्रदर्शनों संघर्षों उपद्रवों अनुचित दबाव घेराव आदि की राजनीति में खो जाता है जो लोकतान्त्रिक मूल्यों के विरुद्ध है। अन्ततोगत्वा यह विकृति सरकारी आतंकवाद और उसकी प्रतिक्रियास्वरूप व्यक्तिगत और सामूहिक अराजकता में परिणत हो जाती है। ऐसी परिस्थिति का उपयोग राजनीतिक दल जो सदैव ही हर प्रकार के अवसरों की तलाश में रहते हैं, अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए करते हैं। अत: युवा-शक्ति के विस्फोट को उचित मार्गदर्शन देकर उसे रचनात्मक स्वरूप देना आसान काम नहीं है, जैसा गुजरात में स्पष्ट हुआ है। बिहार में इस युवा-क्षोभ को क्रान्ति शक्ति में बदलने की प्रक्रिया का महत्वपूर्ण काम जयप्रकाश नारायण कर रहे हैं। बिहार में उनके प्रभाव ने केवल हिंसा के वेग को नहीं कम किया है बल्कि इस आन्दोलन को राजनीतिज्ञों एवं निहित स्वार्थों के शोषण से भी बचा लिया है। अहिंसा के सिद्धान्त पर अमल करते हुए उन्होंने युवा-शक्ति के इस विस्फोट को जो शान्तिमय रचनात्मक दिशा देने का प्रयास किया है, वह स्तुत्य है।

बिहार के वर्तमान आन्दोलन को समझने के लिए बिहार की परिस्थितियों से अवगत होना आवश्यक है। अपनी प्रचुर प्राकृतिक और खनिज सम्पदा के बावजूद आज बिहार आर्थिक दृष्टि से देश का सबसे पिछड़ा राज्य है। इस पिछड़ेपन का यही कारण है कि इस राज्य का शासनतंत्र ढीला, अक्षम और भ्रष्ट रहा है। इस वस्तु स्थिति ने छात्रों के विक्षोभ को बढ़ाने में आग में घी का काम किया और छात्रों का विश्वास राजनैतिक दलों और सामाजिक संस्थाओं से उठ गया। इसीलिए उन्होंने लोकनायक जयप्रकाश नारायण का नेतृत्व स्वीकार किया है। यह सन्तोष की बात है कि आन्दोलन के प्रभाव से थोड़ा ही सही, लेकिन बिहार में सम्प्रदायवाद और विशेषकर जातिवाद की जड़ें हिलने लगी हैं, दहेज जैसी कुप्रथाओं और शराबखोरी एवं सामाजिक जीवन में भ्रष्टाचार पर भी प्रभाव पड़ रहा है एवं मुनाफाखोरी, जमाखोरी आदि के प्रतिकार के लिए भी प्रयास चल रहे हैं। यह दिशा युवा आन्दोलन को सही मार्ग देने की है। यद्यपि इस दिशा में अभी बहुत कुछ होना बाकी है परन्तु बिहार-आन्दोलन की ओर देश की निगाह लगी है और उसमें जो नतीजे निकलेंगे वह सबके लिए उपयोगी होंगे।

बिहार में युवा आन्दोलन की जो दिशा भ्रष्टाचार-उन्मूलन की है, उसे समाज के सुधार का महत्वपूर्ण अंग माना जायेगा। अत: बिहार आन्दोलन को यथाशीघ्र प्रभावकारी ढंग से भ्रष्टाचार-उन्मूलन का काम उठाना चाहिए, किन्तु इस आन्दोलन का लक्ष्य केवल शासनतंत्र न हो क्योंकि आज भ्रष्टाचार पूरे समाज में व्याप्त है। इसलिए तरुणों और जनता की शक्ति समाज के प्रत्येक क्षेत्र से भ्रष्टाचार के उन्मूलन में लगनी चाहिए। इसके लिए प्रथमत: जो इस आन्दोलन में सक्रिय रूप से लगे हुए हैं, उनसे ही प्रारम्भ करना चाहिए। तभी वे प्रशासनिक भ्रष्टाचार के साथ-साथ राजनीति, व्यापार, शिक्षा, आदि सभी क्षेत्रों में व्याप्त भ्रष्टाचार के खिलाफ आवाज उठाने में समर्थ होंगे।

आचार्यकुल इस सारे आन्दोलन में शिक्षा में आमूल परिवर्तन की समस्या से अपने परिवार का सर्वाधिक निकट अनुभव करता है और यह मानता है कि बिहार के छात्रों में शिक्षा में आमूल परिवर्तन के लिए

जो व्यापक आकांक्षा जगी है वह एक शुभ लक्षण है। इस आन्दोलन ने बिहार के विश्वविद्यालयस्तरीय छात्रों से एक वर्ष के लिए अपनी संस्थाओं को छोड़कर नये निर्माण में लगने की मांग की है। आचार्यकुल का इस इस सम्बन्ध मे अभिमत है कि इस असहयोग में छात्रों की स्वेच्छा सर्वोपरि मानी जाये और उसमें किसी प्रकार के दबाव से काम न लिया जाये।

इस प्रसग मे आचार्यकुल इस समस्या पर भी विचार कर रहा है कि इस एक वर्ष की अवधि मे एवं उसके बाद असहयोगी छात्रों के लिए एवं उनके लिए भी जो असहयोग नहीं कर पाये हैं, शिक्षा का क्या विकल्प प्रस्तुत किया जाये और उनको शिक्षण और प्रशिक्षण के क्या कार्यक्रम दिये जायें ताकि उनकी शक्ति का राष्ट्रीय पुनर्निर्माण में सही-सही उपयोग हो सके। यह सन्तोष की बात है कि बिहार-आन्दोलन शिक्षा के नये आयाम ढूंढने का प्रयास कर रहा है। आचार्यकुल की राय है कि शिक्षा की भावी योजना बनाते समय गाधीजी ने नयी तालीम के रूप मे वर्तमान शिक्षा का जो विकल्प प्रस्तुत किया था उसे ध्यान मे रखकर, आज की परिस्थिति में छात्रों की आकांक्षाओं और समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप पूर्व प्राथमिक स्तर से विश्वविद्यालय स्तर तक शिक्षा की नयी योजना बनायी जाये। इस योजना को आधार मानकर आचार्यकुल को देश के विद्वानों, छात्रों के प्रतिनिधियों, अध्यापकों, अभिभावकों एवं सामाजिक कार्यकर्ताओं का सम्मेलन बुलाकर योजना पर विचार विमर्श करना चाहिए और इस योजना को देशव्यापी शिक्षा के आन्दोलन का आधार बनाना चाहिए। अगर इस आन्दोलन का सुचारु रूप से संचालन किया गया तो केन्द्र अथवा राज्य की सरकारें इसकी आवाज की अवहेलना नहीं कर सकेंगी। राष्ट्र के निर्माण मे बिहार के आन्दोलन की यह बहुत बड़ी रचनात्मक देन होगी।

इसके अतिरिक्त शिक्षा की स्वायत्तता को आचार्यकुल अपनी बुनियादी नीति मानता है। दुर्भाग्य से आज बिहार मे शिक्षा की स्वायत्तता खतरे मे है। बिहार मे प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा को सरकार ने अपने हाथों मे ले लिया है। विश्वविद्यालय मे सीनेट, सिन्डीकेट आदि तथा अन्य संस्थाओं को भी समाप्त कर दिया गया है। शिक्षा की स्वायत्तता पर इस प्रकार का प्रहार निश्चित रूप से लोकतंत्र के हित मे नहीं होगा। आचार्यकुल का निश्चित अभिमत है कि लोकतंत्र में शिक्षा सरकार-मुक्त रहनी चाहिए। अतः आचार्यकुल की राय है कि बिहार आन्दोलन शिक्षा का जो भी विकल्प प्रस्तुत करे उसमें शिक्षा की पूर्ण स्वायत्तता के इस पहलू पर जोर दिया जाये।

बिहार का यह छात्र-आन्दोलन आज तक के छात्र आन्दोलनों से इस अर्थ मे भिन्न है कि इसके सामने शुरू से ही राष्ट्र की व्यापक एवं मौलिक, आर्थिक एवं सामाजिक समस्याएँ रही हैं। इन समस्याओं मे विद्यार्थियों से सम्बन्धित छात्रावासों मे समुचित राशन के प्रबन्ध मे विद्यार्थियों का सहयोग, मेडिकल प्रतियोगिताओं मे परीक्षाओं मे मे बिना किसी प्रतिबन्ध के सभी को बैठने की स्वतन्त्रता, आयुर्वेदिक महाविद्यालयों को विश्वविद्यालय के अन्तर्गत रखने की व्यवस्था आदि की मांगों के अतिरिक्त प्रारम्भ से ही समाज मे बढ़ती हुई महंगाई, बेकारी, भ्रष्टाचार एवं वर्तमान शिक्षा मे आमूल परिवर्तन आदि व्यापक समस्याओं पर छात्रों का जोर रहा है। और अब तो गावों मे जाकर भूमि-सम्बन्धी समस्याओं के सुधार के लिए भी आह्वान किया जा रहा है। इस प्रकार बिहार का यह छात्र-आन्दोलन जन-आन्दोलन का रूप लेता जा रहा है। इसे आन्दोलन का स्वस्थ विकास मानना चाहिए।

बिहार के छात्र-आन्दोलन को यदि जनता का अपेक्षित सहयोग नहीं मिला तो उसकी सफलता संदिग्ध हो जायेगी। आन्दोलन अब शहरों से गांव मे फैलकर व्यापक हो रहा है। किन्तु व्यापक जन सम्पर्क के लिए प्रशिक्षित कार्यकर्ता तैयार नहीं किये गये तो फिर ये तरुण या तो राजनीतिक दलों की ओर उन्मुख होंगे या शान्तिपूर्ण तरीकों मे विश्वास खोकर आन्दोलन की व्यूह-रचना और नेतृत्व आदि बदलने की कोशिश करेंगे। अतः आचार्यकुल प्रशिक्षित काडर के द्वारा प्रचार करने के मुद्दे को बहुत महत्वपूर्ण मानता है। यह काम व्यापक स्तर पर होना चाहिए।

आचार्यकुल बिहार के आन्दोलन के विभिन्न पहलुओं पर तटस्थ रूप से समीक्षा के पश्चात यह मानता है कि बिहार का यह आन्दोलन लोकशक्ति को सजग और सशक्त बनाने तथा दलगत राजनीति के स्थान पर व्यापक लोकनीति के विकास की दिशा मे एक प्रयास है और जिस प्रकार के अहिंसक एवं शोषणहीन समाज की स्थापना आचार्यकुल का लक्ष्य है, उस लक्ष्य की प्राप्ति मे इस आन्दोलन की सहायता मिलती है। अतः आचार्यकुल के सदस्यों एवं दूसरे नागरिकों को चाहिए कि वे सत्य, अहिंसा और संयम की मर्यादा मे इस आन्दोलन की सफलता के लिए मदद करें।

आचार्यकुल का यह कर्तव्य है कि लोकतंत्र की सफलता के लिए, लोकजीवन में व्याप्त शोषण, अन्याय आदि समस्याओं के निराकरण के लिए शिक्षा की पद्धति के संस्कार के लिए लोकचेतना का निर्माण करे और इस दिशा मे आवश्यक प्रयोग और प्रशिक्षणों मे मदद पहुंचायें। चूंकि बिहार का छात्र-युवा-आन्दोलन इस प्रकार का एक प्रयोग है अतः आचार्यकुल इस प्रयोग को सही परिप्रेक्ष्य मे देखने और इसमें यथाशक्ति सहायता पहुंचाने के लिए अपना यह अभिमत प्रकट कर रहा है।

नयी तालीम सम्मेलन

आगामी २९-३० नवम्बर और १ दिसम्बर को अखिल भारत नयी तालीम सम्मेलन सेवाग्राम (वर्धा) मे होगा। सम्मेलन मे बुनियादी शिक्षण संस्थाओं के अध्यापक, नयी तालीम के रचनात्मक कार्यकर्ता तथा गांधी विचार एवं दर्शन मे रुचि रखने वाले शिक्षाविद आमन्त्रित हैं। केन्द्रीय एवं राज्य सरकारों के शिक्षा योजनाकार भी चर्चा मे भाग लेंगे जिसमे विभिन्न राज्यों में बुनियादी शिक्षा की प्रगति और समस्याएं, सरकारी गैरसरकारी स्तर पर बुनियादी शिक्षा को प्रभावशाली बनाने के उपाय तथा ग्रामदान क्षेत्रों मे नयी तालीम के विस्तार पर विचार होगा। सम्मेलन को विनोबाजी भी सम्बोधित करेंगे। भाग लेने के इच्छुक अपने राज्यों की नयी तालीम समितियों अथवा मंत्री, नयी तालीम समिति, सेवाग्राम (वर्धा) से सम्पर्क कर सकते हैं।

आशावादी महापुरुष

विनोबाजी भारत के महान सन्तो की परम्परा को आज के विज्ञान और तकनीकी युग से जोडनेवाले महापुरुष हैं। उनके काचन मुक्ति के प्रयोग, अनेक धर्म ग्रन्थो का अध्ययन और सकलन, उनका ब्रह्मविद्या मदिर का प्रयोग, उनका ध्यानचिंतन, वेदाभ्यास इत्यादि सब सन्तो की परम्परा के अनुकूल है।

जब वे कहते हैं एक ओर हवाई जहाज होगा, और एक ओर बैलगाड़ी, एक ओर विश्व-सघ और दूसरी ओर ग्राम-पचायत, तो वे आज के तकनीकी युग मे आ जाते हैं।

विनोबाजी की भूदान-यात्रा, ग्रामदान अभियान, मानव की मानवता जगाने का अथक प्रयत्न और बापूजी के ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त को समाज के हरेक वर्ग मे प्रत्यक्ष प्रमाणित कर दिखाने का प्रयोग किसी को भूला नहीं। विनोबा से लोग भ्रष्टाचार की बात करते हैं तो वे मजाक में कहते हैं, "यह तो भाई शिष्टाचार है आज, जो ऐसा नहीं करता, वह विशिष्टाचार है।" मगर साथ ही कोई नवयुवक चारो ओर बेईमानी की शिकायत करता है तो उसे कहते हैं। "भाई अधेरे मे ही तो दीपक चमकता है ना, आज तुम्हे चमकने का बहुत अवसर है।"

विनोबा आशावादी हैं। वे कहते हैं कलियुग समाप्त हो रहा है। सतयुग का प्रादुर्भाव होने जा रहा है। सन्त की यह वाणी सत्य सिद्ध हो। उनके ८०वें वर्ष मे उनको मेरा शत्-शत् प्रणाम।

सेवाग्राम सर्वोदय सम्मेलन में उनसे पूछा गया कि जयप्रकाशजी के आदोलन के बारे मे आपकी क्या राय है? जे पी मे आपका कितना विश्वास है? बाबा ने कहा, "मेरा जे पी मे पूर्ण विश्वास है, इन्दिराजी मे भी है, भुट्टो साहब मे भी।" मानव पर विश्वास रखकर वे उसकी मानवता जगाने का प्रयास कर रहे हैं। जे पी के आदोलन का भी वही हेतु है। ईश्वर इन्दिराजी और भुट्टो साहब अर्थात् सत्ता मे बैठे लोगो को सत्याग्रह के प्रभाव से पिघलने की प्रेरणा दे।

—सुशीला मेघर

भूदान भूमि की वापसी हेतु सत्याग्रह जारी

कानपुर जिले के जहांगीराबाद ग्राम की ७२ बीघे भूदान भूमि की वापसी के लिए हो रहे सत्याग्रह का प्रभाव व्यापकतर होता जा रहा है। लाभचन्द्र वर्मा, विनय कुमार तथा सूर्यप्रसाद द्विवेदी ने पदयात्रा कर इस सम्बन्ध मे आसपास के ग्रामो मे चेतना जगायी। पतारा और घाटमपुर आदि मे जनसभाओं मे हरिप्रसाद गुप्त, स्वामी कृष्णानन्द, आनद-स्वरूप, विनय भाई, रामसनेही मिश्र, एम जी वर्मा, सावित्री श्रीवास्तव, ज्वालाप्रसाद कुरील व द्वारकाप्रसाद शलवार का सक्रिय समर्थन रहा।

विनोबा जयन्ती पर जहांगीराबाद मे चन्द्रिकाप्रसाद त्रिपाठी की अध्यक्षता में जन-सभा के बाद ओमप्रकाश गौड़ का एक सप्ताह का उपवास आरभ हुआ जिसकी समाप्ति १९ सितम्बर को एक हरिजन नारायण भाई के हाथो नारियल का रस ग्रहण कर हुई। श्री गौड ने भूमि वापस न होने तक क्षेत्र से न हटने की घोषणा की है।

उपवास के काल मे दो काम हुए। ग्राम मे सिचाई के लिए झील का पानी लेने मे हिरन छाप तम्बाखूवालो द्वारा डाली जा रही बाधा क्षेत्रीय विधायक व अधिकारियो के सहयोग से दूर हुई और इसी प्रतिष्ठान के एक सदस्य द्वारा अपने फार्म मे दबा ली गयी ग्रामसमाज की जमीन अलग करने के लिए नापजोख शुरू हो गयी।

जोधपुर में छात्र-युवा संघर्ष समिति गठित

जोधपुर छात्र एव युवा सस्थाओ के प्रतिनिधियो के सम्मेलन में भ्रष्टाचार, घूसखोरी, बेकारी, महगाई, भुखमरी आदि के खिलाफ सघर्ष करने व शिक्षा मे क्राति की माग को लेकर छात्र-युवा-सघर्ष समिति का गठन किया गया है। विश्वविद्यालय छात्र सघ, तरुण शाति सेना, अ०भा० विद्यार्थी परिषद, समाज-वादी युवजन सभा, मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी से सबद्ध छात्र परिषद, युवा मच आदि संगठनों के लगभग एक सौ प्रतिनिधियो ने भाग लिया।

नरक से होड़ लेती हाजीपुर जेल!

हाजीपुर कारा मे रहकर आनेवाले राज-बदियो ने जो 'चक्षुर्वै सत्यम्' बातें बतायी उनसे श्रोता के रोंगटे खडे हो जाते हैं। ८० कैदियो को रखने का स्थान है पर ५०० रखे गये हैं जिनको सोने की भी जगह नही है। सोने पर एक के अग दूसरे से नीद मे टकराते हैं और कोई भी शाति से नही सो पाता। जेल मे कुल चार पाखाने हैं जिससे कैदियो को क्यू में खडे-खडे दिन के ११ बज जाते हैं। खाना नियमित नही मिलता क्योंकि राशन का बडा अश कर्मचारियो के घरो मे जाता है। कपडे भी पूरे नही मिलते और कई को केवल लगोट पहनकर ही रहना पडता है। महिला बैरक में और अधिक दुर्दशा है। दिन-रात चीथडे लपेट कर महिलाए लाज ढकने का असफल प्रयत्न करती रहती हैं। कहा जाता है कि जेल मे केवल एक ही साडी है जिसे पहनकर मुलाकातियो से मिलने के लिए स्त्री-बदी लेजायी जाती है। मुलाकात समाप्ति पर वह साडी वापस ले ली जाती है। स्वराज्य के २७ वर्षों बाद की यह दुर्दशा अविश्वसनीय भले लगे, किंतु सत्य है।

गुमला मे छात्रसघर्ष समिति व जन-सघर्ष समिति के तत्त्वावधान मे २० सितम्बर को सपूर्ण बद रखा गया। 'विधान सभा को भग करो' इत्यादि नारे लगाते हुए छात्रों का विशाल जुलूस निकाला।

कस्तूरबाग्राम में तरुण शिविर

आगामी २८ अक्टूबर से १ नवम्बर, ७४ तक मध्यप्रदेश के रचनात्मक कार्यकर्ताओं के तरुण बालक बालिकाओ का पचदिवसीय शिविर कस्तूरबाग्राम (इदौर) मे होगा। शिविर का उद्देश्य कार्यकर्ताओ के बालक-बालिकाओं का आपसी परिचय एव मैत्री बढ़ाना, सामुदायिक जीवन तथा रचनात्मक कार्य का परिचय देना है। प्रवास, भोजन एव निवास की व्यवस्था सेवक सघ करेगा। शिविर में प्रवेश के इच्छुक मन्त्री, मध्यप्रदेश सेवासघ, रैसलपुर होशगाबाद (म० प्र०) को लिखें अथवा संपर्क करें।

अनुकरणीय

कानपुर में लॉ में पढ़नेवाले जगदीश नारायण। इस वर्ष फरवरी में जयप्रकाशजी का 'ग्राम चुनाव शुद्ध एवं स्वतंत्र हो' इस विषय पर भाषण सुना। जगदीश को लगा कि कि इस विषय का अध्ययन करना चाहिए। कुछ किताबें जयप्रकाशजी की पढ़ी। बिहार में आकर छात्र आंदोलन में हिस्सा लेने की तीव्र इच्छा हुई। कानपुर से पटना आने के लिए पैसे नहीं थे। वहां की शांति सेना ने ५० रुपये किराये के लिए दिये। कठिन परिश्रम हो सकता है या नहीं, इसकी जांच करने के लिए ५ घंटा मजदूरी मकान बनाने के काम में करके ३ रुपये पारिश्रमिक प्राप्त किया। बिहार में आने पर गया जिले के मोहनपुर प्रखंड में रविबाबू का 'एकला चलो रे' गाना एकाकी घूमा। एक-दो गांव घूमने के बाद छात्र एवं नागरिक साथी मिलने लगे। जगदीश ने कभी अकेले, कभी उनके साथ घूम कर आंदोलन का प्रचार कर प्रखंड की २२ पंचायतों में से १८ में जनसंघर्ष समितियां बनायीं। अन्य ४ में बनायी जा रही हैं। १५०-२०० रुपये का साहित्य बेचा और उसके कमीशन में से ५० रुपये मनीआर्डर भेजकर कानपुर लौटा दिया। पटना में मोहनपुर प्रखंड में आने-जाने का भी किराया उसने नहीं लिया। ऐसे छात्र, युवक, नागरिक स्थान-स्थान पर निकलने चाहिए। इससे आन्दोलन स्वावलम्बी होगा। जगदीश का आदर्श सर्वत्र अनुकरणीय है।

R.N. 2091/57 BHOODAN YAGYA 7 OCT. 1974 Regd. No. D- (C) 266

इस अंक में

मुखपृष्ठ : अहिंसक क्रांति का प्रतीक 'सुदर्शन' चक्र

बीस साल पहले

(भूदान-यज्ञ वर्ष १, अंक १—१३.१०.५४ के अंक से)

अनुपम निष्ठा का उदाहरण

विन्ध्यप्रदेश (छतरपुर) में सितम्बर के अन्तिम सप्ताह से दो अक्टूबर तक भूदान-कार्यकर्ताओं का एक शिविर हुआ। अन्त के दो दिनों में कार्यकर्ता-सम्मेलन भी हुआ। इस शिविर के विषय में एक संस्मरणीय उदात्त करुण घटना हमारे हृदय पर हमेशा अंकित रहेगी। विन्ध्यप्रदेश के भूदान संयोजक श्री चतुर्भुज पाठक का दस साल का इकलौता बेटा ता० २८ सितम्बर को टीकमगढ़ तालाब में डूबकर मर गया। पाठकजी के लिए यह दुर्घटना उनके सारे जीवन का आनंद हर लेनेवाली थी। वे छतरपुर में शिविर में थे। टीकमगढ़ में तार आते ही घर गये और तुरन्त लौट आये। शिविर में पूर्ववत् उत्साह और दक्षता से काम करने लगे। उनकी चर्या और वर्तन से किसी को कल्पना भी नहीं हो सकती थी कि उनके हृदय पर दारुण आघात करनेवाली घटना घटी है। ऐसी निष्ठा के सामने हमारा माथा झुक जाता है। यही वह निष्ठा है जो अचल पर्वतों को विचलित कर देती है। पाठकजी की यह निष्ठा हम सबके लिए अनुकरणीय है।

नेशनल हाल, पटना
७-१०-५४

—दादा धर्माधिकारी

संघर्ष समितियों द्वारा राहत

कुरसैला (कटिहार) के निकट १२ सितम्बर को असम मेल दुर्घटना में २५ की मौत और १०० आहत होने की सूचना मिलते ही छात्रसंघर्ष समिति के ५० सदस्य तुरन्त पहुंचे, गाड़ी में फंसे लोगों को व सामान निकाला, आहतों को कंधों पर उठाकर रिलीफ गाड़ी में पहुंचाया तथा रोटी-सब्जी बनवाकर भूखे यात्रियों को भोजन कराया। अंधेरे व कीचड़ के बावजूद छात्रों की सेवा सराहनीय रही।

कुंडल (समस्तीपुर) के निकट राजघाट में ६ सितम्बर को राहतकार्य का ११० बोरे गेहूं ले जा रही नाव डूब गयी। छात्रसंघर्ष समिति के सदस्यों ने ग्रामपंचायत व समाजसेवियों की सहायता से ६० बोरे गेहूं निकाल लेने में सफलता पायी।

जाले (दरभंगा) में बाढ़पीड़ितों की सहायता हेतु जनसंघर्ष समिति द्वारा प्रतिदिन ८ सौ व्यक्तियों को खिचड़ी वितरण किया जा रहा है।

वार्षिक शुल्क—१५ रु० विदेश ३० रु० या ३५ शिलिंग या ५ डालर, इस अंक का मूल्य ६० पैसे।
प्रभाष जोशी द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं ए० जे० प्रिंटर्स, नई दिल्ली-१ में मुद्रित।

सम्पादक
राममूर्ति : भवानी प्रसाद मिश्र
कार्यकारी सम्पादक : प्रभाष जोशी

वर्ष २१ · १४ अक्टूबर, '७४ अंक २

१६ राजघाट, गांधी स्मारक निधि, नई दिल्ली-११०००१

शाह ईरान

गांधी जयन्ती के दिन २ अक्टूबर को दिल्ली की नागरिक संघर्ष समिति ने एक बड़ा जुलूस निकाल कर संसद में प्रधानमन्त्री को एक ज्ञापन देने की बात तय की थी, किंतु प्रधान मन्त्री ने आचार्य कृपलानी को एक व्यक्तिगत पत्र लिख कर अनुरोध किया कि यह जुलूस अभी मुलतवी कर दिया जाये क्योंकि उस दिन हमारे नगर में ईरान के शाह मेहमान की तरह रहेंगे। हमारे वयोवृद्ध सर्वोदय के सिद्धांतों में विश्वास रखनेवाले इस नेता ने जुलूस ६ अक्टूबर को निकले ऐसा तय करके प्रधानमन्त्री को सूचित कर दिया और ईरान के शाह का २ अक्टूबर को भव्य सरकारी स्वागत किया गया जो संयुक्त वक्तव्य निकला उसमें भी जैसा हर संयुक्त वक्तव्य में होता है पुराने जमाने से आज तक की पारस्परिक सांस्कृतिक कड़ियों की याद दिलायी गयी और हर क्षेत्र में पहले से अधिक सहयोग की बातें भी लिपिबद्ध की गयी। सभी समाचारपत्रों ने कहा कि पिछले कुछ वर्षों से जो आशकाएं उस तरफ से हमारे मन में पैदा हो रही हैं वे दूर हो गयी हैं।

आशा हम भी यही करना चाहते हैं किंतु याद रखना चाहिए कि वर्तमान राजनीति में खाने और दिखाने के दांत अलग रखना ही बुद्धिमानी की तरह प्रतिष्ठित चीज है। ईरान के शाह की महत्वाकांक्षाएं हमसे ज्यादा वे जानते हैं जिन्होंने उन्हें सब प्रकार के आधुनिक शस्त्रों से जरूरत से ज्यादा लैस कर दिया है। ईरान को इस तरह लैस करनेवाले देश क्या सोच रहे हैं, यह जानलेना भी शायद ठीक होगा। वाशिंगटन की 'न्यूज-वीक' पत्रिका ने अभी-अभी लिखा है कि अपार शक्ति सम्पन्न ईरान के शाह किसी दिन राक्षस की तरह खतरनाक रूप में दुनिया के सामने उभर कर खड़े हो जायें, तो कोई ताज्जुब की बात नहीं होगी। १९७३ में शाह ने अमरीका से ४ सौ करोड़ डालर के शस्त्र खरीदे हैं और इस बरस एक हजार अतिरिक्त लड़ाकू-विमानों की जिसमें जेट से लगाकर हैलीकाप्टर तक शामिल हैं, खरीदी का आर्डर दिया है। सान सौ टैंक और दो पोतविध्वंसक भी वह अमरीका से इस वर्ष लेगा। तीन सौ करोड़ हर बरस के शस्त्र तो वह एक अरसे से खरीदता चला आ रहा है। उक्त पत्रिका ने लिखा है कि शस्त्रों की ऐसी कल्पनातीत खरीदी और वह भी उस समय जब ईरान के पास उनको उपयोग में लाने के लिए मनमाना तेल है, और दूसरों के पास वहां नहीं है, शाह के मद को ही नहीं, उसके मन की किसी महत्वाकांक्षा को प्रकट करती है। वे ऊपर से बीच का रास्ता अपनाने का अभिनय करते हैं, भीतरी इच्छा कुछ और ही है। वे एक साथ रूस, अमरीका, भारत और पाकिस्तान के प्रति जो सदाशयता व्यक्त करते हैं वह *शंकास्पद है।* —

बढ़त देखि निज गोत

७ अक्टूबर से 'प्रजानीति' साप्ताहिक का दिल्ली से इण्डियन एक्सप्रेस समूह के अन्तर्गत प्रकाशन शुरू हुआ है। पहला अंक आशा बंधाता है कि यह पत्र दल-निरपेक्ष होकर उन सब लोगों की ओर से भी बोलेगा, जिनकी ओर से सामान्यतः समाचार-पत्रों ने पीठ फेर ली है। अधिकांश पत्र सरकारी स्वर का अनुमोदन करने में लगे रहते हैं। वही स्वर प्रधान नहीं है, ऐसा भान रखनेवाले पत्रों में इस साप्ताहिक के प्रकाशन से एक और पत्र भी जुड़ता दिखाई देता है। हम आशा से इसकी ओर देखते रहेंगे। पहला अंक सुन्दर है। प्रकाशक और सम्पादकों को बधाई!

बिहार बन्द की सफलता

इसी पांच तारीख से जयप्रकाशजी ने तीन दिन के 'बिहार बंद' का जो आवाहन किया था उसको जनता का पूर्ण समर्थन मिला। बंद ज्यादातर अहिंसात्मक ही रहा—हमारा ख्याल है, छिटपुट घटनाओं को छोड़कर वह लगभग पूरी तरह से अहिंसात्मक रहता, किंतु अहिंसात्मक आंदोलन को दबाना कठिन जाता है इसलिए जे पी ने जो यह कहा है कि हिंसा को भड़काने में सरकार और सी. पी. आई का हाथ रहा, बहुत विश्वसनीय जान पड़ता है।

आंदोलन से सम्बन्धित जो चित्र अखबारों में छपे हैं, उनमें भी यही जान पड़ता है कि रेल की पटरी पर पूरी तरह अहिंसक जनता के जमाव को बिना कोई चेतावनी दिये काफी दूर-दूर से गोली का निशाना बनाया गया। 'टाइम्स आफ इण्डिया' के तारीख ६ के मुखपृष्ठ का चित्र जो भी देखेगा, उसके मन पर यही असर पड़ेगा। इसी दैनिक में भीतर जो एक अन्य चित्र है वह तो ऐसी क्रूरता का परिचय देता है, जिसका जवाब नहीं मिल सकता। सीमा सुरक्षा दल के चार जवान एक बालक को गोली का शिकार बना कर उसके शव को जिस भांति से उलटा लटका कर ले जा रहे है वह अकेला एक चित्र सरकार के हिंसा संबंधी सारे प्रचार पर पानी फेर देने में समर्थ है। अन्य दैनिकों में ऐसे भी चित्र छपे हैं जिनमें सत्याग्रही बापू की मूर्ति अपने सामने रखे हुए हैं और उन पर गोली चलायी जा रही है। किसी-किसी चित्र में बापू की टूटी हुई मूर्ति नजर आती है। इसे किसने तोड़ा है? स्वयं उस मूर्ति को सिर पर रखकर चलनेवाली जनता ने या बापू और उनकी अहिंसा का नाम लेनेवाली सरकार ने। हमारी समझ में यदि तीन दिन के बंद के इस आंदोलन के चित्रों के पोस्टर ही सारे देश में बनवाकर लगवा दिये जायें तो सरकार के झूठे प्रचार का दिवाला निकलने के साथ-साथ देश-भर में जनता के मन में वही भावना वैसी ही तीव्रता से जाग उठे जैसी बिहार में जाग रही है। हम तो समझते हैं :
"करीब है यार, रोजे महशर; छुपेगा कुश्तों का खून क्योंकर; जो चुप रहेगी जबाने खंजर, लहू पुकारेगा आस्तीं का।"

बिहार का जन-आन्दोलन निर्णायक दौर में

बिहार के छात्र आन्दोलन के दो अक्टूबर से आरम्भ निर्णायक दौर के अन्तर्गत तीन से पांच अक्टूबर तक बिहार बन्द रहा। बहत्तर घंटों की यह आम-हड़ताल बिहार के इतिहास की सबसे लम्बी और सफल हड़ताल थी। रेल और सड़क यातायात लगभग पूरी तरह ठप्प रहा। बेतार के सम्बन्ध ज्यादातर टूटने और बीच-बीच में कभी सुधरते रहे। हवाई सेवा जरूर ठीक-ठाक चली। हड़ताल का असर उत्तर बिहार में सबसे ज्यादा नजर आया। छात्र संघर्ष समिति और जयप्रकाश नारायण ने जिन क्षेत्रों को हड़ताल के दायरे से बाहर रखा था उनमें भी कामकाज नहीं हुआ। स्कूल कॉलेज खुले नहीं और सरकारी तथा अर्ध सरकारी दफ्तरों में उपस्थिति नाम-मात्र की रही। सड़कों पर सन्नाटा रहा लेकिन जबर्दस्ती दुकान बन्द करवाने की घटनाएं नहीं हुईं। अदालतें भी लगभग बन्द सी रहीं। आम लोगों का कहना है कि यह सम्पूर्ण हड़ताल स्वैच्छिक थी। लेकिन बिहार के कांग्रेस नेताओं और प्रशासकों ने कहा कि लोगों ने दुकानें आदि इसलिए बन्द रखीं कि उन्हें हिंसा और तोड़फोड़ का खतरा था। भय की बात इसलिए गले नहीं उतरती कि प्रशासन ने कुल मिलाकर डेढ़ लाख पुलिसवाले तैनात कर रखे थे। अगर भय की बात सही हो तो प्रशासन को मानना पड़ेगा कि सुरक्षा व्यवस्था में लोगों का विश्वास नहीं था। इसीसे यह भी साफ होता है कि आन्दोलनकारियों को जनता का समर्थन नहीं था तो वे गिनती के रहे होंगे और उनकी गतिविधियों पर पुलिस-वाले आसानी से नियंत्रण कर सकते थे।

हड़ताल का सामना करने के लिए बिहार प्रशासन ने बिहार पुलिस के ४२ हजार होमगार्डस के ८० हजार, सीमा सुरक्षा दल के ५ हजार, केन्द्रीय सुरक्षित पुलिस के १० हजार, रेल सुरक्षा दल के ढाई हजार और बिहार सशस्त्र पुलिस की १३ बटालियनों के जवानों को तैनात किया था। इसके अलावा सेना को सतर्क कर दिया गया था, उसे कभी भी बुलाये जा सकने के लिए। पुलिस के ऐसे भारीभरकम इन्तजाम को देखकर ही तो जयप्रकाश नारायण ने कहा कि सरकार ने हड़ताल को युद्ध मान लिया था।

हड़ताल के दौरान किसी की निजी सम्पत्ति पर कोई हमला नहीं हुआ। तोड़फोड़ नहीं हुई। जितनी भी तोड़फोड़ हुई वह ज्यादातर रेल सम्पत्ति की हुई। कई जगहों पर रेल की पटरियों पर सत्याग्रहियों ने धरना दिया। उन्हें जबर्दस्ती हटाया गया तो तोड़-फोड़ की वारदातें हुईं। लेकिन रेल व्यवस्था को अस्तव्यस्त करने की कोशिशें हड़ताल के पहले से ही होने लगी थीं। पटरियां उखाड़ने, पुल उड़ाने और स्लीपर हटाने की वार-दातें हो सकती हैं—इसका अन्दाज हड़ताल के पहले ही हो गया था। खुद जयप्रकाश नारायण ने सवारियों और भाड़े के टट्टुओं की इन हरकतों से जनता को आगाह किया था। सरकार भी माने बैठी थी कि ऐसी वार-दातें होंगी और इसलिए रेल-सम्पत्ति की रक्षा के लिए पटरियों पर पहरा देने, स्टेशनों को सुरक्षित रखने और रेलगाड़ियों के साथ चलने के लिए पुलिस का इन्तजाम किया गया था। फिर तोड़फोड़ रेल की ही हुई। इसकी तह में शायद बिहार के ही अपने ललितनारायण मिश्र का रेल मंत्री होना दीख पड़ता है।

बन्द के दौरान पुलिस ने कोई एक दर्जन से अधिक जगहों पर गोलीबार किया जिसमें १३ व्यक्तियों की जान गयी। सौ के लगभग लोग घायल हुए। गोलीबार से पटना में ५, त्रिवेणीगंज में ३, बिहपुर में २, पताही में २ और सासाराम में १ व्यक्ति मरा। मरने-वालों की यह संख्या सरकारी है। आंदोलन-कारियों और लोगों को हमेशा की तरह इस संख्या पर विश्वास नहीं है।

तीन दिन में सरकार ने ढाई हजार लोगों को गिरफ्तार किया। इन लोगों में वे सत्या-ग्रही भी हैं जो गिरफ्तार हुए और वे भी जिन्हें पुलिस ने पकड़ा। पटना में रेल लाइन पर हुए गोलीबार के दौरान पकड़े गये लोगों में कांग्रेस और सी० पी० आई० के सदस्य और समर्थक भी थे। १८ मार्च को पकड़े गये लोगों में भी सी० पी० आई० के एक विधायक थे।
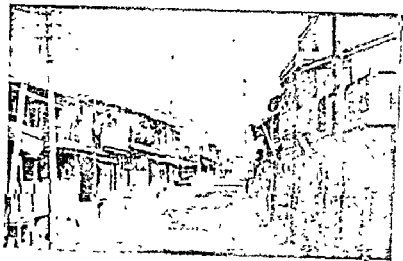
पटना की सड़कों पर बंद का सन्नाटा

जन-जन के हित में संघर्षरत
बैजनाथ बाबू
सत्ताधीशों के हाथों पुन: गिरफ्तार
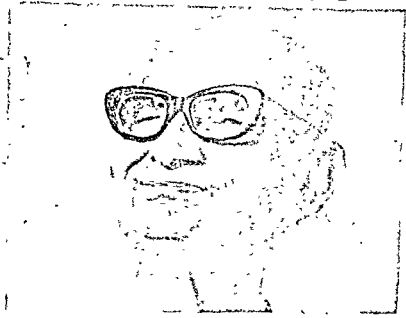
जयप्रकाश नारायण ने कहा कि शान्तिपूर्ण बन्द को बदनाम करने के लिए कांग्रेस और सी. पी. आई. ने षडयन्त्र करके पटना में हिंसा करवायी। उनके इस आरोप का मुख्यमन्त्री और सी. पी. आई. वाले खण्डन कर चुके हैं। लेकिन कांग्रेसियों और सी. पी. आई. के लोगों की गिरफ्तारी का क्या मतलब है। या तो ये दोनों पार्टियां स्वीकार करें कि उनके कई सदस्य सक्रिय और खुले रूप से आन्दोलन का समर्थन कर रहे थे या फिर जे. पी. का आरोप सही मानना होगा।

जयप्रकाश नारायण ने इन छिटपुट हिंसक घटनाओं के बावजूद बन्द को शांतिपूर्ण कहा है। गफूर साहब ने इसे गलत बताया है और केन्द्रीय नेताओं ने उनकी ताईद की है। गफूर साहब का कहना है कि देहाती इलाकों में बहुत हिंसा हुई जिसकी खबरें अभी तक आ रही हैं। अगर जनता की तरफ से हिंसा हुई है तो पुलिस की तरफ से भी जरूर हुई होगी। यानी गफूर साहब को मरनेवालों की संख्या में बढ़ती की भी खबरें मिल रही होंगी हालांकि उनका कोई जिक्र उन्होंने नहीं किया है।

बन्द की सफलता और उसको जन-समर्थन पर बहस गैरजरूरी है। तीन दिन की हड़ताल और वह भी ६ करोड़ की आबादीवाले बिहार में मुट्ठी भर लोग नहीं करवा सकते। ऐसी हड़ताल सभी रंगोंवाले कम्युनिस्ट तक कलकत्ता जैसे शहर में भी कभी करवा नहीं सके। पटना में सचिवालय के सामने किये गये सत्याग्रह में जयप्रकाश नारायण तीनों दिन शामिल हुए। उन्हें पकड़ा नहीं गया। डाक्टर उनकी जांच करते रहे।

उपवास श्रृंखला

तीन दिन के 'बिहार बंद' की अद्वितीय सफलता के बाद संघर्ष समिति ने आन्दोलन के अगले चरण के रूप में श्रृंखला उपवास आरंभ किये। सर्वसेवा संघ के अध्यक्ष सिद्धराज ढड्ढा और उनके साथियों द्वारा चौबीस घंटे का उपवास किये जानेके बाद जननेता जयप्रकाशजी ने भी चौबीस घंटे उपवास रखा। यह श्रृंखला अनवरत जारी है।

जे. पी. का हरियाणा प्रवास स्थगित

पूर्व निश्चित कार्यक्रम के अनुसार जयप्रकाश नारायण अक्टूबर ७४ के द्वितीय सप्ताह में हरियाणा का दौरा करनेवाले थे। तथापि बिहार में आन्दोलन की स्थिति और वहां अपनी उपस्थिति आवश्यक देखते हुए उन्होंने यह दौरा स्थगित कर दिया।

उत्तरप्रदेश छात्र बैठक

उत्तरप्रदेश छात्र-युवा संघर्ष समिति की बैठक ७ अक्टूबर को मेरठ में सुरेन्द्रविक्रमसिंह की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। बैठक में उत्तरप्रदेश के नौ विश्व-विद्यालयों के छात्र-संघ के अध्यक्षों तथा ससोपा, विद्यार्थी परिषद, संगठन कांग्रेस और भारतीय लोक दल के युवाओं ने भाग लिया। इसके पूर्व लखनऊ में हुई एक बैठक में निम्नलिखित निर्णय लिये गये : लोकनायक जयप्रकाश के जन्म-दिन ११ अक्टूबर को उत्तरप्रदेश के समस्त जिलों में बिहार के समर्थन में तथा जन-आन्दोलन की हवा तैयार करने के लिए शिक्षा-संस्थाओं का बहिष्कार किया जाये। उत्तरप्रदेश छात्र युवा संघर्ष समिति के सदस्य तथा छात्रों का विशाल समूह जिला कचहरियों पर प्रदर्शन करे तथा जन-सभाएं आयोजित की जायें। उत्तरप्रदेश में बिहार की तरह आन्दोलन चलाने की तैयारी में पन्द्रह अक्टूबर से तीस अक्टूबर तक जन-जागरण, ग्राम स्वराज्य, लोक स्वराज्य एवं लोक-शिक्षण का पखवाड़ा मनाया जायेगा। बिहार के आन्दोलन की जानकारी तथा जिला-स्तर से ब्लाक-स्तर तक संघर्ष समितियों के गठन का कार्यभार विशेष रूप से सभाओं के बटवारे के साथ विश्व-विद्यालयों के छात्र-संघ अध्यक्षों को सौंप दिया गया है।

जीता नहीं उसकी लाश ही सांस लेती है। कहा जाता है कि मनुष्य राजतंत्र में जी रहा है, राजतन्त्र मनुष्य के लिए जी रहा है। इसमें लोकतंत्र राजतन्त्र से भिन्न अपना अस्तित्व नहीं बना सका। क्योंकि वह लोगों की विशुद्ध आकांक्षाओं से व्यक्त नहीं हो सका इसीलिए लोकतंत्र भी मनुष्यों की लाशों को ही संविधान द्वारा चलाते रहने की कोशिश कर रहा है। कहा जाता रहा है कि लोकतंत्र लोगों के लिए, लोगों के द्वारा बनाया गया है। वास्तविकता तो यह है कि सांस्कृतिक (अशुद्ध) आकांक्षा से बनाये गये संविधान पर आधारित राजतंत्र का ही वह एक भ्रष्ट रूप है।

व्यवस्था मनुष्य को भ्रष्ट करने की प्रक्रिया चलाती है। यह स्थिति मनुष्य का अवमूल्यन करनेवाली है। लेकिन इससे मनुष्य का बचना संभव है या नहीं, यह सवाल उठता है। मनुष्य बच पायेगा इसमें सन्देह नहीं होना चाहिए। अर्थात् कैसे बच पायेगा यह समझे बिना इस सवाल का निराकरण होगा नहीं। मनुष्य आवश्यकता के बिना व्यवस्था को चलाना चाहेगा तो व्यवस्था के द्वारा मनुष्य भ्रष्ट होते रहेगा। लेकिन मनुष्य भ्रष्ट होना है या निश्चित रूप से क्या होता है, यह जानना अनिवार्य है। भ्रष्टता की परिभाषा नैतिकता के आशय को लेकर बनायी जाती है तब उसका एक मतलब होता है। और इस आशय को लेकर परिभाषा बनाते रहने की एक लंबी परम्परा बन गयी है। लेकिन 'भ्रष्टता से मनुष्य सम्बन्ध बनाये नहीं जाते, इसलिए मनुष्य समाजिक नहीं बनता।' इस आशय को परिभाषा में लाने से उसका मतलब भिन्न, पहले से भिन्न याने दूसरा हो जाता है। भ्रष्टता का नैतिकता से सम्बन्ध एक संदर्भ में है और भ्रष्टता का सामाजिकता से सबंध दूसरे याने भिन्न संदर्भ में। लेकिन नैतिकता के बिना सामाजिकता की कल्पना ही नहीं की जा सकती, यह कहनेवाला पक्ष अभी दुनिया में है और यह आग्रही पक्ष है। यह पक्ष परम्परा से जुड़ा हुआ है लेकिन परम्परा की परतें प्याज के छिलकों जैसी खोलने से यह पक्ष शक्तिमान नहीं रह पाता। नैतिकता मनुष्य की नीतियों की उपलब्धि नहीं है बल्कि राजनीति की उपज है। सम्बन्धों में नैतिकता पाने दिखाई देती है, वह मनुष्य की आवश्यकता के रूप में नहीं बल्कि राजनीति की आवश्यकता के रूप में है। सम्बन्धों में कोई नैतिकता या अनैतिकता नहीं होती। सम्बन्धों में सहजता होती है। मनुष्यों को राजतंत्र से नियंत्रित करके और व्यवस्था को पुष्टि देने की नीयत से, नैतिकता, अनैतिकता को सम्बन्धों में घुसाया गया है। इससे सम्बन्धों में कृत्रिमता है। सहजता मिट गयी है। मनुष्य का नियंत्रण राज्य की नीतियों द्वारा किया जाता है। और इसीलिए ही नैतिकता दण्डप्रधान रही है। बिना दण्ड के न्याय को प्रस्थापित नहीं किया जा सकता क्योंकि उसका क्रियान्वय दण्डनीति से ही किया जाता है। राज्य का न्याय राज्य की दण्डनीति ही है। इसके द्वारा सम्बन्धों में दाखिल की जानेवाली नैतिकता तथा अनैतिकता मनुष्यों के सम्बन्धों में सहजता लानेवाली कभी नहीं रह सकती। इसीलिए इसके द्वारा बनाये गये सम्बन्ध कृत्रिम बने रहे', जो मनुष्य की सामाजिक स्थिति के निर्माण

'रिश्ते बनाने का महत्वपूर्ण काम राजनीति या उसकी दण्डनीति ने आज तक किया नहीं...'

में मुख्य रुकावट बन गयी है। इसलिए मनुष्य की सामाजिक स्थिति बनाने में नैतिकता या अनैतिकता को आधार नहीं बनाया जा सकता क्योंकि वह राज्य की दण्डनीति की प्रेरणा से बनायी जाती है, मनुष्य की प्रेरणा से नहीं बन पाती। मनुष्य की प्रेरणा नैतिकता या अनैतिकता को चाहती नहीं। वह प्रेरणा सामाजिकता चाहती है। अर्थात् सामाजिकता में नैतिकता-अनैतिकता का प्रयोजन नहीं है, सहजता का प्रयोजन है। यह सहजता ही मानवीय है। इस प्रेरणा से ही समाज बनता है।

सम्बन्धों की सहजता समाज को बनाती है। लेकिन यह सहजता राज्य की नैतिकता से भिन्न है। अर्थात् यह भिन्नता समाज की वास्तविक अवस्था है। मनुष्य को इस अवस्था से गुजरने का अवसर चाहिए। इस अवसर के अभाव में मनुष्य को सामाजिक अवस्था में लाने की प्रक्रिया रुक जाती है। ऐसा क्यों होता है, यह पूछा जा सकता है। इस प्रश्न का उत्तर प्राप्त करने के लिए सहजता तथा कृत्रिमता का भेद समझना होगा। सम्बन्ध में हमेशा रिश्तों का होना अनिवार्य नहीं माना जाता। कृत्रिमता दण्डनीति से आती है। मनुष्यों को दण्डित करके कोई भी रिश्ता नहीं बन पाता। इसलिए रिश्ते बनाने का महत्वपूर्ण काम राजनीति या उसकी दण्डनीति ने आज तक किया नहीं क्योंकि यह दण्डनीति की क्षमता के बाहर है। तो फिर रिश्ते बनते कैसे है, उसका आधार क्या होगा, इसको समझना होगा।

सम्बन्धों की सहजता परिवार में देखने को मिलती है। सबको बांधनेवाला परिवार का सूत्र है विश्वास। विश्वास उपजता है प्रेम से। बिना प्रेम के विश्वास का बनना संभव नहीं। लेकिन प्रेम हेतु-प्रधान रहेगा तो विश्वास बनेगा नहीं। हेतु के बिना किया गया प्रेम मनुष्यों के रिश्तों को सहजता से बनाता है। प्रेम का कोई हेतु या उद्देश्य नहीं होता। प्रेम चाहता है किसी मनुष्य की कदर करना। एक दूसरे के अस्तित्व में बाधक बननेवाला कोई भी हेतुमूलक तत्व प्रेम के रिश्ते नहीं बना सकता अर्थात् प्रेम हेतुमूलक न हो तो, यह आवश्यक है। प्रेम के बदले में कुछ प्राप्त करने का हेतु नहीं जोड़ सकते क्योंकि प्रेम देने के लिए ही है। देने से गुण में वृद्धि होती है। दूसरा प्रेम नहीं देता है इसलिए हम नहीं देंगे, ऐसी नीति प्रेम की नहीं हो सकती। इससे प्रेम के साथ हेतु जोड़ा जाता है। हेतु तथा उद्देश्य से प्रेम दूषित होता है। और इसीलिए रिश्ते बनने का परिणाम ऐसे प्रेम से निकलता नहीं। परिवार में प्रेम देने से रिश्ते बनते रहे हैं। लेकिन इस प्रेम से जब कोई उद्देश्य जोड़ दिया गया तब रिश्ते बुरी तरह से टूटते रहे हैं। समाज बनने की प्रक्रिया खंडित होते रही है।

रिश्तों के आधार समाज की मर्यादा बनती रही। आगे जाकर इन मर्यादाओं को जातिवादी स्वरूप मिला। ऐसा क्यों हुआ? रिश्तों में दखल देने की कानून की आदत के कारण हुआ। अर्थात् कानून अपनी मर्यादा में मनुष्य को आकार देना चाहता है। मानवीय प्रेरणा से मनुष्य को सामाजिकता प्राप्त हो, याने वह अपने आकार का हो यह नहीं चाहता। मनुष्य को सामाजिकता का आकार

मिले, यह कानून की आवश्यकता नहीं है। इसीलिए रिश्तों को बनने नहीं देने की तथा जो बने हैं उन्हें तोड़ते रहने की परम्परा कानून की रही है। व्यवस्था की बुनियाद इसी के द्वारा बनायी गयी है। मनुष्यों के रिश्तों को नहीं बनने देना, यह व्यवस्था का लक्ष्य रहा है। और इसीलिए व्यवस्था स्वभावत. मनुष्य-द्रोही रही है। इसलिए मनुष्य को सामाजिकता में प्रवेश करना हो तो इस व्यवस्था को तोड़ना होगा। रिश्ता को बनानेवाली प्रक्रिया चलानी होगी। इस प्रक्रिया से मौलिक परिवर्तन लाया जा सकता है और संविधान तथा कानून के शोषण तथा दमन से मनुष्य मुक्त हो सकता है। मनुष्य को केवल मुक्ति चाहिए। उसके बदले में कुछ नहीं चाहिए।

जयपुर में गांधी जयन्ती संपन्न

जयपुर में महात्मा गांधी की जयन्ती पर गांधी शांति प्रतिष्ठान द्वारा विविध कार्यक्रम आयोजित हुए। रामनिवास बाग स्थित अलबर्ट-हाल में प्रात सूत्रयज्ञ, सामूहिक प्रार्थना, भजन आदि हुए। गांधीजी के सहयोगी बाबा बसन्तसिंह ने बापू से सम्बन्धित अपने संस्मरण सुनाये। उन्होंने देश की मौजूदा स्थिति को गांधी-मार्ग से हटने का परिणाम बताया। वयोवृद्ध लोकसेवी युगलकिशोर चतुर्वेदी ने बापू की शिक्षाओं को जीवन में उतारने पर बल दिया। केन्द्र के सचिव रामेश्वर विद्यार्थी ने आभार व्यक्त किया।

इस अवसर पर स्त्री-शक्ति-जागरण हेतु ब्रह्म विद्या मंदिर, पवनार की स्नातिका गरोज बहन के नेतृत्व में आयोजित पदयात्रा टोली को विदाई भी दी गयी।

जयपुर में जवाहरगंज स्थित खादी-ग्रामोद्योग सदन में आयोजित गांधी-जयन्ती समारोह में सदन के प्रबन्धक शालिग्राम कोठारी ने बापू के चित्र को पुष्पहार अर्पित किये और अभियन्ता ए. जी. तेलंग, डाक्टर विनय भवे, जिला सर्वोदय मंडल के संयोजक ठाकुर रामप्रसाद तथा नरेश ने अपने विचार व्यक्त किये। सामूहिक कताई, प्रार्थना, भजन भी हुए और इसी अवसर पर विशेष छूट देकर खादी बिक्री का शुभारम्भ।

अखण्ड साधना का नमूना

महादेव भाई की डायरी

—बनारसीदास चतुर्वेदी

संसार में सैकड़ों डायरी लेखक हुए हैं और उनकी रचनाओं का अपना अलग-अलग महत्व है, पर नियम से डायरी लिखना कोई आसान काम नहीं है। उसके लिए जिस अखण्ड साधना की जरूरत है वह अत्यन्त दुर्लभ है। हिन्दी में भाई सीतारामजी सेकसरिया का ही एकमात्र दृष्टान्त अबतक हमारे सामने आया है।

महात्मा गांधी डायरी लिखने को बहुत महत्व देते थे। २० जनवरी ३३ को उन्होंने लिखा था—"डायरी का विचार करके देखता हूं तो मेरे लिए वह एक अमूल्य वस्तु हो गयी है। जो सत्य की आराधना करता है उसके लिए वह पहरेदार का काम करती है।...डायरी लिखने का नियम कर लेने के बाद कभी नागा न हो। डायरीरूपी प्रतिबन्ध आत्मशुद्धि में सहायता करता है।"

जब किसी ने राजर्षि गोखले से डायरी लिखने का प्रस्ताव किया तो उन्होंने कहा—"देश की जो दुर्दशा है, मैं उसका वृत्तान्त चिरस्थायी बनाने में कोई फायदा नहीं देखता।"

एकबार कोई मामूली आदमी, जो डायरी रखता था, गवाही के लिए बुलाया गया। न्यायाधीश के प्रश्नों के उत्तर देते समय वह बार-बार अपनी डायरी देख लेता था। विपक्षी के वकील ने कहा—"गवाह की डायरी भी प्रमाण के रूप में तलब की जाय।" ऐसा ही किया गया और उस डायरी के कारण वह मुकदमा हार गया। पर न्यायाधीश ने अपने फैसले में उसकी डायरी लिखने की आदत की प्रशंसा की थी।

अंग्रेजी साहित्य के सुप्रसिद्ध जीवनी लेखक बॉस्वेल ने जानसन के नित्यप्रति के जीवन का जो सजीव वर्णन किया है वह विश्व साहित्य में अमर हो गया है। स्व॰ महात्मा गांधी ने महादेव भाई के स्वर्गवास के बाद लिखा था—'महादेव भाई एक गुणी और प्रतिभावान व्यक्ति थे। मेरे विचार में उनके चरित्र की सबसे बड़ी खूबी थी—मौका पड़ने पर अपने को भूलकर शून्यवत् बन जाने की उनकी शक्ति। वह मुझमें पूरी तरह खो गये थे। मुझसे अलग उनकी कोई हस्ती ही नहीं रह गयी थी "वह मेरे लिए बॉस्वेल (जीवनी लेखक) बनना चाहते थे। इससे बेहतर वे क्या कर सकते थे? सो वह तो चले गये और मुझे अपनी जीवनी लिखने के लिए छोड़ गये।

एक बार अमर शहीद गणेशशंकर विद्यार्थी ने मुझे ८ फरवरी ३० के अपने पत्र में लिखा था—"आप जानते हैं कि जानसन इतना बड़ा न समझा जाता, यदि उसकी जीवनी का लेखक बॉस्वेल न बनता। आप पूज्य द्विवेदीजी के पास कुछ दिन अवश्य रह जाइये। आप उनके बॉस्वेल बन जाइये। *२००-४०० रुपये की कोई बात नहीं है,* अब भी मैं तैयार हूं।" पर दुर्भाग्यवश मैं गणेशजी के आदेश का पालन न कर सका।

महादेव भाई वस्तुत बॉस्वेल से भी आगे बढ़ गये। उनकी महत्वपूर्ण डायरियों और बॉस्वेल द्वारा लिखित डा. जानसन के जीवन चरित्र में इतना ही फर्क है जितना उन दोनों महापुरुषों के जीवन में।

महादेव भाई अद्वितीय डायरी लेखक होने के साथ-साथ एक प्रतिभाशाली कलाकार भी थे। उन्होंने भिन्न भिन्न व्यक्तियों के जो रेखाचित्र अपनी डायरियों में खींचे हैं वे साहित्यिक दृष्टि से अमूल्य बन गये हैं। कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ ठाकुर के बड़े दादा तथा बापू के बीच जो संभाषण हुआ था उसका विवरण बड़ा सजीव बन पड़ा है। १९२० में इन पंक्तियों के लेखक को भी शांति निकेतन में रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था, जबकि बापू वहां पधारे थे और महादेव भाई के उस जीते-जागते वृत्तान्त को पढ़कर सारा दृश्य मेरी आंखों के सामने ज्यों का त्यों उपस्थित हो गया।

एक दो नहीं, बीसियों छोटे-बड़े व्यक्तियों

के जो चरित्र-चित्रण उन्होंने किये हैं वे सब कलापूर्ण हैं। दीनबन्धु एन्ड्रूज, महामाननीय श्रीनिवास शास्त्री, महामना मालवीयजी, मौलाना शौकतअली और मोहम्मदअली, सरोजिनी नायडू, मौलाना आजाद तथा देशबंधुदास से लगाकर छोटे से छोटे कार्यकर्ता तक को महादेव भाई ने अपनी तूलिका से अमर बना दिया है।

महादेवभाई अपनी यह डायरी नियमानुसार २५ वर्ष तक लिखते रहे—केवल उन वर्षों को छोड़कर, जबकि उन्हें बापू से अलग रहना पड़ा। अपने अत्यन्त व्यस्त जीवन में से वे डायरी लिखने का वक्त कैसे निकाल लेते थे, यह सोचकर आश्चर्य होता है।

इन डायरियों में हम महात्माजी को चलते-फिरते, हंसते-बोलते, खुश और नाराज होते देख और सुन सकते हैं। दरअसल इन डायरियों का महत्व किसी भी हालत में बापू के आत्मचरित्र से कम नहीं। वस्तुतः ये उस आत्मचरित्र की पूरक ही हैं।

वह दिन केवल महात्माजी या महादेव भाई के जीवन के लिए ही नहीं, बल्कि भारत तथा विश्व के साहित्य के लिए भी बड़े सौभाग्य का था जब महादेवभाई ने बापू की सेवा में आने का निश्चय किया। स्वयं महादेव भाई ने २ सितम्बर १९१७ को जो पत्र अपने घनिष्ठ मित्र श्री नरहरिभाई को लिखा था, उसमें बड़ी सहृदयता के साथ उस घटना का ब्योरा दिया है। महादेवभाई ने लिखा था—"बापू ने मुझसे ३१ अगस्त को कहा—'तुम्हें हर रोज उपस्थित होने के लिए जो कहता हूं, उसका कारण है। तुम्हें मेरे पास ही आकर रहना है। पिछले तीन दिनों में मैंने तुम्हारा जौहर देख लिया है। पिछले दो वर्षों से मैं जैसे युवक की तलाश कर रहा था वह मुझे मिल गया है। इसे तुम मानोगे? मुझे ऐसे आदमी की जरूरत थी जिसे मैं किसी दिन अपना सारा कामकाज सौंप कर शान्ति से बैठ सकूं, जिसका सहारा लेकर मैं निश्चिन्त हो सकूं। वह आदमी तुम्हारे रूप में मुझे मिल गया है।"

महात्माजी में लोकसंग्रह की जो अद्भुत शक्ति थी, उसका यह एक नमूना है।

महादेवभाई ने बापू की आशाओं को पूरा किया और वे बापूमय ही बन गये। आज बापू अपने जीवनचरित्र के कारण जितने जीवित हैं, उतने ही महादेवभाई की डायरियों के कारण भी, बल्कि एक विदेशी आलोचक ने तो यहां तक लिखा था कि ये डायरियां आत्मचरित्र से कहीं अधिक महत्व रखती हैं।

बड़े दुर्भाग्य की बात यह हुई कि स्वयं महादेवभाई इन डायरियों का सम्पादन नहीं कर सके और यह भार उनके अनन्य मित्र श्री नरहरिभाई पर पड़ा, जिसे उन्होंने बड़े परिश्रमपूर्वक सम्भाला। अस्वस्थ होते हुए भी तीन हजार पृष्ठों का सम्पादन उन्होंने कर दिया।

इन डायरियों के छपने में जो विलम्ब हुआ है—पिछले ३२ वर्षों में कुल जमा १० भाग ही निकल पाये हैं—उसका कारण जान कर हार्दिक दुख होता है। नवजीवन ट्रस्ट के बारे में जितना कम लिखा जाय, उतना ही ठीक होगा। पर श्री नारायणभाई देसाई की उदारता की जितनी प्रशंसा की जाय, थोड़ी होगी। उन्होंने इस डायरी के हिंदी तथा अंग्रेजी खण्डों के प्रकाशन का निःशुल्क अधिकार सर्व सेवा संघ को सहर्ष अर्पित कर दिया। पर जब तक मूल गुजराती डायरियां न छप जायें, तब तक अनुवाद कैसे छप सकते हैं? यदि प्रकाशन की गति इतनी धीमी रही तो इन डायरियों के शेष दस भाग सन् २००६ तक प्रकाशित हो सकेंगे।

हम कभी-कभी कल्पना करते हैं कि यदि महादेवभाई जैसा कलाकार किसी अन्य देश में उत्पन्न हुआ होता तो उसकी रचनाएं शीघ्रातिशीघ्र प्रकाशित कर दी जातीं और संसार की मुख्य-मुख्य भाषाओं में उनके अनुवाद भी छपा दिये जाते। पर हमारे देश की सरकार अथवा जनता महादेवभाई के अमर कार्य के महत्व को आंकने में सर्वथा असफल हो रही है। और तो और, इन डायरियों की कोई भी विस्तृत आलोचना हमें राष्ट्रभाषा हिंदी के किसी पत्र में पढ़ने को नहीं मिली। पर वह समय आनेवाला है जबकि महादेवभाई की डायरियों को पढ़ने के लिए देशी-विदेशी लेखक गुजराती पढ़ने के लिए मजबूर होंगे, क्योंकि वे विश्व के इतिहास की दृष्टि से अन्तर्राष्ट्रीय महत्व रखती हैं।

यहां हम एक व्यावहारिक सुझाव देना चाहते हैं। यदि इन डायरियों को संक्षिप्त करके ४००-४०० पृष्ठों के दो खण्डों में छपा दिया जाये और उन खण्डों के अनुवाद भारत की मुख्य-मुख्य भाषाओं में भी प्रकाशित करा दिये जायें तो एक बड़ा काम हो जाये। 'साहित्य अकादमी' के सुपुर्द यह श्राद्ध किया जा सकता है और वह श्रद्धेय काका साहब की देखरेख में इस कर्तव्य का पालन कर सकती है।

रेखाचित्र, संस्मरण अथवा चरित्र-चित्रण की दृष्टि से यह ग्रन्थ अत्यधिक मूल्यवान है। महात्माजी का कार्यक्षेत्र तथा प्रभाव विश्वव्यापी था और वे जिंदगी के कलाकार भी थे। उनके बहुमुखी जीवन तथा दैनिक कार्यक्रमों पर ये डायरियां पूरा-पूरा प्रकाश डालती हैं। वे भारतीय राजनीति के केन्द्रबिंदु थे और तात्कालिक इतिहास की दृष्टि से भी इस ग्रन्थ का महत्व असंदिग्ध है। हिंदी में इस पुस्तक का प्रकाशन निःसंदेह एक महत्वपूर्ण घटना है। ⊙

टवलाई के ग्राम-भारती आश्रम को मदद अपेक्षित

मध्यभारत के धार जिला स्थित टवलाई में १९५५ में कार्यरत ग्रामभारती आश्रम में इस वर्ष नवमी कक्षा आरम्भ की गयी है। आश्रम खेती, गोपालन, बालवाड़ी, कुमार मंदिर और पंचायती राज प्रशिक्षण केन्द्र के कार्य चलाता है।

आश्रम की प्रबन्ध समिति द्वारा जारी एक 'सहायता के लिए अनुरोध भरी विनती' में बताया गया है कि आश्रम की खेती और अन्य स्रोतों से आय तथा मध्यप्रदेश सरकार से प्राप्त अनुदान की राशि मिलाकर भी चालू वर्ष में २६ हजार रुपये से कुछ अधिक की कमी अनुमानित है। इसकी पूर्ति आश्रम लोक-सहायता से करना चाहता है और इसके लिए उसने सबसे उदार सहयोग का अनुरोध किया है। ⊙

लुप्त होती जा रही शासन-कला

—नयनतारा सहगल

कांग्रेस जब १९३७ में सत्तारूढ़ हुई तो उसे १९३७-३९ के दौरान कुछ समय के लिए सात प्रदेशों में सत्ता में रहने के सिवाय शासन का कोई अनुभव नहीं था। तथापि, उसके नेता राजनीतिक दृष्टि से परिपक्व व्यक्ति थे। वे राष्ट्रीय आन्दोलन के दीर्घकाल में पर्याप्त शिक्षा प्राप्त कर चुके थे। महात्मा गांधी के कार्यक्रम के संदर्भ में इसका अर्थ था कि उन लोगों ने ग्रामीण क्षेत्रों की समस्याओं का सामना किया और इनसे व्यावहारिक तथा उदार तरीके से निपटना सीख लिया है। वे आदर्शवाद से भरे पूरे थे जिसके बिना स्वतन्त्रता की कोई लड़ाई नहीं लड़ी जा सकती और गांधी का आन्दोलन नैतिक मूल्यों के प्रति सतर्कता के मामले में सम्भवतः इतिहास में अद्वितीय था।

यही आधार था जिसने स्वतन्त्रता के समय नेतृत्व को उन समस्याओं में विश्वास-पूर्वक हाथ डालने के लिए समर्थ बनाया जिनमें हमारे डूब जाने का खतरा था। इस प्रकार वे तेजी और कुशलता से विस्थापितों की भारी संख्या का पुनर्वास करते रहे, खाद्यान्नों का देशव्यापी नियन्त्रण और वितरण करते रहे और उन अभिक्रमों को गतिवान बनाया जिनसे १९५० का वर्ष निर्माण तथा फलदायी होने का वर्ष माना जाता है। उनके विश्वास को इस तथ्य से बल मिला कि आम नागरिक अपनी सरकार में भागीदार होने और उसमें संलग्न होने की भावना महसूस करता था। उस समय असफलताएं भी आयीं और बहुत कुछ करने को रह गया। लेकिन, एक विश्वासपूर्ण शुरुआत हो चुकी थी। वह समय संकल्प का था, काम को अन्जाम देने की इच्छा का था, और इस महत्त्वाकांक्षा का था कि चुना गया रास्ता सही और कड़े परिश्रम तथा समर्पण के योग्य है। स्वतन्त्रता के बाद प्रारम्भिक वर्षों का नेतृत्व यदि भारतीय राष्ट्रीयता और ब्रिटिश उदारवाद का सबल मिश्रण था तो वह अधिक सफल मिश्रण था। वह जो कुछ था, उसे ऐतिहासिक रूप से समझा जा सकता है। उसमें भारत के अतीत की प्रतिच्छवि थी और वह भारत के वर्तमान के अनुकूल था। उसके ढांचे के भीतर बनायी गयी राष्ट्रीय नीतियां कट्टरपंथियों के साथ ही उन लोगों को भी सारयुक्त लगती थीं जो आधुनिकता के छोर की ओर बढ़ रहे थे। वह असंख्य कठिनाइयों की हालत में भी उसका सामना करने के लिए जरूरी विश्वास दे सकने में समर्थ था। इस भावनात्मक और आध्यात्मिक ताकत के बिना राष्ट्र निर्माण के कठिन कार्य में हृदय से जुड़ना और मात्र सहमति के आधार पर ही हमारा प्रयास करना पथभ्रष्ट हो सकता था। *उस समय जो कुछ प्राप्त हुआ, जो मिले-जुले* अभिक्रम आरम्भ हुए और उनके परिणाम आये, जो संस्थाएं बनीं और पनपीं और भारत को जो स्वरूप मिला वह सब शक्ति के पैमाने से बड़ा न होते हुए भी सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था तथा अन्तर्राष्ट्रीय परिषदों में उसका प्रभाव था। इसका श्रेय उन लोगों को था जो हमारा शासन चलाते थे और उस तरीके को था जो वे अपनाते रहे।

प्रजातन्त्र में किसी भी राजनीतिक दल के पास बहुत समय तक बहुत शक्ति रहना बुरा है। जब नेतृत्व का स्तर गिरने लगे और वह मूल्यों व मानदंडों के प्रति चिंतित न रह जाये तो परिणाम दल और देश के लिए दर्दनाक होते हैं। कांग्रेस इसका एक ज्वलन्त उदाहरण है। दरारें और घाव उसमें उभरते आ रहे हैं, भ्रष्टाचार की खाज उसे खा रही है।

इन बातों को उस नेतृत्व ने काफी समय तक काबू में रखा जिसके राजनीतिक नैतिकता के मानदंड ऊंचे थे और जिसके तरीके असंशोधनीय। इसके लिए दूसरा नियंत्रण कांग्रेस द्वारा ही लगाया जा सकता था जिसे देश का विश्वास पाने में दूसरे दलों से प्रतियोगिता करनी पड़ती है। लेकिन यह स्वस्थ परिवर्तन कभी हुआ नहीं। यद्यपि १९६७ के चुनावों ने स्पष्ट कर दिया था कि मतदाताओं की निगाहों में कांग्रेस गिर चुकी है।

सन् १९६९ में श्रीमती गांधी ने अविभक्त दल से नाता तोड़कर घोषित किया था कि वे एक नयी शुद्ध कांग्रेस के साथ नये युग में प्रवेश करेंगी। लेकिन उसी समय उन्होंने महात्मा गांधी द्वारा निर्देशित इस कठिन नैतिक सिद्धान्त से भी नाता तोड़ लिया कि साध्य और साधनों में एकात्म रहना चाहिए। नेहरूजी के लिए यह बात विश्वास की वस्तु बनी रही थी। इसका स्थान सत्ता की राजनीति ने ले लिया और अनुशासन, संयम तथा सम्मानपूर्ण व्यवहार का आधार हमारे बीच से हट गया। सम्पूर्ण सत्ता हथिया लेने और उसको किसी भी कीमत पर अपनी मुट्ठी में रखे रहने की जरूरत अपने साथ विनाशकारी प्रवृत्ति लेकर आयी है। पांच साल बाद सत्तारूढ़ दल की हालत, उसके गिरे मानदंड, उसके आधे दफन हो चुके अस्थिपंजर, और उसके व्रण से रिसते मतभेद अविभक्त कांग्रेस की कमियों से भी बढ़कर हो गये हैं। आज तो ऐसा लगता है कि केवल सत्ता के सहारे वह अपना घोषणा-पत्र पूरा करने में लगी है, पैसे की सत्ता, तोड़फोड़ और निहित स्वार्थ की शक्ति से। जहां तक जनता का सवाल है कांग्रेस की कभी क्षमा न की जा सकने वाली असफलता शासन करने में उसकी असफलता है और यह कतई आश्चर्यजनक नहीं है क्योंकि ऐसा दीख पड़ता है कि उसे यह चेतना भी नहीं रह गयी कि वह किसलिए है।

कांग्रेस और सी. पी. आई. के मिश्रण ने न तो कोई स्पष्ट दर्शन सामने रखा है और न कोई स्पष्ट कार्यक्रम कि जैसा महात्मा गांधी और उदारवादियों के सम्मिश्रण से हुआ था। उसमें वायदों और शब्दों

का जाल तो है लेकिन वास्तविक वामपथ का यथार्थ नहीं। वर्ग-संघर्ष के प्रभावशाली मुहावरे और बढ़ी-चढ़ी भाषा के द्वारा सत्ता में आजाने पर उसका इतिहास सारहीनता और दम्भोक्तियों का ही रहा है; प्रतीकों के नष्ट करने का, बिना सोचे विचारे परिवर्तन का और यहां तक कि देश का प्रबन्ध यथावत भी न करते रह सकने का। सच पूछा जाये तो यथावत प्रबन्ध अर्थात् काम और उपलब्धि के सुस्थापित स्तर को बनाये रखना ही एक ऐसी बात रही है जिसकी सर्वाधिक क्षति हुई है। जिन सेवाओं से जनता को आशाएं थीं उनमें, टेलीफोन और बैंकों में, और अपराधों की बढ़ती लहर के खिलाफ सुरक्षा तक में इस यथावत प्रबन्ध को भी बनाये न रख सकने की असफलता साफ दिखाई देती है। और तो और, कई बार संसद द्वारा निर्देशित मापदंड और प्रक्रियाओं का भी पालन नहीं किया गया है। अध्यादेशों द्वारा शासन करने के तरीके का बार-बार आश्रय लिया गया और अब लाइसेंस प्रकरण में संसदीय विशेषाधिकारों से इन्कार करके संसद की कल्पना और कार्यों की भावना को भी आघात पहुंचाया गया है। प्रकट रूप से तस्करों को गिरफ्तार करने और रोकने के लिए सरकार द्वारा अर्जित अतिरिक्त शक्ति का जाल बहुत व्यापक होकर फैल रहा है। हमें नहीं मालूम कि कितने अब सत्याग्रही सींखचों के भीतर पड़े हैं और उनका अपराध क्या रहा है? हम यह भी नहीं जानते कि सरकार से असहमत होना भी अब क्या कतई सुरक्षित रह गया है? अटलबिहारी वाजपेयी की असाधारण गिरफ्तारी इस सम्बन्ध में एक उदाहरण है। कुछ कम प्रसिद्ध व्यक्ति अभी-भी सींखचों के पीछे होंगे। और जनता भी इतनी चतुर नहीं है कि उनके सामने से कुछ करे। यह सभी बातें सरकार चलाने की क्षमता के लुप्त होते जाने के चिह्न हैं। जो लोग शासन नहीं कर सकते वे आतंक का आश्रय लेते हैं। सत्तारूढ़ दल १९६९ में चाहे जो विचार लेकर चला हो, लेकिन आज उसने अपने पंजे दिखाना और फासिस्टवादी तरीकों के हथियारों का प्रहार चालू कर दिया है।

जो लोग शासन करने में असफल रहते हैं उन्हें नाटक करने का आश्रय लेना पड़ता है क्योंकि जहां रोटी नहीं होती वहां सरकस दिखाकर बहलाया जाता है। जिन होटल और रेस्तरां आदि में निचले स्तर के अथवा मिलावटी सामान पाये जायें उनके मालिकों को पकड़कर दंडित करने का अभियान वर्तमान सरकस का विशेष आकर्षण है। ठीक सरकार तो समस्या की तह में जाकर नापतोल और पैकिंग के कड़े मापदंड तय करती और इनका उल्लंघन करनेवाले उत्पादकों पर भारी जुर्माने करती जिससे कि कुछ भी गन्दा या खतरनाक उपभोक्ता तक पहुंच ही न सके। इससे मिलावट के बिन्दु पर ही उसकी रोकथाम कर सकना और अपराधी व्यक्ति या समूह को बिन्दुगत कर सकना सम्भव हो सकता था, फिर भले ही वह उत्पादक हो, थोकव्यापारी अथवा फुटकर व्यापारी। वर्तमान अभियान उपभोक्ता को कोई सुरक्षा प्रदान नहीं करता क्योंकि मिलावटी चीजें बाजार में धड़ल्ले से पहुंचती हैं और वह गलती करके तथा पैसा गंवाकर ही सीख पाता है कि कौन सी चीजें खरीदना बन्द कर दिया जाये।

सरकस का चकाचौंध लगानेवाला काम तस्करों की धरपकड़ का अभियान है। तस्करी चूंकि अपराध है इसलिए उससे कानून के वर्तमान साधनों में ही क्यों नहीं निपटा जा सकता? और जब जनता जानती है कि सत्ता की दुरभिसंधि से पदासीन किसी भी व्यक्ति को या उसके नाम को इन व्यवहारों के साथ नहीं जोड़ा जायेगा और यह कि सत्तारूढ़ दल के धन-संग्रह ने समान्तर अर्थव्यवस्था का दानव हमारे बीच खड़ा कर दिया है, तब इस तस्करी अभियान अकेले से कुछ बननेवाला नहीं। तस्करों की धरपकड़ का मामला बहुत दिनों से प्रतीक्षित था और वह बढ़िया नाटक भी है लेकिन इस प्रकार के अभियानों को अधिक विश्वसनीयता तभी प्राप्त होगी जब हमें यह मालूम पड़े कि सरकार का अपने दल में भ्रष्टाचार उन्मूलन का इरादा भी इतना ही जोरदार है।

मेरे एक मुलाकाती ने मुझसे बातचीत में कहा कि सरकार की यह पद्धति भगरन्त हो गयी है। मुझे साफ दीख पड़ता है कि यदि किसी भी चीज पर लगातार निशाने लगाकर धक्के दिये जायें तो वह गिरेगी ही। हम जिस राजनीतिक प्रणाली को लेकर चले थे वह जीवित भले ही हो, लेकिन अपने मूल स्वास्थ्य और स्फूर्ति के साथ नहीं और इसका एक कारण सत्तारूढ़ दल की विचारधारा में पैदा हुआ भ्रम भी है। जहां खाद्य नीति जैसी इस क्षण की गम्भीर समस्या पर भी ठीक निश्चय न किया जा सके वहां और अधिक भावनात्मक धारणाएं तो कुहासे में खो ही जायेंगी।

सरकार क्या हमारी राजनीतिक प्रणालियों में विश्वास करती है? या और कोई प्रणाली चाहती है? ये वे प्रश्न हैं जो अन्य बहुत से प्रश्नों की तरह उत्तर की तलाश में हमारे आस-पास मंडराते हैं और उत्तर के लिए रखा जा रहा धीरज कभी-भी दम तोड़ सकता है। ⊙

बीस साल पहले

(भूदान-यज्ञ वर्ष १ अंक २
२०.१०.५४ के अंक से)

"लाज ढक रही है" (विनोबा पद यात्रा डायरी–९) 'दादू'

उस दिन दोपहर को एक कांग्रेसी एम० एल० ए० बाबा से मिलने आये। वह दरभंगा जिले के उत्तरी हिस्से की बाढ़ देखकर आये थे। उन्होंने बताया कि पहले जहां बाढ़ का पानी दो दिन मुश्किल से ठहरता था, वहां अब दो दो हफ्ते ठहर रहा है। हमारा ख्याल है कि सड़कें और पुल इसके लिए बहुत कुछ जिम्मेदार हैं। गांववालों का ख्याल है कि बिहार के रेलमार्गों और सड़कों की फिर से जांच होनी चाहिए। लेकिन दुर्भाग्य यह है कि इन्जीनियर लोग इस विचार से सहमत नहीं होते। वे कहते हैं कि नदी के दोनों तरफ बांध बांधना चाहिए। इस तरह जनता को उनके अन्दर कोई विश्वास नहीं रह गया है। इसके बाद उन भाई ने कहा "बाबा, सच तो यह है कि बाढ़ में सरकार मदद क्या दे रही है, किसी तरह से अपनी लाज ढक रही है।" यह सुनकर मैं तो दंग रह गया। लेकिन बाबा के आगे भी अगर कोई सत्य नहीं बोलेगा, तो कहां बोलेगा? इससे अपनी स्थिति का भान होजाता है। ⊙

बीच की बात : जमाखोरी ही दुश्मन

—महेशदत्त मिश्र

पिछले दिनों में बहुत सारे प्रसंगों में ही मैंने तीन सुझाव दिये थे कि उत्पादन बढ़ाने के लिए छोटे किसानों को सिंचाई की सहूलियत देने को प्राथमिकता दी जाये, सार्वजनिक कारखानों और संस्थानों के प्रबन्ध में कर्मचारियों को भागीदारी दी जाये और जमाखोरी को रोकने के लिए व्यापक कार्यक्रम याने जनसमितियों का निर्माण ऐसे सिद्धांत पर हो कि जिससे कम से कम अनाज और जरूरी चीजों के मामले में सत्ता का विकेन्द्रीकरण किया जा सके। इन तीन बातों को मैं देश की अर्थनीति, राजनीति, नियोजन, शिक्षा व संस्कृति के उद्धार के लिए जरूरी मानता हूं। इन तीनों में से भी जमाखोरी को रोकना प्राथमिकता की दृष्टि से पहला काम होना चाहिए। अब तो सबको यह बात समझ में आ गयी है कि हमारे देश में किसी भी चीज की उतनी कमी नहीं है जितनी दिखाई देती है या बनायी जाती है। जमाखोर ही जहां चाहे जब चाहे अभाव पैदा कर देता है और मौजूदा प्रशासन उसे पकड़ नहीं पाता। प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने हाल ही जमाखोरी के खिलाफ सख्त कार्रवाई के आदेश दिये हैं और जनता से सहयोग मांगा है। जन सहयोग की बात कई दिनों से जब तब कही जा रही है। कहीं-कहीं मुख्य मन्त्रियों ने छात्रों से कहा है कि वे जमाखोरों को पकड़ने में मदद दें। कई दल अपने-अपने ढंग से जमाखोरों के खिलाफ आंदोलन या छापामार अभियान चला रहे हैं और उसका नतीजा यह निकलता है कि पुलिस शांति-व्यवस्था के नाम पर छापामार भीड़ पर ही टूट पड़ती है। जमाखोर फिर बच निकलता है। जनशक्ति या जनसहयोग को एक सर्वदलीय या राष्ट्रीय आधार पर जब तक कानूनी मान्यता नहीं दी जायेगी यह अराजकता चलती रहेगी। सरकारी काम का तरीका नहीं बदले और दस-पांच जगह कुछ कार्रवाई कर देने से थोड़े वक्त के लिए दाम कहीं-कहीं कम हो जायें तो भी सारे मुल्क में समान रूप से कोई सुधार नहीं होगा।

पिछले बरसों के अनुभव पर से हमको यह समझ लेना चाहिए था कि जमाखोरी जिस व्यापक पैमाने पर हो रही है उसको रोकने के लिए थाने से सदर या पुलिसवालों के बल पर कोई मुख्यमंत्री या सरकार सफल नहीं हो सकती। सख्ती से हुक्म दे देने से क्या होता है। फिर यह शिकायत भी आ रही है कि सरकार जमाखोरी और कालाबाजारी मिटाना ही नहीं चाहती क्योंकि उस के दल को पैसा तो यही देते हैं। पर जमाखोर या कालेधन के मालिक तो सब दलों को रुपया देते हैं और किसी भी दल की सरकार बने पर प्रशासन की व्यवस्था यही बनी रही तो वह भी इस इल्जाम से बचनेवाली नहीं है। केन्द्रित प्रशासन में हेरफेर की गुंजाइश का लालच और सर्वदलीय नेतृत्व की मजबूरियां अच्छे अच्छे ईमानदार को भी लालच में फंसा देती है। हमारी राजनैतिक मान्यताएं ही ऐसी बन गयी हैं कि राजनीति के लिए काफी पैसा चाहिए। जनसेवा करके और दल के सदस्यों की छवि ठीक करके जनसाधारण से या दल के ही संपन्न लोगों से चुना चंदा लेकर जिसका हिसाब रखा जा सके, दल का काम चलाने में हमारा विश्वास नहीं रह गया है। पूज्य विनोबा ने उत्थान-दान का सुझाव देकर सर्व सेवा संघ की गतिविधियों को सरकारी मदद या दूसरे किसी पूंजीवादी स्रोत से बचाने का जो सुझाव दिया है वह सही कदम है और राजनैतिक दलों को भी जो समाजवादी कार्यक्रम में विश्वास रखते हैं ऐसा ही कुछ करना चाहिए।

हमारा राजनैतिक जीवन काले धन से दूषित हो गया है। पर राजनीति को छोड़कर चला भी नहीं जा सकता है क्योंकि वह हमारे जीवन के सभी पहलुओं पर हावी है। हम खुद चाहे सक्रिय राजनीति में न जायें जैसा अब तक सर्वोदय वालों की नीति रही है पर हम उससे आंखें भी न मूंदे जो कर गुजराती व जयप्रकाशजी कह रहे हैं। होना यह चाहिए कि हम जमाखोरी कालाबाजारी मुनाफाखोरी और उससे पैदा होनेवाली दूसरी बुराइयों के प्रशासनिक पहलू को समझें। हम जितना विरोध करेंगे नतीजा यही आयेगा कि जितना अनाज और दूसरी जरूरी चीजें हैं उसका का ७५ फीसदी माल भी दिखाई पड़ जाये और उसका बंटवारा सही ढंग से होने लगे तो दाम कहीं ज्यादा गिर जायें और मूल्य सूचकांक २०० से नीचे आ जाये। आज की हालत में इतना सुधार हमारी अर्थनीति को डूबने से बचा लेगा और महंगाई के कारण योजना में जो गड़बड़ी आ गयी है वह दूर हो सकेगी।

जयबाबू के आंदोलन की आलोचना में यह कहा जा रहा है कि यह जमाखोरों के खिलाफ नहीं है और उसमें राजनैतिक उद्देश्य है। अभी इस पर कुछ कहना ठीक नहीं है। आंदोलन तो चल ही रहा है और सरकार को वह कितना झुका पायेगा यह भविष्य ही बतायेगा। यह जरूर है कि दोनों तरफ से जो कुछ भी होगा उसमें बहुत शक्ति, धन और समय बरबाद होगा। शायद बिहार विधान सभा और सरकार भंग भी हो जाये। फिर आगे क्या करना है, यही विचार गुजरात की तरह हमारे सबके सामने होगा। सरकार कोई भी हो किसी भी दल की हो सर्वदलीय हो या निर्दलीय हो, प्रशासन के ढांचे में हमें कौन सा ऐसा परिवर्तन करना है जिससे जनता के रोजमर्रा काम में आनेवाली चीजें याने अनाज, तेल, किरासिन, साबुन, मसाले, सीमेंट आदि की जमाखोरी न हो पाये। इन चीजों की जमाखोरी कहां और कैसे हो रही है यह सबको पता है। थोक व्यापारी ऊंचे भाव पर फुटकर व्यापारी को माल देता है, इसलिए

विकेन्द्रीकरण ही जनतंत्र बचा सकता है

वह मजबूर है कि अपना मुनाफा लगाकर वह और ऊंचे दाम पर लोगों को बेचे और कुछ हिस्सा अफसरों को दे। बडे गोदाम और छोटे गोदाम जमीन के नीचे नहीं हैं कि जैसा कह दिया जाता है कि माल भूमिगत हो गया है। इक्का दुक्का गोदाम ही जमीन के नीचे होगा। बाकी ९० फीसदी माल एक जगह से दूसरी जगह पहुंचा दिया जाता है कभी-कभी रात को और कभी बेशर्मी से दिन को ही। जानकार लोग सब जानते हैं पर ऐसा नहीं हो पाता कि उस इलाके के लोग उसे रोक सकें। भीड बनाकर रोकेंगे तो पुलिस डंडे लेकर आजायेगी। कभी उस माल को जब्त करने का नाटक करेगी कभी कुछ ले देकर जमाखोर को बचा भी देगी। जन सहयोग या जनशक्ति की यह विडम्बना और प्रशासन के साथ उसका तालमेल न बैठने से मायूसी और आक्रोश बढ़ते जाते हैं।

कांग्रेस के लोग ही अगर जन समितियां बनाकर जमाखोरी के खिलाफ जुट जाते तो वे अपनी सरकार को मजबूर कर सकते थे कि वह थोक व्यापार करनेवाले की जमाखोरी पर पहले हल्ला बोले। उसमें साफ हो जाता कि कौन उन्हें बचाना चाहता है। १९६९ के बाद से नयी कांग्रेस ने गरीबी हटाओ और समाजवाद के कार्यक्रम को ज्यादा तेजी से चलाना चाहा और कानून भी बनते गये जो अपनी जगह बहुत प्रगतिवादी हैं। पांचवी योजना का मसौदा भी बहुत महत्वाकांक्षी है। पर ढीलेपोले प्रशासन ने, जिसका सबसे ज्यादा फायदा जमाखोर उठा रहा है, हमारी सारी अर्थनीति को पंगु कर दिया। सारे अर्थशास्त्रियों, लोक प्रशासन के विशेषज्ञों, बुद्धिवादियों, समाजवादियों, साम्यवादियों और सर्वोदय आंदोलन में समतावाद पर आस्था रखनेवालों को अपने-अपने सैद्धांतिक आग्रहों को एकबार ताक में रखकर यह सोचना चाहिए था कि जमाखोरी ही सबसे बड़ी बीमारी है जो जोंक की तरह सभी प्रगतिवादी कानूनों, समाजवादी योजनाओं, प्रशासनिक आदेशों और यहां तक कि सर्वोदय के ग्रामदान व अन्य कामों के नतीजों को चूसकर उन्हें निस्तेज बना रही है।

शुद्ध बौद्धिक वादों या रुझानों के इस देश में जितने भी प्रकार हैं—अतिदक्षिण पंथी से लेकर अति वामपंथी तक—लगभग सभी का साहित्य महंगाई न रोकने की पूरी जिम्मेदारी सरकार या कांग्रेस दल पर डाल कर प्रत्येक वाद वाला यह साबित करना चाहता है कि उसके दिये गये सुझावों से जिसमें सैद्धांतिक प्रपंच ज्यादा रहता है, दुनिया बदल सकती है। वह केन्द्रित प्रशासन की बुराई और साथ ही उसकी मजबूरी या मर्यादा को समझ नहीं पाता। अपने-अपने वाद का शाब्दिक जाल जिसे अंग्रेजी में 'जॉर्गन' कहते हैं फैला दिया गया है। सीधी सादी बुनियादी बात है कि जमाखोरी को रोकने के लिए सारे देश में जनसहयोग का सरकारी मान्यताप्राप्त जाल बिछाकर इस महारोग को रोकना ही आज का पहला काम और पहली मांग हो। यदि सरकार मान्यता न दे तो जमाखोर के खिलाफ गोदामों पर, दूकानों पर और जहां भी जाना-माना जमाखोर सत्याग्रह के कार्यक्रम की अध्यक्षता या उद्घाटन करने पहुंचे, वहां धरना देकर जो असली बुराई है उसी पर अचूक चोट होनी चाहिए।

चूंकि सरकार ने ही अब जनसहयोग मांगा है तो मैं अपने जनसमिति प्रणाली के सुझाव को ज्यादा साफ करना चाहूंगा। मैं इसे सम स्तरीय विकेन्द्रीकरण कहता हूं। आठ बरस पहले मैंने इसका इशारा लोकसभा के एक भाषण में दिया, प्रशासनिक सुधार आयोग की एक समिति में होने से उस पर चिंतन बढ़ा और तब से दिनोंदिन हालात के बिगड़ते जाने से यह मान्यता पक्की हो गयी कि नीचे से ऊपर तक सभी स्तरों पर सत्ता, निर्णय क्षमता और अधिकार का विकेन्द्रीकरण ही मौजूदा जनतंत्र को बचा सकता है। पर यह प्रयोग पहले अनाज व जरूरी चीजों के मामले में होना चाहिए। इस क्षेत्र में जनसहयोग मिलने का वातावरण बन चुका है और इसमें मौजूदा प्रशासन का ढांचा नाकाम साबित भी हो गया है जिसे कांग्रेस का नेतृत्व भी मानता है। इसलिए मुझे लगता है कि मेरी बात बीच की है जो सरकार और आंदोलनकारियों को एक दूसरे के नजदीक ला सकती है, यदि दोनों अपने राजनैतिक आग्रहों को थोड़ा मर्यादित करने के लिए तैयार हो जायें। तब जमाखोरी के खिलाफ एक राष्ट्रीय मोर्चा तैयार हो सकता है और हमारी लंगड़ाती हुई अर्थनीति को बचाकर जनतंत्रीय आस्था को एक गति दी जा सकेगी। यह मानकर चलना कि कांग्रेस ही एक भ्रष्टदल है और वह महंगाई कम नहीं करेगा, दूसरे दल आकर उससे अच्छा कर ही देंगे, मेरे ध्यान से आज की समस्या का हल नहीं है। इसी तरह कांग्रेसजन चाहें कि जमाखोरी को व्यापक रूप से रोके बिना वे आंदोलनों से निबट लेंगे तो यह उनकी बड़ी भूल होगी। पर मैं इस लेख में दोनों के इन दृष्टिकोणों का विश्लेषण नहीं कर रहा हूं। मेरा तो निवेदन है कि जनसहयोग को प्रशासन में स्थायी रूप देने के लिए मेरे सुझाव पर सार्वजनिक चर्चा चले और उसका कोई सर्वमान्य फार्मूला बना कर उसे सरकारी मान्यता दिलायी जाये तभी हालत बदलेगी। उसमें से ही एक स्वयंसिद्ध, लगातार सेवाप्रतिबद्ध और साधारण जन से नियंत्रित जनशक्ति पैदा होगी।

(क्रमश)

गांधीजी के सचिव और लोकसभा तथा मध्यप्रदेश विधानसभा के सदस्य रह चुके महेशदत्त मिश्र सम्प्रति जबलपुर विश्वविद्यालय में राजनीतिशास्त्र के आचार्य एवं अध्यक्ष हैं। पिछले अंक में अपने लेख 'बीच की बात जनवादी आधार' में उन्होंने जो सुझाव दिये उनके क्रियान्वय के तरीके पर प्रस्तुत लेख में चिन्तन है। लेख का शेष अंश अगले अंक में। सं०

गुन्नार मिरडल

गुन्नार मिरडल अपने नवीनतम आर्थिक दृष्टिकोण और उसके लिए निरन्तर प्रतिपादन-रत रहने के कारण आज संसार के प्रथम श्रेणी के अर्थशास्त्रियों में भी बहुत विशिष्ट गिने जाते हैं। इस वर्ष का अर्थशास्त्र के क्षेत्र में सम्बन्धित नोबल पुरस्कार आस्ट्रिया के फ्रेड्रिक वान हायेक और श्री मिरडल को मिला है।

गुन्नार मिरडल को यह पुरस्कार उनकी प्रसिद्ध पुस्तक 'एशियन ड्रामा' पर दिया गया है। पिछले वर्ष श्री मिरडल भारत आये थे और उन्होंने देश के अनेक नगरों में अपने जो आर्थिक विचार प्रस्तुत किये थे उनकी देश के पत्र-पत्रिकाओं में बड़ी चर्चा हुई थी—विशेष रूप से इसलिए कि भारत ही नहीं सारी दुनिया के लिए वे केन्द्रीकृत आर्थिक विकास के बजाय विकेन्द्रीकृत विकास के पक्ष में हैं। इस तरह यह पुरस्कार इस बात की ओर इशारा करता है कि केन्द्रीकरण से त्रस्त विकसित देश गांधीजी के विकेन्द्रीकरण को मान्यता देने की मनःस्थिति में आ रहे हैं। इस प्रकार हम भी शायद पश्चिम से गांधी विचार आयात करने के लिए अधिक जल्दी तैयार हो जायें। श्री मिरडल का विचार ऐसा जो वह मानवता का रक्षक होगा। उन्हें गांधी विचार को अपने ढंग से पैरवी करने और उस पर यह पुरस्कार पाने के लिए बधाई! ★

बंबई का मंहगाई विरोधी मोर्चा

बम्बई में 'महंगाई प्रतिकार-संयुक्त समिति' के तत्वावधान में वहाँ की महिलाओं ने पिछले कुछ महीनों में जो अभिक्रम किया है और उन्हें उसमें जो अभूतपूर्व सफलता मिली है, उससे देश की महिलाओं में सब जगह एक नयी स्फूर्ति आयी है। उस स्फूर्ति के परिणामस्वरूप महिलाओं के इस संगठन को यशस्वी बनानेवाली चार प्रमुख बहनें दिल्ली आयी हैं और वे दिल्ली में भी महंगाई और भ्रष्टाचार विरोधी अभियान का जल्दी ही संगठन करने की आशा कर रही हैं। इस दिशा में काम करने के लिए एक तदर्थ समिति भी बनायी जा रही है जिसकी संयोजक सुचेता बहन कृपलानी हैं।

जैसा कि समाचारपत्रों के पाठक जानते हैं, यह संगठन पूरी तरह एक दलमुक्त संगठन है। इसने अभी अपने सामने दिल्ली की हद तक ध्येय भी बहुत सीमित रखा है। वह अभी केवल साढ़े छः रुपये किलो चीनी को चार रुपये किलो पर उतारने का अभियान करेगा। बम्बई में यह संगठन अभी तक दो सौ प्रदर्शन और जुलूसों का नेतृत्व कर चुका है और इसने मंत्रियों, व्यापारियों और उद्योगपतियों का घिराव करके उन्हें अपनी अनेक न्यायसंगत मांगों पर बाध्य होने के लिए मजबूर किया है। दिल्ली में सीमित उद्देश्य लेकर किया जानेवाला उसका आन्दोलन आगे असीमित सम्भावनाओं के द्वार खोलेगा। ★

कलकत्ता में सर्वोदय विचार परिषद् बैठक

सर्वोदय विचार परिषद् की कार्यकारिणी समिति की हाल ही हुई बैठक में जयप्रकाश बाबू के नेतृत्व में 'बिहार जन आन्दोलन' की गतिविधि के सम्बन्ध में सदस्यों के बीच चर्चा हुई। निर्णय किया गया कि आन्दोलन के विषय में व्याख्यानमाला चलायी जाय एवं जनमत तैयार करने के लिए साधारण सभाएं भी हों। उपरोक्त निर्णय के फलस्वरूप प्रथम चरण में श्री सुधीन भट्टाचार्य की अध्यक्षता में 'बिहार जन आन्दोलन में जयप्रकाश का मार्गदर्शन' पर व्याख्यान चला। भवानी प्रसाद चटर्जी, बलदेवदास अग्रवाल, रामगोपाल मारडा, हरिधन भट्टाचार्यजी, रामप्रसाद सिंह, जगमोहनदास भगवानदास आदि ने चर्चा में भाग लिया।

प० बंगाल में मुख्यतः सी. पी. एम. एवं सत्ता कांग्रेस दो ही दल राजनीति में सत्तारूढ़ होते आ रहे हैं। जे. पी. द्वारा बिहार विधान सभा विघटन सम्बन्धी कार्यक्रम के प्रति सदस्यों की सहानुभूति रही और पश्चिमी बंगाल में भी वर्तमान बिहार जन-

पश्चिमी बंगाल में भी बिहार जैसा आन्दोलन जरूरी

आन्दोलन जैसा कार्यक्रम जरूरी माना गया लेकिन उसके तौर तरीके यहां की परिस्थिति के अनुकूल रहने पर जोर रहा। महात्मा गांधी ने स्वतंत्रता संग्राम के समय जन-मानस में विचार क्रांति के साथ साथ समय समय पर तात्कालिक समस्याओं को मद्देनजर रखते हुए विभिन्न प्रकार के विचार दिये थे और सारे बुद्धिजीवियों एवं विचारकों ने पूर्णरूपेण तन, मन, धन से उन आदेशों को कार्यान्वित करने में अपने को जिस स्थिति में समर्पित किया वैसी स्थिति देश में पुनः आयी है एवं सारा जनमानस सचेत मार्गदर्शन चाहता है। बैठक ने व्यक्त किया कि वर्तमान में जे. पी. का ही मार्गदर्शन सत्य-अहिंसा-प्रेम का साक्षात्कार करने में प्रेरणात्मक हो, ऐसी भारतीय समाज अपेक्षा रखता है। ❖

रेवाड़ी में गांधी व शास्त्री जयन्ती सम्पन्न

रेवाड़ी में गांधी अध्ययन केन्द्र के तत्वावधान में २ अक्तूबर को महात्मा गांधी और लालबहादुर शास्त्री की जयन्ती प्रभात-फेरी, सूत-यज्ञ एवं प्रार्थना सभा में गणेशीलाल राव एडवोकेट ने छुआ-छूत पर, मास्टर गिरधारीलाल ने शिक्षा-पद्धति पर, डा० मनोहरलाल सिंहल ने प्राकृतिक चिकित्सा पर, चौ० सुखबीरसिंह ने आर्थिक परिस्थिति पर, खुशीराम लोकसेवक ने खादी-ग्रामोद्योग और नशाबन्दी पर तथा प्रेमवल्लभ डाटा ने आज की राजनीति पर विचार व्यक्त किये।

नगरपालिका गांधी पार्क में गांधी जीवनी और नशाबंदी प्रदर्शनी की गयी। उसी मण्डप में प० भा० शान्ति सेना मण्डल के कार्यक्रम के तहत शान्ति और मुक्ति के लिए १२ घंटे का उपवास प्रातः ८ से रात ८ तक माता शान्ति देवी, रामजीलाल जैन, हीरालाल ठेकेदार और खुशीराम लोकसेवक ने रखा। शराबबन्दी के सम्बन्ध में नारे लगाये गये और सर्वोदय साहित्य की बिक्री की गयी। ★

सर्वोदय प्रकाशनों के पुनर्गठन पर विचार

[२७-२८ सितम्बर को ब्रह्मविद्या मंदिर मे प्रकाशनो-संबंधी जो बैठक हुई थी, उसका 'निवेदन' हम पिछले अंक मे दे चुके हैं। उन बैठको मे, विनोबा, काका सा० और धीरेन दा जो कुछ बोले थे, यहा उसका सार दिया जा रहा है। स०]

विनोबा :

हमारे सर्वोदय विचार के पत्र शक्तिशाली नही हैं; क्योकि वे छोटे-छोटे क्षेत्रो मे चलते हैं और उनमे शक्ति नही माने पाती। मुझे पट्टीकल्याणा मे जवाहरलालजी से अपनी बातचीत का एक प्रसंग याद आता है। उन दिनो मैं भूदान-यज्ञ के लिए घूम रहा था। ५० ग्रामदान होते थे, तो एक कालम मे खबर आती थी। लूटपाट करनेवालो की खबर भी ज्यादा आती है और शीर्षक भी लम्बा-चौडा होता है। तो मैंने जवाहरलालजी से कहा कि कुत्ता भौंकता है, कौन सुनता है। आप सिंह हैं। अगर आप बाहर होते तो देश मे बड़े-बडे परिवर्तन होते। मेरा कहना उन्हे जॅच गया; मगर उन्होने कहा कि मैं तो पिंजरे मे हू और अब फिर पिंजरे मे जाता हू। इसके बाद वे चले गये।

तो अभी तक आपका कुत्ता भौंकता है। आपकी पत्रिकाओ की प्रकाशन संख्या ५-६ हजार होगी। हिंदी क्षेत्रो मे, जिसमे उर्दू बोलनेवाले भी शामिल हैं, २६ करोड लोग हिंदी बोलते हैं और बाकी देश भर मे हिंदी समझने-बोलने वालो की संख्या ६-७ करोड तो होगी ही। तो ३२ करोड हिंदी-भाषा की पत्रिका पढ सकते हैं। यू. एन. ओ. मे हिंदी का नम्बर स्पेनिश के बाद लगाया गया है। इसमे दोष यू एन ओ. का नही है हम लोगो की अक्ल का है। हिंदी बोलनेवालो ने अपनी मातृ-भाषा हिंदी न लिखवाकर मैथिली, भोजपुरी, राजस्थानी आदि लिखवा दी और उर्दू वाले तो उर्दू लिखवाते ही हैं। अंग्रेजी भाषा भाषी ३० करोड हैं। असल मे हिंदी का नम्बर दूसरा भी नही पहला आना चाहिए। बोली को मातृभाषा कहने का ऐसा अपकार हुआ। देश के ३ लाख गावो मे तो हिंदी बोली ही जाती है, फिर शहर भी हैं। मगर हमारे प्रकाशन हजारो मे भी नही छपने, जबकि लाखो मे छपने चाहिए। फिर पढने लायक, लिखा भी जाना चाहिए। जैसा तुलसीदास लिखते थे। मैंने बिहार मे बहनो से पूछा कि तुम कुछ लिखना-पढना जानती हो तो उन्होंने कहा कि हा, तुलसीदासजी की रामायण पढ लेती हू। यह आम लोगो से सम्पर्क के बिना नही होता। 'तुलसी सुरसरि तीर-तीर' घूमे और लोगो से उनका सम्पर्क आया, इसलिए उनकी रामायण चली। हम अपनी तरुणाई के समय पांच महापुरुषो के नाम लिया करते थे। इस पंचायतन मे थे राजा राममोहनराय, रामकृष्ण परमहंस, विवेकानंद, रवीन्द्रनाथ और श्री अरविंद। जब मैं बंगाल के गांवो मे घूमा तो मालूम हुआ कि वहां के लोग इन लोगो को नही जानते। वहाँ के लोग चैतन्य महाप्रभु का नाम जानते हैं। भारत की आत्मा 'किसको महत्त्व देना,' यह जानती है। चैतन्य महाप्रभु बंगाल से पंढरपुर तक आये थे। वे यवतमाल से भी गुजरे और कुछ लोगो को दीक्षा भी दी। उनके ही किसी एक शिष्य ने तुकाराम को दीक्षा दी थी और मंत्र दिया था 'राम कृष्ण हरि'। हमारा ऐसा जनसंपर्क भी गांवो मे नही है। प्राचीन ऋषि संतो आदि का होता था। नामदेव महाराष्ट्र से पंजाब तक पैदल गये थे। ऐसी हिम्मत करोगे तो गांवो मे लाख-डेढ़ लाख प्रतियां खपने लगेंगी। शहरो मे अलग खपेंगी। मगर पहले काम हो।

अभी जो हमारे पत्र निकलते हैं उनकी सामग्री लगभग एक सी होती है। सब अलग-अलग शंख बजाते हैं, मिलकर एक महाशंख बजाना चाहिए। स्थानीय पत्रों का भी एक महत्त्व है। उनका उपयोग है। किन्तु एक व्यापक पत्र भी होना चाहिए। उसमें विभिन्न स्तर होना चाहिए जिनमे अध्यात्म, सर्वोदय का काम, अन्य आन्दोलन, संसार की जानकारी आदि बातें आनी चाहिए। और भी स्तंभ हो सकते हैं। आज तो हम कुछ सरकारी जानकारी दे देते हैं, कुछ उपद्रव आदि गिना देते हैं, अपने काम की जानकारी ज्यादा नही देते। अपने काम की कोई जानकारी नही। मैं चाहता हूं कि जर्मनी, जापान या अमरीका मे जैसे पत्र निकलते हैं और उनकी जैसी खपत होती है, हम वैसा पत्र निकाल सकें तो मुझे आनन्द होगा। ऐसा पत्र बहुत काम करेगा। गाधीजी के 'हरिजन' का उदाहरण हमारे सामने है। प्रान्तीय भाषाओ मे जो पत्रिकाएं निकलती हैं, वे भी कम से कम ५-५ हजार तो निकलें। हम सब को जनता मे पहुंचने के लिए पहले विचार का प्रचार करना चाहिए, पत्रिका का प्रचार फिर अपने आप होगा।

काका सा. कालेलकर :

प्रकाशन की प्रवृत्ति मुझे पसंद है। मैं तो चाहता हू कि हम अपने काम की जानकारी अंग्रेजी और हिंदी दोनों मे दें। मैं हिंदुस्तान मे अंग्रेजी का विरोधी, होते हुए भी विचार प्रसार के लिए ऐसा कह रहा हूं। वैसे मुझे इस बात का बड़ा दुःख है कि अंग्रेजो का राज्य चला गया, किंतु अंग्रेजी का राज्य बढ रहा है। हम लोग उसमे सहूलियत देखते हैं। अंग्रेजी जाननेवालों की एक जाति ही बन गयी है। विभिन्न धर्मवाले जैसे अपने धर्म की लोकसंख्या बढ़ाने मे लगे रहते हैं, वैसे ही अंग्रेजी जाननेवाले भी अपनी जमात बढ़ाते चले जाते हैं। हिंदू धर्म का स्वभाव ऐसा नहीं है। इसीलिए शायद हिंदीवालों का स्वभाव भी ऐसा नहीं है। परिणाम यह होगा कि राज अंग्रेजी जाननेवालो का चलेगा। हिंदी मे लोग हिंदी का प्रचार चाहते हैं। करते नहीं हैं। दूसरे करें तो करें। हिंदीवालों में इस प्रकार के प्रचार के प्रयत्न करने की प्रवृत्ति नहीं है। मैं राष्ट्र-भाषा-भाषी नहीं हू, 'महाराष्ट्र' भाषा-भाषी हूं। मेरी मातृभाषा मराठी है। फिर भी मैंने गुजराती को अपनाया। गाधीजी ने मुझे 'सवाई गुजराती' कहा। मगर एक कठिन काम भी सौंप दिया कि गुजराती मे वर्तनी

(हिज्जे) कई तरह की चलती है। इसे एक सी बनाने का काम करना चाहिए। यह काम तुम करो। तो मुझे 'जोडनी कोश' का काम सौंप दिया और मुझे वह काम करना पडा। उसमे पांच बरस लगे। उसके तैयार हो जाने के बाद गांधीजी ने कहा कि अब यही हिज्जे चलेंगे, दूसरे नही चलेंगे। यही हाल हिंदी की वर्तनी का भी है। भाषा पहले तो बोलने की चीज थी और सम्पर्क के उद्देश्य से उत्पन्न हुई थी, बाद मे लिखना भी आया। सो सही लिखने का प्रचार और सही बोलने का प्रचार हो। इसके लिए मिशनरी किस्म के लोग चाहिए। इन लोगों में स्त्री-पुरुष दोनों हो। अर्थात् पत्रिकाओं के सिवाय गांव गांव मे जाकर हिंदी मे लोगों को अपना विचार समझानेवाले लोग भी बड़ी संख्या मे होना चाहिए। सच कहो तो प्रकाशन उतना प्रधान नहीं है। आज तो वही आदमी पढ़ा-लिखा माना जाता है जिसे अंग्रेजी आती है। प्रान्तीय भाषा का कोई स्थान नहीं है। मैं तो कहता हू कि जिसे कम से कम चार प्रादेशिक भाषाएं नहीं आतीं वह भारत की दृष्टि से शिक्षित नहीं है। गांधीजी ने अस्पृश्यता को हटाने की प्रतिज्ञा की थी। हम इस सन्देश को लेकर गांव-गांव पहुंचे, क्योंकि यह काम अभी पूरा नहीं हुआ है। यह काम केवल हिंदी और अंग्रेजी से नहीं होगा। प्रादेशिक भाषाओं के मिशनरी संगठन भी करने पड़ेंगे। यानी हमे भाषा नहीं जीवन का प्रचार करना है। गांव-गांव पहुंच कर जीवन में परिवर्तन लाना है। भाषा का ज्ञान हमारी कसौटी नही होगी बल्कि कसौटी यह होगी कि अस्पृश्यता कितनी घटी, कितने अन्तर्जातीय विवाह हुए। जैसे आज भाई-बहन के बीच विवाह निषिद्ध माना जाता है, इसी तरह एक ही जाति मे विवाह निषिद्ध समझा जाने लगे तब अस्पृश्यता हटेगी। गांव मे आज भी धर्म की गलत कल्पना रूढ़ है। हम अपने मन मे संकल्प करें *कि समाज और संस्कृति मे परिवर्तन लायेंगे। अब मेरी उम्र ९० के लगभग है,* ८६ का हो चुका हू। फिर भी आप जो सेवा मांगेंगे मैं दूंगा। मैं 'मगन प्रभात' निकालता हू क्योंकि उससे लोग चीजें उठा लेते हैं। विनोबा जो बोलते हैं, उसे लोग उठा ही लेते हैं। मगर हम प्रत्यक्ष सेवा करें। संयम और अपरिग्रह और पवित्रता के साथ काम करेंगे तो असर होगा।

धीरेन दा

मैं बोलने की स्थिति मे नही हू। मगर *आपकी अपेक्षा है तो कुछ कहता हू।* सबेरे जब प्रकाशन के बारे मे विचार हो रहा था तब मैं था। विनोबाजी का कहना है कि सब छोटे मोटे पत्र एक हो जायें। एक ही 'महा-शस्त्र' बजे। विनोबाजी का कहना उनके लिए ठीक है। किंतु मेरे लिए ठीक नहीं। यह मत्र और तत्र का अन्तर है। आज की परिस्थिति में सब मिलकर एक ही पत्र हो जाये और वही निकले, यह मेरी समझ मे ठीक नही है। डाईजेस्ट की यह मनःस्थिति सब जगहों के लिए लागू नही हो सकती। हर प्रान्त भाषा मे पत्र निकलते हैं। मैं तो कहता हू हर जिले मे पत्र निकले। और उस हालत मे भी लाखों निकल सकते हैं। मगर यह कब होगा? जब हम विचार को लेकर जनता में जायेंगे, विचार फैलेगा तो उसके साहित्य की मांग होगी। साहित्य-सामग्री की, मांग हमे पैदा करनी है। आज तो हम सब लोग बहु-धन्धी हो गये हैं। बहु-धन्धी लोग इस काम को नही कर सकते। रात-दिन एक ही काम मे लगना पड़ेगा। *आज देश मे सर्वोदय विचार की चाह है।* किन्तु शासन निरपेक्ष समाज की चाह नही है। हम इस चाह को पैदा करें। इसके लिए व्यक्तियों को कटिबद्ध होकर घूमना चाहिए। जैसे लोग वोट लेने के लिए जाते हैं, ऐसे हमे घर-घर जाना चाहिए। हमने अपना जीवनक्रम ऐसा बना लिया है कि इस प्रकार घूमना कठिन लगने लगा है। हमे तरह तरह के साधनों की आदत हो गयी है। यात्रा के लिए हमे तेज वाहन चाहिए। इसीलिए लोक-शक्ति का निर्माण नही हो रहा है। स्वतन्त्र लोकतन्त्र का निर्माण होना चाहिए। इसी विचार मे जयप्रकाश नारायण सर्वोदय के प्रति आकर्षित हुए। हम तो नाजायज 'लोक' हैं। *अर्थात् जायज लोगों को धक्का देकर बैठे* हैं। लोकतन्त्र मे लोक की शक्ति पैदा होना चाहिए। यह अन्याय को दूर करने से होगा। कोरा कर्मकाण्ड करते चले जाने से नही। लोकतन्त्र केवल वैधानिक होकर न रह जाये यह उद्देश्य केवल संस्था संगठन मे पूरा नही होगा, बिरादरी के निर्माण से होगा। हम सबको बिरादरी का मार्ग खोजने का काम करना चाहिए। ●

R.N 2091/57 BHOODAN YAGYA 14 OCT. 1974 Regd. No. D-(C) 266

दिल्ली में जन-आन्दोलन आरम्भ
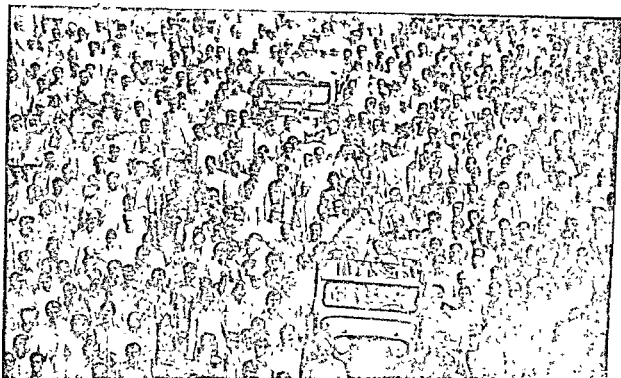
आचार्य कृपलानी के नेतृत्व में विशाल जुलूस का दृश्य

विशाल जुलूस व रैली; प्रधान मन्त्री को ज्ञापन

देश में बड़े पैमाने पर फैले भ्रष्टाचार, पक्षपात, मुनाफाखोरी और कालाबाजारी की समाप्ति की मांग को बल प्रदान करने के लिए रविवार ६ अक्तूबर, ७४ को प्रातः १० बजे २५ हजार से भी अधिक प्रदर्शनकारियों का एक जुलूस दिल्ली के रामलीला मैदान से आरम्भ हुआ। दिल्ली नागरिक संघर्ष समिति के तत्वावधान में आयोजित इस जुलूस में उत्तरप्रदेश, पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश, बिहार, उड़ीसा और गुजरात के नागरिक बड़ी संख्या में थे। अन्य राज्यों से आये प्रतिनिधि भी शामिल थे। जुलूस का नेतृत्व आचार्य कृपलानी, संगठन कांग्रेस के अध्यक्ष अशोक मेहता, श्रीमती कृपलानी, भारतीय लोकदल के अध्यक्ष चरणसिंह, पंजाब के भूतपूर्व मुख्य मंत्री भीमसेन सच्चर, जनसंघ के कंवरलाल गुप्ता, संसद सदस्य राजनारायण एवं श्यामनन्दन मिश्र कर रहे थे।

जुलूस मिन्टोपुल से कनाट प्लेस, जनपथ, होता मोतीलाल नेहरू प्लेस पहुंचा जहां से कृपलानीजी, कंवरलाल गुप्ता, चरणसिंह, बृजमोहन तूफान, भीमसेन सच्चर और जैनेन्द्र कुमारजी का एक छः सदस्यीय शिष्टमण्डल प्रधानमंत्री को ज्ञापन सौंपने उनके यहां चला गया और प्रदर्शनकारियों को प्रकाशसिंह बादल, एस. एम. जोशी तथा राजनारायण ने सम्बोधित किया।

प्रधानमन्त्री के यहां पहुंचे शिष्टमण्डल ने जब उन्हें ज्ञापन सौंपा उस समय केन्द्रीय गृहमंत्री श्री उमाशंकर दीक्षित भी उपस्थित थे। वहां से लौटने पर आचार्य कृपलानी ने रैली में बताया कि ज्ञापन लेने के बाद प्रधान मंत्री ने उस सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा।

समिति के सूत्रों के अनुसार शीघ्र ही जयप्रकाशजी से कृपलानीजी की भेंट के बाद दिल्ली में समिति का पुनर्गठन किया जायेगा और उसके बाद सरकार की प्रतिक्रिया को देखते हुए द्वितीय चरण की घोषणा। ★

वार्षिक शुल्क—१५ रु० विदेश ३० रु० या ३५ शिलिंग या ५ डालर, एक अंक का मूल्य ३० पैसे।
प्रभाष जोशी द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं ए० जे० प्रिंटर्स, नई दिल्ली-१ में मुद्रित।

भूदान-यज्ञ

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का साप्ताहिक मुख पत्र

नई दिल्ली, सोमवार, २१ अक्टूबर '७४

● बिहार आन्दोलन के समर्थन में दिल्ली में [illegible] उपवास ● देश के गांधी-जन मित्रों से निवेदन : धीरेन्द्र मजूमदार ● हर समस्या का उत्तर—गांधी : निर्मलचन्द ● बीच की बात : जमाखोरी ही दुश्मन (२) : महेशदत्त मिश्र ● जन-आन्दोलनकारियों को परिवार की चिट्ठी ● कुल घाटी भूमि-सत्याग्रह की ओर उन्मुख : योगेश चन्द्र बहुगुणा।

सम्पादक

राममूर्ति : भवानी प्रसाद मिश्र

कार्यकारी सम्पादक : प्रभाष जोशी

वर्ष २१ — २१ अक्टूबर, '७४ — अंक ३

१९ राजघाट, गांधी स्मारक निधि, नई दिल्ली-११०००१

एक और बड़ा अवसर

जयप्रकाशजी आन्दोलन को नित्य व्यापक से व्यापकतर और अधिकाधिक प्रभावशाली बनाने के विषय में सोचते रहते हैं। उन्हें लगता है कि समय कम है और काम बहुत है। इसीलिए यह नयी बात सामने रखी है कि पांच नवम्बर तक सच्चे अर्थों में प्रजातंत्र की स्थापना की दृष्टि से लोक-विधान सभा का निर्माण हो जाना चाहिए जिसके द्वारा सारे राज्य में सर्व-साधारण प्रशासन का कार्य भी जनता के हाथ में ही आ जाये।

४ नवम्बर को पटना में विद्यार्थियों के विशाल आन्दोलन की योजना भी बनायी गयी है जिसमें प्रदर्शन के अलावा मंत्रियों, विधायकों और विधानसभा का घिराव भी शामिल है। यदि उसके फलस्वरूप वर्तमान विधानसभा भंग हो जाती है तो राज्य में लोक विधानसभा के निर्माण के कारण किसी प्रकार की भी अव्यवस्था फैलने के बजाय पहले से अधिक व्यवस्थित रूप में काम चलने की सम्भावना हो जायेगी। फिलहाल समान्तर सरकार प्रयोग के तौर पर उन स्थानों में काम करना शुरू कर देगी, जहां आन्दोलन की जड़ें गहराई तक पहुंची है। प्रशासन का स्वरूप ग्राम-स्वराज्य की हमारी कल्पना के अनुसार गठित किया जायेगा और इसमें ग्राम-सभाओं का पुनर्गठन निहित है। ग्राम-पंचायत के प्रतिनिधि पंचायत जनसभा नाम से जिस संगठन का निर्माण करेंगे वह प्रशासन की इकाई होगी। इसके बाद प्रखंड जनसभा होगी जिसमें पंचायतों के मुखियाओं के द्वारा चुने हुए प्रतिनिधि होंगे। ग्राम-सभा और जन-सभा मिलकर संचालकों का चुनाव करेंगी और उन्हें अलग-अलग काम सौंपे जायेंगे। यह सारे चुनाव यथासम्भव सर्वानुमति से होंगे।

लोक विधानसभाओं का काम सर्व-सामान्य समाज व्यवस्था और सुरक्षा के अतिरिक्त यह भी माना गया है कि किसी भी प्रकार का टैक्स सरकार को नहीं दिया जायेगा। सरकारी थानों का बहिष्कार किया जायेगा। उनके स्थान पर अपराधों को रोकने और उनकी जांच करने तथा निपटाने की दृष्टि से ग्राम शान्ति दलों का गठन होगा। यह ग्राम शान्ति दल लोगों में आवश्यक वस्तुओं का उचित मूल्य पर वितरण भी करेंगे और जाति-पांति, भेद-वर्ग आदि का काम भी अपने हाथ में लेंगे। स्थानीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए दूसरे काम भी हाथ में लिये जा सकते हैं।

श्री जयप्रकाश नारायण के कार्यक्रम की घोषणा के साथ सत्तारूढ़ दल में घबड़ाहट फैल जाये, यह स्वाभाविक है। क्योंकि यह कहने के बावजूद कि बिहार में जयप्रकाशजी को सफलता नहीं मिल रही है, वहां आन्दोलन को वास्तव में जो समर्थन प्राप्त हुआ है उससे सरकार तरद्दुद में पड़ गयी है कि क्या किया जाये, क्या न किया जाये? बिहार में कांग्रेसी विधायक दो दलों में बटे हुए हैं, यह तो सभी जानते हैं। ताजे समाचारों के अनुसार कांग्रेस के गफूर विरोधी साठ विधायकों ने धमकी दी है कि अगर गफूर साहब को तत्काल हटाकर दूसरे मुख्यमंत्री की नियुक्ति नहीं की जाती तो वे कांग्रेस छोड़ देंगे। उधर गफूर साहब ने कहा है कि मैं अपने जाने की स्थिति उत्पन्न होने से पहले विधान सभा को भंग करने की सिफारिश करूंगा और इस प्रकार विरोधियों के मंसूबे धरे रह जायेंगे। गफूर विरोधी विधायकों के द्वारा यह भी कहा जा रहा है कि आन्दोलन को जो सफलता मिल रही है उसका कारण गफूर साहब बड़ी हद तक स्वयं है। कुछ भी हो इन सब बातों से इतना स्पष्ट होता ही है कि बिहार में सत्तारूढ़ दल के पांव की जमीन उतनी पक्की नहीं है जितनी घोषित की जा रही थी। अच्छा हो कि ४ नवम्बर के विशाल प्रदर्शन आदि के पहले बिहार विधानसभा भंग कर दी जाये और लोगों की शक्ति का संघर्ष में उपयोग होने के बजाय रचनात्मक दिशा में लगे।

भारत-पाक संचार चालू

भारत और पाकिस्तान के बीच १५ अक्टूबर से फिर संचार व्यवस्था चालू हो गयी है। पहले ही दिन भारत से पाकिस्तान को १०८ और पाकिस्तान से भारत को १४ टेलीफोन गये। पहले ही दिन डाक अधिकारियों को पाकिस्तान भेजने के लिए लगभग ६०० पत्र और ११६ तार प्राप्त हुए। पाठकों को स्मरण होगा कि दिसम्बर १९७१ से युद्ध के कारण दोनों देशों के बीच संचार व्यवस्था भंग कर दी गयी थी। धीरे-धीरे ही क्यों न हो संचार व्यवस्था के कायम होने से सद्भावना भी कायम होने लगेगी, ऐसी हमारी आशा है। यों सच्ची सद्भावना तो तभी कायम हो सकती है जब भारत और पाकिस्तान परस्पर युद्ध न करने के सम्बन्ध में एकमत होकर संधि कर लें। भारत इस प्रकार के प्रस्ताव पाकिस्तान के सामने रखता ही आया है। पाकिस्तान ने इस प्रकार का प्रस्ताव तो अब तक स्वीकार नहीं किया है, किन्तु इस दिशा में भी एकदम निराश होना आवश्यक नहीं है। बड़े-बड़े आन्तरिक परिवर्तन हो रहे हैं, रूस और अमरीका भी पास-पास आ रहे हैं, ऐसी स्थिति में भारत और पाकिस्तान के बीच घनिष्ट मैत्री की आशा करना दुराशामात्र नहीं है, क्योंकि हमारे दोनों देशों के बीच इतिहास, संस्कृति और सभ्यता के जो सम्बन्ध हैं वे किसी न किसी दिन फलदायी होकर रहेंगे। ☐

बिहार आन्दोलन के समर्थन में दिल्ली में क्रमिक उपवास

११-१०-७४ से दिल्ली में प्रधानमन्त्री श्रीमती गांधी की कोठी के पास बिहार आंदोलन के समर्थन में तुगलक चौराहे पर क्रमिक उपवास चल रहा है जिसमें भिन्न-भिन्न टोलियां क्रमश शामिल हो रही हैं। 11 अक्टूबर को उत्तर-प्रदेश की टोली ने 72 घंटे का उपवास शुक्रवार दिन के तीसरे पहर ढाई बजे से शुरू किया और सोमवार ढाई बजे आचार्य कृपलानी ने सत्याग्रहियों को मौसम्मी का रस दिया। उस समय उन्होंने एक संक्षिप्त भाषण भी दिया जिसमें उन्होंने यह कहा कि 'रचनात्मक और संघर्षात्मक काम एक-दूसरे के पूरक हैं। इतना ही नहीं रचना करने के लिए गलत तत्वों को बीनकर अलग भी करना पड़ता है। इस बात को तो किसान भी जानता है कि जब तक खेत में निराई न की जाये, निरर्थक कचरा बढ़ता रहता है, फसल खराब हो जाती है।"

उत्तरप्रदेश की टोली के बाद मध्यप्रदेश की टोली ने उसका स्थान ग्रहण किया और अब क्रमश मेरठ, जनसंघर्ष समिति दिल्ली और उसके बाद जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के विद्यार्थी उपवास की इस मशाल को अपने हाथ में लेंगे। मेरठ के साथी 15 तारीख को ढाई बजे से उपवास पर बैठ चुके हैं।

उत्तरप्रदेश और मध्यप्रदेश की टोलियों ने प्रधानमन्त्री को छोटे-छोटे ज्ञापन भी दिये। उत्तरप्रदेश के ज्ञापन में यह कहा गया है कि बिहार में लोकतन्त्र का जो दमन हो रहा है उसके लिए प्रत्यक्ष रूप से जिम्मेदार, भारत की प्रधानमन्त्री ही हैं और चूंकि वे लोकसभा में उत्तरप्रदेश की प्रतिनिधि हैं, इसलिए अपने एक प्रतिनिधि के पाप के प्रायश्चितस्वरूप उन्होंने अपना क्षोभ और शोक व्यक्त करने के लिए बिहार में सरकार के द्वारा लोकतन्त्र की जो हत्या की जा रही है उसके विरुद्ध उपवास किया है। टोली का नेतृत्व श्री महावीरसिंहजी ने किया। उसमें उनके अतिरिक्त अन्य 18 लोकसेवकों ने भाग लिया। कानपुर की बहन उर्मिला भी टोली में शामिल थीं।

मध्यप्रदेश की टोली ने दो ज्ञापन दिये। एक प्रधानमन्त्री को और दूसरा कांग्रेस के अध्यक्ष डा शंकरदयाल शर्मा को। ज्ञापन में यह कहा गया था कि देश की जो परिस्थितियां हैं उन्हें आप जानते हैं किन्तु आप यह स्वीकार नहीं करते कि उसका उत्तरदायित्व प्रमुख रूप में आप पर ही है। ज्ञापन में यह भी कहा गया है कि देश के विभिन्न नगरों और प्रान्तों से आनेवाली टोलियां यह सार्वजनिक और क्रमिक उपवास भारत के समस्त दुखी और पीड़ित नागरिकों की ओर से इस आशा के साथ कर रही हैं कि सरकार सभी क्षेत्रों में फैली बुराइयों को सच्चे मन से दूर करने का प्रयत्न करेगी और इस देश में पहले कदम के रूप में बिहार की विधानसभा को भंग कर देगी। टोली का नेतृत्व श्री भवानीप्रसाद मिश्र ने किया और उसमें उनके अतिरिक्त आठ अन्य लोकसेवक भी सम्मिलित हुए।

मेरठ नगर की टोली का नेतृत्व श्री सुन्दरलाल (मास्टरजी) ने किया। उसमें 21 व्यक्ति शामिल हुए जिसमें 70 वर्षीया माता रेवतीदेवी भी शामिल हैं।

तीन से पांच अक्टूबर तक चले 'बिहार बन्द' से यह बात बहुत साफ हो गयी कि वहां की मौजूदा सरकार को जनता का रत्तीभर भी समर्थन नहीं रह गया है वह करीब डेढ़ लाख पुलिस के डंडों और गोली के बल पर ही अपना अस्तित्व कायम रखे है। यह क्रूर और जनद्रोही तानाशाही निश्चय ही दिल्ली सरकार की शह पर टिकी है इस बात का एहसास करके हम कुछ मित्रों ने जो बिहार में स्थिति का प्रत्यक्ष अध्ययन करके आये हैं, तय किया कि इस लोकद्रोह के मूल स्रोत-प्रधानमन्त्री निवास के पास ही सत्याग्रह होना चाहिए।

लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति जागरूक लोकशक्ति के प्रतीक जयप्रकाशनारायण का जन्म दिन हमारे प्रेरणा दिवस के रूप में आ रहा था। समय कम बचा था किन्तु श्री महावीरसिंह, अर्जुनसिंह, रामजीभाई, कृष्णचन्द्रसहाय और भांसी के सोमेन्द्रभाई सहित हम सब तैयारियों में जुट गये।

११ अक्टूबर को अपराह्न २॥ बजे हमने बापू के शहादत-स्थल बिड़ला-भवन में प्रार्थना की और चूंकि प्रधानमन्त्री निवास के समक्ष धारा १४४ लगा दी गयी थी, इसलिए हम १४ साथी उसके समीप ही तीनमूर्ति चौराहे पर ७२ घंटे के उपवास पर और ५ कमजोर साथी २४ घंटे के उपवास पर बैठ गये। प्रधान मन्त्री को सौंपने के लिए तैयार ज्ञापन भी हमने उसी समय उनके कार्यालय भिजवा दिया।

—रामचन्द्र 'राही'

हमारा मुखपृष्ठ

दिल्ली में 6 अक्टूबर को आयोजित जुलूस और रैली में भाग लेने आनेवाले कार्यकर्ताओं, नेताओं तथा पत्रकारों को रोकने के लिए गुड़गांव पुलिस ने उन्हें 5 अक्टूबर को सुबह गिरफ्तार कर लिया और हथकड़ियां डालकर थाने ले गये। नियम के अनुसार इन्हें 24 घण्टे के भीतर जिला मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया जाना था किन्तु 6 अक्टूबर की शाम तक बिना भोजन-पानी के पुलिस हिरासत में रखकर बाद में पेश किया गया। 8 अक्टूबर को इन लोगों को शाम के समय न्यायालय की हिरासत में ले जाया गया और 9 अक्टूबर को जमानत पर छोड़ा गया।

चित्र में जो हमने दैनिक 'मदरलैंड' से साभार लिया है, थाने ले जाये जा रहे लोगों में हैं—बायें से सर्वोदय कार्यकर्ता भगवानदास, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सीताराम एवं जीवनदास, जनसंघ के श्री एल सिंघा, बद्रीप्रसाद गुप्ता, रूपचन्द मोंगला, पत्रकार प्रभुदयाल 'प्रवासी' और मजदूर-नेता धर्मसिंह।

देश के गांधी-जन मित्रों से

निवेदन

प्यारे मित्रो,

देश के राष्ट्रपति सत्ता के अधिकार से अध्यादेश जारी करते हैं। मैंने पिछले ५३ साल बापू की प्रेरणा से तथा उनके नाम से जो रचनात्मक कार्य चल रहे हैं, उसकी अखण्ड सेवा की है। उस अधिकार से देश की रचनात्मक संस्था तथा कार्यकर्ताओं से जिन्हें मैं गांधी-जन की संज्ञा देता हूँ, यह निवेदन पेश कर रहा हूँ।

आप सबको विदित ही है कि १६२१ से १६६० तक, यानी मेरी उम्र के ६० साल पूरे होने तक, ४० साल विभिन्न संस्थाओं की सेवा करने के बाद मैं वानप्रस्थ की भूमिका में *तमाम संस्थाओं से निवृत्त हो गया था*, उस समय मैं संस्थाओं से तो निवृत्त हो गया था, लेकिन सर्वोदय आन्दोलन के मेनकरेन्ट में शामिल था। अब मैं ७५वें साल में प्रवेश करने के साथ संन्यास की भूमिका में उस आन्दोलन से भी मुक्त हो रहा हूँ। मेरी गति-विधि पर पर 'मेरी अपनी बात' शीर्षक वक्तव्य दो किस्तों में प्रकाशित हुआ है। उन्हें आप सब मित्रों ने देख ही लिया होगा। मैंने कहा है कि मेरा सब काम मित्राधार तथा सर्व-जन-आधार से चलेगा। मित्राधार की रूपरेखा क्या होगी, यह मैंने अपने निवेदन में लिखा है और यह भी लिखा है कि 'भारतीय सांस्कृतिक परंपरा के अनुसार मेरा काम धन्धे से नहीं, दक्षिणा से चलेगा।'

अब प्रश्न है कि सर्व-जन से दक्षिणा प्राप्त करने की प्रक्रिया क्या होगी। उसके लिए मैंने सोचा है कि ग्रामस्वराज्य की भूमिका में भारतीय संस्कृति की रूपरेखा पर मेरा प्रथम निवेदन पुस्तिका के रूप में तैयार हुआ है। यह पुस्तिका जिन्हें पसन्द आये उनको दस पैसे दक्षिणा के बदले में दी जाये।

जैसा कि मैंने ऊपर कहा है, पिछले ५३ साल की अखण्ड सेवा के अधिकार से तमाम गांधी-जन से मांग पेश कर रहा हूँ। वे अपनी-अपनी संस्थाओं की ओर से अपनी प्रादेशिक भाषा में हर साल यह पुस्तिका छपवायें और संस्था के प्रत्येक कार्यकर्ता मित्र तथा उनके दूसरे मित्र जिनमें विचार के प्रति श्रद्धा हो, वे सब हर तीन माह में २५ प्रतियां अपने कार्य-क्षेत्र में या निवास के क्षेत्र में बेचें। चूंकि जिन्हें यह पुस्तिका पसन्द होगी उन्हीं के हाथ बेची जायेगी इसलिए मानना होगा कि देने-*वाले ने श्रद्धा से ही दिया है*। और उस कारण दक्षिणा लेने की मेरी पात्रता बन गयी है।

संस्थाओं से मेरी मांग है कि भारतीय संस्कृति के इस विचार को फैलाने में वे अपनी संस्था की ओर से व संस्था के खर्च से इस पुस्तिका को प्रादेशिक भाषा में तथा जितनी प्रतियां आवश्यक हों हिन्दी में छपवाकर वितरित कराके मुझे सहकार दें।

मुझको आशा ही नहीं, विश्वास है कि देश के सभी मित्र मेरे आखिरी जीवन का *यह संकल्प पूरा करने में मुझे भरपूर सहकार* देंगे।

आप सबका स्नेही मित्र
धीरेन्द्र मजूमदार

हर समस्या का उत्तर—गांधी

—निर्मलचन्द्र

मनुष्य सुख चाहता है। स्वादिष्ट भोजन, सुन्दर-वस्त्र, सुकुमारी नारी और अच्छी सी सवारी, मकान, मेज-कुर्सी, घड़ी, छड़ी, जूता और चप्पल चाहता है। इनके लिए संघर्ष करके वह मजदूर बना और चन्द्रलोक तक चला गया। उसके विज्ञान ने बहुत कुछ संभव कर दिया लेकिन मशीन बनानेवाला विज्ञान 'मनुष्य' नहीं बना सका।

कहाँ ले जा रहा है यह विज्ञान? खुले आसमान और हरियाली के बीच से खींचकर बंद और कुद्ध शहरों की घुटनभरी चारदीवारी में ढकेलता जा रहा है। सौ साल पहले अमरीका की आधी आबादी छः नगरों में रहती थी। अब नब्बे प्रतिशत मनुष्य नगरों एवं उप-नगरों में आने-जाने और काम करने की मशीन की रफ्तार में स्वयं यंत्रवत बनते चले जा रहे हैं। स्नायविक दबाव के कारण क्षमता क्षीण हो रही है, पागलपन बढ़ रहा है। प्रदूषण के प्रभाव से मछलियां मर गयीं, चिड़ियों की चहचहाहट टेप-रेकार्ड में ही रह गयी। वातावरण निर्जीव हो गया। कवि गोल्डस्मिथ के 'उजाड़-गांव' का दृश्य सामने आता है।

शहर सबको समेटता जा रहा है। डा० मार्गन ने लिखा है—'शहरों का विकास देहातों पर निर्भर है। देहातों की मलाई तेजी से निकाल कर शहर खाता जा रहा है।" अमरीकी शिक्षा शास्त्री 'ब्रिटिश मेन आफ जीनियस' नामक ग्रन्थ के हवाले से बताते हैं कि 'इंग्लिस्तान के महापुरुषों में करीब-करीब सभी देहात में बाहर खानदान में पैदा हुए हैं। एक भी महापुरुष लन्दन, ग्लासगो, मैनचेस्टर और बर्लिन जैसे पुराने शहरों के खानदान में पैदा नहीं हुआ। यह तथ्य बड़ी अहमियत रखता है। हम अधिक उत्पादन और ऊँचे रहन-सहन के चक्कर में पड़कर मानव को खो बैठेंगे—मानवता को तो खैर खो ही रहे हैं।'

विनोबा के अनुसार किसी भाषा में पाणिनी से अधिक अच्छी सुख की व्याख्या नहीं मिलती है। 'सुखम् खे इन्द्रियम् सुखिनम्'। सुखी वह है जिसे आकाश सुलभ है। इसके विपरीत जिसे आकाश दुर्लभ है वह दुखी है। मनुष्य सुख चाहता है तो उसे प्रकृति की गोद में जाना होगा, गांव की अमराइयों में चादर तानना होगा, मौलश्री की सघन छाया में चरखा चलाना होगा। गांधी गांव की ओर जाने का संकेत देकर देश को गंवार नहीं बनाना चाहते थे। 'इन्सान की कमाई का मकसद केवल भौतिक सुख पाना नहीं है, बल्कि नैतिक या रूहानी विकास करना है। हमारी असली मंशा ऐसी सभ्यता खड़ी करना है जिसमें एक दूसरे का शोषण नहीं हो। हमें यह समझ लेना चाहिए कि सभ्यता की सच्ची कसौटी हमारे भौतिक संग्रह या रहन-सहन के ढंग में नहीं है। दूसरे की मेहनत पर मौज करना जंगलीपन है सभ्यता मानव से मानव का मधुर-मिलन चाहती है। बापू के ये विचार खण्डहरों से आनेवाली प्रतिध्वनि नहीं, भविष्य के क्षितिज से आनेवाला प्रकाश है।

औद्योगिक विकास के ज्वार में मानवीय स्वतन्त्रता समाप्त होती जा रही है। अर्थशास्त्री जान केनेथ गैलब्रैथ 'द न्यू इण्डस्ट्रियल स्टेट' में चेतावनी देते हैं कि, 'विकसित प्रौद्योगिकी के असर को कम करके मानने का हमारा वर्तमान ढंग खतरनाक है। इससे हमारा अस्तित्व खतरे में पड़ सकता है।' मशीन मनुष्य को मजबूर बना रही है। इस मजबूरी से शोषण, शोषण से हिंसा, हिंसा से युद्ध और युद्ध से सर्वनाश की ओर से जा रही है। स्वचलित यंत्रों से औद्योगिक केन्द्रीकरण और सम्पन्नता ने मनुष्य को मुट्ठीभर लोगों के हाथ की कठपुतली बना रखा है। दूरदर्शी प्रबुद्ध व्यक्ति इस दुश्चक्र को भेदने की पद्धति ढूँढ रहे हैं। नयी पीढ़ी की कसमसाहट इस मजबूरी की व्यूह-रचना से विद्रोह के लिए है। इस मजबूरी से मुक्ति की खोज का नाम गांधी है। लेकिन उसे तो सत्ताइस साल पहले दिल्ली में समाधि दे दी गयी और 'हे राम' लिखकर हमेशा के लिए प्रणाम कर लिया गया।

अर्थ-शास्त्र के मर्मज्ञ गुन्नार मिरडल ने जब 'एशियन ड्रामा' में अर्थशास्त्र के दकियानूसी विचारों को बेनकाब कर दिया तो भारत जैसे देश के बुद्धिवादियों को गांधी की बातों की गहराई समझ में आयी। अमरीका और यूरोप की समृद्धि एशिया और अफ्रीका के शोषण पर पल्लवित हो रही है। विकासशील देश उसी केन्द्रित अर्थ रचना पर यदि चलेगा तो देश की गरीबी समाप्त होने के पहले गरीब समाप्त होगा। आंखों के सामने गरीबों को दम तोड़ते देखकर अब गांधी की अनिवार्यता ध्यान में आने लगी है। गांधी को समझने का प्रयत्न हो रहा है, लेकिन यदि गांधी टुकड़े में समझा जायगा, एक-एक विषय का अलग-अलग प्रयोग होगा तो खादी ग्रामोद्योग और बुनियादी-तालीम के जैसा उपहासात्मक प्रतिफल पैदा होगा। विनायक के बदले वानर हाथ लगेगा। नयी पीढ़ी में विकर्षण होगा। घृणाएं होंगी। वे गांधी की प्रतिमा खण्डित करना चाहेंगे, गांधी के नाम से चलने वाले ढोंग की प्रतिक्रिया में। धर्म शिक्षा, उद्योग, अर्थनीति और राजनीति के अलग अलग विचारों के घरौंदों में बापू को बन्द नहीं किया जा सकता। जीवन के टुकड़े नहीं हो सकते। सबका अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। इसलिए क्रान्ति टुकड़ों या किश्तों में नहीं सम्पूर्ण होगी।

भारत जैसे देश के सर्वसामान्य लोगों के ध्यान से गांव हटने लगा था। गांव और गोबर गड्डे 'सटान' में सिमट गया था, लेकिन एक ऐतिहासिक धक्के ने एक बार इसे पुनः सचेत किया। कितना सोना लुटायेंगे, गैसोलिन, केरोसिन और पेट्रोल पर। भारी उद्योगों के द्वारा प्रगति की हवाई यात्रा के लिए, नेहरू के शब्दों में 'टेक आफ' की तैयारी करने वाला राष्ट्र अब पुनः बैलगाड़ी से गांव की

सरकारी योजना में मनुष्य ही समस्या है....

ओर आने के लिए विवश है। गोबर गैस की वृहत योजना बन रही है। रसायनिक खाद के बदले कम्पोस्ट का अभियान एक बार पुनः प्रारंभ हो गया है।

बुद्धिवादी और तत्व-ज्ञानी गांधी को कभी नजरअन्दाज नहीं कर सके। व्यावहारवादी, प्रयोगवादी, उपयोगितावादी, भौतिकवादी वैज्ञानिक सभी ठिठके खड़े हैं। मनुष्य की नसबन्दी और भूमि की हदबन्दी भर से समस्याओं के सागर में भारत की जर्जर नाव आगे नहीं बढ़ सकती। योजना का विदेश से आयातित तामझाम बेकाम हो गया है। इस झंझावात में दीखनेवाला प्रकाश 'गांधी' है जिसे मार्टिन लूथर किंग ने देखा था, भारत में नहीं, अमरीका में। किंग को भारत के गांधी ने अमरीका का गांधी बनाया। चीन की दीवालों के पार जाकर देखना होगा, शिक्षा में क्रान्ति। भारत की बुनियादी तालीम और चीन की 'श्रमशाला' का अन्तर जानना होगा। और देखना होगा कि कमाई और पढ़ाई का संयोग कर पाने में वह कितनी सफल है।

बापू ने नेहरू से कहा था कि यदि अपने सामने 'दरिद्रनारायण' की प्रतिमा रखेंगे तो कभी भूल नहीं होगी। हर क्षेत्र में प्रारंभ उस बिन्दु से ही करना होगा जहां समाज का अन्तिम आदमी खड़ा है और अब शान्त पथगामी आंखों से सर्वनाश देखने को विवश दीख पड़ता है।

मनुष्य हैं तो हम मनुष्य के लिए मरेंगे। एक चित्रकार ने व्यंग-चित्र तैयार किया जिसमें भगतसिंह कहते हैं कि जनता के लिए हम शोषक को मारेंगे, बापू कहते हैं कि दरिद्र-नारायण के लिए स्वयं मरेंगे और आज की योजना कह रही है कि देश का विकास होगा पर मरेंगे दरिद्रनारायण।

मंहगाई, कुशासन, शोषण, भ्रष्टाचार सभी सताते हैं उस गलत योजना की जो यह मानकर चलती है कि देश की आय बढ़ेगी। पर गरीब और अमीर की खाई चौड़ी होती जा रही है। कवि कहता है कि 'वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिए मरे।' व्यक्तिगत रूप से मनुष्य जब अपने को लाचार पाता है, तो वह सरकार की शरण लेता है। दिनकर ने कहा है कि 'मनुष्य के सींग और पूंछ तो झड़ गये, पशुता अभी बाकी है।' मनुष्य अपनी इस व्यक्तिगत कमजोरी को दूर करने के लिए समाज और सरकार की शरण में आता है, पर वह देखता है कि समाज का लोक-पुरुषार्थ कल्याणकारी कहे जानेवाले इस राज्य में रहा नहीं और सरकारी योजना में मनुष्य ही समस्या है। तो फिर विनाश कौन टाल सकता है?

व्यक्तिगत मजबूरियों के शिकार हम सभी अपने को हताश और गुलाम महसूस करते हैं। हम ताकते हैं—सुलतान या भगवान की ओर। हम शान्ति लाना चाहते हैं—शस्त्र से, शासन परिवर्तन से। लेकिन ताण्डव के लिए चाहिए तीसरी आंख, तीसरी शक्ति और वह तीसरी शक्ति है—'लोक-शक्ति'। गांधीने इसी शक्ति के लिए कहा था कि एक-एक सेवक को एक-एक गांव में खड़ा होना चाहिए। उसकी करुणा लेकर लोक-सेवक गांव में जायेगा। गांव के बच्चों के माध्यम से माताओं में बोध प्रवेश पायेगा। स्नेह बढ़ेगा गांव नेक होगा। लोक-सेवक समाज में स्वावलम्बन की भावना पैदा करेंगे। दिल से दिल जुड़ेगा, हाथ से हाथ मिलेगा। शोषण-मुक्ति और शासन-निरपेक्षता के कदम उठेंगे तो भारत के लोग गा सकेंगे

"सांस सुधारे जीवन सुधरे,
पांव बढ़ायें मंजिल,
प्रभु के हाथ बड़े कल्याणी,
मिट जाती हर मुश्किल
रे मिट जाती हर मुश्किल।"

हर मुश्किल के लिए बापू का रास्ता—सत्य का, प्रेम का, करुणा का रास्ता है। बैलगाड़ी के लिए कम चिकनाई चाहिए। बस दो-चार बूंद तेल डाल दो, घर्षण समाप्त हो जायेगा। चर्र चूं बन्द। पुराने जमाने में मनुष्य कम था, दूर-दूर रहता था। आज घर्षण अधिक है, दबाव और तनाव अधिक महसूस हो रहा है। संयम का तेल, सत्य में पथभ्रष्ट होगा तो तेज सवारी तुरन्त उलट जायेगी। हर पुर्जे को स्नेह से पुचकार कर रखना होगा, अन्यथा आग लग जायेगी। छोटे पुर्जे को भी जंग लगेगा तो पूरा चक्का जाम हो जायेगा। समाज तब सुदृढ़ होगा जब गांव स्वावलम्बी और पूर्ण होगा 'विश्व पुष्ट ग्रामे अस्मीम अनातुरम्' (ऋग्-वेद)

गांधी वही है जो हर क्षण ताजा है, हर रोज नया। वह पूजा का पत्थर नहीं, हमारी हर ज्वलन्त समस्या का सटीक उत्तर है। ❖

सर्वोदयपर्व संपन्न

बरेलीमें विनोबा जयन्ती पर सर्वोदय पुस्तकालय आरम्भ हुआ। गांधी-जयन्ती तक चले कार्यक्रमों में सर्वोदय-मित्र बनाने, भ्रष्टाचार उन्मूलन तथा शिक्षा सुधार पर गोष्ठियां, सर्वोदय साहित्य की बिक्री, प्रार्थना, सूत-कताई, उपवासदान संकल्प, गांधी प्रदर्शनी आदि के आयोजन होते रहे।

मथुरा में विनोबा और गांधी जयन्ती पर प्रभात फेरी, सूत्र-यज्ञ, प्रार्थना, जनसभा, बहनों की कताई प्रतियोगिता, गीता-प्रवचन पाठ, संगीत आदि के कार्यक्रम विविध स्थानों पर हुए।

गांधी जयन्ती

नरसिंहपुर में चौबीस घंटे के अखंड सूत्र-यज्ञ एवं प्रार्थना के कार्यक्रम हुए। समापन रामप्रसाद मिश्र ने किया।

मुजफ्फरपुर में सूत्र-यज्ञ, कताई, प्रार्थना तथा सभा और गांधीजी की मूर्ति के सामने १२ लोगों द्वारा १२ घंटे के सामूहिक उपवास के कार्यक्रम सम्पन्न हुए।

सितम्बर में १९९ उपवास-दान प्राप्त

सर्व सेवा संघ कार्यालय द्वारा प्रकाशित विज्ञप्ति के अनुसार सितम्बर, १९७४ में विभिन्न राज्यों से १९९ उपवासदान के संकल्प-पत्र और राशि मिली है। अब तक देश भर में कुल ३५०० उपवासदानी बने हैं। ४५ उपवासदानियों ने इस वर्ष के लिए नवी-नीकरण कराया है। ❖

बीच की बात : जमाखोरी ही दुश्मन—(२)

(गतांक से आगे)

हम जब जनसहयोग चाहते हैं और लोगों से अपेक्षा करते हैं कि वे ज्यादा कीमत देकर राशन या दूसरी चीजें न खरीदें, कालाबाजार, भ्रष्टाचार, जमाखोरी और तस्करी करनेवालों की खबर प्रशासन को दें और इनके खिलाफ मोर्चा बनाया जाये तो शासन की ही यह जिम्मेदारी है कि इस जनसहयोग व जनशक्ति के संगठन की दशा तय करे। इस व्यवस्था में राजनीति नहीं घुसनी चाहिए। मतलब यह कि राजनैतिक कसौटी से इन समितियों का संगठन नहीं होना चाहिए। इसीलिए मेरा सुझाव रहा है कि इन समितियों में उस इलाके के सभी संसद सदस्य, विधायक, गांवों में सरपंच व ब्लाक के सदस्य और शहरों में नगर निगम या नगरपालिका के सदस्य, सहकारी समितियां या जितने भी पंजीकृत व्यावसायिक संघ, संस्थाएं व यूनियन हों उनके नामजद प्रतिनिधि लिये जायँ। राजनैतिक दलों के आधार पर सदस्य लिये जाने की कोई जरूरत नहीं क्योंकि जो भी राजनैतिक दल इस क्षेत्र में सक्रिय हैं उनके प्रभाव में उपरोक्त संस्थाओं में से कुछ जरूर होंगी और वहां से उनका चुनाव या नामजदगी हो ही जायेगी। इसमें कस्बों, शहरों और बड़े नगरों में छात्र संघों को प्रतिनिधित्व दिया जा सकता है क्योंकि उनमें महंगाई और उसकी बुराइयों के बारे काफी नाराजी है और उसे मिटाने के लिए भरपूर उत्साह भी। इस तरह जितने दल, संगठन व बड़े या नौजवान आज जगह-जगह बंद या अव्यवस्थित आंदोलन कर रहे हैं उनकी ताकत सही माने में सरकार को मिल जायेगी। इन समितियों में उस इलाके के सरकारी कर्मचारी, जो राशन व्यवस्था से सम्बन्धित हैं, वे भी रहने चाहिए। जहां ज्यादा प्रतिनिधि हो जायँ वहां काम का बंटवारा उप-समिति बनाकर किया जा सकता है। जो ज्यादा समय दे सके उसे इन उप-समितियों का संयोजक बना दिया जाये। इन उप-समितियों का काम होगा—

(१) अपने क्षेत्र की राशन दुकानों की वितरण प्रणाली, स्टाक व शिकायतों के बारे में जांच करना और एक दफे में बहुत लम्बी कतार न लगे, ऐसा तरीका चलवाना। फर्जी कार्डों की जांच करना।

(२) थोक व्यापारी से फुटकर व्यापारी को सही दामों पर माल दिलवाना। उसके स्टाक पर नियंत्रण रखना।

(३) थोक व्यापारी को कारखानों से सही दामों पर माल मिले, यह भी देखना। कारखानों के उत्पादन आंकड़ों पर नियंत्रण रखना।

(४) उचित मूल्यों के तय करने में सरकार को सहयोग देना व उस पर नजर रखना।

पहले दो काम तो कुछ आसानी से होने रहेंगे पर तीसरा और चौथा काम कुछ पेचीदा किस्म का है। इसमें एक तो शासन राजी नहीं होगा और हो भी गया तो आनाकानी चलेगी। पर धीरे-धीरे यह नियंत्रण प्रभावकारी होने लगेगा और यह तो पता चल ही जायेगा कि उद्योगपतियों ने कैसी लूट मचा रखी है। फिलहाल जो मिल रहा है और जिस कीमत का देयक बनता है, वह सही है, इतना हो जाये तो भी बहुत राहत हो और देश भर में इस तरह का जाल बिछ जाने के बाद जनता या कम से कम पढ़े लिखों को यह तसल्ली तो होगी ही कि जो कुछ देश में है, वह काफी ढंग से बंट रहा है और बड़े पैमाने पर जमाखोरी व कालाबाजारी नहीं हो रही है। ऐसा भरोसा तभी पैदा होगा जब उत्पादन के स्रोत पर देखरेख हो सके। अनाज के मामले में शिकायत है कि बड़े किसानों ने गल्ला दबा लिया है। क्यों नहीं दबायेंगे? उद्योगपति व थोक व्यापारी पर अभी तक सरकार ने कोई सख्ती नहीं की, उन्हें जमकर लूट करने दी तो बड़ा किसान क्यों पीछे रहे। फिर जिसने लेवी दे दी है वह तो कोई गैर-कानूनी काम कर भी नहीं रहा। इसमें भी जब आप सरकारी अफसरों पर जिम्मेदारी डालते हैं कि वे लेवी वसूल करें तो उसमें पक्षपात होता रहता है। किसान ने कितनी जमीन में अनाज उगाया है, यहीं से गड़बड़ शुरू होती है और दोषपूर्ण खाद्य-नीति ने कई किसानों को भी बेईमान बना दिया। ग्राम से लेकर ऊपर तक समितियां रहेंगी तो आगे-पीछे लेवी वसूली का काम भी सुधर जायेगा। और किस किसान ने कितना अनाज रोक रखा है यह आंकड़े भी आ जायेंगे। उन्हें इस बात के लिए राजी किया जा सकेगा कि वे खुले बाजार में लाकर अपना अनाज बेचें। हरियाणा, पंजाब में सीमेंट, टीन की उम्मीद में बड़े किसानों ने बहुत सा अनाज लेवी के अलावा सरकार को दिया। जो कुछ भी नीति बनेगी, समिति प्रणाली के जरिये ही वह ज्यादा सफल होगी यह मानना पड़ेगा। समितियों का जाल सारे देश में फैलने पर किसान भी पूरा सहयोग देंगे क्योंकि उन्हें भरोसा हो जायेगा कि बाकी चीजें भी उन्हें ठीक दाम से मिलनेवाली हैं। हमने विरोधी दलों पर यह इलजाम लगाया कि उन्होंने किसानों को भड़का दिया कि वे गल्ला दबायें। इसके बजाय सचाई यह है कि गल्ला दबाने में बड़े किसान पहले से माहिर रहे हैं और व्यापारियों ने उन्हें यह हिकमत सालों पहले सिखा दी थी। इस बार जब थोक व्यापार का राष्ट्रीयकरण हुआ तो विरोधी दलों ने समझा कि जो काम किसान करने ही वाला है उसका समर्थन करके वाहवाही लूट ली जाय और इससे उनके वोट पक्के कर कर लिये जायँ। वे समझते हैं कि इससे राष्ट्रीयकरण भी बदनाम हो जायेगा। दक्षिणपंथी दल और अखबार तो आजकल राष्ट्रीयकरण को लेकर ही इंदिराजी पर प्रहार कर रहे हैं।

अनाज के थोक व्यापार का राष्ट्रीयकरण वापस ले लिया गया पर उससे समस्या हल नहीं हुई क्योंकि दोनों हालतों में जमाखोरी नहीं रोकी गयी। इसलिए हमें यह सिद्धान्त मान लेना पड़ेगा कि इस बीमारी को रोकने के लिए जनसहयोग लेने का तरीका सामकीय स्तर पर अपनायें और उसे सब

जगह लागू करें। कोई एक प्रदेश भी इसे करके देखे तो भी काम चले और सम-स्तरीय-विकेन्द्रीकरण की बुनियाद पड़े। हम लोगों को जमाखोर, कालाबाजारियें और मुनाफाखोर के खिलाफ भड़काकर या कभी कभी प्रशासकों की शिथिलता की नुक्ताचीनी करके एक तरफ जन-असंतोष को अराजक मोड़ देते हैं, दूसरी तरफ मौजूदा प्रशासन का सिरदर्द बढ़ाते हैं कि वह दिनरात एक ही काम में लगा रहे। जनसहयोग और जनशक्ति को प्रशासकीय स्तर पर मान्यता दी जायेगी तो अफसरों का काम तीन-चौथाई कम हो जायेगा और वे दूसरे अपराधों की तरफ ध्यान दे सकेंगे। उनकी जरूरत तभी पड़ेगी जब किसी बहुत माहिर जमाखोर का मामला आयेगा। आमतौर पर तो समितियाँ बनते ही ये समाजविरोधी तत्त्व अपनी हरकतें बन्द करने लगेंगे। अनाज के अलावा दूसरी चीजों के मामले में फुटकर व्यापारी को थोक व्यापारी से और उत्पादन केन्द्र याने कारखाने से सही दाम पर माल मिले, इसमें समितियों को ज्यादा मेहनत करनी पड़ेगी पर इसमें भी दो-तीन महीने में सारा गोरखधंधा काबू में आ सकता है।

मैंने समिति प्रणाली को स्व-विकासशील और स्वसंशोधी प्रक्रिया माना है। जिस आधार पर इसका संगठन किये जाने की बात मैंने की है, वह आधार ऐसा है कि जिसमें किसी दल या व्यक्ति की मरजी का प्रश्न नहीं उठता, किसी वर्ग विशेष का उस पर हावी हो जाना संभव नहीं है और इतने तरह के प्रतिनिधि (सभी छोटे-बड़े धंधे व संस्थाओं के) उसमें आ जाने के बाद चार-छः व्यक्ति भी निष्ठावान और मुस्तैद होंगे तो गोलमाल नहीं चल पायेगा। अभी जो पकड़-धकड़ हो रही है उसमें बहुत खामियाँ हैं और जो जन-संगठन, युवा-संगठन या मोर्चे मैदान में हैं, उनके काम में भी कोई सलीका या तारतम्य नहीं है।

जो आज चल रहा है, वैसा ही चलने दिया गया तो अराजकता ही बढ़ेगी या विदेशी अनाज आ जाने से कुछ दिन के लिए हालत गिरना ठहर भी जाये तो भी दाम कम नहीं होंगे। सभी पंजीकृत संस्थाओं, यूनियनों के लोगों के आ जाने से इसमें एक स्थायित्व आ जायेगा और पूरे समाज की आँखें इस पर लगी रहेंगी कि उनकी संस्था या यूनियन के लोग सब अपराधियों को समान रूप से पकड़ रहे हैं या नहीं। रूसो के 'प्रत्यक्ष प्रजातंत्र' या गांधी के 'स्वराज्य' की कुछ झलक इस स्वयं विकसित समिति प्रणाली के कार्यकलाप में दिखायी देगी। ब्रिटेन में आज जो भागीदारी के जनतंत्र की माँग हो रही है और जिसके बिना हमारा संसदीय जनतंत्र भी लड़खड़ा रहा है, उसका उपाय इसमें से ही सूझने लगेगा। इसमें से शायद जयप्रकाश बाबू के दलनिरपेक्ष जनतंत्र का आधार भी बनने लगे। इनके काम में राजनीति घुस नहीं पायेगी क्योंकि इसके सदस्य निजी तौर पर चाहे जिस दल के हों या निर्दलीय ही हों पर जिस काम के लिए इकट्ठे होंगे, उस पर किसी दलीय दृष्टिकोण का प्रभाव पड़ना मुमकिन नहीं होगा। यह प्रणाली स्वयं-संशोधित इसलिए होगी कि इसे लगातार एक ही काम बार देखनी है कि कालाबाजारी व जमाखोरी न हो और पूरे समाज की नजर इस पर रहेगी। दो-चार या पाँच-दस दिन के लिए किसी जमाखोर को बचा सकता भले संभव हो, पर महीनों कोई जमाखोर इनको बेवकूफ नहीं बना सकेगा। जनतंत्र की खामी एक यह भी मानी गयी है कि जनता का शासन से कोई संवाद नहीं है। यह समिति प्रणाली, खासकर के राशन और जरूरी चीजों के मामलों में, जनता और शासन के बीच संवाद पैदा करने का सबसे सीधा और सरल तरीका है। जहाँ सबसे अधिक पीड़ा और बेचैनी हो रही है, वहाँ ऐसे जन-प्रतिनिधि और इतनी तादाद में कि उन्हें सड़कों पर देखा और पकड़ा जा सके, शासन से बहुत सजग होकर और मुखर होकर लगातार बातें करते रहेंगे कि यहाँ यह हो रहा है वहाँ यह चल रहा है और इसने इसे नहीं पकड़ा और उसे क्यों छोड़ दिया। पचास सदस्यों में पाँच भी सक्रिय हो गये तो काम बनने लगेगा और बाकी पैंतालीस भी ऐसे तो होंगे जो नेतागीरी के शौकीन हों। वरना वे हट जायेंगे और उनकी संस्था दूसरे को भेज देगी। आज जो अफसर कुछ को पकड़ते हैं और अन्य कुछ को किसी कारण छोड़ देते हैं, वह इस समिति के जरिये नहीं हो पायेगा। जो कुछ संगठन आज सक्रिय हैं, उन्हें न तो शासन की ठीक से मान्यता है और न उनमें इतनी शक्ति कि किसी पूरे शहर या कसबे पर नियंत्रण कर पायें। फिर सारे देश या किसी एक प्रदेश में भी समान रूप से जन-सहयोग कहाँ लिया जा रहा है। जहाँ अराजकता बढ़ जाती है वहाँ या कहीं जिलाधीश की सूझबूझ के कारण थोड़ा-बहुत राहत कार्य जैसा हो जाता है। अब हम उस हालत में पहुँच गये हैं जहाँ हमें व्यापक बीमारी का व्यापक पैमाने पर इलाज जिसे "आल आउट" और "क्राश प्रोग्राम" कहते हैं, करना होगा। बार-बार कहना अच्छा नहीं लगता पर बात तो सही है कि इस देश को बड़ों-बड़ों के भाईचारे और उनकी लूट से बचाना ही हमारा मुख्य सवाल है और अब यह चीज इतनी साफ होती जा रही है कि उस काम की जिम्मेदारी केवल सरकारी मशीनरी पर सौंपे रहना खतरनाक हो गया है। कुछ ईमानदार नेताओं को और बुद्धिवादियों को यह बात बुरी लग सकती है कि ऐसा इलजाम लगाया जा रहा है। सच तो यह है कि पिछले दो महीने से कई दक्षिणपंथी अखबार भी जिनके मालिक इसी भाईचारे के किसी न किसी रूप में अंतरंग हैं, ऐसा ही कुछ लिख रहे हैं। वामपंथी समाचार पत्र जगत तो शुरू से कहता ही था। इस चीज को लोग प्रशासन की बौद्धिक कसौटी पर कसकर कहा जा रहा है कि केन्द्रित प्रशासन, जिसमें बहुत सा पैसा व्यक्तिगत स्व-निर्णय (डिस्क्रिशन) के आधार पर होता है और कायदे कानून भी इसी आधार पर तोड़-मरोड़ लिये जाते हैं, जनतंत्र का यथार्थ नहीं रह गया है और जब तक इस प्रकार का ढाँचा रहेगा उसमें आप चाहे गांधीजी जैसे को प्रधानमंत्री बना दें या सरदार पटेल जैसा सरदार बना दें या गोविंद वल्लभ पंत जैसा भी ला दें भ्रष्टाचार, जमाखोरी, मुनाफाखोरी नहीं जायेगी। इन रोगों के ज्यादा से ज्यादा ठीक होने का इलाज प्रतिनिधित्व के विस्तार और प्रशासन के स्थानीय विकेन्द्रीकरण में ही है।

—महेन्द्रदत्त मिश्र

जन-आन्दोलनकारियों की परिवार-गोष्ठी

८. अक्टूबर की विशाल राष्ट्रीय रैली के पश्चात राजधानी में आये सर्वोदय परिवार के सदस्य गांधी शान्ति प्रतिष्ठा भवन में आंदोलन की चर्चा के लिए बैठे। चर्चा प्रारम्भ करते हुए गांधी शान्ति प्रतिष्ठान के सचिव श्री राधाकृष्ण ने बताया कि बिहार का आंदोलन आज निर्णायक दौर से गुजर रहा है। गुजरात के बाद बिहार, उत्तरप्रदेश और आज दिल्ली में विशाल रैली का आयोजन जन-जन के आक्रोश को व्यक्त करता है। संगोष्ठी का उद्देश्य बताते हुए श्री राधाकृष्ण ने कहा कि यहां हम अपने-अपने प्रांतों में चल रहे जन-आंदोलन के सम्बन्ध में कुछ बतायें।

श्री भवानी प्रसाद मिश्र की ओजपूर्ण वाणी ने कंठ के सूक्ष्म तन्तुओं का सहारा लेकर आज की स्थिति में सभी को झकझोर दिया। इस बढ़ती जन-आंदोलन की आग में कूदने के लिए चिन्तन की अपेक्षा कर्तव्य निभाने की बात तथा व्याप्त बुराइयों को समूल नष्ट कर एक नया समाज बनाने का संकल्प दिया।

गुजरात के नौजवानों ने नयी क्रांति का बीज रोपा, अध्यापकों, बुद्धिजीवियों का जन-मानस भी बना और सरकार बदलने तक की क्रांति सफल हुई। मगर गुजरात के श्री भोगीलाल गांधी ने बताया कि वह सम्पूर्ण क्रांति नहीं है। सरकार का टूटना तो जल्दी में हुआ। आज संगठनात्मक, रचनात्मक कार्यों की तीव्रतर आवश्यकता है। सर्वोदय के साथियों के साथ नौजवान यह कार्य उठाये हुए हैं लेकिन हमारे पास जे पी जैसा व्यक्तित्व तो है नहीं। श्री गांधी ने कहा कि चुनाव निकट आ रहे हैं, इस हेतु हमें अनुभवी कार्यकर्ताओं की जरूरत है जो आयें और हमें मदद करें। सरकार बदलने के बाद भ्रष्टाचार व्यवस्था में कोई सुधार हुआ हो, ऐसा नहीं।

आंदोलन में विपक्षी दलों की भूमिका पर टिप्पणी करते हुए श्री गांधी ने कहा कि सत्ता पक्षवालों का कहना है कि वे सर्वोदयवाले विरोधी दलों के साथ मिल रहे हैं जिनका नैतिक बल शून्य है। यह आलोचना हमें कमजोर करेगी। उन्होंने शंका प्रकट की कि यदि हम विपक्षी राजनीतिक दलों के साथ मिल जायें तो हमारा आंदोलन डूब जायेगा। दलों को अनुशासन में लेकर चलना कठिन काम है। जे पी जैसा व्यक्तित्व ही यह सब निभा सकता है। गुजरात की स्थिति पर विचार रखते हुए उन्होंने कहा कि दलों से जो सदस्य एक अनुशासित सदस्य के रूप में आयेंगे उन्हें हम साथ लेंगे। उन्होंने आंदोलन में रचनात्मकता पर जोर दिया।

पंजाब से आये श्री बनारसीदास गोयल ने बताया कि पंजाब में अभी संघर्ष समिति का गठन नहीं हुआ है लेकिन विपक्षी दलों ने जे पी को बुलाया है। समाचार-पत्रों ने जे पी के आंदोलन को घर-घर तक पहुंचा दिया है। आज लगता है हर झोंपड़ी में जन-आंदोलन का चिराग जल रहा है। विरोधी पक्ष ने जे पी के आंदोलन को अपनी सरकार गिराने का एकमात्र यंत्र माना है, ऐसा आभास होता है जबकि हम शहर-शहर-गांव-गांव यह समझा रहे हैं कि यह समग्र क्रांति है, पूरी व्यवस्था बदलने के लिए है।

आंदोलन में राजनीतिक दलों की भूमिका पर विचार व्यक्त करते हुए श्री गोयल ने कहा कि हमारे साथ जो भी आये, लेकर चलें। उद्देश्य खुले रूप में सामने है, अनुशासन तो आवश्यक तत्व है। उनका हृदय माने, परिवर्तित हो तो हमारे साथ एक नागरिक के नाते आयें, आंदोलन के सिपाही बनें। हमें भी अपना दिमाग खुला रखना चाहिए। हम परहेज न करें। उन्होंने रैली के सम्बन्ध में सरकारी रुख पर टिप्पणी करते हुए कहा कि तीन अगस्त की रैली में ट्रक-ट्राली सब आ सकते थे मगर आज की रैली में बसों के आने-जाने में भी कठिनाई डाली गयी।

जे पी के आंदोलन को यदि कोई क्षति होती है तो अपने ही लोगों से होगी। हिमाचल के श्री रमेश गुप्ता ने दर्दभरे स्वर में कहा कि सर्वोदय मण्डल हिमाचल प्रदेश के कार्यकर्ताओं ने जनता में ऐसे पर्चे बांटे हैं कि यह आंदोलन असंगत है। इस पर भी तरुणों-छात्रों तथा सभी दलों के सदस्यों को नागरिक के नाते लेकर संघर्ष समिति का गठन हो गया है। सरकार भी घबरा रही है हमें भी केन्द्र से मार्ग-दर्शन की आवश्यकता है।

मध्यप्रदेश के सभी सम्भागों में आंदोलन ने बल पकड़ा है। मशाल जुलूस, शान्ति मार्च तथा जन-सभाओं के आयोजन ने जनता के आक्रोश का परिचय दिया है। जे पी के समर्थन में सत्ता पक्ष के भी कुछ लोग नजर आते हैं। ग्वालियर, इन्दौर, जबलपुर, कटनी सागर तथा रीवा आदि क्षेत्रों में संघर्ष समितियां गठित हो गयी हैं। पिछली पांच सितम्बर को मध्यप्रदेश छात्र संघर्ष समिति का भी गठन हो गया है। सभी विपक्षी दलों के लोग भी आंदोलन में हैं। हमारे पास जे पी जैसे व्यक्तित्व की तो कमी है मगर आंदोलन बढ़ रहा है। नवम्बर में और तेजी आयेगी। नवयुवकों में काफी उत्साह है। श्री हेमदेव शर्मा ने आगे बताया कि हमें विपक्षी दलों के सामने राजनीति से ऊपर उठकर आंदोलन में भाग लेने की बात रखनी चाहिए।

महाराष्ट्र के श्री गंगा प्रसाद अग्रवाल ने बताया कि हमारे ५ जिलों में पहले से ही आंदोलन चल रहा था। मुख्य मन्त्री के आश्वासन पर वह रुक गया। लेकिन सर्वोदय सम्मेलन के बाद एक अगस्त को बिहार दिवस मनाया गया। हमने छात्रों, अध्यापकों, सर्वोदय सेवकों, राजनीतिक दलों के प्रतिनिधियों तथा नागरिकों को साथ लेकर संघर्ष समिति गठित की है। श्री अन्ना साहब तथा श्री एम एम जोशी भी उसमें हैं। अभी हमने बिहार के आंदोलन में ही अधिक से अधिक समय लगाना तय किया है। हमारे २०-३० कार्यकर्ता बिहार में हैं।

श्री अग्रवाल ने कहा कि विश्वविद्यालयों में चल रहे भ्रष्टाचार तथा महाविदर्भ समिति का आंदोलन तीव्र हुआ है और व्यापक होगा। महाराष्ट्र के समाचार-पत्र बिहार के समा-

चार नही देने। उन्होंने बताया कि भारतीय स्तर पर जो भी जन-आंदोलन सामने आयेगा उसमे महाराष्ट्र पीछे नही रहेगा। नशाबन्दी आदोलन भी हमारे आंदोलन का एक पक्ष है तथा स्थानीय समस्याओ पर भी आज हम चर्चा कर रहे हैं।

कर्नाटक में छात्रो की नव निर्माण समिति गठित हो गयी है। दो छात्र बिहार भी गये हैं। यह सूचना श्री गरुड शर्मा ने दी। छात्रो की नव निर्माण समिति में तीन विश्वविद्यालयो के छात्र और आचार्य हैं। समिति ने एक विशाल मौन जुलूस निकाल कर बिहार आदोलन का समर्थन किया। दो पुस्तकें 'स्वराज्य शासन' तथा 'जनता आन्दोलन' भी प्रकाशित की गयीं। नशाबन्दी का कार्य भी बढ रहा है। गाधी निधि के वेंकट भाई सत्याग्रह चला रहे हैं। एक हजार से अधिक लोग सामने आये इस सत्याग्रह में। बिहार जैसे आदोलन की यहा भी जरूरत है।

उत्तरप्रदेश के नरेन्द्र भाई ने बताया कि बिहार की सीमा से लगे उत्तरप्रदेश के जिलो मे आन्दोलन तेज हुआ है। इस बीच इलाहाबाद और लखनऊ मे छात्रो के दो सम्मेलन भी हुए। अक्टूबर मे राज्यस्तर की समिति मेरठ मे गठित हो रही है। ६ अक्टूबर की राष्ट्रीय रैली के सम्बन्ध में सरकारी कदम की सूचना देते हुए उन्होंने कहा कि राज्यपाल ने राजाज्ञा प्रसारित करके ऐसी आज्ञा दी कि उत्तरप्रदेश से बाहर जाने के लिए कोई परमिट न दिये जायें। उत्तरप्रदेश में आन्दोलन जम रहा है। कुछ गिरफ्तारियां भी हुई हैं।

श्री नरेन्द्र भाई ने बताया कि सर्वोदय मडल अपनी ओर से कोई सगठन खडा नही करेगा बस मदद करेगा और जन आंदोलन जनता का हो ऐसा प्रयास रहेगा। ११ अक्टूबर को बिहार के समर्थन मे उत्तरप्रदेश बन्द का आह्वान किया गया। श्री नरेन्द्र भाई ने कहा कि हम लोक-सविधान तथा शासन में लोक प्रतिनिधित्व की माग करें।

दिल्ली के आन्दोलन तथा बिहार के आदोलन पर चर्चा करते हुए श्री एन कृष्णा स्वामी ने कहा कि जे. पी. के आदोलन का मूल है तरुणो की शक्ति। उन्होंने कहा कि गुजरात मे भी नौजवानो की मदद के लिए सर्वोदयवाले कम ही पहुँच सके। बिहार मे छात्रो की अगुआई जे. पी. ने की है तो छात्र-शक्ति का रचनात्मक उपयोग हो रहा है। हिंसा की घटनाएं भी जहा तहा देखने मे आती हैं जो विरोधी पक्ष की करतूत होती है। उन्होंने कहा कि यह समग्र क्रांति है, नया समाज बनाना है तो नयी पीढी को लेकर ही बनाना होगा।

उन्होंने कहा कि हमे आगे के कार्यक्रमो पर भी सोचना है। इसलिए प्रचार, सगठन तथा सम्पर्क से इस आदोलन को जन-जन तक पहुचायें।

अपने अध्यक्षीय भाषण मे राजस्थान के लोकसेवक श्री गोकुल भाई ने कहा कि राजस्थान मे सर्वोदय मण्डल इस जन-आदोलन मे सगठनात्मक तथा समन्वयात्मक दोनो भूमिकाए निभायेगा। प्रश्न है कि हम क्या मूक दर्शक बनकर बैठे रहे या गान्धी के तरीको से प्रतिकार करें। जो हवा गुजरात और बिहार मे बनी है उसका लाभ उठाकर हर प्रान्त मे आदोलन खडा करें। जन-जन को छूनेवाली समस्याए, उपभोग की वस्तुओ का अभाव आदि का मामला भी उठायें। इस देश का इतिहास क्रांतियो का है। महाभारत से पानीपत तक के युद्ध यहा हुए हैं। यह जन-आदोलन भी एक क्राति ही है, अहिंसक क्राति। हमे अपने-अपने प्रांतो मे लोक-प्रतिनिधित्व, लोक-स्वराज्य पर चर्चाए आयोजित करनी चाहिए। जन-आदोलन के साथ-साथ लोक-शिक्षण का कार्य उठायें। हम सर्वोदय सेवक माला मे धागे का काम करें। जनता को मनका बनायें। इस तरह यह जनता का आदोलन होगा। जरूरत समझें तो चुनावो का बहिष्कार करें। हम पक्षमुक्त, सत्तामुक्त रहे, यही हमारे सगठन का मूल हो।

उन्होंने कहा कि राजस्थान मे नशाबन्दी का काम चल रहा है। उसे और तेज करना है। हृदय-परिवर्तन पर जोर देते हुए उन्होंने कहा कि यह तभी सम्भव है जब हमारा तप, त्याग, तपस्या और सेवा लोगो को हमारी ओर खींच सके।

अन्त मे श्री राधाकृष्ण ने कहा कि दिल्ली मे भावी कार्यक्रम क्या होगा, इस पर दिल्ली नागरिक सघर्ष समिति अपनी बैठक मे चर्चा करेगी और सर्वसम्मत कार्यक्रम हाथ मे लेगी।

'बिहार बंद' के आइने में....

उपद्रवी कौन ?

तबाही (पूर्वी चपारण) मे हवाई अड्डे से लौट रहे आयुक्त की जीप पर ढेला फेंका गया। आरक्षी दल ने दौडकर फेंकनेवालो मे से चार को पकड लिया। चारो सी० पी० आई० के आदमी निकले।

५ अक्टूबर को पटना सिटी पुलिस गाडी पर बम फेंका गया जिसमें ७ सिपाही व मजिस्ट्रेट घायल हुए। बम फेंकनेवाला आदोलन के विरोध पक्ष का आदमी था।

५ जून के गोलीकाड के सम्बन्ध मे गिरफ्तार इन्दिरा ब्रिगेड के फुलेना राय ने मुख्य मन्त्री को पत्र लिखा कि जो कुछ हमने किया, आपके हुक्म से किया। फिर हम पर अनुशासन की कार्रवाई क्यो ? जयप्रकाशजी ने पटना की आमसभा मे घोषणा की कि वे इस पत्र को प्रकाशित कर रहे हैं।

जन-समर्थन

लगभग ३६ घटे बद के बाद दूसरे दिन सध्या ५ से ४ प्रात तक रिक्शा चालको की गरीबी का ध्यान देकर उन्हे छूट दी गयी। बद के पूर्व रिक्शा चालक सघ अपना प्रस्ताव कर 'बद' मे शामिल हुआ।

स्थान-स्थान पर वकील सघो ने प्रस्ताव द्वारा २ दिन, कहीं-कही ८ दिन तक अदालत-बहिष्कार का सकल्प किया। कचहरियो में नारे लगे 'विधान सभा को भग करेंगे, भंग करेंगे, भग करेंगे।'

प्रारम्भ मे जिस सत्याग्रह स्थल पर पानी का प्रबन्ध नही था, वहां सिपाहियो ने अपनी सुराहियो से महिला सत्याग्रहियो को पानी पिलाया।

सचिवालय व अन्य स्थानो मे भोजन अवकाश के समय बाहर आये कर्मचारियों ने अपना भोजन सत्याग्रहियो म बाट दिया। कई स्थानो पर कर्मचारी भोजन अवकाश के बाद कार्यालय नही लौटे और सत्याग्रहियो के साथ धरना देने लगे।

रिजर्व बैंक की एक शाखा पर सत्याग्रही नही पहुच पाये तो कर्मचारी स्वय कार्यालय छोड़कर बाहर चले आये।

भूमिहीनों की विजय

वलिवलम के हृदयकमलनाथर मंदिर की ३०६ एकड सिंचित भूमि पर ग्राम के एक जमींदार कई बेनामी नामों की आड में कब्जा जमाये थे। भू सुधार कानून के उल्लंघन की सूचना १९७० में पाकर तमिलनाड सरकार ने जांच करायी और २१२ एकड जमीन ग्राम के १३२ भूमिहीनों में बांट दी गयी। इन भूमिहीनों को बेदखल करके जमीन पर पुनः कब्जा करने के लिए निहित स्वार्थों ने अनेक मुकद्दमे दायर किये। कचहरी के खर्च और देरी से भूमिहीनों को परेशानी तो हुई लेकिन इस माह के आरम्भ में नागपट्टिनाम के उप-न्यायाधीश ने मामला खर्च सहित खारिज कर दिया।

★

'नो काटो, नो काटो हमारा जांगला'

उत्तराखंड के प्रमुख सर्वोदय सेवक सुन्दरलाल बहुगुणा और लोकगायक घनश्याम 'सैलानी' ने 'वन-बचाओ' अभियान में टिहरी, उत्तरकाशी, चमोली, अल्मोडा, नैनीताल और देहरादून जिलों की तीन सप्ताह की यात्रा के बाद बताया कि आंदोलन उत्तराखंड के पर्वतीय जिलों में फैल गया है। कुमायूं में इसका आरंभ नन्दादेवी के मेले में नैनीताल में एक जनसभा में हुआ, जो एक प्रदर्शन के बाद वनाधिकारियों द्वारा नीलामी स्थगित करने पर हुई। वनठेकेदारों ने 'चिपको' आंदोलन चलने के भय से बोली-बोलने से इन्कार कर दिया।

सभी जिलों के सभी वर्ग और विचार के लोगों ने अभियान चलाने का उत्साह दिखाया है। गढ़वाल और कुमायूं के लोककवियों ने लोकप्रिय धुनों में 'चिपको' के गीतों की रचना की है, जिन्हें लोग झूम-झूम कर गाते हैं। इनमें एक गीत के बोल हैं —

'नो काटो, नो काटो हमारा जांगला।
यो वन हमारा पराण है।
हमारे जंगलों को मत काटो,
ये हमारे प्राण हैं।

दून-घाटी भूमि-सत्याग्रह की ओर उन्मुख

विनोबा के जन्मदिन ११ सितम्बर से शुरू हुई २१ दिन की पैदल यात्रा के २ अक्टूबर को समापन के अवसर पर जन जागृति करने और सत्याग्रह आन्दोलन प्रारम्भ करने का निर्णय लिया गया है। आन्दोलनकी तैयारीके पहले चरणमें १४ नवबर से डाडी गावमें तीन दिन के शिविर का आयोजन किया जा रहा है। पैदल यात्रा के समय नजर में आये जमीन सम्बन्धी कुछ खास मामलों को लेकर सरकार व प्रशासन से संपर्क किया जा रहा है और सत्तारूढ पक्ष सहित सभी राजनैतिक दलों व जनसेवकों का सहयोग लेने का प्रयत्न किया जा रहा है।

२१ दिन की गयी ३२५ मील से अधिक

जमा रखा है जबकि उस गाव में १२६ भूमिहीन परिवारों के आवेदन पत्र भूमि चाहते बाबत ग्राम प्रधान सुमेरचन्दजी के पास पडे हैं। इसी तरह तौलीमुड से ३२ एकड भूमि ग्राम-सभा के विरोध के बावजूद निष्कांतियों को बसाने के लिए दे दी गयी जबकि इस ग्राम सभा में २२ भूमिहीन परिवार जमीन की मांग कर रहे हैं। बावजूद इसके कि उत्तरप्रदेश के मुख्यमंत्री ने ग्राम प्रधानों को व्यक्तिगत पत्र लिखकर गाव, समाज और सीमाबंदी में निकली जमीन का बटवारा गांव के कमजोर वर्गों में करने का अनुरोध किया है, इन ५५ गावों में केवल एक डूगा गाव को छोडकर कहीं कोई कार्रवाई किये जाने की जान-

न प्रशासन का सहयोग, न पुलिस का

की इस पदयात्रा के दौरान जिसमें १४ छोटे काश्तकारों, भूमिहीन और सार्वजनिक कार्यकर्ताओं ने भाग लिया, ५५ गांवों में संपर्क व सभाएं करके भूमिसमस्या का अध्ययन और जनजागृति करने का काम किया गया। यह देखा गया कि भूदानी नेता आचार्य विनोबा भावे को १९५२ में उनके देहरादून जिले में आगमन पर भूदान में जो जमीन मिली थी उस पर लोगों ने अवैध कब्जा जमा रखा है। वह जमीन अभी तक भूमिहीन परिवारों में बट नहीं पायी है। जहां बटी है वहां भूमिहीन परिवार को आज तक कब्जा नहीं मिल पाया है। कुल्हावाला गाव में तो विनोबा और स्व० लालबहादुर शास्त्री की उपस्थिति में १७ मई, ५२ को २० भूमिहीन परिवारों में एक-एक एकड के हिसाब से भूदान की जमीन वितरित की गयी थी परन्तु २२ साल बाद भी इन अभागे परिवारों को जमीन पर कब्जा नहीं मिल पाया है। जौली गांव में भूदान की २५ एकड पर औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान नाम की एक जाली संस्था ने कब्जा

कारी नहीं मिली है। डूगा गाव में भी यद्यपि प्रधानने भारतीय दंड विधान की धारा ४४७ के अन्तर्गत एक परिवार को गाव-समाज की जमीन खाली करने की अधिसूचना जारी की है परन्तु उन्हें न तो प्रशासन का सहयोग मिल रहा है और न पुलिस का।

जमीन के मामले में सरकार व समाज की इस उदासीनता के कारण भूमिहीनों और छोटे काश्तकारों में गहरा रोष व्याप्त है और स्थिति विस्फोटक बनती जा रही है। देहाती क्षेत्र में बावजूद जमींदारी उन्मूलन कानून और हदबन्दी कानून के सामन्तवाद की जकड बहुत मजबूत है जिसके दबाव में भूमिहीन खेत मजदूर आतंकित हैं।

इस पदयात्रा के दौरान भूमि के साथ साथ जंगलों की रक्षा और शराबबन्दी के सवाल भी उठाये गये हैं और इस उद्देश्य की ओर आगे बढ़ने की दृष्टि से नवम्बर के आखिरी सप्ताह में महिलाओं की पैदल-यात्रा का आयोजन किया जा रहा है।

—योगेशचन्द्र बहुगुणा

(राजेन्द्र बाबू की आत्मकथा) संक्षिप्त संस्करण
प्रकाशक—सस्ता साहित्य मंडल, नयी दिल्ली
पृष्ठ संख्या २६४, मूल्य ६ रुपये मात्र

डा० राजेन्द्रप्रसाद का जीवन 'सेवा सादगी और कर्मठता का' अनोखा उदाहरण है। सन् १९४७ में इनकी आत्मकथा प्रकाशित हुई थी, जो उनके जीवन और कृतित्व के साथ-साथ स्वतंत्रता-संग्राम का अत्यन्त प्रामाणिक दस्तावेज भी सिद्ध हुई है। उसके प्रकाशकों ने अनुभव किया कि बृहदाकार ग्रन्थ का संक्षिप्त संस्करण प्रकाशित किया जाना चाहिए। तदनुसार, उसका संक्षिप्तीकरण किया गया और वह अत्यन्त पठनीय पुस्तक इस समय हमारे हाथ में है।

संक्षेपकार हिन्दी के जाने-माने लोकप्रिय शरद हैं। उन्होंने बड़ी कुशलता के साथ परिपूर्ण आत्मकथा के किसी भी महत्वपूर्ण अंश को छोड़े बिना जो पुस्तक तैयार की है वह प्रारंभ से अन्त तक समान भाव से रोचक और सुपाठ्य बनी है। बड़ी-बड़ी किताबों का कागज की कमी के इस जमाने में उत्तम संक्षिप्तीकरण आवश्यक भी हो गया है। जिन्होंने राजेन्द्र बाबू की सम्पूर्ण आत्मकथा पढ़ी है, वे संक्षिप्त संस्करण का सहज ही मूल्यांकन कर सकेंगे और जिन्होंने नहीं पढ़ी है, उनके लिए तो यह पुस्तक प्रकाशकों की ओर से अनुपम देन ही मानी जायेगी। मूल्य की दृष्टि से पुस्तक नि:सन्देह बहुत सस्ती है और हमें आशा है कि इस अत्यन्त उपयोगी ग्रन्थ-रत्न का हिन्दी में पर्याप्त प्रचार होगा।

(२) प्रेम की देवी लेखक—लक्ष्मी निवास बिरला, प्रकाशक—वही, मूल्य ६ रुपये, पृष्ठ संख्या १२३

पुस्तक में राजस्थान की वीरांगना कोडम दे की गाथा को उपन्यास के रूप में प्रस्तुत किया गया है। श्री लक्ष्मी निवासजी बिरला का यह दूसरा उपन्यास है। इसके पहले वे 'कहिए समय विचारी' और 'जीवन की चुनौती' नाम के निबन्ध संग्रह और 'पद्मिनी का शाप' नाम का उपन्यास हिन्दी संसार को दे चुके हैं।

कोडम दे का चरित्र अधिकांशत: एक लोकाख्यान ही है। इतिहास से सम्बद्ध इस लोकाख्यान में लेखक ने कल्पना का उसी हद तक सहारा लिया है, जिस हद तक वह कथा को प्रभावशाली बनाने के साथ-साथ इतिहास के विरुद्ध नहीं जा पाता। कोडम दे का चरित्र टाड कृत 'राजस्थान' में संग्रहीत है। इतिहास की पृष्ठभूमि में लिखे गये इस ग्रन्थ में ऐसे कितने ही चरित्र हैं, जिनको कल्पनाशील कुशल लेखक उपन्यास का रूप दे सकता है। शुद्ध इतिहास की दृष्टि से निश्चित स्वरूप के चरित्रों को उपन्यास का रूप देना कठिन होता है और कई बार ऐसे चरित्रों को उपन्यास में बदलते हुए जो काल्पनिक चरित्र या घटनाएं सहारे के रूप में प्रयुक्त की जाती हैं वे सर्वथा स्वीकार्य नहीं कही जा सकती। इस कथा के साथ ऐसी कोई बाधा उपस्थित न होने के कारण उपन्यास पर ऐसा कोई दोषारोपण नहीं किया जा सकता।

श्री लक्ष्मीनिवासजी बिरला इस समय जबकि देश में स्वार्थपरता फैली हुई है, आत्मोत्सर्ग से पूर्ण इस कहानी को उपन्यास का रूप देने के लिए धन्यवाद के पात्र हैं। लेखन शैली सहज, रोचक और सुन्दर है। मूल्य अवश्य कुछ अधिक है किन्तु आज प्रकाशन जगत में उपन्यासों का मूल्य कुछ अधिक रखने का चलन हो गया है। सस्ता साहित्य मंडल ने कदाचित उसी चलन का अनुकरण किया है।

(३) विनोबा विचार संकलन, लेखक—विश्वनाथ टंडन, प्रकाशक—गांधी शान्ति प्रतिष्ठान, नयी दिल्ली, पृष्ठ संख्या १४७, मूल्य ६ रुपये।

लेखक ने पुस्तक की प्रस्तावना में लिखा है कि "लगभग २० वर्ष पहले गांधीजी के विचारों का उन्हीं के शब्दों में परिचय प्राप्त करने के लिए मुझे निर्मल कुमार बसु द्वारा संकलित पुस्तक '*सिलेक्शन फ्राम गांधी*' बड़ी उपयोगी प्रतीत हुई थी। यह पुस्तक मेरे ऊपर एक अमिट छाप छोड़ गयी थी। अत: यह आकांक्षा हुई कि कुछ उसी ढंग की पुस्तक विनोबाजी के विचारों की क्यों न तैयार की जाये। प्रस्तुत पुस्तक उसी का परिणाम है।"

संकलनकर्ता डा० टंडन एक अध्ययनशील व्यक्ति हैं। उन्होंने विनोबा के लिखे-बोले अनेक संकलनों और पुस्तकों का अध्ययन करके उनके विचारों का विषयवार संकलन किया है जिनमें आत्मपरिचय से लगाकर विनोबा के फुटकर विचार तक आ गये हैं। जो भी व्यक्ति किसी भी विषय पर विनोबा के विचारों का संक्षिप्त परिचय प्राप्त करना चाहता है, उसको इस पुस्तिका में सभी संबन्धित विचार प्राप्त हो जायेंगे। अन्त में लेखक ने सन्दर्भ ग्रन्थों की एक सूची भी दी है, जिससे यह स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने अन्य लेखकों की विनोबा सम्बन्धी कितनी पुस्तकों का अवगाहन किया है। विनोबाकृत पुस्तकों के नाम उन्होंने नहीं दिये हैं। दामोदरदास मूंदड़ा ने भूदान से सम्बन्धित पदयात्रा काल में विनोबा के विचारों का जो पाक्षिकवार विवरण, 'भूदान गंगा' नाम से दिया था, वह इस सूची में शामिल नहीं है। विनोबा के विचारों को जानने की दृष्टि से 'भूदान गंगा' के सभी खंड बहुत महत्वपूर्ण हैं। हमारा सुझाव है कि यदि संकलनकर्ता ने उनका उपयोग न किया हो तो अगले संस्करण में उनका भी उपयोग किया जाये। पुस्तक की निर्देशिका से विचारों का स्थान ढूंढने में बड़ी सहायता मिलेगी। इस परिश्रम से पूर्ण किये गये संकलन की भूमिका श्रीमन्नारायण ने लिखी है और उन्होंने लेखक को बधाई देते हुए कहा है कि इस पुस्तक को तैयार करने में डा० टंडन ने गहरा अध्ययन और परिश्रम किया है।

☐ राजेन्द्र बाबू की आत्मकथा ☐ प्रेम की देवी ☐ विनोबा विचार संकलन
☐ धर्म समन्वय ☐ गांधी जीवन सूत्र
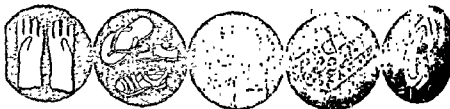
Swastik SERVES
INDUSTRY
Through a wide and varied range of rubber and P.V.C. products—for domestic and industrial use.
dependable and durable.
SWASTIK RUBBER PRODUCTS LTD.
Pune-411 003.

पत्र और पत्रांश

यूरोप का हाल

पिछले यूरोप प्रवास में यात्रा विमानों से और ठहरना होटलों में था। इस बार यात्रा रेलगाड़ियों से चली जिससे धरती की शोभा ज्यादा देख सका। सोवियत के बाहर ठहरना परिवारों के साथ हुआ और इससे वहाँ की जिन्दगी की नजदीकी जानकारी मिली।

सबसे महत्व की बात यूरोप के आर्थिक जीवन में पेट्रोल-उत्पादनों के उपयोग की लगी। सभी गाड़ियाँ, जहाज, कारखाने और घरेलू उपकरण इसकी भारी खपत करते हैं। इस बात का भान होने पर भी कि दुनिया में पेट्रोल उत्पादनों की कमी है, इनके स्रोत फिर नहीं भरे जा सकते तथा जिन देशों में दुनिया भर के लिए पेट्रोल है वे 'गलत रूप में ही सही' आज के चलन के माफिक इस शक्ति उत्पादन के मालिक और काबिज बन गये हैं, कोई कदम हालात ठीक करने के लिए उठाया जाता नहीं दीख पड़ा।

दूसरी बात आमदनी और खर्च के मामले में यूरोप और भारत के बीच अन्तर की है जो एक और दस के अनुपात में होगा। दुनिया के अमीर और गरीब लोगों के बीच की यह खाई अब तक भरी और पाटी नहीं जाती, यूरोप की सम्पन्नता एशिया और अफ्रीका के देशों की कीमत पर हुई थी। इसलिए वहाँ की चीजों और कारखानों की चमक ने मुझे आनन्द से अधिक दुख पहुँचाया।

तीसरी बात इन सब देशों में अपने जैसे लोगों से मिलने की खुशी थी। हमारे माहौल में भारी फर्क होने पर भी सादे जीवन, आखिरी और उपेक्षित आदमी के कल्याण तथा लम्बे समय में दुनिया के समूचे जीवन की भलाई के हमारे विचार एक थे। दुनिया में एकता की इन्हीं शक्तियों पर जोर देने की जरूरत है।

नई दिल्ली —देवेन्द्र कुमार

[अगस्त-सितम्बर, ७४ की यूरोप-यात्रा की रिपोर्ट से]

अन्य चीजें भी 'जनता' ब्रांड अपेक्षित

लोगों का रूप-रंग जब साबुन के अभाव में चितकबरा होने लगा तो सरकार ने कुछ रहम खाया और उस पर लगा नियन्त्रण हटा लिया। आम जनता में 'जनता' को पाकर खुशी होगी इसमें तनिक भी शंका नहीं है।

सरकार को साबुन की कमी से ही इतनी परेशानी क्यों हुई, जबकि बाजार में न गैस है न कोयला, न घी है न गेहूँ और न ही चीनी। चीनी के दाम आकाश से उतर रहे हैं। मैदा और सूजी तो भारत छोड़ गयी लगती है। वाहनों के काम आनेवाला पेट्रोल और डीजल तो अपनी कहानी सरकार की जबानी कह ही रहे हैं।

सरकार को चाहिए कि इन सब चीजों को भी 'जनता' ब्रांड में निकाले। 'जनता' साबुन, 'जनता' पेट्रोल, 'जनता' घी पाकर जनता को राहत मिल सकती है।

नयी दिल्ली —सुरेश ठाकरान

राज्यकर्ताओं को शाप

बिहार के निष्ठावान छात्रों पर होनेवाली दमनपूर्ण कार्रवाई के रोमांचक समाचारों से हृदय काँपता है। 'राजकरण में कोई किसी का पूज्य नहीं, भाई नहीं, बंधु नहीं, सिर्फ राजकरण सुचारु रूप से कैसे चले?'—यह पापदृष्टि स्वराज्य में तो नहीं होनी चाहिए थी मगर वही से तो भी शाप हमारे राज्यकर्ताओं को मिला है।

पूर्णिया —रामेश्वर पोद्दार

विनोबाजी पर लेख

यह समिति 'भूदान यज्ञ' साप्ताहिक पत्र की ग्राहक है और मैं उसका नियमित पाठक हूँ। किन्तु, अत्यन्त दुख है कि 'भूदान यज्ञ' साप्ताहिक पत्र के हर अंक में विनोबाजी के विचार व लेख नहीं प्रकाशित होते। इसका मुझे दिल से दुख है। मेरी जबरदस्त इच्छा है कि 'भूदान-यज्ञ' साप्ताहिक पत्र के हरएक अंक में विनोबाजी के लेख व विचार प्रकाशित किये जायें।

मझोंडी —विनोदशंकर पाण्डेय
मिरजापुर सर्वोदय ग्राम स्वराज समिति,

ग्वालियर में लोकशिक्षण केन्द्र का उद्घाटन

ग्वालियर में लोक-शिक्षण केन्द्र का उद्घाटन खादी सदन में आयोजित एक समारोह में खादी-ग्रामोद्योग आयोग के उपाध्यक्ष श्री टी एम. भारदे ने किया। अपने उद्घाटन भाषण में आपने लोक-शिक्षण की आवश्यकता और उसके महत्व पर विशद प्रकाश डाला।

आयोजन के आरम्भ में लोक-शिक्षण केन्द्र के जिला संयोजक श्री गुरुशरण ने केन्द्र का उद्देश्य और कार्य की रूपरेखा प्रस्तुत की। भूतपूर्व उपमंत्री श्रीमती चन्द्रकला सहाय की अध्यक्षता में सम्पन्न इस कार्यक्रम में *तख्तमल जैन, एम एन सुब्बाराव तथा खादी ग्रामोद्योग आयोग के भोपाल स्थित निदेशक श्री भट्ट भी उपस्थित रहे।* ❁

बीस साल पहले

(भूदान-यज्ञ वर्ष १, अंक ३
२७-१०-५४ के अंक से)

विश्वनाथ मंदिर-प्रवेश का निर्णय

गत २६ सितम्बर को अखिल भारत हरिजन-सेवक संघ का वार्षिक अधिवेशन श्रीमती रामेश्वरी नेहरू की अध्यक्षता में हुआ। इस अधिवेशन में कई महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव स्वीकृत हुए।

गत १७-२-५४ को (रविदास-जयन्ती) के अवसर पर काशी-विश्वनाथ मंदिर में प्रवेश करनेवाले हरिजनों को बधाई दी गयी।

अमर हुतात्मा

गत २० अक्टूबर की रात में रायपुर जिले के सुप्रसिद्ध समाजवादी नेता ठाकुर प्यारेलालसिंहजी की एकाएक मृत्यु हो गयी। आप मध्यप्रदेश के एक कर्मठ कार्यकर्ता थे। मृत्यु के पहले वे उसी दिन ४०० मील की पैदल-यात्रा करके जबलपुर पहुँचे थे और वहाँ चलनेवाले सर्वोदय सम्मेलन में डेढ़ घंटे तक भाषण भी दिया था। उसी दिन रात में अचानक उनकी मृत्यु हो गयी। उनकी उम्र ६५ साल की थी। फिर भी वे प्रतिदिन १५-२० मील पैदल चलते थे। ❁

R.N. 2091/57 BHOODAN YAGYA 21 OCT 1974 Regd. No. D- (C) 266

तीन नम्बर तक विधान-सभा भंग न होने पर समान्तर विधान सभा

जयप्रकाश नारायण द्वारा संघर्ष के अगले चरण की घोषणा

पटना में गांधी सरोवर के निकट तीन लाख की महती जन सभा में जयप्रकाश नारायण ने संघर्ष के अगले कदम की घोषणा करते हुए कार्यक्रम दिया है कि—

कार्यालय ठप,—सरकार ठप,—जो तीव्रतर कार्यक्रम चला है वह जिलों में अधिक दृढ़ता व निश्चय से चलता रहे।

"पचायत से प्रखंड स्तर तक समान्तर जनता सरकार की स्थापना हो, याने स्थानीय लोग अपनी समस्याओं को हल करने की व्यवस्था स्वयं करें, सरकारी तंत्र का सहारा एकदम छोड़ दें। वे भूमिकर भी स्वयं वसूल करें।

जनता का ग्राम चुनाव यदि ३ नवम्बर तक विधान सभा का विघटन नहीं होता तो आन्दोलन की ओर से घोषणा करके विधान सभा मतदान क्षेत्रों में 'जनता चुनाव' कराकर समान्तर विधान सभा बनायी जायगी। चुनाव के लिए प्रतिनिधि खड़े करने का काम भी छात्र व जन संघर्ष समितियां मिल कर तय करेंगी। यह कदम उस प्रक्रिया की प्रथम कड़ी है जिसमें जनता स्वयं अपने प्रतिनिधि खड़े करेगी। इन चुनावों के लिए चुनाव आयोग की घोषणा ४ नवम्बर को कर दी जायेगी।

सचिवालय घेराव : निश्चित दिन जो बाद में घोषित किया जायेगा, जिले-जिले से बड़ी संख्या में लोग पटना आवें व सचिवालय पर २४ घंटे का घेराव करें। मन्त्रियों व विधायकों के निवास का भी घेराव करें। लोगों से अपना भोजन साथ लाने को कहा गया है।

बिहार में आंदोलन का बढ़ता समर्थन

मथुरा में अगस्त में 'बिहार जनआंदोलन सहयोग समिति' गठित हुई। समिति की कई बैठकों में विभिन्न उपसमितियां बनी और तीन साथियों ने बिहार जाना तय किया। तमिलनाडु में पूर्ण नशाबंदी किये जाने पर वहां की सरकार को धन्यवाद दिया गया।

छतरपुर में छात्र संघर्ष समिति ने एक मौन जुलूस निकालकर प्रदर्शन किया।

बरेली में व्यक्तिगत संपर्क, सभाओं आदि से जन-जागरण चला। जनसंघर्ष समिति तथा उसकी कार्यकारिणी बनायी गयी। आन्दोलन के समर्थन में परचे छाप कर वितरित किये गये।

खंडवा में गांधी चौक में १४ युवकों ने उपवास रखा और जादवजी मारू की अध्यक्षता में आन्दोलन के समर्थन में हुई एक सभा में यदुनन्दन शर्मा, अनोखीलाल अरभरे और रामनारायण उपाध्याय ने विचार व्यक्त किये।

उज्जैन में गांधी शान्ति प्रतिष्ठान के तत्वावधान में 'बिहार आन्दोलन' के समर्थक युवकों का एक विशाल जुलूस निकला। छत्री चौक पर एक सभा भी हुई। जनजागरण समिति का सहयोग सराहनीय रहा।

जे० पी० का इस सप्ताह राजस्थान प्रवास

अपने जन-जागरण अभियान में जे. पी. २५ अक्टूबर को जयपुर पहुंच रहे हैं। २६ अक्टूबर को छात्रों के जुलूस के बाद वे जनसभा को सम्बोधित करेंगे। इस अवसर पर उन्हें एक लाख रुपये की थैली भेंट की जायेगी।

'जयप्रकाश' प्रकाशित

डा० लक्ष्मीनारायण लाल की लिखी नवीनतम पुस्तक 'जयप्रकाश' (इस पुस्तक का एक अंश 'भूदान-यज्ञ' के गांधी जयन्ती विशेषांक में इसी माह दे चुके हैं) मैकमिलन एण्ड कम्पनी से प्रकाशित हो गयी है। पुस्तक जे. पी. के व्यक्तित्व और कृतित्व का एक प्रामाणिक दस्तावेज है। इसे गांधी पुस्तक घर, १, राजघाट कालोनी, नयी दिल्ली-१ से मंगाया जा सकता है जो ४५ रुपये मूल्य की इस पुस्तक पर प्रचार के लिए इस समय १० प्रतिशत छूट दे रहे हैं।

अप्रैल से बीकानेर तथा चितौड़ जिलों में नशाबंदी

राजस्थान सरकार क्रमिक तौर पर पूरे राज्य में नशाबन्दी लागू करने पर गंभीरतापूर्वक विचार कर रही है। मुख्यमंत्री श्री हरदेव जोशी ने यहां विरोधी दलों की बैठक में बताया कि अप्रैल ७५ तक राज्य के दो और जिलों में पूरी शराबबंदी लागू कर दी जायेगी। ये दो जिले चित्तौड़ व बीकानेर हैं। अभी राज्य के ६ जिलों में और १ जिले की छः तहसीलों में ही शराबबंदी लागू है। विरोधी दलों ने कहा कि राज्य में पूर्ण नशाबंदी नहीं की गयी तो इसके गम्भीर परिणाम होंगे।

गत वर्ष राजस्थान में गोकुल भाई भट्ट के नेतृत्व में सर्वोदय कार्यकर्ताओं द्वारा व्यापक स्तर पर शराबबंदी आन्दोलन चलाया गया था और शराब के सरकारी गोदामों पर धरना देकर बड़ी संख्या में गिरफ्तारियां दी गयी थीं। बाद में प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी के आश्वासन पर आंदोलन स्थगित कर दिया गया था। गत माह पवनार-आश्रम (वर्धा) में राजस्थान के मुख्यमंत्री ने आचार्य विनोबा भावे से भेंट की थी और राजस्थान में शराबबंदी के बारे में विचार-विमर्श किया था।

वार्षिक शुल्क—१५ रु० विदेश ३० रु० या ३५ शिलिंग या ५ डालर, एक अंक का मूल्य ३० पैसे।
प्रभाष जोशी द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं ए० जे० प्रिंटर्स, नई दिल्ली-१ में मुद्रित।

भूदान यज्ञ

सर्व सेवा संघ का साप्ताहिक मुख पत्र
नई दिल्ली, सोमवार, २८ अक्टूबर '७४
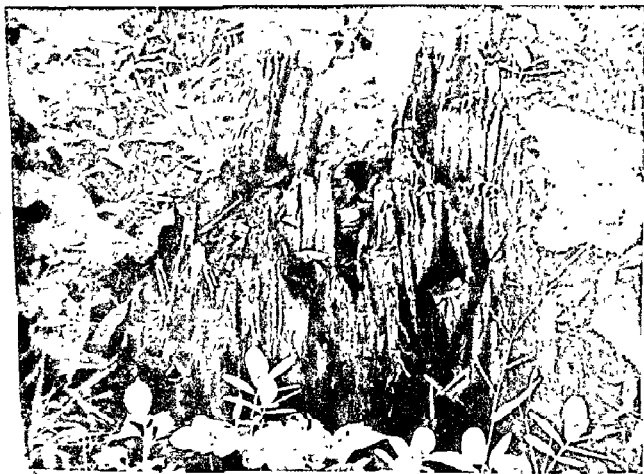
विनाश हमारी वन-सम्पदा का (रपट पृष्ठ ७ पर)

पत्र और पत्रांश

बिहार में अगला चरण

३-४-५ अक्टूबर को बिहार की जनता ने स्वेच्छापूर्वक और शान्तिपूर्ण तरीके से जिस प्रकार 'सपूर्ण बद' के कार्यक्रम को सफलतापूर्वक सपन्न किया वह अभूतपूर्व है। इस प्रकार जनता ने तो अपनी ओर से मौजूदा जनविरोधी सरकार और विधानसभा के खिलाफ अपना फैसला दे दिया है। स्पष्ट है कि अब भी अपनी कुसिया न छोडने वाले मत्री और विधायक जनता के प्रतिनिधि नही रहे है।

अगले चरण का कार्यक्रम इस प्रकार होगा : (१) प्रखडो तथा जिला केन्द्रो मे सरकारी दफ्तरो को ठप करने का कार्यक्रम तब तक चलता रहेगा जब तक मौजूदा सरकार और विधानसभा भग नही हो जाती। (2) इसी प्रकार 'जनता सरकार' का जो नारा व कार्यक्रम दिया गया था उसे आगे बढ़ाया जाये।

नये कार्यक्रमो को भी हाथ मे लिया जायेगा जिनमे ४ नवम्बर को एक बार फिर सारे प्रदेश की जनशक्ति का विराट प्रदर्शन पटना मे रखा गया है। उस दिन प्रदेश के हर जिले से लोग पटना पहुचे। दिन के १२ बजे से दूसरे दिन तक मत्रियो और विधायकों का घेराव रहेगा। आनेवाले लोग अपने साथ अपना खाना-चना, चबैना, सत्तू, चिउडा—साथ लेकर आवें।

४ नवम्बर के विराट प्रदर्शन के बाद भी सरकार और विधानसभा भग नहीं होती तो जनता की ओर से अपनी 'विधान सभा' के चुनाव की कार्रवाई की जायेगी।

कदम कुआ, —सिद्धराज ढड्ढा

पटना-३ सयोजक, सघर्ष कार्यालय

राजस्थान में शराबबन्दी के प्रति उपेक्षा का रवैया

सुखाडिया सरकार की घोषणा के अनुसार राजस्थान मे पूर्ण शराबबन्दी सन् १६७२ की पहली अप्रेल से लागू हो जानी चाहिए थी। परन्तु ज्योहि अप्रेल, ७२ नजदीक आया, तत्कालीन बरकतुल्ला सरकार आर्थिक कठिनाई की दलील का बहाना बनाकर पूर्ण शराबबन्दी के वायदे से मुकर गयी। राज्य सरकार के वचन-भग के प्रायश्चित-स्वरूप १६७२ की मई मास की १६ तारीख मे मैंने आमरण अनशन प्रारम्भ किया जिसके साथ-साथ ही प्रदेश मे शराबबन्दी आदोलन भी शुरू हुआ। हमारी प्रधानमन्त्री के बीच बचाव के आश्वासन पर मैंने बारहवें दिन अनशन छोडा। पर न तो प्रधानमन्त्री की ओर से और न राज्य सरकार की ओर से शराबबन्दी की दिशा मे कोई खास कदम उठा, इसलिए फिर से २६ जनवरी, ७३ से अजमेर मे शराबबन्दी सत्याग्रह प्रारम्भ हुआ। मैंने पूज्य विनोबाजी की सलाह के अनुसार २५ दिसम्बर से ६ दिन का उपवास किया और १२ फरवरी से अजमेर डिस्टलरी पर सीधी कार्रवाई शुरू हुई जिसमे प्रदेश के सैकडो भाई बहनो को जेल यातना सहन करनी पडी। इसी बीच प्रधानमन्त्री ने राजस्थान मे शराबबन्दी के प्रश्न को लेकर केन्द्रीय मन्त्री श्री राजबहादुरजी के सयोजकत्व मे एक समिति नियुक्त की। इस कमेटी के गठन के समय ही मैंने समिति के कार्यक्रम तथा समय मर्यादा के बारे म प्रश्न उठाया था। मुझे आश्वासन दिया गया था कि कमेटी जल्दी से जल्दी रिपोर्ट तैयार करेगी और यह भी कहा था कि निम्नांकित मुद्दे जो प्रधानमन्त्री के साथ ६ अगस्त, ७३ के दिन चर्चा होकर तय हो चुके, उन ७ मुद्दो पर निर्णय पहले ही ले लिया जायेगा। किन्तु राजबहादुर कमेटी ने जो रिपोर्ट तैयार कर प्रधानमन्त्री को दी है वह तो अत्यन्त निराशाजनक है।

रिपोर्ट को अन्तिम रूप देने के पहले श्री राजबहादुर तथा राजस्थान के मुख्य मन्त्री श्री हरिदेव जोशी शराबबन्दी के प्रश्न को लेकर क्रमश. १६ जुलाई तथा २७ अगस्त ७४ को पूज्य विनोबाजी से पवनार आश्रम मे मिले थे। पूज्य विनोबाजी ने उनको जो राय दी, यह बहुत ही दुख के साथ कहना होगा कि, रिपोर्ट मे उसका उल्लेख भी नही है।

रिपोर्ट की सिफारिशो को मान्य करते हुए हमारे मुख्यमन्त्री श्री हरिदेव जोशी ने गाधी जयन्ती २ अक्टूबर के दिन चुरू तथा नागौर जिलो मे और वह भी अप्रेल, ७५ से पूर्ण शराबबन्दी लागू करने का एलान किया है, तथा १६७६ की अप्रेल मे और दो जिले शराबमुक्त किये जायेंगे, ऐसा भी कहा है।

उस ऐलान से वस्तुस्थिति यह बनती कि १६७४ तक सारे राजस्थान के २६ जि मे से सिर्फ १० जिले ही शराबमुक्त हो जबकि विनोबाजी की आग्रहपूर्वक सलाह कि १६७३ तक सारे राजस्थान मे पूर्ण शरा बन्दी कर दी जानी चाहिए। इससे सा जाहिर होता है कि राज्य सरकार ने रा स्थान मे पूर्ण शराबबन्दी करने की विनोबा की सलाह को अमान्य कर दिया है और य शीघ्रातिशीघ्र निश्चित अवधि मे राज्य मे पू शराबबन्दी लागू करने की दिशा मे कारग कदम उठाना नहीं चाहती। राज्य सरकार घोषणा सर्वथा हास्यास्पद और निराशाजन है। अब यह जाहिर हो गया है कि रा सरकार शराबबन्दी जैसे नैतिक तथा कल्या कारी कार्यक्रम के प्रति केवल गम्भीर ही न है, बल्कि उसके साथ मखौल भी कर रही है जो राज्य को सर्वनाश की ओर धकेल र है और आदोलन के लिए प्रे रित कर रही जिसके बारे मे यह स्मरण रखना चाहिए इसके परिणाम भयंकर हो सकते हैं।

जयपुर —गोकुल भाई भ

गांधी के नाम पर

अहिंसा को सिद्धान्त से उतारकर समाज के क्षेत्र मे क्यो नाहक लाया जाता है? गाधी जो महात्मा थे, गये, उनका जमाना गया। अब गाधी के नाम पर इंदिराजी हैं और उनके पास राज-भर की फौज और पुलिस है। फिर अहिंसा का सवाल कहा रह जाता है? सचमुच इस सवाल की सगति राजनीति मे नही है। राजनीति सघर्ष मे सास लेती है, जहा एक पक्ष दूसरे को खत्म देखना चाहता है। वहा आप अहिंसा की बात करते है तो शायद इसीलिए कि शस्त्र आपके पास है नही। लेकिन क्या सिर्फ निशस्त्रता के नाम पर कोई अहिंसक हो जाता है?

जयप्रकाशजी के आन्दोलन के बारे मे यही कहा जा रहा है। गफूर साहब ने कहा है, और फासिस्त शब्द का उपयोग खुल्लम-खुल्ला हो रहा है। इस तरह बात घपले मे पड गयी है और जरूरी है कि वहा से निकल कर असल मुद्दे को साफ-साफ केन्द्र मे लाया जाये। आनुषगिक और किनारे की बातो किनारे किया जाये। देश को अपने भाग्य

भूदान-यज्ञ

सम्पादक
राममूर्ति : भवानी प्रसाद मिश्र
कार्यकारी सम्पादक : शारदा पाठक

वर्ष २१ २८ अक्टूबर, '७४ अंक ४

१६ राजघाट, गांधी स्मारक निधि, नई दिल्ली-११०००१

इन्दिरा गांधी हैं

सम्भावना है। दलों के द्वन्द्व में अटके नहीं रहना है।

एक बात खुलकर मान लेनी होगी पिछले १०-१२ वर्षों में भारत का गरीब और गरीब हुआ है, अमीर-गरीब के बीच की चौड़ाई बेहद बढ़ी है। यह विश्व बैंक के विकास अनुसंधान केन्द्र और विश्वविद्यालयीन विकासाध्ययन संस्थान की गवेषणाओं का निष्कर्ष है। अर्जेन्टिना, मेक्सिको और पियोरिका जैसे अत्यल्प देश इस ह्रास में भारत के साथ हैं। वही भारत जो एक अरसे से 'गरीबी हटाओ' अभियान के तले चलाया जाता रहा है। शब्दों के हेर-फेर की जरूरत नहीं है। दूसरे बहानों की भी गुंजाइश नहीं है आधे मन से नहीं पूरे मन से कांग्रेस को यह स्वीकार कर लेना चाहिए कि उसकी अद्भुमन्य समाजवादी और प्रगतिवादी नीतियां सही फल नहीं दे सकी हैं। दिया है तो उन्होंने कुछ उलटा फल ही दिया है। चाहा अवश्य भला गया है, किया भी भरसक भला ही गया है। दोष नीयत को नहीं दिया जा सकता। पर नीतियों को दोष से बरी मानना कोरा हठवाद होगा।

शासन कांग्रेस का है। कम्युनिस्ट पार्टी सहारे पर है, पर गिनती में वह विरोधी पार्टी ही है। कांग्रेस एक तिहाई से कम मतों के बल पर शासनस्थ है। दो तिहाई के प्रति इस तरह सदन के भवन में वह अल्पमत, दायी बनती है, उसके बाद लगभग उस ५० प्रतिशत के प्रति वह अभियुक्त है जिसने मतदान में भाग नहीं लिया। यों कुल मिलाकर यह छठवां हिस्सा आज न्यायतः इस स्थिति में है कि वह देश के सामने अपनी सफाई दे और यदि उस सफाई से राष्ट्र को संतोष न हो तो स्वेच्छा से अपने पद से नीचे उतरे।

इन पंक्तियों का लेखक कोई अर्थ-शास्त्री नहीं। लेकिन सरकार का खर्च बेतहाशा बढ़ता ही गया है। हर सरकारीकरण में वह व्यय-मान ऊँचा चढ़ आया है। माना गया था कि उसमें निम्न वर्ग को सुविधा होगी। पाया गया है कि निम्न ही उसमें निम्नतर हुआ है। दफ्तर बढ़े हैं और कारकुन बढ़े हैं और उपभोक्ता एवं आवश्यक वस्तुओं के बीच का चक्कर बढ़ा है। नये-नये फार्म निकले हैं उन्हें भरिये और लेकर लटकते रहिये। बस्

पर क्यू है और किसी की लम्बाई का अंत नहीं है।

यह हाल है स्थितियों का। इधर धड़ाधड़ खबरें मिलनी शुरू हुई हैं कि तस्कर पकड़े गये हैं। लाखों-लाख का काला-धन आनन-फानन सफेद बना है। जमाखोर नफाखोर छापों के मारे डरे-डरे फिर रहे हैं और नागरिक को लगता है कि वाह खूब हो रहा है। चारों ओर से सुनते हैं कि गेहूं १२० रुपये क्विंटल पर आ गया है। बीबी आकर खबर देती है कि २५० रुपये बोरी मांगा जा रहा है। पति महाशय कहते हैं कि राशन का गेहूं सड़ा है तो लाओ भई वही मंगाओ। आखिर पेट तो भरना ही है और मरना नहीं है। पर मंगाने वक्त मालूम होता है दूकानदार से कि जी नहीं, गेहूं है नहीं। मिन्नत-समाजत पर मालूम होता है कि रात के दो बजे आपके घर एक बोरी पहुंचा दिया जा सकता है लेकिन दाम . ।

हाजी मस्तान घर लिये गये हैं। यूसुफ पटेल दिल्ली जेल ले आये गये हैं। बखिया साहब का भी कुछ ऐसा ही हाल है। मैं सोचता हूं कि इन खबरों को बीबी को दूं तो वह इन्हें चाट कर सन्तुष्ट हो जायेगी, या पाटकर कुनबे का पेट पार लेगी?

मुझे नहीं मालूम! बड़ी बातें सुन सकता हूं, कह सकता हूं लेकिन सामान्य नागरिक की मुसीबत नहीं जानता है। क्या बड़ी योजनाओं और बड़ी नीतियोंवाले नेता और अफसर तनिक उसे भुगतकर देखना चाहेंगे? जरा स्वाद लेकर देखें तो फिर मालूम होगा कि उनके बड़े शब्द अगर लोगों को पोले और खोखले लगते हैं तो क्यों?

हिंसा से कुछ नहीं होता। रचनात्मक कुछ होगा तो अहिंसा से ही संभव है। संघर्ष में हिंसा की गंध है। मैं जैन हूं, उस गंध से मुझे नफरत है। उस डर और नफरत के आधार पर कहना चाहता हूं कि कुल मत क्षमता के १६ प्रतिशत के आधार पर बनी यह सरकार देश को विश्वास में ले, परामर्श में ले और दलोत्तीर्ण राष्ट्रपति अपने विशेषाधिकार से एक राष्ट्रपरिषद का संयोजन करें। वहां इन्दिरा गांधी होंगी ही। जयप्रकाशजी और दूसरों को कहा जाये कि आओ देश के साथ मिलकर तुम सभी लोग सोचो कि राष्ट्र का क्या होना है और राष्ट्र को क्या करना है? देश का वह तटस्थ संत विनोबा ऐसे समय अपनी ब्रह्म-विद्या और अध्यात्म की अगम पूंजी के साथ देश के विशेष काम आ सकता है।

शायद राष्ट्र परिषद की यह कल्पना व्यर्थ लगे, लेकिन सुनी जा रही बातें संकेत देती हैं, उन काली घटाओं का जो घुमड़ आने को तैयार की जा रही हैं। संभाव्य सरकारें क्या सचमुच होंगी? और उनके बीच नागरिक का क्या हाल बनेगा? इत्यादि इत्यादि

इन संभावनाओं को भरसक बचाना होगा। महनाओं के बस में ५७ करोड़ के भाग्य को पड़े रहने देना नहीं होगा।

क्या राजनीतिक दल, कम से कम वे जो शासन से वंचित हैं, कह सकेंगे कि राष्ट्र परिषद के इस प्रस्ताव को मान्य कीजिये। नहीं तो हम अलग खड़े हैं, आपके काम में बाधा देंगे, और आप इस भारतीय लोकतंत्र को अपने १६ प्रतिशत के बल से सहर्ष चलाये जाइये। आपका अन्तःकरण का न्याय यही कहता है तो भगवान आपकी सहायता करे। भगवान की ओर से वैसी सहायता न आती दीखे बल्कि कुछ अघट घटना लगे तो कृपया हमें दोष न दीजिये।

मुझे लगता है कि संघर्ष के शब्द का घोष शायद उतना प्रभाव उत्पन्न न करे जितनी यह दर्द और सहानुभूति की वाणी कर सकेगी।

—जैनेन्द्र कुमार

प्रयास किया। विद्यार्थियों का यह आंदोलन संघर्षात्मक स्वरूप ले चुका था। संघर्ष को किस प्रकार अहिंसक बनाया जाये इसकी कोशिश सर्वोदय के साथियों ने जे० पी० के नेतृत्व में की।

ऐसी स्थिति में एक चौथा भेद खड़ा हो गया कि 'सर्वथा अविरोधेन' की जो भूमिका विनोबाजी के नेतृत्व में सर्वोदय-कार्य की रही थी और जिसमें यह बात सामने रखी गयी थी कि जिसका हम परिवर्तन करना चाहते हैं उनका भी सहयोग लेकर सब स्थिति और परिस्थिति बदलने का प्रयास करें, उससे इस नये कदम का मेल मिलता नहीं दीखता था। इसलिए यह कहा गया कि जैसे गांधीजी ने छुआछूत मिटाने के लिए बड़ी जातिवालों को साथ लेकर उन्हीं को इस बुराई को मिटाने में लगाया और विनोबाजी ने जमीन की विषमता को समाप्त करने के लिए जमीनवालों का ही सहयोग प्राप्त करने की कोशिश की, उसी प्रकार शासन में जो सत्ता केन्द्रित हो गयी है और जिसके केन्द्रीकरण से भ्रष्टाचार बढ़ता है, उसके विकेन्द्रीकरण और भ्रष्टाचार की समाप्ति के लिए भी शासन को विश्वास में लेकर ऐसा रास्ता निकालना उचित होगा जिसमें संघर्ष की भूमिका न खड़ी हो। परन्तु इसके विपक्ष में दूसरी ओर जो समस्याओं से सीधे जूझ रहे थे, उनका स्पष्ट अनुभव था कि बिहार की परिस्थिति में और कुल मिलाकर देश में सत्ता का जिस प्रकार केन्द्रीकरण हुआ है और जिस सत्ताधारी दल का करीब-करीब सारे देश का एकछत्र राज्य पिछले २७ सालों से चला आ रहा है और जिसके कारण उसमें केन्द्रीकरण की वृद्धि होती चली गयी है, यदि उसे बदलने के लिए जनता कुछ तीव्र कदम उठाती है तो उसे हम अहिंसक बनाने का प्रयास तो अवश्य कर सकते हैं, परन्तु ऐसे संघर्ष को एकदम टालने की कोशिश करना उचित नहीं होगा। उनके अनुसार न तो सर्वोदय इस प्रकार के संघर्ष के लिए लोगों को उकसाता है और न संघर्ष के कार्यक्रम ही बनाता है, परन्तु यदि परिस्थिति में संघर्षों की स्थिति व्याप्त है और लोगों में मानसिक क्षुब्धता तथा त्रस्तता है तो उनकी यह क्षुब्धता तथा त्रस्तता असहायता या हिंसा का रूप न ले, इसका उपाय करना है क्योंकि यह लोकशक्ति जागरण के लिए अत्यन्त आवश्यक है। इसमें किसी दल विशेष अथवा सत्ताधारी व्यक्ति अथवा पक्ष के विरोध की बात नहीं है, वरन् एक पद्धति (सिस्टम) के कारण उत्पन्न होनेवाले नतीजों को ऐसा रूप देना है जिससे वह लोगों की बात समझ-बूझकर अपने को दुरुस्त करने की ओर लगे। इस प्रकार संघर्षात्मक आन्दोलनों में सर्वोदय की भूमिका सहायक मात्र रहती है, मूल अभिक्रम आम-आदमी का ही माना जाता है। वैसे यह भी ऐसा कार्य है जिसे व्यापक रूप से सब जगह लागू करने के लिए बहुत बड़ी नैतिक शक्ति की आवश्यकता बनी रहेगी। *यदि ऐसा व्यक्तित्व या नेतृत्व सामने न आये* जो जनता की क्षोभ वृत्ति को अहिंसक बनाये रखने के लिए प्रेरित करता रह सके तो ऐसे आन्दोलन स्वाभाविक रूप से उग्र हो जाते हैं।

चार प्रकार : यह संघर्षात्मक कहे जानेवाला आन्दोलन उन कार्यक्रमों से थोड़ा भिन्न है जिनका उल्लेख सेवाग्राम के सम्मेलन में हुआ था और जिनमें स्थानीय समस्याओं के अहिंसक हल में लोकशक्ति का उपयोग करने की बात थी। परन्तु यहां भी हमें उस पूरक भाव को समझने का प्रयास करना चाहिए जो *उन चारों के अहिंसक कार्यक्रमों में है जिनका* उल्लेख ऊपर किया गया है—१ सस्थात्मक (स्थावर), २ प्रचारात्मक (जंगम), ३ स्थानीय समस्याओं का तात्कालिक हल (सहयोगात्मक), ४ तात्कालिक समस्याओं का हल (संघर्षात्मक)।

इन चारों ही ऊपर के कार्यक्रमों में अहिंसा की भूमिका में कोई कमी नहीं है और लोकशक्ति के जागरण का विचार भी परिपूर्ण है। जो भी कार्य हो उसमें लोगों को दूसरों पर निर्भर होने के बजाय अपनी ही शक्ति के आधार पर आगे बढ़ना है, यह रास्ता निकालना है। यह हमेशा अहिंसात्मक रहकर ही हो सकता है, सभीका विश्वास है।

बिहार आंदोलन में जो स्थानीय अभिक्रम जागृत हुआ है और जिसे बढ़ाने के लिए जयप्रकाशजी कार्यरत हैं, उसके सम्बन्ध में यदि किसी को ऐसा लगता है कि इस तरीके से समस्याओं का हल नहीं हो पायेगा अथवा हिंसा पनप सकती है, वे वहां की स्थानीय परिस्थिति देखें-समझें। जो काम जयप्रकाशजी कर रहे हैं, उसके बारे में यह भी विचारें कि *अहिंसा के क्षेत्र में भिन्न-भिन्न प्रकार के प्रयोग* करने की पूरी छूट है और उन प्रयोगों से ही हमें रास्ता मिलेगा। *यह आवश्यक नहीं है कि* जो प्रयोग एक जगह कारगर या असफल हुआ, वह दूसरी जगह भी वैसा ही हो। जिन सिद्धान्तों का हम बराबर अनुसरण करना चाहते हैं, वे भी परिस्थितियों के अनुरूप *बाहरी शक्ल में बदलते ही हैं,* यद्यपि उनकी आत्मा वही बनी रहती है। गांधीजी ने अपने जीवन को 'सत्य के प्रयोग' का नाम दिया है, अर्थात् नित नवीनता और नये अनुभव उसमें निहित हैं इसलिए पूज्य विनोबाजी ने कहा कि हमको सत्य, अहिंसा और संयम इन तीनों को ध्यान में रखते हुए जो और जिस काम का प्रयोग करना हो उसकी पूरी छूट होनी चाहिए। उसमें एक-दूसरे के प्रयोग के बारे में कोई ऐसी बात न करें कि जिसमें एक-दूसरे के प्रति अविश्वास की झलक दिखायी दे। इसलिए मानना चाहिए कि हमारे जो भी *व्यक्ति या समुदाय प्रयोग कर रहे हैं* वे अपने को अहिंसा की कसौटी पर कसते हुए और परिस्थिति से जूझते हुए कर रहे हैं। अपनी भूमिका के अनुसार अपने को जिस प्रकार के प्रयोग में लगाने का स्वधर्म समझ में आये, *उसमें लगना चाहिए, परस्पर विरोध की* बात नहीं आनी चाहिए।

यह भी आवश्यक नहीं है कि बिहार में जैसे प्रयोग हो रहे हैं, वैसे ही सब जगह लागू किये जायें। बिहार में जिस महान् नेतृत्व में *जो प्रयोग सफल होंगे, उनके आधार पर बाद* में दूसरे स्थानों पर भी कार्य किया जा सकेगा, यह ठीक है, परन्तु अभी ऐसी कोई स्पष्ट रूप-रेखा नहीं बनी है जिसके आधार पर संघर्षात्मक वृत्ति से सभी जगह लोकशक्ति को *प्रयुक्त किया जा सके। हम सभी को सहानु*भूतिपूर्वक भिन्न-भिन्न प्रयोगों को देखना समझना चाहिए। उसमें अपनी समझ में जितना आता है और जिसे हम अपनी मन की और मस्तिष्क की भूमिका में उचित मानते हैं *उसमें लगा रहना चाहिए, आगे बढ़ना चाहिए।* 'परस्परं भावयन्त श्रेयः परं अवाप्स्यथ' के सिद्धान्त पर ही हम आगे बढ़ सकते हैं। न तो हम उनको नीचा मानें जो हमारी विशिष्ट प्रकार की भूमिका से भिन्न हैं और न किसी को हमारे अपने प्रकार के काम में लगने पर ही मजबूर करें। ❖

केवल निर्णय वनों को बचा नहीं पायेंगे

उत्तर प्रदेश की वननीति में परिवर्तन के लिए सरकार, जनता और वनों के ठेकेदारों तक अपना निवेदन पहुंचाने के लिए अनिश्चितकालीन उपवास पर बैठे सुन्दरलाल बहुगुणा ने १८ अक्टूबर को मुख्यमन्त्री के आश्वासन पर उपवास तोड़ दिया। वे इसी तीन अक्टूबर को उत्तरकाशी के हनुमान मंदिर में उपवास पर बैठे थे।

मुख्यमन्त्री हेमवतीनन्दन बहुगुणा ने सर्वोदय कार्यकर्ता सुन्दरलाल बहुगुणा से इससे पहले भी उपवास तोड़ने की अपील करते हुए उन्हें वननीति पर बातचीत करने के लिए लखनऊ आने का निमन्त्रण दिया था। मुख्यमन्त्री ने उन्हें अपना संदेश बेतार के तार से उत्तरकाशी के जिलाधीश की मार्फत पहुंचाया था। तब भी बहुगुणा ने तार के जवाब में कहा था कि 'मेरा आपकी सरकार पर विश्वास ही नहीं, आत्मविश्वास तक है, लेकिन मैं व्यापारी नहीं हूं लोकसेवक हूं। उत्तर प्रदेश की वननीति को बदलने का निर्णय आप खुद लें, मैंने यह उपवास सरकार से किसी तरह की सौदेबाजी करने के लिए नहीं किया है।'

अब मुख्यमन्त्री के द्वारा दिये गये आश्वासन के बाद यह माना जा सकता है कि उपवास की जगह में एक सौ मील दूर लखनऊ तक उनका 'निवेदन' पहुंच गया है। जनवरी से नवम्बर-अक्टूबर के दौरान उत्तराखंड के गढ़वाल, टिहरी, और कुमाऊं वृत्तों के जंगलों की नीलामी फिलहाल स्थगित करके मौजूदा वननीति को बदलवाने की अपनी राय जाहिर कर दी है। रही बात ठेकेदारों की—वे उत्तराखंड के जंगलों की बेतहाशा कटाई से होनेवाले फायदे का एकाएक छोड़ देना पसन्द नहीं करेंगे। फिर भी सुन्दरलाल बहुगुणा बहुत धीरज से काम लेकर ठेकेदारों से भी बराबर अपील कर रहे हैं।

लेकिन क्या मुख्यमन्त्री की अपील और बातचीत का न्योता सरकार तक निवेदन पहुंच जाने का सबूत माना जा सकता है? सुन्दरलाल बहुगुणा अब तक सरकार से लगातार बातचीत करते रहे ही हैं। उधर उत्तराखंड में छिट-पुट तौर पर चिपको आंदोलन चलता रहा है और इधर सरकार से वननीति को बदलने के लिए बातचीत। आंदोलन का जगह-जगह प्रसार और बातचीत की जिम्मेदारी काफी हद तक सुन्दरलाल बहुगुणा ने ही उठायी है। वननीति में परिवर्तन और चिपको आंदोलन के प्रचार के लिए उन्होंने पिछले साल पूरे उत्तराखण्ड में १२० दिन की पदयात्रा भी की थी। फिर उन्हीं की प्रेरणा से उत्तराखण्ड के छात्रों ने सर्वोदय मित्रों की एक कोने से दूसरे कोने तक पदयात्रा की।

पिछले दो सालों में गोपेश्वर और रामपुर फाटा के जंगलों में चिपको आंदोलन की शानदार जीत हुई थी। पेड़ों से लिपटकर

सुन्दरलाल बहुगुणा

ही पेड़ बचा लिये गये थे—गांववालों की निगरानी के कारण ठेकेदारों के एजेंट जंगल नहीं पहुंच पाये थे। रामपुर फाटा में पिछले दिसम्बर में ठेकेदारों ने चार में पांच अंगू के पेड़ काट भी लिये लेकिन फिर लोगों के तगड़े विरोध के कारण वे उन्हें जंगल से बाहर नहीं ला पाये थे। चिपको आंदोलन के लिए लोगों का बढ़ता हुआ उत्साह देखकर राजनैतिक दलों को भी उसका नोटिस लेना पड़ा, वे भी प्रदेश की वननीति पर सोचने लगे, ऐसी वन नीति पर जो वनवासियों की ओर पीठ किये है और बड़े-बड़े ठेकेदारों की ओर हाथ बढ़ा रही है। जोशीमठ के क्षेत्र प्रमुख साम्यवादी गोविन्दसिंह नेगी ने सर्वोदय कार्यकर्ताओं के साथ उस इलाके का दौरा कर अपने ढंग से लोगों को जगाने की कोशिश की। धीरे-धीरे कांग्रेस के लोग भी आंदोलन से आने लगे। स्वभाव से गैर-राजनैतिक सुन्दरलाल बहुगुणा का आंदोलन में राजनैतिक मंशों की गंध आने लगी।

इस साल मार्च में जोशीमठ तहसील में तिब्बत से सटा रैणी सुरक्षा का जंगल कटने जा रहा था। जब वे नीचे उसे काटने के उत्साह वाला था। जब गांव के पुरुष मुआवजा लेने कामों से जिला मुख्यालय तक गये थे। गांव की औरतों ने ठेकेदार के एजेंट और मजदूरों को रोक कर जिस बहादुरी से जंगल बचाया, उसकी खबर हेमवतीनन्दन बहुगुणा को भी लग गयी थी। उस घटना के तुरन्त बाद सुन्दरलाल बहुगुणा 'चिपको' आंदोलन के अन्य साथियों के साथ उनसे मिले थे। मुख्यमन्त्री ने यह कहते हुए कि 'उत्तराखण्ड में पेड़ों की कटाई बन्द हो ही जाना चाहिए' रैणी के जंगल को काटने के आदेश रद्द करवा दिये। उसके बाद उन्होंने एक और बयान में 'चिपको आंदोलन' की तारीफ भी की।

लेकिन क्या रैणी सुरक्षा के २५०० पेड़ बच जाने से और 'चिपको आंदोलन' की मुख्यमन्त्री द्वारा तारीफ भर कर दिये जाने से उत्तराखण्ड के बाकी जंगल बच पाते? उत्तर प्रदेश सरकार नयी वननीति बना लेती? ज्यादा मशक्कत की भी गुंजाइश नहीं रहने दी गयी। मार्च के बयान के बाद सितम्बर में उत्तरप्रदेश सरकार ने उत्तराखण्ड के तीन वृत्तों के आठ करोड़ रुपये के जंगलों की नीलामी घोषित कर दी। पहली और दूसरी सितम्बर को गढ़वाल वृत्त के जंगल देहरादून में, सात और आठ को कुमाऊं और नालागढ़ वृत्त के जंगल क्रमशः नैनीताल और कोटद्वार में नीलाम कर दिये गये। 'चिपको आंदोलन' के दौरान वननीति की सबसे बड़ी बुराई ठेकेदारी प्रथा को ही माना रहा है। उसी आंदोलन की तारीफ कर सरकार ने फिर जंगल ठेके पर देने शुरू कर दिये।

३ अक्टूबर को उत्तरकाशी के पास के जंगल नीलाम होनेवाले थे। उस दिन फिर 'चिपको' की ओर से प्रदर्शन हुआ। लोगों के भारी विरोध को देखकर सरकार को →

भूदान यज्ञ : सोमवार १८ अक्टूबर, '७४

शक्ति के लिए अधिक सहज और सुपाच्य भोजन मिलता है। लेखक ने यह भी कहा है कि सारे संसार में पौष्टिक भोजन की कमी मांसाहार के कारण ही पैदा हुई है क्योंकि हमारी यह छोटी धरती इतनी उपजाऊ नहीं है कि इसमें आदमी के अतिरिक्त मांस देनेवाले पशुओं को खिला-पिला कर मोटा करने लायक दालें पैदा की जा सकें। यह बात शायद एकाएक लोगों की समझ में न आये, किन्तु थोड़ा-सा भी विचार करने से साफ हो जाता है कि सारे पोषक तत्व आखिरकार जमीन से पैदा होते हैं। मांस देनेवाले पशुओं के लिए, घास के लिए और अनाज के लिए बड़े लम्बे-चौड़े मैदान सारी दुनिया में रोक कर रखे गये हैं। इन मैदानों में इनके ही लिए चारा और इन्हीं के लिए दाना तैयार किया जाता है। इन पशुओं को जो दाना दिया जाता है, वह ज्यादातर दलहन-दाल की जाति का होता है। विकासशील देशों में लोग ज्यादातर अन्न, दाल आदि के माध्यम से कोई चार-सौ पौंड वजन का खाद्यान्न लेते हैं। अमरीका में यही प्रति व्यक्ति लगभग दो हजार पौंड पड़ता है क्योंकि वहां के लोग इसे प्रत्यक्ष अन्न के रूप में न लेकर मांस के रूप में लेते हैं और इसलिए प्रति व्यक्ति पर सोलहसौ पौंड का अन्तर पड़ जाता है। सारी दुनिया की खेती का सन्तुलन मांसाहार से बिगड़ जाता है—इस तथ्य को जान लेने के बाद इसे अधिक स्पष्ट करने की जरूरत नहीं रहती।

अमरीका में जितनी जमीन पर खेती होती है और जो अन्न पैदा किया जाता है उसमें भी आधी जमीन पशुओं के लिए दाना बोने के लिए होती है और पूरे कृषि उत्पादन का अस्सी प्रतिशत वहां जानवरों को खिलाया जाता है। नब्बे प्रतिशत अन्न, सत्तासी प्रतिशत मटर और नब्बे प्रतिशत सोयाबीन के सिवाय पचास प्रतिशत गेहूं की फसल भी मांस देनेवाले पशुओं को खिला दी जाती है। विकासशील देशों में मांस देनेवाले पशुओं पर केवल पैदा किये हुए अन्न का दस प्रतिशत खर्च होता है। जब हम पशुओं को इक्कीस प्रतिशत प्रोटीन तत्व आहार के रूप में देते हैं तब कहीं मनुष्य को उसके बदले में एक पौंड प्रोटीन तत्व मिलता है। इसका सीधा-सादा अर्थ यह हुआ कि हर आधा सेर मांस खानेवाला आदमी बीस आदमियों को आधा सेर अन्न से वञ्चित कर देता है। केवल अमरीका में ही सन् १९६८ में दो करोड़ टन प्रोटीन यदि पशुओं को न खिलाया जाता, तो सीधा-सीधा वह मनुष्यों को मिल सकता था। चूंकि यह सीधा-सीधा मनुष्यों को नहीं दिया गया, इसलिए अठारह करोड़ टन प्रोटीन नष्ट हुआ और दो करोड़ टन काम में आया।

प्रोटीन की पैदावार का एक दूसरे ढंग से भी हिसाब लगाया जा सकता है। अगर हम यह देखें कि एक एकड़ जमीन कितने मनुष्यों के योग्य अथवा कितने जानवरों के योग्य दालें आदि दे सकती है, तो भी दालों की बर्बादी का परिणाम हमारी समझ में आ जायेगा। औसतन एक एकड़ जमीन में पैदा की जानेवाली दाल आदि की वे फसलें जो सीधे-सीधे आदमी को खिलाने की दृष्टि से पैदा की जाती हैं, पशुओं को खिलायी जानेवाली किस्मों से पांच गुनी अधिक पैदा होती हैं।

प्रोटीन और कैलारी

(प्रति सौ ग्राम में)

खाद्य	प्रोटीन प्रतिशत	कैलारी
बाजरा	११.६	३६१
मक्का	११ १	३४२
चावल	६ ८	३४५
गेहूं	१२ १	३४१
बंगाली चने की दाल	२० ८	३७२
हरे चना की दाल	२४ ५	३४८
केसरी दाल (निवरा)	२८ २	३४५
मसूर की दाल	२५ १	३४३
काले चने की दाल	२४ ०	३४७
मटर	१९ ७	३१५
अरबी	३ ०	९७
टैपिओका	० ७	१५७
शकरकंद	१ २	१२०
आलू	१ ६	९७
गाय का दूध	३ २	६७
भैंस का दूध	४ ३	११७
अंडा	१३ ३	१७३
बकरे का मांस	२१ ४	११८
भेड़ का मांस	१८ ५	१९८
मछली	१६.६	९७

(घी, तेल तथा चर्बी में प्रोटीन नहीं होता)

मटर, सेम आदि तो उतनी ही जमीन में दस गुनी पैदा हो सकती है। और कुछ किस्में तो ऐसी हैं जो बीस गुनी तक पैदा होती हैं। इस प्रकार विकसित देशों में जमीन की शक्ति का उपयोग पशुओं को खिलाने के लिए अधिक और मनुष्य को पौष्टिक तत्व देने के ख्याल से कम होता है। अनेक कृषिशास्त्रियों ने यह सिद्ध कर दिया है कि विकासशील देशों में एक अरब व्यक्ति लगभग उतना प्रोटीन पशुओं को खिला देते हैं जितना विकासशील देशों के दो अरब व्यक्ति सीधा-सीधा उसे अन्न के द्वारा प्राप्त कर सकते हैं।

विकासशील देशों में भी जमीन का दुरुपयोग होता है, किन्तु वह पशुओं को खिलाने के विचार से नहीं, मुद्रा कमाने के ख्याल से होता है। वहां बहुत सी जमीन ऐसी पैदावार के लिए रखी पड़ी है जिसका आदमी के शरीर के लिए उतना उपयोग नहीं है जितना विदेशी मुद्रा कमाने के लिए है। काफी, चाय, रबड़, कोको, चीनी आदि के लिए जो जमीन विकासशील देशों में रखी हुई है, वह सच कहें तो मनुष्य के प्राणों की बाजी लगाकर रखी हुई है। यदि इन जमीनों में दालें पैदा की जायें तो वहां के लोगों का स्वास्थ्य और काम करने की शक्ति कई गुनी हो जाये। केवल काफी की शक्ल में चालीस विकासशील देश अपना जीवनदायी खून विदेशी मुद्रा कमाने के विचार से विदेशों को पिला देते हैं। कहने को यह देश स्वतन्त्र हो चुके हैं, किन्तु आर्थिक दृष्टि से ये गुलाम थे गुलाम बने हुए हैं और इन्हें विदेशी मुद्रा कमाने के लिए इस प्रकार अपनी बलि देनी पड़ती है।

न्यूयार्क टाइम्स के एक सर्वेक्षण ने यह स्पष्ट किया कि पेट्रोल या मिट्टी के तेल के बाद विदेशी मुद्रा कमानेवाले पदार्थों में काफी का ही नम्बर आता है। ये ऐसी चीजें हैं जो देश की व्यक्ति शक्ति का गलत दिशा में उपयोग करती हैं। ऐसी चीजें जहां पैदा की जाती हैं वहां मजदूरी के रूप में उन देशों की अपेक्षा बहुत कम पैसा लगता है जहां ये चीजें भेज दी जाती हैं। और इसलिए इनके निर्यात से काफी विदेशी मुद्रा मिलती है। विदेशी मुद्रा के लालच में लोगों के प्राणों की कोई परवाह नहीं की जाती। सोचने की बात है कि काफी शरीर को किसी भी प्रकार का

शक्ति तत्व देनेवाला पदार्थ नहीं है। यह केवल शौक में उपयोग आनेवाला पदार्थ है। कितने ही उपजाऊ देश इस निरर्थक वस्तु को पैदा करने में लगे हुए हैं और सो भी उन लोगों के लिए जो बैठे-ठाले मौज उड़ाना चाहते हैं। मौज-शौक की चीजों में काफी के सिवाय चीनी और चाय का भी बहुत बड़ा स्थान है। इनमें लगी हुई जमीन वास्तव में उन्हीं देशों के भूखे लोगों के लिए दालें पैदा करने के काम में आनी चाहिए।

न्यूयार्क के 'कैथलिक वर्कर' नाम के पत्र में प्रोटीन के सवाल को लेकर ध्यान खींचनेवाला एक लम्बा लेख प्रकाशित हुआ है। उस लेख में हमने ऊपर जो कुछ कहा है—वह सब बड़े विस्तार से कहा गया है और यह भी कहा गया है कि मांसाहार का चलन यथासम्भव रोज-रोज कम किया जाना चाहिए, सारी दुनिया में शाकाहार का अधिकाधिक प्रचार किया जाना चाहिए। उसमें गांधीजी का भी नाम लिया गया है और कहा गया है कि गांधी ने जिस अहिंसा की शिक्षा दी वह भोजन पर भी लागू की जानी चाहिए। हमें ऐसे हरेक काम से बचना चाहिए जो दूसरों को नुकसान पहुंचाता है या पहुंचा सकता है। मांसाहार पशु के प्रति निर्दयता तो है ही, करोड़ों व्यक्तियों के प्रति भी निर्दयता है। इस बात को लेकर बहुत बहस में पड़ने का कोई अर्थ नहीं है, क्योंकि कहने को तो यह भी कहा जा सकता है कि जिन्दगी में कदम-कदम पर हमें हिंसा के साथ समझौता करके चलना पड़ता है चाहे मांस खायें या न खायें। किन्तु यहां सवाल पशुओं को मारने का नहीं है, मांस खाने के कारण जो मनुष्य अन्न से वंचित रहकर और धीरे-धीरे तिल-तिल कर मरता है, उसका सवाल है। फ्रांस के मार्क लाजा डेल वास्टो ने गांधी समुदाय के नाम से एक आश्रम की स्थापना की है और उस आश्रम में भोजन वैसा ही सादा और शाकाहारी होता है, जैसा भारत के शाकाहारी लोग करते हैं।

इसी आश्रम के एक अन्तेवासी डा० पियरे पैरोडी ने गरीब देशों के भोजन के सम्बन्ध में एक छोटी-सी पुस्तिका लिखी है और उसके परिशिष्ट में उन सब खाद्य द्रव्यों की पौष्टिकता भी सूचित की है जो विकासशील और अविकसित देशों में खाये जाते हैं। उन्होंने कहा है कि अगर शाकाहारी भोजन में शामिल विभिन्न खाद्यों को ठीक अनुपात में खाया जाये तो उनसे परिपूर्ण स्वास्थ्य के साथ-साथ मानसिक विकास भी उत्तम ढंग का होता है। उक्त आश्रम में साग, अन्न, दूध के बने पदार्थ ही लिये जाते हैं। अंडे अवश्य वहां वर्जित नहीं हैं। यों भारत के लोग जानते हैं कि केवल शाकाहारी भोजन पूरा मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य देने में समर्थ है, किन्तु आजकल भारत में भी मांसाहार का चलन बढ़ता चला जा रहा है और उसमें स्वाद के लोभ के साथ-साथ यह एक मान्यता भी काम करती है कि आमिष भोजन अधिक शक्तिदेय है। क्योंकि भारतीय पढ़ा-लिखा आदमी आजकल अपने यहां कही गयी बातों के बजाय बाहर की बातों और प्रयोगों पर अधिक भरोसा करने लगा है इसलिए हमने बाहर के लोग शाकाहार के बारे में क्या सोच रहे हैं, इस लेख में, उसे संक्षिप्त रूप में देने का प्रयत्न किया।

इस एक कारण के सिवाय लेख का दूसरा कारण यह है कि अधिक कीमतवाली फसलों के फेर में हिन्दुस्तान के बड़े-बड़े किसान और जमींदार चाय, काफी और गुड़ के लिए नहीं चीनी के लिए गन्ना की फसलें उगाते हैं। जिस किसान को कैश क्राप की चाट लग जाती है वह सर्व-सामान्य खाद्यान्नों का नहीं बोता। देश में गेहूं, चावल और दालों की कमी का एक यह बहुत बड़ा सबब बन गया है। यों तो सारे संसार में आज बढ़ती हुई आबादी और अन्न की कमी महसूस की जा रही है, किन्तु भारत तो इससे लगातार त्रस्त है। हम अपनी गेहूं की कमी किसी प्रकार अमरीका, कनाडा वगैरह से पूरी कर लेते हैं, किन्तु वे मांसाहारी देश अपनी दालें तो मांस के लिए पशुओं को ही खिलाते हैं, इसलिए कम से कम हमारे देश में इस विचार को दृढ़ करके कि दालों में अत्यन्त पुष्टिकारक तत्व हैं, उनके पैदा करने का चलन बढ़ाना चाहिए। दालों के भाव आसमान छू रहे हैं। वे हमारे यहां किसी भी अन्न से महंगी हैं, इसलिए यह निस्संकोच कहा जा सकता है कि सवाल रोटी का ही नहीं दाल का भी है और इस सवाल को हम विदेशों के भरोसे कभी हल नहीं कर सकते। इसके बारे में तो हमें ही सोचना पड़ेगा।

ॐ

बीस साल पहले

(भूदान-यज्ञ वर्ष १ अंक ४
३-११-५४ के अंक से)

भूदान से राष्ट्रपति का स्वागत

सीतामढ़ी, २१ अक्तूबर। ता० १६ अक्तूबर को बाढ़पीड़ित क्षेत्रों का निरीक्षण करने जब राष्ट्रपति बैरगनिया पहुंचे, तो इस अवसर पर श्री रामदुलारी सिंह एम०एल०ए० ने २६२ दानपत्रों में मिली हुई १३२ बीघे ३ कट्ठे भू-जमीन से राष्ट्रपति का स्वागत किया। राष्ट्रपति ने उक्त दानपत्रों को ग्रहण कर श्री विनोबाजी की सेवा में भेज देने का प्रबन्ध किया।

दरभंगा, २७ अक्तूबर। महाराजा दरभंगा ने ता० २७-१०-५४ को दरभंगा में जिले के जमींदारों की एक सभा बुलायी, जिसमें प्रान्तीय भूदान-समिति के संयोजक श्री लक्ष्मीनारायण भी आमन्त्रित थे। भूदान-यज्ञ आन्दोलन में भाग लेने के लिए, दरभंगा राज्य के प्रधान मैनेजर श्री गिरीन्द्र मोहन मिश्र तथा श्री लक्ष्मीनारायणजी के प्रभावशाली भाषण हुए। जमींदारों से भूदान में अपनी-अपनी जमीन का छठा हिस्सा देने के लिए अपील की गयी। इस कार्य के लिए महाराज दरभंगा की अध्यक्षता में एक समिति का भी निर्माण हुआ। ◻

हरिजनों और आदिम जातियों की यह दुरवस्था !

(अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के आयुक्त श्री शंकरराव माने ने संसद् के गत अधिवेशन में १९७१-७२ तथा १९७२-७३ की अपनी रिपोर्ट (२१वीं रिपोर्ट) प्रस्तुत की। रिपोर्ट की प्रस्तावना में देश के विभिन्न भागों में अनुसूचित जातियों और आदिम जातियों के साथ हो रहे सामाजिक अन्याय तथा उनकी आर्थिक दुरवस्था की चर्चा है। श्री माने की रिपोर्ट में अनेक दिल दहलानेवाली घटनाओं का उल्लेख है। हम अपने पाठकों की जानकारी के लिए रिपोर्ट की प्रस्तावना यहाँ उद्धृत कर रहे हैं और रिपोर्ट के कुछ अंश भी दे रहे हैं। सं०)

गरीबी और जातिगत बाधाएं हमारे देश की सबसे अधिक महत्वपूर्ण और जटिल समस्याएं हैं। इनसे अगर किसीको सबसे अधिक पीड़ित होना पड़ रहा है तो वे हैं हमारी अनुसूचित जातियां और अनुसूचित आदिम जातियां। इनकी आबादी कुल जनसंख्या के पांचवें हिस्से से भी अधिक है। उनकी समस्या एक गम्भीर राष्ट्रीय समस्या है।

भारत ने १५ अगस्त, १९४७ को स्वतन्त्रता प्राप्त की। तब से लगभग तीन दशक हो गये। इस अवधि में हमने अनेक क्षेत्रों में पर्याप्त प्रगति की है। प्रश्न बस यह है कि स्वतन्त्रता की इस ठंडी हवा से कुछ सांत्वना और शांति अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम जातियों को, जो हमारे समाज के सबसे अशक्त प्राणी हैं, मिल पायी है? जो लोग आज भी सामाजिक अयोग्यता और आर्थिक असमानता से पीड़ित हैं, उनके लिए इस राजनीतिक स्वतन्त्रता का क्या अर्थ है?

२६ जनवरी, १९५० को, जब भारतीय गणतन्त्र की स्थापना की गयी हम भारतीयों ने गम्भीरतापूर्वक यह निश्चय किया कि हम अपने समस्त नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय प्रदान करेंगे, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, आस्था और आराधना की स्वतन्त्रता देंगे, सबको समान दर्जा तथा आगे बढ़ने के अवसर मिलेंगे, व्यक्ति की प्रतिष्ठा तथा राष्ट्र की एकता को बनाये रखते हुए हम सब में भ्रातृत्व उत्पन्न करेंगे। उस समय हमने यह बड़ी सराहनीय और शुभ घोषणा की, उसका लाभ निश्चय ही अनुसूचित आदिम जातियों को पहुंचना चाहिए था, क्योंकि वे इसके सबसे योग्य पात्र हैं और हमारे राष्ट्रीय जीवन की सबसे निर्बल कड़ी हैं। हमारे गम्भीर तथा पुनीत संकल्प क्या इन जातियों के लिए वास्तव में कुछ सहायक हुए हैं?

क्या कारण है कि ये जातियां अब भी नाना प्रकार की सामाजिक बुराइयों से पीड़ित हैं, यहां तक कि इनमें से काफी संख्या में लोग आज भी जमींदारों के जुए के नीचे खरीदे हुए गुलामों की तरह काम करने को मजबूर हैं और उनका रहन-सहन इतना निम्नकोटि का है कि उसे मनुष्य का जीवन नहीं कहा जा सकता?

इन सबकी वजह हमारी कथनी और करनी का अन्तर है। हमने कुछ कानून लागू करने चाहे, जैसे अस्पृश्यता (अपराध) अधिनियम, भूमिबेदखली कानून तथा कर्जदारी और बाधित श्रम (बंधक श्रम) विरोधी कानून, तब हमने आशा की कि चूंकि शासक दल और विरोधी दलों के सहयोग से ये कानून सर्वसम्मति से पारित हुए हैं, इसलिए इन्हें गम्भीरतापूर्वक लागू किया जायेगा। लेकिन दुर्भाग्य से ऐसा न हो पाया, और जिस प्रभावहीन तरीके से कानून लागू हो रहे हैं, वह किसी से छिपा नहीं है। दुर्भाग्य से नेतृत्व ऐसे लोगों के हाथ में आ गया है जो राजनीतिक और आर्थिक दृष्टि से शक्तिशाली बन गये हैं और जिन्हें सुविधाहीन लोगों के बारे में कोई चिन्ता-परवाह नहीं है।

पिछले दिनों में कमजोर वर्ग के लोगों पर अत्याचार करने और उन्हें सताने की घटनाएं बार-बार हुई हैं।

बिहार राज्य के पूर्णिया जिले के एक गांव में १४ संथालों की निर्मम हत्या यह सूचित करती है कि जातिगत ऊंच-नीच की भावना अभी अपने कुरूपतम रूप में विद्यमान है और कानून के द्वारा अनुसूचित जाति के बटाईदार किसानों को जो हक दिये गये हैं, उनको स्वीकार करने के लिये जमींदार लोग तैयार नहीं हैं।

होशियारपुर जिला (पंजाब) के एक अनुसूचित जातीय लेक्चरर ने एक जाट महिला लेक्चरर से शादी कर ली, परिणाम यह हुआ कि बेचारे दोनों पति-पत्नी को नौकरी से हटना पड़ा।

बिहार राज्य के सहरसा जिले के एक गांव में, अनुसूचित जाति की कुछ स्त्रियों को एकदम नंगा कर दिया गया और उनके शरीर पर गर्म लोहे की सलाखों तथा हंसियों से दागा गया। यह जघन्य कृत्य किया गया बहुतों के सामने और उनमें से किसी को इस अमानवीय तथा पशुतापूर्ण कृत्य का विरोध करने का साहस नहीं हुआ।

इसी तरह की एक दुर्भाग्यपूर्ण घटना महाराष्ट्र राज्य के परभनी गांव में घटी, जहां अनुसूचित जाति की दो स्त्रियों को एक जमींदार और उनके नौकरों ने नंगा कर दिया स्त्रियों का अपराध इतना ही था कि उन्होंने प्यास बुझाने के लिए पानी मांगा था। जब अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के आयुक्त ने इस शर्मनाक घटना का जिक्र संसद् की एक महिला सदस्या से किया और निवेदन किया कि वे उक्त गांव में जाकर इस घटना की जांच करें, तो इस सदस्या ने आयुक्त से कहा कि पहले वे उन दोनों औरतों के चरित्र के विषय में पता लगायें। जो हो, जांच-पड़ताल के बाद पता चला कि जिन दो हरिजन महिलाओं के साथ उक्त अभद्र व्यवहार किया गया था, वे निर्दोष थीं और उनका चरित्र अच्छा था। तब कहीं अपराधी व्यक्तियों को अदालत ने दो दो वर्ष का सपरिश्रम कठोर कारावास का दण्ड दिया। महाराष्ट्र राज्य के औरंगाबाद जिले के एक गांव में, बारह निर्दोष अनुसूचित जाति के व्यक्ति एक कुएं का गंदा तथा दूषित जल पीने से मर गये। गांव के सवर्ण हिन्दुओं ने उन्हें अपने कुएं से पानी भरने से मना कर दिया था, फलत: अनुसूचित जाति के लोगों को एक ऐसे कुएं से पानी भरने को बाध्य होना पड़ा, जिसकी मुंडेर के एक छेद के जरिये कहते हैं कि गांव के पटेल ने नालियों का गंदा पानी उसमें डलवाकर उसके जल को दूषित कर दिया था। इस दुर्घटना के फल-

स्वरूप गाव के कई निर्दोष हरिजन परिवार निराश्रित हो गये, क्योंकि उनके रोटी कमानेवाले ही मौत के शिकार हो गये थे।

महाराष्ट्र के कोल्हापुर जिले के अन्तर्गत एक गाव में, एक सवर्ण जातीय छात्र, जो कालेज में पढ़ता था, राज्य के समाजसेवी कार्यकर्ताओं द्वारा दिये गये 'हर गाव में एक कुआं', के नारे से प्रेरित होकर अपने परिवार के उपयोग के लिए एक हरिजन से पीने का पानी मगवाने लगा। गाव के गैर-अनुसूचित जाति के लोगों को उसका यह आचरण बहुत नागवार गुजरा। उन्होंने देखा कि इसे चलने दिया गया तो गाव की हवा ही बदल जायेगी। स्थानीय नेताओं ने छात्र की तारीफ करना तो अलग, उसे चेतावनी दी कि उसे इसका कुफल चखना होगा। सहकारी चीनी मिल के अध्यक्ष और उनके पुत्र ने जो गाव की पचायत का सरपच भी था, यह शक किया कि गाव के स्कूल के एक हरिजन अध्यापक ने उक्त छात्र को उकसाया है। बस, उन्होंने हरिजन अध्यापक को धमकाया और पचायत समिति के अध्यक्ष की सहायता से उसका तबादला उस गाव के स्कूल से कहीं दूसरी जगह करवा दिया। कुछ समझदार सामाजिक कार्यकर्ताओं के प्रयत्न का और अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम जातियों के आयुक्त, जिन्होंने उक्त गाव का दौरा किया, के सामयिक हस्तक्षेप का ही यह परिणाम रहा कि उस हरिजन अध्यापक का तबादला रद्द कराया जा सका। यह आरोप है कि उसने पूछताछ करने के बहाने एक अनुसूचित जाति की स्त्री के साथ बलात्कार किया। महाराष्ट्र के नागपुर नगर के समीप एक गाव में, ग्रामीणों ने अनुसूचित जाति के एक आदमी को खुलेआम मार डाला और उसे एक कुए में फेंक दिया। पुलिस ने गाववालों से साठ-गाठ करके आत्महत्या का मामला दर्ज किया। जब अनुसूचित जातियों और आदिम जातियों के आयुक्त ने उस गाव का दौरा किया, तब तथ्य सामने आये और तब जिसे पुलिस ने आत्महत्या का मामला कहकर दबा दिया था, वह भीषण हत्या का मामला साबित हुआ जिसमें गांव के कई जिम्मेदार आदमियों ने हिस्सा लिया था। उसमें स्थानीय पचायत के सदस्यों एव एक स्कूल अध्यापक की मिलीभगत थी।

कई ऐसी घटनाएं हुई हैं जिनमें अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के लोगों के बहिष्कार तथा अन्य प्रकार से उन्हें परेशान करने की बातें इसलिए की गयी हैं क्योंकि चुनावों में उन्होंने उन प्रत्याशियों को अपने मत नहीं दिये जिनको सवर्ण जातिवालों ने तथा किसी पार्टी ने खड़ा किया था। कुछ मामलों में तो अनुसूचित जाति और अनुसूचित आदिम जाति के मतदाताओं को अपने मताधिकार का प्रयोग करना तक सभव न हो सका।

गावों में ही नहीं, शहरों में भी अनुसूचित जातिवालों को कठिनाई भोगनी पड़ती है। भारत की राजधानी दिल्ली में एक प्रथम श्रेणी के सरकारी अधिकारी को, जो अनुसूचित जाति का था उसके सवर्ण मकान मालिक ने, यह पता चलने पर कि वह अनुसूचित जाति का है, उसे डराने धमकाने की कोशिश की, और जब उससे बात न बनी, तो कुछ लोगों को साथ लेकर उसने सरकारी अधिकारी के परिवार पर हमला कर दिया जिसमें अधिकारी को उसके शिक्षित बच्चों के सामने मारा पीटा गया। अतत उस अनुसूचित जातीय सरकारी अधिकारी को वह मकान खाली करना पड़ा।

हाल ही में गाजियाबाद (उत्तर-प्रदेश) के समीपवर्ती एक गांव में अत्याचार की एक अमानवीय घटना घटी जिसका उल्लेख किये बिना नहीं रहा जाता। एक हरिजन युवक में कोई दोष निकाल कर गाव के सवर्ण लोगों ने उसे पाशविक ढग से आग में जला दिया। उसे बाधकर लटका दिया गया, उसके नीचे आग जला दी गयी और सुअर की तरह उसे भूना गया। हमारी ससद और राज्यविधान मण्डलों में जन-प्रतिनिधियों की सख्या ४५०० से भी अधिक है और जिला परिषदों, पचायत समितियों तथा ग्राम पचायतों में जनता से चुनकर आये प्रतिनिधियों की सख्या तो हजारों में होगी। इन जन-प्रतिनिधियों से आशा की जाती है कि वे लोकतन्त्र के सरक्षक और समाज के निर्बल वर्ग के लोगों के हित-रक्षक बनेंगे। दलित वर्ग के लोग सविधान द्वारा प्राप्त बुनियादी अधिकारों का प्रयोग खुलकर और निर्भीक होकर करने लग सकें, यह देखना भी जनप्रतिनिधियों का काम है।

अगर ये जनप्रतिनिधि निम्न वर्ग के लोगों की मांगों का समर्थन करने का निश्चय कर लें, उनकी उन्नति में रुचि लें, और जब उपर्युक्त दुर्भाग्यपूर्ण घटनाएं घटें, तब दलित वर्गों का साथ दें, तो इन जातियों में सुरक्षा की भावना पैदा होगी और समाज में एक ऐसा सौमनस्यपूर्ण वातावरण उत्पन्न होगा जिसमें इस तरह की घटनाओं को घृणा की दृष्टि से देखा जा सकेगा। कुछ निस्वार्थ सामाजिक तथा राजनीतिक कार्यकर्ता और कुछ स्वयंसेवी सस्थाएं त्याग और सेवा की भावना से हरिजनों तथा आदिवासियों की उन्नति के लिए काम कर भी रही हैं।

अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों की कुछ समस्याएं तो समान हैं किन्तु आदिम जातियों की कुछ समस्याएं अलग प्रकार की हैं। उनके रहन सहन का खास वातावरण, उनकी बस्तियों का भौगोलिक दृष्टि से दूर-दूर होना और उनके जीवन का एक परम्परागत रूप आदि बातें ऐसी हैं जिनके कारण वे राष्ट्रीय जीवन और क्रिया-कलाप की मुख्य धारा से अलग-थलग रहे हैं। आदिम जाति के लोग भोले-भाले और सीधे-सादे तो होते ही हैं, वे बिना किसी बाह्य हस्तक्षेप के प्राचीन काल से ही अपेक्षाकृत सुखी जीवन जीते आ रहे हैं। परन्तु जब से जगलों में रहनेवाले मनुष्यों की चिन्ता किये बिना, वन सम्बन्धी कानून लागू किये गये हैं, जब से आदिम जाति क्षेत्रों में औद्योगिक परियोजनाओं की योजना बनानेवालों ने आदिम जातियों की मानवीय आवश्यकताओं की ओर से आखें मूद ली हैं, सूदखोर महाजनों, जमींदारों और मुनाफाखोर व्यापारियों द्वारा उनका शोषण किया जा रहा है।

१९७०-७१ में प्रस्तुत रिपोर्ट में यह चेताया गया था कि "इन जातियों के मन में असुरक्षा और आर्थिक असहायता की भावना बढ़ती जा रही है, जिसके फलस्वरूप उनमें 'अल्पसख्यकों में पायी जानेवाली असुरक्षा' की भावना पैदा होती जा रही है। अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के करोड़ों लोगों में इस प्रकार की भावना राष्ट्रीय एकता की प्रक्रियाओं के मूल पर ही कुठाराघात करती है और लोकतन्त्र के लिए एक खतरा बन गयी है।"

रपट 'बिहार बन्द' की
(पृष्ठ ४ का शेष)

हो गया।" "अमुक जगह लोगों की भीड़ जमा है", इत्यादि। कुछ सरकारी दफ्तरों से आये—"हमारे यहां आपकी तरफ से नहीं पहुंचा। ४-५ लड़कों को भेज दें तो हम लोग बाहर निकल आवें।" एक जगह से फोन आया—"यहां कुछ दुकानें खुली हैं, कुछ लड़कों को भेजिये, ताकि उन्हें समझायें।" बिहार प्रदेश में एक ही जगह ऐसी है जहां से पटना सीधा फोन लगता है, वह जगह है मुजफ्फरपुर। वहां से दिन में एक-दो बार रोज समाचार आ जाता था, "पूरा शहर बंद है। सम्पूर्ण शांति है, सरकारी दफ्तर भी भी बंद हैं। रेलबंद है स्टेशन पर रेलवालों ने सूचना टांग दी है कि सब यातायात बंद है" इत्यादि।

मैंने बंद की समाप्ति पर जे०पी० से कहा कि आपने मुझे "धृतराष्ट्र बनाकर कार्यालय में बिठा दिया था। महाभारत हो रहा था उसकी मैं आंखों से तो नहीं देख पाया कानों से सुना जरूर। आवश्यकतावश, एक-दो बार पाटलिपुत्र के मोहल्ले में और आखिरी दिन शाम को सचिवालय पर चल रहे सत्याग्रह स्थल पर चला गया था क्योंकि जे० पी० नहीं जा सके थे। बंद का और सत्याग्रह का इतना ही प्रत्यक्ष दर्शन मैंने किया। सुन-सुनकर सुनकर जो असर हुआ था वह मैं पहले ही लिख चुका हूं। इधर अखबारों में कुछ 'सेन्सेशन' पढ़ता था और रेडियो की खबरें सुनता था तो मुझे ऐसा अनुभव होता था कि चारों तरफ शांति के प्रशान्त एक समुद्र में जो कुछ थोड़ी बहुत अशांति की बुदबुदाहट हुई उसी को रेडियो तथा अखबार प्रमुखता दे रहे हैं।

इन तीन दिनों में छोटे-मोटे सब मिलकर प्रदेश के करीब १० स्थानों में गोलीकांड हुआ। सबसे बड़ा पटना सिटी स्टेशन के पास हुआ। तीन दिनों में सब मिलकर सरकारी सूत्रों के अनुसार १३ लोगों की जानें गयीं। गैर सरकारी सूत्रों के अनुसार करीब १५-२० की। पटना सिटी की घटना बंद के आखिरी दिन हुई। जे०पी० के पास उससे पहली रात को ही विश्वस्त सूत्र से एक समाचार पहुंचा कि दो-दिन के सफल और शान्तिपूर्ण बंद से मंत्रिमंडल बौखला गया है और ऐसी योजना सोची गयी है कि तीसरे दिन कुछ न कुछ हिंसक घटनाएं हों और गोली चले। निश्चित है कि पटना सिटी की हद तक तो घटना में उत्तेजना भड़काने का काम सरकार की तरफ से हुआ। १० से १५ हजार लोग, जिसमें स्त्रियां और बच्चे भी थे, रेलवाइन पर शान्तिपूर्ण धरना दे रहे थे। यह पूर्व-घोषित और खुला कार्यक्रम था। जनतंत्र में सरकार की नीति के प्रति शान्तिमय विरोध जाहिर करने का जनता का जन्मसिद्ध अधिकार है। इस अधिकार का उपयोग करके जब लोग लाइन पर बैठे थे तब जनतंत्रीय सरकार के पास दो ही विकल्प हो सकते थे, या तो उन सब लोगों को गिरफ्तार करके वहां से हटाना या फिर जब तक वे शांति भंग न करें तब तक लाइन पर बैठने देना। लेकिन अधिकारियों ने भीड़ पर पत्थर फेंके लाठी चलायी और अश्रु गैस छोड़ी। (इसके अखबारों में चित्र छपे हैं) उसके बाद ही भीड़ ने वहां से हटकर ईंटें फेंकी और गोलीकांड शुरू कर दिया गया। हमारी जानकारी तो यही है कि केबिन वगैरह भी गोलीकांड से क्रुद्ध होकर जलाया गया।

हम लोगों ने बंद के दौरान रेलें बंद करने का कार्यक्रम रखा था। लेकिन जे० पी० ने शुरू से ही यह स्पष्ट कर दिया था कि रेलें बंद करने का काम लाइन पर शांति के साथ बैठकर किया जाये, तोड़फोड़ या तोड़फोड़ न की जाये। रेलें और यातायात बंद करने के विरोध में कई दलीलें दी गयी थीं, जैसे बाढ़पीड़ितों को राहत पहुंचाने, गरीबों को राशन पहुंचाने, देश के एक स्थान से दूसरे स्थान को माल ढोने आदि में बाधा पड़ेगी। इन दलीलों में कुछ वजन रहा होगा, लेकिन इन सब बातों का जवाब एक से अधिक बार जे०पी० दे चुके हैं। मैं इतना ही कहना चाहता हूं कि कार्यक्रम समझ-बूझकर जिम्मेदारी के साथ जे.पी. ने दिया था। इस संबंध में उन्होंने वक्तव्य भी दिया था। जो रिपोर्ट अब तक मिली है उन पर से मालूम होता है कि बिहार में करीब दो सौ स्थानों पर लोगों ने इस तरह शान्तिमय तरीके से पटरियों पर बैठकर रेलों का आना-जाना बंद कर दिया था। ३-४ जगह सिगनल तोड़ने, पटरियों को उखाड़ने की कोशिश और स्टेशन जलाने आदि की घटनाएं भी हुई, लेकिन पूरे संदर्भ में वे नगण्य हैं। इनमें भी एक-दो जगह जैसे पटना सिटी की घटना का मैं जिक्र कर चुका हूं, भड़काने का काम सरकार की ओर से हुआ। इसके अलावा, जहां छोटीमोटी वारदातें हुई उनमें जाहिर हो चुका है कि कुछ जगह कम्युनिस्ट पार्टी के लोगों का हाथ था। स्थानीय लोग एक-दूसरे को पहचानते हैं। एक-दो जगह स्वयं पुलिस ने दंगा भड़काने की कोशिश करते हुए, शायद यह न जानते हुए कि इन्हें तो यह काम सौंपा ही गया है, सी०पी०आई० के लोगों को पकड़ा।

इस प्रकार कुल मिलाकर देखा जाये तो ३ से ५ अक्टूबर तक के कार्यक्रम से दो बातें स्पष्ट होती हैं। पहली बात तो यह कि यह सारा कार्यक्रम अपेक्षा से अधिक शान्तिपूर्ण रहा, और दूसरी बात यह कि जनता का स्वेच्छिक समर्थन इसे प्राप्त था। प्रदेश भर में हजारों स्त्री-पुरुष और बच्चे पकड़े गये। सरकार अपना कोई काम भी ठीक से करना नहीं जानती यह इसी बात से भी जाहिर है कि १०-५ हजार लोगों को गिरफ्तार करके रखने का वह कोई ठीक इन्तजाम नहीं कर सकी। दो सौ-तीन सौ मील दूर से रात-रात भर या १८-२० घंटे बसों में भर-भर कर सत्याग्रहियों को एक केन्द्र जेल भेज गये लेकिन वहां व्यवस्था न होने से उन्हें वापस लाना पड़ा। वहां भी अधिकारियों ने लोगों से हाथ जोड़े और कहा, 'हमारे यहां जगह नहीं है। मेहरबानी करें, आप लोग चले जायें।' और लोग चले गये। रास्ते में या जेल में खाने-पीने तक का इन्तजाम नहीं था। बिहार में सरकार नाम की कोई चीज है या नहीं, और है तो कितनी निकम्मी है, इसका अन्दाज इन बातों पर से लग सकता है।

पटना के पीछे जो पालिसी या नीति संबंधी बातें हैं उनका जिक्र मैं इस पत्र में नहीं कर रहा हूं। उन बातों का जिक्र जे०पी० अपने वक्तव्यों में करते रहे हैं। उन सबको सम्मत प्रकाशित करने की मैं कोशिश कर रहा हूं। इस पत्र में तो मेरा उद्देश्य केवल वस्तुस्थिति का वर्णन करने का था। हो सकता है कि इसमें भी मेरे व्यक्तिगत झुकाव का पुट आ गया हो। उतना क्षम्य माना जाये। मैंने भरसक वस्तुनिष्ठ होने की कोशिश की है।

—सिद्धराज ढड्ढा

विशिष्ट किशोर शिविर

२८ प्रक्टूबर से कस्तूरबाग्राम, इन्दौर मे किशोरों का विशिष्ट शिविर मध्यप्रदेश सेवक संघ के द्वारा आयोजित किया जा रहा है जिसमें श्री बनवारीलालजी चौधरी, श्याम, लालजी, ग. उ. पाटणकर तथा भवानी प्रसाद मिश्र के अतिरिक्त अन्य अनेक लोगों के भाग लेने की सम्भावना है। शिविर में देश की वर्तमान परिस्थिति, उसमें किशोरों का कर्तव्य और दैनन्दिन अनुशासन तथा दिनचर्या के महत्व पर विशेष जोर दिया जायेगा। भाग लेनेवाले सर्वोदय कार्यकर्ताओं के परिवार के बच्चे ही होंगे। □

माचला शिविर-सम्पन्न

इन्दौर गांधी शांति प्रतिष्ठान के सहयोग से राजघाट अहिंसा विद्यालय, नयी दिल्ली के २५ छात्र-छात्राओं का शिविर ५ से १५ अक्टूबर तक माचला ग्राम (जिला इन्दौर) में चला। शिविर में सामूहिक प्रार्थना, श्रमदान, स्वाध्याय वर्ग, खेलकूद के कार्यक्रम, कृषि-गोपालन, गोबर गैस संयन्त्र, गांधी प्रदर्शनी के प्रदर्शन; दर्शनीय स्थलों के पर्यटन और मिष्ठ-मिलन के आयोजन हुए। शिविर उदघाटन नई-दुनिया, इन्दौर के प्रधान सम्पादक श्री राहुल बारपुते ने किया और स्वाध्याय वर्गों मे सर्वश्री देवेन्द्र कुमार, माणकचन्द्र कटारिया, महेन्द्र कुमार, नरेन्द्र दुबे, धर्मपाल सैनी, बनवारीलाल चौधरी तथा खादी-ग्रामोद्योग विद्यालय के प्राचार्य श्री दशरथ गवई का मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। ○

रायपुर में युवकों का जुलूस

जयप्रकाशनारायण की धर्मपत्नी प्रभावती के देहावसान के बाद दमोह में रक्षा उत्पादन मन्त्री श्री विद्याचरण शुक्ल ने तथा उसके कुछ दिन पूर्व तत्कालीन कांग्रेस अध्यक्ष डा. शंकरदयाल शर्मा ने जो यह कहा था कि जे.पी का दिमागी सन्तुलन खत्म हो गया है, उसके विरोध मे छत्तीसगढ़ के युवा नेता आनन्द कुमार एवं देवेशदत्त तिवारी ने रायपुर मे एक जुलूस आयोजित किया जिसमे दो सौ से अधिक युवक शामिल हुए। इन लोगों ने श्री शुक्ल और डा. शर्मा के पुतले भी जलाये। □

गांधी जयन्ती सम्पन्न

गुना (मध्यप्रदेश) मे गांधी जयन्ती, बिहार आन्दोलन समर्थन-दिवस के रूप में मनायी गयी। बापू उद्यान से एक मशाल जुलूस नगर के प्रमुख मार्गों से गुजरते हुए सभाए करता हुआ विशाल सार्वजनिक सभा मे बदल गया। जुलूस में छात्र-युवा, मजदूर और नागरिक सम्मिलित हुए। नेतृत्व कांग्रेस के नेता तथा सुप्रसिद्ध स्वतन्त्रता सेनानी सीतारामजी साटके ने किया था।

समाजवादी नेता धर्मस्वरूप सक्सेना और मथुराप्रसाद मडवटिया, जनसघ नेता रामजीलाल चाचोडा (गुना) और क्षेत्र के विधायक तथा मध्यप्रदेश सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष हेमदेव शर्मा ने सभा मे विस्तार से अपने-अपने विचार व्यक्त किये।

सभा मे बिहार जन-आन्दोलन के सहायतार्थ पांच सौ एक रुपये हेमदेव शर्मा (अध्यक्ष, मध्यप्रदेश सर्वोदय मण्डल) को भेंट भी किये गये। सीतारामजी साटके ने अध्यक्ष पद से सभा मे घोषणा की कि 'देश पार्टी से ऊपर है। लोकनायक जयप्रकाशजी के नेतृत्व मे बिहार मे चल रहे जन-आन्दोलन से हमें देश और लोकतंत्र के उज्जवल भविष्य की आशाएं दिखायी देती हैं। इसलिए हम बिहार जन-आन्दोलन का समर्थन करते हैं।' गुना जिले की जनता सत्याग्रह मे भी पीछे नहीं रहेगी। ○

तेल खोदने के लिए प्लेटफार्म

दो भारतीय अधिकारियों ने उत्तर सागर मे गत सप्ताह ब्रिटिश समुद्री तेल अधिष्ठानों का दौरा किया और इन्वर्नेस (स्काटलैंड) में तेल खोदने के कामों के लिए बनाये जा रहे प्लेटफार्मों का अवलोकन किया।

तेल एवं प्राकृतिक गैस आयोग के अध्यक्ष एन. बी. प्रसाद और भारतीय पेट्रोलियम तथा रसायन मन्त्रालय मे तेल अन्वेषण के सलाहकार डॉक्टर जी. रामास्वामी पांच दिनों की यात्रा पर ब्रिटेन आये और बताया कि बम्बई के निकट समुद्र मे हम भी इसी प्रकार के कुओं की खुदाई कर रहे हैं तथा उत्तर सागर के इस अनुभव से हमें भी लाभ होगा। ●

नागालैण्ड में पूर्ण नशाबन्दी

एक जानकारी के अनुसार नागालैंड सरकार ने निर्णय किया है कि वह धीरे-धीरे प्रदेश में पूर्ण नशाबन्दी लागू कर देगी। सरकारी तौर पर घोषणा की गयी है कि अब चालू लायसेंसों का नवीनीकरण नहीं किया जायेगा और न ही नये लायसेंस जारी किये जायेंगे। ○

४१ स्थानों पर ६१६ का उपवास

अखिल भारत शान्ति सेना मंडल के अनुसार देश के अन्दर समय-समय पर होनेवाली हिंसा सरकार की हिंसा तथा प्रतिहिंसा के खिलाफ शांति सेना के आवाहन पर गांधी जयन्ती २ अक्टूबर १९७४ को देश भर के ४१ स्थानों पर शांति में विश्वास रखनेवाले ६१६ लोगों ने गांधीजी की मूर्ति के सामने १२ घंटे का उपवास किया। ○

जलियांवाला बाग भी मात

३ से ५ अक्टूबर तक के 'बिहार बंद' के समय हुआ महुरसा गोलीकांड बर्बरता की सभी सीमाएं लांघ गया। वहां बी. डी. ओ. ने गोली चलाने का आदेश देते हुए जवानों को ललकारा कि "देखें किसका निशाना ठीक लगता है?" जिस जवान का निशाना ठीक लगा, बी. डी. ओ. ने उसकी पीठ थपथपायी व कहा, "शाबाश।" भीड़ मे एक आन्दोलनकारी युवक गर्दन मे गोली लगने से गिर पड़ा। पुलिस जवानों ने आगे बढ़कर उस पर दूसरी गोली चलाकर उसे मार डाला। दूसरा एक नवयुवक गोली लगने के कारण पास ही एक पुस्तकालय मे छिपा तो जवानों ने उसे वहीं जाकर संगीनें भोंक कर मार डाला। ○

जे जे होईल ते ते पहा

वर्धा के एक पत्रकार ने १८ अक्टूबर को जब विनोबाजी से यह पूछा कि देश की आज की राजनीतिक और आर्थिक परिस्थिति पर आपको क्या कहना है तो विनोबा ने कहा-

"तुका म्हणे उगे रहा,
जे जे होईल ते ते पहा।"

यानी मुंह बन्द रखकर जो जो होता है उसे देखते जाओ। ●

वार्षिक शुल्क—१५ रु० विदेश ३० रु० या ३५ शिलिंग या ५ डालर, एक अंक का मूल्य ३० पैसे।
प्रभाष जोशी द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं ए० जे० प्रिंटर्स, नई दिल्ली-१ मे मुद्रित।

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का साप्ताहिक मुख पत्र

नई दिल्ली, सोमवार, ४ नवम्बर '७४

पटना से दिल्ली आने पर जे० पी० (चित्र 'मदरलैंड' से साभार)

● काम क्यों किसे का : मार्गदर्शन विनोबा का ● सरकार ने स्वावलम्बन की दिशा पकड़ी है (लोकयात्री दल का धोलका से पत्र)
● कच्छ जैसी जगहों की चिन्ता सबकी चिन्ता बने ● दोनों व्यक्तियों को समझने की कोशिश करें : डेनियल माजगांवकर
● प्रधानमंत्री लोगों को भ्रम में क्यों डालना चाहती हैं : सिद्धराज ढड्ढा ● जे० पी० को विराट जन समर्थन

प्रधान मंत्रियों के पत्र

महिलाओं के लोकयात्री दल का श्रीलंका मे प्रवेश हो चुका। इसी संदर्भ मे २३ सितम्बर के 'सर्वोदय' मे भारत तथा श्रीलंका के प्रधानमंत्रियो के एक दूसरे को लिखे पत्र प्रकाशित किये गये हैं। दोनो प्रधानमंत्री महिला हैं। इसलिए उनका समर्थन प्राप्त करना स्त्रीशक्ति जागरण के लिए आयोजको ने आवश्यक माना है। लेकिन प्रधानमंत्रियो के समर्थन से लोकयात्री दल की प्रतिष्ठा बनती नहीं। क्योंकि लोकयात्री दल सरकार-परस्त बन गया है, ऐसा माना जायेगा। श्रीलंका के प्रधानमंत्री का राजनैतिक चरित्र क्रांतिविरोधी है। वे ग्वारा समर्थक युवा-समाज ने क्रांति के लिए श्रीलंका मे कदम उठाया था। सैनिक तथा शस्त्र शक्ति के द्वारा उसका दमन करके क्रूरता से दबाया गया। कइयो की हत्या कर दी गयी जिसकी न्यायिक जाच करवाना वहा के प्रधानमंत्री को आवश्यक नहीं लगा। आश्चर्य की बात यह है कि इस दमन सत्र को चलाने मे भारत के प्रधानमंत्रीने अपने सैनिक भेजकर श्रीलंका के प्रधानमंत्री की सहायता की थी।

भारत तथा श्रीलंका के दोनों प्रधानमंत्री क्रांतिविरोधी रहे हैं। इसीलिए सैनिक शक्ति का अमानवीय ढंग से उपयोग करना इनका एक कुसंस्कार बन गया है। भारत मे नक्सली आंदोलन को सैनिक शक्ति के द्वारा दबाया गया। हजारो की संख्या मे नक्सलवादियो को जेलो मे सडाया गया। कई हत्याएं की गयी। पश्चिम बंगाल मे नक्सली महिलाओं पर जेलों मे कई प्रकार के अत्याचार किये गये। महिलाओं को नगी करके 'टार्चर' किया गया। भारत के प्रधानमंत्री का यह अमानवीय चरित्र युवा समाज बरदाश्त नहीं करेगा। इसलिए वह विद्रोही बनेगा।

विनोबा से प्रेरणा लेकर महिलाओं का यात्रीदल श्रीलंका में गया, इतना ही काफी था। लेकिन वह प्रधानमंत्रियो का समर्थन प्राप्त करके अप्रत्यक्ष रूप मे अमानवीय सैनिक और राज्य तत्वो का समर्थन करेगा, इसकी मुझे उम्मीद नही थी। 'सर्वोदय' मे दोनो प्रधानमंत्रियो के पत्र पढकर मेरे चित्त का संतुलन बिगडा है। मैं बहुत दुखी हो गया हू। मेरी आतरिक वेदना शब्दो मे व्यक्त करना मेरे लिए संभव नही है। मैं किसी हिंसा मे या तथाकथित क्रांतिवादियो के सशस्त्र तौर-तरीको मे विश्वास नही करता। लेकिन राज्य तथा सैनिक शक्ति की हिंसा दमन की प्रतिक्रिया मे की गयी शक्ति हिंसा से कई गुनी अमानवीय है। इसे मैं पहले से मानते आया हू। सर्वोदय समाज की किसी पत्रिका मे राज्य तथा सैनिक शक्ति के साधनो की प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रशसा कोई करता हो तो मैं उसका सख्त विरोधी बनूगा। क्योंकि यह प्रशसा मेरी दृष्टि मे मानवता-द्रोही है। मेरी तीव्र भावना व्यक्त करने के लिए यह पत्र लिखा है। सर्वोदय समाज के आचार्य, विचारक तथा सभी साथी-मित्रो के पास मेरे विचार तथा भावना पहुचे, इस इच्छा से इसे लिखने का साहस मैंने किया है।

मुजफ्फरपुर —बाबूराव चंदावार

जनता को मौका

जे पी के आंदोलन ने उजागर कर दिया है कि जनता को बहलाये रखने के दिन अब लद चुके हैं। उसके खून-पसीने की कमाई से ऐशो-आराम मे मस्त रहनेवाले ये मक्कार और सुविधाजीवी पसल पडने से बौखलाकर जो कुछ कर रहे हैं, उनकी पहले से ही उम्मीद करना अस्वाभाविक होता भी नहीं। जनता को निर्णय का मौका मिल रहा है और इस अवसर का समुचित उपयोग उसके और देश के हित मे है।

जबलपुर —कांतिकुमार दवे

छत्तीसगढ़ का अकाल

छत्तीसगढ में इस वर्ष का अकाल भयावह एवं भीषण तो है ही-इसकी गंभीरता का अन्दाज फरवरी-मार्च, ७५ से ज्यादा पता चलेगा। मेरा निश्चित मत है कि उस समय लाखो लोगो को यह सरकार भुखमरी से नही बचा पायेगी। हम लोग इन पीडितो की क्या मदद कर सकेंगे, यह समय ही बतायेगा। आप दिल्ली मे इन अकाल पीडितो की तकलीफों को उजागर करने मे अपना योग देंगे, ऐसी आशा है।

बिलासपुर —हरीश केडिया

बीता सप्ताह

(शुक्रवार २५ से गुरुवार ३१ अक्टूबर, १९७४ तक)

देश

शुक्र—जे० पी० अपने जन्म-दिन पर जयपुर मे, सीतामढी मे गोलियो से २ की मौत

शनि—चार सर्वोदय नेताओं के बिहार से निष्कासन के आदेश, योजना मन्त्री धर का पटना प्रवास, जयपुर मे जे० पी० की पत्र-वार्ता

रवि—मृदुला साराभाई का निधन, किसिंजर का भारत आगमन, जे० पी० बीकानेर मे

सोम—जे० पी० लुधियाना मे, पटना मे कांग्रेस अध्यक्ष के काफिले की गाडी से कुचल कर एक बालक मृत, भीलवाडा मे पुलिस गोली से दो मृत

मंगल—लुधियाना मे जे० पी० की विराट रैली, भारत द्वारा डेविस कप फाइनल दक्षिण अफ्रीका से न खेलने की घोषणा

बुध—सफल महाराष्ट्र बन्द, बेगम अख्तर का निधन, नागालैंड के ७० ग्रामो और ऐजल मे कर्फ्यू घोषित, बंशीलाल और ललितनारायण मिश्र की जांच की जे० पी० द्वारा माग

गुरु—जे० पी० द्वारा दिल्ली मे चार रैलियो को संबोधन

विदेश

शुक्र—मास्को मे किसिंजर-ब्रेझनेव वार्ता

शनि—रबात मे अरब सम्मेलन शुरू

रवि—श्रीलंका की प्रधानमन्त्री ईरान यात्रा पर रवाना

सोम—बोलबाना में डिमाक्रेट दल की चुनावो मे विजय, लास ऐंजल्स मे ८० लाख डालर की नकली मुद्रा जब्त, हिन्द महासागर में रूसी बेड़ा

मंगल—निक्सन का आपरेशन

बुध—मुहम्मद अली पुन. विश्व मुक्केबाजी अजेता, ब्रिटेन द्वारा पाकिस्तान को दो युद्धपोतों की बिक्री,

गुरु—दक्षिण अफ्रीका के निष्कासन के १०-३ से सुरक्षा परिषद मे पारित प्रस्ताव पर ब्रिटेन, अमरीका, फ्रांस द्वारा वीटो।

भूदान-यज्ञ

सम्पादक

राममूर्ति : भवानी प्रसाद मिश्र

कार्यकारी सम्पादक : शारदा पाठक

वर्ष २१ | ४ नवम्बर, '७४ | अंक ५

१९ राजघाट, गाधी स्मारक निधि, नई दिल्ली-११०००१

लड़ने-भिड़ने के खिलौने

हम थोड़ा-सा अरण्यरोदन करना चाहते हैं। दशहरा बीत गया, रामलीला में हमने धनुष-बाण, गदा, भाले और त्रिशूल आदि हथियारों को हवा में घुमा फिरा कर किसी हद तक अपनी हिंसा-वृत्ति को तुष्ट कर लिया और रावण, कुम्भकर्ण और मेघनाद के पुतले जला डाले। मगर हम कहें कि हिंसा-प्रदर्शन का 'कम से कम पुतलों को जलाने का धार्मिक-आयोजन हमारे मनों को' संस्कार की जगह कुसंस्कार देता है तो लोग इसे 'धर्म-विरोधी' एक कथन तक कह सकते हैं। किन्तु विचार करना चाहिए कि रामलीला समाप्त हो जाने के कितने दिनों बाद तक भी हमारे बच्चे धनुष-बाण का खेल खेलते हुए नजर आते रहते हैं और धनुष बाणों के टूटने टूटते तक दीवाली आ जाती है जिसका ताल्लुक हमने जाने किस सिलसिले में, बम और पटाखों और अब जेटनुमा अग्निबाणों आदि से जोड़ लिया है। खिलौनों तो इन खिलौनों के भंडार में जाने कब से एक अनिवार्य अंग है। जिस बच्चे को जितने बम पटाखे या बम या अग्निबाण छोड़ने को मिलते हैं वह उतना उदास, अपने से अधिक भाग्यवान दोस्तों के आसपास झिड़की खाते हुए ही घूमता रहता है और मांग-टूंग कर एकाध बम चला पाये तो अपनी दीवाली को सफल मान लेता है। बच्चे दिन-भर पिस्तौल दागते फिरते हैं। हमारा कहना है कि हिंसा के ये खिलौने असल में हिंसा के पुष्ट बीज हैं जो बालक के मन की नरम और उर्वरा जमीन में गड़कर युवावस्था में पनपते, फूलते और फलते हैं।

भारत में हिंसा के खिलौनों का भाग्य से मौसम तय है। विदेशों में तो यह बारामासी खेल है और इसीलिए वहां के युवकों और उन्हें नेतृत्व देनेवाले बूढ़ों में हिंसा ऐसी बद्धमूल हो गयी है कि युद्ध विरोधी सौ-सौ आंदोलनों के बावजूद पनपती ही चली जाती है। मैंने कहा न कि हम थोड़ा सा अरण्य-रोदन करना चाहते हैं। हमारी यह बात अभी तो सुनी-अनसुनी ही कर दी जायेगी। किसी को नहीं लगेगा कि हिंसा के खिलौनों का आतंक-वाद या युद्धों से कोई ताल्लुक है। मगर हम बिना लंबे-चौड़े तर्कों में उतरे कहना चाहते हैं कि शिक्षक, विद्यार्थी, माता-पिता और धर्म पर विचार करनेवालों के सिवा हमारे शासनकर्ता और लोकनेता भी इसे सोचें और हिंसक खिलौनों के चलन की बुरी संभावनाओं को देखते हुए इस चलन को समाप्त करने में अपनी-अपनी शक्ति लगायें।

तात्कालिक फल के रूप में देश में होनेवाली मौसमी फिजूलखर्ची कम होगी और धीरे-धीरे इसके ज्यादा बड़े नतीजे सामने आयेंगे। *आज तो शस्त्रों में अति आकृष्ट और* मोहग्रस्त दुनिया को बचपन से ही इस डोरी से बांधकर खींचा और नचाया जाता है। बचपन के संस्कार बड़े प्रबल होते हैं। इन कुसंस्कारों की जगह खेल-खेल में, क्या अच्छे संस्कार नहीं डाले जा सकते—जैसे रक्षाबंधन के, दशहरे, ईद और दीवाली पर गले मिलने के, होली पर मिल-जुलकर हंसने-खेलने के।

हर गंभीर काम खेल और हर खेल गंभीर बनकर रह लेता है—यह एक हम सबके लिए भूले रहने की बात नहीं है। इस साल दिल्ली की एक रामलीला ने भ्रष्टाचार और काला-बाजारी के पुतले जलाये और इस तरह अपने कर्तव्य की इतिश्री मान ली—आकाशवाणी ने इस खबर को प्रसारित कर दिया और अखबारों ने छाप दिया। अब अगले बरस हर रामलीला में ये दो पुतले और जुड़ जायेंगे और इस बरस जिसने इसे शुरू किया है वह मुस्करा कर कहेगा—शुरू तो हमने किया था।

हम चाहते हैं कि पुतले न जलाने और हिंसक खिलौने के प्रचार पर रोक के प्रयत्न भी शुरू हों। जब वे फैलें तब जिसने शुरू किया वह कहे—'शुरू हमने किया था।'

भूतपूर्वों की महत्वाकांक्षा

बिहार में कहिये, देश में कहिये, जब से जे०पी० ने भ्रष्टाचार आदि के खिलाफ आंदोलन की बागडोर हाथ में ली है और देश में इस कारण जबसे फिर से सही मूल्यों की स्थापना का सपना लोगों की आंखों में जागा है, तब से सारे देश में क्षोभ के कारण जो नित्य कहीं न कहीं उपद्रव हो जाते थे और सरकार जिन्हें आसानी से दमनचक्र चलाकर कुचलती रहती थी, शांत हो गये हैं। आम आदमी सोचने लगा है कि हमारी तरफ से बोलनेवाले और गांधी के ढंग से लड़नेवाले सामने आ गये हैं, देर-सबेर अंधेर की आंधी थमेगी और फिर से सब एक बार पसीने की रूखी-सूखी चैन से खाकर गौरव के साथ जीने की हालत में आ जायेंगे।

बिहार के पिछले तीन दिन के अभूतपूर्व 'बंद' ने जनता की इस आशा को मानो हवा दी है। *आशा की चिनगारी लौ बनकर आस-*पास उजाला न फैलाने लगे, चौपट राजाओं की अंधेरगर्दी हर खास-आम को बहुत ही साफ नजर न आने लगे, इसका भय कुछ भूतपूर्व क्रांतिकारियों में जाग गया है। इसलिए पहले बिहार में भारतीय साम्यवादी दल और फिर कांग्रेस के नए अध्यक्ष ने जनता के आंदोलन का मुकाबला करने की घोषणा की है। प्रधानमंत्री को तमिलनाडु में अन्ना द्रमुक के अभिनेता-नेता एम०जी० रामचन्द्रन ने भी आश्वासन भेजा है कि अगर देश के पूर्व में बंगाल और बिहार में भूतपूर्व क्रांतिकारी उनके पक्ष में जे०पी० से लोहा लेने पर कमर कसे हैं तो दक्षिण में हम उसी झंडे को ऊंचा रखने की कोशिश करेंगे जिसे प्रधानमंत्री समाजवाद का परचम कहती हैं और उस पताका के पतन की कोशिश करेंगे, जिसे वे

काम वर्धा जिले का : मार्गदर्शन विनोबा का

गांधीजी की किताब है 'हिन्द-स्वराज्य' और बाबा की किताब है 'स्वराज्य-शास्त्र'। उसके मुताबिक जिस किस्म का स्वराज्य हम चाहते हैं उसका नमूना कम से कम एक जिले में खड़ा करें। जैसे नयी-तालीम है, गांव-गांव में नयी तालीम चले, ग्राम-स्वराज्य की हमारी जो कल्पना है उसके मुताबिक गांव-गांव में भूदान हो, ग्रामसभा बने और सर्व-सम्मति से अपना काम चलायें। किसानों को कई प्रकार के टैक्स देने होते हैं। वे टैक्स पैसे के रूप में न दें, अनाज में दें। अगर सरकार कहेगी पैसा दीजिये तो भी सरकार से कहें कि हम अनाज में ही टैक्स देंगे। आचार्यकुल की बात है। वर्धा, हिंगणघाट, आर्वी तीन जगह आचार्यकुल की योजना हो। सारे आचार्यों को इकट्ठा किया जाय, पक्षमुक्त होकर वे अपना काम करें। व्यापारियों के साथ संबंध बनाकर उनमें जो सज्जन हैं उनका साथ लें दुर्जनों को अलग किया जाये। व्यापारियों में भी सज्जन होते हैं, दुर्जन भी होते हैं तो सज्जनों का साथ लें। फिर यहां पर अनेक संस्थाएं हैं। उन सब संस्थाओं में अन्योन्य संबंध बनें। जैसे लेप्रसी फाउंडेशन है सगनवाडी में कुछ काम चलता है, सेवाग्राम में कुछ काम चलता है, महिलाश्रम है, यह ब्रह्म विद्या मंदिर है, सबका अन्योन्य संबंध बने तो सामूहिक शक्ति के सामने दुर्जनता टिक नहीं सकेगी। शराब बंदी तो करना ही है लेकिन अदालत-मुक्ति हो। गांव की समस्याएं गांव की सभा के सामने सर्वसम्मति से हल हों। अदालत में अधिक से अधिक केसेज गांव के ही जाते हैं। नागपुर के धर्माधिकारी जो न्यायाधीश हैं, वे कहा करते थे कि अदालत में अधिक से अधिक गांव के लोग जाते हैं। तो गांव अदालत-मुक्त हो।

खादी की बात है। हर गांव में चरखा हो, गांव में ग्राम-स्वावलम्बन हो यानी जहां तक गांव का ताल्लुक है पूरा गांव खादीधारी बने। उनके लिए पुराना चरखा ही चलाना चाहिए ऐसी बात नहीं, अंबर चरखा चले। जो कपड़ा गांव में तैयार होगा उसका उपयोग गांव में ही हो। इस प्रकार गांवों को संगठित किया जाये। इस तरह हमारे सर्वोदय के काम के जितने भी पहलू हैं सब पहलू गांव-गांव में हों।

दो प्रकार का क्रम हो सकता है। शराबबंदी पहले वर्धा तहसील में बाद में वर्धा जिले में। या तो पूरी सेक्टर पहले लें—धामजी से घोराड तक एक मर्यादा रखी जाये कि उतने वर्षों के अन्दर पूरा-पूरा करना।

गांव-गांव की तरफ से लोग चुनाव में सर्वसम्मति से खड़े हों—यह हमारा जो खास विचार है कि किसी पार्टी का कोई मनुष्य नहीं होगा, सारे गांव का राज होगा। गांव की तरफ से जो खड़ा होगा उसके खिलाफ खड़ा होने की हिम्मत कोई नहीं करेगा। इस प्रकार कम से कम यहां यह चित्र खड़ा हो। इस तरह मैंने आपके सामने विश्वरूप-दर्शन खड़ा किया है। इससे घबड़ाना नहीं। क्रम-क्रम से एक-एक काम करें।

सर्व सेवा संघ ने अपने सेवकों के कुछ नियम बनाये हैं। मैंने कहा एक नियम और जोड़ दो—हमारे सेवक मांसाहारी नहीं होने चाहिए। यह महावीर शताब्दी का वर्ष है। जो सेवक मांसाहार करते हैं, वे इस वर्ष मांसाहार छोड़ दें। मांसाहार आउटडेटेड है। उसमें ज्यादा खर्चा होता है। प्रति व्यक्ति मांसाहार करनेवालों को दो एकड़ जमीन चाहिए। शाकाहार करनेवालों को प्रति व्यक्ति चार एकड़ जमीन चाहिए। जमीन ज्यादा लगती है और जमीन दिन-ब-दिन कम पड़ रही है। इसलिए जैसे आगे शराब नहीं चलेगी वैसे मांसाहार भी नहीं चलेगा।

स्त्रीशक्ति संगठन का काम है। वह भी वर्धा जिले में हो सकता है करना चाहिए।

जमनालालजी की इच्छा थी, वर्धा नगर में केवल गाय का दूध हो।

ग्राम सेवा मंडल को तो इसमें भाग लेना ही चाहिए। लेकिन उन पर काम सौंपकर हम मददगार बनें। यह नहीं होगा। ग्राम सेवा मंडल पर आधार न रखकर 'वर्धा स्वराज्य संस्था' बनायी जाये। वर्धा जिला और वर्धा शहर में १००-१२५ संस्थाएं होंगी। उनकी यादी बनायी जाये।×
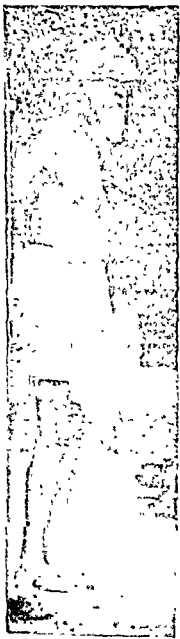
सरकार ने स्वावलम्बन की दिशा पकड़ी है

लोगों ने उस पर चलने को कमर कस ली है

बड़वाग्नि), ऐनि का अर्थ है पर्याप्त—यह संस्कृत के 'इति' शब्द से निकला है। इसकी दस की गिनती इस प्रकार बनती है—एक्का, देकना, तुनु, हतर, पह, हाय, हत् (हम पंजाबी में कहते हैं सत), नयम, दहाय। वे सामान्यतः कई हिन्दी के शब्दों को 'य' अथवा 'व' लगा सिंहली बना लेते हैं। नगरय(नगर), कामरय (कमरा), मेसय (मेज) इसके उदाहरण हैं। इनकी भाषा का बिहारी (उत्तर-पश्चिमी) के साथ भी कुछ मेल जोल होता है,—जैसे करनवा, यनवा, एनवा आदि आदि। इनके नाम बहुत ही सुन्दर लगे—प्रदीपिका, सुहासिनि, चन्द्रिका, मनोमा कुमुदिनी, इन्द्राणी, मालिनि जैसे लड़कियों के नाम और लड़कों के नाम जैसे उपाली प्रदीप, उदय, प्रियन्त, जयन्त, निशान्त विशान्त आदि। कुछ ही दिन पूर्व हमने सिंहल भाषा सीखनी शुरू की। वैसे यह भाषा हमें जल्दी आ सकती है। एक बहुत मजे की बात रही। प्रारम्भ में यहां के सर्वोदय के लोगों को लगता था कि अंग्रेजी न बोले बिना गुजारा नहीं होगा। परन्तु अब सिंहल क्षेत्र में आये हैं तो लोग स्वयं ही कहते हैं कि आप अंग्रेजी नहीं हिन्दी बोलें। सिंहल और हिन्दी का साम्य भी इससे पता चलता है और हृदय नजदीक आते हैं। यहां के युवकों में हिन्दी व संस्कृत के प्रति आदर देखा।

यहां जनसंख्या के हिसाब से भूमि ज्यादा है इसलिए भी स्वच्छता का दर्शन होता है। परन्तु इससे बढ़कर यह बात है कि हर परिवार ने अपने बगीचे के एक कोने में संडास बना रखा है—कहीं तो गड्ढेवाला और कहीं वाटरसील। किसी भी व्यक्ति को जहां तहां बैठा हुआ नहीं देखा।

श्रीलंका में पूर्णिमा अवकाश का दिन होता है। लोग उस दिन 'सिल' (शील-नियमों) का पालन करते हैं, छोटे-बड़े, स्त्री-पुरुष बड़ी संख्या में दोपहर बारह बजे से पहले खा लेते हैं और फिर उसके बाद पूरा दिन नहीं खाते—सारा बौद्ध मन्दिरों में जाकर पूजा करते हैं और कथा इत्यादि सुनते हैं। ऐसे पवित्र अवसर पर संयोगवश हम अनुराधापुर पहुंच गये। यह श्रीलंका का ऐतिहासिक और धार्मिक दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। पुराने जमाने में यह श्रीलंका की राजधानी रहा है। २२०० वर्ष पूर्व, संघ-मित्रा भारत से बोधि-वृक्ष (पीपल) की शाखा लेकर यहां आयी थी। उस समय के राजा तिष्यतिस ने उस शाखा का बहुत आदरपूर्वक स्थापन किया था। वह बोधि-वृक्ष आज भी सुरक्षित है और बौद्ध लोग इस बोधि-वृक्ष तथा विहार (भव्य) का रक्षण प्राणों से भी बढ़कर करते हैं। उनकी मान्यता है कि जब तक ये सुरक्षित रहेंगे तब तक श्रीलंका पर किसी प्रकार का खतरा नहीं आ सकता।

उस बोधि वृक्ष के स्थान पर एक बुद्ध-मन्दिर बना हुआ है जिसमें बुद्ध की बहुत बड़ी-बड़ी तथा सुन्दर मूर्तियां स्थापित हैं। पूर्णिमा के दिन सुबह से रात तक मन्दिर में लोगों का तांता लगा रहा। पूजा की पोशाक सफेद है—सर्वत्र सफेद ही सफेद पहरावा, उस दिवस को गाम्भीर्य प्रदान कर रहा था फिर मंदिर के बाहर फूलों की दूकानें हैं और उन पर भी अधिकतर सफेद चम्पा, सफेद कमल व अन्य प्रकार के सफेद फूल सजे हैं। दो अन्न-सत्र सामनेवाले बगीचे में चल रहे हैं। सैकड़ों की संख्या में 'सिल' रखनेवाले लोगों को मुफ्त भोजन खिलाया जा रहा है। भोजन के समय को छोड़कर एक के बाद एक भिक्षुओं द्वारा प्रवचन-माला चलायी जा रही है। पहले तो लोक-यात्रियों को यहां अपना विचार रखने का मौका नहीं मिल पाया था, परन्तु प्रभु-कृपा से कुछ ऐसा संयोग बैठा कि रात ६ बजे २० मिनट बोलने का मौका मिला। लोगों को यह मालूम पड़ा कि भारत से ४ बहनें १४ हजार मील पैदल चलकर आयी हैं तो वे अवाक् रह गये और जिज्ञासा व श्रद्धा के कारण अपने-अपने स्थानों से उठकर मंच के पास आकर इकट्ठे हो गये। हिन्देश के साथ-साथ हिन्दी भाषा की उनपर गहरी छाप पड़ी, सामान्य जनता को भी महसूस हुआ कि सिंहल तथा हिन्दी में कितने शब्द समान हैं। प्रवचन समाप्त होते ही उपासी बौद्ध-बहनों ने यात्रियों को घेर लिया और उनके सिर पर हाथ रखकर आशीर्वादों की वर्षा करने लगी। ऐसा लग रहा था मानों लोक-यात्री बहनों से मिलकर उन्हें आत्मानन्द का अनुभव हो रहा है। एक बौद्धभक्त बहन आयी। उनके मुख से सहसा निकला (सविकल्प) 'आपको जल्दी ही निर्वाण प्राप्त होगा'। इन शब्दों से हमारी भावनाओं के बांध टूट कर अश्रुओं के रूप में प्रकट हो गये।

अनुराधापुर का धार्मिक स्वरूप तथा ऐतिहासिक अवशेष सुरक्षित रखने के लिए विशेष प्रयास किया गया है। अन्य प्रकार के सब भवन उठा दिये गये हैं। चाय, सिगरेट आदि किसी प्रकार की दुकानें नहीं हैं, सिवाय पूजा के फूलों के। हजारों लोग आ रहे हैं परन्तु अत्यन्त शांति है, कोई ऊंची आवाज से नहीं बोलता है। बुद्ध संग्रहालय भी देखा।

दो दिन पूर्व मातले जिला में प्रवेश किया है। प्राकृतिक दृश्य और रमणीय होता जा रहा है और पहाड़ियों की ऊंचाई भी बढ़ती जा रही है। मौसम बहुत ही सुहावना है। दम्बुल्ला नगर में एक ऊंची टेकरी पर बुद्ध-मन्दिर देखा। मन्दिर २,००० वर्ष पूर्व एक राजा ने बनवाया था। बुद्ध की समाधि व महापरिनिर्वाण की भव्य शयन मूर्ति के दर्शन करके मन स्वतः एकाग्र हो गया। कुल बुद्ध मूर्तियां तो करीब १५०० होंगी परन्तु करीब १२५ बुद्ध मूर्तियां यहां २००० वर्ष पुरानी देखीं।

(यह पत्र प्रकाशित होने तक लोकयात्री दल कैन्डी, कुरनेगल और केगोल जिलों की भी यात्रा करके अन्तिम जिले कोलम्बो में पहुंच गया है जहां वह १८ नवम्बर तक यात्रा करेगा)

भारत में विविध-भारती और रेडियो सीलोन के विज्ञापन खूब सुने जाते हैं। यहां गांवों की तो दूर शहरों में भी विशेष विज्ञापन नहीं देखा। कुछ सिनेमा के विज्ञापन जरूर दिखते हैं पर उन में भी फिल्म, सिनेमाघर और प्रमुख सितारों के नामों के सिवा कुछ नहीं। शराब पीते हैं पर उसका विज्ञापन कहीं नहीं दीखता।

(लोकयात्री दल के जाफना से आये पत्र से)

कच्छ जैसी जगहों की चिन्ता सबकी चिन्ता बने

कच्छ में गांधी धाम से थोड़ी दूर पर कांडला नाम का एक अच्छा खासा बन्दरगाह है। यों तो इसके आसपास का हिस्सा बहुत हरा-भरा नहीं है, फिर भी हरा-भरा तो उसे कह ही सकते हैं। उसके पास के दो-एक गांव तो इतने सुन्दर हैं कि बाहर से आने वाले पर्यटक अगर किसी के बताये वहां जा पहुंचते हैं तो उन्हें खुशी होती है कि ऐसी शांत और सुन्दर जगह किसी ने उन्हें बतायी।

किन्तु अब कांडला के आसपास का यह हरा-भरा हिस्सा और ये सुन्दर-सुन्दर से गांव ऊजड़ हो गये हैं। कच्छ में वर्षा वैसे भी बहुत नहीं होती। इस वर्ष तो लगभग हुई ही नहीं। हजारों की तादाद में लोग और उनके चिर-साथी अर्थात गाय-बैल कच्छ को छोड़कर दूसरी जगहों में आसरा खोजने निकल पड़े। *चारों तरफ जबर्दस्त गरीबी फैली हुई है।* ८० प्रतिशत से अधिक आदमियों के पास कोई काम नहीं है। पाठशालाएँ और अस्पताल दूर-दूर तक खोजे नहीं मिलते। कच्छ के रण में एक आध जगह कोई खजूर का पेड़ जाने कहां से पानी खींच कर अभी तक हरा बना हुआ है, यानी आज कच्छ में कुछ नहीं है, सिवाय भूखी भीड़ के—जिसमें बूढ़े हैं, जवान हैं और चमड़े पर सिकुड़न पड़ी हुई है। बच्चों की वह जबर्दस्त तादाद है जिनके पेट अनाहार से सूज गये हैं। कच्छ के आसपास का यह वर्णन देश के कई हिस्सों पर लागू हो सकता है, चाहे जहां देखा जा सकता है कि जमीन परती और सूखी पड़ी है। और जिस दुनिया में हजारों जगह जिस पल पर मौज शौक की लहरें उठ रही हैं, उन सूखे-साखे हिस्सों में कष्ट के बवंडर।

सच कहें तो हाल सिर्फ कच्छ या भारत का ही नहीं है सारी दुनिया का है। *अन्न की* कमी का कुल मिलाकर यह हाल है कि जब दुनिया के उत्तरी हिस्सों में इस साल रबी की फसल का लेखा-जोखा किया गया तो यह पता चला कि कुल एक महीने का खाद्यान्न दुनिया के इस आधे हिस्से में पैदा हुआ है। खाने का सवाल आज दुनिया के सबसे बड़े सवालों में है। अगर किसी न किसी ढंग से ज्यादा पैदावार करके इन रूखे-सूखे हिस्सों में अन्न नहीं पहुंचाया जाता तो, कुछ लोगों ने जांच के बाद यहां तक कहा है कि आगामी कुछ वर्षों में एक अरब आदमी भूख से मर जायेंगे।

इसी नवम्बर में विश्व खाद्यान्न सम्मेलन रोम में किया जा रहा है और अकेली इस एक बात से यह जाहिर होता है कि जहां अन्न की इफरात है और जहां अन्न नहीं है वे लोग परिस्थिति से कितने घबरा गये हैं। परिषद में जो प्रस्ताव पेश होनेवाले हैं उनमें से एक प्रस्ताव यह भी है कि जहां-जहां अन्न की इफरात पैदा होती है वहां भी सब जगह अन्न के खाने की रफ्तार निश्चित की जाये और ऐसे भण्डार तैयार करके रखे जायें कि अकाल और भुखमरी के जमाने में उन्हें दुनिया के कोने में भेजा जा सके। इसके साथ ही इस बात पर भी गहरा सोच-विचार किया जाता है कि अवर्षण, बाढ़ और फसलों को नष्ट कर देनेवाले कीड़े और टिड्डियों का मुकाबला कैसे किया जाये।

सम्मेलन में जो लोग भाग लेने जा रहे हैं वे सब अकाल की विकराल परिस्थितियों से किस प्रकार लड़ा जाये, इस बारे में एकमत नहीं हैं। कुछ लोगों का कहना है कि अकाल और सूखे की आज की हालत स्थायी नहीं है। एशिया और अफ्रीका में लगातार कुछ वर्षों से ठीक वर्षा न होने के कारण यह परिस्थिति उत्पन्न हुई है और इसलिए उन देशों को दूसरे देशों से बहुत बड़े परिमाण में गल्ला खरीदना पड़ा है जिसके कारण जिन देशों में बहुत गल्ला पैदा होता है वहां भी उसके दाम बढ़ गये हैं। जो लोग इस तरह सोचते हैं उनका ख्याल है कि संकट-काल थोड़े दिनों का है। बहुत जल्दी दुनिया में अन्न की वैसी ही हालत हो जायेगी जो सन् ७० और ७१ में हुई थी। वे इसका सबब समझाते हुए कहते हैं कि अब ऐसे बीजों का आविष्कार हो चुका है जो कम बरसात होने पर भी ज्यादा फसल दे सकते हैं। और उन्हें हिन्दुस्तान और फिलिपाइन्स जैसे देशों में बड़ी सफलता के साथ आजमाया जा चुका है।

दूसरे कुछ विशेषज्ञ इतने आशावादी नहीं हैं। वे संकट-काल को कुछ दिनों का नहीं मानते। उनका ख्याल है कि इसका दौर लम्बा चलेगा। इस सोचने के पीछे उनकी समझ में सबसे बड़ा कारण तो यह है कि दुनिया का ऋतु चक्र बदल रहा है। मौसम पहले जिस तरह नियम से आते जाते थे वैसे ही और ठीक ढंग से नहीं आते जाते, 'कहीं सूखा और कहीं बाढ़' अब आये दिन की घटनाएं हो जायेंगी और खासकर उन हिस्सों में जहां आबादी घनी है और जहां की जमीन हजारों बरसों से जोती जा रही है। बाढ़ और सूखे की परिस्थिति के साथ-साथ एक नयी चीज जो आकर जुड़ गयी है वो है ऊर्जा शक्ति और रासायनिक पदार्थों की कमी। अवर्षण ने सिंचाई के लिए बनाये गये बांधों में पानी की कमी पैदा कर दी है *और इसलिए बिजली के उत्पादन* पर जबर्दस्त असर पड़ा है। मिट्टी के तेल से चलनेवाले कारखानों में इस कमी की वजह से बिजली का उत्पादन कम हो गया है और रासायनिक पदार्थों की कमी से जितनी मात्रा में रासायनिक खाद तैयार होना चाहिए उतनी मात्रा में वह तैयार नहीं किया जा सक रहा है। इसलिए सिंचाई और खाद की उन

कुछ प्रगतिशील देशों में अन्न का प्रति व्यक्ति उपभोग

देश	आकलन का वर्ष	प्रतिदिन उपभोग (ग्रामों में)
अमरीका	१७	१३३
कनाडा	६७	१६८
पश्चिमी जर्मनी	६७ ६८	१६२
इग्लैंड	६७ ६८	२००
आस्ट्रेलिया	६६-६७	२१६
स्विट्जरलैंड	६६-६७	२३०
फ्रांस	६६-६७	२३०
जापान	६७-६८	१८०
भारत	६६	१६५

कच्छ, बांगला देश और बिहार जैसी हालत पूरी आदमी की जाति के लिए शर्म की बात है।

जगहों में कमी पड़ रही है जहां की जमीन अच्छी है, जहां नहरें भी हैं और जहां यन्त्रों से खेती की जा रही है।

बहरहाल दोनों ही प्रकार का मन रखने वाले यह बात तो मानते ही हैं कि जैसे बने दुनिया में ज्यादा अन्न पैदा करना एकदम जरूरी हो गया है। बहस की इसमें गुंजाइश नहीं बची है क्योंकि अगले २६ वर्षों में कोई कुछ भी क्यों न करे दुनिया की आबादी आज से दुगुनी हो जायेगी।

इसका इलाज क्या है? एक ही इलाज है कि सारी दुनिया को एक समझा जाय। जिनके पास साधन हैं वे जीतोड़ मेहनत करें और केवल अपने लिए ही नहीं सारी दुनिया के लिए अन्न की पैदावार में जुट जायें। यह कोई ऐसी बात नहीं है जो समझी नहीं जा सकती और इसलिए की नहीं जा सकती। कच्छ, बांगला देश और बिहार की हालत जगह-जगह पैदा होती ही रहे यह पूरी आदमी की जाति के लिए शर्म की बात है। फिर यह बात भी सही है कि अगर एक बार *भूख के मारे हुओं को ठीक मदद* मिल जाये तो वे भी जी उठेंगे और हर बार उन्हें इतनी मदद की जरूरत नहीं पड़ेगी। धीरे-धीरे ऐसा दिन भी आ सकता है जब वे लेने के बदले देनेवाले बन जायें।

खेती की उन्नति के आड़े आनेवाली चीजों में बीसियों बातें हैं और इसलिए जहां की जमीनें अच्छी हैं और साधन भी पर्याप्त हैं *वहां भी फसल भरपूर से ज्यादा होगी*, ऐसी निश्चित भविष्यवाणी नहीं की जा सकती। ऊपर की सब बातों को सोचते हुए यह समझ *लेना बहुत जरूरी है* कि अगर अफ्रीका, हिन्दुस्तान और बांगला देश यहां तक कि चीन जैसी जगहों में अन्न की पैदावार बढ़ाना है तो इसके लिए कई बातों पर जोर देना पड़ेगा जिनमें खेती के लायक जमीन तैयार करना, सिंचाई के लिए पानी का प्रबन्ध करना, फाजिल पानी को ठीक जगह ले जाकर इकट्ठा

ऐसे भी लोग हैं जो अनाज को कूड़े जैसा फेंक देते हैं और उस कूड़े से 'दाना-दाना' जिन्दगी बटोरने को मजबूर भी कम नहीं हैं।

करना और एक जगह पैदा होनेवाली चीज को दूसरी जगह पहुंचाने के ख्याल से उपयुक्त सड़कों आदि का निर्माण शामिल है। इन चीजों को रोकनेवाले तत्व भी पड़े हुए हैं और वे हैं ठीक अनुभव का अभाव, मार्गदर्शन करने वालों की कमी और इस सबसे बढ़कर चीजों को बनाने और सुधारने के लिए आवश्यक पूंजी का अभाव। इसके सिवा हर देश की कुछ ऐसी जरूरतें हैं कि उनमें भी पैसा और शक्ति लगाना जरूरी हो जाता है। और इस सबसे बड़ी जरूरत की तरफ से लोगों का ख्याल हट जाता है। कम से कम भारत में तो यह गलती हुई ही है। हमने अपनी योजनाओं में खेती को पहली जगह नहीं दी। कितनी ही ऐसी चीजों को महत्व दे दिया जिन्हें पहली या दूसरी जगह तो क्या बिल्कुल आखिरी जगह ही दी जा सकती थी। उत्तर अफ्रीका और मध्य पूर्व में खेती पर ध्यान दिया गया किन्तु खेती को नष्ट करनेवाले टिड्डी दलों की रोकथाम पर खास नजर नहीं रखी गयी और नतीजा यह हुआ है कि हजारों वर्गमील जमीन में लगी हुई पैदावार साल-दर-साल टिड्डियों का भोजन बन जाती है। पिछले १४ वर्षों से संयुक्त राष्ट्र के डेवलपमेंट अर्थात विकास विभाग की ओर से कोई ४० देश मिलकर इस सब काम को अपने हाथ में लिये हुए हैं, मगर कह सकते हैं कि अभी सेर में एक पौनी भी नहीं कती। इतना जबर्दस्त है यह सवाल।

संयुक्त राष्ट्र के तत्वावधान में जुटे हुए ४० देशों की तरह अगर सभी देश अपनी-अपनी जरूरत को समझकर जहां जो काट-कसर हो सकती हो उसे करते हुए अपने देश की पैदावार बढ़ाने, खाने-पीने के तरीके बदलने और जहां जितनी बचत हो सकती है अन्न की उतनी बचत करने की दिशा में काम करने लगें तो धीरे-धीरे ऐसे देशों में भी अन्न के भण्डार कायम हो सकते हैं जिनमें आज अन्न की कमी है। हर देश अपनी जरूरत भी समझे और दूसरों की भी जरूरत समझे। दुनिया विज्ञान के बल पर जो सिमट कर एक हो गयी है सो इसलिए हुई है कि अब किसी एक देश या हिस्से का दुख या उसकी सम्पन्नता केवल उसी का दुख या सम्पन्नता नहीं है।

हम आशा करते हैं कि नवम्बर में रोम में जो विश्व खाद्य-परिषद होने जा रही है वह दुनिया के सभी देशों को इस जरूरत की दिशा में जगायेगी और सब लोग मिल-जुल कर कुछ ऐसा करेंगे कि भुखमरी का डर दिन ब दिन कम ही होता चला जायेगा।

दोनों व्यक्तियों को समझने की कोशिश करें

—डेनियल माजगांवकर

कुछ समय से सर्वोदय क्षेत्र में एक चर्चा फिर छिड़ी हुई है। ७ अक्टूबर के 'सर्वोदय' के अंक में श्रद्धेय नारायण दादा के लेख में उसका जिक्र है।

सर्वोदय अधिवेशन से हुई चर्चा और बाद में निर्मला बहन के वक्तव्य तथा अन्य वक्तव्यों को पढ़कर मन में जो विचार आये, उन्हें मैं सबके साथ 'शेयर' करना चाहता हूं। यह मेरा अपना दृष्टिकोण है—इसमें न तो किसी की नुक्ताचीनी है, न किसी का बचाव ही।

हमें एक चीज तो समझ ही लेनी चाहिए कि देश जो आंदोलन सन ५१ से चला उसमें कार्यकर्ता अपनी-अपनी वैचारिक श्रद्धा के आधार पर इस आंदोलन में आये। कुछ ने यह सोचकर कि विनोबाजी जैसे व्यक्ति ने यह काम उठाया है, अपने को श्रद्धापूर्वक विनोबाजी के चरणों में समर्पित किया। कुछ ने विनोबाजी के आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक विचारों की छानबीन अधिक गहराई से की, अपने पुराने कार्यकलाप और मान्यताओं के साथ उसकी तुलना की, नापा-तौला, और फिर वे विनोबाजी के उन विचारों के प्रति एक अचल श्रद्धा से इस आंदोलन के साथ हो गये।

ऐसे कुछ इने-गिने कार्यकर्ताओं में से जे० पी० एक थे। वे विनोबाजी के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर इस आंदोलन में नहीं आये। बिहार के आंदोलन को समझने की कोशिश करते समय इस फर्क को, जो काफी-बड़ा फर्क है, हमें याद रखना चाहिए।

आंदोलन की मुख्य धारा से सतत तालमेल रखते हुए जे० पी० ने अपना व्यक्तित्व, अपनी वैचारिक स्वतन्त्रता, स्वतन्त्रता आंदोलन में हिस्सा लेने के कारण हुए अपने अनुभव की पूंजी को संभाल कर रखा और राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में होनेवाली अनेक प्रकार की समस्याओं पर अपने विचार रखे। वे विचार विनोबाजी या उनके साथियों से मिलते-जुलते रहे हों, यह अलग बात है। न मिलते हों तो नम्रतापूर्वक विचार का भिन्नत्व कायम रखा और मोटे तौर पर सहमति की तरफ ध्यान देते हुए काम करते चले गये।

जे० पी० और विनोबा को समझने में एक उदाहरण सहायक होगा। लोकनीति और राजनीति को लेकर जे० पी० के विचारों के बारे में आज काफी तीव्र प्रतिक्रिया सर्वोदय-समाज में और बाहर भी दिखायी देती है। दक्षिण में सर्वसेवा संघ की प्रबन्ध समिति की बैठक थी। चुनाव-लोकनीति का या ऐसा ही कोई सवाल सामने था। अन्त में जे० पी० से प्रस्ताव का मसविदा बनाने को कहा गया, उन्होंने बनाया। जब मसविदा विनोबाजी के सामने आया तो, उन्होंने इस आशय का वाक्य प्रबन्ध समिति में कहा—"जो बात चुभती है, किसी के दिल को ठेस पहुंचाती है उसमें अहिंसा की कमी होती ही है, सत्य की भी कमी उसमें प्रगट होती है।" यह कथन एक बड़ा प्रहार कहा जा सकता है।

वेडछी के सर्वोदय कार्यकर्ता सम्मेलन में जे० पी० ने कहा था—प्रबन्ध समिति में हुई चर्चा के बारे में ऐसी कितनी ही बातें हैं, जिनके बारे में मैं विनोबाजी से पूछने नहीं जाता। मेरे अपने विचार और निष्कर्ष उनके बारे में होते हैं और उन्हें मैं जनता के सामने रखता हूं। लेकिन हिंसा-अहिंसा का सवाल होता है तो वहां बाबा के चरणों में सिर झुकाता हूं।

> **आन्दोलन में भाग लेने के लिए विनोबा की अनुमति के मामले पर ६ सितम्बर के अंक में दादा धर्माधिकारी के लेख से आरम्भ चर्चा का इस लेख से समापन किया जा रहा है। सं०**

कहने का तात्पर्य यह कि एक ओर ऐसी कुछ बुनियादी बातों पर विनोबाजी के साथ उनके विचारों का मेल था तो दूसरी ओर कितने ही सवालों पर दोनों के विचार काफी भिन्न थे।

सन ५५ से अर्थात जबसे मैं उन्हें इस आंदोलन में देखता आ रहा हूं, ऐसे कई सवाल आये जब उन्होंने अपनी शक्ति, सीधे सर्वोदय के काम में लगाने के बजाय उस समय के अहम सवालों को हल करने में या उनके प्रति लोकमत जगाने में लगायी। तब उन्होंने यह नहीं सोचा कि विनोबाजी को क्या लगेगा, नेहरूजी को या अन्य साथियों को क्या लगेगा? यह बात कितने ही निष्ठावान रचनावादियों को अखरती रही। ऐसे साथी निजी तौर पर टीका-टिप्पणी भी करते रहे, लेकिन जाहिर तौर पर उन्होंने कुछ नहीं कहा। उदाहरण के तौर पर हंगरी और तिब्बत पर आक्रमण, पंचायती-राज (विनोबा ने तो इसका मखौल उड़ाया है), ग्रामीण औद्योगीकरण, परिवार नियोजन, बिहार का अकाल, चीन का आक्रमण और सरकार के युद्ध-प्रयासों का समर्थन (राष्ट्रीय सुरक्षा कोष में राजेन्द्र बाबू को अपना सोने के गहनों का समर्पण) और उस सन्दर्भ में निकाली मैत्री-यात्रा, नागालैंड, कश्मीर के बारे में उनका प्रयास और अभी-अभी बांगलादेश के लिए उनका विश्व-भ्रमण।

इतनी सारी बातों पर उन्होंने ध्यान दिया। उन्होंने पहले यह शायद ही सोचा हो कि मैं यह काम करूंगा तो विनोबा को कैसा लगेगा? शायद पहले यही देखा कि अपनी बुद्धि और अनुभव इस प्रश्न के बारे में क्या कहते हैं। बाबा को उसमें एक राय है तो खुद में मजबूर। उसमें उन्हें अपनी शक्ति बढ़ने का भी अनुभव आया होगा। लेकिन बाबा की राय उनकी राय के पक्ष में नहीं हो तो नम्रतापूर्वक अलग और अपने काम की पूरी जिम्मेदारी और क्षमता भी दिखाते रहे।

वैसे तो हमने यह भी देखा और सुना कि विनोबाजी ने उनके कुछ विचारों और

कामों के बारे में कभी सहमति भी प्रकट की है और कभी यह भी कहा है कि जे०पी० को यह कहने की जरूरत नहीं थी। कभी-कभी मजाक में विनोबाजी जे०पी० का १०-१५ दिनों का कार्यक्रम देखते रहते और सबको पढ़कर सुनाते कि इनके कार्यक्रमों में दिल्ली जाने का कार्यक्रम कितनी बार बना है। मजाक तो खैर वह था ही, लेकिन एक सूक्ष्म सा इशारा भी था।

हमें यह सब देख-समझकर ही जे० पी० के आंदोलन के बारे में अपनी राय देनी होगी। विनोबाजी नहीं चाहते, वह जे०पी० करें ही नहीं, ऐसा यदि मानते हैं तो कहना चाहिए कि जे०पी० को समझने में बड़ी गलती की गयी है।

२०-२१ साल से जे०पी० सर्वोदय के आन्दोलन में हिस्सा लेते रहे हैं। गांवों की समस्याओं को तो सर्वोदय आंदोलन में आने से पहले ही उन्होंने समझा था। और इसी कारण जब विनोबाजी का भूदान के रूप में एक नया योगदान प्रक्रिया की समस्याओं को सुलझाने के लिए सामने आया तो शायद जे०पी० ही पहले ऐसे समाजवादी थे जिन्होंने उसकी गंभीरता को, उसकी सशक्त सम्भावनाओं को पकड़ा। उस विचार को लेकर गांवों की छोटी-छोटी सभाओं में उन्होंने भाषण दिये। उन्होंने गांवों में जाकर निश्चयपूर्वक यह बात समझायी कि ग्राम-स्वराज्य, लोकशक्ति जगाना, यही एकमात्र रास्ता है जो देश को ऊपर उठा सकता है। २०-२१ साल उसमें गये। मगर जिस ग्राम-स्वराज्य की बात हमने की, वह कहीं साकार नहीं हुआ, लोकशक्ति का उस माने में कहीं जागरण नहीं हो सका जिस माने में विनोबाजी चाहते थे। बाजार मुक्ति, शोषण मुक्ति नहीं हो सकी। और अभी तक ये बातें दूर ही बनी हैं। यह ठीक है कि विनोबा अनन्तकालवादी हैं, वे इसमें चिंतित नहीं होते। मगर जे०पी० सोचने लगे कि ऐसी हालत में समाज में निहित दोषों को हटाने का तरीका क्या हो। उनकी कालेन के उपवास के समय ५३-५४ में बिलकुल इसी तरह का सवाल उनके मन में था—व्हाई ए मैन गुड बी गुड ?" फिर अच्छे बनने की प्रेरणा क्या हो? और उन्हें इसी सवाल में से सर्वोदय की उपलब्धि हुई। आज उनके मन में सवाल

डेनियल माजगांवकर

खड़ा हुआ है कि क्या ग्रामदान, ग्राम-स्वराज के बावजूद सरकार नाम की संस्था द्वारा होनेवाले अन्याय, भीषण जुल्म और भ्रष्ट नीतियों की उपेक्षा करें या उनके विरोध का कोई शांतिमय कार्यक्रम देकर लोकशक्ति खड़ी की जाये। इसी सवाल में से इस संघर्षात्मक अहिंसामूलक, या कहिये शांतिमय, क्रांति का आरम्भ हुआ है।

यह सर्वोदय का है या नहीं है, सर्वसेवा-संघ का है या नहीं है, ये तो मर्यादाएं हैं और सीमित हैं। इन पर विचार करते रहना उस समय विचित्र सा लगता है जब हमारे विशाल देश में सन ४२ की याद ताजी करने-वाला कोई आंदोलन छिड़ जाता है। इन सब चर्चाओं की मर्यादाओं को लांघकर वह देश के कोने कोने में फैले गरीब, तिरस्कृत, शापित, पीड़ित जनता के हृदय पर पहुंचकर उसे छूता ही नहीं, पकड़ता है। इसीलिए सर्वोदय के अधिकांश सेवक इस तरह मर्यादित विचार नहीं कर पा रहे हैं।

जे०पी० ने जुलाई के अधिवेशन में साफ कहा—"मैंने यह काम अपनी जिम्मेदारी पर शुरू किया है। न सर्वसेवासंघ को 'कमिट' किया है, न विनोबा को। मैं स्वयं 'कमिट' हुआ हूं। आप सब मुझे साथ दें तो मुझे खुशी जरूर होगी, आप सब मिलकर उसकी निन्दा भी करें तो भी कोई हर्ज नहीं।"

इसके बाद उस मामले पर बहस बेमानी है। नतु, नच का सवाल नहीं बचता। हां, यह सवाल जरूर उठता है कि जो उसमें भाग लेना चाहे, वे किस हैसियत से उसमें हाथ बटायें। विनोबाजी ने कहा—"पूरी आजादी है—प्रयोग होने दीजिये।"

इसमें कोई शक नहीं कि विनोबाजी का आशीर्वाद इस आंदोलन को नहीं मिला। भिन्न-भिन्न लोगों ने अपनी-अपनी सुविधा के लिए, अपने-अपने विचार बनने के लिए, और कुछ ने तो विनोबा की राय का केवल शोषण करने के लिए उनकी राय मांगी। वह उन्होंने अपनी विशेष शैली में दी भी। इस मुद्दे को ज्यादा घसीटने की जरूरत ही नहीं है कि विनोबाजी इससे सहमत हैं या उनका आशीर्वाद इनको हासिल है। विनोबा के ही विचारों के अनुसार ही नीतियां तय होती चली जायें, यह तो स्वयं विनोबा भी कभी नहीं चाह सकते। गांधीजी की तरह प्रयोग की छूट तो वे देते ही हैं।

विनोबाजी ने सीधा संघर्ष बचाया है—एक तरह से 'रणछोड़' द्वारा इसमें उनके सामने रहे हैं। आंदोलन के दौरान हमारे सामने इसके उदाहरण आये हैं। कोरापुट की लड़ाई, बिहार में भूदान प्राप्ति के शिखर पर चढ़ना और फिर 'रण छोड़' देना, "यदि नागालैंड में फिजो को मेरा वहां जाना मंजूर नहीं तो मैं जाऊंगा नहीं"—यह कहना, दिल्ली और बड़े बड़े शहरों को जहां तक बने, न छेड़ना, ये सब उनकी बनावट के अंग हैं। यह कोई शिकायत नहीं है। वे तो मजाक में कहते भी हैं, "मैंने शादी भी इसलिए नहीं की कि वह मुझे बड़ा झंझट का मामला लगता था।"

इस हालत में यदि देश में विनोबा से मतभेद या कभी कभी विरोधी मत रखनेवाला कोई व्यक्तित्व उपस्थित हो और वह देश तथा जवानों को नेतृत्व दे सके तो उस पर अपनी-अपनी मर्यादित विचारशक्ति से ऐसे—समझे गये तात्त्विक हमले करने में क्या लज्जत है? आपको अगर उसमें श्रद्धा नहीं है तो आप बेशक शामिल न हों। आपको उसका घोर विरोध भी करना हो, तो वह भी कीजिये, लेकिन कृपया इन दो व्यक्तित्वों को समझने की कोशिश अवश्य कीजिये। ×

प्रधान मंत्री लोगों को भ्रम में क्यों डालना चाहती हैं

बिहार में प्रदेश छात्र संघर्ष समिति तथा जन संघर्ष समितियों के तत्त्वावधान में जो जन-आंदोलन चल रहा है उसका नेतृत्व श्री जयप्रकाशजी कर रहे हैं। आंदोलन की नीति कार्यक्रम आदि के संबंध में जो कुछ जाहिर करना होता है वह जयप्रकाशजी समय-समय पर करते हैं। आंदोलन के संबंध में शंकाओं का तथा उसकी आलोचना का जवाब भी जो देना होता है वह वे देते हैं।

पर १२ अक्तूबर को देहरादून में उस क्षेत्र के कांग्रेस कार्यकर्ताओं की सभा में प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने बिहार के आंदोलन को लक्ष्य करके कुछ बातें कही हैं, जिनका उत्तर आंदोलन में लगे हुए एक सक्रिय कार्यकर्ता और निकट-दर्शी के नाते देना जरूरी मालूम होता है।

इन्दिराजी के भाषण की जो रिपोर्ट पी० टी० आई० की मारफत प्रकाशित हुई है उसमें उन्होंने कहा बताया कि अगर कोई भी हजार व्यक्ति मिलकर यह कहें कि चुने हुए प्रतिनिधियों को हटा दिया जाये तो उसे स्वीकार कर लेना एक गलत परम्परा डालना होगा। हजार व्यक्ति की बात से इन्दिराजी की मंशा लोगों पर यह असर डालने की है कि जयप्रकाशजी विधान सभा को भंग करने की जो मांग कर रहे हैं वह चन्द लोगों की मांग है। बिहार में चल रहे आंदोलन की जिन लोगों को प्रत्यक्ष जानकारी नहीं है वे इस तरह की बात से सहज ही भ्रम में पड़ सकते हैं। पिछले ६-७ महीने से बिहार में जो कुछ हो रहा है उसको इन्दिराजी ने प्रत्यक्ष तो नहीं देखा है पर उनके पास देश के कोने-कोने से गुप्तचरों के द्वारा तथा प्रशासन के अन्य जिम्मेदार सूत्रों के द्वारा हर चीज की जानकारी पहुंचाने का इन्तजाम है। अतः उन्होंने जो कुछ कहा है वह जानकारी के अभाव में नहीं कहा होगा, यही माना जायेगा।

पिछले ५ जून को जो विराट प्रदर्शन तथा आमसभा पटना में हुई, उस दिन मैं स्वयं पटना में मौजूद था और करीब दो महीने से तो मैं बराबर सक्रियरूप से आंदोलन में हिस्सा ले रहा हूं, इसलिए जो कुछ कह रहा हूं वह प्रत्यक्ष जानकारी के आधार पर और पूरी जिम्मेदारी के साथ कह रहा हूं। ५ जून के जुलूस में शामिल लोगों की संख्या ७०-७५ हजार से एक लाख के बीच थी। सड़क के दोनों तरफ दुकानों और मकानों के अन्दर व छतों पर जो दर्शक थे, उनकी संख्या अलहदा है। उसी शाम को जुलूस की वापसी पर पटना के गांधी मैदान में जो आमसभा की उसमें दो लाख से कम लोग नहीं थे। जयप्रकाशजी आज से नहीं, वर्षों से देश के अग्रगण्य नेता हैं, और बिहार के तो लोकनायक। पिछले २० वर्षों में केवल बिहार नहीं, देश के विभिन्न भागों में मैं जयप्रकाशजी की सैकड़ों आम सभाओं में उपस्थित रहा हूं। उनकी सभाओं में सुननेवालों की भीड़ सामान्य तौर पर भी काफी रहती थी, लेकिन पिछले ३-४ महीनों से जिस तरह लोग उनकी सभाओं के लिए उमड़ते हैं उसकी पिछले वर्षों से कोई तुलना नहीं है। सात डेढ़ सात की बस्ती के जिला मुख्यालयों और छोटे नगरों में भी ५०-५० हजार लोग होना सामान्य बात हो गयी है। पटना में होनेवाली आम सभाओं की तो बात ही बेमिसाल है। यहां लाखों से कम की बात नहीं रही। ३ से ५ अक्तूबर के संपूर्ण बिहार बन्द के बाद ६ अक्तूबर को पटना की सभा के घंटे भर पहले जोर की बारिश हुई थी, सारा मैदान कीचड़ भरा था, फिर भी कम से कम ३-४ लाख लोग सभा में दो घंटे तक खड़े उन्हें सुनते रहे, कीचड़ में बैठने का तो सवाल ही नहीं था। मानव—मेदिनी का समुद्र और वह भी तब जबकि पटना का एक बड़ा हिस्सा कर्फ्यू के साये में था। उसके पहले दिन पटना के उस हिस्से में जो 'सिटी' कहलाता है सर्वरक्षापूर्ण गोलीबारी हुआ था। खुद सरकार के अनुसार ४ लोग इसमें मारे गये और ६७ घायल हुए। उस दिन भी पटना के उस हिस्से में जयप्रकाशजी लोगों को ढाढ़स देने गये थे लेकिन उनके वहां पहुंचने-पहुंचते करीब लाख आदमी आमसभा के रूप में जुट गये, जबकि करीब १० दिन पहले ही उस क्षेत्र में उससे ज्यादा बड़ी आमसभा हो चुकी थी। ५ दिन बाद १० अक्तूबर को वहीं पर फिर लाख-डेढ़ लाख आदमियों की आमसभा हुई।

बिहार में ही नहीं बिहार के बाहर भी जयप्रकाशजी की आमसभाओं में आजकल पुराने कोई रेकार्ड कायम नहीं रहे। कहते हैं, कुछ दिन पहले लखनऊ की उनकी आमसभा में करीब ४५ लाख लोग थे कलकत्ते की आमसभा में भी इसी प्रकार की उपस्थिति थी। ६ महीने पहले भी जयप्रकाशजी की आमसभाएं होती थीं लेकिन तब की और अब की उपस्थिति में कम से कम १० गुना का अन्तर देखा जाता है। सिवा इसके इसका कारण और क्या हो सकता है कि आज इस देश के लाखों लोगों को यह लग रहा है कि जयप्रकाशजी उनके मन की बात कह रहे हैं, उनकी आकांक्षाओं को प्रतिध्वनित कर रहे हैं?

इन्दिराजी का गुप्तचर विभाग इतना निकम्मा तो नहीं होगा कि उनको उल्टी-सीधी जानकारी देता हो। तब सिवा इसके और क्या कहा जा सकता है कि इन्दिराजी जानबूझकर देश के लाखों-करोड़ों लोगों को धोखे में डालना चाहती हैं? ३ से ५ अक्तूबर तक बिहार में संपूर्ण बन्द की जो अभूतपूर्व घटना हुई उस तरह की आम लोगों की शिरकत, शायद आजादी के दिनों में और आजादी के बाद भी उन २७ वर्षों में कभी नहीं हुई। पिछले वर्षों में 'बन्द' भी बहुत होते रहे हैं, लेकिन वे थे केवल एक दिन के। और एक दिन का मतलब भी सवेरे से शाम तक ही का मानते थे। बिहार में तीन दिन, यानी लगातार ३ दिन और ३ रात तक संपूर्ण कामकाज और यातायात, चन्द अपवाद छोड़कर, बिल्कुल बन्द रहा। अन्य बन्दों की भांति दूकानें या कामकाज बन्द कराने के लिए एक ढेला भी नहीं चला। जनता ने स्वेच्छा से सारा कामकाज बन्द रखा। गफूर साहब ने कहा कि जनता ने डर के मारे दुकानें बन्द रखीं। डर तो लोकद्रोही को होता है। शुतुर्मुर्ग की मानिन्द आसपास तूफान देखकर बालू में मुंह छिपाना उन्हें मुबारक हो।

इन्दिराजी ने देहरादून में उनका भाषण सुनने के लिए इकट्ठे कांग्रेस कार्यकर्ताओं से पूछा कि अगर कोई व्यक्ति इतना गुस्से में आ

जे० पी० को विराट जन-समर्थन

राजस्थान लुधियाना दिल्ली की जनसभाओं में लाखों की भीड़

२५ अक्टूबर से प्रारम्भ जे पी का राजस्थान और पंजाब का दौरा कई अर्थों में विशिष्ट रहा है। जयपुर, बीकानेर, लुधियाना, जहां जहां वे गये उनकी जनसभाओं में लाखों का जनसमूह उमड़ा। लुधियाना की रैली में ५ लाख की उपस्थिति की बात तो उन पत्रकारों ने भी मानी जो आंदोलन का समर्थन नहीं करते और किसी हद तक सरकार परस्त भी कहे जा सकते हैं।

इस दौरे के लिए जब जे० पी० पटना से विमान द्वारा गुरुवार की शाम दिल्ली पहुंचे तो पालम विमानतल पर इतनी भीड़ थी जितनी इससे पूर्व किसी के आगमन पर कभी नहीं रही। दिल्ली में जे० पी० ने घोषित किया कि वे प्रधानमन्त्री से बातचीत करने के लिए तैयार हैं।

दिल्ली से जयपुर की उनकी रेलयात्रा के मार्ग में रात्रि होने के बावजूद स्टेशनों पर अपार भीड़ रही। जहां भी गाड़ी रुकी उनकी जय के जय-घोष गूंजते रहे।

जयपुर के रामनिवास बाग में आयोजित जनसभा में लगभग २ लाख लोग उपस्थित थे। इस सभा में जे० पी० को राजस्थान की ओर से १ लाख रुपये की थैली भेंट की गयी। उनका जुलूस दो मील से अधिक लम्बा था और दर्शन के लिए मार्ग में ठसाठस भरे लोगों के कारण रास्ता बन्द हो गया था। लोगों ने याद किया कि आजादी की लड़ाई के दौरान गांधीजी और नेहरूजी की जनसभाओं को छोड़ कर ऐसी भीड़ कभी नहीं हुई। दशहरे के उस दिन जे० पी० की अगवानी में लगे पोस्टरों से गुलाबी नगर सफेद हो चुका था और लोगों के जे० पी० की सभा में व्यस्त होने से रावण दहन भी स्थगित कर देना पड़ा। हरियाणा संगठन कांग्रेस के भूतपूर्व अध्यक्ष बलवन्त राय तायल ने उन्हें आंदोलन की सहायतार्थ ४० हजार का चेक भेंट किया।

राजस्थान में जयपुर और बीकानेर तथा पंजाब में लुधियाना के तूफानी दौरे के बाद जे० पी० दिल्ली पहुंचे जहां गुरुवार ३१ अक्टूबर को सरदार पटेल के जन्म शताब्दी दिवस पर पटेल चौक में आयोजित विशाल सभा को उन्होंने सम्बोधित किया। विश्वविद्यालय की अम्बेदकर मैदान में हुई उनकी सभाओं में भीड़ का अन्त नहीं था। अम्बेदकर मैदान में तो २ लाख की उपस्थिति थी और तिल रखने की जगह नहीं थी।

अब जे० पी० पटना लौटकर आंदोलन के अगले चरण के मार्गदर्शन में जुटे हैं। उन्होंने शीघ्र ही कुछ और राज्यों का दौरा कर सकने की आशा व्यक्त की है।
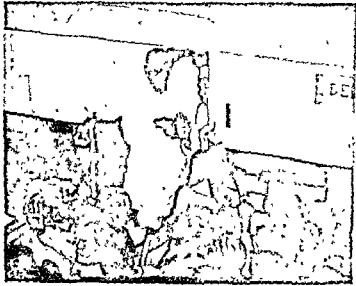
दिल्ली से जयपुर जाते जे० पी० की गाड़ी जब हरियाणा के रेवाड़ी जंक्शन पर ठहरी तो २४ और २५ अक्टूबर की मध्यरात्रि जब उनका ७३ वां जन्म दिवस आरंभ हो रहा था, लगभग ढाई हजार लोग वहां उपस्थित थे। बिहार आंदोलन के प्रति आस्था प्रकट कर रहे इन लोगों ने शांति सेविका माता शान्ति देवी के हाथों से जे पी. को ११ सौ रुपये की थैली भेंट की। चित्र में जे० पी० के साथ हैं रेवाड़ी शांति केन्द्र के संयोजक मुंशीराम लोकसेवक और राधाकृष्ण बजाज।

प्रधान मंत्री से बातचीत का कड़वा अन्त

कुछ लोगों की पहल पर शुक्रवार ३१ अक्टूबर '७४ को नई दिल्ली में जे० पी० की प्रधानमंत्री से वार्ता करा दी गयी। पहले इन्दिराजी और जे० पी० में बातचीत होती रही, बाद में खाद्य मंत्री जगजीवनराम भी शामिल हो गये। जैसी उम्मीद थी, वार्ता डेढ़ घंटे सौहार्दपूर्वक चलने पर भी विफल रही और जे० पी० ने आंदोलन जारी रहने की घोषणा कर दी।

R.N 2091/57 BHOODAN YAGYA 4 NOV, 1974 Regd. No. D-(C) 266

क्रमिक उपवास का समापन

पटना सचिवालय के समक्ष चलनेवाले क्रमिक उपवास का अंतिम व पूर्वान्तिम दिन मजदूरों व महिलाओं का था। रिक्शा चालक संघ के अध्यक्ष भी इस अनशन में उपस्थित थे। सभी सहयोग करनेवाले राजनैतिक दल, सर्वोदय के तथा निर्दलीय लोग इसमें सम्मिलित हुए। उपवास में न्यूनतम संख्या ४५ थी तो अधिकतम अंतिम दिन २७४ रही।

पांच पूरे करना है !

पूर्णियां में जो पुलिस दल वैद्यनाथ बाबू के यहां गिरफ्तारी के लिए प्रातः पांच बजे पहुंचा उसने उन पांच व्यक्तियों के नाम पढ़कर सुनाये जिन्हें गिरफ्तार करना था। जब कहा गया कि इनमें से तीन ही यहां है तो पुलिस अधिकारी ने पास में खड़े हुए व्यक्तियों की ओर इशारा करके पूछा "ये कौन हैं ?" उत्तर मिला कि ये दो तो अन्य कार्यकर्ता हैं। 'होंगे, हमें तो पांच पूरे करना है' कहकर इन कार्यकर्ताओं को भी गिरफ्तार कर पांच की संख्या पूरी कर ली गयी। पांचों में एक मध्यप्रदेश के कार्यकर्ता थे जिन पर कोई वारंट नहीं था।

जवाबी हमले की तैयारी

पटना प्रदेश छात्र संघर्ष संचालन समिति के सदस्य व पटना विश्वविद्यालय छात्र संघर्ष संयोजक श्री शहाबुद्दीन को मीसा में गिरफ्तार कर लिया गया। ४ नवंबर को पटना चलो कार्यक्रम के सन्दर्भ में कांग्रेस के नये अध्यक्ष श्री बरुआ ने अपने दल के घटकों को जे०पी० के आंदोलन पर जवाबी हमले के लिए तैयार रहने को सावधान किया है।

मुजफ्फरपुर में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी व सत्ता कांग्रेस के लगभग ८०० कार्यकर्ताओं के सम्मेलन में साफ व्यक्त किये गये कि जे० पी० के आंदोलन का सामना गृहयुद्ध स्तर पर किया जाना चाहिए। रणनीति तय की गयी है कि आंदोलन के मुकाबले में ये कार्यकर्ता बढ़ेंगे व उनके अगल-बगल सी० आर० पी०, बी० एस० पी० के दस्ते होंगे। अपने ही क्षेत्र में जे० पी० से चर्चा करने का समर्थन करनेवालों या ऐसे आंदोलन से समझ या शांति से निपटने की सलाह देनेवालों को गद्दार कहा गया है।

बिहार से निष्कासन का दौर

बिहार के आंदोलन का मुकाबला करने के लिए गफूर सरकार ने सर्वोदय और विरोधी दलों के नेताओं के राज्य से निष्कासन के आदेश जारी करना चालू कर दिया है। सर्वप्रथम सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष सिद्धराज ढड्ढा, महामन्त्री ठाकुरदास बंग, आचार्य राममूर्ति और तरुण शांति सेना के संयोजक नारायण देसाई के निष्कासन के आदेश पिछले सप्ताह जारी हुए। इसके बाद अर्जुनसिंह भदौरिया और उनकी पत्नी सरलादेवी का निष्कासन किया गया। इस सिलसिले में जो अभी जारी है, जनसंघ के कुछ नेता भी निष्कासित किये जा चुके हैं।

सदाचार अभियान चालू

उत्तर प्रदेश तरुण शांति सेना के १८-२० प्रमुख साथियों ने सम्पूर्ण क्रांति की तैयारी के लिए अधिकांश जिलों का दौरा किया। इसमें कानपुर के भी चार तरुण शामिल थे। सेना का सदाचार अभियान चालू रहा जिसमें कचहरी में रिश्वत विरोधी कार्यक्रम, चपरासियों की बेगार से मुक्ति, सोने की तस्करी पर छापों के प्रयास, मेले के नाम पर लूटे गए के विरुद्ध प्रदर्शन, सीमेंट की जमाखोरी और रसकरी तथा दुकानों में शराब और अवैध टिंचर की बिक्री पर विशेष ध्यान दिया गया।

स्त्री शक्ति जागरण सप्ताह

मुजफ्फरपुर जनपद में स्त्री शक्ति जागरण सप्ताह में पांच टोलियों ने ग्रामों और तीन टोलियों ने नगर में पदयात्राएं कर सर्वोदय का प्रचार किया। एक टोली में ८० वर्षीय ब्रह्मादेवी थी और उनका उत्साह प्रेरक रहा। ग्रामों में पांच सौ परिवारों से सम्पर्क हुआ, ३६ महिला सभाएं, ३५ प्रार्थना सभाएं तथा ५ आमसभाएं हुईं, ५ उपवासदान प्राप्त हुए और सर्वोदय साहित्य की बिक्री हुई। सप्ताह का समापन सनातन धर्म इन्टर कॉलेज में एक सभा से हुआ। आयोजन में आर्यकन्या इन्टर कालेज की प्राचार्या कृष्णकुमारी और उनकी सहयोगी अध्यापिकाओं के साथ ही सरस्वती बाल भवन की प्राचार्या सुशीला वर्मा का सहयोग सराहनीय रहा।

ये भावभीने योगदान

उपवास के दूसरे दिन जब जे० पी० उपवास का नेतृत्व कर रहे थे, एक नन्हें बालक ने आकर उन्हें दो रुपये भेंट किये। नाश्ते से बचाया यह पैसा संघर्ष के लिए उसका सहयोग था। एक मजदूर वृद्ध ने जे० पी० को एक रुपया भेंट किया। अपनी मेहनत कमाई की बचत का यह रुपया उसकी श्रद्धा का प्रतीक था।

९ वर्षीय हरिजन बालक संजय ने दानापुर केन्द्रीय विद्यालय से ५ रुपये का मनीआर्डर भेजकर लिखा—"मेरी उम्र ९ साल की है। मैं पांच रुपये नाश्ते में पैसे बचाकर अपने भाई-बहनों, माताओं एवं बड़े बुजुर्गों के लिए जो अन्याय एवं बिहार सरकार के अत्याचार के विरुद्ध शहीद व घायल हुए, उनकी सेवा हेतु सहायता कोष में भेज रहा हूं।"

सी० पी० आई० का यह रूप !

गत सप्ताह सी० पी० आई० के एक प्रमुख कार्यकर्ता "जनशक्ति" के सह सम्पादक श्री राय अमरनाथ के मकान मालूरी लेन पटना सिटी से भारी संख्या में विस्फोटक बरामद हुए हैं।

सितम्बर, ७४ में उपवासदान

सर्व सेवा संघ की एक सूचना के अनुसार सितम्बर ७४ में विभिन्न राज्यों से निम्नानुसार उपवासदान प्राप्त हुए :

महाराष्ट्र २०, बिहार १, तमिलनाडु १, कर्नाटक ७, बंगाल १३, उत्तरप्रदेश ४५, मध्यप्रदेश ४६, राजस्थान ६, उत्कल ६, आन्ध्र प्रदेश १७, असम २, दिल्ली १, हरियाणा ९, मणीपुर ६,

ब्रिटेन के बिरटम नगर से भी इस माह १ उपवासदान मिला।

शिक्षा में शांति सप्ताह

वाराणसी में गांधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र द्वारा आयोजित जिला छात्र युवा सम्मेलन तथा जिला जन सम्मेलनों में निर्धारित कार्यक्रमों को जोरदार ढंग से चलाने का निश्चय किया गया। शिक्षा में शांति सप्ताह के अन्तर्गत क्वीन्स कालेज, हरिश्चन्द्र कालेज तथा बसन्त कालेज राजघाट पर मर्यादित तथा असमान शिक्षा के विरुद्ध जिला छात्र-युवा संघर्ष समिति के सदस्यों ने धरना दिया तथा इसे समाप्त करने के लिए एक ज्ञापन भी दिया।

वार्षिक शुल्क—१२ रु० विदेश ३० रु० या ३५ शिलिंग या ५ डालर, एक अंक का मूल्य ३० पैसे।
प्रभाष जोशी द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं ए० जे० प्रिंटर्स, नई दिल्ली-१ में मुद्रित।

भूदानयज्ञ

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का साप्ताहिक मुख पत्र
नई दिल्ली, सोमवार, ११ नवम्बर '७४

जे० पी० पर घातक प्रहार के लिए तनी लाठी

पत्र और पत्रांश

समझौता आवश्यक

जे. पी. इन्दिराजी की भेंट में कोई फलश्रुति नहीं हुई. मेरी दृष्टि से यह देश के लिए अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण घटना है। इसमें अन्त में हानि तो जनता की ही है। जनता का संकट और विपत्ति बढ़ेगी। जे.पी. और इन्दिराजी दोनों के हृदय में जनता की यातनाएं समाप्त करने की लगन तो है ही न ? जनहित की यह उत्कटता ही दोनों को जोड़नेवाली कड़ी हो सकती है।

गुजरात विधान सभा का विघटन करने में इन्दिराजी की भूल नहीं हुई। भूल हुई उसे जल्दी न करने में। बिहार में उस भूल का दुहराया जाना अनर्थकारक होगा। शांतिमय आंदोलन में तरुणों का विश्वास क्षीण हो जायेगा। वैधानिकता के संरक्षण की यह कीमत लोकतन्त्र के लिए महंगी पड़ेगी। संविधान की प्रतिष्ठा की रक्षा होगी, परन्तु शासन और जनता के बीच की खाई बढ़ेगी और अन्य राज्यों में भी विघटन की मांग होगी ; क्योंकि जनता इसे अपने लिए चुनौती समझेगी। राज्य और जनता के बीच संघर्ष परिणामत. राज्य के लिए हानिकारक ही सिद्ध होता है। इसमें मुख्य हानि होगी लोकतन्त्र की।

मतलब यह कि जे पी. या संघर्ष समिति अपनी विघटन की मांग छोड़ देती है, तो लोकतान्त्रिक मूल्यों की अधिक हानि होती है। अतएव उस मुद्दे पर इतना ही समझौता हो सकता है कि अन्य राज्यों में इस प्रकार की मांग न हो और इस विषय में जे० पी० का सहयोग मिले। विघटन की मांग के बारे में अन्य राज्यों के लोगों को यह भी समझाया जायेगा कि विघटन की मांग पर सारी शक्ति और ऊर्जा केन्द्रित होने पर दूसरी मुख्य समस्याओं की तरफ से ध्यान बंट जाता है। जमाखोर, चोरबाजारीवाले और तस्कर आदि तत्व तो यही चाहते हैं। बिहार में भी जे० पी० का दिल और दिमाग इस संबंध में साफ था। वहां तो उन्हें विघटन की मांग पर मजबूरी से आना पड़ा।

बिहार आंदोलन में नेताओं को भी जनता के कष्ट और मुसीबत बढ़ाने में रुचि नहीं हो सकती। साथ-साथ उन्हें यह भी विवेक करना होगा कि कहीं लोकतन्त्र के वर्तमान शिकस्ता ढांचे को तोड़कर वे यदि कोई सक्षम विकल्प प्रस्तुत न कर सकें, तो गुण्डों और शोहदों की बन आयेगी। और जनता पर पछताने की नौबत आयेगी। सैनिक सत्ता में चाहे जितना सुशासन क्यों न हो, वह स्वशासन का विकल्प कभी नहीं हो सकता। अतः इस संबंध में विवेक और संयम नितान्त आवश्यक है। इन्दिराजी की परराष्ट्र नीति देशभक्तिपूर्ण रही है। उसे भी क्षति पहुंचना देशहित के प्रतिकूल होगा।

इन्दिराजी को भी यह समझ लेना चाहिए कि केवल कुशल परराष्ट्र नीति से परराष्ट्र संबंध स्वस्थ नहीं रह सकते। उस नीति के पीछे जनता का प्रभावशाली और भावरूप समर्थन अनिवार्य है। यदि सरकार की आज की ही नीति बनी रही तो जनता का समर्थन खोने का उससे अधिक प्रभावशाली कोई उपाय नहीं हो सकता। इसलिए साग्रह अनुरोध है कि बिहार विधान सभा के विघटन के विषय में सरकार दूर-दृष्टि से काम ले।

जे० पी० के आंदोलन का जवाबी आंदोलन जे० पी० के आंदोलन को अखिल भारतीय रूप बहुत शीघ्र ही दे देगा। उसका मन्शा चाहे जो हो। और इस अभियान में सत्ता तथा दण्डशक्ति का उपयोग भी यथावश्यक होगा ही। इस प्रकार सरकार बिहार आंदोलन का प्रचार ही करेगी। जवाबी आंदोलन में कांग्रेस के साथ ऐसे भी तत्व और संगठन हैं जो शांतिमय उपायों का आग्रह नहीं रखते। सरकार की दण्ड-नीति में उनकी नीति अधिक उग्रता लायेगी। और वे स्वयं ही थोड़ी बहुत हिंसा करने में नहीं हिचकेंगे। जिस आंदोलन के नेता जे० पी० जैसे शांतिनिष्ठ व्यक्ति हैं, और उनके कई ऐसे साथी हैं जो अहिंसा को अपनी मूलभूत नीति मानते हैं उस आंदोलन पर भी जब हिंसा का आरोप लगाया जाता है, तो उस अभियान के बारे में क्या सोचा जाये जिसमें दण्डनीति को प्रशस्त माननेवाले शासन के साथ हिंसा को निषिद्ध न माननेवाले तत्व और संगठन होंगे।

साराश यह कि लोकतान्त्रिक मूल्यों का संरक्षण तथा लोकशक्ति के विकास की दृष्टि से जे० पी० और इन्दिराजी के बीच समझौता होना नितान्त आवश्यक है। उसके कुछ आधार यहां सूचित किये हैं। इन मुद्दों पर विचार किया जाये और जो मित्र इस विषय में आस्था और रुचि रखते हों उनसे मिलकर प्रयत्न भी शीघ्र ही प्रारम्भ कर दिये जायें।

ग्वालियर २-११-७४ —दादा धर्माधिकारी

(दादाधर्माधिकारी को गांधी स्मारक निधि के मन्त्री देवेन्द्र भाई से दिल्ली में दो दिन बातचीत हुई। उस बातचीत के बाद दादा ने यह पत्र लिखकर भेजा है। 'सर्वोदय' के पाठक इस दिशा में सोचकर जैसा ने कहा है, शीघ्र ही कोई विधायक विचार और कृति करेंगे, ऐसी आशा है।)

पवनार की चुप्पी

बिहार के जन-संघर्ष की हलचलों से समाचार-पत्रों के माध्यम से आप परिचित होंगे। मैं तो इस युवा असंतोष के बड़वानल का शुरू से ही उपासक रहा हूं। फलस्वरूप ३ से ५ अक्टूबर तक अभूतपूर्व 'बिहार बन्द' के अवसर पर सिविल नाफरमानी करता हुआ गिरफ्तार होकर कारागृह में पड़ा हूं। मेरे साथ ही जगदेवबाबू भी हैं। करीब १५० भूदान किसान भी आये हैं। आगामी ४ नवम्बर से बिहार का जन-आंदोलन नये चरण में प्रवेश करेगा और ३ दिसम्बर राजेन्द्र-जयंती के दिन से जनता सरकार और जनता विधायिका (असेम्बली) का एक खुला प्रयोग संघर्ष के मंच से किया जायेगा।

दुःख है कि शीशमहल में सुख की चैन से रहनेवाले शासक न तो जन-आकांक्षा को समझ पाते हैं और न मतदाताओं के प्रति अपने कर्तव्य का निर्वहन कर पाते हैं। भ्रष्टाचार के कीटाणुओं के ये सत्तानायक पोषक और उत्पादक दोनों हैं। बिहार का वर्तमान युद्ध लोकयुद्ध है। हां, पवनार की चुप्पी से बिहार के लोग हैरत में हैं। आशा है, ग्राम स्वराज्य की नींव इस जन-आंदोलन में पड़ सकेगी।

(केन्द्रीय कारा गया से) —केशव, जिला सर्वोदय मंडल, बुनियादगंज (गया)

'भूदान-यज्ञ'

सम्पादक

राममूर्ति . भवानी प्रसाद मिश्र

कार्यकारी सम्पादक : शारदा पाठक

वर्ष २१ | ११ नवम्बर, '७४ | अंक ६

१९ राजघाट, गांधी स्मारक निधि, नई दिल्ली-११०००१

विनाशकाले

४ नवम्बर को जयप्रकाशजी ने जिस 'शान्ति के मोर्चे' का नेतृत्व किया उसका शक्ति से मुकाबला किया जायेगा, इसके आसार तो नजर आ ही रहे थे। पटना में सशस्त्र जवानों की गश्त ४ नवम्बर को अभूतपूर्व रूप से बढ़ा दी गयी थी, पूरा शहर एक फौजी छावनी का रूप धारण कर चुका था। लोकप्रियता का दम भरनेवाली सरकार किसी 'शान्ति मोर्चे' के लिए भी ऐसी तैयारी क्यों करती है, यह बात ४ तारीख को जो कुछ हुआ, उससे समझ में आयी। तैयारी किसी मोर्चे को शान्त रखने के लिए नहीं, जुलूस को अपनी ओर से जितना बन सके उतना कुचलने के लिए की गयी थी।

जिस जुलूस का नेतृत्व शान्ति की मूर्ति जयप्रकाशजी कर रहे थे उस 'शान्ति जुलूस' पर एक बार नहीं, कई बार अश्रु-गैस और लाठी-प्रहार किया गया। स्वयं जयप्रकाशजी पर पुलिस ने लाठी चलायी। लाठी चलाये जाने का जो चित्र हमने स्टेट्समैन के सौजन्य से मुखपृष्ठ पर दिया है उससे स्पष्ट होता है कि यदि नानाजी देशमुख ने बढ़कर वह वार न बचाया होता तो सीधा जयप्रकाशजी के सिर पर पड़ता और सम्भवतः प्राणघातक सिद्ध होता। नानाजी देशमुख का हाथ उस वार को बचाने में टूट गया।

'विनाशकाले विपरीत बुद्धि', यह जयप्रकाशजी ने उस दिन के सरकारी रवैये के बारे में कहा है। उन्होंने दिनकरजी की पंक्तियों की उद्धृत की ओर कहा, 'सिंहासन खाली करो कि जनता आती है।'

मगर सत्तारूढ़ दल सिंहासन खाली करने के लिए तैयार नहीं है। इन्दिराजी ने अभी शिवाजी जयन्ती पर बोलते हुए कुछ लोगों द्वारा विरोधी नारे लगाये जाने के बाद गुस्सा कर कहा कि हम सड़कों पर आवाज लगानेवालों के भय से शासन की बागडोर छोड़नेवाले नहीं हैं। इसमें शक नहीं कि यह सोच-समझकर कहा हुआ नहीं, गुस्से में कहा गया वाक्य है। १८ मार्च से देश में प्रजातन्त्र के ह्रास, भ्रष्टाचार, बढ़ती हुई कीमतों आदि के विरोध में जो देशव्यापी आवाज उठी है, और बिहार जिसका केन्द्र है, उसे राह चलते हुओं की आवाज नहीं कहा जा सकता। यह जनता की आवाज है, बल्कि जनता-जनार्दन की आवाज है। कहना चाहिए लगभग भगवान यह बोल चुका है कि जो शासन सारी सीमाएं तोड़कर परिपूर्ण रूप से अहिंसक जन-समूह या जननेताओं पर हिंसा के आरोप ही नहीं लगाता बल्कि ऐसे आरोप लगाये या बिना लगाये भी उनके साथ क्रूरतम व्यवहार करता है, उसे किसी भी प्रकार प्रजातन्त्र कहलाने का हक नहीं बचता।

इसी सप्ताह इन्दिराजी ने आचार्य कृपलानी को उनके पत्र का जवाब देते हुए यह कहा है कि सामूहिक कार्रवाई संसदीय लोकतन्त्रीय व्यवस्था की भावना के एकदम प्रतिकूल है और इसकी मांग किसी भी हालत में स्वीकार नहीं की जा सकती। अर्थात् चाहे जितनी बड़ी संख्या में देश की जनता परिवर्तन की मांग करे यह इन्दिराजी की राय में एकदम अग्राह्य है। क्या यही आगेवाली तानाशाही का नहीं होगा?

सत्य, अहिंसा आदि के सैद्धान्तिक विवेचन की बात ऐसी मनःस्थिति बन जाने पर कौन सुनता है। पटना में ४ नवम्बर को हमारे लोकनायक के प्रति सरकार ने जो अमानवीय व्यवहार किया है वह अशोभनीय और क्रूर होने के साथ-साथ सारे देश को एक चुनौती भी है। समस्त देश इस घटना का विरोध करेगा और ऐसी परिस्थिति का का निर्माण होगा कि अब जनता की इच्छा को नगण्य गिननेवाली सरकार का टिकना सम्भव नहीं बचेगा। सोचने की बात है कि जयप्रकाशजी पर प्राणलेवा हमला करनेवालों की बिहार के मुख्यमंत्री गफूर साहब ने तारीफ की है और कहा है कि उसने तो संयम से काम लिया है। सम्भव है कि जिस जवान ने जयप्रकाशजी पर घातक प्रहार किया था उसकी पदवृद्धि भी की जाये। अंग्रेजों के जमाने में इससे मिलती-जुलती एक ही घटना हुई थी और वह थी लाला लाजपतराय पर किया गया लाठीचार्ज। देश उस घटना से जिस प्रकार विचलित हुआ था, यह घटना उससे भी अधिक विचलित कर देनेवाली है। चकबस्त के शब्दों में

'किसे मालूम है क्या
रंग बदले अब पुर्ग अपनी,
'खुदा हाफिज है दिलका,
बद होनी है जुबां अपनी!'

चार तारीख का दिल्ली बंद

४ तारीख के 'दिल्ली-बंद' के विरोध में ३ तारीख को कांग्रेस और कम्युनिस्ट पार्टी ने मिलकर एक जुलूस निकाला था। हम पहले तीन तारीख के जुलूस की बात करेंगे। पहली बात तो यह है कि धारा १४४ उस जुलूस के लिए नहीं थी, दूसरे जुलूस में जो पांच-सात हजार आदमी शामिल थे वे सबके सब बिलकुल एक-सी और नयी सफेद खादी पहने हुए थे, सफेद टोपियां लगाये हुए थे और हरएक के हाथ में कांग्रेस का झंडा था। जुलूस स्थान-स्थान पर रुकता हुआ चल रहा था। उसमें वर्तमान जनता के आन्दोलन को एकदम बे-हिचक प्रतिक्रियावादी, फासिस्ट मनोवृत्तिवाला आदि कहा जा रहा था और उसके बाद जो नारे लगाये जा रहे थे वे विरोध के नहीं मूड के प्रतीक थे। व्याख्यान देनेवाले और नारे लगवानेवाले लोगों के चेहरे पर जो भावना थी वह भी विरोध की नहीं, एक प्रकार के विचित्र गर्व और हिंसा तक की भावना थी। पुलिस जो तैनात थी वह कुछ ऐसी सतर्कता दिखला रही थी, मानो

किसी गली से जुलूस पर हमलावर टूट पड़ेंगे। अर्थात् यहां वह इस जुलूस की रक्षा करने के लिए थी जबकि दूसरे जुलूसों को कुचलने के लिए होती है।

जुलूस की नयी वर्दियां, टैक्सी, स्कूटर और अन्य वाहनों की संख्या जुलूस पर किये गये खर्च का भी अनुमान देते थे। अन्य कोई जुलूस निकालता है तो पूछा जाता है कि पैसा कहां से आया था।

चार नवम्बर के 'दिल्ली-बन्द' के समय नितान्त अहिंसक सर्वोदय कार्यकर्ताओं की जहां-तहां जिस तरह मरम्मत की गयी और जिस प्रकार पुलिस-गाड़ियों में भर-भरकर जेल भेजा गया, वह ३ और ४ नवम्बर के अन्तर को बुरी तरह नगा करता है। पुलिस के सिवाय आकाशवाणी का जो रोल रहा वह भी बहुत विचारणीय है, हमारे लिए नहीं, उन्हीं के लिए। आकाशवाणी पर कहा गया कि 'बन्द' बिलकुल असफल रहा जबकि तथ्य यह है कि बन्द लगभग पूरी तरह सफल था, सारे बाजार बन्द थे, यहां तक कि खोमचेवाले और फेरीवाले भी कहीं नजर नहीं आते थे। बाजार खुले हैं यह दिखाने के लिए स्वयं इंदिराजी को जहमत उठानी पड़ी। एक सरकारी इम्पोरियम खुलवाया गया और उन्होंने वहां जाकर सामान खरीदा। कुछ महिलाओं ने इस खरीदी के विरोध में नारे भी लगाये। ये शायद वही बहादुर महिलाएं थीं जिन्होंने शिवाजी जयन्ती के भाषण में भी प्रधानमन्त्री को टोका था। टेलीविजन पर नगर के जो चित्र दिखाये गये वे किन्हीं पुराने दिनों के हलचल के चित्र थे। बड़े जोर-जोर से कहा गया कि बिजली, पानी व अस्पतालों की सेवा बदस्तूर कायम है। ये सेवाएं तो कायम रहे, यह बन्द का आवाहन करनेवालों ने पहले ही उद्घोषित कर दिया था। बहरहाल किसी और पर जाहिर हुआ हो या न हुआ हो, दिल्ली में रहनेवालों पर यह बात एकदम जाहिर हो गयी है कि सरकारी प्रचारतंत्र कितना मिथ्यावादी है।

प्रचारतंत्र की मिथ्यावादिता से और जो नुकसान हो सकते हैं, वह तो होंगे ही हैं, एक बड़ा नुकसान यह होता है कि लोग जब उसे झूठ मानने लगते हैं तो अफवाहों को सच मानने लगते हैं। सरकार को चाहिए कि वह अपने झूठे प्रचार को रोके ताकि अफवाहें उतनी तेजी से न फैल सकें, जितनी तेजी से इस परिस्थिति में फैल सकती हैं।

ॐ

मुखपृष्ठ

बोलते चित्र उतारने के लिए मशहूर छायाकार रघुराय द्वारा ४ नवम्बर को पटना में खींचा गया वह चित्र हम अंग्रेजी दैनिक 'स्टेटसमैन' के सौजन्य से दे रहे हैं जिसमें एक सिपाही जयप्रकाशजी (हाथ में चश्मा लिये) पर प्रहार के लिए लाठी ताने है और उसके साथी अपनी लाठियां प्रहार से उसे रोकने की कोशिश कर रहे हैं। जे.पी. के सिर पर गिरती एक लाठी की भरपूर चोट जनसंघ महामंत्री नानाजी देशमुख ने अपने हाथ पर रोकी जिससे उनके हाथ की हड्डी टूट गयी।

दिल्ली में ५ नवम्बर को यह चित्र छप जाने से सरकार इस कदर खिसियायी कि उस दिन के 'पटना बन्द' के चित्रों की फिल्में पटना विमानतल पर ही किसी प्रकार रोक ली गयी। अखबारों की आजादी पर इस हमले के खिलाफ आवाज उठायी जा रही है।

हृदय-परिवर्तन का एक प्रयोग

(मुनि संत बालजी गुजरात भाल नल-काठा अचल में धर्म प्रचार कर रहे हैं। वहां उनके आश्रम से लोग पिछले २५ वर्षों से गाव गाव घूमकर किसान मण्डल की स्थापना कर रहे हैं। इस लेख के लेखक फलजी भाई राही भी दावी किसान मण्डल के अध्यक्ष हैं। इसी अचल में सागलपुर गाव में हनुमानजी का एक प्रसिद्ध मन्दिर है। इस मन्दिर के पास बहुत सी जमीन है। इसमें खेती किसानों से करायी जाती है। किन्तु पट्टो में किसानो का नाम लिखा हुआ नहीं है। पटवारी और मन्दिर के लोगो ने मिलकर एक ऐसा षड्यंत्र कर रखा था कि फसल खेती करनेवाले किसानों को कम और मन्दिर के महन्तो और पटवारियों को ज्यादा मिलती थी। 'किसान मण्डल' ने मुनिश्री संत बालजी की सलाह लेकर इस अंचल में पटवारियों का हृदय-परिवर्तन किया। इस अहिंसक प्रयोग का वर्णन फलजी भाईकी गुजराती किताब "मुनिश्री संत बालजी के साथ २५ वर्ष' से लिया गया है। स.)

हम आश्रम में बैठे-बैठे बातचीत कर रहे थे कि ३-४ लोग आये और उन्होंने हमें देख कर कहा—'जै रामजी की। हम सागलपुर गाव से आये हैं। हनुमानजी के मन्दिर की जमीन को, हम जोतते-बोते हैं। इसका एक निश्चित हिस्सा मन्दिर हमसे ले लेता है। हम कपास मूगफली आदि जो कुछ पैदा करते है उसे पहले मन्दिर के भंडार में रख लिया जाता है और मौसम के बाद वह तोली जाती है। मन्दिर अपना भाग ले लेता है। यदि मन्दिर को अधिक माल की जरूरत न हो तो बाकी की फसल हमें घर ले जाने की इजाजत दे दी जाती है और नहीं तो उसे भी बाजार भाव पर हमसे वसूल कर लेते हैं। अगर कभी कुछ बच रहा तो उतनी फसल हमे मिलती है। यहां तक तो ठीक है किन्तु सरकार की ओर से जमीन आदि का हिसाब रखनेवाले लोग हमारे साथ कानून के मुताबिक बर्ताव नहीं करते। अगर कभी हम कुछ कहते हैं तो पटवारी जमीन हमारे बजाय किसी और को दे देता है। इसलिए हमे उनकी ज्यादती मुंह बन्द कर सहनी पड़ती है। हम लोग बहुत सोच विचार कर आपके पास आये हैं। इस परिस्थिति को कहां तक सहन किया जाये। हमारे कुछ साथियों ने हमें बताया कि संत बालजी महाराज ने एक 'किसान मण्डल' बनाया है जो किसानो की मदद करता है। हमने सोचा कि चलें और वहां जाकर देखें।"

इतना कहकर उन्होने एक कागज हमारे मंत्री अम्बू भाई के हाथ में दे दिया। एक प्रार्थना पत्र था जिसमें ३२ छोटे-बड़े किसानों के दस्तखत थे। हमने पूछा कि क्या तुम संत बालजी को जानते हो। उन्होंने कहा—'कई लोगो ने हमें बताया है कि वे एक साधु महात्मा हैं और आपका मण्डल भी एक धर्म कार्य करने वाली संस्था है। क्या आप लोग ऐसी हालत में हमारी तरफ से बोलेंगे? ये मन्दिरवाले लोग तो राजाओं से भी बढ़कर हैं। इनकी बड़ी-बड़ी जगहों तक पहुंच है। ऊंचे से ऊंचे अधिकारी मन्दिर में ठहरते है और वहां उनकी मेहमानी होती है। हम लोग उनका काम करने के लिए बेगार में भी पकड़े जाते हैं। मगर कभी हम उनसे यह जानना चाहें कि हमारे नाम दफ्तर के कागज में हैं या नहीं तो वे हमे नहीं बताते। अफसरों से पूछनेको हमारी हिम्मत नहीं पड़ती। हमारी सब जगह दुर्गति ही दुर्गति है। यह सब हम अच्छी तरह जानते हैं। लाचार होकर हम आपके पास आये हैं।'

हमने संत बालजी के पास जाकर सलाह ली तो उन्होंने कहा 'पहले यह पक्का पूछ लीजिए कि किसान अन्त तक कायम रहेंगे या नहीं।' किसानों ने कहा,' हम अपनी बात पर कायम रहेंगे। कल हम १०० किसान इकट्ठे हुए थे और सबने मिलकर हम चार आदमियों को आपके पास भेजा है। बाद में मन्दिर की ओर से दबाव डाला जाता है, या उन लोगों को कुछ लालच दिया जाता है तो यह कहना मुश्किल है कि दूसरे क्या करेंगे, मगर हम तो अपनी बातपर कायम रहेंगे।" तब उनसे हमने कहा कि ठीक है आप जाइये। हम संत बालजी से सलाह लेकर आपको खबर देंगे। महाराजजी ने हमें सलाह दी कि पहले बात की ठीक-ठीक जाच कर ली जाये। अम्बू भाई भी सागलपुर गये। वहां हम किसानो, पटवारियों और मन्दिर के व्यवस्थापकों से मिले। हमारे मन पर छाप यह पड़ी कि किसानों की बात सच है। इसलिए हमने महन्तों से कहा कि, 'आप किसानों से खेती कराते हैं, खेती का हिस्सा लेते हैं, मगर पट्टे पर उनका नाम नहीं लिखने देते, यह ठीक नहीं है। जो जमीन जोतते हैं उनसे फसल इस तरह वसूल करना कानून के खिलाफ है। आपकी संस्था एक धार्मिक संस्था है। क्या आप ऐसा करना उचित मानते हैं। इसे विचार कर देखिये।' महन्त ने कहा कि 'जमीन मन्दिर की है, उस में से कितना लेना और क्या लेना यह देखना हमारा काम है। हमारे यहां जो सिलसिला चला आ रहा है हम उसी के मुताबिक काम करते हैं - पटवारी कुछ हमारे नौकर नहीं हैं। सरकारी दफ्तर में जमीन पर किसी किसान का नाम नहीं है वहां तो हमारा नाम है। यह हमारी भलमनसाहत है कि हम उन्हें जमीन जोतने देते हैं। मगर वे फसल का हिस्सा हम नहीं देना चाहते तो खेती बन्द कर दें। हम किसी और को जमीन पर खेती सौंप दें ही कराते हैं।'

अम्बू भाई ने कहा कि 'ऐसी हालत में सब किसान इकट्ठा होकर अपनी मांग लिखें और मण्डल को सौंप दें। फिर मण्डल जो कुछ तय करेगा किसानो को वह निर्णय मानना पड़ेगा।' किसान इस बात पर राजी हो गये। अम्बू भाई फिर संत बालजी से मिले और सारी बात उनके सामने रखी। संत बालजी ने कहा कि मन्दिर एक धर्म का स्थान है। अगर वह अधर्म करता है तो साधु संतों का काम भी उन्हें रोकने का है। किन्तु सवाल आज किसान मण्डल के सामने पेश है, इसलिए मण्डल को ही शुद्धि प्रयोग करना चाहिए।

मण्डल ने मन्दिर को एक हफ्ते की मोहलत दी और कहा कि अगर आप इस अर्से में किसानों की मुश्किलें दूर नहीं करते तो लाचार होकर मण्डल को उसमें पड़ना पड़ेगा। मन्दिर के कर्मचारियों ने किसानों को इकट्ठा किया और उन्हें डराया धमकाया और पैसे का लालच दे आपस में फूट डालने

की कोशिश भी की। हर तरह के उपाय किये गये; मगर किसान पक्के बने रहे। ८ दिन बीत जाने पर मन्दिर के चौक में सार्वजनिक सभा की गयी और उसमें सारी बातें लोगों के सामने रखी गयीं और यह घोषणा की गयी कि इस परिस्थिति को सुधारने के ख्याल से कल ही से उपवास शुरू होगा। एक भाई ३ दिन तक का उपवास करेगा और उसके साथ पहले दिन ५ भाई सहानुभूति के रूप में २४ घन्टे का उपवास करेंगे। दूसरे दिन दूसरे गाव से ४ भाई सहानुभूति में उनके साथ बैठेंगे और इस तरह यह अखंड उपवास चलता रहेगा। सुबह प्रार्थना होगी और इसके साथ साथ धर्म पुस्तकों का पढना-पढाना और कताई आदि का कार्यक्रम चलेगा। कोई भी काम छुपाकर नहीं किया जायेगा। जिसको आने की इच्छा हो यहा आ सकता है। आने जाने पर रोक नहीं रहेगी।

दूसरे दिन खबर मिली कि जो किसान अपनी बात से डिगे नहीं हैं उनकी खडी फसल को बरबाद किया जा रहा है। मैं जयन्तीलाल शाह के साथ खेतों में गया। सयोग से उस समय वहां के सर्किल साहब वहीं थे। चारों ओर फसल खड़ी थी और उसे बरबाद किया जा रहा था। यह दिन के कोई २ बजे की बात होगी। हमने फसल बरबाद करनेवालों से पूछा कि तुम इस खड़ी फसल को किसलिए काटे डाल रहे हो। जवाब मिला, 'महन्तजी से जाकर पूछो। हम कुछ नहीं जानते।' हमने सर्किल साहब के साथ जो पटवारी था, उससे कहा, 'पंचनामा लिखिये। उसने पचनामा लिख लिया और हम वापस अपने आश्रम में आ गये।

कोई ४ बजे होंगे, मन्दिर के कोठारी ने पटवारी को बुलाया और कहा कि 'पचनामा सर्किल साहब के सामने हुआ है, उसे उन्होंने खुद देखा-समझा है। फिर यह मामला दिन दोपहर को हुआ है; बात कचहरी में तो जायेगी ही।' पटवारी ने कोठारी को सलाह दी कि वह हम लोगों को बुलाकर बातचीत कर ले। हम लोग मन्दिर में गये। हमारा स्वागत किया गया और बाद में पटवारी ने जयन्ती लाल शाह से कहा कि फसल को नष्ट करने के कारण महन्तजी ने कोठारी को डाटा फटकारा है और कहा है कि तुमने खराब काम किया है। अब महन्तजी ने मुझे और आप लोगों को बुलाया है कि समझौता हो जाये। तब कोठारी बोला, 'आप लोग उपवास बन्द कर दें और हम लोगों ने मूगफली की जो फसल नष्ट की है, हम पाच लोग कहेंगे तो उसका नुकसान भर देंगे।' हम लोगों ने कहा कि समस्या तो आप लोगों ने खडी की है। मुख्य बात तो किसानों के साथ कैसा बर्ताव किया जाये, यह तय करने की है। अगर आप पूरे मामले पर कोई निर्णय लेने को तैयार हैं तो महन्तजी से बात कीजिये। अगर वे कहे तो हम साथ बैठकर विचार के लिए तैयार हैं। इसके बाद तय हुआ कि मन्दिर की तरफ से २, हमारी तरफ से २ और एक तटस्थ व्यक्ति इस तरह पाच आदमी कोई उपाय सोचें और यह पच-फैसला सभी स्वीकार कर लें। ऐसा लिख लिया गया और उस पर पटवारी ने भी दस्तखत किये।

हमने उपवास आदि का कार्यक्रम बन्द कर दिया और सन्त बालजी के पास गये, पूरी बात उन्हें बतायी, उन्होंने ध्यानपूर्वक हमारी बात सुनी। सुनकर कहा कि तुमने पंचनामा किसलिए किया। हमें कानून का सहारा नहीं लेना है। न्याय के लिए अदालत में जायेंगे तो आपस में मनमुटाव बढ़ेगा। हमतो यह चाहते हैं कि किसानों और मन्दिर के अधिकारियों के बीच प्रेम पैदा हो। कानून से प्रेम पैदा नहीं होता, मन नहीं बदलते, शुद्धि नहीं होती। तुमने सारी बात पचों के ऊपर छोड़ दी, यह ठीक किया। मगर पच सही निर्णय न दें तो भी हमें अदालत में नहीं जाना है और न ही गवाही आदि देनी है। जब तक हम लोगों के मन पूरी तरह नहीं मिलते कोई लाभ नहीं होगा।

हम लोग वापस सागलपुर गये और जिस तरह तय हुआ था पचों के नाम मागे। जवाब मिला कि कोठारी किसी दूसरी जगह चला गया है। जब लौटेगा तब नाम तय किये जायेंगे। इस तरह बात को गड़बड़ करने की कोशिश की गयी। फिर सुनने में आया कि मन्दिर के लोग समझौते के पक्ष में नहीं हैं। अदालत में सवाल जाये इससे वे जरूर डरते थे। किन्तु सत बालजी ने अदालत में जाने के लिए मना किया है, यह बात उन्हें मालूम पड गयी है; इसलिए अब वे समझौता करने के लिए तैयार नहीं हैं। जब कोठारी लौटा तो उसने हमसे कहा कि "इसमें पंचों का क्या काम है। हमने मूगफली उखाड दी इसमें किसानों का क्या बडा नुकसान हुआ। अब दूसरी फसल बोयी जा सकती है। अगर आप कहे तो हम ५-२५ रुपये दूसरी फसल बोने के लिए किसानों को दे सकते हैं। दूसरे किसी प्रकार के समझौते के लिए हम तैयार नहीं है।" कोठारी की यह बात सुनकर हम हैरान हो गये। हमारे साथ अम्बू भाई भी थे, उन्होंने कहा, "आप यह क्या कह रहे हैं। पहले समझौते के लिए आपने पंच फैसले की बात को कबूल किया, इसके बारे में कागज लिखा गया और हम सबने उस पर हस्ताक्षर किये। ५-२५ रुपये का सवाल नहीं है। मुख्य सवाल तो किसानों के साथ न्याय करने का है। एक धार्मिक सस्था के जिम्मेदार अधिकारी होते हुए भी आप अपने वचन से किस तरह मुकर रहे हैं। आपको चाहिए कि आप अपनी तरफ से पचों के नाम दें।" कोठारी ने कहा कि, "हम अपनी चोटी किसी के हाथ में देने के लिए तैयार नहीं हैं। जमीन हमारी है और हम जिस तरह चलते आये हैं वैसे ही चलेंगे? इसमें पचों का क्या सवाल है। हम खेती जबर्दस्ती थोड़े ही करवाते हैं। उन्हें खेती करनी है तो करें और नहीं तो हमारी जमीन परती पड़ी रहेगी। पचों के कहने के मुताबिक किसानों के साथ व्यवहार करने की हमें कोई जरूरत नहीं है। मैं जो कुछ कह रहा हू उसे कान खोलकर सुन लीजिये।"

रात को फिर सभा हुई और हमने कोठारी से जो बात हुई थी शुरू से आखिर तक लोगों को सुनायी और यह भी कहा कि "देवस्थान के प्रति हमारे मन में सम्मान की भावना है। किन्तु धर्म की आड़ में यहां जो गलत काम होते हैं इसके खिलाफ समाज को खड़ा होना ही चाहिए। हम अपने शुद्धिप्रयोग कल फिर से शुरू करेंगे।"

शुद्धि प्रयोग करनेवाले मण्डल में हम ९ आदमी थे। तय हुआ कि उनमें से हम ५ उपवास करें और ४ दूसरे काम देखें। पहले

नवल भाई इनके बाद मेरी बारी थी। वे २३, २४ और २५ जुलाई (जुलाई १९५६) को उपवास पर बैठे और इस तरह कार्यक्रम चलने लगा। बाहर के लोग भी रोज ४-४ की टुकड़ियों में आकर उपवास में शामिल होने लगे। वे लोग दूसरे दिन शाम तक आ जाते थे। और २४ घंटे के बाद उपवास छोड़ते थे। शांतिपूर्वक उपवास करके शांतिपूर्वक लौट भी जाते थे।

सागनपुर का हनुमान मन्दिर चारों तरफ तीर्थ स्थान की तरह प्रसिद्ध है ही। बाहर से आनेवाली उपवास करनेवाली टुकड़ियाँ धर्म करनेवाले तीर्थ यात्रियों की टुकड़ियाँ मानी जाने लगीं। इस तरह हमारा शुद्धि प्रयोग इन टुकड़ियों के लिए एक पवित्र काम बन गया। पूरे भाल नलकांठा विभाग से गावों के लोग उपवास के लिए आने लगे। पुलिस वगैरह भी तैनात हो गयी। इस तरह चारों तरफ एक हवा बनने लगी। मन्दिर के अधिकारियों ने भी तैयारी शुरू कर दी। जो पांच किसान अपने वचन पर अभी तक अड़े हुए थे उन्हें परेशान करना शुरू कर दिया। वे खेती का काम करने या अकेले बाहर जाने में घबराने लगे। औरतें और बाल-बच्चे तो इस हालत में बाहर किस तरह निकल सकते थे? पशुओं के साथ किसी न किसी को चराने जाना पड़ता था। महन्त के लोग उसमें भी आड़े आते थे इसलिए ढोरों को घर बांध कर खिलाना लाजमी हो गया। चारे दाने का सवाल भी खड़ा हो गया। अगर कोई बाहर जाकर घास काटने की कोशिश करता तो मन्दिर के लोग धमकी देते कि आज निकले तो निकले, अब घर के बाहर मत निकलना। आखिरकार गाव के लोग तंग हो गये और उन्होंने पशुओं को तो बिना किसी की देख-रेख के बाहर छोड़ना शुरू कर दिया।

दूसरी तरफ उपवास के लिए जो टुकड़िया आती थीं, उन्हें तंग करना शुरू किया गया। कोई १०० आदमियों की टोली बनायी गयी। जब सत्याग्रहियों की टुकड़ियाँ आतीं तो ये लोग ढोल, तांबे, भाले और लाठियां लेकर और मशालें जलाकर उनके सामने खड़े हो जाते और उन्हें घेर लेते। वे लोग धीरे-धीरे बढ़ते तो ये उपद्रवी लोग भी धीरे-धीरे गाली गलौज करते हुए उनके साथ-साथ चलते रहते। कभी कभी तो मार-पीट करने की धमकी भी देते थे। किन्तु उपवास के लिए आये हुए लोग शान्ति के साथ हसते-हसते और सब कुछ सहन करते हुए उपवास करने के स्थान तक पहुंच जाते थे।

जिस मकान में हम लोग टिके हुए थे उस पर पत्थर बरसाये जाते थे। और शाम की प्रार्थना के समय उपद्रवी लोग बड़ी तादाद में इकट्ठा होकर मकान को चारों तरफ से घेर-कर शोर करते और हम लोगों को हैरान करने का प्रयत्न भी करते। अन्त में हमने मौन प्रार्थना प्रारंभ कर दी।

मन्दिर में कुछ पत्रकार लोग भी आ पहुंचे। वे हमारे पास आकर सब जानकारी ले लेते और मन्दिरवालों को बता देते। यों तो हमारा सब काम खुला हुआ था, छुपाने की कोई बात थी ही नहीं। एक दिन रात को जब अंधेरा हो गया तो २०-२५ आदमियों की टोली हाथ में मशालें लेकर आयी और हमारे मकान के सामने गाली-गलौज करके लौट गयी।

इन दिनों श्री गुलाम रसूल कुरेशी धन्धुका तालुक से विधायक थे। वे संत बालजी के काम से जुड़े हुए थे। एक दिन वे जिलाधीश के साथ यहां आये और गांववालों की मुश्किलें आदि बरबाद करने और उन्हें कष्ट देने के बारे में हम लोगों से पूछताछ करने लगे। हमने कहा," हमारी फरियाद तो 'उस बड़ी सरकार' में है। आप हमारी शिकायत उन तक पहुंचा दीजिये। यहां की सरकार से हम कुछ कहना नहीं चाहते।" वे विचार में पड़ गये इसलिए मैंने फिर कहा कि "सारा कारोबार तो 'ऊपर' से चलता है। 'ऊपर' से हमारा अर्थ भगवान से है और हम उसी के सामने अपनी शिकायत पेश कर रहे हैं। प्रार्थना, उपवास और हृदय शुद्धि का प्रयोग चल रहा है और चलता रहेगा।" इसके बाद वे जो जानकारी ले सकते थे, लेकर चले गये। सागनपुर का मन्दिर वडताल के बड़े मन्दिर के अधीन माना जाता है। धीरे धीरे यह बात वडताल के महन्त के पास पहुंची। वहां से दो व्यक्ति जांच-पड़ताल के लिए भेजे गये। और उन्होंने जांच-पड़ताल की भी। वडताल मन्दिर का कामकाज एक समिति की देखरेख में होता है। उस समिति के एक प्रतिनिधि स्वयं मुनिश्री संत बालजी के पास आये और उनसे उन्होंने सारी परिस्थिति पूछी। परिस्थिति समझने के बाद उन्होंने गांववालों से समझौता करने का निर्णय लिया। अम्बू भाई ने भी परिस्थिति को उनके सामने विस्तार के साथ रखा और तब निम्नलिखित समझौता हुआ .

(१) जिन किसानों का नाम सरकारी पट्टे पर चढ़ा नहीं है, मन्दिर के अधिकारी-गण उनका नाम दर्ज करायेंगे।

(२) मन्दिर कायदे के मुताबिक जितनी फसल ले सकता है उतनी ही लेगा।

(३) आज से पहले मन्दिर ने जितना अधिक वसूल किया है उसका हिसाब करके किसानों को पैसा चुकाया जायेगा।

(४) प्रयोग के अन्त तक गाव के पांच किसान टिक पाये थे तो भी तय हुआ कि समझौता सारे गाव के किसानों पर लागू होगा।

(५) किसानों के प्रति मन में किसी प्रकार की कटुता या बदले की भावना भी नहीं रहने दी जायेगी और उनके साथ सज्जनता का व्यवहार होगा।

(६) जो किसान मन्दिर के मकानों में रहते हैं उनसे भी मकान खाली नहीं कराये जायेंगे। उन्हें हर तरह से निर्भय किया जायेगा।

समझौते पर मन्दिर के प्रतिनिधि के रूप में मधुभाई, जयभाई पटेल और किसानों की ओर से अम्बू भाई ने हस्ताक्षर किये।

इसके बाद मन्दिर के प्रांगण में, गांव भर को आमन्त्रित किया गया और जो किसान अन्त तक पक्के रहकर सत्याग्रह करते रहे थे उनको कोठारी ने हार पहनाकर सम्मानित किया। गाव के जो किसान सत्याग्रह छोड़ गये थे वे सब भी खुशी खुशी हाजिर हुए और सबने आपस में एक दूसरे को गले लगाया। जो टुकड़ी हमें हैरान करती थी और जुलूस निकालकर उपद्रव मचाती थी उसके साथ भी प्रेम का बर्ताव किया। पहले जो समझौते की बात चली थी उसका आधार भय था किन्तु यह समझौता प्रेम के आधार पर हुआ इसलिए किसी के मन में मैल नहीं था। →

विरोध और दमन रुके समायोजन जन-राष्ट्र परिषद का हो

(बिहार आंदोलन के विषय में पिछले अंक में प्रकाशित श्री जैनेन्द्र कुमार के लेख "गांधी के नाम पर इन्दिरा गांधी" में लेखक ने दोनों पक्षों के समझौते की बात उजागर की और इस संदर्भ में एक राष्ट्र-परिषद के निर्माण का नवीन विचार प्रस्तुत किया। उपरोक्त लेख पर पाठकों के विचार आमन्त्रित करते हुए कुछ चर्चा-प्रश्नों को हम यहां दे रहे हैं। प्रश्न "भूदान-यज्ञ" के संवाददाता सुरेश टाकरान ने किये। सं०)

प्रश्न—राष्ट्र परिषद की कल्पना आज के स्थिति संकट में सही प्रतीत होती है। पर क्या वह दोनों पक्षों को मान्य होगी।

उत्तर—दोनों पक्षों को, अर्थात सरकार को और सर्वोदय को? लेकिन न सर्वोदय, न सरकार व्यक्तिपरक है। इन्दिराजी में सरकार खत्म नहीं है, न जे पी. में सर्वोदय समाप्त हो जाता है। इन दोनों ही नेताओं को अपने में लेकर राष्ट्र को जीना और बढ़ना है। प्रयत्न होना चाहिए कि ये दोनों विभूतियां एक-दूसरे की शक्ति को तोड़ें नहीं, प्रत्युत राष्ट्र की मांग में जुड़कर उसको शक्तिशाली बनायें। सर्वोदय और सरकार दोनों में ही ऐसे तत्त्व हैं जो सीधी मुठभेड़ उनमें नहीं चाहेंगे। संघर्ष यह राजनीतिक होगा और राजनीतिक संघर्ष अनिवार्य नहीं होता। वह अहन्ताओं का संघर्ष होता है और आवश्यक है कि सौम्य तत्व उभरें और सुलह-सफाई का मार्ग सुझे। परम सौभाग्य की बात है कि देश के पास संत विनोबा जैसी निधि है। उनकी सहानुभूति बंटी हुई है। इन्दिरा-जयप्रकाश दोनों समान-भाव से उनके निकट हैं। इस विकट अवसर पर निश्चय ही वे देश की रक्षा कर सकते हैं।

महाभारत को भगवान कृष्ण भी टाल नहीं सके। लेकिन पाण्डवों की मांग को आधे राज से सिर्फ रहने लायक भूमि तक वे ले आये। आज मार्ग अचल हैं, शासक अटल है और कृष्ण कहीं कोई दीखता नहीं। हो सकता है युद्ध अनिवार्य हो। युद्ध ने ही हमें गीता दी। युद्ध ने राम को मर्यादा पुरुषोत्तम बनाया। युद्ध का भय नहीं रखना है। किन्तु युद्ध में से निष्पत्ति धर्म की होनी चाहिए। बहुत अच्छा है कि बिहार का कुरुक्षेत्र धर्मक्षेत्र हो, पर गांधी से युद्ध की एक नयी पद्धति भी निकली है। गीता-रामायण के युद्ध न रहे हों निरस्त्र पर ये वे नितान्त धर्मयुद्ध। यह युद्ध जयप्रकाशजी का नहीं है, उन्होंने अपनाया है। इसलिए उसका रूप नैतिक से अधिक राजनीतिक हो तो असम्भव नहीं है।

युद्ध में एक ओर मारक शस्त्र हो सकते हैं किन्तु युद्ध का अहिंसक अस्त्र मरण देनेवाला नहीं होगा, मरण को स्वयं अपने ऊपर लेनेवाला होगा। बात उल्टी लग सकती है, पर बलिदान की शक्ति के आगे कोई दूसरी शक्ति कब ठहर सकी है? सत्याग्रह उसी बल पर अविजय बनता है। कारण वह विजय अपनी नहीं सत्य की चाहता है। शत्रु को ऊपर से नहीं परास्त करता, भीतर से और प्रेम से जीतता है। विश्व में सर्वाधिक विस्तार आज ईसाई धर्म का है। ईसा के बलिदान की शक्ति में स्वरूप प्रमाण भेजे, उससे अधिक और क्या हो सकता है? गांधी नाम स्वयं इन्दिरा का है, कांग्रेस भी अपने को गांधीमार्गी कहती है। खादी का लिबास उसने छोड़ा नहीं है। इन सब कारणों से गांधी को आज व्यवहार के विचार से एकदम बाहर नहीं मान लेना है।

तो यह तप-त्याग की शक्ति विपक्ष को निरुपाय कर जाती है। उससे आरंभ में उद्वेग बढ़ता है, हिंसक भाव उभरते हैं पर अंत में सत्याग्रही की तितिक्षा और सुजनता हुए बिना नहीं रहती। परिणाम कि हृदय परिवर्तन घटित होता और शत्रु मित्र बनता है।

बिहार में यह हृदय परिवर्तन की सम्भावना वाली गहरी अहिंसक विधि और दमन की प्रतिस्पर्धा की ओर देश के अहित को टालना होगा।

जयप्रकाशजी ने राष्ट्र को जगा दिया है। मूढ़ावस्था उसकी समाप्त हो गयी है। विश्वास यह भर चला है कि जनता अपनी सहायता कर सकती है। यहां तक कि कटिबद्ध हो जाये तो इस अर्थ में वह राजसत्ता की भी सहायता कर सकती है कि वह जोर-जबर्दस्ती के विश्वास से छूटे और जन-विश्वास का आश्रय लेना सीखे।

राष्ट्र-परिषद् का समायोजन उसी जन-विश्वास का परिचायक होगा। जनतंत्र का दूसरा अर्थ मैं नहीं जानता।

प्रश्न—समानान्तर सरकारों के बारे में आप क्या जानते हैं? क्या आप उसमें अनिष्ट की सम्भावना नहीं देखते?

उत्तर—सरकारें दो नहीं हो सकतीं। प्रजा की सरकार होगी तो राजा की सरकार को नहीं होना होगा। राजा की सरकार आज है नहीं। कम से कम सविधान के रूप में नहीं है। इसीलिए समानान्तर सरकारों की बात अयथार्थ है। प्रजा अपने जीवन को अपने हाथ में ले, इसके मानी नयी सरकार की स्थापना के नहीं हो सकेंगे। ग्रामसभा ठीक है, लेकिन विधान सभा ठीक नहीं होगी। कानून बनाने का काम जो हाथ

→

मन्दिर ने सभी कर्मचारियों ने समझौते का पूरा पूरा पालन किया और वे आज तक ऐसा बर्ताव कर रहे हैं जैसा धर्म से सम्बन्धित किसी संस्था को शोभा देता है। हमारा यह शुद्धि प्रयोग एक सौ बत्तीस दिन तक चला। मन में आया कि अगर किसान किसी और ढंग से मन्दिर में लगी हुई जमीन की एक बीघा जमीन को भी अपने नाम सरकारी कागज पर दाखिल कराना चाहते तो यह उनके वश की बात नहीं थी। जहां कानून भी किसी काम नहीं आया वहां प्रेम ने ८०० बीघा जमीन किसानों के नाम लिखवा दी। रागद्वेष से परे रह कर सच्ची दिशा में हृदय परिवर्तन का प्रयोग कितना महत्वपूर्ण हो सकता है यह भागलपुर के इस प्रयोग से सबके सामने आ गया। संत बालजी की सलाह न मिलती तो इस अंचल के ऊपर प्रेम की ऐसी पताका फहर पाती?

(गुजराती 'वट-वृक्ष' से)

में लेगा उसे फिर दण्ड और न्याय के उप-करणों का पृष्ठबल भी देना होगा। लेकिन अन्ततः हिंसा का सहारा लेगा तो सब नष्ट हो जायेगा। सांस्कृतिक विकास का मूल ही भ्रष्ट हो जायेगा। यही नहीं, नागरिक के ऊपर टैक्स लेनेवाले दो वर्ग नहीं लद सकेंगे। प्रजा के नाम पर राज्य के अतिरिक्त दूसरा कोई वर्ग अपना बोझ नागरिक-जन पर डाले, यह असह्य होगा। राजनीतिज्ञों की जमात छोटी से छोटी होनी चाहिए। अमल रचनात्मक कर्मियों की बढ़ेगी तब राष्ट्र पनपेगा। प्रभा-मय नेता परोपजीवी होने लग जाता है। वह लेता है, देता नहीं। आदर्शात्मक शब्दों के गुब्बार से वह लोगों के सिरों पे जो बैठता है और उन्हें गिरा देता है। इस धंधे की कीमत अब घटनी चाहिए। महन्त गये, सामन्त भी गये। यह नये किस्म का मानव (मानव-जन्तु) भी इस नयी व्यावसायिक सभ्यता ने उपजा डाला है पर सभ्यता को इस नशे से और नयी होना है। उसमें खाली शब्दों के बूते के आदमी ठाठ-बाट से नहीं जी पायेगा। उसे कुछ करना होगा कि पसीना बहे, कुछ उगे और बने। बुद्धिजीवी साम्राज्य के दिन अब चल देने चाहिए। शब्दों का आतंक बहुत चल लिया। रायटरिएक्शन, 'ग्रेट एडवेंच-रिज्म' फासिस्ट, ओपॅन मित्र आदि मन्सूब शब्द कब तक काम देंगे। एक दूसरे को गिराने वाले दलील नारों से आदमी बहुत काल पागल नहीं बनाया जा सकेगा। वह नहीं छोड़ेगा हाथ का काम और नहीं देगा चढ़ने के लिए किसी को अपना कन्धा। सबसे चोखा धन्धा चल रहा है आज अगर राजनीति का तो कल दीख जाने वाला है कि वही सबसे निकृष्ट फालतू था। निरा-निरा भावावेशी का वह मामला था।

तो जिस राष्ट्र परिषद् की बात मैंने की उसमें आज के ये चतुर विद्वान जन आगे से अधिक नहीं होंगे। मान लेते हैं कि जनता को नेतृत्व चाहिए। पर साथ ही राष्ट्र-परि-षद् की कल्पना में यह भी है कि जनता नेता का नेतृत्व करेगी। ये बातें पीयूष्म की कब तक किताबों में ही रहीं चली जायेंगी? परमिर कभी तो इन्हें घटना में आना है। मैं जो शासन मुक्त समाज कहा करता मानता

हो कहा जायेगा। उस दिशा में बढ़ना हो हो नहीं सकेगा? मार्क्स के इस आदर्श को लेकर हुई क्रांति उसमें सत्तात्मक बन बैठी है। चीन में क्रांति से क्या प्रकट हुआ है यह अभी प्रकट होना है। लेकिन गांधी का भारत क्यों इस दिशा में चेष्टा करके नहीं दिखा सकता? राष्ट्र परिषद् में से इस चेष्टा का आरम्भ हो सकता है।

बिहार की समान्तर सरकार की बात से यह बात बिल्कुल जुदा है। यह सचमुच सारी सरकार के ही, प्रजा की सरकार बनाने की दिशा का कदम माना जाये तो गलत नहीं होगा। इसमें जो लोक-नेतृत्व निकलेगा वह राज नेतृत्व में खो नहीं जायेगा। कारण ठाट-बाट, रोब-दाब उस नये नेतृत्व का मूल्य नहीं होगा। उसका मूल्य होगा श्रम सामान्यता।

प्रश्न—राष्ट्र परिषद् आप कहते हैं, राष्ट्रपति चुनाये। क्या यह परिषद् का सर-कारीकरण नहीं हो जायेगा?

उत्तर—होना तो नहीं चाहिए। लेकिन विनोबा राष्ट्र के आत्म-प्रतिनिधि होकर इस आह्वान को अपने हाथ में लें और राष्ट्र को संबोधन दें तो इसको उत्तमतर मानूंगा। सर्व-सेवा-संघ का मत इस संयोजन में काम आ सकता है और सरकारी तंत्र उस को सह-योग दे सकता है।

किन्तु तब उसकी वैधानिक स्थिति शायद उतनी सक्षम न हो पाये कि निर्णयों और व्यवस्थाओं को अधिकतम राजकीय स्वरूप मिले। बहरहाल, इन सब पहलुओं पर मिल-बैठकर विचार किया जा सकता है। स्पष्ट इतना है कि ध्रुव केन्द्र देश के पास दो हैं। प्रधानमन्त्री दल नेता हैं। राष्ट्र की प्रतीक वह नहीं मानी जा सकतीं। हो सकता है, वर्तमान राष्ट्रपति उनके नामांकित ही हों, पर संविधान से उत्तीर्ण राष्ट्र प्रतीक की स्थिति उनकी है। दूसरी ओर भारत के लोकात्मक केन्द्र के रूप में राष्ट्रऋषि विनोबा को स्वीकार किया जा सकता है। क्या महा-त्मा गांधी को सर्वसम्मत भाव से आज भी राष्ट्रपिता नहीं माना जाता? और उन्होंने उत्तराधिकार अपना विनोबा को सौंपा है। आधा अर्थात लौकिक उत्तराधिकार नेहरू को भी मिला था पर अब तो सुलभ अकेले

विनोबा ही रह जाते हैं। इन दोनों ध्रुव-बिन्दुओं के बीच राष्ट्र परिषद के संयोजन के सब व्यापारों का निर्णय हो सकता है।

दादा धर्माधिकारी का विचार है कि *परिषद की भूमिका लोकात्मक हो, शासनगत न हो।* जे. पी. को दादा का डर है लेकिन अनुमान है कि दादा की ओर से उन्हें समय-समय पर यथानिवार्य समीक्षात्मक संकेत भी मिलते हैं। दृष्टि और सहानुभूति उनको खुली है और उस दृष्टि की मदद विगतों के सम्बन्ध में ली जा सकती है।

प्रश्न—तो शेष राजनीतिक दल क्या चित्र के बाहर ही रहेंगे? परामर्श से भी बाहर?

उत्तर—नहीं, *बाहर क्यों रहेंगे?* लेकिन हां, राष्ट्र उन पर स्थगित नहीं रह जायेगा। प्रधान मंत्री दल नेता हुआ करते हैं और दल बदलते-बदलते रहते हैं। इस तरह मंत्री आते जाते, उठते गिरते हैं। राष्ट्र का सातत्य उन पर आधित है इसलिए प्राथमिक परा-मर्श में उन सभी का स्थान और समावेश होगा। किन्तु राष्ट्र जीवन में गहन-गम्भीर ऐसे अनेक तत्त्व हैं जो द्वन्द्व में और चुनावों में पड़ते नहीं हैं, पर देश के भविष्य के सम्बन्ध में किसी से कम सचान नहीं हैं। ऐसे लोगों को दलवाद व्यर्थ बनाये रखता है। उन तत्त्वों को सार्थक और समर्थ बनाना परिषद की सफलता के लिए आवश्यक है।

पर मैं नहीं चाहूंगा कि राष्ट्र परिषद् की चर्चा हवा में की जाये और उसकी मंजिल-दर-मंजिल का नक्शा *खामखा बनाया जाये।* नहीं, पहले उस विचार से वास्तविकता पकड़नी चाहिए। देशवासियों के मन में से उसका स्वागत ध्वनित होना चाहिए। शासन और विरोध दोनों प्रकार के वर्गों को उसमें से कुछ आशा की भनक मिलनी चाहिए। इसलिए यहां बस चर्चा को आगे बढ़ना नहीं है।

—जैनेन्द्र कुमार

अगले अंक में

मुंगावली खुली जेल की प्रथम वर्षगांठ पर विशेष सामग्री

मसीहा मत खोजिये

लुधियाना में सात लाख की विशाल जनसभा में जयप्रकाशजी द्वारा प्रेरक उद्बोधन

'साझा मोर्चा या जनता मोर्चे के सभी रहनुमाओ, पजाब के कोने-कोने से आये सभी भाइयो, सबसे पहले मुझे आपसे माफी मागनी चाहिए, मैं पजाबी बोल नही सकता, कुछ कुछ जब अमरीका मे पजाबी दोस्तो के साथ रहता था, पढता था, पढने के साथ-साथ मजदूरी करता था तब पजाबी, बगला सीखी थी, समझ लेता हू, बोल नही पाता। मुझे माफ करें। आपका जोश, उत्साह, आपकी तादाद देखकर मेरा दिल बैठा जा रहा है क्योकि आप इतनी उम्मीदें मुझसे लगाये हुए हैं। मैं ७२ साल का हू। तिहत्तर चल रहा है बीमार। भी रहता हूं। जब तक इन हड्डियो में ताकत है और जब तक शरीर मे खून है भगवान ने चाहा तो देश की, आपकी खिदमत करता रहू गा।

आप तो जानते हैं मैं यहां क्यो आया हू। मैं आजादी का एक सिपाही हूं। आप लोगो में भी सैकड़ों होंगे। १९४७ मे जो आजादी हमने हासिल की थी वह मुकम्मिल नही थी, कहीं रुक गयी। गाधीजी ने जो काम शुरू किया था, पूरा नहीं हो पाया। यही आपको पूरा करना है। इन्कलाब को आगे ले जाना है। सच्चे जनतंत्र को लाना है जो जनता का, आपका अपना हो। आप लोग सोचते होगे यह कैसे होगा। मैं आज आपको लाखो की तादाद मे देखकर कहता हूं, यह अब होकर रहेगा। अभी, प्रकाशसिंह बादलजी ने पजाब की हालत बतायी। आप अपना दुखडा रो रहे हैं और हम अपना रो रहे हैं बिहार मे। यहा सुखी कौन है। हमारे यहां जरखेज जमीन हैं, खनिज हैं, नदियां हैं, पानी बरसता भी है, आदमी भी कम नही हैं, ६ करोड़ हैं, कमजोर नहीं हैं, पंजाब की बनिस्बत कम खाते हैं मगर फिर भी कमजोर नही। मैं भी बिहारी हू, ७२ वर्ष की आयु मे आपके धक्के स्वागत के खाकर सही सलामत हू। बिहार मे खाने को ही कम मिलता है और सरकार ने क्या किया है? यह हमारे सामने है। १५ वर्ष बाद मैं पजाब आया हूं। मैं सोचता था आपको कोई परेशानी नहीं होगी मगर जैसा बताया कोई बडी इन्डस्ट्री नही, बिजली पानी नही, हुकूमत का यह बर्ताव है ठीक नहीं। मैं समझता था देश मे आप सबसे सुखी हैं, देश के पासबा हैं, पहरेदार हैं, हर मौके पर आपने, पजाब के जवानो ने, देश को खून दिया है, आजादी के दिनो से आज तक मिसालें हैं आपकी। पजाब की इस धरती के साथ ऐसा सलूक सौतेली मा जैसा सलूक है। मैं तो कहू गा यदि ज्ञानी जैलसिह पजाब की धरती पर पैदा हुए हैं तो वे इन्दिराजी से कह दें कि यदि ऐसा सलूक पजाबसे होगा तो मैं जनता मोर्चे मे शामिल हो जाऊंगा। (मच पर से हम शामिल नही करेंगे) यह आप पर है, आप शामिल करें या न करें। मेरे पास यदि आये तो मैं माफ कर देता हू।

आपके साझा मोर्चे के लोग जब पटना गये मुझसे मिलने, तो मैंने उनसे साफ-साफ कहा कि यह जो आन्दोलन खडा हुआ है यह जनता का है। मैंने पाच जून को पटना मे भी कहा था कि सियासी दलो की कच्ची दिवारें तोड देनी चाहिए। मैंने इससे कहा था युनाइटेड फ्रन्ट न कहकर जनता का मोर्चा कहें। आप खुद सोचिए कभी इतनी तादाद मे किसी सियासी दल ने लोगो को जोडा। यह जनता का दल है और जनता का बल।

हिन्दुस्तान की जनता के सामने बहुत सारी मुश्किलें हैं, सवाल हैं। ये जनता के सवाल इस बात से हल नही हो जाते कि सरकार बदल जाये। कहीं-कहीं सरकार बदली। बगाल मे अजय मुखर्जी आये, केरल मे नम्बूदरीपाद हमारे अच्छे साथी हैं, मित्र हैं, आज भी। मगर कुछ हो नही पाया। एक दो जगह नही सब जगह हुकूमत बदले और हुकूमत के साथ-साथ समाज बदले, व्यवस्था बदले। पजाब की हालत मे क्या हो, जो समस्याएं हैं पानी-बिजली खाद-इन्डस्ट्री शिक्षा आदि सबमे बदल हो। सहूलियत हो, न्याय हो। लेकिन पजाब मे गरीबी भी है। बादल जी ने मुझे बताया यहा ४० प्रतिशत लोग गरीबी से नीचे के स्तर पर गुजर करते हैं। यह भी एक सवाल है। उसे भी हल करना है। सरकार के पास जो सरप्लस जमीन है वह हरिजनो मे बाटी जायें वे भी खेती करें। पता नहीं पजाब मे क्या हालत है, मगर ऐसा ही सब जगह है। सीलिंग का कानून तो है मगर फर्जी नामों पर जो लोग हैं ही नही उनके नामो पर जमीन चढाकर लोगो ने कब्जा कर रखा है। इन्कलाब के मायने यह नहीं कि सरकार बदले इसके मायने हैं कि सारी व्यवस्था बदले। नीचे से ऊपर तक।

मैंने सियासत छोडकर सर्वोदय का कार्य किया। देश की समस्याओ, चुनाव के ढग, उसमे बढ रहे भ्रष्टाचार, किसानो, हरिजनो, छात्रो की समस्याओ पर सोचा। समझदार लोगो को बुलाया, चर्चा की। हमने पाया चुनाव मे ही भ्रष्टाचार की जड़ है। चुनाव का तरीका बदले। खर्चीले चुनाव न हों। भ्रष्टाचार की जड में चुनाव के लिए लिया गया काला धन है। यह एक सौदा है। दस लाख दिये तो सरकार से १ करोड का परमिट या लाइसेंस ले लिया। यह हो रहा है सरकार के द्वारा, उसकी जानकारी मे। यही वजह है महगाई की। बाजार मे रुपया अधिक है जिन्स कम हैं। बीच के लोग, सरकार या बडे लोग खा रहे हैं। फूड कारपोरेशन भी। गल्ला १०५ रुपये सरकार लेती है मगर जनता को १५० रुपये मिलता है। कहीं-कहीं और भी महगा। ऐसी हालत मे कमजोर आदमी, गरीब मजदूर क्या करें? उसे १२० रुपये में मिलना चाहिए कम है

कम। मैंने यह सब चर्चा की, अध्ययन किया। पिछले साल दो तीन मरतबा प्रधान मंत्री से भी मिला, उनसे इन्हीं सब पर बातें की; भ्रष्टाचार, चोरबाजारी, चुनाव के तरीके पर भी बात की मगर मेरे पर असर पड़ा कि उन्हें इसी से फायदा है। तब मैंने जनता से कहा। जनता को स्वयं लड़ना है। यहां जुलूस में कई जगह हमने देखा, लिखा था—जे पी. बागडोर संभालो चोरों से देश को बचाओ। कोई हुकूमत की कुर्सी पर बैठेगा और सारी बातें हल हो जायेंगी ऐसी बात नहीं गुरु गोविंदसिंहजी ने कहा था—ग्यारहवां गुरु नहीं होगा। मैं पटना से आया हूं पटना साहब से। उनकी बात समझता हूं वरना ग्यारहवां, बारहवां न जाने कितने होते। मगर उन्होंने एक ही बात कही, ग्यारहवां नहीं। इसलिए नेता की तलाश मत करो। जे. पी. भी क्या करें। हम गले-सड़े समाज की व्यवस्था भी ऐसी ही है। लोग संगठित हो जायें। ये जो गुजरात में हुआ उससे सबक लें। जनता को अपनी लड़ाई खुद लड़नी होगी। चाहे कैसी भी हो यह जनता की लड़ाई होगी। दस बीस लाख लोगों को संसद के सामने जाकर बैठना होगा कि हम यह सब बरदाश्त नहीं करेंगे, तब जाकर चुनाव में बदल होगी, सवाल हल होंगे।

जो इन्कलाब आ रहा है उसके नेता जवान होंगे, शिक्षक होंगे लेकिन ये हलवाले कहते हैं कि नेता श्रमिक होगा, हमारे दल का होगा। माओ ने अपने यहां मार्क्स और लेनिन की किताबों में लिखे पुराने वाद को छोड़कर कहा कि श्रमिक नहीं किसान हमारा नेता होगा। हर इन्कलाब अपनी किताब अपने आप लिखता है। यह पहला अध्याय है। गुजरात से प्रकाश आया। छात्रों ने एक लड़ाई शुरू की चीफ मिनिस्टर के खिलाफ। इस्तीफा मांगा। वहां चिमन भाई को इस्तीफा देना पड़ा। मुझे सबक मिला जवान और जनता दोनों की शक्ति मिल गयी।

हम जनतंत्र में आपको सिर्फ इतना ही अधिकार है कि आप चुनाव के वक्त एक कागज पेटी में डाल दें। लेकिन जिसे आप वोट देते हैं वह किसका आदमी है आप जानते नहीं। वह आपका नहीं है पार्टी का है। लेकिन यह वोट का हक भी रुपया देकर लाठी के जोर से छीना जा रहा है। बिहार यू पी में बूथ कैप्चर कर लेते हैं। ऐसा यू पी में कई जगहों पर हुआ। चुनाव केन्द्रों पर जो अधिकारी बनाये जाते हैं वे छोटे-छोटे आदमी हैं। उन्हें पोलिंग आफीसर या प्रसाइडिंग आफीसर बना देते हैं। उनसे सरकारवाले साफ-साफ कहते हैं, सौदा करते हैं। थोड़ी सी वोट डलवाओ, बाकी खुद डाल दो हमारे बक्से में। खुद ही मोहर लगाओ। उन लोगों को तरक्की दी गयी जबकि ईमानदार लोग पीछे रह गये। यह सब हो रहा है। इस देश में क्या ईमानदारी से कोई जीत सकेगा इस सरकार के खिलाफ। मुझे तो लगता नहीं। हम सभी जनतंत्र से चाहते हैं, सच्चे मायने *में जनतंत्र और जनतंत्र से ही हमारी समस्याएं* दूर हो सकती हैं।

बिहार में सात महीने पहले छात्रों ने शुरू की। उन्होंने मुझसे कहा, मैं भी शामिल हो गया। गुजरात में भी नव-निर्माण समिति थी। उन्होंने भी कहा, कहा ही नहीं, सात छात्र नेता मिलने आये दिल्ली और जबरदस्ती हाईजैक करके ले जाना चाहते थे मुझे। मैंने उनका समर्थन किया, अपनी बात रखी। विधान सभा भंग होने के बाद लोक-शिक्षण, मतदाता शिक्षण का कार्य उठाओ। दूसरे इस कार्य के लिए एक साल तक विद्यालय बन्द रखो। मगर बात पूरी तरह मानी नहीं गयी, वहां अब नव-निर्माण समिति भी दो दलों में बंट गयी है। वही गलती बिहार में न हो इसीलिए बिहार में छात्र संघर्ष-समिति जन-संघर्ष समिति तथा सभी दलों की समन्वय समिति बनायी और गांव में, पंचायत स्तर पर, ब्लाक स्तर पर या घर में लोक-शिक्षण का प्रचार हो रहा है यानि बिहार में आन्दोलन, संगठन नीचे तक गहराई तक फैला है।

गुजरात में चिमन भाई पटेल का विधान सभा में बहुमत था। उन्होंने इन्दिराजी से मांग की कि विधान के अनुसार हमें हक है कि हम अपना नेता यानी मुख्य मंत्री खुद चुनें लेकिन इन्दिराजी ने सभी प्रान्तों की तरह अपनी ही मनमानी की और उन्हें बाहर

लुधियाना की सभा में जन-अभिवादन स्वीकार करते जे० पी०

निकाल फेंका। वे किसी को माफ नहीं करतीं। उन्होंने चिमन भाई पटेल को भी नहीं छोड़ा। वे अपनी बात पर अड़ी हैं। इसलिए बिहार का आंदोलन उन्हें दिखायी नहीं देता। उन्हें भय है कि यदि बिहार विधानसभा भंग हो गयी तो यू. पी., पंजाब सभी जगह भंग होगी। दरअसल वे डट कर लड़ना चाहती हैं। हम भी हारे नहीं हैं। आगे के चुनावों में हमारा नारा होगा—'कांग्रेस को वोट मत दो।' अक्सर 'बन्द' होते हैं, एक दिन का बन्द होता है, बिहार में तीन दिन का बन्द हुआ। लोगों ने तार नहीं काटे, रेल की लाइनों पर बैठे। कर्मनाशा नदी है। वहां रेल की पटरी पर अस्सी साल की एक बुढ़िया ने इंजनवाले से कहा "तुम हमारे बेटे के बराबर हो, गाड़ी मत चलाओ"—नहीं चलायी। बिहार बन्द में बारह जगह आखिरी दिन गोली चली। कांग्रेस के कारण, दो एक जगह हमारे कारण सी०आर० पी० के ट्रक पर सी० पी० आई० के लोगों ने बम फेंका। आज पुलिस भी हमारे साथ है। बिहार में अमन चैन है। जनता की इतनी तैयारी देखकर भी सरकार की आंख नहीं खुली। इन्दिराजी ने इसे अपनी प्रतिष्ठा का सवाल बनाया हुआ है।

मेरा आपसे इतना ही कहना है कि आप कोई मसीहा मत खोजिये। जिस पार्टी को आप पसन्द करें उसे वोट दें। लेकिन साथ-साथ यह ध्यान रखें कि यह आदमी आपका हो, जनता का हो, ईमानदार हो। इन्दिराजी भी शायद ७५ में लोकसभा का चुनाव कराना चाहती हैं क्योंकि उन्हें लगता है कि विरोधी दल तैयारी नहीं कर पायेंगे। यह मेरा कहना है कि हर विधान सभा के हलके में छात्र संघर्ष समिति, जनसंघर्ष समिति, दोनों मिलकर उम्मीदवार तय करें। मेरा मकसद है यदि एक हलके में १५० छात्र संघर्ष समिति हैं तो उनके १५० प्रतिनिधि यानी कुल ३०० प्रतिनिधि एक राय से तय करें कि किसे खड़ा करना है। चाहे वह उम्मीदवार जनसंघ का हो या शिरोमणि अकाली दल का, वही जीतेगा। ये ३०० समितियां उसके लिए घर-घर जाकर काम करेंगी। रुपया भी खर्च नहीं होगा। लेकिन मेरी यह बात जब ये पार्टियां सुनती हैं तो कहती हैं कि यह कौन सा नया तरीका लाया है। मेरे तरीके में जनता और उम्मीदवार की दूरी कम हो जायेगी। अब उम्मीदवार जनता तक ५ साल में आता है और तब वह ३०० प्रतिनिधियों के प्रति उत्तरदायी होगा, उनके कहने पर कार्य करेगा। आप पार्टीवाले भी जब अपना उम्मीदवार खड़ा करेंगे तो ३०० प्रतिनिधियों का मण्डल उम्मीदवार की जांच करेगा। जो उनकी जांच में खरा होगा वही जनता का उम्मीदवार होगा, जनता-छात्र उसके लिए काम करेंगे। मण्डल जीतने पर उसकी लगाम अपने हाथ में रखेगा, जनता का सीधा अंकुश होगा। यदि वह ठीक काम नहीं करेगा तो उसे आप वापस बुला सकें, यह हक भी आपको हो ऐसी भी मेरी मांग है।

आज इन्दिराजी ने डेमाक्रेसी को खत्म कर दिया है। आज उनके खिलाफ कोई बोलने की हिम्मत नहीं करता। हमसे आकर इन्हीं के मंत्री आदि कहते हैं आपने ठीक कहा, आप सही कहते हैं मगर डर के मारे जनता के बीच कुछ और बोलते हैं। इन्दिरा जी ही आज नेता चुनती हैं, डिक्टेटर हैं। लोकतंत्र में लोक मैंने यानी जयप्रकाश ने और तंत्र इन्दिरा ने संभाला है।

दोस्तो सूरज ढल रहा है। सुबह दस बजे से आप चल रहे हैं। आप थक भी गये होंगे। मगर अभी हमें और दूर जाना है। हमारी शुरुआत है ये। आज इस सैलाब में हरिजन किसान, दफ्तर में काम करनेवाले लोग, वकील, इन्जीनियर सभी दलों के लोग आये हैं। दलों के साथ मेरे काम पर ज्ञानी जैलसिंह ने कहा कि मैं भ्रष्ट लोगों साथ चल रहा हूं। मैं जवाब नहीं देता। ज्ञानीजी के बारे में अभी लाला जगत-नारायण ने कहा कि वे निहायत बेईमान हैं। ये शब्द मेरे नहीं उनके हैं। उन्होंने लाला लाजपतराय के चरणों में काम किया है, कुरबानी दी है। भी ऐसा ही। हर मुख्य मंत्री अपने से पहले के खिलाफ जांच कराता है। मगर हरियाणा में बंसीलाल की जांच क्यों नहीं होती? १७ संसद सदस्यों ने तथा ३५ विधान सभा के सदस्यों ने लिखकर भी दिया मगर जांच नहीं हो पायी। क्यों? मैंने मांग की कि लोक-आयुक्त हो मगर वे चाहते हैं कि मुख्य मंत्री और प्रधान मंत्री के बारे में वे शिकायत न सुनें। देख लीजिये। मनमानी की भी हद होती है। वक्त ज्यादा हो रहा है। आप अपने अपने गांवों में जाकर लोगों को बतायें कि हमें क्या करना है। आपका बहुत बहुत शुक्रिया।

जनसभा में उपस्थित विराट जन-मेदिनी

[देवीशरण 'देवेश' द्वारा प्रस्तुत]

राष्ट्रलक्ष्मी कर्तव्यभान चाहती है

—चक्रवर्ती राजगोपालाचारी

मान लीजिये कि दीपावली के अवसर पर निजी दिये हटाकर राज्य की ओर से सुनियोजित प्रकाश की व्यवस्था कर दी जाये तो वह कैसी दीपावली होगी? अकेले सरकार द्वारा वृहद स्तर पर सर्वत्र दीवाली मनाने की कल्पना कीजिये। कुछ लोग कह सकते हैं कि वह एक भव्य आयोजन होगा। परन्तु क्या यह सही नहीं है कि जनता में वह हर्ष और उल्लास नहीं होगा जो पुराने ढंग की दीवाली में देखा जाता है। सम्भव है सरकार द्वारा की गयी व्यवस्था से प्रकाश अधिक हो, किन्तु नरनारियों और बच्चों के हृदयों में वह प्रकाश नहीं होगा जो अभी दिखलायी पड़ता है। हृदयों को प्रकाश तो तभी हो सकता है जब प्रकाश स्वयं के हाथों से किया गया हो।

अब राजकीय दीपावली एक प्रगतिशील विचार हो सकता है, परन्तु हमारे पूर्वज इससे बेहतर व्यवस्था चाहते थे। उनकी इच्छा थी कि कुछ व्यक्ति स्वतन्त्रतापूर्वक इसे मनाकर इसका आनन्द लें। दिल्ली, बम्बई या अन्य नगरों में एक विद्युत स्विच घुमाकर सारा नगर एक साथ प्रकाशित किया जा सकता है। इसमें कुछ कारीगरों द्वारा बल्ब लगाने और तार बिछाने तथा विद्युतगृह पर आवश्यक व्यवस्था के सिवाय किसी अन्य निजी प्रयास की आवश्यकता भी नहीं हो सकती। वह हृदयों की दीपावली नहीं हो सकती। वह नागरिकों के निकम्मेपन की निशानी मात्र होगी।

आजकल नागरिकों में शिथिलता तथा समस्त जिम्मेदारी सरकार पर डालने की एक विश्वव्यापी प्रवृत्ति चल पड़ी है। राज्य पर उत्तरदायित्व छोड़ना आकर्षक एवं सरल है। और यदि इस समर्थन में कोई शानदार आर्थिक सिद्धान्त पेश कर दिया जाये तो यह कार्य और भी सरल हो जाता है। यह आधुनिक प्रगति के अनुकूल होने का रूप भी ले सकता है। राज्य पूंजीवाद एक शासन प्रणाली है जिसमें पूंजी का संग्रह उदार सार्वजनिक भावनावाले व्यक्तियों की स्वैच्छिक बचत के द्वारा नहीं, वरन करों के रूप में बल-पूर्वक किया जाता है। पूंजी जुटाने के उद्देश्य से सार्वजनिक या विदेशी ऋण भी प्राप्त किये जाते हैं तथा उन्हें चुकाने के लिए फिर कर लगा दिये जाते हैं। व्यक्ति द्वारा राज्य पर दायित्व छोड़ देने का यह कुछ परिणाम है। इससे हम राष्ट्रलक्ष्मी को प्रसन्न नहीं कर सकते।

वस्तुतः आज जिसे हम राष्ट्र कहते हैं वह 'राज्य' का एक रहस्यमय नाम है। यह असलियत में सरकार द्वारा स्थापित नौकरशाही है। 'समाजवाद' नामक समग्र योजना एवं दर्शन का आशय वैयक्तिक उत्तरदायित्व का नौकरशाही के प्रति आत्मसमर्पण है। 'अब हम किसी बात की चिन्ता नहीं करेंगे, यह सब सरकार का काम है'—यह भावना अपनी जिम्मेदारी से मुंह मोड़ने के सिवाय कुछ भी नहीं। आत्मविश्वास का अभाव, समस्त बातों के लिए किसी संगठन पर निर्भर करना और अपने वैयक्तिक उत्तरदायित्व से छुटकारा, यह समाज की हार है।

वैयक्तिक स्वतन्त्रता, जिसमें वैयक्तिक उत्तरदायित्व निहित है, कोई ऐसी वस्तु नहीं जो जनता को सरकार से प्राप्त होती है। वस्तुतः सरकार जनता द्वारा प्रदत्त अधिकारों को प्राप्त करती है और यदि हम अपने लिए कुछ भी सुरक्षित न रखकर समस्त का आत्म-समर्पण कर दें तो इससे प्रगति नहीं होती क्योंकि तब लाइसेंस आदि की भीख मांगनी पड़ती है ताकि हम कुछ अंश उस स्वतन्त्रता का उपभोग कर सकें जो समर्पण से कुछ ही पूर्व हमारी अपनी थी। स्वतन्त्रता का परित्याग करने की अनुमति तो दी जा सकती है, परन्तु उत्तरदायित्व का परित्याग करना एक अपराध है। उन क्षेत्रों के सिवाय, जहां आप दायित्व के निर्वाह में अक्षम हैं, अन्यत्र कर्तव्यपालन से जी चुराना अनुचित है। परन्तु इसी प्रवृत्ति को आधुनिक एवं प्रगतिशील बनाया जाता है और ऐसा कहा जाता है कि समस्त कुशल एवं उदारमना व्यक्ति इसके प्रति आकर्षित हैं। सत्य बात तो यह है कि यह सभ्यता से पूर्व के दिनों की पुरानी आदिवासी व्यवस्था का एक नया संस्करण है, जब लोग सब कुछ कबीले के सरदार पर छोड़ देते थे तथा उसे प्रभु मानकर उसका श्रद्धापूर्वक अनुसरण करते थे। अब राज्य ने कबीले के सरदार का स्थान ले लिया है। यह संगठित प्रभु तानाशाही या गिरोह अथवा एक वर्ग के जरिये काम करता है। यह समस्त सत्ता हथिया लेता है और जनता को सब उत्तरदायित्वों से मुक्त कर देता है।

यदि इस बात से सत्ता में भ्रष्टाचार एवं अयोग्यता की वृद्धि होती है तो नया तानाशाह आ जाता है और सरदार के परिवर्तन के साथ वही कबायली दर्शन जारी रहता है। इससे नागरिकों की शक्ति-प्रतिभा में वृद्धि नहीं होती, जो लोकतन्त्रीय जीवन का मुख्य उद्देश्य है। इसके विपरीत इससे प्रतिभा, उत्साह एवं शक्ति का विध्वंस होता है तथा स्वतन्त्रता एवं दायित्व का स्थान दासता ले लेती है। नागरिकता का अर्थ कुल दायित्व में सहभागी होना है। दास स्तर की दायित्वहीनता की मनोवृत्ति प्रसन्नता का सभ्य स्वरूप नहीं है।

जनता द्वारा अपने उचित अधिकारों, सत्ता एवं उत्तरदायित्वों का राज्य नामक संगठन को समर्पण करने की कुछ निश्चित सीमाएं हैं। राज्य मन्दिर में रखी हुई प्रतिमा के समान एक रहस्यमय वस्तु है। इस व्यवस्था में नागरिकों के लिए केवल यही कार्य रह जाता है कि वे सरकार में स्थान पाने के लिए आपस में लड़ते-झगड़ते हैं। ऐसी स्थिति में ईमानदारी के कार्य का स्थान राजनीति ले लेती है। कुशलता एवं गतिपूर्वक काम करने की बजाय हर व्यक्ति राजनीतिज्ञ बन जाता है तथा अन्य सत्तालोलुप नागरिकों से स्पर्धा करने लगता है। परिणामस्वरूप जो स्पर्धा उद्योग को समृद्ध बनाती है वह अपने स्वस्थ क्षेत्र से राजनीति में स्थानान्तरित हो जाती है जिससे अस्वस्थ एवं अनुत्पादक प्रतिद्वन्द्विता का जन्म होता है। यह हमें कर्तव्यों के प्रति उदासीनता की ओर ले जाती है। पर हमें याद रखना चाहिए कि यह राष्ट्रलक्ष्मी को प्रसन्न करने का तरीका नहीं है।

आन्दोलन के समाचार

एक नवम्बर को नयी दिल्ली में जयप्रकाश नारायण और इन्दिरा गांधी की ६० मिनट तक बातचीत हुई। बातचीत का कार्यक्रम एकाएक बना। जयप्रकाशजी ने कई विकल्प सामने रखे किन्तु बिहार विधान सभा को भंग करने के विषय में किसी भी रूप में इन्दिराजी के राजी न होने के कारण वार्ता सफल नहीं हुई। जयप्रकाशजी ने बिहार विधानसभा के विषय में चार विकल्प सामने रखे थे: (१) बिहार सरकार इस्तीफा दे दे (२) बिहार विधानसभा का स्थगन कर दिया जाये (३) बिहार में राष्ट्रपति शासन लागू कर दिया जाये (४) यथासंभव जल्दी से जल्दी नये चुनाव कराये जायें। इसके अतिरिक्त सामने रखी गयी अन्य शर्तों में समस्त सत्याग्रही बन्दियों को छोड़ना, भ्रष्टाचार दूर करना, शिक्षा में सुधार लाना, बढ़ती हुई कीमतों को रोकना भी शामिल था। इन सभी बातों में जे० पी० ने सरकार के साथ सहयोग करने की तैयारी दिखायी थी। कई लोगों का ख्याल है कि बातचीत पूरी तरह विफल हो चुकी है और कुछ लोग सोचते हैं कि बातचीत फिर से शुरू हो सकती है।

जे० पी० ने 'पटना बन्द' के पहले राजस्थान और पंजाब का दौरा किया और लुधियाना में उनका अभूतपूर्व स्वागत किया गया। (देखिये पूरी रिपोर्ट इसी अंक में)

पटना में २ तारीख को कांग्रेस (पुरानी) के १४ विधायकों ने विधान सभा से जयप्रकाश के समर्थन में इस्तीफा दे दिया है। जिन सदस्यों ने दल से इस्तीफा दे दिया है उनके बारे में यह भी कहा गया है कि दल की आज्ञा न मानने के कारण उन्हें दल से अलग कर दिया गया है।

३ नवम्बर को कांग्रेस और भारतीय कम्युनिस्ट दल ने ४ नवम्बर को होनेवाले 'दिल्ली बन्द' के विरोध में जुलूस निकाला। लोगों का कहना है कि इस जुलूस का जनता पर विपरीत ही असर हुआ। एक तो इसके कारण सारे नगर को यह मालूम हो गया कि ४ तारीख को जयप्रकाशजी के समर्थन में दिल्ली बन्द रहेगा और साथ ही साथ यह भी स्पष्ट दिखायी दिया कि उस जुलूस में भाग लेनेवाले लोगों में केवल सत्तारूढ़ कांग्रेस दल और कम्युनिस्ट पार्टी के मजदूर संगठनों के सिवाय जनता में से कोई शामिल नहीं था। इसके पहले शिवाजी-जयन्ती पर और उसके बाद महावीर-जयन्ती के उपलक्ष्य में दिये गये प्रधानमन्त्री के भाषण में उपस्थित जनता की संख्या और वहां लगाये गये नारों से भी जनता के मन पर यही असर पड़ा था कि इन्दिराजी की लोकप्रियता जयप्रकाशजी के प्रति हो रहे व्यवहार के कारण नित्यप्रति कम होती जा रही है।

दिल्ली में तारीख ४ को होनेवाले 'बन्द' को विफल करने के विचार से २ नवम्बर से शनिवार ३ तारीख तक ४०० गिरफ्तारियां की गयी। किन्तु इसके बावजूद 'बन्द सफल होगा, इसकी संभावनाएं बढ़ती दिखायी दी। बड़ी संख्या में लोगों की गिरफ्तारी से सोचने समझनेवाले लोगों में बड़ा क्षोभ फैला।

विश्वविद्यालय के छात्र इकट्ठे होकर किसी प्रकार का कोई उपद्रव न कर पायें, इस विचार से दिल्ली बन्द से पूर्व सोमवार को विश्वविद्यालय न खुलने की घोषणा भी की गयी। दिल्ली विश्वविद्यालय के छात्र संघ के अनुसार १२६०, जनसंघ के सूत्रों के अनुसार ३ हजार और दिल्ली पुलिस के अनुसार ऐतिहासिक तौर पर पूरी दिल्ली में ४४६ लोग गिरफ्तार हुए।

बिहार में गफूर साहब ने कहा कि बिहार आंदोलन के बावजूद सरकारी कामकाज किसी भी सूरत में ठप्प नहीं होने दिया जायेगा। उन्होंने यह भी कहा कि सरकार किसी भी चुनौती के सामने खामोशी से घुटने नहीं टेक सकती।

५ नवम्बर को प्राप्त समाचारों के अनुसार बिहार आंदोलन के सिलसिले में ४ तारीख का बन्द पटना और दिल्ली दोनों स्थानों पर बहुत सफल रहा। सरकारी सूत्रों के अनुसार दिल्ली में दफा १४४का उल्लंघन करते हुए ३८ व्यक्ति गिरफ्तार किये गये। बन्द के दौरान पश्चिम दिल्ली में ३ व्यक्तियों को शदीद चोटें आयी। एक की दशा चिन्ताजनक है। पटेलनगर के निगम सदस्य श्री कृष्ण भाटिया को भी चोट पहुंचायी गयी और वे अस्पताल में भर्ती हैं।

दिल्ली बन्द में गिरफ्तार होनेवालों में विभिन्न प्रान्तों से आये हुए प्रसिद्ध सर्वोदय कार्यकर्ताओं की तादाद बहुत बड़ी है। श्री महावीरसिंह, चतुर्भुज पाठक, गणेश नायक, महेश कुमार पटेरिया, भूतपूर्व संसद सदस्या सरला भदौरिया कानपुर, की सावित्री बहन, ग्वालियर के हेमदेव शर्मा, मेरठ की विद्या नरेन्द्र, रेवाड़ी की ७०-७२ वर्षीय वयोवृद्ध समाजसेविका श्रीमती शान्ती देवी और सरोजा जिनमें प्रमुख हैं। कहा जाता है कि श्रीमती सरला भदौरिया के साथ तो अशोभनीय व्यवहार भी किया गया।

पटना में पुलिस का जबर्दस्त प्रबन्ध किया गया था। पुलिस के अधिकारियों का कहना है कि हमने जो प्रबन्ध किया उसके अनुसार हमें बन्द के विफल होने की पूरी उम्मीद थी। हमने सोचा था कि घेराव सफल नहीं होगा और अधिक से अधिक एक हजार गिरफ्तारियां आवश्यक होगी। किन्तु हजारों लोगों ने जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में जुलूस में भाग लिया। अधिक संख्या में लोग पटना न आ सकें इसलिए सरकार ने रेलगाड़ियाँ, बसें और स्टीमरें पहले से बन्द कर रखी थीं, फिर भी जनसमूह उमड़ पड़ा। वित्त मंत्री श्री दरोगा प्रसाद राय का एक घन्टे तक घेराव किया गया। पुलिस ने जुलूस पर लाठी-चार्ज और अश्रु-गैस छोड़ी। इतना ही नहीं ऊपर आकाश में भी कहां क्या करना जरूरी है इसे बताते हुए पुलिस के वायरलेस लगे विमान चक्कर काटते रहे। पुलिस ने जिस क्रूरता से लोगों का दमन करने की कोशिश की उसकी इसके पहले कहीं मिसाल नहीं देखी गयी। स्वयं जयप्रकाशजी पर लाठी प्रहार किया गया। (देखिये हमारा मुखपृष्ठ)

५ नवम्बर को ४ तारीख के 'बन्द' में सरकार ने जो रवैया अपनाया उसके विरोध में जयप्रकाशजी ने पटना में 'बन्द' का आह्वान किया। 'बन्द' सर्वथा शान्तिपूर्ण रहा। नगर में जनजीवन एकदम ठप्प हो गया था। क्या छोटी क्या बड़ी सारी दूकानें बन्द थी और किसी प्रकार का वाहन सड़कों पर नजर नहीं

जा रहा था। सरकारी सूत्रों के अनुसार ४२ व्यक्तियों को गिरफ्तार किया गया। ४ तारीख के बन्द के दिन पटना में हुई क्रूरता के प्रति देश के क्षोभ को देखते हुए सरकार सहम गयी है। कदाचित इसीलिए ५ तारीख के बन्द के अवसर पर उसने किसी विशेष क्रूरता का प्रदर्शन नहीं किया। ×

संसद में ५ तारीख को प्रश्नों के जवाब देते हुए गृह मन्त्री ब्रह्मानन्द रेड्डी ने कहा कि जयप्रकाशजी पर कोई लाठी-चार्ज नहीं किया गया। भगदड़ में अवश्य उनकी उंगलियों पर कुछ खरोंच आ गयी है। लाठी-चार्ज के स्पष्ट प्रमाणों को जानने के कारण संसद-सदस्यों ने गृह-मन्त्री के इस मिथ्या वक्तव्य की निन्दा की।

४ नवम्बर को 'पटना बन्द' में जिस प्रकार के पाशविक दमन का सहारा लिया गया उसके अधिकृत समाचारों को पाने के बाद ब्रिटिश ब्राडकास्टिंग कारपोरेशन (बी॰बी॰सी॰) ने कहा कि शस्त्रों की शक्ति के बल पर बिहार आदि में आज जिस तरह राज चलाया जा रहा है यदि अंग्रेज इसी तरह राज चलाना चाहते तो उनके लिए और एक शताब्दी तक भारत छोड़ना जरूरी नहीं था।

पुराने लोगों ने कहा कि अंग्रेज सरकार की जेलों में १९२१ से १९४७ तक कुल मिलाकर जितने राजनीतिक बन्दी रहे, उनसे ज्यादा राजनीतिक बन्दी इस समय अकेले बिहार में हैं। ×

बिहार के मुख्यमन्त्री गफूर ने 'बन्द' के उसी दिन शाम को प्रधानमन्त्री इंदिरा गांधी को सूचित किया, "आप जैसा चाहती थीं वहाँ वैसा ही किया गया।"

बिहार सरकार के पास छः हवाई जहाज हैं, किन्तु उन्हें सारे प्रान्त की निगरानी के लिए इतना अधिक उड़ाया जाता है कि उनकी देखरेख बिलकुल ही नहीं हो पाती। एक अधिकारी ने कहा कि उनमें से कोई भी जहाज किसी दिन टूटकर गिर सकता है और तब कहा जायेगा कि इसके पीछे 'असामाजिक तत्वों' का हाथ था। कहा जाता है कि मुख्य मन्त्री गफूर साहब ने भी कहा कि मैं परिस्थितियों से इतना तंग आ गया हूं कि मैं चाहता हूं मेरा हवाई जहाज किसी दिन टूट कर गिर जाये और इस प्रकार मेरी सारी समस्याओं का अन्त हो जाये।

वर्धा में जनसंघ के अध्यक्ष श्री अडवानी से बातचीत करते हुए पूज्य विनोबाजी ने कहा है कि चुनाव पद्धति में सुधार होना चाहिए। सब दलों का इस पर विचार करना आवश्यक है। उन्होंने यह भी कहा कि लोगों को देश की परिस्थिति से ठीक ठीक अवगत कराना और उन्हें शिक्षित करना भी आवश्यक है।

दादा धर्माधिकारी ने पांच नवम्बर को भोपाल में भाषण देते हुए कहा कि बिहार सरकार द्वारा जयप्रकाशजी पर जो हमला किया गया है उसके लिए जिम्मेदार व्यक्तियों को सार्वजनिक रूप से क्षमा मांगनी चाहिए। उन्होंने कहा कि बिहार का आंदोलन जनतंत्रीय शांतिपूर्ण अहिंसक है। उन्होंने एक पत्रकार सम्मेलन में कहा कि जयप्रकाशजी के प्रति किये गये दुर्व्यवहार पर श्रीमती गांधी और बिहार के मुख्य-मंत्री को भी क्षमा मांगनी चाहिए। उन्होंने यह भी कहा कि मैंने भूतकाल में किसी भी सभ्य सरकार द्वारा ऐसे किसी भी लोकप्रिय नेता के साथ जैसा श्रीजयप्रकाश के साथ किया गया है उस प्रकार के व्यवहार की बात नहीं सुनी।

पांच तारीख को पटना में दमन के विरोध में बन्द का जो आह्वान किया गया था वह सफल न होने पाये कदाचित इसी बात से जयप्रकाशजी को उनके निवास स्थान पर पुलिस द्वारा घेरा डालकर देर तक रोक कर रखा गया। बाद में पुलिस वहां से हटा दी गयी और कहा कि पुलिस तो उनकी सुरक्षा के लिए लगायी गयी थी। ×

बिहार मंत्रिमंडल की पांच तारीख को एक विशेष बैठक बुलायी गयी और उसमें तय हुआ कि विधान सभा का अधिवेशन दो अथवा पांच दिसम्बर को चालू होकर छः सप्ताह तक जारी रहेगा। बी॰बी॰सी॰ के समाचारानुसार लाठी की चोट के कारण जे॰पी॰ को थोड़ी देर बेहोशी भी आ गयी थी। डाक्टरों ने उन्हें कम से कम २४ घंटे विश्राम करने की सलाह दी है। यद्यपि वे बड़ी थकावट का अनुभव कर रहे हैं किन्तु उनके हृदय की गति ठीक है।

×

बीस साल पहले

(भूदान-यज्ञ वर्ष १ अंक ६
१७-११-५४ के अंक से)

चि॰ शांता डोंगरे चिरंजीव हो गयी

मध्यप्रदेश भूदान-यज्ञ समिति के संयोजक श्री दादा नाईक की पदयात्री पथक में से दो यात्रियों ने अपना जीवन भारतमाता के चरणों में चढ़ा दिया। ता॰ २० अक्टूबर को जबलपुर में इस पथक के प्रमुख यात्री ठाकुर प्यारेलालसिंह ने पदयात्रा की पूर्णाहुति अपनी प्राणाहुति से की।

आज सबेरे फोन से समाचार मिला कि उसी दल की एकमात्र महिला यात्री कुमारी शान्ता डोंगरे ने भी अपना जीवनपुष्प भारतमाता के चरणों में चढ़ा दिया। शान्ता बहन के हृदय की गति एकाएक रुक जाने से कल उनका देहान्त हुआ। एक ताजा फूल भूदान-यज्ञ की वेदी पर चढ़ाया गया। शान्ता बहन एक ग्रेजुएट महिला थीं। उनकी आयु बहुत कम थी। तीस साल के भीतर ही। इधर करीब दस-ग्यारह महीनों से वे भूदान कार्य में आयी थीं। पू॰ विनोबा के यात्री दल में उनके साथ कई दिन रहीं। गया जिले में भी बहुत दिन काम किया। इधर ११ सितम्बर से लगातार अखंड पद-यात्रा में थीं। उसी में उनका कल एकाएक देहान्त हो गया। उनकी अन्त्येष्टि अकोला में जहां उनके माता-पिता का निवासस्थान है, कल होगी।

हमारे हृदय पर गहरी चोट तो लगी है, फिर भी हमें विश्वास है कि शान्ता बहन के उज्ज्वल समर्पित जीवन से दूसरों को पराक्रम की प्रेरणा मिलेगी।

चि॰ निर्मला बहन अपनी तमिलनाडु पदयात्रा समाप्त कर कल अकोला पहुंचेंगी और उनकी शोक-सभा में भाग लेंगी।

चि॰ शान्ता डोंगरे चिरंजीव हो गयीं। इस चिरंजीव कुमारिका को हम प्रणामपूर्वक श्रद्धांजलि चढ़ाते हैं। उनकी मृत्यु से हमें नयी प्रेरणा मिली है।

पटना-३ —दादा धर्माधिकारी
१३-११-५४

R.N. 2091/57 BHOODAN YAGYA 11 NOV, 1974 Regd. No. D-(C) 266

आदेश है कि यह हमारा देश है

आदेश है कि यह हमारा देश है
बहुत दिन हुए इतना लिखकर
मैंने कविता को खत्म मान लिया था
अपनी समझ में तब मैंने हकीकत को
पूरा-पूरा और ठीक-ठीक जान लिया था
मगर अब कुछ नयी बातें जानने पर
पुरानी और पूरी उस कविता को बढ़ाता हूँ
आदेश के हिसाब से जो मेरा देश है
उसके चरणों पर कुछ नयी और
महकती हुई पंक्तियां चढ़ाता हूं।

जोड़ना जो जरूरी है वह यह है
कि 'देश की नेता इन्दिरा गांधी हैं'
प्रमाण यह है इस कथन का कि
देश की सारी प्रगतिशील नदियाँ
उन्होंने अपने इशारे पर बांधी हैं
उन्होंने जो कुछ किया है या कहा है
उसके सिवा अब करने या कहने को
कश्मीर से कन्याकुमारी तक कुछ नहीं रहा है
जो उसे करे या कहे के सिवा
कुछ और कहते या करते हैं, वे
किये धरे पर गोया पानी फेरते हैं
और अराजकता को टेरते हैं
एक परम सुव्यवस्थित देश में अपनी मूर्खता से

तो आदेश है कि यह हमारा देश है
और 'हमारे' देश की नेता इन्दिरा गांधी हैं
शरीफ है सिर्फ उनके पीछे चलनेवाले
बाकी जो बच रहते हैं वे सब
हैं गुंडे और शोहदे और शरीफों से जलनेवाले
इसीलिए इन्दिराजी का ख्याल है
कि जो बचे-खुचे, उंगलियों पर
गिने जा सकते हैं, उन्हें भी
अपने पीछे चलनेवालों की तरह
शरीफ बनाया जाये और फिर देश में
शराफत का एक नया त्योहार मनाया जाये।

एक बात और इस सिलसिले में यह कि
उंगलियों पर गिने जा सकनेवाले लोगों को
सोचना-विचारना बंद कर देना चाहिए
उन्हें और कुछ नहीं तो अपने विचार
इस हद तक मंद कर देना चाहिए कि
देश की हमारी एकमात्र नेता का सोच-विचार ही
यहाँ की निस्तब्ध हवा में सुनाई दे
और न सोचने विचारनेवालों का समूह
उन्हें एक स्वर से बधाई दे।

साफ है कि दूसरे सोच-विचार गलत और
प्रतिक्रियावादी और प्रजातंत्र-विरोधी माने जायें
सब कहें, 'विचार तो केवल इन्दिराजी का है
प्रजातंत्र का है, समाजवाद का है
वह नई से नई और पुरानी से पुरानी
उम्र हर एक वाद का है जो
वेद से गांधी तक के जमाने में घटी
घटनाओं से किसी मन में आ सकती है
या कहो जो लिंकन से लगा कर निक्सन तक
या सादात से लगाकर ब्रेजनेव तक को
पसंद आ सकती है, भा सकती है।'

सारा देश इसलिए उन्हें बधाई दे
और सड़कों पर, और फिर आकाशवाणी पर कहे
कि जयप्रकाश या उन्हीं जैसे लोग-बाग
हम चार आदमियों के कहने से कहीं के नहीं रहे।

बेशक-बेशक बेशक अब यह पहचान में
न आनेवाला देश हमारा है
क्योंकि आखिरकार आदेश तुम्हारा है
तुम्हारा आदेश न मानने पर
जयप्रकाश तक का सिर तोड़ा जा सकता है
तब फिर देश के अदना आदमी को
आदेश के बाहर कैसे छोड़ा जा सकता है!

—भवानीप्रसाद मिश्र
२१, राजघाट कालोनी
नयी दिल्ली-१

वार्षिक शुल्क—१५ रु० विदेश ३० रु० या ३५ शिलिंग या ५ डालर, एक अंक का मूल्य ३० पैसे।
प्रभाष जोशी द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं ए० जे० प्रिंटर्स, नई दिल्ली-१ में मुद्रित।

सर्व सेवा संघ का साप्ताहिक मुख पत्र
नई दिल्ली, सोमवार, १८ नवम्बर '७४

नवजीवन-शिविर में खेती (विशेष लेख पृष्ठ ८ पर)

पत्र और पत्रांश

राष्ट्रपरिषद् का विचार

बिहार की भूमि आज गहरे संघर्ष और मन्थन की बनी हुई है। समान्तर सरकार का भी प्रयत्न और प्रयोग वहा होने जा रहा है। उस भूमि पर कभी महावीर और बुद्ध का अवतरण हुआ था। दोनो राजपुत्र थे और दोनो ने राज्य का उत्तराधिकार त्याग दिया था। वहीं आज राजनीतिक तुमुल दीखता है। किन्तु जयप्रकाश नारायण के व्यक्तित्व के कारण एक अन्तर है। संघर्ष मे भी उनका अहिंसा का प्रण सुना जाता है। इसी प्रण को निभाते उन्होने चार नवम्बर को शान्तिपूर्ण प्रदर्शन का आवाहन किया। प्रदर्शन शान्तिपूर्ण रहना था और रहा भी। क्योंकि मार्ग हिंसा से मनवाने का विधान कम मे कम सर्वोदय मे तो नही है। तिस पर भी सरकार की पक्षपातपूर्ण नीति देखिये कि कांग्रेस की रैली अगर होती है तो पुलिस उसमे प्रदर्शनकारियो का कवच के रूप मे साथ देती है और यदि प्रदर्शन सत्तारूढ दल की बुराइयो को दर्शाने के लिए किया जाता है तो उसके लिए वही वर्दीधारी पुलिस जानलेवा बन जाती है। लेकिन इतिहास साक्षी है इस तथ्य का कि राम और युधिष्ठिर कभी हिंसा से नही मरे। सत्य हमेशा जिन्दा रहनेवाला है। जयप्रकाशजी के साथ ४ नवम्बर को घटी घटना कितनी दुखद है कि पुलिस ने इन्हे भी नही बख्शा। लेकिन इतिहास को भुठलाया नहीं जा सकता, दोहराया जा सकता है। ठीक उसी समय जब घातक वार उनपर हुआ, बिहार से निष्कासित जनसघ कार्यकर्ता नाना साहब देशमुख सयोग से वहा थे और उनके हाथने टूटकर भी जे.पी. अर्थात सत्य के पक्ष की रक्षा की। सरकार तनिक सोचे कि अगर वे वहां न होते तो, इस खबर से कितना खून-खराबा हो सकता था।

सरकार को अपनी इन करतूतो से अब तो बाज आना ही चाहिए। सुलह का रास्ता जो वह विदेशो को देती आयी है स्वय अपने घर मे नहीं अपना सकती। कुछ दिन हुए महान साहित्यकार श्री जैनेन्द्र कुमार का एक लेख 'भूदान-यज्ञ' मे 'गाधी के नाम पर इन्दिरागाधी' शीर्षक से प्रकाशित हुआ था। सुलझे हुए विचारक जैनेन्द्रजी ने इस खूनखराबे को रोकने के लिए राष्ट्र परिषद को बुलाने का विचार रखा है। क्या सरकार ने इस ओर ध्यान दिया है? या वह सिर्फ बदले की भावना से काम करना चाहती है? यदि ऐसा है तो क्या वह स्वय क्रांति चाहती है जिसमें सरकार की जीत कभी नही हुई, जनता जीती है। समझ नही आता कि सरकार जानबूझकर टक्कर क्यो लेना चाहती है? एक शात आदमी से जो जनता का आदमी है टक्कर लेना इतना आसान नही जितना वह समझे बैठी है। कांग्रेस की रैलियो से, बाजार मे स्वय जाकर खरीददारी करने से समस्या का निदान नही होगा। जो काम शांति से सभव है पुलिस को माध्यम बनाकर सभव नहीं है। देश की आज दशा आपस में लड़ने को नहीं रह सकती। भ्रष्टाचार दोनो पक्ष मिटाना चाहते हैं तो दिक्कत क्या है? सरकार को चाहिए कि वह जनता की बात सुने, समझे और "राष्ट्र परिषद" मे राष्ट्रपति पहल करें। दुनिया के दूसरे देश हमें क्या कहेंगे।

नयी दिल्ली —सुरेश ठाकरान

बीता सप्ताह

(शुक्रवार ८ नवम्बर से गुरुवार १४ नवम्बर तक)

देश

शुक्र —रजनी पनिकर का निधन, ज्ञानपीठ पुरस्कार वितरण।

शनि —विश्व दमा कांग्रेस आरभ, तस्कर हाजीमस्तान मेरठ जेल मे स्थानान्तरित।

रवि —प्रदर्शन के लिए पटना जा रहे कम्युनिस्टो द्वारा स्टेशनो पर उपद्रव, जे० पी० से चन्द्रशेखर की भेंट, कांग्रेस का आन्दोलन विरोधी अभियान शुरू।

सोम —पटना मे कम्युनिस्ट रैली, लाइसेंस घोटाले मे ससदसदस्य तुलमोहन राम और योगेन्द्र भा पर मुकदमे।

मगल—तमिलनाडु कांग्रेस अध्यक्ष पद पर रमैया की जगह रामस्वामी नियुक्त, मध्यावधि चुनाव की आशका का लोकसभा मे विधिमन्त्री गोखले द्वारा खडन।

बुध —महावीर के २५०० वें निर्वाण दिवस के आयोजन, दीवाली सम्पन्न।

गुरु —बाल-दिवस के आयोजन सम्पन्न।

विदेश

शुक्र —हिन्द-महासागर को शान्तक्षेत्र बनाने का राष्ट्रसघ मे प्रस्ताव, हथियार दक्षिण अफ्रीका को दिये जाने का फैसला।

शनि —पश्चिम एशिया मे अमरीकी सैनिक हस्तक्षेप की आशका।

रवि —किसिंजर द्वारा दौरे की रिपोर्ट राष्ट्रपति फोर्ड को प्रस्तुत, उपग्रह लूना-२३ क्षतिग्रस्त, इजराइली मुद्रा का ४३ प्रतिशत अवमूल्यन, नेपाली मन्त्रिमण्डल का पुनर्गठन, जापान की खाडी मे दो जहाजो मे टक्कर से भारी जनहानि।

सोम —छापामार अड्डो पर इजराइल द्वारा बमबारी, किसिंजर द्वारा अरब-इजराइल युद्ध की आशंका व्यक्त।

मगल—बगलादेश मे नावदुर्घटना में सौ से अधिक मृत।

बुध —राष्ट्रसघ महासभा मे दक्षिण अफ्रीका की मान्यता की समाप्ति।

गुरु —अराफात द्वारा फिलीस्तीन के लिए राष्ट्रसघ से मदद की माग।

भूदान-यज्ञ

सम्पादक
राममूर्ति : भवानी प्रसाद मिश्र
कार्यकारी सम्पादक : शारदा पाठक

वर्ष २१ | १८ नवम्बर, '७४ | अंक ७

१६ राजघाट, गांधी स्मारक निधि, नई दिल्ली-११०००१

आस्तीन के साँप

पटना में सोमवार ११ नवम्बर को सी. पी. आई. ने जो जुलूस निकाला उसे सरकार से मिली सुविधाएं और उसके तौर-तरीके देख कर देश का सोचने विचारनेवाला वर्ग अगर किसी अनहोनी की आशंका से भर उठा है तो इसमें अचरज की कोई बात नहीं है।

इस जुलूस के ठीक एक सप्ताह पहले ४ नवम्बर को आन्दोलन का साथ दे रहे लोगों का वह ऐतिहासिक जुलूस पटना में निकला था जिसमें जयप्रकाश पर लाठियाना हमले की सत्ताधारियों की कोशिश नाकाम होकर रह गयी थी। इस जुलूस को न निकलने देने के लिए क्या नहीं किया गया, कौन सी कसर बाकी रखी गयी, कहने की जरूरत नहीं है। रेलगाड़ियों से लेकर बैलगाड़ियों तक का पटना आना रोकना, गाँवों से चलने देना लोगों को गिरफ्तार कर लेना, पाबन्दी के आदेश और जो जो कुछ सरकार कर सकती थी, सब कर लिया। फिर भी जुलूस निकला, शानदार अहिंसक प्रदर्शन हुआ और जनता की लोकशक्ति सामने आयी।

जे. पी. पर हमले में अपनी नाकामी की खीझ उतारने या जनता को आतंक से दहला देने के लिए, पता नहीं क्या सोचकर सी. पी. आई. का जुलूस निकाला गया। इसके कुछ ही पहले सत्ता कांग्रेस ने आन्दोलन का मुकाबला करने का ऐलान किया था। जुलूस शायद इस मुकाबले की शुरुआत की तौर पर ही निकाला गया। इस तरह के जुलूस जिसके पीछे सरकार का हाथ है, आयोजित करने के लिए जो इन्तजाम किया जाता है वह जनता पिछले दो-तीन साल से देखती आ रही है। ६ मार्च ७४ की रैली में आतंक-आक्रमण सब कर गुजरने की जो शुरुआत हुई थी, वह कायम ही नहीं रही, पिछले सब रिकार्ड तोड़कर आगे निकल गयी। लोगों को पैसे और दूसरे लालच देकर बुलाना, रेलगाड़ियों और अन्य वाहनों से बेकिराया सिर्फ हटा ही न लेना वरन उन्हें मुफ्त कर देना आदि हमेशा के मुताबिक होनेवाली बातें ही होतीं तो गनीमत थी। लेकिन इतना तो जनता को भयभीत करके चुप करने के लिए काफी नहीं होता, इसलिए कम्युनिस्ट जुलूस में भाग लेने आ रहे लोगों को रास्ते में मनमाने उत्पात मचाने की पूरी छूट भी दे दी गयी। नतीजा इसका यह रहा कि १० नवम्बर को बिहार के कई स्टेशनों पर ऐसे नजारे सामने आये जो किसी भी सभ्य देश के लिए शर्मनाक कहे जायेंगे। न जाने कितने निर्दोष लोगों को हुड़दंग के इस हंगामे का शिकार होकर अपनी रोजी से हाथ धोना और अपमान सहना पड़ा। हां, सरकार समर्थक जुलूसों के मौके पर होनेवाली लूटपाट से वाकिफ लोग जरूर अपनी दूकानें बन्द रखकर और स्टेशनों से दूर रह कर नुकसान उठाने से बच गये।

कम्युनिस्टों के इस जुलूस के बारे में जितना कम कहा जाये उतना ही अच्छा है। कुछ अखबारों के अनुमान के अनुसार यह दो किलोमीटर लम्बा था तो कुछ अन्य के अनुसार पांच किलोमीटर तक। एक ओर तो सरकार ने ४ नवम्बर के उस निहत्थे और अहिंसक जुलूस के लिए इजाजत देने से इन्कार कर दिया था जिसका नेतृत्व शान्ति की मूर्ति जयप्रकाशजी कर रहे थे और जिससे शान्ति भंग की कोई आशंका सपने में भी नहीं हो सकती थी, वहीं दूसरी ओर उसी सरकार ने कम्युनिस्टों के इस जुलूस को इजाजत उत्साह से देकर दी जो कहीं भी नुकसान कर सकता था। इस जुलूस में शामिल ज्यादातर लोग लाठी, भाले, गंडासे, तीर-कमानों जैसे हथियारों से लैस थे। कुछ के हाथों में नंगी तलवारें लहरा रही थीं और बहुत से बन्दूकें भी लिये थे। इस जुलूस के लोगों के इरादे तो उस एक स्कूटरवाले की घटना से साफ हो जाते हैं जिसका मामला देश भर के अखबारों में छपा है। लम्बे जुलूस के पूरी तरह गुजर जाने का इन्तजार किसी कारणवश न कर पाने से जब उसने जुलूस के बीच में से निकलने की कोशिश की तो उसे इतना पीटा गया कि वह अधमरा हो गया।

कम्युनिस्टों के इस जुलूस में जो नारे लगाये गये और जुलूस में ले जायी जा रही तख्तियों में जो नारे लिखे थे, वे किसी भी सभ्य समाज का सिर शर्म से झुका देने के लिए काफी हैं। पूरी तरह जंगली और बर्बर लोगों के बीच भी इस तरह की बातें नहीं होती हैं। जयप्रकाशजी के बारे में लगाये जा रहे नारे तो ठंडे-से-ठंडे दिमाग का भी खून खौला देने वाले थे। लेकिन पटना की जनता ने उस दिन जो कुछ सहा, वह उसकी सहनशक्ति की जीती जागती मिसाल बन गया है।

समझ नहीं आता कि जनता की प्रतिनिधि होने का दम भरनेवाली सरकार को इस प्रकार के प्रदर्शन की जरूरत क्यों पड़ती है। अपने विरोधियों पर तो वह आरोप लगाती है कि वे 'किराये के टट्टुओं' के सहारे गड़बड़ी फैलाते हैं, लेकिन ये कम्युनिस्ट अगर सरकार के किराये के टट्टू नहीं तो और क्या कहे जा सकते हैं। इतनी नादान तो यह सरकार नहीं है कि इतना भी न समझे कि दूसरों को डसवाने के लिए वह जिन सांपों को अपने आस्तीन में पाल रही है, वे उसे ही काट खाने का मौका नहीं चूकेंगे। परन्तु लगता है कि सरकार का विवेक खो गया है। वह अपना भला बुरा समझती जरूर है लेकिन सत्ता के मद ने उसे अन्धा बना दिया है। अपनी झूठी शान बनाये रखने और कुर्सी से चिपके रहने के लिए वह कुछ भी करने को तैयार है, ऐसा जुआ खेलने और इतना बड़ा दांव लगाने के लिए भी जिसका नतीजा सर्वनाश के अलावा दूसरा कुछ हो नहीं सकता।

—शा० पा०

प्रधानमंत्री परेशान क्यों ?

बडी दिलचस्प बात है कि ४नवम्बर को पुलिस के द्वारा मुझे पहुचायी गयी चोटो का प्रधान मंत्री ने चर्चा किया और कहा कि मेरे ऊपर हमले का कोई इरादा नही था और मुझे जो चोटें लगीं वे भगदड मे लगी हैं। तब फिर मुझे बचाने की कोशिश करनेवाले दोस्तो और लडको को लगी वे चोटें जो उनके न होने पर मुझे ही लगती, क्या मुझ पर हमला नही थी, यह प्रधान मन्त्री ही बता सकती हैं क्योकि लाठी चार्ज केन्द्रीय सशस्त्र पुलिस ही कर रही थी। इन तथ्यो से कोई भी समझ सकता है कि सरकार का इरादा क्या था। अपनी ओर से तो मैं आम नागरिक को मिलने वाले ,अधिकारो और सुविधाओ से ज्यादा कुछ नही चाहता।

फिर भी देश मे कानून के राज और नागरिकों के दो वर्गों के बीच भेदभाव का गंभीर सवाल उठता है। राज्य की सारी मशीनरी ४ नवम्बर के शान्तिपूर्ण प्रदर्शन और धरने मे आनेवाले लोगो को बलात रोकने के लिए लगा दी गयी थी लेकिन सरकारी वक्तव्य भी इसकी ताईद करता है कि उस दिन लोगों की ओर से कोई हिंसा नहीं हुई। पटना मे और अन्य जगहो पर उस दिन धारा १४४ लगाया जाना भी औचित्य का सवाल उठाता है। धारा १४४ का उल्लघन तो छोटा-मोटा अपराध है लेकिन उसे भग करनेवालों पर अश्रुगैस और लाठीचार्ज भी औचित्य के सवाल सामने लाते हैं। विशेषकर उस हालत मे जब न तो शान्ति भंग हुई और न उसकी कोई आशका ही थी।

संविधान कहता है कि कानून के पालन मे कोई भेदभाव नही होना चाहिए। परन्तु इस दिन के जब सशस्त्र सुरक्षा दलो ने लोगो को मार डालने के सिवा और सब कुछ किया, सिर्फ एक सप्ताह बाद सी. पी. आई को पटना मे रैली की इजाजत ही नहीं दी गयी, अधिकारियो ने अनुचित तरीको से भी उसे हर मुमकिन मदद दी। सरकार से लोग कोई सुविधा नही चाहते किन्तु उनको इतना अधिकार तो है ही कि शान्तिपूर्वक इकट्ठा होने और अभिव्यक्ति के उनके कार्यों मे बाधा न पहुचायी जाये।

जनतत्र के सभी समर्थको के लिए चिन्ता की बात तो यह है कि अगर ऐसा ही चलता रहा तो सरकार की नीतियो और कार्यों के खिलाफ, फिर चाहे वे कितनी भी बुरी या खतरनाक क्यो न हो, कुछ कहने का कोई मौका लोगो को नही रहेगा। चुनावो के वक्त भी यही नीति रही तो देश से जनतत्र का सफाया हो जायेगा।

प्रधानमत्री बार-बार आरोप लगाती हैं कि बिहार आन्दोलन मे राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ और आनन्दमार्गियो का हाथ है तथा उन्हे सत्ता से हटाने के लिए महागठबन्धन को पुनर्जीवित किया जा रहा है। आर एस.एस. तो जनसघ मे शामिल अपने सदस्यो के जरिये जरूर सक्रिय है, पर आनन्दमार्गी कहां हैं ? जहां तक महागठबन्धन की बात है, प्रधान मत्री को राजनीति के इस मामूली सिद्धान्त की समझ तो होना चाहिए कि विरोध का यह काम ही है कि वह सत्तारूढ दल को हटा कर अपनी सरकार बनाने की कोशिश करे। मैं समझ नही पाता कि अपने दल की चुनावो मे हार और स्वय सत्ता खो देने की आशका से प्रधानमन्त्री क्यो शोरगुल मचाती रहती हैं।

कुछ लोग आन्दोलन मे बाहरी तत्वों के होने की बात भी जबतब करते रहते हैं। यदि यह बेईमानी से भरा प्रचार नहीं है तो वे प्रमाण क्यो नहीं देते। प्रमाण के अभाव मे तो यह बिहार के जन-आन्दोलन को बदनाम करने का कुत्सित प्रचार ही माना जायेगा।

—जयप्रकाशनारायण

सक्रियता की मूर्ति मृदुला साराभाई

—श्यामलाल

कुमारी मृदुला साराभाई के निधन से भारत के सामाजिक जगत से एक ऐसा व्यक्ति लुप्त हो गया जिसकी संगठन शक्ति, गतिशीलता, तथा विचारों की दृढ़ता की छाप गत ४० वर्षों से थी।

मृदुलाबहन सोने की चम्मच लेकर पैदा हुई थी। सुप्रसिद्ध अम्बालाल साराभाई की वे पुत्री थी। अहमदाबाद में गांधीजी ने मजदूरों के अधिकारों के लिए जब संघर्ष छेड़ा उस समय मिल मालिकों की ओर से मृदुलाबहन के पिता अम्बालाल साराभाई थे और दूसरी ओर थे उनकी बुआ कुमारी अनसूयाबहन साराभाई। साराभाई का परिवार ऐसा रहा है जिसमें घर के प्रत्येक सदस्य को विचार स्वतंत्रता थी और उसके अनुसार अपना विकास करने की पूरी छूट। साराभाई परिवार का गांधीजी से गहरा सम्बन्ध था। मृदुलाबहन भी उसी वातावरण में पल कर बचपन से ही राष्ट्रीय आन्दोलनों में हिस्सा लेने लगी थी। उन्होंने गांधीजी के गुजरात विद्यापीठ में अध्ययन किया। १९३०-३१ के सत्याग्रह आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया और जेल गयीं। उनका दिल हमेशा महिलाओं के विकास तथा उत्थान कार्य में रहा। उन्होंने अहमदाबाद की सुप्रसिद्ध स्त्री संस्था 'ज्योति-संघ' की नींव डाली, उसे शक्ति दी। अहमदाबाद में ही उन्होंने एक और संस्था 'विकास गृह' का निर्माण किया। ये दोनों संस्थाएं आज अहमदाबाद में उच्चकोटि की महिला विकास संस्थाएं हैं।

१९३८ में जब हरिपुरा कांग्रेस हुई तब मृदुलाबहन स्वागत समिति दल की कप्तान थी। उसी समय जवाहरलाल नेहरू की प्रेरणा से 'नेशनल प्लानिंग कमेटी' बनी, जिसमें महिलाओं के सम्बन्ध में योजना बनाने के लिए संयोजक मृदुलाबहन बनायी गयी। १९४२ के 'भारत छोड़ो आन्दोलन' में उन्होंने सक्रिय रहकर काम किया और जेल गयी। अपने भाई की मृत्यु पर वे पैरोल पर छोड़ी जा रही थी, परन्तु पैरोल पर जाना उन्होंने स्वीकार नहीं किया।

२२ फरवरी १९४४ को पूज्य कस्तूरबा का निधन हुआ। कस्तूरबा गांधी नेशनल मेमोरियल फंड का उनके स्मारक के रूप में गठन हुआ। बापू जब जेल से छूटे तब उनसे उसका अध्यक्ष बनने का निवेदन किया गया। बापू ने अध्यक्षता स्वीकार की और ट्रस्टियों से सिफारिश की कि "उनके द्वारा नामांकित १० ट्रस्टियों का समावेश और किया जाये। ट्रस्टियों ने सहर्ष कबूल किया और जिन १० ट्रस्टियों को नामजद किया गया उनमें मृदुला

साराभाई भी थी। दिसम्बर १९४४ में ट्रस्टियों ने निर्णय किया कि ट्रस्ट में एक संगठन मंत्री हो और इसके लिए मृदुलाबहन सर्वसम्मति से चुनी गयीं। करीब ८-९ महीने के अपने कार्यकाल में अपनी संगठन शक्ति, परिश्रम और सूझ-बूझ से उन्होंने ट्रस्ट के कार्य को प्राणवान बनाया। बम्बई में उनके दफ्तर में वहां की समाजसेविकाओं का एक अच्छा जुट तैयार हो गया था। ट्रस्ट के इतिहास में १९४५ का 'बोरीवली शिविर' एक ही है। उसके संयोजन, संचालन की पूरी जिम्मेदारी मृदुलाबहन की थी। बापू दो बार आने पर मृदुलाबहन के संचालन में किसी भी प्रकार की कमी उन्हें नजर नहीं आयी।

उनकी कार्यकुशलता से प्रभावित होकर जवाहरलाल नेहरू ने १९४६ में कांग्रेस अध्यक्ष की अपनी हैसियत से बालकृष्ण विश्वनाथ केसकर के साथ-साथ उन्हें भी कांग्रेस का एक महामंत्री मनोनीत किया। इस पद पर काम करते हुए मृदुलाबहन ने अल्पसंख्यक तथा कमजोर वर्ग की समस्याओं पर भरपूर ध्यान दिया। लोगों के मन से सामाजिक तथा धार्मिक कुरीतियां और गलत मान्यताएं मिटाने के लिए उन्होंने प्रोफेसर गोरा का सहयोग लिया और सेवादल का पुनर्गठन किया। १९४७-४८ में तथा उसके बाद भी उन्होंने विभाजन से हुए विस्थापितों खासकर महिलाओं के पुनरुद्धार में बिना किसी भेद-भाव के अपना पूरा समय बहादुरी के साथ लगाया। वे धर्म-निरपेक्षता की जीती जागती मूर्ति थी और उनका हिन्दू तथा मुसलमान दोनों में एकसा विश्वास बना रहा। १९५३ में भारत सरकार ने जब शेख अब्दुल्ला को गद्दी से हटाया तो उसी समय से भारत सरकार की आन्तरिक कश्मीर नीति का उन्होंने खुल कर विरोध किया और शेख अब्दुल्ला को समर्थन दिया। इसके कारण उन्हें काफी परेशानी तथा कष्टों से दो-चार होना पड़ा। पर अपने विश्वासों में वे अडिग रहीं। वे नजरबन्द भी रहीं। मुझे खूब याद है कि मृदुलाबहन अहमदाबाद के अपने घर में नजरबन्द थी और उसी समय कस्तूरबा ट्रस्ट के ट्रस्टियों की एक बैठक उनके घर पर हो रही थी। वे एक सम्मानित ट्रस्टी रही हैं। पुलिस ने उनपर बन्धन लगाया था कि जब वे कस्तूरबा ट्रस्ट की बैठक में होंगी तो पुलिस का एक अधिकारी कुछ दूर पर रहकर उनकी गतिविधियों पर नजर रखेगा। ऐसे अपमानजनक तथा अन्यायपूर्ण आदेश का पालन करने के बजाय उन्होंने ट्रस्ट की बैठक में न आना ही ठीक समझा और आयी भी नहीं।

जब बहुत वर्षों के बाद आज अब्दुल्ला सरकार को इस देश के नियन्त्रण पर भारत

आये तो उनकी सलाह से देश में भाईचारा कायम करने के लिए 'इनसानी बिरादरी' संस्था कायम हुई और मृदुलाबहन उसकी एक मंत्री बनी। 'इनसानी बिरादरी' का काम उन्होंने अथक परिश्रम से किया।

हाल ही भारत सरकारने कश्मीर के अन्दरूनी मामले में अपना दृष्टिकोण बदला और शेख अब्दुल्ला के साथ विचार विनिमय शुरू कर दिया। मृदुलाबहन ने यह परिस्थिति लाने में काफी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। कश्मीर में रचनात्मक कार्य शुरू करने की भी उन्होंने पहल की और कुछ कार्य ट्रस्ट तथा अन्य संस्थाओं के मार्फत प्रारम्भ भी करवाया।

ट्रस्ट की वे एक सक्रिय ट्रस्टी रहीं। वो अपने अन्य कार्यों की वजह से उसकी बैठकों में शामिल होने का मौका उन्हें कम ही मिलता था। ६ से ११ सितम्बर ७४ तक ट्रस्ट की जो बैठकें दिल्ली में हुईं उसमें उन्होंने बहुत ही सक्रिय हिस्सा लिया और ट्रस्ट के कार्य पर पुनर्विचार करने तथा उसे नये ढांचे में ढालने के लिए तजबीज पेश की। ट्रस्ट ने विस्तृत योजना बनाने तथा कार्यक्रम पेश करने के लिए उनसे अनुरोध किया। पर इसके पहले कि वे योजना तथा कार्यक्रम पेश करें, क्रूर काल ने उन्हें हमसे छीन लिया। गत ६ सितम्बर को ही उन्होंने ट्रस्टियों तथा हम सब कार्यकर्ताओं को अपने घर पर रात्रि भोजन के लिए आमंत्रित किया था। करीब दो घंटे तक ट्रस्ट के कार्य के बारे में बड़ी उपयोगी चर्चाएं होती रहीं, एक-एक से वे अलग-अलग मिलीं। कस्तूरबा परिवार के साथ यही उनका आखिरी मिलन था।

उनकी मां श्रीमती सरलादेवी साराभाई तथा अन्य कुटुम्बियों को जो धक्का लगा है वह अवर्णनीय है। विचारों और विश्वासों की दृढ़ता तथा उनके लिए कष्ट सहने की क्षमता, धर्मनिरपेक्षिता, स्त्रियों के मानवोचित अधिकारों की हिमायत, अल्पसंख्यकों तथा अपेक्षितों की मदद, गतिशीलता, संगठन शक्ति तथा अपने साथियों के दुख-दर्द इन सबको मिलाकर जो नाम बनता है वह 'मृदुलाबेन' था। मृदुलाबेन की काया भले पंच-तत्व में विलीन हो गयी हो लेकिन उनका यशःशरीर हमेशा अजर-अमर रहेगा। ×

विनाश की ओर

—श्रीमन्नारायण

आजादी के पिछले सत्ताईस वर्षों में ऐसा बहुत कुछ हुआ है जिस पर हम लोग गर्व कर सकते हैं। बावजूद इसके कि बहुत सी तकलीफें आयी जिनमें चीन और पाकिस्तान से युद्ध के साथ-साथ अवर्षण, अतिवर्षण और अकाल भी शामिल हैं, भारत ने उन्नति तो की ही है। इसलिए अगर हम निराशा का ही स्वर छेड़ें तो यह उचित नहीं होगा। परिस्थिति जैसी जो कुछ है, वह सामने है और हम सबका काम है कि उन्नति और सम्पन्नता की दिशा में जाने के लिए सभी मिल-जुलकर काम करें।

फिर भी यह तो मानना ही होगा कि शिक्षा के क्षेत्र में हमने संतोषजनक ढंग से काम नहीं किया। १५ अगस्त १९४७ को विनोबाजी से एक पत्रकार ने जब उनका संदेश मांगा तो उन्होंने कहा, 'मेरी निगाह में स्वराज्य के दो प्रतीक हैं—नया झंडा और नई तालीम। हम लोगों ने अपना झंडा बदल दिया है और मैं आशा करता हूं कि जल्दी ही नये शिक्षण के प्रयोग भी शुरू हो जायेंगे।' किन्तु ऐसा नहीं हुआ। कहा जा सकता है कि शिक्षा की हालत सुधरने के बजाय बिगड़ी ही अधिक है। अक्टूबर १९३७ में स्वतन्त्रता के दस वर्ष पहले वर्धा में राष्ट्रीय शिक्षण-परिषद् का पहला अधिवेशन किया गया था। मैं उसका संयोजक था और गांधीजी उसके अध्यक्ष। डा० जाकिर हुसैन साहब के मार्गदर्शन में इसी परिषद् में नयी तालीम की योजना को आकार दिया गया था। भारत सरकार और राज्कीय सरकारों ने नयी तालीम को शिक्षण के राष्ट्रीय उद्देश्य के रूप में स्वीकार तो किया, किन्तु उस पर अमल करने की सच्ची कोशिश नहीं की गयी। अक्टूबर १९७२ में इसलिए फिर हम लोगों ने राष्ट्रीय शिक्षण का अधिवेशन सेवाग्राम में किया और प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी द्वारा उसका उद्घाटन भी हुआ। उसमें प्रायः विभिन्न राज्यों के शिक्षा-मंत्री और मंत्रियों के सिवाय अनेक प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्रियों तथा पर्याप्त संख्या में विश्वविद्यालय के कुलपतियों ने भाग लिया। विचार-विमर्श तीन दिन तक चला और सर्वानुमति से एक वक्तव्य भी निकला जिसमें यह कहा गया था कि 'हर स्तर पर शिक्षण को उत्पादक और सामाजिक दृष्टि से उपयोगी कामों के साथ जोड़ा जाना चाहिए और इसका सम्बन्ध देहाती और शहरी दोनों क्षेत्रों की आर्थिक उन्नति से होना चाहिए।' यह भी तय हुआ कि प्राथमिक शिक्षा से लेकर विश्वविद्यालय तक की शिक्षा में सब जगह श्रम की प्रतिष्ठा, राष्ट्रीयता की भावना, सामाजिक दायित्व और नैतिक उन्नति के साथ-साथ सर्वधर्म-समन्वय के विचारों पर जोर दिया जाना चाहिए। यह भी सुझाया गया था कि शिक्षा की डिग्रियों का सरकारी या गैर-सरकारी नौकरियों के साथ सम्बन्ध न रखा जाये। परीक्षा का आधार विद्यार्थी का बौद्धिक स्तर ही न माना जाये, बल्कि यह भी देखा जाये कि देश-सेवा, अनुशासन, विकास योजनाओं, उत्पादक श्रम के साथ-साथ उसका समूचा रहन-सहन कैसा है।

इस बात को दो बरस गुजर गये, राज्य सरकारों की ओर से इस दिशा में कहने लायक कोई कदम नहीं उठाया गया है। योजना आयोग ने अवश्य ही पंचवर्षीय योजना के मसविदे में इसके कुछ मुख्य विचारों को शामिल किया है। कुछ प्रान्तों में सेवाग्राम सम्मेलन के आधार पर विचार-विमर्श करने के लिए सम्मेलन भी बुलाये गये और मुझे यह कहते हुए खुशी होती है कि वहां उन सुझावों को लग-भग जैसा का तैसा स्वीकार कर लिया गया है।

'बुनियादी तालीम' एक ऐसा शब्द है जिसे और सो और शिक्षा की उन्नति के लिए यूनेस्को के आयोग ने भी स्वीकार कर लिया है। और इस बात पर जोर दिया है कि

प्राथमिक और माध्यमिक शालाओं में लिखाई-पढ़ाई बन्द मदरसों में न होकर सामाजिक और आर्थिक कार्यक्रमों के द्वारा होनी चाहिए। डा० गुन्नार मिरडल भी, जिन्हें अभी-अभी नोबल पुरस्कार मिला है, साफ शब्दों में कहते हैं कि भारतीय पाठशालाओं में शिक्षा का रूप बुनियादी ढंग को स्वीकार करके ही सम्हाला जा सकता है। समार के अनेक शिक्षा-शास्त्री जिनमें प्रो० कार्शिल, पाल गुडमैन और डा० इवान एलिच भी शामिल हैं— शिक्षा में आमूल परिवर्तन के हामी हैं। डा० इवान एलिच का तो यहाँ तक कहना है कि एक शालाविहीन समाज का निर्माण किया जाना चाहिए जिससे मदरसों में बन्द रहने की लाचारी का अन्त किया जा सके। संक्षेप में कहा जा सकता है कि शिक्षा के बारे में प्रगतिशील ढंग से सोचनेवाले दुनियाभर के विद्वान शिक्षा को दिन-दो-दिन की चीज नहीं मानते बल्कि यह मानते हैं कि वह तो जीवन भर चलनेवाली चीज है और इसलिए बच्चों को भी वह सर्जनात्मक और उत्पादक तरीके से दी जानी चाहिए। अगर यह विचार सच हो तो शिक्षा पद्धति में जहा-तहा थोड़े परिवर्तन से से काम नहीं चलेगा, आज तक चली आयी शिक्षा पद्धति को पूरी तरह बदलना ही जरूरी हो जायेगा।

हमारी शिक्षण-पद्धति बहुत ही किताबी हो गयी है और उसमें अनेक प्रकार की बुराइयों ने घर कर लिया है। जिन लोगों के हाथ में शिक्षा की बागडोर है वे इस बात पर ध्यान नहीं देते कि कई जगह शिक्षण संस्थाएं एक प्रकार की दूकानें बन गयी हैं। विश्वविद्यालयों तक में पैसा लेकर पदवियां बाटी जाती हैं। विद्यार्थियों की हद तक तो परिस्थिति यहाँ तक आ गयी है कि उन्होंने नकल करने को अपना जन्मसिद्ध अधिकार मान लिया है। यह कहते हुए मुझे लज्जा का अनुभव हो रहा है कि और तो और हमारी विद्यापीठों में शराब तक घुस आयी है। गांधीजी ने एक जगह शिक्षकों को देश का विवेक और युवकों को देश का 'नमक' कहा था और कहा था कि अगर नमक ही अपना स्वाद छोड़ दे तो 'क्या सारी चीजें फीकी नहीं हो जायेंगी।

बहुत वर्षों पहले जब मैं कांग्रेस का महामंत्री था और जब विभिन्न राज्यों की युवक कांग्रेस समितियों की देखरेख मेरी जिम्मेदारी थी तब मैंने यह एक नियम बना ही दिया था कि जो युवा कांग्रेस दल में काम करने वाला कार्यकर्ता विधानसभा या संसद के लिए खड़ा होना चाहे उसे कम से कम पाँच साल तक विद्यार्थियों के बीच समाजवाद और जनतन्त्र के विचारों का प्रचार करने का अनुभव हो। इसके अभाव में उसे टिकट नहीं दिया जा सकेगा। मैंने प्रदेश कांग्रेस समितियों को भी स्पष्ट रूप से बतला दिया था कि छात्रों में काम करनेवाले लोग दल के चुनावों में न पड़ें, दलीय चुनावों में उनका उपयोग कदापि नहीं किया जाना चाहिए नहीं तो उदार राष्ट्रीय दृष्टिकोण के बजाय वे संकीर्ण दलीय राजनीति में पड़ जायेंगे और विश्वविद्यालयों का वातावरण भी संकीर्ण हो जायेगा। गांधीजी तो आजादी के पहले ही विद्यार्थियों से यही कहते थे कि उन्हें राजनीति में नहीं पड़ना चाहिए। तथापि उनकी दृष्टि राजनीतिक विचारों को समझने की तो होनी ही चाहिए। विभिन्न राजकीय दलों की नीति की भी उन्हें पूरी-पूरी जानकारी होनी चाहिए और उन्हें राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय शतरंज में भी बाखबर रहना चाहिए। इस सबके बावजूद उन्हें सीधे-सीधे राजनीति में नहीं पड़ना चाहिए और शिक्षा संस्थाओं का वातावरण राजनीतिक नहीं बनने दिया जाना चाहिए।

शिक्षण संस्थाओं का वातावरण राजनीतिक न हो और फिर भी वे राजनीति की मार्गदर्शक हो सकें इस विचार से विनोबा ने आचार्यकुल नाम से एक नये आन्दोलन की नींव ही डाल दी है। आचार्यकुल में शिक्षक, लेखक और ऐसे तमाम बुद्धिजीवी सम्मिलित हो सकते हैं जो किसी राजनीतिक दल के सदस्य नहीं हैं और जो केवल राजनीतिक दृष्टिकोण से ही शिक्षा के क्षेत्र में एक भाईचारा स्थापित करने का सपना देखते हैं। आचार्यकुल का उद्देश्य राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्वपूर्ण घटनाओं का तटस्थ रूप से अध्ययन करना और जनता तक उन घटनाओं के अर्थ को निष्पक्ष रूप से ठीक-ठीक पहुंचाना एक काम माना गया है। यह आन्दोलन अभी शुरू ही हुआ है, किन्तु इसकी जड़ गहरी गहरी जाने लगी है—इसे प्राथमिक से विश्वविद्यालयीन स्तर तक के सभी शिक्षकों और शिक्षाशास्त्रियों का सहयोग प्राप्त होना आवश्यक है। यह एक रचनात्मक और स्वस्थ आन्दोलन है जो इस बात की कोशिश करना चाहता है कि हमारी शैक्षणिक संस्थाएं राजनीति की दलदल में फसने से बचें। अगर ऐसा नहीं हुआ और शिक्षा का क्षेत्र राजनीतिज्ञों के हाथ में चला गया तो यह विनाश की ओर एक जबरदस्त कदम होगा। राजनीतिक दलों को भी इस बात पर सोचना-विचारना चाहिए कि वे दलीय स्वार्थों के फेर में पड़कर शिक्षण संस्थाओं को इसके भवर में नहीं खींचेंगे। क्योंकि आखिरकार हमारे विद्यालय, महाविद्यालय और विश्वविद्यालय राष्ट्रीय पुनरुत्थान और सेवा के प्रकाश स्तम्भ हों—यह हमारी महत्वाकांक्षा है।

भारत के भविष्य में मेरा दृढ़ विश्वास है और उसमें भी उसके युवकों के प्रति। यदि हमारे तरुणों को ठीक प्रेरणा और मार्गदर्शन मिले तो वे सभी क्षेत्रों में बड़-से-बड़ा काम करके दिखा सकते हैं। पिछली दशाब्दियों में विज्ञान, कला, खेल, पर्वतारोहण और तकनीकी शिक्षण में उन्होंने नाम कमा कर दिखाया है। हमारे युवक दुनिया के किसी भी देश के युवकों से कम नहीं हैं। यदि उन्हें ठीक प्रशिक्षण और प्रोत्साहन मिले तो वे अपनी योग्यता सहज ही सिद्ध कर सकते हैं। और अगर राजनीतिक और शिक्षा क्षेत्र के महन्तों ने उनकी जड़ को ही विषाक्त करने की कोशिश जारी रखी तो हमारी यह महत्वाकांक्षा रेत की दीवार की तरह हल्के-से-हल्के झटके को भी बर्दाश्त नहीं कर सकेगी और देश भयानक विपत्ति में पड़ जायेगा।

हमें दृढ़ता से काम लेना है। ढुलमुल यकीनी; न घरेलू मामलों में ठीक है, न राष्ट्रीय मामलों में। इससे तो मामले और उलझते ही चले जाते हैं और कठिनाइयाँ बढ़ती हैं। इन दिनों हम कम-से-कम शिक्षा के मामले में कुछ भी तय नहीं कर पा रहे हैं, कहा-सुनी में पड़े हैं और सोचते हैं कि किसी दिन अपने-आप कुछ हो जायेगा। अगर हम तत्काल नहीं चेते तो यह नाश ही नहीं सर्वनाश की ओर ले जानेवाला कदम होगा।□

नवजीवन शिविर में नये जीवन के चरण

—एस० एन सुब्बाराव

चंबल घाटी के आत्मसमर्पित बागी एव उनसे पीड़ित लोगों के परिवार के बारे मे इन्दौर स्कूल ऑफ सोशल वर्क ने एक अध्ययन योजना बनायी है। उसके अन्तर्गत आत्म समर्पित बागी परिवारो के बारे मे जानकारी प्राप्त करने के लिए उस स्कूल के अध्यापक आर० आर० सिंह हाल मे मेरे साथ मुंगावली मे नवजीवन शिविर पहुचे। पहुचने ही शिविर के बागी भाइयो मे से सबसे पहले उनसे मिले *प्रतापसिंह। नाम से सम्बन्धित* प्रश्न के उत्तर मे तो उन्होने अपना 'प्रतापसिंह' नाम बता दिया लेकिन जब उनसे पूछा कि वे 'बागी कब बने'—तो उन्होने कहा कि, "साहब मैं तो तबसे बागी हू जब आत्मा इस शरीर मे घुसी।" सिंह साहब मुस्कराये और कहा, "मेरा मतलब वह नहीं था। कुछ काम से सवाल पूछ रहा हू।" फिर अगला प्रश्न किया। "आप किस गिरोह मे थे?" प्रतापसिंह भी कम नहीं है। उसने तुरन्त जवाब दिया, "साहब, मैं तो ईश्वर के गिरोह में ही रहा हू।"

हैरान सिंह साहब ने उसे धन्यवाद दिया और यह कहते हुए कि, "आज इतना काफी है, और फिर कभी बठेंगे' बातचीत को आगे के लिए मुलतवी कर दिया।

प्रतापसिंह भी उन ६-१० बागियों में से है जो समर्पण के बाद आध्यात्मिक लक्ष्यो की खोज मे लग गये हैं। समर्पण के समय से ही *उनमे परिवर्तन आने लगे थे।*

शुरू-शुरू मे जब सब बागी ग्वालियर मे थे तब मैं एक बार उनसे मिलने गया। जो भी मिलते, उनसे एक स्वाभाविक प्रश्न पूछता कि उनके मुकदमो का क्या हुआ। आमतौर पर सभी बागी इसी चिन्ता मे रहते थे कि उनको क्या सजा होगी, कितने दिन जेल मे रहना पड़ेगा। उस दिन भी सबसे पहले प्रतापसिंह ही मिले और मेरे पास बैठे। उनके इशारे और दूसरो के बताने से मालूम पड़ा कि वे उन दिनो मौन थे। किसी बेबात की बात पर दो बागियो को आपस मे लड़ते
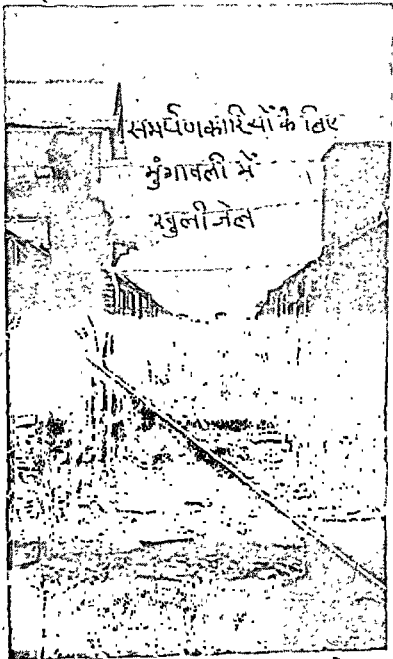
कामकाज में जुटते जा रहे समर्पित बागी

[गत वर्ष १४ नवम्बर को मुंगावली में आत्मसमर्पणकारी बागियों के लिए नवजीवन शिविर के नाम से खुली जेल आरंभ हुई थी। उसकी स्थापना की वर्षगांठ पर यह विशेष विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है। स]

देखकर उन्हें लगा था कि बात करने में ही झगड़ा हो जाता है। इसलिए बात करना बंद कर दो।

मुकदमों के बारे में मेरे सवाल पर प्रतापसिंह बोले कुछ नहीं, बस मेरे हाथ से अखबार लेकर उसके किनारे लिख दिया, दादाजी, आप कृपया मेरी चिन्ता छोड़ दीजिये। और भाइयों की मदद कीजिये जो परेशान हैं। मेरे दो आ गये। और भी आते रहेंगे। मेरे केस में आपके वकीलों की जरूरत नहीं है। मेरा वकील ईश्वर है। अदालत में भी उनकी यही बात रही। न सिर्फ दूसरे कई बागी भाइयों की तरह सब जुर्म कबूल कर लिये बल्कि यह भी कहा कि, 'मेरा वकील तो ईश्वर है और आप स्वयं ईश्वर के ही प्रतीक हैं।''

उन्हें सजा होने के बाद जब उनसे मिला तो अपनी लंबी सजा की जानकारी प्रतापसिंह ने कुछ ऐसी खुशी से दी जैसे कोई लड़का अव्वल आने पर अपना नतीजा सुनाता है।

पंचमसिंह चौहान भिण्ड जिले में खतरनाक हस्तियों में गिने जाते थे। हाल ही में जब मुंगावली जेल में उनसे मिला तो उन्होंने मेरे हाथ में एक लंबी सी दरखास्त थमा दी। उसमें १४ नवजवानों को नौकरी दिलाने के लिए लिखा था। शासन ने नीति बनायी है कि आत्मसमर्पित बागी और उनसे पीड़ित लोगों के लड़कों को नौकरी में प्राथमिकता मिलेगी। इन ११ में पंचमसिंह या उनके गिरोह के किसी बागी का लड़का एक भी नहीं था। सब उन घरों के लड़के थे जिनको पंचमसिंह ने नुकसान पहुंचाया और जिनके कमानेवाले की उसने हत्या कर दी थी। आज पंचमसिंह को अपने से ज्यादा उनके घर की चिंता है। उनके नाम उन्होंने भी सरकार को भेजे और मुझसे भी भिजवाये।

पंचमसिंह भी उन बागियों में हैं जिन्होंने अपने जुर्म कबूल कर लिये। एक और विशेषता इनकी रही कि जब सजा के लिए गवाह की जरूरत पड़ी और कोई गवाह आने तैयार नहीं हो रहा था तो खुद एक महिला गवाह को बुलवाया और उससे कहा, "तुम सच बोल दो कि मैंने तुम्हारे पति को मारा है। अब मैं वह पंचम नहीं जिसको तुम जानती थीं। मैं तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ूंगा।" जब उनको सेशन अदालत से मृत्यु दंड सुनाया गया तब मेरे पास आये उनके पत्र में लिखा था .

' • जब जज साहब ने मुझसे पूछा तो मैंने सही-सही सब बातें बता दीं। और जब जज साहब ने मुझे मृत्यु दंड सुनाया तो मेरा मन किंचित भी विचलित नहीं हुआ। जो ईश्वर की मर्जी हो सो ही हो।"

थोड़े दिन बाद हाईकोर्ट ने उनके मृत्यु दंड को आजीवन कारावास में बदल दिया। वे पैरोल पर अपने गांव गये तब अपने सब पुराने दुश्मनों के घर जाकर उनके पैर छुए और क्षमा मांगी। फिर मुझे लिखा,

जियालाल जो अब साधु हैं
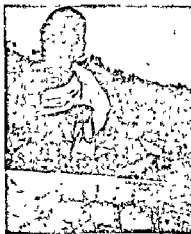
"मुझे देखने ८-१० हजार लोग जमा हो गये। मैंने सबको प्रणाम किया और कहा कि मैंने अन्धे होकर आपको तकलीफ दी थी। मैं आपसे क्षमा मांगता हूं। इस पर भी आपको सन्तोष नहीं हो तो मैं यहां खड़ा हूं। आपके हाथों में बन्दूकें हैं। आप मुझे मार देंगे तो मुझे खुशी होगी। इस पर उनकी और मेरी दोनों की आंखों में पानी आ गया। लोग आकर गले लग गये।"

× × ×

एक प्रतापसिंह और हैं जिनका नाम अब प्रतापसिंह 'मौन' चल गया है। वे कई महीनों से मौन धारण किये हैं। अभी-अभी उन्होंने जेल में अखंड रामायण करायी। उनकी खुराक है बस कुछ बेल के पत्ते और पानी। हमेशा हंसते मिलेंगे एक स्लेट हाथ में लिये हुए। उसमें वे जो कुछ कहना चाहते हैं उसे लिखकर सामने कर देते हैं।

× × ×

जियालाल का भी अपना ही रंग है। दोपहर की कड़ी धूप में मोटा कंबल ओढ़े मिलेंगे, तो कड़ी सर्दी में लंगोट भर पहने हवा खाते घूमते या अकेले ही मिट्टी खोदकर सड़क बनाते भी मिल सकते हैं। उनसे बात करते वक्त लगता है कि हिमालय के किसी यति से बातें कर रहे हैं जिसे दुनिया से कोई मतलब या सरोकार नहीं है।

× × ×

नारायण पंडित की तो समर्पण के बाद बस इतनी तमन्ना रह गयी है कि ग्वालियर के पास बेहट में संगीत सम्राट तानसेन की यादगार में एक स्मारक बने और वहां साल में एकबार संगीत मेला भरा करे।

× × ×

सागर जेल में मूरतसिंह, पूजा बब्बा, मोनी, रामविलास, शंकरसिंह सबके सब सुबह स्नान करके पूजा पाठ करते मिलते हैं। यह उनका रोज का काम है।

हरविलाससिंह ने लकड़ी काटकर कुर्सी-

टेबल बनाये हैं। नाथूसिंह ग्वालियर पहुंचे हैं। अम्बर चरखे से सूत कातने में बड़ी प्रगति कर चुके हैं। मातनसिंह और उनके मित्रों का कहना है कि भैंस रखने की सुविधा मिल जाये तो दूध का धन्धा शुरू कर दें। खेती करने की सबकी इच्छा है।

नवजीवन शिविर में अपनी व्यवस्था खुद करने के प्रयास में बागी भाइयों ने अपनी ही एक पंचायत बनायी है जिसके अध्यक्ष मोहरसिंह और मन्त्री माधोसिंह हैं। पंचायत में आपसी समस्याओं की चर्चा करके, हल करने की कोशिश होती है। गौड़ लिखा पढ़ी करते और लाइब्रेरी सम्भालते हैं।

× × ×

समर्पण के बाद की स्थिति में इन सब बातों से बहुत अच्छा लगा है। पर इतने से संतोष नहीं माना जा सकता।

एक घटना जिसकी हमें कोई उम्मीद नहीं थी—तीन बन्दियों के जेल से भाग निकलने की हुई। मुख्यमंत्री ने समर्पण के समय कहा कि जो सौ-दो सौ समर्पण करेंगे (कुल ५०१ ने किया), उसमें से २०-२५ भाग जायें तो भी हम समर्पण को एक बड़ी सफलता मानेंगे क्योंकि ये बड़े गिरोह हाथ में नहीं आ रहे हैं। सर्वोदय कार्यकर्ता, मुख्यतः हमारे साथ के भूतपूर्व समर्पणकारी लोकमन और तहसीलदारसिंह दावा करते थे कि 'समर्पण करनेवाले बागियों को खुले में छोड़ दें तो उनमें एक भी नहीं भागेगा।' फिर ये क्यों भागे ?

समर्पण के समय बागियों ने एक बात साफ कर दी थी, 'हमें भले फांसी दें, हम बर्दाश्त कर लेंगे पर हमारा अपमान नहीं होना चाहिए।' दुर्भाग्य से कुछ ऐसी बातें हुई कि दो-चार लोगों का अपमान हो गया। अभी भी आठ-दस लोगों के मामले गमेले में हैं। उन पर आरोप जल्दी स्थापित हों, अपमान से उनको मुक्ति मिले तो सबके लिए अच्छा हो।

× × ×

एक उलाहना मिलता है कि समर्पणकारियों को अच्छा खाना मिलता है। मैं हाल में एक सप्ताह इस नवजीवन शिविर में रहा।

(शेष पृष्ठ १२ पर)

व्यस्तता

चम्बल के आतंक मोहरसिंह पर कभी दो लाख रुपये का इनाम था। अब वे डेरी के काम में जुटे हैं।

सत्याग्रह जनतंत्र विरोधी ?

—जैनेन्द्रकुमार

आचार्य कृपलानी को लिखे गये प्रधानमंत्री श्रीमती गांधी के पत्र के एक वाक्य का आशय है कि जनतंत्र में जनता की सीधी कार्रवाई के लिए गुंजाइश नहीं है। यह बुनियादी प्रश्न सर्वोदय क्षेत्र में भी विचार के लिए बार-बार सामने आता रहा है।

प्रश्न यों तात्त्विक-सा लग सकता है। पर जयप्रकाश नारायण के बिहार आंदोलन के प्रकरण ने इसे इतना तात्कालिक बना दिया है कि उसकी छानबीन, युगीन राजनीति के संदर्भ में एकदम आवश्यक समझी जानी चाहिए।

राज्य की आवश्यकता से कोई इनकार नहीं कर सकता। समाज-व्यवस्था उसी संस्था की बदौलत व्यवस्थित रह पाती है। उसी कारण अराजकता एक भयकारक शब्द है और शस्त्रों के उपयोग से भी उसे बचाना उचित माना जाता है।

कुछ तत्त्वज्ञ हुए हैं जिन्होंने अराजकता का प्रतिपादन किया। स्वयं कार्ल मार्क्स ने श्रेणी शासन-मुक्त समाज के स्वप्न को उभारा था। साम्यवादी क्रांति उसी स्वप्न के बल पर उसकी शक्ति से सम्पन्न की गयी थी। भारत देश में महात्मा गांधी ने भी उस आदर्श को जगाया; यद्यपि अन्त की ओर उन्होंने स्वीकार किया है कि राज्य जैसी संस्था की आवश्यकता समाज के लिए शायद ही कभी निःशेष हो पायेगी। मार्क्स ने तो अन्तराल काल के लिए 'प्रोलितारियन डिक्टेटरशिप' तक का विधान किया है।

संक्षेप में राज रहेगा, राज्य नियम रहेगा और हर नागरिक के लिए उसका पालन अनिवार्य होगा।

किन्तु राज की रचना वही की वही कभी नहीं रही। उसमें विकास होता आया है। पहले राजा होता था और उसकी मर्जी चलती थी। फिर राजतंत्र जैसा कुछ बना। होते-होते उसे प्रजातंत्र का स्वरूप मिलता गया। आज अधिकांश उसी स्वरूप का रिवाज है। लेकिन हर राष्ट्र की राज्य-विधि में थोड़ा-बहुत अन्तर देखा जा सकता है। कहीं प्रजातंत्रता की मात्रा कम है, कहीं अधिक। अपनी पूर्णता में प्रजातंत्र कहीं नहीं है। वैसा होगा तो प्रजा और राजा दोनों शब्द समाप्त हो जायेंगे। इसलिए जो राजतंत्र प्रजातंत्र के नाम पर चला आता है कभी वह असली और सही अर्थ में प्रजा का नहीं होता। उसमें हमेशा सुधार-विकास की गुंजाइश रहती है।

सुधार-विकास के लिए प्रजातांत्रिक संविधानों में अवकाश रखा जाता है, चुनाव की प्रक्रिया का। आप अपने-अपने मतवादों का प्रचार करते रह सकते हैं, और अमुक अवधि के बाद आनेवाले निर्वाचन के समय राज के विधायकों को अदल-बदल सकते हैं। उस पद्धति से आप राज्य में सुधार और परिवर्तन लाते हैं। पद्धति तो यह वैध रहेगी। शेष उपाय अवैध और अग्राह्य माने जायेंगे। समाज सभ्य है तो यह मर्यादा अन्तिम ही समझी जानी चाहिए।

विधि की इस शास्त्रीय सीमा और धारणा को तोड़कर क्रांतियाँ हुईं और उनमें खुलकर हिंसा का सहारा लिया गया। फ्रांस में अगर सम्राट लुई को, महारानी आन्त्वनेत को खत्म किया गया, तो क्रांति के नेताओं को भी एक पर एक सूली चढ़ना पड़ा। रूस में जार और उसके परिवार को ही नहीं मारा गया, न जाने कितने मेनशेविकों और बोलशेविकों को भी मरना पड़ा। चीन का इतिहास भी कुछ ऐसा ही मिलेगा। असल में दूसरा कुछ हो नहीं सकता। क्रांतियाँ हिंसक होने पर अपनी निष्पत्ति में ऊपर किसी डिक्टेटर को ही प्रस्थापित करती आयी हैं।

संस्कृति और सभ्यता की संवैधानिक सीमा को हिंसा द्वारा जब जब लांघा और तोड़ा गया है परिणाम उसका जनतंत्रता की भाषा में कभी शुभ नहीं हुआ है।

पर शुभाशुभ का विचार मनुष्य किया करे, काल नहीं करता। न प्रकृति करती है। प्राणों में से निकली अनिवार्यता का तर्क ही अपना 'अमोघ काम' काम किया करता है।

लेकिन एक विचित्र आदमी पैदा हुआ गांधी। विज्ञान युग से पहले ऐसे ईसा जैसे विलक्षण पुरुष और भी हुए थे, पर उन्हें साक्षर और बैरिस्टर होने की आवश्यकता नहीं हुई थी। अर्थात्, राज्य-नियम की ओर राज नियन्ता की सुधि लेने को वे बाध्य नहीं थे। गांधी ने कहा कि राज्य के नियम को स्वेच्छा से मानना ही है, सभ्यता के उत्कर्ष-क्रम में मनुष्य-जाति ने हिंसा के अधिकार और उपाय राज्य के हाथ में सौंपकर स्वयं जो उस हिंसा से मुक्ति प्राप्त की है, सो उस उपलब्धि को खंडित नहीं करना होगा। हिंसा को कोई नागरिक हाथ में नहीं ले पायेगा। कानून सरकार के हाथ की चीज रहेगा, हर नागरिक की नहीं। इस नियम की रेखा नियामक बनेगी अपराध कर्म के निर्णय के लिए। लेकिन अहिंसा के इस अवतार ने साथ ही उसी मानव-जाति को त्राण का मंत्र दिया, सत्याग्रह। सत्याग्रह में राज्य-नियम का भंग ही नहीं है तो क्या है?

यहाँ क्या एक पहेली ही नहीं बन जाती है? राज्य नियम माना जायेगा, लेकिन समय पर उसे तोड़ा भी जायेगा। यह है जो सार रूप में गांधी ने किया, बताया और सिखाया।

यह अलग प्रश्न है कि बिहार आंदोलन में गांधी-नीति का पालन कितना है। पर विचार और उच्चार में भी शान्तिमयता का उनका प्रण है तो नागरिक मर्यादा की दृष्टि से कोई न्याय जे० पी० को अपराधी नहीं कह सकता।

राष्ट्र कई-कई हैं और उनके विधान अलग-अलग हैं। अर्थात्, राज्य के कानूनों में फर्क ही फर्क है। पर समूचा ब्रह्मांड एक है और वह नियम अखंड है जिससे यह सब का सब चल रहा है। धर्म और धर्म-प्रवर्तक उसी

मूल नियम को खोजने और साधने रहे हैं। उन्ही मौलिक एवं धार्मिक सिद्धांतो तक व्यावहार को पहुंचाने के मार्ग में हमें राजकीय नियम प्राप्त होते हैं। अर्थात्, इन राज नियमो को नीति नियमों की अधीनता स्वीकार करनी होगी। जहां ऐसा नही होगा, वहा नीति *नियमों की रक्षा में उन्हे खडित होना होगा।* सत्य के इस अधिकार और आग्रह का सिद्धांत वह परम ध्रुव है जिससे प्रकाश मिलेगा मनुष्य को, मनुष्य जाति को, राज्य को और राजकर्ताओं को। जहा यह प्रकाश नहीं है वहा अन्धेरा है और इसलिए वहा हिंसा और क्रूरता का ही एक उपाय सूझ जाता है। इन्दिराजी के वाक्य में यदि इस आशय का समावेश है कि एक बार पाच वर्ष के लिए चुन जाने पर सरकार अपनी आत्म-रक्षा और अधिकार रक्षा में सब कुछ कर सकती है और इस पाच वर्ष की अवधि आने तक जनता की ओर से कुछ नही किया जा सकता तो गाधी प्रणीत सत्याग्रह के सिद्धात के यह अनुकूल नही है। वह सिद्धात जन के और जनता के निरुपाय और असहाय होने को एक क्षण के लिए स्वीकार नहीं करता और इस अस्वीकारता में उसे मर तक जाने की ललकार और आह्वान देता है।

याद रखना चाहिए कि गाधी ने सत्याग्रही के लक्षण में बताया है कि राजनियमो का पालन उसका सर्वांगीण होना चाहिए। केवल नैतिक हेतुओं से जहा जिस अंश में उसका खंडन हो वह सर्वथा स्पष्ट, प्रत्यक्ष, दृढ और निर्भीक होना चाहिए।

अपने चुनावो के अन्तरग की बात यहा नहीं करनी है। मान भी लिया जाय कि चुनाव एकदम 'फ्री' और 'फेयर' और निर्दोष और निर्विकार और परम-पवित्र रूप से हुए हैं, तो भी उन चुनावो से बनी सरकार के पास से सत्याग्रह के उत्तर में हत्याग्रह आता है तो उस सरकार के भविष्य की कल्पना से काप जाना पडता है। इन पक्तियों का लेखक नही चाहेगा कि श्रीमती इन्दिरा गाधी-सी मेधा और प्रतिभा की धनी महिला को पद से नीचे गिरकर सामान्य से भी सामान्य बनना पडे। आगे की दुर्दशा को तो वह पास भी फटकने नहीं देना चाहता। ++

(पृष्ठ १० का शेष)

खाना सबके साथ खाया, सुबह एक समय रोटी-सब्जी और शाम को रोटी-दाल। उनकी खुराक जरूर अच्छी खासी है और घी वे ज्यादा लेते हैं। इन लोगो ने टेढी समस्या हल करने में सहयोग दिया और आज चम्बलघाटी तथा बुन्देलखड में 'डाकू विरोधी कार्रवाई' के करोडो रुपये बच रहे हैं, जानें बच रही हैं और बागी और पुलिस के परिवारो समेत हजारों लोग सुख की नींद सोते हैं। अब अगर उन लोगों को अच्छा भोजन मिले तो कौन सा आसमान फटा जा रहा है।

× × ×

हाल ही नवजीवन शिविर मे कुछ ऐसे काम-धन्धे शुरू किये गये हैं जिनसे खुली जेल के अन्तेवासी अपने को कामकाजी नागरिक महसूस कर सकें। इनमें खेती का स्थान सबसे आगे है और दुधारू मवेशी-पालन, मुर्गी-पालन, बढइगिरी, लोहारी, दर्जीगिरी जैसे काम भी हैं। अभी तक १२६ में से ८० बागी काम में लग चुके हैं। इनमे ५० खेती में, १० मवेशीपालन, १० मुर्गीपालन, ४ कैंटीन चलाने, २ बढइगिरी, २ सिलाई और १ लुहारी में लगा है। पूंजी कुछ अपने पास से बागियो ने लगायी है और कुछ बैंक से कर्ज मिला है। डेरी के लिए स्टेट बैंक ने ४ प्रतिशत व्याज पर २० हजार रुपया दिया है जिससे दस भैंसे बागी रोहतक से ले गये हैं।

जिन बागियों के परिवार मुंगावली में बसे हैं, उनमें से एक अपनी झोपड़ी के आगे।

बागियों में से ३५ के परिवार भी मुगावली के पास ही आकर एक गाव में जमीनें किराये पर लेकर और झोपडियां बनाकर बस गये हैं।

कभी बीहडो के आतक मानेजानेवाले इन बागियो को नवजीवन शिविर में नये जीवन के रास्ते मिल रहे हैं और उन पर चलना वे शुरू कर चुके हैं। × ×

बीस साल पहले

(भूदान-यज्ञ वर्ष १ अंक ७
२४-११-५४ के अंक से)

जयप्रकाशजी का महत्वपूर्ण समयदान

पूना के पास हडपसर में राष्ट्रसेवा दल के सैनिकों का एक बहुत बडा सम्मेलन हुआ। उसमें श्री जयप्रकाश बाबू अध्यक्ष के नाते गये थे। उन्होंने करीब तीन हजार सैनिकों का अपने सवा दो घंटे के भाषण से उद्बोधन किया और मुख्य अतिथि की हैसियत से भूदान क्रांति के लिए कम से कम सौ कार्यकर्त्ता एक साल के लिए समय दान करें, यह दक्षिणा मांगी। फलस्वरूप श्री एस०एम० जोशी, रावसाहब पटवर्धन जैसे प्रमुख महाराष्ट्रीय नेताओं के साथ-साथ दूसरे करीब तीस जनों ने समय दान दिया। इनमें से एक ने पांच वर्ष देने का सकल्प किया। उसके बाद जयप्रकाश बाबू संपत्तिदान के कार्य के लिए बम्बई गये, जहां उन्हें सम्पत्ति के दान-पत्र मिले।

गांधीवाद : कुछ मुख्य विचार

—दादा धर्माधिकारी

इतिहास को बनानेवाले संत, वीर और राजा तीन ही रहे हैं। साधारण मनुष्य नहीं। लेकिन गांधी ने यह दिखाया कि अब इतिहास बनाने में साधारण मनुष्य का योगदान होगा। अब तक इतिहास-विधाता पुरुष रहा है। अब विधायी स्त्रियां (महिलाएं) होंगी। भूतकाल में स्त्रियां सिर्फ लड़ाई का कारण बनी हैं।

मनुष्य तीन प्रकार के होते हैं : १. धूर्त (चालाक) २. प्रवीण और ३. प्रतिभाशाली

कोई व्यक्ति जिस कार्य को मुश्किल से भी नहीं कर पाता है और उसी कार्य को जो सरलता से कर लेता है, उसे प्रतिभाशाली कहते हैं। लेकिन प्रतिभावान भी जिस कार्य को असंभव माने और उस कार्य को जो कर दिखाता है उसे विभूति कहते हैं। ऐसी ही एक विभूति गांधीजी थे। गांधीजी ने कहा कि

(जबलपुर के मोहनलाल हरगोविन्ददास महिला गृहविज्ञान स्नातकोत्तर महाविद्यालय के वार्षिक दिवस पर गत मास मुख्य अतिथि के रूप में दादा धर्माधिकारी ने छात्राओं के समक्ष 'गांधीवाद' पर एक प्रेरक भाषण दिया। उसे हम सार रूप में यहां दे रहे हैं। स.)

साधारण मनुष्य भी आजादी की लड़ाई बिना हथियार के लड़ सकता है। वेदों के जमाने से लेकर आज तक कोई जमाना नहीं हुआ, जब भूख, गरीबी, अकाल या बाढ़ का प्रकोप न रहा हो, लेकिन पुराने लोगों की आदत रही है कि वे हमेशा बीते जमाने को अच्छा और भविष्य को खतरे में बतलाते हैं। दुश्मन तो वर्तमान समय होता है। गांधी ने अंग्रेजी साम्राज्य से टक्कर ली थी, जहां कहते हैं कि उसके साम्राज्य में सूरज नहीं डूबता था, जिस के पास पर्याप्त बल था और इतिहास में कोई क्रान्ति बिना हथियार के नहीं हुई थी। यदि गांधी सोचते कि बिना तलवार के किसी ने आजादी प्राप्त नहीं की है और चूंकि हमारे पास तलवार नहीं है, अतः हम आजादी प्राप्त नहीं कर सकेंगे तो ऐसा सोचना अव्यावहारिक न होता। लेकिन उन्होंने उस परिस्थिति में भी रास्ता निकाला। उन्होंने कहा कि निहत्था भी आजादी प्राप्त कर सकता है। बहादुर वह नहीं जो जान लेता है बल्कि बहादुर वह है जो जान का खतरा उठाता है। बहादुर की जान सिर्फ एक बार जाती है जब कि कायर २४ घंटों में ६६ बार मरता है। यदि जान लेनेवाला बहादुर होता तो आज नेपोलियन की जगह कसाई बहादुर कहलाता।

मल्लाह और साहूकार की लड़कियां समुद्र के किनारे खेल रही थीं। तभी समुद्र में तूफान आने लगा। मल्लाह की लड़की बोली मैं तो जा रही हूं। साहूकार की लड़की ने कहा कि एक बात पूछूं, तुम्हारे बाप को तूफान में समुद्र में डूब जाने से मौत हुई थी, फिर भी तुमको डर नहीं लगता।' तब मल्लाह की लड़की ने कहा कि तुम्हारे दादा कहां मरे थे, पलंग पर और चाचा खटिया पर तथा नानी भी खटिया पर, तब जहां कम लोग मरते हैं उस जगह से डरना चाहिए या जहां अधिक लोग मरते हैं उस जगह से डरना चाहिए। संसार में अधिक लोग मरते हैं फिर भी सभी यहीं आना चाहते हैं। जिस व्यक्ति ने बिस्तर का साथ रखा है वह बूढ़ा है, भले ही वह १८ या २० वर्ष का हो। जिसने साथ छोड़ दिया है वह ८० वर्ष का होकर भी जवान है। जो व्यक्ति मरने को निहत्था ही तैयार है उसे पूरे देश की सेना मिलकर भी नहीं हरा सकती। सेना तो सेना से ही लड़ेगी। एक व्यक्ति से क्या लड़ सकती है। यदि कौआ मन्दिर के कलश पर बैठ जाता है तो वह गरुड़ नहीं बन जाता है। उसी प्रकार आज कुर्सी पर बौने लोग बैठ गये हैं जिनकी कीमत सिर्फ कुर्सी के कारण है। उसके बाद नहीं। इसलिए कुर्सी के प्रभाव से सब खरीद सकते हैं तथा जो दूसरे पैसेवाले हैं वे भी आज के युग में सब कुछ खरीद सकते हैं। मन्दिर में भी जो दक्षिणा अधिक देता है उसे पहले पूजा करने दी जाती है। भगवानजी पैसों में बिक रहे हैं इसलिए कोई विश्वास नहीं रह गया है।

वर्तमान समय में गांधीवाद को भूलना ही अच्छा है। मेरा कहना है कि आज के युवक-युवतियां न गांधी बनें, न झांसी की रानी। नकली गांधी और नकली लक्ष्मी बाई बनने से देश की उन्नति नहीं हो सकती। जो परिस्थितियां गांधी के समय की थीं, अब नहीं। इसलिए गांधीवाद का नाम लेकर उसके छे भागने से कुछ नहीं होगा। आज की रस्थितियों पर विचार करना चाहिए, समना चाहिए और फिर वैसा कार्य करना ाहिए। यदि किसी एक वाद के पीछे लगे ें तो ऐसा महसूस होता है कि हम दूसरों की ुनिया में रह रहे हैं। और दूसरों की दुनिया अनुसार काम सिर्फ कैदी ही करता है। में अपनी दुनिया स्वयं बनाता है। आज तक ोई महापुरुष ऐसा नहीं हुआ है जिसने किसी सरे महापुरुष की नकल की हो और तब ह बना हो। सबके पास अपने मौलिक विचार तथा अपने-अपने जमाने की परिस्थितियां ीं। व्यक्ति इतिहास को बनाता है। इतिहास यक्ति को नहीं बनाता, नहीं तो इतिहास का नना महत्व नहीं होता और एक ही व्यक्ति ी नकल सब करने लगते। हां, सभी महा-ुरुषों ने इतिहास से प्रेरणा जरूर ली है। ुछ विचार लिये हैं तथा उन्हीं में बदलाव रके अपनी परिस्थितियों के अनुकूल बनाया । इसी से इतिहास बदलता है। जिस दिन तिहास मनुष्य को बनाने लगे तो समझो कि ुत्ते की पूंछ नहीं हिलती, बल्कि पूंछ कुत्ते ो हिलाती है।

आज की पार्लियामेंट एक गणिका के समान है। यह कटु यथार्थ है क्योंकि यहां प्रतिनिधि तथा उम्मीदवार सभी नीलाम होते हैं। और जो चीज नीलाम होती है उसे इसके सिवाय और क्या उपमा दी जा सकती है।

भूखे को रोटी नही मिलती जबकि कही फिक रही है। *यह भगवान का नही शैतान का* इन्तजाम है। बीमार को दवा नहीं मिलती और जिनके पास दवा है वे बीमार नही है। इस व्यवस्था को बदलना होगा। हमें ऐसी व्यवस्था बनानी होगी कि जिसके पास औजार होगा उसी के हाथ मे सत्ता हो। औजार मनुष्य को सम्पन्न करता है जबकि हथियार जीवन को समाप्त करता है। हथियार के बदले औजारवाले हाथ मे सत्ता हो। इसी को बदलने का नाम आज क्रान्ति है। जबतक हथियारवाले हाथ मे सत्ता है लडकी जाति को समाज मे वह *सम्मान नही* मिल सकता चाहे वह देश की प्रधान मंत्री इन्दिरा गाधी ही क्यो न हो। जब तक लडकी लडके की तलाश मे रहेगी तब तक उसको वास्तविक आजादी नही मिल सकती। फैशन मात्र ही आजादी नहीं है। उसे दूसरी दुनिया ही मिलेगी जिसमें उसको स्वय को ढालना होगा। उसकी अपनी विचारो की दुनिया नही बन सकती, अत: आवश्यकता है औजार-वाले हाथो मे सत्ता लाने की।

गाधी इतिहास के पहले और बेजोड बेवकूफ थे। *पागल और विभूति के बीच मे सीमा* रेखा बहुत पतली होती है। जब दुनिया के प्रतिभाशाली और होशियार सब विभूति के खिलाफ हो जाते हैं तब वह मुख्य बुद्धिमान होता है। ऐसे ही गाधी थे। पहले उनके विचारो पर किसी को विश्वास नही हुआ। लेकिन उन्होंने जो कहा, वह कर दिखाया।

गांधीजी ने सामूहिक प्रार्थना, कताई और सफाई पर विशेष जोर दिया। जहा भूख होती है वहा भीख होती है। लेकिन यदि भूख के साथ परिश्रम को जोड दें तो वह राष्ट्र महान बन सकता है। आज इस देश ने अपनी आजादी अन्न और चन्द हथियारो के लिए रेहन रख दी है। गाधी ने चरखा को ही सब समस्याओं का हल बताया। टेरीलिन यदि सूती वस्त्रो से सस्ती है तो मनुष्य का मांस भी सब मासो से सस्ता होता है। उन्होंने कहा कि धर्म एक दूसरे से टकराये नही, यह अपनी सास्कृतिक उन्नति का परिचायक है। यही कुछ मुख्य विचार हैं गाधी के जिनसे हम आधुनिक समय मे प्रेरणा ग्रहण कर आज की परिस्थितियो के अनुसार समाज के शासन को और विश्व को बदल सकते हैं।

(कृष्णा पटेरिया द्वारा प्रस्तुत)

साइकिल : किफायत और कुशलता में बेजोड़

(विकसित देशों खासकर अमरीका में साइकिल की लोकप्रियता पुनः तेजी से बढ़ रही है। इन देशों के महानगरों तक में बड़ी संख्या में साइकिलें सड़कों पर नजर आने लगी हैं और बाजार में उनकी मांग बहुत बढ़ गयी है। इस संदर्भ में दुनिया के दो प्रमुख अर्थशास्त्रियों के साइकिल सम्बन्धी विचार हम यहां दे रहे हैं। सं०)

अमरीका का आम आदमी हर साल औसतन डेढ़ हजार घंटे अपनी कार पर ही खर्च कर डालता है, उसे चलाते, 'पार्क करने', पार्क में कारों के जंगल में से अपनी कार खोजकर निकालने और उसकी देखरेख जैसे कामों में। कार खरीदने के लिए ज्यादा काम करने, उसका टैक्स, बीमा आदि भराने और इन सबसे बढ़कर दुर्घटनाओं के कारण, अदालतों और अस्पतालों में गवाया या गैरेज में ठोक-पीट में खर्च वक्त अलहदा है। टी.वी. पर कार के विज्ञापन देखने में या छुट्टी के दिनों में कार की सैर के लिए कमाई में खर्च वक्त इसमें और जोड़ा जा सकता है। और इतनी जहमत उठाने के बावजूद वह अपनी कार में कुल मिलाकर चार मील फी घंटे की औसत से चल पाता है। इस रफ्तार से तो विकासोन्मुख देशों में लोग पैदल चलते हैं।

आमतौर पर आदमी को एक किलोमीटर पैदल चलने में १० मिनट लगते हैं और उसके वजन के प्रतिग्राम पीछे ताकत कुल एक कैलारी का भी तीन चौथाई खर्च होती है। इस लिहाज से उसकी कुशलता ज्यादातर पशुओं, यहां तक कि घोड़े से भी बढ़कर है और यांत्रिक मोटर तो उसके मुकाबले कहीं ठहरती ही नहीं।

कोई सौ साल पहले साइकिल की खोज होने से आदमी की दूरी तय करने की ताकत को नयी दिशा मिली। यह विकास का बहुत बड़ा कदम था। साइकिल पर आदमी पैदल की बनिस्बत पांचवां हिस्सा ताकत खर्च करके ही तीन-चार गुनी ज्यादा रफ्तार से चल सकता है। साइकिल पर एक किलोमीटर जाने में आदमी को अपने वजन के प्रति ग्राम पीछे कुल ० १५ कैलारी ताकत खर्च करनी पड़ती है साइकिल पर चलनेवाला आदमी किसी भी दूसरे मशीनी वाहन या जानवर पर चलनेवाले से ज्यादा खुशहाल है।

—इवान इलिच

आनन्द, तकलीफ, किफायत और सुविधा की नजर से देखें तो साइकिल बहुत बढ़िया है। उससे दूसरों को कोई खतरा नहीं है। वह उनकी आजादी पर हमला नहीं करती। संतुलन के मामले में तो उसका जवाब नहीं है।

मोटर कार के लिए जरूरी २४ फुट चौड़े रास्ते की तुलना में साइकिल के सिर्फ १२ फुट चौड़े रास्ते पर एक घंटे में पांच गुने ज्यादा लोग चलते हैं। इसके बनाने में जमीन कम लगती है। बहुत मजबूत नहीं बनाना पड़ता। इससे हर वर्ग गज पीछे लागत में छ गुनी किफायत होती है। इस तरह कार की बनिस्बत साइकिल की कुशलता साठ गुनी ज्यादा ठहरती है।

शहरों में कारें खड़ी करने के लिए आजकल बहुमंजिले कार-पार्क बन रहे हैं। एक कार पार्क करने को २२० वर्ग फुट जगह की जरूरत पड़ती है। इतनी जगह में साइकिलें कम से कम ३० तो खड़ी हो ही जाती हैं, साइकिल रैक में।

किसी पुरानी ४० पौंड वजन की साइकिल पर भी २०० पौंड तक वजन का आदमी घंटे में १०-१२ मील की रफ्तार से चल सकता है। अगर कोई दिन में रोज पांच घंटे साइकिल चलाये तो १५ सौ कैलारी खाना ज्यादा खायेगा। एक गैलन पेट्रोल से पैदा ऊर्जा खुराक की ४० हजार कैलारियों से पैदा ऊर्जा के बराबर होती है। इस हिसाब से एक गैलन पेट्रोल के बराबर खर्चे में साइकिल पर १५०० मील चला जा सकता है।

ध्यान देने की यह भी एक बात है कि तकरीबन सभी सड़कें ज्यादातर जमीन की ऊंचाई निचाई के अनुसार बनती हैं। इन पर लोग अपने वाहन औसतन ३॥ मील फी घंटे से ज्यादा रफ्तार से नहीं चला पाते।

आज यातायात की भीड़ बढ़ती जा रही है, प्रदूषण बढ़ रहा है, दुर्घटनाओं की संख्या बढ़ रही है और इन सबसे बढ़चढ़ कर तेजी से बढ़ रही है पेट्रोल की कीमत।

दुनिया के ऊर्जा तथा अन्य साधनों की हालत देखते हुए यह कभी नहीं हो पायेगा कि दुनिया में हर आदमी के पास कार हो जाये। साइकिल-युग का फिर से लौटना मध्यम-तकनीकी के महत्व बढ़ने की शुरुआत है। यह सभी लोगों को किसी भी समय चलने की आजादी मुहैया करती है।

—फिलिप बेकी

(सरला बदन द्वारा प्रस्तुत)

बम्बई के सर्वोदय मंडल सभाभवन में एक काव्य गोष्ठी में १४ भाषाओं के कवियों ने भाग लिया और जयप्रकाश नारायण की दीर्घ आयु की प्रार्थना की। पिनकिन त्रिवेदी के कविता पाठ से शुरू गोष्ठी में वंशीधर पड्या, हनुमन्त नायडू, बिजलीरानी चौधरी, कृष्णलाल बजाज, विभुदेव शास्त्री, जीवतराम सेतपाल, सुधाकर, अजित वेदी, नल्लन, पुरुषोत्तम छागनी, किशोरीरमण टंडन ने कविताएं पढ़ीं और संचालन सरस्वती कुमार 'दीपक' ने किया। सर्वोदय मंडल के मन्त्री नरोत्तमशाह ने जे.पी. की भूमिका पर प्रकाश डाला। आभार प्रदर्शन डेनियल माजगावकर ने किया।

अजातशत्रु में जयपुर, जोधपुर, अजमेर और उदयपुर के गांधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्रों के अध्यक्षों कार्यकर्ताओं तथा प्रमुख सदस्यों का दो दिवसीय सम्मेलन हुआ। प्रदेश गांधी निधि के अध्यक्ष पूर्णचन्द्र जैन, जवाहरलाल जैन, विष्णुदत्त शर्मा, शिवलाल पोरवाल, रिखबराज कर्णावट, महावीर..., नेमीचन्द्र जैन, डा. भरत तथा गजेन्द्र कुमार जैन ने तरुणों से सम्पर्क, आचार्यकुल गठन, स्वाध्याय योजना, साहित्य प्रसार, शान्ति आंदोलन और केन्द्रों की योजना तथा कार्यक्रम पर विचार किया। जयपुर केन्द्र के मन्त्री रामेश्वर विद्यार्थी ने आभार प्रदर्शन किया। अगला सम्मेलन उदयपुर में करना तय हुआ।

❖

कानपुर गांधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र की ओर से वर्तमान समस्याओं पर एक पांच सूत्री ज्ञापन राष्ट्रपति को सौंपा गया। इस पर सर्वोदय के अतिरिक्त भारतीय लोकदल, जनसंघ और संगठन कांग्रेस के प्रतिनिधियों ने भी हस्ताक्षर किये हैं।

वाराणसी में काशी विद्यापीठ के कुलपति दूधनाथ चतुर्वेदी की अध्यक्षता में गांधी आश्रम में आयोजित एक कार्यक्रम से सर्वोदय पक्ष का आरम्भ हुआ। इस आयोजन में उत्तरप्रदेश विधान सभा के अध्यक्ष वासुदेव सिंह ने बापू और बा की मूर्तियों को पुष्पहार पहनाये। गांधी आश्रम के व्यवस्थापक हरिभाई ने प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। पखवाड़े के दौरान हरिश्चन्द्र और सनातन धर्म महाविद्यालयों के छात्रों से संपर्क किया गया। बिहार आंदोलन के बारे में विचार-विमर्श चलता रहा तथा २२ अक्टूबर को एक मौन जुलूस निकाला गया।

❖

सर्वसेवा संघ की एक विज्ञप्ति के अनुसार अक्टूबर, ७४ के अन्त तक प्राप्त हो चुके उपवासदानों की संख्या ४ हजार से ऊपर ४०१८ हो गयी है। इस माह में गुजरात से सर्वाधिक ३६१ नये उपवासदान मिले और इससे इस राज्य का स्थान उपवासदान की दृष्टि से पहला हो गया। यहां से प्राप्त कुल उपवासदानों की संख्या ६२६ तक पहुंच गयी अक्टूबर में असम से ३, उत्तरप्रदेश से ११, कर्नाटक से ७, तमिलनाडु से ३६, पंजाब से ४, पश्चिमी बंगाल से १७, बिहार से ३, मध्यप्रदेश से ४, महाराष्ट्र से ११, राजस्थान से १, हरियाणा से २२, हिमाचलप्रदेश से २, अरुणाचल से १ तथा दिल्ली से २ उपवासदान मिले और ६६ उपवासदानों का एक साल के लिए नवीकरण हुआ।

देश की तरुणाई को आह्वान

जयप्रकाश नारायण

देश में उत्तरोत्तर बढ़ते हुए भ्रष्टाचार, घूसखोरी और सत्तालोलुपता से उत्पन्न लोकतंत्र के खतरों की ओर जनमानस का एवम् सत्तारूढ़ व्यक्तियों का ध्यान आकृष्ट करने हेतु गुजरात में युवकों को सम्बोधित करके दिये गये तीन ऐतिहासिक भाषणों का हिन्दी रूपान्तरण। पृष्ठ संख्या ४८ मूल्य १ रु० मात्र।

दादा के शब्दों में दादा

दादाधर्माधिकारी

यह कृति कु० विमला ठकार को अत्यन्त स्नेहयुक्त भावना से लिखे गये गये दादा के पत्रों की मंजूषा है। आन्दोलन के जल में डूबे हुए फिर भी कमल के समान उससे परे स्नेहशील दादा के निराले व्यक्तित्व की झाँकी पुस्तक में मिलती है। मूल्य रु० ६/ मात्र।

प्रभा स्मृति

सर्वोदय में बड़े ही आदर के साथ 'दीदी' शब्द से सम्बोधित प्रभावती बहन की पुण्य स्मृति में प्रकाशित ग्रंथ जो दुर्लभ चित्रों के ३२ पृष्ठों से युक्त है जिससे हमें अकालपुरुष गांधी की प्रेरणा, इतिहास पुरुष जे० पी० का जीवन संघर्ष और मौन साधिका प्रभावती बहन की पुण्य स्मृति मिलती है जो कभी भुलायी नहीं जा सकेगी। पृष्ठ ३०८ मूल्य ३० रुपये।

सर्व सेवा संघ प्रकाशन

राजघाट, वाराणसी-१ (उ. प्र.)

वार्षिक शुल्क—१५ रु० विदेश ३० रु० या ३५ शिलिंग या ५ डालर, एक अंक का मूल्य ३० पैसे।
प्रभाष जोशी द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं ए० जे० प्रिंटर्स, नई दिल्ली-१ में मुद्रित।

सर्व सेवा संघ का साप्ताहिक मुख पत्र
नई दिल्ली, सोमवार, २५ नवम्बर '७४

बढ़ती आबादी किस मोड़ पर !

(विशेष लेख पृष्ठ ८ पर)

पत्र और पत्रांश

राष्ट्र परिषद

यह अत्यन्त खेद का विषय है, कि जयप्रकाशजी और इन्दिराजी की भेंट में से लोगों की इष्ट फलश्रुति नहीं हुई। इसके विपरीत अनेक लोकहितेच्छु नागरिकों को यह आशका है कि तनाव कुछ बढ ही गया। देश की दृष्टि से यह स्थिति चिंताजनक है। ऐसे अवसरों पर हठात् मालवीय-सप्रू-जयकर जैसे उदारमना, सत्प्रवृत्त तथा शांतिनिष्ठ मध्यस्थों का का स्मरण हुए बिना नहीं रहता। उनके कद के जनहितपरायण व्यक्ति आज आख चारो तरफ व्यर्थ खोजती है।

जयप्रकाशजी ने दिल्ली में राजनैतिक नेताओं का सम्मेलन आयोजित किया है। हमारे देश में इसके लिए सबसे अधिक उपयुक्त व्यक्ति अब तक वे ही रहे। इस प्रकार के सम्मेलन उन्होंने इससे पहले भी कराये हैं। परन्तु, दुर्भाग्यवश शासन और सत्तारूढ पक्ष ने उन्हें अपना प्रतिपक्षी माना है। अतएव यह सम्मेलन मुख्यरूप से सरकार विरोधी दलों का और शक्तियों का ही होने की सभावना है। सत्तारूढ कांग्रेस पक्ष के प्रतिनिधि बहुधा उसमे सम्मिलित नहीं होगे। यदि हो सकें, तो वह सधि की दिशा मे एक बहुत बडा कदम समझा जायेगा। बिहार आदोलन की गतिविधि गत छह महीनो तक देखने के बाद मैं इस परिणाम पर पहुंचा हू कि दडशक्ति और हिंसा के बल से यदि वह कुछ समय के लिए भी दबा दिया जाये तो लोकमत्ता की दृष्टि से अपरिमित हानि होगी। आज देश मे पारस्परिक विश्वास के अभाव का सकट है। लोगो का न एक दूसरे में विश्वास है और न शासकों में। राजनैतिक दलों मे तात्कालिक समान स्वार्थ या समान विरोधो के आधार पर अस्थायी सधियां हो जाती हैं, परन्तु इनके द्वारा लोकशक्ति या लोकनीति का विकास नही हो सकता। जयप्रकाशजी का नेतृत्व इस दृष्टि से निर्दोष है। उसमे कई भावरूप संभावनाए निहित हैं। इसका कारण यह है कि जयप्रकाशजी का अपना लोकहित से भिन्न या विशिष्ट प्रयोजन अथवा स्वार्थ नहीं है। इस समय वे लोगो के विश्वास के प्रतीक हैं। उनकी शक्ति यदि क्षीण होती है, तो लोगों के आत्मप्रत्यय की क्षति होती है।

दूसरे पक्ष मे इन्दिराजी का व्यक्तित्व अपनी तरह से अद्वितीय है। परराष्ट्रीय सबधो मे और अन्त:क्षेत्रीय सम्बन्धो मे उनकी भूमिका राष्ट्रीय और भारतीय रही है। उनकी परराष्ट्र-नीति और अन्तर्भारतीय नीति के पीछे यदि लोकशक्ति का अधिष्ठान नही होगा तो वे नीतियां निष्फल और प्रभावहीन सिद्ध होगी। इस दृष्टि से उन्हें उस लोकशक्ति और लोकप्रत्यय की अनिवार्य रूप से आवश्यकता है, जिसकी जयप्रकाशजी प्रतिमूर्ति हैं।

साराश यह कि यदि हम निरकुश सत्तावाद और उच्छृखल अराजकता के सकटों से बचना चाहते हैं तो लोकतत्र के शुद्धिकरण के प्रयोगों मे इन्दिराजी तथा जयप्रकाशजी का सहयोग नितांत आवश्यक है। तस्कर-विरोधी अभियान द्वारा इन्दिराजी ने जिस प्रक्रिया का उपक्रम किया है उसकी पूर्ति के लिए जयप्रकाशजी द्वारा किये गये शासनगत भ्रष्टाचार-विरोधी उपक्रम की ही आवश्यकता है। अतएव लोकहित की दृष्टि से जयप्रकाश-इन्दिरा के सयुक्त प्रयासों की वर्तमान परिस्थिति मे उत्कठा है। मेरी समझ मे इस सदर्भ मे हमारे सम्माननीय मित्र जैनेन्द्रजी का राष्ट्रपरिषद का सुझाव बहुत ही उपयुक्त और समयानुकूल है। उनके सुझाव मे पिछले चुनाव के आधार पर परिषद मे प्रतिनिधित्व की योजना है अर्थात् गत चुनाव मे जिस दल को जितने प्रतिशत मत मिले हो उनके अनुपात मे लोकपरिषद् मे प्रतिनिधि भेजने का उसे, अधिकार हो। जो प्रतिशत शेष रह जायेगा उसके अनुपात मे नागरिकों के प्रतिनिधि निमन्त्रित किये जायेंगे।

मैंने केवल स्थूल रूपरेखा का निर्देश किया है। उसकी तफसील जैनेंद्रजी ने अपने लेख मे (सर्वोदय मे) प्रकाशित की है। मेरी अल्पस्य गति के अनुसार इस अवसर पर जयप्रकाशजी के द्वारा आयोजित राजनैतिक सम्मेलन की अपेक्षा जैनेंद्रजी द्वारा प्रस्तावित राष्ट्र परिषद् अधिक उपयोगी सिद्ध होगी।

जबलपुर —दादा धर्माधिकारी

बीता सप्ताह

(शुक्रवार १५ से गुरुवार २१ नवम्बर, ७४ तक)

देश

शुक्र—जे पी. पर प्रहार के लिए सरकार द्वारा लोकसभा मे क्षमायाचना

शनि—मीसा मे गिरफ्तारी के खिलाफ चुनौती पर राष्ट्रपति का अध्यादेश

रवि—वायु सेवा समझौते के लिए भारत-पाक वार्ता शुरू

सोम—चुनाव लडने की प्रधानमन्त्री को चुनौती जे. पी. द्वारा मजूर

मगल—जे. पी—इदिरा वार्ता के लिए नये सिरे से पहल

बुध—जे. पी का दिल्ली आगमन, ५० कांग्रेसी सगद सदस्यों की जे. पी. से भेंट और उनके प्रति सदभाव तथा पिछल घटनाओं पर खेद प्रदर्शन

गुरु—जे पी. की विरोधी नेताओं से भेंट

विदेश

शुक्र—चीन मे नया विदेश मन्त्री नियुक्त

शनि—दक्षिणपूर्वी एशिया के आर्थिक विकास पर मनीला बैठक समाप्त

रवि—मध्य-पूर्व मे गम्भीर स्थिति

सोम—विदेश मन्त्री चव्हाण श्रीलंका मे

मगल—टोकियो में फोर्ड-तनाका वार्ता

बुध—नैरोबी मे विमान दुर्घटना, ६६ मृत

गुरु—फोर्ड से वार्ता को ब्रेजनेव साइबेरिया रवाना

अगले अंक में

जे० पी० की दिल्ली यात्रा पर विशेष सामग्री

भूदान-यज्ञ

सम्पादक
राममूर्ति : भवानी प्रसाद मिश्र
कार्यकारी सम्पादक : शारदा पाठक

वर्ष २१ | २५ नवम्बर, '७४ | अंक ८

१६ राजघाट, गांधी स्मारक निधि, नई दिल्ली-११०००१

बिहार सरकार का निन्दनीय काम

पटना में ४ नवम्बर को श्री जयप्रकाश नारायण ने जिस शांतिपूर्ण जुलूस का नेतृत्व किया उस पर पुलिस ने लाठियाँ बरसायीं और हमने अखबारों में पढ़ा कि श्री जयप्रकाशनारायण पर भी लाठी का प्रहार किया गया और उन्हें चोटें लगीं। इस समाचार को पढ़कर हम सब लोगों को गंभीर पीड़ा हुई है। बिहार सरकार का यह काम निन्दनीय है और इसकी कड़ी भर्त्सना की जानी चाहिए।

यद्यपि श्री जयप्रकाश के प्रति मेरे मन में जितना हो सकता है उतना आदर है फिर भी मैं स्वीकार करता हूं कि उनके बिहार आंदोलन के कुछ पहलू मुझे उचित नहीं लगते। उदाहरण के लिए मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि जिस तरह गुजरात में विधानसभा भंग होने से जनता की समस्याएं हल नहीं हुईं, उसी प्रकार बिहार विधानसभा के भंग होने से भी समस्याओं के हल होने की संभावना नहीं है। इसके सिवाय मैं घेराव, बन्द और एकदम साम्प्रदायिक दलों से लगाकर दक्षिणपंथी दलों तक के सहयोग को भी अनुचित मानता हूं क्योंकि उनके मन में सर्वोदय सिद्धान्तों के प्रति किसी प्रकार की सच्ची निष्ठा नहीं है। फिर भी यह तो कहना ही पड़ेगा, इस विषय में दो मत हो ही नहीं सकते कि जे०पी० ने चुनाव और शिक्षा पद्धति में सुधारों, शराबबन्दी और ग्राम स्वराज्य की माँग के साथ-साथ बढ़ती हुई कीमतों और ऊँचे स्तरों में बढ़ते हुए भ्रष्टाचार के खिलाफ जो आवाज उठायी है वह बिल्कुल सही है। यह बात एकदम साफ है कि एकाध-दो छिटपुट घटनाओं को छोड़ दें तो बिहार का आंदोलन पूरी तरह शांतिपूर्ण और अहिंसक रहा है और इसमें भी कोई सन्देह नहीं है कि अगर जे०पी० ने हस्तक्षेप न किया होता तो बिहार में जबरदस्त खून-खराबी और हिंसा फैल जाती।

हम इस बात से इनकार नहीं करते कि राज्य सरकार और सत्तारूढ़ दल को इस बात का पूरा-पूरा हक है कि वे जे०पी० द्वारा दी गयी चुनौती का राजनैतिक और सैद्धान्तिक स्तरों पर विरोध करें, किन्तु पुलिस और सेना की सहायता से किसी भी शांतिपूर्ण आंदोलन को कुचलने की कोशिश जनतंत्र विरोधी तो है ही, जबरदस्त रूप से बर्बर और असभ्य भी है।

—श्रीमन्नारायण

चार दिन में दो अध्यादेश

हमारे नये राष्ट्रपति के विषय में आम जनता की आरम्भ से ही यह धारणा रही कि प्रधानमन्त्री की हद तक वे हमारे पुराने राष्ट्रपति श्री वी० वी० गिरि से भी अधिक आज्ञाकारी सिद्ध होंगे। जनता की यह धारणा कदम-कदम पर सही निकल रही है। उन्होंने राष्ट्रपति होने के कुछ ही दिनों बाद सुप्रीम कोर्ट के एक निर्णय को ध्यान में रखते हुए जो अध्यादेश निकाला उसकी स्याही अभी ठंडी भी नहीं पड़ पायी थी कि उससे भी बढ़कर दूसरा अध्यादेश हमारे सामने आ गया। पहले अध्यादेश के विषय में पाठकों को स्मरण होगा कि सुप्रीम कोर्ट ने कांग्रेस के समद सदस्य श्री अमरनाथ चावला के विरोध में यह निर्णय दिया था कि उन्होंने चुनावों में भ्रष्ट तरीकों से काम लिया है और जितने खर्च की अनुमति है चुनाव में उससे अधिक खर्च किया है। यह एक ऐसा निर्णय था जिसका असर कितने ही कांग्रेस के चुने हुए सदस्यों पर पड़ सकता था। स्वयं प्रधानमंत्री के विरुद्ध भी याचिका न्यायालय में पेश थी। अध्यादेश निकला कि चुनाव में होनेवाले खर्च के आधार पर किसी का चुनाव रद्द नहीं किया जा सकता। अब ऐसे खर्च की कोई सीमा नहीं मानी जायेगी। सभी लोगों ने इस अध्यादेश की तीव्र भर्त्सना की। किन्तु चाहे जितनी तीव्र भर्त्सना क्यों न की जाये, स्वार्थ के आगे वह कुछ गिनी नहीं जाती। भर्त्सना पर न राष्ट्रपति ने ध्यान दिया न संसद में कांग्रेस के बहुमत ने।

इसके बाद मीसा में लोग धड़ा-धड़ पकड़े जा रहे थे और उसकी देश-विदेश सब जगह आलोचना हो रही थी। कुछ लोग इस प्रकार की गिरफ्तारी के विरोध में अपील करके छूट भी गये। मीसा में जिन लोगों को गिरफ्तार किया जा रहा है उनमें से अनेक लोग तस्करी के अभियोग में गिरफ्तार हुए हैं। उन्होंने धमकी दी थी कि हम अदालत में आयेंगे और वहां सरकार का पर्दाफाश करेंगे। सरकार का पर्दा यों तो जितना फाश किया जा सकता है उससे ज्यादा फाश हो है, किन्तु इस पर्दाफाशी पर अदालत की मुहर लग जाये, यह बेशक सरकार के लिए परेशानी का कारण बन सकता था। इसलिए अब यह अध्यादेश जारी किया गया है कि मीसा में गिरफ्तारशुदा लोग अदालत में किसी प्रकार का प्रार्थनापत्र पेश नहीं कर सकते। यही नहीं जिन तस्करों के मामले अदालतों में विचाराधीन हैं वे भी इस आदेश की अवधि तक स्थगित रहेंगे और यह आदेश जब तक आपातकालीन स्थिति के समाप्त होने की घोषणा नहीं की जाती, तब तक लागू रहेगा। आपातकालीन स्थिति कब की समाप्त घोषित कर देनी चाहिए थी, किन्तु वह जारी है और जब तक सरकार की मर्जी है तब तक जारी रहेगी।

मीसा से सम्बन्धित यह अध्यादेश यों तो अपने आपमें विधि-सम्मत शासन के सिर पर एक जबरदस्त प्रहार है, किन्तु सबसे बड़ी

बात जो इस अध्यादेश ने लोगों के सामने साफ कर दी है, वह सरकार का संविधान के प्रति अवज्ञा-भाव। इसके पहले भी सरकार अध्यादेशों के द्वारा संविधान का सुधार करती रही है, किन्तु अबकी बार तो उसने सीधे-सीधे संविधान का उल्लंघन ही किया है। संविधान की धारा ३६५ इस अध्यादेश से निरर्थक शब्दों का समूह बनकर रह गया है। उक्त धारा के अनुसार जनता का यह अधिकार कि किसी भी व्यक्ति को कारण बताये बिना न कैद किया जा सकता है, न उसके शरीर को कोई नुकसान पहुँचाया जा सकता है किसी मतलब का नहीं रहा। यह भी नहीं कहा जा सकता कि अध्यादेश का प्रयोग केवल उन्हीं लोगों के प्रति किया जायेगा जो तस्करी के अपराध के प्रति गिरफ्तार हैं। तस्करी के अपराध में केवल पाच सौ लोग गिरफ्तार हैं जबकि मीसा के अन्तर्गत गिरफ्तारशुदा कुल लोगों की तादाद १६८२५ कही जाती है। सभी जानते हैं कि मीसा के अन्तर्गत जो गिरफ्तार हैं वे जेलों में राजा की तरह से रह रहे हैं, इसलिए इस अध्यादेश का वास्तविक प्रहार तो उन राजनैतिक बन्दियों पर हुआ है जो कुशासन के खिलाफ अपनी आवाज उठा रहे थे। अंग्रेजी कहावत के मुताबिक इस तरह का एक-एक कदम कुशासन के कफन में एक-एक कील है।

—भवानी प्रसाद मिश्र

++

योजनाओं की दिशा में योग्य परिवर्तन हो

११ नवम्बर, ७४ के अंग्रेजी दैनिक 'टाइम्स आफ इण्डिया' में जो सम्पादकीय है, उसमे रिजर्व बैंक के भूतपूर्व गवर्नर तथा वर्तमान जम्मू-काश्मीर के राज्यपाल लक्ष्मीकान्त झा के इस सुझाव का अनुमोदन किया गया है कि देश में बढ़ती महंगाई का कारण उन वस्तुओं [के उत्]पादन की कमी है, जो लोगों की रोजमर्रा आवश्यकता की हैं। अब तक यह माना जाता रहा है कि मुद्रा-स्फीति इस कारण होती है कि देश के कुल उत्पादन का और नोटों के प्रचलन के बीच का अनुपात बढ़ जाता है। परन्तु श्री झा का यह कहना है कि मूल आवश्यकताओं की पूर्ति जब नहीं हो पाती तो उसका असर ज्यादा बुरा होता है। जिन वर्षों में अनाज की फसल अच्छी होती है उस समय दूसरी बातों के रहते हुए भी महंगाई नहीं बढ़ती दिखती। इसलिए उनका यह अनुमान है कि जिस भी देश में पूंजी पर्याप्त मात्रा में नहीं है उसे उसका प्रयोग आवश्यकताओं की पूर्ति वाले उद्योगों में प्रथमतः करना चाहिए। इसलिए खेती तथा अन्य साधनों की ओर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है जो कि आज योजनाओं में नहीं है। आज तो पूंजी ऐसे उद्योगों में लगाने की सिफारिश की जा रही है, जो बड़े पैमाने के हैं और जिनसे यांत्रिक वस्तुओं का उत्पादन बढ़ेगा। पूंजी अधिक लगेगी और उत्पादन क्षम होने में समय भी अधिक लगता है। इसलिए एक प्रकार से पूरी अर्थ-नीति को ग्रामोन्मुख बनाने की उनकी सिफारिश है।
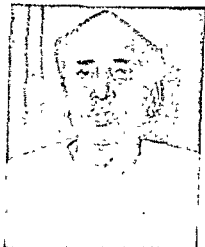
देवेन्द्र कुमार

इस पत्र में मध्यप्रदेश के अर्थशास्त्र सम्मेलन की कार्रवाई में देश के दो प्रमुख अर्थशास्त्रियों, योजना आयोग के भूतपूर्व सदस्य डा० मिनहास और पटना के डा० ब्रह्मानन्द ने भी बड़े जोरदार शब्दों में भारी उद्योगों के पीछे अधिक जोर देने की नीति का विरोध किया है। डा० मिनहास ने कहा कि स्वावलम्बन के लिए आयोजन, आज की आवश्यकताओं और इस हेतु महानगरों में बड़े उद्योगों और केन्द्रित उत्पादन का जो माडल विकसित किया जा रहा है, उसके स्थान पर गावों के सर्वांगीण विकास, अधिकाधिक रोजगारी की क्षमता बनाना, न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति और विकेन्द्रित उद्योग आज की मांग हैं। उन्होंने कहा कि हम गरीबी तब तक नहीं मिटा सकते हैं जब तक हम सम[स्याओं] में बुनियादी परिवर्तन नहीं लायेंगे और स[ाधारण] आदमी की जो इच्छा है उसका ध्यान योजनाओं में नहीं होगा।

डा० मिनहास ने विनोबाजी के [...] विचार के अनुरूप ही अपना विचार र[खा] जिसमें किसान से लेन-देन अनाज में कि[या] जाये, यह सिफारिश थी। डा० मिनहास [ने] सुझाया है कि किसानों से व्यापार के लि[ए] अलग खाद्य-मुद्रा बनायी जाये, जो उन [के] अनाज के आधार पर लेन-देन में काम में [लायी] जाये। उन्हें जो सामान लेनी के लिए लेना होता है और जो लगान आदि देना होता वह सब उनकी मुद्रा में दिया लिया जाये उनके अनाज के बदले में उन्हें खाद्यमुद्रा [दी] जाये। इस पद्धति से कई लाभ मिल सकेंगे।

डा० ब्रह्मानन्द ने सवाल रखा कि आ[ज] जो बड़े उद्योगों को बढ़ाने का तरीका उसमें धीरे-धीरे बड़े उद्योगों को, बड़ी मशी[नें] बनाने में लगाया जा रहा है। अगर यही जा[री] रहा तो दैनिक आवश्यकताओं को बनाने [का] काम कब शुरू होगा?

इन तीन अर्थ-शास्त्रियों की बात शीघ्र[ाति]शीघ्र समझी जाये और योजनाओं की दिशा में योग्य परिवर्तन किया जाये।

—देवेन्द्र कुमार

चुभने लगे हैं दृश्य

"आवाज़ें काटने लगी हैं
आँखें अंधता की याचना में हैं
दुनिया सुन्न हुई जा रही है
मुझे अपना शहर अपरिचित सा लगने लगा है
काले दंतों के पदचाप गूँजने लगे हैं
चिताएँ मरघटों से सरककर
घरों के दरवाजों तक आ गयी हैं
सुबह सूरज के निकलने पर
चिड़ियों के गीत बरकरार नहीं सुनते
एक मुस्तकिल मौन
कुहरे सा गिरने लगता है
मंदिरों में अधटूटे शंख और घंटे यतीम से पड़े हैं
आयातित पैशाची संगीत के आतंक में
प्रभाती क्षयग्रस्त है
अकस्मात् अपनी नींद टूट जाती है
बड़ी लाचारी उदासी से निहारता हूँ
दुर्गन्धित वमन की तरह सड़क ने
एक जुलूस उगल दिया
ऐसा कभी भी हो जाता है
मेरे शहर की सड़कें, गली, कूचे
इसके आदी हो चुके हैं
गभाजीवी बेकार गोबर के छोत से
इकट्ठे हो सकते हैं
किसी भी चौराहे पर
माइक दहाड़ सकता है
सर्वथा तटस्थ।
स्तब्ध मौन
नारों के धमाकों,
धूएँ की घोंट में
खड़खड़ बिखर गया
अर्गला खुल गयी यांत्रिक कुहराम की
अर्थहीन हल्ला
मोघम शब्द
कोई भी नेता नहीं
महज़ रिहर्सल
रंग बिरंगे चीथड़ों के झंडे
अलग अलग हाथों में
कितने मत
कितने वाद
आदमखोर पड़े
झंडों की जगह क्यों नहीं थामते—
मशीनगनें व संगीनें
एकदम से बारूद का महारव क्यों नहीं उठाते
क्यों फैसला नहीं करते
सम्मोहित से काष्ठवत
जिस्म अकड़ाये चले जा रहे हैं
आसपास
अगल बगल से
कोई सरोकार नहीं है
संवेदन शून्य
असंपृक्त
शवयात्रा
जिंदा लाशें, हिप्नाटिज्म
ये दधीचि से क्यों नहीं जुड़ते?
परम्पराओं से कटे लोग
कितने दयनीय हो जाते हैं
समझाया गया है इन्हें
पढ़ाया गया इन्हें
अतीत सिर्फ जवाहरलाल है
. . . . . —
'कबिरा खड़ा बाजार में'
जयप्रकाश बाजार में खड़ा है
विश्वकर्मा के हाथ आतुर हैं
चेतन अमोघ सृजन के लिए
कसमसा रही है
इरादे करो
मुक्त हो जाओ
आधारहीन आस्थाओं की जकड़न से
सौंप दो बचे खुचे पंजर
ढलने दो वक्त
प्रतीक्षा ऐयाशी है
संकल्प समय को कदमों में लाकर
पटक देते हैं
कब तक नंगा करोगे कमरों आंगनों को
दैन्य भीतर झाँकने लगे हैं।

—आनन्दी सहाय शुक्ल

सुरेश ठाकरान

यह कैसी दलोत्तीर्णता ?

संविधान में देश का राष्ट्रपति दलोत्तीर्ण माना गया है। देश की आर्थिक, राजनीतिक और अन्य घटनेवाली घटनाओं पर उनकी निष्पक्ष राय प्रकट होती है। यह आशा है तो उनमें राजनीतिक छल-छन्द की धूल नहीं उड़ती। उड़नी भी नहीं चाहिए। कहने का तात्पर्य है, राष्ट्रपति की सोच। देश में निष्पक्ष रहता ही है। ... पद आज से नहीं कभी पहले से प्रधान मंत्री का रबर स्टाम्प माना जाने लगा। ... चाहिए कि इस मामले में राष्ट्रपति की चुप्पी ज्यादा सहायक रही है...इसलिए कुछ आश्चर्य ही है कि दलोत्तीर्ण पर दल नेता का पूरा प्रभाव। यह पद आज्ञाकारी बना है और सत्ताधारी दल का अहसानमंद हो गया है, गद्दी मिलने के कारण।

भूतपूर्व राष्ट्रपति वराह व्यंकट गिरि ने अपने कार्यकाल के अन्तिम दिनों जब कुछ ऐसे भाषण दिये जो सरकार का सत्ता वहन की भाषा में बंधे थे, तब सरकार बौखला आयी थी, सम्पूर्ण दल और स्वयं प्रधान मंत्री ने उनकी 'कृतघ्नता' पर आश्चर्य प्रकट किया होगा। लेकिन बातें थी सच्ची। सहज ही राष्ट्रपति महोदय अपनी दलोत्तीर्णता का परिचय दे गये थे। दो एक तस्कर जब जेल में आये तो अखबारों ने छापा कि गिरि साहब ने इस विषय में अपनी जुबान साल पहले ही खोली थी। एक साल पहले यह बात सरकार की समझ में नहीं आयी। इस तथ्य से लगता है राष्ट्रपति अपने पद का प्रयोग ठीक ढंग से कर तो सकता है, लेकिन उसे त्याग और खासकर सैर-सपाटों के त्याग की जरूरत होगी। इसे महोदय की पत्नी और स्वयं वे कभी स्वीकार नहीं करेंगे। आज इस पद ने अपना महत्त्व सब दलोत्तीर्ण जता दिया है। ऐसी भी क्या तटस्थता कि देश जलता रहे और राष्ट्रपति महोदय विदेश मामलों में विदेश यात्रा पर रहें। एक साल पहले जब गिरि ने तस्करों के विषय में सरकार को सचेत किया था तो कार्रवाई एक साल नहीं दो-तीन साल बाद करने की आवश्यकता क्यों महसूस हुई ?

वर्तमान राष्ट्रपति श्री अहमद ने हाल ही इन्दौर शहर में अपने एक भाषण में कहा कि सरकार जनता की बुनियादी जरूरतें पूरी करे। उन्होंने मांग की कि सरकार देशवासियों की रोटी-कपड़ा और मकान जैसी जरूरी आवश्यकताएं पूरी करे। यह भाषा रिपोर्टरों ने छापी, मन भर कर छापी। सरकारी नुमाइन्दों के बहरा आये कानों में से निकल भी गयी, कुछ हुआ नहीं। क्योंकि यही तो सत्तारूढ़ दल कहता है। हर पांच वर्षों बाद इस विषय का 'गरीबी हटाओ' किस्मी नारा उठता तो है। फिर राष्ट्रपति महोदय ने कौन नयी बात कह दी ? ... जनता प्रसन्न हुआ कि उन्होंने अपने दल ... होने का फर्ज अदा किया। ... पर कुछ सम्पन्नों की ताली बजवा ... राष्ट्रपति के वहां देश सम्पन्न हो गया और नारी उसकी व्यवस्था।

७ महीने पूर्व ... आन्दोलन क्यों खड़ा हुआ ? प्रधान मंत्री न बहुत दिनों बाद इससे सीधी टक्कर लेने की बात कह दी और कहा कि गुजरात में मुझसे भूल हुई। उनके सहयोगी तो आन्दोलन की परिभाषा कर ही रहे थे बोलते थे प्रतिक्रियावादी हैं—विरोधी हैं। प्रश्न है सोच कि जिस देश की जनता सरकार के लिए प्रतिक्रियावादी बन आये, विरोधी बन आये उस सरकार को क्या स्वयं अपने गद्दी से चिपटे रहने पर शर्म नहीं आ रही ? जनता की दिली भावना को कांग्रेस कम्युनिस्ट की किराये की रैलियां कब तक ठुकराती रहेंगी और राष्ट्रपति महोदय जो कल तक स्थिति भी सम्भालने लायक नहीं थे ३४० कमरों के दुर्ग में जो एक समाजवादी देश के महान में खड़ा है, अपना मुंह छिपाये बैठे रहेंगे ?

जनता का नेता और जनता झूठी है ?

जयप्रकाशजी पंजाब गये—लाखों की भीड़ थी। सौदे की भीड़ नहीं थी। लाठ भालों से लैस नहीं शांत भीड़ थी जिसके पास सत्य का अस्त्र था। जहां रावण की तलवार टूट गयी थी। जयप्रकाशजी दिल्ली आये—यहां का हाल जनता जानती ही है। वे जानते हैं जो कांग्रेस की रैली में करीब थे ६० मिनट की 'फारमैलिटी' भी प्रधान मंत्री ने अदा की। उस दिन पीछे से इस भाग पर और दृढ़ हो आयीं। बिहार से प्रमुख नेताओं का निष्कासन तो कर ही दिया गया। क्यों, इसलिए कि सरकार को उनका डर हो आया। यह आन्दोलन की सफलता ही है। ४ नवम्बर के पटना प्रदर्शन में जे० पी० पर लाठी से घातक प्रहार किये गये—सरकार शायद जानती नहीं कि मारनेवाले से बचानेवाला ज्यादा मजबूत होता है। संयोग नहीं तो और क्या कहूं कि बिहार से निष्कासित जनसंघ नेता नानाजी देशमुख वहां आ पहुंचे। रक्षा हुई और खूब हुई—सरकार खड़ी देखती रह गयी। अफसोस उन्हें कम नहीं हुआ, जे० पी० के जिन्दा बच जाने का। यह प्रहार जे० पी० पर कम जनता पर ज्यादा है। जे० पी० मरे नहीं,—*जय कभी मरती नहीं, प्रकाश कभी बुझता नहीं।* यह कटु सत्य है। हमारे सत्तारूढ़ दल को यह रूढ़िवादी लगे तो लगे, लिखनेवाला तो लिख गया, मेरे प्रजातंत्रीय देश के राष्ट्रपति तब भी चुप हैं। कटे पर नमक का काम कर रहे हैं। कुंभकरण की नींद है, जो केवल दौरे के समय खुलती है।

इतना सब घटने पर भी हम उनको दलोत्तीर्ण मानें ?

अहमद साहब अबभी चुप हैं और साफ पक्ष ले रहे हैं। उनकी चुप्पी का राज कम से कम पांच वर्षों तक तो खुलेगा नहीं। फिर यदि वे तटस्थ होकर न बैठा दिये गये तब शायद किसी 'हाजी मस्तान' की ओर उंगली उठाकर कहेंगे 'इसे पकड़ो' जमाखोरी मुनाफाखोरी, भ्रष्टाचार सब मिटना चाहिए। और यदि वे किसी संस्था से संबद्ध कर दिये

गये तो यह भी संभव नहीं। अजीब परिस्थिति है यह। यह देश लोकतंत्र का नाम लेकर कहाँ जाना चाहता है? नेता इसके किस भाषा में चिल्लाते हैं? वह भाषा उनकी अधीनता स्वीकार कर ही समझ में आ सकती है। कम्युनिस्ट इस भाषा के मास्टर बना दिये गये हैं। देखने सोचने पर आलहनों के चश्मे लगाने की आवश्यकता होगी और तब देश विकासोन्मुख दीखेगा।

उत्तरप्रदेश में चुनाव हुए। नहीं, चुनाव नहीं यों ही ढोंग रचा गया। कुछ भीड़ इकट्ठा हुई, मत देने को। और कहा गया भीड़ ने सर्वसम्मति से भूखे होकर भूखा रखनेवालों को राजगद्दी पर बैठा दिया है। चौधरी चरणसिंह बहुमत के प्रति आशावादी थे। पर सरकार द्वारा बनाये गये 'कम्प्यूटरों' की गिनती रुपयों, शराब की बोतलों और सरकारी साँडों की देख में चले तो चौधरी साहब क्या कर सकते हैं? राष्ट्रपति पद पर आसीन व्यक्तित्व तब भी शान्त रहा। शायद उस समय श्रीमान् किसी प्रदेश की यात्रा पर थे। ऐसी छिटपुट घटनाओं से जो मात्र लोकतंत्र पर चोट हैं, एक दलोत्तीर्ण व्यक्ति को क्या लेना?

भाषा को बढ़ाना नहीं है। कहना इतना है और यह काफी है। एक पुस्तक छपी—*एक तथ्य प्रकाशित हुआ, दूसरा हुआ। लगता है कि देश को तथ्यों पर छोड़ने की आदत बन गयी है।* अब भारत का नहीं राजनीति का ज्यादा बना दिया गया है। लेखकों की समझ में अब कुछ आया है और इसमें वे नफरत मानने पर उतर आये हैं। फणीश्वर नाथ 'रेणु', भवानी प्रसाद मिश्र, जैनेन्द्रकुमार, दादा धर्माधिकारी जैसे अनेक उठे हैं। वक्तव्य का एक भाग अदायगी के रूप में पेश हुआ है। ये सब व्यक्ति भी तो दलोत्तीर्ण ही हैं। जनता के आदमी हैं। निष्पक्ष हैं। सर्वोदय को दल का दर्जा देना भारी भूल है। कुछ लोग जो मुठभेड़ चाहते हैं सर्वोदय को भी दल का दर्जा देने लगे हैं। *मानना चाहिए इनसे बचना* है और सीधे खड़े होना है।

*जे०पी० के आन्दोलन के विषय में बुद्धि*जीवी वर्ग से कुछ उपजा है। विचार आये हैं। गुजरात से चलकर बवण्डर जब बिहार पहुँचा तो प्रतिक्रिया कुछ निराली है। बिहार में है तो आये दिन विचार बदले हैं। क्या होगा? यह साधारण जन पूछता है, जो भारत की सकरी गलियों का वासी है। समझे जाने वाले बुद्धिजीवी अपने-अपने मत देते हैं। कर्त्तव्य-निष्ठा का कुछ तो भाग सदा हर *अदना आदमी भी कर ही रहा है।* कोई खिंचाव या भाईचारे की बात यहाँ नहीं है। देश की बात है। देश के भविष्य की बात है।

आध्यात्मिक पुरुष विनोबाजी ने जिनका स्तर अब राष्ट्रीय न रहकर अन्तर्राष्ट्रीय बना है आन्दोलन को सत्य, अहिंसा और संयम की मर्यादाओं में बाँधा है। कहना होगा आध्यात्मिक पुरुष की दृष्टि तीखी पड़ी है जिसे आन्दोलन ने स्वीकार किया है। अर्थात् एक *तटस्थ संत ने भी आन्दोलन पर पक्षधर में* प्रतिक्रिया प्रकट की है। लेकिन राष्ट्रपति जो चाहे जैसा भी है, अदना मैं उसे नहीं कह रहा, देश की परिस्थितियों को अपने हाल पर छोड़ रहे हैं। यह स्वराज है, शासन है। यह अपनी जुबां पर [illegible] ताला लगाये हैं। केवल सरकार से [illegible] शब्दों की रोटी, कपड़ा और [illegible] की कोशिश कर रहे हैं? क्या [illegible] पाँच साल तक उनके होंठ नहीं [illegible]? उस कथा की व्यथा को शब्द मिलने ही चाहिए। कांग्रेस ज्यों-*ज्यों शासन की जिम्मेदारी समझती जा रही है उतनी ही गाँधीजी के विचार, उनकी नीतियों से अलग हटती जा रही है।*

यों देश को काली राजनीति पर छोड़ बैठना बुद्धिमानी नहीं होगी। इस संबंध में राष्ट्रपति को अपना उत्तरदायित्व समझना चाहिए। आज देश अटक गया है। उधर जे०पी० बिहार में विधानसभा भंग पर डटे हैं इधर प्रधान मंत्री ने उसे अपनी 'प्रिस्टेज' का प्रश्न समझा है। हाथ ठहर गये हैं दिमाग बहक गये हैं। करना धरना कुछ रह नहीं गया है। इस समय समानान्तर सरकार प्रयोग की जननेता जे०पी० ने ठान ली तो कोई *आश्चर्य नहीं किया जाना चाहिए।* सरकार भी इस तरह खून-खराबे पर उतर आ सकती है। *हिंसा करनेवाले घातक हथियारों का* कोटा उनके पास खूब मात्रा में है, भले ही वह अपनी जनता को दो जून की रोटी के साधन जुटा सके या नहीं। घिनौने काण्ड करने के बाद ठहाका लगाने की बात नयी नहीं है।

जे०पी० के पास युवा शक्ति है जो जल्द *परिणाम और तुरत-फुरत एक्शन माँगती है।* ऐसी स्थिति में युवा शक्ति गलती भी खा सकती है और आन्दोलन से हाथ खींच ले सकती है। ऐसा होना तो नहीं चाहिए, लेकिन कौन जाने कल क्या होगा। युवाओं की स्थिति की परख का ज्ञान हो आया तो काम बन सकता है। बीच में घुस आये हिंसक तत्वों पर निर्भर पानी है। दलों से सतर्क रहना होगा। वरना सब करा-कराया पानी भी बन सकता है। *'कम्पलशन क्विट' करने की बात सामने* रखने से जनता और आन्दोलनकारियों को लाभ पहुँचा है सदा, और आज भी 'कम्पलशन क्विट' का मुद्दा खड़ा होना चाहिए।

हर व्यक्ति से गलती हो सकती है। विनोबाजी ने जे०पी० के विषय में पहले ही कहा है, 'सत्यनिष्ठ व्यक्ति है, उसे प्रयोग करने देना है। सत्यनिष्ठ होने के कारण ही वह जो गलती करेगा, मान लेगा। उसके *प्रयोग में से कुछ निकले यही आशा करनी* चाहिए। इसलिए सत्य का साथ देना है। जो *नेतृत्व चला आया है, चलता रहना चाहिए।'*

जिस दकी अभी स्थिति की मैं बात कर आया हूँ उसमें विश्राम आये उसके लिए मैं प्रधानमंत्री को *हस्तक्षेप* करने को नहीं कहना चाहता, क्योंकि उन्होंने तो सीधे संघर्ष की *बात कह ही दी है जिससे अपने दल को ही* बचाने का प्रयत्न दीखता है। मैं केवल राष्ट्र-*पति से सच्ची बात कहना* चाहता हूँ क्योंकि वे दलातीत हैं। उन पर माना जाता है, दल का कोई *असर नहीं* होता। इस तरह उन्हें देश की इस नाजुक परिस्थिति में चुप बैठे रहना नहीं है।

मूर्धन्य साहित्यकार श्री जैनेन्द्र कुमार ने राष्ट्रपरिषद की माँग की है जिसमें राष्ट्रपति महोदय से यह आशा की गयी है कि वे पहल करें। इस विचार में क्या हम आशा करें कि *वे वास्तव में देश के बुद्धिजीवी वर्ग की सुनेंगे* और दलोत्तीर्णता का सच्चा परिचय देंगे?

राष्ट्रसंघ जनसंख्या वर्ष पर विशेष

भारत की आबादी और बच्चे

आबादी की संख्या और उसका घनत्व

भारत का स्थान घनी आबादी वाले देशों में दूसरा आता है। अप्रैल १९७१ की जनगणना के अनुसार यहां की आबादी तब तक ५४ करोड़ ८० लाख थी। मोटे तौर पर प्रति वर्ग कि. मी. पर आबादी का घनत्व १७८ व्यक्ति पड़ता है। सभी प्रान्तों में एक-जैसी घनी आबादी नहीं है। सबसे ज्यादा घनी आबादी केरल में है। इसमें प्रति वर्ग कि. मी. ५४६ लोग रहते हैं। इसके बाद पश्चिम बंगाल, बिहार, तमिलनाडु और उत्तरप्रदेश का नम्बर आता है। इनमें क्रमश ५०४, ३३४, ३१७ और ३०० व्यक्ति प्रति वर्ग कि मी रहते हैं। कुछ प्रदेशों में प्रति शहरों में रहता है। विभिन्न राज्यों के नगरों की आबादी का प्रतिशत अलग-अलग है, जैसे महाराष्ट्र में ३१ तमिलनाडु में ३०, गुजरात में २८, नागालैंड में १०, असम में ९, उड़ीसा में ८ और हिमाचल प्रदेश में ७ प्रतिशत लोग नगरों में रहते हैं।

१९७१ में नगर कहे जा सकनेवाले स्थानों की संख्या २६३६ थी। इनमें से १४८ शहर ऐसे थे जिनमें एक लाख से ऊपर लोग बसते हैं।

उम्र तथा स्त्री-पुरुषों का अनुपात

भारत में रहनेवाले विभिन्न उम्र के लोगों का अनुपात अन्य विकासशील देशों जैसा ही है। १४ वर्ष से कम उम्र के लोग है। जम्मू-कश्मीर, पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश में स्त्रियों का अनुपात पुरुषों से काफी कम है। इसी प्रकार पश्चिम बंगाल, असम और नागालैंड में जो हमारे देश के पूर्वी भाग हैं, स्त्रियों का अनुपात पुरुषों से कम है। केरल के अतिरिक्त तमिलनाडु, आन्ध्रप्रदेश, कर्नाटक और हिमाचल प्रदेश के पहाड़ी हिस्सों में भी स्त्रियों का अनुपात पुरुषों से अधिक है।

जन्म और मृत्यु का अनुपात

प्राप्त आंकड़ों के अनुसार जन्म दर १९७१ में प्रति हजार पर गांवों में ३८.९ और शहरों में ३१.१ थी। नगरों और देहातों में मृत्यु संख्या प्रति हजार लगभग १६.४ और ९.७ थी। देहात में मरनेवाले बच्चों की संख्या हजार पर १३१ और नगरों में ८१ थी।

बढ़ता मर्ज...क्या इलाज?

जनसंख्या-वृद्धि

१९५१ में भारतवर्ष की आबादी ३६ करोड़ १० लाख थी। १९६१ में यह ४३ करोड़ ९० लाख और १९७१ में ५४ करोड़ ८० लाख हो गयी। इस तरह पिछले बीस वर्षों में १८ करोड़ ७० लाख लोग देश में बढ़ गये। १९५१-६१ के दशक में जनसंख्या में २१.५ प्रतिशत की वृद्धि हुई, १९६१-७१ के के दशक में जनसंख्या २४.८ प्रतिशत के हिसाब से बढ़ी। जनसंख्या वृद्धि के इतिहास की दृष्टि से यह दशक सबसे अधिक जनसंख्या वृद्धि का दशक सिद्ध हुआ है।

भविष्य में जन वृद्धि का अनुमान

इस समय, १९७४ में, देश की जनसंख्या ५८ करोड़ १० लाख मानी गयी है। अनुमान है कि १९७९ में यह ६३ करोड़ ७० लाख और १९८६ में ७० करोड़ ५० लाख हो जायेगी।

आयु विन्यास

यदि जनसंख्या को विभिन्न आयु-स्तरों के हिसाब से देखा जाये तो ऐसा मालूम होता है कि १९७१ में ० से १४ वर्ष तक की उम्र के लोगों में ४१.४ प्रतिशत कमी हुई थी। हिसाब लगाया गया है कि १९८६ में यह कमी ३२.३ प्रतिशत हो जायेगी। इस तरह वे लोग जो अपने निर्वाह के लिए परिवार के वयस्कों पर आश्रित रहते हैं, अपेक्षाकृत कम हो जायेंगे।

५ से १४ वर्ष के बीच की अवस्था में पढ़नेवाले बच्चों की संख्या १९७१ में २५.६ प्रतिशत घटी थी। १९८६ तक यह संख्या घटकर २२.५ प्रतिशत हो जायेगी। इस तरह प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा पर होनेवाले खर्च में कमी होगी।

बेरोजगारी की समस्या

यद्यपि अगले पन्द्रह वर्षों में शहरों की जनसंख्या में कमी होने की सम्भावनाएं हैं, फिर भी कुल मिलाकर शहरों आबादी देहातों से आनेवाले लोगों के कारण ४८ करोड़ ६० लाख बढ़ जायेगी। इस व्यवस्था में लोगों के लिए रोजगार, निवास आदि की व्यवस्था करने का काम काफी बढ़ जायेगा। आज भी शहरों में बेरोजगारी कम नहीं है।

—दुनिया के नगरों में एक तिहाई व्यक्ति ही खुशहाल इलाकों में रहते हैं और बाकी दो तिहाई गन्दी बस्तियों तथा खालों में।

—खुशहाल इलाकों में आबादी का ३५ प्रतिशत बच्चे हैं जो तन्दुरुस्त हैं, पढ़ते हैं तथा उनकी ठीक देखभाल होती है।

—नगर के गरीब इलाके में रहनेवालों में आधे बच्चे होते हैं जिनमें ज्यादातर कमजोर, निरक्षर और कुपोषण के शिकार होते हैं। इनमें १० में से ५ ही स्कूल जा पाते हैं और इन ५ में से भी ३ ही कुछ सालों से ज्यादा स्कूल जाना जारी रख पाते हैं। इस तरह इन इलाकों के ७० प्रतिशत बच्चे बिना उचित शिक्षा के बड़े हो रहे हैं और उन्हें जिन्दगी भर गरीब और अज्ञानी रहना है। इन इलाकों में डाक्टर या नर्स भी बहुत कम हैं जिससे १० बच्चों में से सिर्फ ३ का ही इलाज हो पाता है।

—नगर के कुछ भागों में करीब आधे बच्चे तो ४ साल के होने के पहले ही मर जाते हैं। जो बचते हैं वे भी तमाम उम्र बीमार और कमजोर रहते हैं। इन इलाकों में रहनेवाले बच्चों के जीवन की सम्भावना कोई ३५ वर्ष होती है जो नगर के खुशहाल इलाकों की तुलना में आधी है।

—नगर के खुशहाल भागों में रहनेवाले लोगों में काफी खुदगर्जी होती है और वे गरीबों की मदद के लिए अपनी आमदनी का दसवां हिस्सा भी नहीं देते।

—खुशहाल इलाकों में रहनेवाले एक तिहाई लोग नगर के अधिक साधनों और खाद्य पदार्थों सहित विभिन्न चीजों का ८५ प्रतिशत खर्च कर डालते हैं। इनमें से ज्यादातर लोग जरूरत से ज्यादा खाते हैं और मोटे हो जाने के अंदेशे से दुबले रहते हैं। शहर के दूसरे इलाके में रहनेवाले आधे पेट भी भोजन नसीब न होने से परेशान रहते हैं।

—खुशहाल इलाकों की तुलना में बच्चों का जन्म गरीब बस्तियों में ज्यादा होता है जिसका नतीजा होगा कि अगले कुछ सालों में और भी ज्यादा गरीब और भूखे बच्चे होंगे।

और इस हालत के बावजूद हम आज गोला बारूद बनाने में उससे कहीं बहुत अधिक धन खर्च कर रहे हैं जो स्कूल और अस्पताल बनाने में करते हैं। हम अपनी सम्पत्ति और सबसे कीमती चीज—हमारी जनशक्ति—बरबाद कर रहे हैं। वे लोग जो तालीम नहीं पाते और जिन्दगी भर कमजोर रहते हैं, आखिर बरबादी के सिवा और क्या हैं? वे कभी उपयोगी काम नहीं कर पाते और मदद के बजाय बोझ बने रहते हैं।

इसलिए शहरों की आबादी की वृद्धि को संभालने के लिए यह जरूरी है कि लोगों को गावों में शहरों में जो जो बातें आने पर विवश करती हैं, उनकी ओर ध्यान दिया जाये। हमें गावों के कारीगरों, कृषकों और खेतिहरों को गावों में ही पूरा पूरा काम किस तरह मिलेगा, इस पर विचार करना होगा। गावों के जीवन स्तर को ऊंचा उठाने की इस तरह कोशिश करनी होगी कि वे शहरों की ओर न भागें। गाव और शहर के जीवन स्तर में जो फर्क है उसे कैसे कम किया जाये, इस पर देश के सभी बुद्धिमान व्यक्तियों को सोचना चाहिए। अनेक अर्थशास्त्रियों का विचार है कि यह अवस्था गांधीजी द्वारा सुझाये गये उपायों से भली भांति बदली जा सकती है। किन्तु जो लोग देश की योजना के भाग्यविधाता है, वे कुछ अलग ही ढंग से सोचते हैं। देखना है, वे सारे संसार के अर्थशास्त्रियों द्वारा गांधीजी के विचारों का अनुमोदन होने के बाद भी इस पर ध्यान देते हैं या नहीं।

सवाल 'भूदान-यज्ञ' के : जवाब जैनेन्द्रजी के

जनता व्यवस्था हाथ में ले

(परिस्थितियां विषम हैं। बिहार विधानसभा के विघटन पर आकर आन्दोलन ठहर गया सा लगता है। हमारी प्रधानमंत्री महोदया ने विघटन की माग को जोरदार शब्दों में ठुकरा दिया है। रैलियों (शाव रैलियों) का उत्तर लाठी-भालों से लैस किराये की भीड़ से दिया जा रहा है। कांग्रेस खुल्लमखुल्ला युद्ध के लिए उतर आयी है, जबकि उनसे हिंसक युद्ध को कोई तैयार नहीं है। कुछ सर्वोदयी और गैरसर्वोदयी कार्यकर्ताओं को बिहार से निष्कासन के आदेश सुना दिये गये हैं और इससे जे०पी० को कुछ परेशानी महसूस हो सकती है। जैसा भी है वे दिल्ली आ गये हैं और कुछ ऐसे तथ्यों का प्रकाशन किया गया है जिससे लगता है कि वे विरोधी दलों के नेता स्वीकार किये जायेंगे। इस सम्बन्ध में श्री जैनेन्द्र कुमार ने 'भूदान-यज्ञ' के संवाददाता सुरेश ठाकरान के कुछ प्रश्नों के जो उत्तर दिये वे यहां दिये जा रहे हैं। स०)

प्र०—जयप्रकाशजी दिल्ली में हैं। दिल्ली की नागरिक संघर्ष समिति को आचार्य कृपलानी ने राष्ट्रीय स्वरूप दिया है। उसमें कांग्रेस और कम्युनिस्ट के सिवा सब राजनैतिक दलों के नेताजन हैं। आन्दोलन को आगे जो रूप दिया जायेगा, उसका ये सब मिलकर विचार करेंगे। आप बिहार आन्दोलन के समर्थक रहे हैं, पर साथ ही कुछ बातों में समीक्षक भी रहे हैं। विशेषकर आपका कहना रहा है कि सर्वोदयी सत्याग्रह में आक्रामक भाव नहीं, प्रेम भाव रहना चाहिए। अर्थात्, कारी विरोध के भीतर अहिंसा का सत्व रहना चाहिए। उस पर यथावश्यक बल बिहार आन्दोलन में नहीं है। अब जब विरोधी दलों द्वारा आंदोलन को विरोधी ही भूमिका मिलती दीखती है तब आपका उस संबंध में क्या कहना है?

उ०—कहना हो क्या सकता है? यही कि बड़ा प्रश्न पैदा हो जाता है इसलिए बड़ी चुनौती खड़ी हो जाती है। उनके लिए, जो राजनीतिक क्षेत्र में भी अहिंसक प्रक्रिया को कारगर रखना और बनाना चाहते हैं। जयप्रकाशजी की ईमानदारी की तारीफ की जानी चाहिए जब वे कहते हैं कि आंदोलन सही-सही अहिंसक नहीं है, केवल शान्तिमय है। आशा है कि शान्तिमयता की यह शर्त आगे भी रहेगी। आचार्य कृपलानी का बल भी अहिंसा पर कम नहीं है। लेकिन जिस अहिंसा का अमोघ और अनिवार्य परिणाम आता है वह राजनीतिक प्रयोजन से गहरी वस्तु है। अर्थात् उसमें विरोधी पक्ष मन से भिन्न पक्ष होता है। उसमें आवेश के लिए स्थान नहीं है। बहुत कम सम्भावना है कि आंदोलन का यह स्वरूप रहे, या बन सके।

इसलिए क्या हो? क्या आंदोलन बैठ जाये, स्थगित हो जाये। नहीं वैसा नहीं हो सकता, होना नहीं चाहिए। वह निर्वीर्य प्रजा होगी, जो राज व्यवस्थाओं की ओर से होनेवाली आज की दुरवस्था को सहती रह जायेगी। सच यह है कि शासन नीतियां विफल हुई हैं। उनकी दिशा गलत हो रही है। शासक वर्ग का मानस राज से और वित्त से भरा रहा है। मनुष्य उसके लिए गौण पक्ष रह गया है। योजनाएं सब वित्त को लेकर बनी हैं। वित्त के प्रति दुर्लक्ष्य हुआ है। जैसे मनुष्य से ऊपर सचमुच में कुछ हो। इस तरह मानवीय समस्याएं गणितीय बन जाती हैं और समझा जाने लगता है कि राजनीतिक और आर्थिक विज्ञान में से नैतिक चारित्र्य चमक आयेगा। उस चिन्तन के लिए संवेदन, प्रेम और सहानुभूति व्यर्थ पड़ जाते हैं, आदर्श खो जाता है और धर्म मूढ़ता का नाम हो जाता है। कुछ यह हो रहा है और असल भारत वंचित है, वह भारत कि जो गावों में बसा है, वह जो गांधी को प्रिय था, जहां वे मानते थे कि संस्कृति आज भी जीवित है। भारत नकली और शहरी इण्डिया के नीचे सिसक-सा रहा है। विदेश से आयी चकाचौंध है जो आज के शासन का मार्गदर्शन कर रही है। और वहीं से तथाकथित प्रगतिशील नीतियों और योजनाओं का निर्माण होता है।

तो यह है जहां समूचे प्रश्न की आत्मा है। असल संघर्ष उस गहराई का है। वह सांस्कृतिक क्रांति है, जो मूल में है, इसलिए ऊपर घटनाओं में नजर नहीं भी आती है। राजनीति के व्यावसायियों की निगाह ऊपर तल पर है कि कौन दल चुना जाता और कौन कौन हारता है। यह एकदम सतही बात है और मुझे जयप्रकाश मानते हैं कि सारे आंदोलन के बावजूद शासनरूप दल शासकीय साधनों के उपयोग से नये चुनावों में फिर सफलता पा ले जा सकता है। चुनावों पर

निर्भर करने, वहीं ढंग अपने और धारागभाओं पर टकटकी लगाये रखने से कुछ नहीं होगा। ये ऊपरवालों के धन्धे हैं जो धर्मियों के श्रम के ऊपर चलते और पलते हैं। सर्वोदय दृष्टि-वाले भी उसमें बहल या बहक गये तो फिर भगवान ही मालिक है।

यह सब बातें मेरे मन में उठ रही हैं और मैं नहीं जानता कि मैं क्या करूं। शायद पीड़ा गहरी हो, और गहरी हो, तो कुछ इसमें से फूटे। पर मैं जानता नहीं और विशेष कह नहीं सकता।

प्र०—आंदोलन को दृष्टि में रखते हुए आपने कुछ दिन हुए राष्ट्र परिषद का सुझाव दिया था जिसमें आपने दोनों पक्षों की परिषद में मिल बैठकर कोई रास्ता निकालने की बात कही है। हाल ही में, परिषद के एक अंश के रूप में कहा जाना चाहिए, दोनों नेताओं में ९० मिनट की वार्ता हुई। सौहार्दपूर्ण होकर भी वार्ता कुछ कह गया नहीं निकाल सकी। फिर राष्ट्र परिषद के लिए आप क्या कहते हैं?

उ०—नहीं, दोनों पक्षों की मिली-जुली ठक की नहीं, वह तो पूरे राष्ट्र-परिषद की बात थी। दोनों पक्ष-नेता मिले पर क्या निकला? निकला यह कि दोनों ओर हठ और हठीली पड़ गयी। पूछूं कि उन योगियों के इस हठयोग का तमाशा देखने के लिए ही राष्ट्र रह जायेगा या राष्ट्र इनके ऊपर होकर स्वयं कुछ करने की भी सोचेगा? पर पूछा जायेगा कि वह राष्ट्र है कहां? राजनीति के धनी-धोरियों ने अलावा कहीं वह राष्ट्र है भी? मैं भी अक्सर सोचता हूं और फिर रह जाता हूं। सब के सब दल नेता हैं। जे० पी० को भी सर्वोदय नेता कह लीजिये। फिर भी संविधान में राष्ट्रपति को दल के ऊपर माना है। व्यक्ति कोई हो, बड़ा हो, छोटा हो, पद तो है राष्ट्र का प्रतीक। सो राष्ट्रपति राष्ट्र-परिषद की बात को उठायें, उसे बुलायें। यथार्थ को देखते हुए बहुत कम आशा है कि प्रधान मंत्री को पार कर वर्तमान राष्ट्रपति आप बराबर कुछ कर सकेंगे। तो फिर सब तरह के संविधानों और पार्टियों से बाहर एक विनोबा का व्यक्तित्व रह जाता है। महान से महान अध्यात्मपुरुष भारत में चाहे

जैनेन्द्रकुमार

और भी हों, पर राष्ट्र की राष्ट्रीय निगाह में विनोबा अकेले हैं। अक्सर सोचता हूं कि उनकी शरण जाऊं। लेकिन रह जाता हूं कि कहीं वे अगम ता सिद्ध नहीं होंगे। सुना है कि राष्ट्रीय नहीं अन्तरराष्ट्रीय बातों को हां वे आजकल सुना-गुना करते हैं। पर फिर भी एक बार हिम्मत कर देखना चाहता हूं।

प्र०—जयप्रकाशजी अब चाहने लगे दीखते हैं कि विरोधी दलों का सहयोग भी मिले। यह तथ्य प्रकाश में सब ज्यादा उभरता है जब विरोधी दलों ने दिल्ली में बैठक बुलायी है, जहां कदाचित उन्हें नेता चुना जाना है। क्या ऐसा नहीं लगता कि आंदोलन तब केवल विरोध का रह जायेगा? अहिंसा का प्रण क्या टूटेगा नहीं? कारण विरोधी दलों का अहिंसा में विश्वास नहीं है।

उ०—वही तो कहा जा रहा है। जे पी अब तक दलों से और राजनीति से भी अपने को अलग मानते थे। राजनीति के विरुद्ध में लोकनीति के समर्थक थे। कहना कठिन होगा कि राजनीतिक दलों के इस प्रकार उनके नेतृत्व में इकट्ठे होने भर से दल-नीति लोक-नीति बन जायेगी। राष्ट्र का शायद आधे से भी बड़ा भाग है जिसकी राजनीति में दिलचस्पी नहीं है। वह अपने अस्तित्व को लेकर ही व्यस्त रहता है। राजनीति का खेल उनके ऊपर से चला करता है। मुझे पूछना है कि उस जनता के बड़े भाग का क्या होगा? क्या राजनीतिक वर्ग उसको इतना स्वीकृत मान लेगा कि गिनती में न ले? मैं मानता हूं कि उसी ओर से प्रबल आवाज उठनी चाहिए। इन लोगों को अपने लिए किसी पद की आकांक्षा न हो। गांधीजी की अन्तिम लोक-सेवक संघ वाली कल्पना को यथार्थ बनाने का वक्त आ गया है। विनोबा का मानना रहा कि सर्व सेवा संघ अमल में गांधी वाला लोक सेवक संघ ही है। मैं मानता हूं कि अब भी समय है कि सर्व सेवा संघ अपने उस रूप को उत्तिष्ठ और बलिष्ठ करे, दलों के द्वन्द्व-वाद के चक्कर में बचे। जे०पी० कदाचित मुठभेड़ के मार्ग पर इतने आगे बढ़ गये हैं कि हट नहीं सकते न पीछे कदम ले सकते हैं। वही कहता हूं कि कुंजी विनोबा के हाथ में है। बात अब भी संभल सकती है। अन्यथा घमासान सामने है और आकांक्षा के पृष्ठ में अहिंसा की कोई पहचान नहीं रह जाती। नतीजा हर हालत में एक ही होगा यानी, मनुष्य पराधीन बनेगा, राज्य दलाधीन होगा।

प्र०—सर्वोदयी नेता दादा धर्माधिकारी ने कहा है कि विधानसभा भंग का प्रश्न आगे किसी अन्य राज्य में नहीं उठना चाहिए। इस आश्वासन पर बिहार की विधान सभा को भंग करने में सरकार को आपत्ति नहीं होनी चाहिए। इस सम्बन्ध में आपके क्या विचार हैं?

उ०—सरकार का रुख साफ है। उसके पीछे मन की दृढ़ता जान पड़ती है। क्या लाभ कि मांग आप गुजाये जायें और सरकार चट्टान बनी रहे? यही तो चक्कर पड़ गया है। 'भंग करो', 'नहीं करेंगे', इन दो हठों के बीच राष्ट्र और उसकी समस्याएं जैसे ओझल रहने को छोड़ दी गयी हैं। हालत नहीं रह गयी है कि दोनों ओर से मन्तव्य पक्ष को अब गिनती की जाये। पर इस तनातनी में फंसा देश का कितना भाग होगा? पांच प्रतिशत भी नहीं। पर हां दिमाग उसने सबका फेर दिया है। अगर राष्ट्र में स्वास्थ्य शेष हो तो इस रस्साकशी के खेल से ऊपर होकर अपनी संकल्पना का उसे प्रमाण देना और व्यवस्थाओं को स्वयं हाथ में लेना होगा।

सरकार और जनता की टक्कर बच सकती है....

बिहार में आठ महीनों से भ्रष्टाचार, महंगाई, निकम्मी शिक्षा-पद्धति और उससे भी अधिक निकम्मे शासन के विरोध में जयप्रकाशनारायणजी के नेतृत्व में जो शान्तिपूर्ण आन्दोलन चलाया जा रहा है, उसकी जड़ें केवल गहरी ही नहीं जा रही हैं, वे प्रान्त से बाहर सारे देश में फैलती भी चली जा रही हैं। अनेक प्रान्तों में जनता के जबरदस्त आग्रह पर जयप्रकाशजी को जाना पड़ रहा है और वहाँ इनका जैसा अभूतपूर्व *स्वागत होता है* और उनके आन्दोलन की मांगों को जिस प्रकार समर्थन मिलता है, उसे देखकर सत्तारूढ दल और उसका समर्थन करनेवाला भारतीय साम्यवादी दल इस आन्दोलन के जवाब में कुछ न कुछ कर दिखाने के लिए व्याकुल हो उठा है। जनता के इस विशाल आन्दोलन के विरोध में सत्तारूढ कांग्रेस और सी० पी० आई० भी आन्दोलन छेड़ेंगे, यह निश्चय हुआ है और तदनुसार जहां-तहां कुछ कोशिशें भी की जा रही हैं। नमूने के तौर पर ६ अगस्त को हुई दिल्ली की छात्र रैली, ३ नवम्बर को जनता द्वारा किये जानेवाले बन्द के विरोध में निकाला गया कांग्रेसी—सी० पी० आई० जुलूस और अब १६ तारीख की वह रैली जिसका अखबारों ने बड़े-जोर-शोर से चर्चा किया है। ६ अगस्त की युवा-रैली किस तरह हुई और सारे देश में उसकी क्या प्रतिक्रिया हुई, सो किसी से छिपी नहीं है। ३ नवम्बर के विरोधी जुलूस की हकीकत भी कम से कम दिल्ली के लोगों पर पूरी तरह जाहिर है। ४ नवम्बर को होनेवाले दिल्ली बन्द होने के बारे में उसके विफल होने की जो रेडियो पर खबर आयी वह भी कितनी सच थी, यह भी अब तक प्रकट हो चुका है। सबसे ताजा और सबसे अधिक मिथ्या प्रचार अभी हाल में पटना में कांग्रेस और सी० पी० आई० द्वारा आयोजित रैली के बारे में हुआ। समझ में नहीं आता इस झूठे प्रचार से सरकार किसकी आंखों में धूल झोंकना चाहती है। लगता है सत्तारूढ दल अपनी सारी शक्ति, संगठन और साधनों के बल पर जो बड़े-बड़े जुलूस आयोजित करना चाहता है और जो बड़े रूप में आयोजित हो नहीं पाते, उनके द्वारा प्रधानमन्त्री को इस भ्रम में डालने की कोशिश की जा रही है कि जनता उनके पीछे है। प्रधानमन्त्री सतर्क और जाग्रत व्यक्तित्व की जीती-जागती तसवीर हैं, इसलिए यह विश्वास करना भी बहुत कठिन है कि वे हकीकत को नहीं जानतीं। यह मानने का जी नहीं होता कि वे इस बात से बेखबर हैं कि सरकार की ओर से जनता विरोधी प्रदर्शनों के प्रयत्नों को सब तरह की सहायता मिलती है। रेलें, बसें और ट्रकों से लोग मुफ्त लाये जाते हैं, उनके खाने-पीने और ठहरने के प्रबन्ध के साथ उन्हें थोड़ा-बहुत मेहनताना भी दिया जाता है, फिर भी यह जुलूस या प्रदर्शन सड़कों या मैदानों में नहीं अखबारों में सफल होते हैं। इसके विपरीत जन संघर्ष समितियों द्वारा आयोजित जुलूस व सभाएं कितनी रुकावटें डालने के बावजूद कितनी सफल होती हैं, यह तत्व भी प्रधानमंत्री से छिपा नहीं रह सकता। जुलूस के स्थान तक लोग पहुंच न सकें इस विचार से आस-पास और दूर-दूर तक नाकेबन्दी कर दी जाती है, रेलें रद्द कर दी जाती हैं, बसों और ट्रकवालों को सख्त ताकीद मिल जाती है कि वे प्रदर्शनकारियों को लाने में किसी भी प्रकार की मदद न दें। इसके बावजूद लोग कैसे और कहाँ से लाखों की संख्या में इकट्ठे हो जाते हैं, कौन जाने।

उक्त दोनों स्पर्धा का सबसे बड़ा उदाहरण अभी १६ और १८ तारीख को पटना में दुनिया के सामने आया। १६ तारीख को कांग्रेस ने एक जुलूस निकाला। एक समाचार पत्र के सिवाय सारे समाचार-पत्रों ने खबर दी कि उस जुलूस में कोई चार से पाँच लाख व्यक्ति तक शामिल थे। साथ ही यह भी स्वीकार किया गया कि जुलूस में मोटर-गाड़ियाँ, स्कूटर और अन्य वाहनों के सिवाय बिहार के मुख्यमंत्री गफूर साहब, कांग्रेस के अध्यक्ष श्री देवकांत बरुआ और बिहार राज्य के समूचे मंत्रिमंडल के अतिरिक्त केन्द्रीय मंत्रिमंडल के जगजीवनरामजी, ललितनारायण मिश्र, चन्द्रजीत यादव और सिद्धेश्वर प्रसाद शामिल थे। संसद सदस्यों की भी एक बड़ी सी टुकड़ी और अपनी भक्ति के लिए मशहूर यशपाल कपूर और बलीराम भगत भी शामिल थे। श्रीमती तारकेश्वरी सिन्हा को भी एक आकर्षण के रूप में सामने-सामने रखा गया था। इस सबके होते हुए भी जिन लोगों ने जुलूस और आम सभा के प्रत्यक्ष दर्शन किये हैं उनका कहना है कि लोगों की संख्या बीस हजार से अधिक कदापि नहीं थी और इन बीस हजार व्यक्तियों में भी पटना का कदाचित ही कोई व्यक्ति शामिल था, सब बाहर से ढो-ढो कर लाये गये व्यक्ति थे। जुलूस लम्बा दिखायी दे, इसलिए कितनी ही एम्बुलेंस गाड़ियां, मिनिस्टरों की लम्बी-लम्बी कारें और गवर्नमेन्ट हाउस की गाड़ियाँ भी एक के बाद एक लगा दी गयी थीं। कहा जाता है कि जुलूस में सरकारी वर्दी धारण किये हुए गाँव के कोटवार शामिल थे। सरकार-परस्त अखबारों ने कहा कि जुलूस अभूतपूर्व था। इतनी बड़ी शक्ति लगाने के बाद इतने छोटे जुलूस को अभूतपूर्व ही कहा जायेगा। जुलूस में गिनी-गिनाई ६० स्त्रियां थीं। खबरों में छापा गया कि पुरुषों के सिवाय स्त्रियां भी बहुत बड़ी तादाद में शामिल हुईं। पूरे जुलूस में कितने हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई थे—यह तो नहीं कहा जा सकता, लेकिन सिक्ख केवल एक ही था और उसे हुक्म के मुताबिक तलवार खींचकर चलना पड़ रहा था। ११ तारीख को सी० पी० आई० ने जो जुलूस निकाला था—वह तो सच्चे अर्थों में सशस्त्र जुलूस था—बर्छी भालों और कमानों से लैस।

सबसे मजेदार बात यह थी कि जब जुलूस के नेतागण नारे लगवाने की कोशिश करते तो वे नारों का आधा हिस्सा चिल्लाकर ही रह जाते थे, जैसे नारे लगवानेवाला आदमी कहता 'जयप्रकाश की गुण्डागर्दी' किन्तु

मुकाबले मे सज्जित होकर खडी हो गयी है। उन्होंने पूछा—कि क्या छात्रो और युवकों को भ्रष्टाचार हटाने की माग करने का हक नही है ? क्या वे बेरोजगारी के खिलाफ आवाज उठाने के कारण जनतंत्र विरोधी कहे जायेंगे? जमाखोरी और बढती हुई कीमतो के खिलाफ कुछ कहना किस कसौटी के मुताबिक गद्दारी है ? अजीब बात है कि जब ऐसी माग पेश की जाती है तो जवाब मे लाठी चलायी जाती है, आसू गैस छोड़ा जाता है और होने लगती है गोलियो की बरसात। क्या ऐसे लोगो को किसी भी हालत मे जनतत्र का हामी कहा जा सकता है ?

बिहार और आनुषगिक रूप मे देश भर मे सरकार ने पिछले आठ महीनो मे जन-सेवको और जनता के प्रति जो रुख अपनाया है, न्यायप्रियता के स्थान पर वह शस्त्रों की शक्ति से जिस प्रकार काम ले रही है उसकी अगर प्रान्तवार तफसील बनायी जाये तो ससार की बडी से बडी नादिरशाही के कृत्य भी फीके से लगने लगेंगे। बिहार का गया काड, मुगेर काड, कुर्था काड, मभौल काड किसी भी देश की स्वतन्त्रता के इतिहास मे एक ओर दमन और दूसरी ओर सहनशक्ति के अनोखे दस्तावेज कहे जा सकते हैं। हरियाणा में बात-बात पर जिस प्रकार के अत्याचार हुए हैं और वहा की जनता को जिस प्रकार आतंकित करके रखा गया है, वह अपने आपमे जुल्म की एक अनोखी गाथा है। आश्चर्य की बात है इस सबके पश्चाताप की भावना के बजाय, हमारा शासन औचित्य ही नही गौरव तक का अनुभव करता है। साधारण लोगों की तो बात ही छोडिए जयप्रकाशजी तक इस मामले मे अछूते नहीं छोडे गये। शब्द-बाण और व्यग बाण ही नही, उन पर सीधा-सीधा शारीरिक प्रहार भी किया गया और जब देश मे इस बात का विरोध हुआ तो हमारे गृहमन्त्री ने बार बार ससद मे यह कहा कि जयप्रकाश जी पर कोई हमला नहीं किया गया, भगदड में कुछ खरोंच आ गयी। किन्तु इस कथन के विरोध मे केवल आखो देखे हो नहीं कैमरे से खीचे गये प्रमाण भी मौजूद थे, इसलिए बहुत देर तक गृहमत्री इस झूठ पर अडे नही रह सके और अन्त मे उन्होंने १५ नवम्बर को लोक-सभा में कहा कि चूंकि जयप्रकाश नारायण कहते हैं कि उन्हें चोट लगी है, मैं कहता हूं कि हमे इसका दुख है। देश की क्षमाशील जनता ने इसे ही पर्याप्त मान लिया है, वैसे सच कहें तो यह शब्द किसी प्रकार के पश्चाताप को प्रकट नही करते। ये वास्तव मे अपनी बात पर आग्रहपूर्वक अडे रहने का दूसरा प्रकार है। किन्तु हम सबने इसे क्षमा-याचना मान लिया है और इस बात की आशा भी करना चाहते हैं कि जनता और सरकार के बीच चल रही लगभग गृह-युद्ध जैसी यह स्थिति सरकार भी बहुत जल्दी टालने योग्य समझकर जनता की भावनाओ का आदर करेगी, अर्थात प्रधानमत्री इन्दिरा गांधी फिर जयप्रकाशजी के साथ बैठेंगी और अबकी बार किसी पूर्वाग्रह को लेकर नही, बल्कि कोई ठीक रास्ता निकालने के विचार से। यदि सरकार अपनी बात पर अडी रही और दमन का चक्र चलाती चली गयी तो जनता को विवश होकर सिंहासन खाली करवाना पड़ेगा।

यदि जयप्रकाशजी के अहिंसक सघर्ष की मांगो को सरकार ठीक मानकर दूर करने मे जुट जाये, दिखाने के लिए नही, सच्चे मन से तो इस देश की जनता जो अत्यन्त सस्कार-शील हैं, जिसे अपने नेताओ का समादर करते रहने की आदत है इन्दिराजी को फिर सिर आखो पर उठा लेगी। यहा तक कि स्वय जयप्रकाशजी भ्रष्टाचार आदि दूर करने के सच्चे प्रयत्नो को देखकर प्रधानमत्री की सदाशयता को स्नेहभाव से ग्रहण करेंगे। उन्होंने अनेक बार कहा है कि व्यक्तिगत रूप से उनके मन मे इन्दिराजी के प्रति गहरा स्नेह-भाव है। यदि इन्दिराजी देश के कर्तव्यो के प्रति सचेत हो जायें तो जयप्रकाशजी उनसे सहयोग कर सकते हैं। ऐसी अवस्था मे सत्तारूढ कांग्रेस दल को आगामी चुनावो में फिर जिन्दगी मिल सकती है। नहीं तो उसका भविष्य एकदम अन्धकारमय हो चुका है। यह हमारा ख्याल नही है तथ्य है। स्वय सत्तारूढ दल इस तथ्य को भलीभाँति समझ गया है। वह जान गया है कि अन्त समीप है, दमन का चक्र इसीलिए इतनी जोर से चलाया जा रहा है। किन्तु अभी समय है। जो समय रहते चेत जाता है, उसे भगवान क्षमा कर देता है। भारतवर्ष की अहिंसक और आस्तिक जनता तो क्षमा कर ही देगी।

—भवानी प्रसाद मिश्र

बीस साल पहले

(भूदान-यज्ञ वर्ष १ अंक ८
१-१२-५४ के अंक से)

श्री जयप्रकाश नारायणजी ने तारीख २३ सितम्बर से १५ दिनो तक केरल के प्रमुख शहरों और कस्बो की यात्रा की। इस अवसर पर आपको ३००० हजार एकड भूमि तथा साधन दान मे ५३,५०० रुपये मिले। एक भाई ने ६५०० रुपये की जमीन खरीद कर देने का भी वादा किया। ४२ लोगो ने जीवनदान किया तथा ५० लोगो ने जीवन-भर तक सम्पत्तिदान देने का सकल्प किया।

मलाबार के वाईनाद के निवासी श्री पद्मप्रभा गौड़र ने काली मिर्च और काफी का एक बगीचा भी, जिसकी लागत लगभग एक लाख रुपये और वार्षिक आमदनी १०-१५ हजार रुपये की है, भूदान-यज्ञ मे दिया। त्रावनकोर-कोचीन के राजप्रमुख महोदय ने ५० हजार रुपये साधन-दान में दिये।

उपवासदान दें और लोगों को इसके लिए प्रेरणा दें

यदि प्रधान मंत्री मुख्य मंत्री इससे संतुष्ट हैं तो रहें....
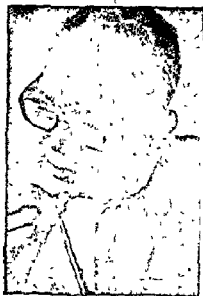
कई लोगों को इस बात से आश्चर्य हुआ होगा कि मैंने अबतक ४ नवम्बर की बिहार में हुई घटनाओं पर कोई टिप्पणी क्यों नहीं की है। दरअसल मैं बहुत थका और क्लान्त था तथा अब भी पूरी तरह स्वस्थ नहीं हो सका हूं। फिर भी यह लिख रहा हूं चूंकि और अधिक देर होने से संभव है कुछ भ्रम फैले जो आन्दोलन के हित में न हो।

प्रधानमंत्री, राज्य के मुख्यमंत्री तथा अन्य कांग्रेसी नेता यदि इस बात से संतुष्ट हैं तो रहें कि उन्होंने लाखों लोगों को राजधानी में इकट्ठा होकर विधान सभा के सदस्यों को अमान्य करने की घोषणा करने, बिहार मंत्रिमंडल एवं विधान सभा के विघटन की मांग करने से रोक दिया है। यदि शहर के भीतर व बाहर दोनों तरफ तरह-तरह के अवरोध न खड़े किये गये होते और एक मोटे अनुमान के अनुसार दो लाख से अधिक सी० आर०पी० तथा बी० एस०एफ० के लोग न बुलाये जाते तो ४ नवम्बर को पटना में कम से कम १० लाख लोग इकट्ठे होते। प्रधानमंत्रीसमेत सभी कांग्रेसी, लोकतंत्र के विषय में अपनी चिन्ता व्यक्त करते नहीं थकते हैं। पर दुनिया का कोई भी लोकतान्त्रिक व्यक्ति इस बात पर आश्चर्य करेगा कि किस लोकतांत्रिक सिद्धांत के द्वारा कोई प्राप्तिनिधिक सरकार, जनता से भ्रमण और अभिव्यक्ति का मौलिक अधिकार छीन सकती है।

अमोनिक बाधाओं के बावजूद लोग हजारों की तादाद में पहुंचे, इसके लिये मैं उन्हें धन्यवाद देता हूं। लाठी चार्ज और अश्रु गैस समेत भयंकर उत्तेजनात्मक कार्रवाइयों के मध्य उन्होंने जैसी शांति रखी उसके लिये मैं बधाई देता हूं। मैं एक बार फिर लोगों के सामने स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि सामाजिक एवं आर्थिक अन्यायों के विरुद्ध, समाज के संपूर्ण परिवर्तन का यह संघर्ष लंबा चलने वाला है।

४ नवम्बर को कांग्रेस ने लोगों को पटना आने से रोका है, जबकि चुनाव के समय इसी जनता के पास जाना होगा, तभी जनता भी अपना सही फैसला देगी।

प्रधानमंत्री मुझे सलाह देती हैं कि मैं अगले चुनाव तक ठहरूं। यदि उन्होंने सिर्फ मेरे हाल के भाषणों की रपट पढ़ ली होती तो उन्हें ऐसी सलाह देने का कष्ट करने की जरूरत नहीं होती। मैं पिछले काफी दिनों से कहता आ रहा हूं कि यदि प्रधानमंत्री राज्य विधान सभा का विघटन करनेको तैयार नहीं हैं तो मुझे कोई जल्दी नहीं है, और न जल्दी है छात्रों और आम की जनता को। हमारा संघर्ष जारी रहेगा और अन्त अगले चुनाव में सारे मुद्दों का फैसला हो जायेगा।

यदि स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव हुए तो कांग्रेस को अपनी दुरावस्था का उस हद तक पता चल जायेगा जिस हद तक वह जनता से दूर हो चली है, पर मुझे भय है कि चुनाव स्वतंत्र और निष्पक्ष नहीं हो सकेंगे। आखिर प्रधानमंत्री के पास अथाह चुनाव कोष है, जैसे दीपों के विषय में हाल में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा है कि वे संपूर्ण चुनाव पद्धति को भ्रष्ट करते हैं। इसके साथ-साथ आज राजनीतिक व्यावहारों में नैतिकता का जो स्थान है उसमें मतदान अधिकारियों एवं निरीक्षकों को पटा लेना सत्तारूढ़ दल के लिए सरल है। यदि इन दो खतरों से बचा जा सका तो मुझे कोई शक नहीं कि कांग्रेस की करारी हार होगी।

दिल्ली में हाल में हुई अपनी बातचीत के दौरान मैंने यह समझा कि चुनाव खर्च पर दिये सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को अर्थहीन करनेवाला अधिनियम विगत चुनावों पर ही लागू होता है, न कि भविष्य के चुनावों पर। यदि सच में ऐसा है तो चुनाव खर्च पर लगी कड़ी बंदिश सत्तारूढ़ दल की कमियों को उजागर कर देगी और अपनी पिछली करतूतों एवं भ्रष्टाचार के कारण बिहार से उनका खात्मा ही हो जायेगा।

पटना — जयप्रकाश नारायण
८ नवम्बर '७४

सत्ता का वरदहस्त पाकर जनविरोधी आर्थिक अपराध करनेवालों के हौसले किस कदर बढ़ चुके हैं यह गत ६ नवम्बर को कानपुर में उत्तरप्रदेश के संयुक्त उद्योग संचालक श्री रजतकुमार पर किये गये प्राणघातक हमले से बहुत साफ हो जाता है। उन्होंने नारायणसिंह यादव के मामले की जांच की थी जिन्हें रासायनिक पदार्थों के आयात के लिए लाखों रुपये के लाइसेंस दो वर्ष की अवधि के लिए उनकी उन ११ फर्मों के नाम पर दिये गये थे जो जांच में फर्जी पायी गयीं। रजतकुमार के द्वारा दी गयी रिपोर्ट से नाराज यादव ने उन्हें धमकाया कि उसके इन्दिराजी तक से रसूख हैं और उन्हें नेस्तनाबूद कर दिया जायेगा। रजतकुमार ने जो कि गुजरात के भूतपूर्व राज्यपाल और गांधी स्मारक निधि के अध्यक्ष श्रीमन्नारायण के पुत्र हैं सारे मामले की सूचना उद्योग संचालक को दी, खेद है कि बावजूद, इसके उनकी सुरक्षा के लिए कुछ नहीं किया गया।

६ नवम्बर की रात रजतकुमार को उनके घर से यह कहकर बाहर बुलाया गया कि उद्योग संचालक उनका इन्तजार कर रहे हैं और जैसे ही वे बाहर निकले वहां खड़े कुछ व्यक्तियों ने उन पर छुरों से हमला कर दिया और उन्हें मृत जानकर पास ही खड़ी एक कार में भाग निकले। मौके पर मौजूद अतिरिक्त उद्योग संचालक रवीन्द्र वर्मा ने उन्हें फौरन अस्पताल पहुंचाया जहां उनकी हालत में सुधार हो रहा है। गुप्तचर विभाग ने मामले की जांच की और षड्यन्त्र के आरोप में यादव तथा उसके दो साथी हिरासत में लिये गये हैं। अनेक जाली फर्मों के नाम जारी लाइसेंस तो रद्द कर दिये गये हैं लेकिन लाइसेंस जारी कैसे हुए इसकी जांच करके दोषी व्यक्तियों को दण्डित करने के काम की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जा रहा है।

साल भर पहले बन्द कलकत्ता के बंगाली दैनिक 'बसुमति' को पश्चिम बंगाल सरकार ने अपने हाथ में लेकर ११ नवम्बर से उसका प्रकाशन पुनः चालू कर दिया है, किन्तु साथ ही उनके सम्पादक विवेकानन्द मुखर्जी ने इसलिए इस्तीफा दे दिया है कि उनके सिर पर मुख्य सम्पादक के नाम पर एक भूतपूर्व कम्युनिस्ट सज्जन केदारघोष को लाद दिया गया जो जयप्रकाश नारायण के सम्बन्ध में खबरें व अन्य सामग्री छापने में दखलन्दाजी करते थे। उन्होंने फरमान जारी कर दिया था कि उनको दिखाये बिना कोई सम्पादकीय न छापा जाये। अखबारों की आजादी के खिलाफ अपनाये जा रहे इस रवैये के बारे में श्री मुखर्जी ने मुख्य मंत्री से, मुलाकात की। वह जैसी कि आशा हो सकती थी, निष्फल रही।

बिहार में सरकार के दमनचक्र के विरोध में प्रसिद्ध साहित्यकार फणीश्वरनाथ 'रेणु' ने 'पद्मश्री' का अपना प्राप्त अलंकार लौटा दिया है और कवि नागार्जुन ने तीन सौ रुपये मासिक की वह सरकारी वृत्ति लेना बन्द कर दिया है जो साहित्यकार होने के नाते उन्हें मिल रही थी।

खंडवा में ग्राम स्वराज समिति और तरुण शान्ति सेना की ओर से बिहार आंदोलन के समर्थन में आयोजित एक सभा में कवि भवानी प्रसाद मिश्र ने बिहार आंदोलन के बारे में बोलते हुए जयप्रकाशजी के आंदोलन के पक्ष में जनमत जाग्रत करने की अपील की। इस अवसर पर तरुण शान्ति सेना की ओर से आन्दोलन के लिए ५०१ रुपये की राशि भी अर्पित की गयी।

अकोढ़ी, मिरजापुर में शांति सेना मंडल के आह्वान पर गांधीजी के चित्र के सामने बड़ी संख्या में सर्वोदय कार्यकर्ताओं ने सरकारी हिंसा के विरोध में ११ नवम्बर को १२ घंटे का उपवास किया।

मध्यप्रदेश में तदर्थ जनसंघर्ष समिति का गठन हुआ है जिसके संयोजक जबलपुर के गणेशप्रसाद नायक मनोनीत हुए हैं। सदस्यों में चतुर्भुज पाठक हेमदेव शर्मा, दादाभाई नाइक, श्रीराम शर्मा, श्याम आजाद, रघुवीरसिंह कुशवाहा, सीताराम टाटके, नानूराम भावसार व श्रीमती सविता वाजपेई सम्मिलित हैं। प्रांतीय जन संघर्ष कार्यालय जबलपुर में ३ दिसम्बर से शुरू होगा।

पटना के अंग्रेजी दैनिक 'सर्चलाइट' के भूतपूर्व सह-सम्पादक और फिलहाल दिल्ली के 'सोवियत रिव्यू' के सह-सम्पादक गिरजा कुमार सिन्हा का गत दिवस दिल के दौरे से देहान्त हो गया।

आचार्य कृपालानी गत सप्ताह निमोनिया से बीमार हो गये हैं। उनका इलाज चल रहा है। उनकी हालत में सुधार है और उम्मीद है कि जयप्रकाशजी के वर्तमान दिल्ली मुकाम में वे उनसे मिल सकेंगे।

बिहार सरकार के निष्कासन आदेश और देश में संकटकालीन स्थिति जारी रखने के विरोध में जनसंघ नेता नानाजी देशमुख की याचिका पर उच्चतम न्यायालय में सुनवाई शुरू हो गयी है और मुख्य न्यायाधीश अजित नाथ रे तथा न्यायाधीश चन्द्रचूड ने बिहार तथा केन्द्र सरकार को 'कारण बताओ' नोटिस जारी किया है कि याचिका को विचारार्थ स्वीकार क्यों न कर लिया जाये।

जयप्रकाश नारायण २० नवम्बर को पटना से दिल्ली आ गये हैं जहां उनका मुकाम २६ नवम्बर तक है। इस दौर में वे संगठन कांग्रेस नेता कामराज से मुलाकात करेंगे और विरोधी दलों तथा नेताओं के साथ मिलकर आंदोलन की अगली व्यूहरचना तय करेंगे। भूतपूर्व विदेश मंत्री दिनेशसिंह तथा युवा तुर्क चन्द्रशेखर कोशिश कर रहे हैं कि जे०पी० के इस दिल्ली प्रवास के दौरान प्रधान मंत्री इन्दिरा गांधी से उनकी मुलाकात पुनः नये सिरे से कराकर समझौते की बातचीत चालू की जाये।

बुधवार की शाम चन्द्रशेखर के निवास पर जे. पी के सम्मान में आयोजित चाय पार्टी में सत्ता कांग्रेस के ४० से ज्यादा संसद सदस्य उपस्थित रहे।

गुरुवार को जे. पी से अशोक मेहता, मधुलिमये, नम्बूदरीपाद, पी. सुन्दरैया, पी. राममूर्ति, लालकृष्ण अडवानी और अटलबिहारी वाजपेयी आदि विरोधी नेताओं से बातचीत की। वे २५-२६ नवम्बर को विरोधी दलों के साथ विचार-विमर्श करेंगे।

वार्षिक शुल्क—१५ रु० विदेश ३० रु० या ३५ शिलिंग या ५ डालर, एक अंक का मूल्य ३० पैसे।
प्रभाष जोशी द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं ए० जे० प्रिंटर्स, नई दिल्ली-१ में मुद्रित।

सर्व सेवा संघ का साप्ताहिक मुख पत्र
नई दिल्ली, सोमवार, २ दिसम्बर '७४

चुनाव की चुनौती मंजूर
(जे० पी० का १८ नवम्बर का ऐतिहासिक भाषण)

पत्र और पत्रांश

रजतकुमार पर हमला

भारत सरकार के आयात निर्यात विभाग को कहीं से शिकायत आयी कि कानपुर के पास ११ ऐसे कैमिकल कारखानो को आयात लाइसेंस दिये गये हैं जो बोगस हैं। भारत सरकार ने शिकायत जाच के लिए उत्तर-प्रदेश के उद्योग निदेशालय को भेजी जिसने पहले दो उपसंचालको से जाच करायी और उनकी रिपोर्टों मे मतभेद होने पर दो सयुक्त सचालको को यह काम सौंपा। इनमे से एक रजत कुमार थे।

जाच मे पाया गया कि एक गिरोह १४ कैमिकल और १ लोहे के कारखाने के नाम पर बडी मात्रा मे आयात लाइसेंस और कोयला प्राप्त कर उसका दुरुपयोग करता था। जाच के फलस्वरूप इनके लाइसेंस रद्द हो गये और उनकी सुविधाए खत्म कर दी गयीं। गिरोह के दो नाम सामने आये— नारायणसिंह यादव और गुरुदयालसिंह। जांच के बाद ३० अक्टूबर को रजतकुमार को धमकी दी गयी जिसकी जानकारी उद्योग सचालक को दिये जाने पर उन्होने एक पत्र-वार्ता बुलाकर पत्रकारो को भी सूचना दे दी।

८ नवम्बर की रात एक आदमी रजत कुमार के बगले में आकर बोला कि उन्हें *डायरेक्टर साहब बाहर बुला रहे हैं।* रजत जब उनके साथ बगले के बाहर फाटक तक आया तो वहा दो व्यक्ति खड़े थे। इन लोगो ने उस पर छुरों से हमला कर दिया। दायें कंधे के पास बाजू मे, पेट मे और बायों जाघ पर तीन घाव मारकर उसे मृत समझकर वे वहीं खडी एक कार में भाग निकले। भागते हुए हवा मे दो गोलिया भी छोडी कि कोई पीछा न करे। इलाका वैसे ही सुनसान है। गोली की आवाज सुनकर रजत की पत्नी और अन्य लोग बाहर आये। पन्द्रह मिनट के भीतर उसे अस्पताल पहुचा दिया गया। लगभग एक लीटर खून बहा किन्तु 'ब्लड बसल' कटने से बच गयी थी जिससे प्राणरक्षा हो सकी।

रजत कुमार श्रीमन्नारायणजी का पुत्र है। बचपन उसका विनोबाजी के सान्निध्य मे बीता और पुण्यात्मा परिवार, माता-पिता तथा वातावरण से उसे निर्भीकता और सचाई के संस्कार मिले। कुछ अच्छा होने पर उसने खुशी जाहिर की कि तीनो घाव सामने ही लगे अर्थात् उसने पीठ नही दिखायी।

राज्य सरकार ने पूरी सहृदयता दिखायी है और राज्यपाल, मुख्यमंत्री, वित्त एवं उद्योग मत्री तथा अधिकारीगण रजतकुमार को देखने अस्पताल पहुचे। फिर भी आगे की सोचना जरूरी है कि सरकार सचाई को किस तरह संरक्षण दे सकती है। कानपुर का मामला तो एक नमूना है। ऐसे न जाने कितने फर्जी कारखाने जगह-जगह होगे। रजत कुमार की इस घटना के बाद अब उनके बारे में सही रिपोर्ट देने की हिम्मत कर सकना बहुत कम अधिकारियो के बूते की बात रह गयी लगती है। इसलिए जरूरत इस बात की है कि पंचायत समिति, जिला परिषद्, नगर निगम जैसी संस्थाओं से जानकारी लेने का तरीका खोजा जाये और ऐसे कारखानो की सूचियां अखबारो मे छपें जिससे इस प्रकार के दुस्साहसी अपराधियों के हिंसक और घातक रोग का शिकार किसी अकेले व्यक्ति को न बनना पड़े।

कानपुर —राधाकृष्ण बजाज

भूदान-यज्ञ

सम्पादक

राममूर्ति : भवानी प्रसाद मिश्र
कार्यकारी सम्पादक : शारदा पाठक

वर्ष २१ २ दिसम्बर, '७४ अंक ६

१६ राजघाट, गांधी स्मारक निधि, नई दिल्ली-११०००१

जे० पी० की २० नवम्बर से हुई दिल्ली यात्रा पर सामग्री इस अंक में नहीं आ पायी। अब उसे अगले अंक में देखें।

यह अंक

जयप्रकाश के नेतृत्व में बिहार आन्दोलन को चलते हुए लगभग नौ महीने होने आ रहे हैं। इस बीच में जो कुछ घटा है उससे कम ज्यादा पूरा देश परिचित है, फिर भी बिहार की जनता ने कितना किया है, वहां के गांव-गांव तक आन्दोलन किस प्रकार रिसरिसकर पहुंचा है, सत्ता की तमाम कोशिशों के बावजूद आन्दोलन कितना और किस प्रकार जोर पकड़ रहा है, इसका ठीक-ठीक अनुमान आमतौर पर देश को नहीं है। ज्यादातर पत्र-पत्रिकाएं एक अरसे से भयभीत हैं। जो दो-चार पत्र थोड़े निर्भीक थे वे भी धमकाकर चुप किये जा रहे हैं, 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के सम्पादक श्री वर्गीस के प्रति जो कुछ हुआ है वह तो अभी सबकी स्मृति में ताजा है, भले ही 'प्रदीप' और 'सर्चलाइट' के बारे में लोग भूल चुके हों। ऐसी हालत में कई बार यह कहने का मन होता है कि देश की पत्रकारिता आन्दोलन के प्रति और इसलिए देश की जनता के प्रति न्याय नहीं कर रही है। यहां तक कि अन्याय कर रही है। अपने अखबार की बिक्री के लिए कोई सनसनी-खेज विवरण छाप देना अलग बात है और आन्दोलन के बढ़ते हुए कदमों की आहट को सुनते हुए उसके प्रति स्वयं सजग रहना और जनता को सजग रखना दूसरी बात है। यह दूसरी बात बुद्धिजीवियों और विशेषतः पत्रकारों के ध्यान में न रहे तो वह देश के प्रति सौम्य से सौम्य शब्दों में भी अन्याय कहा जायेगा। ऐसा अन्याय आज चल रहा है। बुद्धिजीवी आपस की बहसों में बाल की खाल निकालने में लगे हुए हैं, बजाय इसके कि वे इसके वैचारिक पक्षों से जनता को ठीक-ठीक अवगत करते, अपनी तेजस्वी बुद्धि का तेजस्वी उपयोग करते।

१८ नवम्बर को बिहार के आन्दोलन का जो रूप स्पष्ट हुआ उसने प्रकट कर दिया है कि समूचा बिहार वहां की सरकार को जनतांत्रिक नहीं मानता और जनतांत्रिक व्यवस्था के लिए व्याकुल है। इसके साथ-साथ यह बात भी उतनी ही स्पष्ट हुई है कि बिहार की नादिरशाही अपने को जबरदस्ती जनतांत्रिक व्यवस्था मनवाने के लिए कुछ भी करने में नहीं हिचकती। वह जयप्रकाशजी पर भी लाठी प्रहार कर सकती है। पत्रों में जयप्रकाशजी पर लाठी प्रहार करने हुए चित्र के छपने के बाद ही, पहले तो सरकार ने यह कहा कि जयप्रकाशजी पर कोई लाठी-चार्ज नहीं किया गया, अपवाद में उन्हें कुछ खरोंच लग गयी और जब लोकसभा में इस बात को लेकर हंगामा मचा तो गृहमंत्री ने बहुत ही अशोभनीय ढंग से यह कहा कि अगर जयप्रकाशजी कहते हैं कि उन्हें चोट लगी है तो इसका हमें खेद है। देश के समाचार-पत्रों ने इसे सरकार का माफीनामा मान लिया। परिस्थिति कितनी गंभीर है यह सरकार की समझ में ही नहीं आ रहा है और अगर आ रहा है तो वह बजाय परिस्थिति को सुधारने के उन लोगों को अधिक से अधिक कुचलने का प्रयत्न करने को कटिबद्ध है जो प्रजातंत्र के हक में आवाज लगा रहे हैं या लगाना चाहते हैं। अभी २१, २२, २३ नवम्बर को हरियाणा के नरोरा गांव में प्रजातंत्र की हामी सरकार ने प्रजातंत्र के तमाम सिद्धान्तों के खिलाफ पत्रकारों आदि पर रोक लगाकर जो गुप्त बैठक की और उसके जो छिटपुट समाचार इकट्ठे किये जा सके, उन सबसे यही जाहिर होता है कि हमारा राजतंत्र प्रजातंत्र की जगह कुछ ऐसी भयावह शक्ल अख्तियार करने जा रहा है जो किसी भी रूप में देश के लिए कल्याणकारी राज्य की संज्ञा प्राप्त नहीं कर सकता। १८ तारीख को जयप्रकाशजी का पटना में जो भाषण हुआ और पटना से दिल्ली रवाना होते हुए उन्होंने जो वक्तव्य दिया वे अब तक के आन्दोलन में जनता और सरकार के प्रयत्नों को बहुत ही ठीक ढंग से अंकित कर देते हैं। हमने इस अंक में इसलिए अन्य सामग्री न देकर वह भाषण और वक्तव्य ही देकर अपने पाठकों को परिस्थिति से, संक्षेप में ही क्यों न हो, घनिष्ठ रूप से अवगत करने की कोशिश की है।

थोड़ी बहुत दूसरी जो सामग्री इस अंक में है वह भी १८ नवम्बर के जुलूस और उसके पहले के कम्यूनिस्टों और कांग्रेसियों द्वारा निकाले गये जुलूसों के बारे की है। सरकार अपने पक्ष में हिंसा तक का समर्थन करती है और अपने विपक्ष में शुद्ध-शान्तिमय तरीकों से चलाये गये आन्दोलन को भी पूरी तरह कुचल देना चाहती है। दुनिया के इतिहास में शान्तिमय आन्दोलन को कुचलने का इससे बड़ा उदाहरण इससे पहले कभी उपस्थित नहीं हुआ।

हमारी कोशिश है कि हम गणतंत्र-दिवस के अंक में बिहार आन्दोलन और देश पर उसके प्रभाव को एक विशेषांक के रूप में पाठकों के सामने प्रस्तुत करें। यह अंक उस अंक की छाया मात्र है। प्रयत्न किया जा रहा है कि हमारा वह अंक इस ऐतिहासिक आन्दोलन के अनुरूप एक ऐतिहासिक अंक बने। हम इन पंक्तियों के द्वारा इस आन्दोलन से जुड़े हुए उन तमाम कार्यकर्ताओं, भुक्त-भोगियों, विचारकों और लेखकों को निमंत्रित करते हैं कि वे अपने-अपने अनुभव और विचार हमारे पास अविलम्ब भेजें जिससे हम अपनी कल्पना का विशेषांक कालातीत तक बना सकें।

—भवानीप्रसाद मिश्र

दिल्ली प्रस्थान की घड़ी में

आज दिल्ली रवाना होने से पहले वातावरण में फैला हुआ भ्रम दूर हो जाये इस दृष्टि से सोच-समझकर यह वक्तव्य दे रहा हूं, पिछले कुछ दिनों से दिल्ली के समाचार-पत्रों में इस आशय की खबरें और लेख आदि प्रकाशित हो रहे हैं कि मेरी और प्रधानमंत्री की मुलाकात की संभावना है। कुछ लोग चिन्तित हैं और वे चाहते हैं कि उनके माध्यम से मुलाकात हो और मेरे और इंदिराजी के बीच के व्यक्तिगत सम्बन्ध खराब न होने पायें।

जहां तक व्यक्तिगत सम्बन्धों का सवाल है, ४ नवम्बर की घटना को लेकर इंदिराजी ने जो बेरुखी अपनायी है उससे तो सब साफ ही हो जाता है। और इससे भी ज्यादा बात साफ होती है उनके तत्काल किये गये उस प्रयत्न से, जिसमें यह व्यक्त करने की कोशिश की गयी थी कि वह सारा मामला संयोगवश हुआ और उसका कोई खास महत्व नहीं है।

जहां तक प्रधानमन्त्री और मेरे समझौते की बात है, यह बात समझ ली जानी चाहिए कि मुझमें और उनमें कोई झगड़ा नहीं है। यदि आठ महीने के बाद भी कांग्रेस के लोग इस बात को नहीं समझ पाये हैं कि बिहार आंदोलन का राज्य और देश के संदर्भ में क्या अर्थ है तो उनकी तुलना फ्रांस के बरबनों और उनके दरबारियों से ही की जा सकती है।

कांग्रेस अध्यक्ष महोदय ने बड़ी मेहरबानी करके मुझे एक सूखी पानविहीन सड़ी-सड़ाई शांति की हड्डी पकड़ाने की कोशिश की। श्री बरुआ इस तरह चुस्ती दिखलाने की कोशिश कर रहे हैं। वे अभी-अभी बिहार में थे और उन्होंने जो कुछ वहां किया है उस पर मेरी नजर रही है। यह बात मेरी समझ में नहीं आती कि इन्दिराजी के कार्यकाल का हर कांग्रेस अध्यक्ष देखते ही देखते पुराने जमाने के राजाओं के विदूषक जैसी स्थिति में क्यों आ जाता है?

श्री बरुआ ने जो सबसे ताजी विदूषकता जाहिर की है, वह यह है कि अगर मैं कुछ दिनों के लिए बिहार विधानसभा को मौकूफ रखने की बात करूं तो वे उस पर गम्भीरता से विचार करेंगे। मैं उन्हें इस बात के लिए धन्यवाद देता हूं। किन्तु साथ ही यह भी कहना चाहता हूं कि उन्हें इतना तो समझना ही चाहिए कि यह प्रस्ताव रखना था तो ८ महीने पहले रखा जाना था। यानी यह कम से कम ६ महीने देरी से आया हुआ प्रस्ताव है इन ८ घटनापूर्ण महीनों में बिहार में काफी खून बहाया जा चुका है। सौ से ज्यादा लोग मारे जा चुके हैं। कुछ हजार स्त्री और बच्चे गोलियों और लाठियों से घायल पड़े हैं। कुछ इन चोटों के कारण बाकी की उम्र के लिए बेकार हो गये हैं और हजारों की संख्या में लोग गैरकानूनी ढंग से गिरफ्तार और बन्द किये गये हैं। बिहार में रहते श्री बरुआ ने ११ और १६ नवम्बर को उन दो विरोधी हमलों के सूत्रों का संचालन किया जिनका १८ नवम्बर को पटना और उसके आसपास के लोगों ने जोरदार और जबर्दस्त जवाब दिया। उस दिन गांधी मैदान में कम करके आंकते तो भी ३ और ४ लाख के बीच में लोग जमा थे। किन्तु श्री बरुआ जो अपने जुलूस में भाग लेनेवाले २५ से ३० हजार लोगों को ५ लाख कह सकते हैं, इस बात में भी बिलकुल समर्थ हैं कि १८ नवम्बर के ३ या ४ लाख लोगों को ३ या ४ हजार कह लें। वे अपने इस उलटे गणित ज्ञान के लिए बधाई के पात्र हैं और अगर उन्हें इससे कुछ सन्तोष मिलता है तो अच्छा ही है। मगर भगवान के लिए वे कम से कम जनता के भाग्यविधाता बनने की कोशिश न करें।

प्रधानमन्त्री से मेरी पिछली मुलाकात के बाद बिहार में जो कुछ हुआ है, यानी जिस तरह कंटीदार तारों के घेरे लगाये गये हैं लाठियां चलायी गयी हैं, झूठ बोला गया है, गोलियां बरसायी गयी हैं और ११ और १६ नवम्बर को जानबूझकर जिस भ्रम की सृष्टि की गयी है, उसके बाद अगर कोई बातचीत करने से इन्कार कर दे या बातचीत के लिए कोई शर्तें पेश करे तो अनुचित नहीं होगा। मगर मैंने दरवाजे बन्द नहीं किये हैं और न मैंने बातचीत करने के लिए कोई पेशगी शर्तें ही सामने रखी हैं। मैं तो इतना ही कह रहा
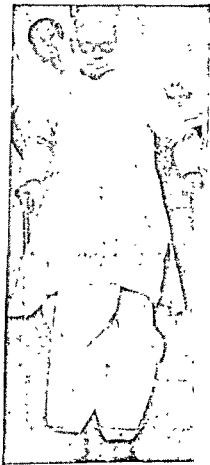
हूं कि वे नौ मुद्दे ध्यान में रखे जायें, जो मैंने पहले भी पेश किये थे। बेशक अब उनमें से उस प्रकार के मुद्दे निकाले जा सकते हैं जिनका वक्त बीत गया है। जैसे मैंने यह कहा था कि पटना में ४ नवम्बर के जुलूस के पहले १ नवम्बर को बिहार के गवर्नर मुझे बुलाकर बातचीत कर सकते हैं और उस जुलूस को न निकालने के लिए प्रार्थना कर सकते हैं।

मैंने एक सफाई की तरह इस वक्तव्य को इसलिए जाहिर कर दिया है कि जो मित्र अपने मन में सदाशयता रखते हैं, वे अपना और मेरा समय काल्पनिक समझौता-सूत्रों को गढ़ने में खराब न करें।

—जयप्रकाश नारायण

पटना, २० ११ ७४.
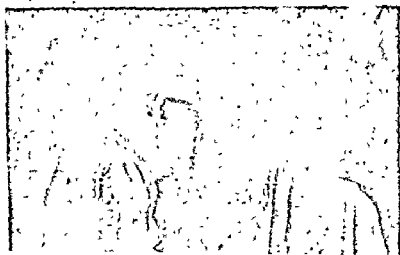
चुनाव में मुकाबले की चुनौती मंजूर

कौन सा ये आफेंसिव है जिसका काउंटर आफेंसिव दिल्ली से शुरू हुआ है।

लोकतंत्र है, कौन सी डिमोक्रेसी है, कौन-सा विचार स्वातंत्र्य है, कौन सा स्वातंत्र्य जनता को अपने संगठन खड़ा करने का है, भिन्न-भिन्न पार्टियाँ बनाने का है, सो सबको मालूम है। उसी तरह के लोकतंत्र की, उसी तरह की डिमोक्रेसी की यदि सी०पी०आई० भी डिमोक्रेसी कहती होगी तो भारत की जनता ने जब अपना संविधान बनाया था तो उसी में लिख दिया था कि हमारे विधान का, हमारे लोकतंत्र का नक्शा क्या होगा, उसके मूलभूत सिद्धान्त क्या होंगे, भारत के छोटे-से छोटे नागरिक के अधिकार क्या होंगे मौलिक, जन्मजात, जिनको छीने नहीं जा सकने वो अधिकार, सब लिख दिया है संविधान में। तो सी०पी०आई० की उस डिमोक्रेसी को तो भारत की जनता ने रद्दी की टोकरी में फेंक दिया। लेकिन जब कांग्रेस के लोग ये बात करते हैं तो मैं उनसे एक ही प्रश्न करना चाहता हूँ, बरुआ साहब से, जगजीवनबाबू से, गफूर साहब से तो नहीं करूँगा, जिस प्रकार की उन्होंने बातें की हैं एक मुख्यमंत्री वैसा भाषण करे तो उनसे क्या प्रश्न किया जाये। कदमकुआँ के चार नौटों का ढेर कर देंगे (ठहाके) रामलखन बाबू बैठे हैं यहाँ। ये मत्र लड़कों को इकट्ठा कर दो सामने। अभी देख लेते हैं ये। (हँसी) अब ये मुख्यमंत्री का भाषण चल रहा है। उनको क्या कहा जाये। मुझे तो अफसोस ही होता है कि ऐसे आदमी को मैंने सर्टिफिकेट दे दिया था कि (हँसी), लेकिन इन नेताओं से पूछना चाहता हूँ जो दिल्ली से आये थे कि डिमोक्रेसी की किस पुस्तक में ये लिखा है या किस लोकतांत्रिक देश का ये व्यवहार है, ये आचरण है कि शांतिमय जुलूस, शांतिमय प्रदर्शन, गांव-गांव से जनता आ रही है पटना, लूटने के लिए नहीं विधानसभा में आग लगाने के लिए नहीं। कभी ऐसा किया नहीं जनता ने—१८ मार्च से ये चल रहा है। उस दिन भी आग लगायी गयी थी 'सर्चलाइट' में। एडीटर साहब यहाँ बैठे हैं। उनका बयान भी छपा है। उनका बयान लेने के लिए आये थे लोग। राव साहब बैठे हैं यहाँ। किसने वो किया था? हुकूमत को अगर नहीं मालूम है तो किसको मालूम होना चाहिए? अगर उनको आज तक नहीं मालूम है तो नालायकी है उस हुकूमत की। (हँसी और तालियाँ) अब तक पता नहीं कि आग किसने लगायी और वह आग इतने घंटों तक क्यों जलती रही, बुझायी गयी नहीं क्यों आग? वो सर्चलाइट, जिसके संपादक एक समय बाबू राजेन्द्रप्रसाद थे, भारत के प्रथम राष्ट्रपति, जिस पत्र ने बिहार के स्वराज्य के आंदोलन में इतना बड़ा काम किया। राजस्थान होटल किसने जलाया, मुरादपुर की दुकानें किसने लूटीं? लड़कों ने लूटीं? छात्रों ने लूटीं? तो खैर जिसने भी किया हो, ४ नवम्बर को जो भी आ रहे थे वो केवल जो उनका जन्मसिद्ध अधिकार है उस पर अमल करने के लिए आ रहे थे कि अपने प्रतिनिधियों और मंत्रियों को आकर सुना दें कि तुम प्रतिनिधि नहीं रहे हमारे, कुर्सी, गद्दी छोड़ दो।' तुम प्रतिनिधि नहीं रहे हमारे··· बोलिये, तुम प्रतिनिधि नहीं रहे हमारे, कुर्सी, गद्दी छोड़ दो। (लोग दुहराते हैं) मंत्रियो इस्तीफा दो। (लोग दुहराते हैं) ये सुनाने जा रहे थे। ये क्या है, ये बगावत है? ये जनता का अधिकार नहीं है? तो कौन सा लोकतंत्र का सबक बरुआ साहब या जगजीवन बाबू मुझको सिखाना चाहते हैं? यही?

आप ये सोच कर आये होंगे कि जो-जो बातें वहाँ कही गयीं ११ और १६ तारीख को उनका जवाब, कुछ मसालेदार जवाब जयप्रकाश नारायण से आप सुनेंगे तो जयप्रकाश नारायण को आपने समझा नहीं है। मैं उनका जवाब देने नहीं आया हूँ। मैं अपनी बात आपसे कहने आया हूँ।

तानाशाही की तरफ

४ नवम्बर को अगर जनता आ पाती तो मेरा अपना ख्याल है कि १० लाख लोग आते। लेकिन जिले-जिले से जो लोग आये, उनसे जो कुछ सुना तो पता नहीं कि १५ लाख हो जाता कि २० लाख हो जाता भगवान जाने। तो जनता का भय था। क्या भय था? दिनकरजी की दो पंक्तियाँ हैं जो मुझे याद आ रही हैं। जनता की वो बात सुनना नहीं चाहते थे। "दो राह", राष्ट्रकवि ने कहा, "दो राह, समय के रथ का घर-घर नाद सुनो, सिंहासन खाली करो कि जनता आती है।" (तालियों की गड़गड़ाहट)। यही भय था इनको कि जनता आकर कहेगी, 'सिंहासन खाली करो, हम आ गये हैं।' इस भय से डर करके पता नहीं कितने, कभी अखबारों में दो लाख पढ़ लेता हूँ, कभी कुछ—सी०आर०पी० और बी०एस०एफ० के जवानों को बुलाया, लाठियाँ चलीं और जो कुछ हुआ पटने का वो लोकतंत्र का नजारा था जिसको पटने ने देखा था। मित्रो, ये लोकतंत्र नहीं है। ये तानाशाही है और हमारा देश तानाशाही की तरफ धीरे-धीरे खिसकते हुए जा रहा है। ११ तारीख की सभा को जिस तरह से अखबारों में प्रकाशित किया गया है सुर्खियों में, कम-से-कम वो भी संकेत देता है कि कितना भय है। ये जो बैठे हुए हैं इनको भय नहीं है। इनको भय तो नौकरी छूट जाने का भय होगा। ये भी कम भय नहीं है कि इस महंगाई के जमाने में नौकरी किसी की छूट जाये। लेकिन पत्रकार पत्र चलानेवाले, जो पैसा लगाया है लाखों करोड़ों रुपया लगा होगा, वो बंद हो जाये, क्या हो जायगा। फ्री प्रेस कहलाता है कि भारत में है। आये दिन सुनता हूँ कि किस एडीटर को कहाँ बुलाया गया, उनको क्या बात उनसे कही गयी, उसके बाद क्या छपा हुआ पत्र का। तो धीरे-धीरे हम जा रहे हैं उस तरफ मित्रो।

अब ये जो ११ और . थोड़ी देर लगेगी। बहुत ज्यादा देर नहीं लगेगी। असली बात तो अभी बाकी ही है। थोड़ा सुनकर ही जाइये। बैठ जाइये। अभी दूर से गाँव के लोग आये हैं। इनको

जाने दीजिये। शायद सत्र छह के लिए इनमें से कुछ लोग उपवास भी करना चाहते होंगे। चुपचाप मे जाइयेगा। बहुत कम लोग जा रहे हैं। बैठे रहिये-बहुत दिनों से सुन रहा था और आप भी सुन रहे थे कि 'काउंटर ऑफेंसिव' होनेवाला है। जैसे हम लोगों का ये जो आंदोलन है इन छात्रों का और जनता का बिहार का, ये कोई ऑफेंसिव है। ये कोई हमला है, कोई आक्रमण है। शांतिमय आंदोलन है। लाठिया तो इन बच्चों ने खायी हैं, आपने खायी हैं। हजारों की तादाद में जेलों को आप लोगों ने भरा है। ये कौन-सा ऑफेंसिव है कि जो बढ़नेवाली, आगे आक्रमण करनेवाली सेना है उसी पर लाठियाँ बरसें और सेना चुपचाप रहे? कौन-सा ये ऑफेंसिव है जिसका काउंटर ऑफेंसिव दिल्लीसे शुरू हुआ है, समझ में नहीं आया हमें। जो कुछ यहा काउंटर आफेंसिव हुआ, आपके ऊपर क्या असर पडा, पटना के नागरिकों के ऊपर ११ तारीख के जुलूस और सभा का और फिर १६ तारीख के जुलूस और सभा का, वो तो आप जानते हैं। मैं तो नहीं कह सकता हू। आपके बीच रहनेवाले कुछ मित्र-आकर मुझे बताते हैं और मुझे ऐसा लगता है कि आपके ऊपर जो असर हुआ, वो ठीक ही हुआ है मेरे ऊपर तो उसका कोई असर नहीं हुआ है। ये कोई ऑफेंसिव हैं, काउंटर ऑफेंसिव है कि क्या है? ११ तारीख को तो गालिया-गालियाँ थी और अमेरिका के दो दलाल हैं जिनके नाम आप सुनते आये हैं बहुत दिनों से, एक अटलबिहारी बाजपेयी हैं और एक जयप्रकाश नारायण हैं। ठीक है भाई, ये अगर आपका काउंटर ऑफेंसिव है तो अच्छी बात है, आप गालिया दे लो। और भी गालिया दी गयी। कांग्रेस के नारों में उतनी गालियाँ नो नहीं थी, लेकिन जो बातें उन्होंने कही, जो भाषण दिये उनमें कोई ऐसी बात तो नहीं थी जिसका कोई जवाब देने का भी सोचे। लेकिन मुझे इतना कहना है जनता के बीच कि आप दोनों से जाइये, जनता को अपनी बात आप समझाइये। जनता आपको स्वीकार करे, आपके चरणों पर जनता गिरे पीछे कदमों के चले तो मुझे कोई दुख नहीं होगा। जनता मालिक है। जनता मालिक है तो फैसला करे। जिधर जाना चाहे। लेकिन इस के वास्ते एक तो कहते हो कि देश भर के पूंजीपतियों ने इकट्ठा किया है धन। किसको? जयप्रकाश को। काहे के लिए? ये आन्दोलन चलाने के लिए कि इंदिरा गाधीजी को ये अपदस्थ करना चाहता है। अब ये देख लीजिये कि कितना यहा खर्च हुआ है इस विराट सभा के ऊपर। और ११ तारीख को क्या देखा था आपने? और १६ तारीख को क्या देखा था आपने? उसकी तैयारी में कितने लाखों रुपये खर्च हुए होंगे। जिन लोगों को लाया गया था उन पर कितने रुपये खर्च हुए होंगे। ये कोई चंदा हुआ है बिहार में, इसमें तो नहीं सुना। गरीबों से मागा गया है कि पटना चलना है, कि पटना में मेले लगाने हैं और शामियाने गाड़ने हैं और ये करना है और इसको देना १०-१० रुपया देना है, धोती देनी है, साड़ी देनी है और कुछ देना है तो जनता हमें चन्दा दे दो हम तुम्हारी सरकार हैं? कहा से पैसा आया, आपके पास में है? तो पूछ लीजियेगा पत्रकारों से, सबको पता है। भीतर-भीतर पता सब रहता है कि कितने लाखों रुपये खर्च हुए हैं

में। जनता के धन का ऐसा अपव्यय हो रहा है।

एक ही बात ये लोग कहते रहे बार-बार, बार-बार, भिन्न-भिन्न भाषा में। जिसको शायद जवाब देने की दृष्टि से नहीं लेकिन जिसको फिर एक बार समझा देने की दृष्टि से आवश्यक है कि इस पर मैं आपसे कुछ निवेदन करूं। और वो बात विधानसभा के भंग करने की है। ये लगता है कि विधान सभा के भंग करने की जो माग है ये कोई ऐसी माग है कि जिसकी वजह से भारत के लोकतंत्र की जड़ खुद रही है, उसकी दीवारें हिल रही है और बिहार की विधानसभा अगर भंग हो गयी तो फिर पता नहीं क्या हो जायेगा। भारत की डिमोक्रेसी चौपट हो जायेगी कि हम जानेंगी कि कहा जायेगी। चौपट तो जायेगी नहीं, शायद खत्म ही जायेगी, जिस प्रकार से चल रहा है। साजिशें जैसी चल रही हैं। सांठ-गांठ जैसा हो रहा है, गठबन्धन जैसा हुआ है। तो आज या कल, कल रविवार था जो 'इंडियन एक्सप्रेस' निकलता है—उस दिन के इंडियन एक्सप्रेस' का नाम है 'संडे स्टैंडर्ड'—उसकी प्रतियां कुछ कम आती हैं पटने में, आपमें से जो अंग्रेजी पढ़े लिखे लोग हैं उनसे मेरा निवेदन है कि उसमें बम्बई के प्रसिद्ध अधिवक्ता-एडवोकेट-जनरल ए० जी० नूरानी का एक बड़ा सुन्दर लेख है। [illegible] की तरह से, जिस तरह से उन्होंने इस दलील का खंडन किया है कि जनता को कोई अधिकार नहीं है। एक बार चुनाव हो गया तो जो अवधि है धारा-सभा की-पांच वर्ष की भारत में है—उस अवधि के बीच में ये माग पेश की जाये कि धारा सभा भंग हो या विधान सभा भंग हो, लोकसभा भंग हो ये 'अनडेमोक्रेटिक' है। [illegible] संविधान के विरुद्ध है [illegible] के विरुद्ध नहीं है। दोनों में मैंने भेद किया था और [illegible] [illegible] राजनीति का जानकार होगा वो जानेगा कि डिमोक्रेसी और [illegible] में कितना फर्क है।

संविधान विरोधी पर लोकतंत्र विरोधी नहीं

[illegible] बात [illegible] हो सकती है लेकिन वो अडेमोक्रेटिक नहीं हो सकती है, [illegible] सकती है। लेकिन नहीं भी हो सकती है। [illegible] संविधान के विरुद्ध है ये, [illegible] [illegible] विधानसभा को भंग करने की मांग असंवैधानिक है, [illegible] संविधान विरोधी होगी, [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] हैं, [illegible] [illegible] है, जनता को [illegible] [illegible] है, [illegible] [illegible] [illegible] है कि संविधान-इस्तीफा

करना, शान्तिमय धरना देना, उसके लिए तैयारी करना ये गैर-कानूनी नहीं है। ये 'मीसा' में नहीं आता है। अभी जो ये स्मगलर्स के बारे में, अब वो लोग अदालत में जाने लगे, जान-बूझकर के मेरा ख्याल है, जैसा कि अजित भट्टाचार्या ने और कई लेखकों ने लिखा है, ऐसे उनके ऊपर आरोप लगाये गये पुराने-पुराने कि जो मुकदमा में, अदालत में खड़े नहीं रहेंगे, ये छूट जायेंगे। और कहा जाता है, बाजार में गर्म है ये खबर, कलकत्ते के बाजार में खबर गर्म है, दिल्ली के बाजार में है, बम्बई के बाजार में है कि सौदा हुआ है—'स्मगलर्स' के साथ करोड़ों रुपये का सौदा हुआ है कि इनको छोड़ दिया जायेगा। वो तो मैं नहीं जानता कि सौदा हुआ है कि नहीं हुआ है, वो भगवान जाने। लेकिन ये छूटते जा रहे थे हाईकोर्ट से। अब उसका एक आर्डिनेंस बन गया, या प्रेसिडेंट्स आर्डर निकल गया है—अब पता नहीं कि वो कान्स्टिट्यूशनल है कि नहीं। वो तो फिर जायेगा सुप्रीम कोर्ट के सामने—अब जनता को कहने के लिए इन्दिराजी क्या कहेंगी कि देखिये स्मगलर्स को पकड़ा गया था और वो अदालत में अपील नहीं करें, जो उनके खिलाफ चार्ज वगैरह लगाया गया है जिसमें अदालत उनको छोड़ देती है, इसको रोकने के लिए हमने प्रेसिडेंट का एक आदेश निकाला है तो इसके खिलाफ आवाज उठ रही है विरोधियों की, जयप्रकाश नारायण की। ये सब स्मगलर्स के साथी हैं, ये सब लोग रुपया लेते हैं (हंसी)। लेकिन जानते हैं आप उस आदेश के द्वारा, वैसे तो ब्रह्मानन्द रेड्डी साहब ने कहा है कि नहीं, नहीं, सिर्फ स्मगलर्स और ब्लैकमार्केटियर्स. और कुछ कहा है न, एक्सचेंज, ये जो बाहर से हमारा सिक्के का आयात-निर्यात, ऐसे मुकदमों को छोड़कर के और दूसरे मुकदमों में ये आदेश लागू नहीं होगा। आदेश क्या, उस के देश के जरिये जनता का जो 'फन्डामेंटल राइट' है, आपका जो मौलिक अधिकार है, जन्मसिद्ध अधिकार है, भारत के संविधान में जनता ने अपने-आपको जो अधिकार दिया है, जिसके ऊपर ये सारा खड़ा है संविधान, ये लोकतन्त्र खड़ा है, वो अधिकार छिन जाता है। कोर्ट में जाने का अधिकार छिन जाता है। ता कई बार तो कहा है वकीलों ने अदालत में जाकर के। 'मीसा' जब हो रहा था, 'मीसा' के बारे में भी यही कहा गया था कि आप राजनैतिक विरोधियों के खिलाफ इसका इस्तेमाल नहीं कीजियेगा। तो कर्पूरी ठाकुर कौन हैं? रामानन्द तिवारी कौन हैं? ब्लैक-मार्केटियर हैं? चोर-बाजारी हैं? इनके ऊपर क्यों 'मीसा' लगाया गया? इन सैकड़ों लोगों के ऊपर जो 'मीसा' में बन्द हैं, क्यों लगाया गया? और जो आना है रिट-पिटीशन होता है तो हाईकोर्ट छोड़ देता है या, तो वहां छोड़ देता है। तो इनके वायदों का तो कोई मूल्य नहीं है। आज रेड्डी साहब हैं, कल नहीं हैं। इस प्रकार से एक-एक करके कदम बढ़ता जाता है। समय होता तो आपको बताता मैं। वो भी एक बहुत चिन्ता का विषय होता जा रहा है।

एक तरफ लोकतन्त्र के नारे लग रहे हैं, लेकिन देश धीरे धीरे, धीरे-धीरे खिसकता जा रहा है उस तरफ, तानाशाही की तरफ। तानाशाही जयप्रकाश नारायण की नहीं। जनता की तानाशाही तो तानाशाही हो ही नहीं सकती है। परस्पर विरोधी बात है। जनता तानाशाह तो नहीं न होगी। जनता का तो राज होगा, तानाशाही इन सत्ताधारियों की। चाहे इन्दिराजी, तानाशाह वह बनें या उनकी कुर्सी पर और कोई बैठनेवाला बने। राज्य तो उन्हीं का है। तो मित्रो, विधानसभा भंग हो ये मांग इसलिए आयी और जब दिल्ली में मेरी बातचीत में भी मैंने कहा कि विहार के लड़कों की आपको तारीफ करनी पड़ेगी कि उन्होंने शुरू में ही ये मांग पेश नहीं की थी कि बिहार का मन्त्रिमंडल इस्तीफा दे दे। यह आप जानते हैं आपको कहानी पुरानी सुनाने की क्या जरूरत है। यह विधान सभा भंग हो जाये, महंगाई दूर करो, बेकारी दूर करो, शिक्षा में क्रांति करो या आमूल परिवर्तन करो, भ्रष्टाचार मिटाओ ये उनके नारे थे। ८ और नारे थे। एडमिशन मेडीकल कालेज में ऐसा करो, वैसा करो और सब नारे थे। इनकी मांगें थीं। उनको लेकर के आंदोलन शुरू हुआ। फिर लाठी चली, गोली चली। यहां चली, भागलपुर में चली, मुजफ्फरपुर में चली, कहां-कहां चली। कई दिनों के बाद ये मांग पेश की उन्होंने कि मन्त्रिमंडल का इस्तीफा हो, और फिर कई दिनों के बाद, बल्कि कई हफ्तों के बाद मांग इन्होंने पेश की, करीब-करीब अप्रैल के अन्त में मेरा ख्याल है, कि विधानसभा भंग हो। वह किसलिए? इसीलिए कि या तो ये विधानसभा इस मन्त्रिमंडल की काली करतूतों की निंदा करे, इस मन्त्रिमंडल को बर्खास्त करे या विधानसभा स्वयं भंग हो (तालियों की गड़गड़ाहट)। इस हुकूमत की सारी काली करतूतों के पाप का जो घड़ा है वह एक एक विधायक के सर पर है, इस विधानसभा के सर पर है। सब उस पाप के भागी हैं। इसलिए उनको जाना है।

और इसलिये कदम-दर-कदम ये आंदोलन कैसे चला है। इसको कहा जाता है एंटी-कान्स्टिट्यूशन? एंटी-डिमोक्रेटिक? प्रोग्राम बना एक करोड़ हस्ताक्षर इकट्ठे होंगे। एक करोड़ विहार की ६ करोड़ की आबादी में से, यानी हर घर से। अब कितने इकट्ठे हुए हस्ताक्षर? मैं नहीं कह सकता। लेकिन जो मैंने राज्यपाल के पास ५ जून को समर्पण किया वह ट्रक पर लेकर के, २० लाख हस्ताक्षर थे। २० लाख ऐसा गिना था लोगों ने। एक-एक करके क्या गिना होगा। अन्दाज लगाया होगा। लेकिन हर जिले से यह खबर आयी कि छात्र संघर्ष समितियों पर पुलिस ने छापा मारा और कहीं २० हजार, कहीं १० हजार हस्ताक्षर पड़े हुए थे, फार्म पड़े हुए थे हस्ताक्षर के साथ, अंगूठे के निशान के साथ, पुलिस उठाकर ले गयी। फाड़कर फेंक दिया होगा, जला दिया होगा। तो जनता का मत प्रकट करने के लिए, जनता का मत प्राप्त करने के लिए, इन्दिराजी कहती हैं कि 'स्ट्रीट्स' में इसका फैसला नहीं होगा, सड़कों पर इसका फैसला नहीं होगा, तो इन्दिराजी भूल करती हैं आप। हम नहीं मांग रहे हैं कि सड़कों पर फैसला हो। कोई दंगा नहीं किया जा रहा है। न दंगा हो रहा है इतनी विराट ये सभा! हस्ताक्षर में यही लिखा हुआ था कि आप इस्तीफा दीजिये, विधान सभा भंग हो। नहीं हुआ। उसके बाद एक-एक विधायक के क्षेत्र में, उनकी कान्स्टिट्यूएंसी में, चुनाव के क्षेत्र में, ये प्रोग्राम रहा कि सभाएं की जायें। अब ये दरबार लोग देहातों में जायेंगे नहीं। तार वहां से भेजे गवर्नर साहब के पास।

जबसे उसने पार्टी छोड़ी। लेकिन ये संघर्ष है। इन्दिराजी ने इस चुनाव को संघर्ष माना है कि इसमें हम फैसला करेंगे कि जनता किसके साथ है (नारे, तालियों की गड़गड़ाहट) तो ठीक है, जनता फैसला करेगी। जयप्रकाश नारायण नहीं करेंगे, इन्दिराजी नहीं करेंगी। लेकिन भाई सुना…सुनो…सुनो…(नारों की तेज आवाज)…शांति …लेकिन ये चूंकि संघर्ष है और इस संघर्ष में हमको नायक का पद दिया है लड़कों ने हमको अपना नेता बनाया है बिहार की जनता ने, तो उस संघर्ष के मैदान में, मैं भी खड़ा रहूंगा (जोरदार नारे, तालियाँ, शोर)। सुनो, सुनो, सुनो, सुनिये · अच्छा बहुत हुआ, बहुत हुआ… शांति…नहीं, नहीं, कोई मत बोलो, हमारे पास ऐ, लड़के बैठो …अब तुम शोर करोगे ! बैठो, बैठो, तो और शोर होगा, ये हमारे पास लाउडस्पीकर है न …शायद गलत तो नहीं समझा आपने। उस संघर्ष के, चुनाव के संघर्ष के मैदान में जयप्रकाश नारायण भी खड़ा रहेगा। इस माने नहीं कि जयप्रकाश भी कोई 'कैंडिडेट' होनेवाला है, उम्मीदवार की हैसियत से नहीं खड़ा होगा। इस संघर्ष के नायक की हैसियत से खड़ा होगा (तालियां)। और इस संघर्ष में, इस चुनाव में ये 'ये कंटेस्ट' जो होगा चुनाव का, ये दूसरे ढंग का होगा। इस चुनाव के 'कंटेस्ट' में और नहीं, आपका पार्ट हैनायक बनने का और नायिका बनने का। बहनो और भाईयो, इस चुनाव में केवल दो दल रहेंगे, दो दल (तालियां)। बच्चा बार-बार, इसलिए मैं मना करता हूं कि तालियाँ मत लगाओ हमारी सभाओं में। आज मैंने छूट दे दी है, इसलिए कि बहुत दिन का दबा होगा (हर्ष-ध्वनि) सब अरमान दबे होंगे, एक बार दिल खोल के आप तालियां लगा लें, मैं मना (देर तक तालियों का शोर) · शांति-शांति देखिए बात समझते नहीं है आप, सिर्फ दो दल रहेंगे इस पर ताली लगाने की बात नहीं थी। इसके बाद जो मैं कह रहा हूं इस पर जरूर तालियां लगेंगी (हंसी)। अगर आप बात समझेंगे तो ये दल क्या होंगे ? एक दल होगा जनता और छात्रों के इस संघर्ष के साथ जो हैं वो एक दल, संघर्ष का जो विरोधी है वो एक दल (तालियाँ)। ये दो दल और तीसरा दल नहीं। जो इस संघर्ष के साथ हैं वो एक दल। जो संघर्ष के विरोधी हैं वो दो दल। संघर्ष विरोधी आज कांग्रेस है और सी॰ पी॰ आई॰ है। वो एक दल। इसके समर्थन में बाकी सब पार्टियां है, इन्दिराजी बराबर फासिस्ट कहती हैं।

जनसंघ फासिस्ट है और कौन-कौन है पता नहीं। आनन्दमार्गी तो आज तक देखा नहीं हमने इस आन्दोलन में दाढ़ी मुड़ाकर के, अपना वो जो लाल वस्त्र होता है वो उतार के कोई आया होगा तो मैं नहीं जानता हूं। प्रधानमन्त्री हैं भारत की। अरे बाबा आर. एस. एस. की बात करो तो कुछ समझ में आती है। गांधीजी की हत्या की। चुपचुप करके घुमा-फिरा कर उलटी-सीधी बात करते हो। किसने हत्या की आपको भी मालूम है। आर. एस. एस. है। बहुत बड़ा पार्ट अदा किया है। स्वयं तो नहीं किया है, विद्यार्थी परिषद, जनसंघ और स्वयं भी किया है फासिस्ट। अब पता नहीं क्या परिभाषा है। अब इस संघर्ष में हैं, लाठियाँ खा रहे हैं, गोलियां खा रहे हैं। नानाजी देशमुख उनके एक बड़े नेता हैं। मुझे बचाने के लिए कितनी बड़ी, जबर्दस्त चोट लगी थी उनको। पड़े थे यहाँ। जेल पर अभी गये हैं। जो लोग संघर्ष लड़ रहे हैं जनता की तरफ से अब उनको तो फासिस्ट कह दिया। फासिस्ट कौन-सा संगठन है मेरी नजर में नहीं आता लेकिन जनसंघ ही है, संगठन कांग्रेस ही है ? क्या समाजवादी पार्टी फासिस्ट पार्टी नहीं है ? क्या संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी नहीं है ? क्या इन्दिराजी ने ज्योति बाबू का, ज्योति बसु बाबू का जो बयान अभी हाल का नहीं पढ़ा है, कलकत्ते से जो उन्होंने भाषण दिया, भुवनेश्वर में जो वहां उन्होंने कि हमारी पार्टी मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी पूरे हृदय से इस आंदोलन के साथ है। पार्लियामेण्ट के, संसद के सदस्य लोकसभा के सदस्य ज्योतिर्मय बसु आये थे यहां। वो मुझसे भी कहके गये। यहाँ भी बोले हैं, पूरे दिल के साथ हम इस आंदोलन के साथ हैं। वो फासिस्ट है, वो रिएक्शनरी है, राइट रिएक्शनरी हैं ? एक शब्द पढ़ा है इन्होंने एडवेंचरिस्ट (हंसी) एडवेन्चरिस्ट। जितने सारे 'आवरचुनिस्ट' हैं उनको तो आपने इकट्ठा कर लिया है। अपनी छत्र-छाया में। जो आपकी छत्र-छाया में रह करके आगे बढ़ना चाहते हैं, फिर आपको कहां गिरायेंगे। वो तो इतिहास देखेंगे, अगर आप संभल गयीं तो, इन्दिराजी को यह कह रहा हूं (तालियाँ)। ये लोग जो नारे लगानेवाले लोग है न, हमारे सी. पी. आई. के, दक्षिणपन्थी लोग। रिवोल्युशनरी सोशलिस्ट पार्टी है। छोटी पार्टी है लेकिन है तो रिवाल्युशनरी सोशलिस्ट पार्टी। त्रिदीव चौधरी जो वहां हैं। वो फासिस्ट हैं वो ? दुर्गा बागची बाबू हैं यहां, यहां तारा बाबू है। ये लोग फासिस्ट हैं, रिएक्शनरी हैं। ये मार्क्सिस्ट को-आर्डिनेशन कमिटी है। वो ए. के. राय हैं जिन्होंने अभी इस्तीफा दिया, जिन्होंने गिरीडीह और धनबाद के इलाकों में, आदिवासियों में पैरलल गवर्नमेंट बना रखी है, समानान्तर सरकार चलती है उनकी ये तकी रहीम साहब, ये शुक्ल साहब हैं, उमाशंकर शुक्ल या क्या, अब ये एक बना हुआ है वो कहते जाते हैं ये लोग भी फासिस्ट हैं, फासिस्ट हैं।

सम्पूर्ण क्रांति का आन्दोलन

अरे बाबा हम तो कहते हैं कि सम्पूर्ण क्रांति का आंदोलन है। इसमें सारा समाज बदलेगा। आर्थिक क्रांति, राजनैतिक क्रांति, सामाजिक क्रांति, सांस्कृतिक क्रांति, सब होगी। बच्चों को कहता हूं अब, नारे लगाते ही तुम्हारी शादी होगी। तुम्हारे बाप अगर तिलक मांगेंगे, दहेज मांगेंगे और तुमने उनको रोका नहीं, प्रतिवाद नहीं किया तो धिक्कार है तुम्हारे इन्कलाब जिन्दाबाद के ऊपर (तालियां)। तुम्हारा सारा त्याग, बलिदान व्यर्थ गया ऐसा मानो। अगर इस आंदोलन के बाद भी ऊपर ब्राह्मण हो, राजपूत हो, भूमिहार ब्राह्मण हो और नीचे शूद्र हो और उनके भी नीचे कौन हो ? यानि जो जाति व्यवस्था है उसका मैं कह रहा हूं। उनके नीचे जाति के बाहर के लोग हैं आउट-कास्ट, जिनको हिन्दू समाज ने अपनी कास्ट में, अपने अंक में कभी लिया ही नहीं, वो हमारे हरिजन भाई हैं। अब यही रहेगा नक्शा ? बिहार का यही नक्शा रहेगा ? हरगिज नहीं रहेगा अगर यह सफल होगा तो। और इसलिए कहा कि लम्बी लड़ाई है, विधानसभा और इसका क्या है। ये, ये विधानसभा के भंग होने से

इस संघर्ष को घसीटा है चुनाव के मैदान में भारत की प्रधानमंत्री ने

और मन्त्रिमण्डल के टूट जाने से कौन ये सब बातें हो जानेवाली हैं। यह तो रास्ते मे रुकावटें हैं, चट्टानें हैं। आ गयी हैं रास्ते में। आगे बढ़ना है हमको। इनको हटाकर के ही हम आगे बढ़ सकते हैं। कोई रास्ता नहीं है। रास्ता रोके हुए हैं (तालियां)। लेकिन यह नारा लगता है। तो मित्रो यह दो दल चुनाव की चुनौती जयप्रकाश नारायण ने स्वीकार की है (तालियां)। और एक बार कह चुका हूं कि इसको भूलिये मत। मगर आप इस संघर्ष के साथ हैं तो जो भी पार्टियां हों, जो संघर्ष का साथ दे रही हैं या जो भी संघर्ष समितियां, छात्र संघर्ष समितियां और जन-संघर्ष समितियां मिल करके जिनको खड़ा कर दें, जिन उम्मीदवारों को, आंख बन्द करके उनके बक्से में आपको वोट देना है (तालियां), आंख बन्द करके वोट देना है। भिन्न-भिन्न पार्टियां उनको हार सकती हैं, लेकिन इस संघर्ष को घसीटा है चुनाव के मैदान में भारत की प्रधानमन्त्री ने। इसकी जिम्मेदारी हमारे ऊपर नहीं है। जितने वो लोग हैं जो चमचे नहीं हैं और जो *'इँगर्स आन' नहीं हैं*, इधर-उधर मन्त्रियों के रहनेवाले और ठेकेदारी करनेवाले और चाटुकारी करनेवाले और, और ' करनेवाले, वोटों के ठेकेदार, रुपया कमानेवाले वो मुट्ठी भर लोग, वो किनको वोट देंगे? वो उनको वोट देंगे जो इस संघर्ष के विरोधी हैं। ये दो पार्टियां, *कांग्रेस और कम्युनिस्ट पार्टी। शुरू से आज तक विरोध किया है।* हमारे एक प्रदर्शन में, पटना में, कोई एक घायल हुआ लड़का और वे डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट साहब ने ११ तारीख को क्या मंजूर किया *शाम को कि कम्युनिस्ट पार्टी का जो जुलूस निकला उसमें २० आदमी* घायल हुए। उनमें से जितने लोग अस्पताल में थे, उनको जाकर मैंने देखा भी और उनको जो चोटें लगी थीं, गड़ासे से, भाले से, भाला-बरछा, कुछ बन्दूकें कुछ तलवारें लेकर के यहां जुलूस निकालते हैं और हर प्रकार की सुविधा उनको रहती है। हर प्रकार पुलिस का उनको प्रोटेक्शन मिलता है, संरक्षण मिलता है। और ये निहत्थी जनता आती है अपने पैरों पर चल करके तो गंगा पार करने के लिए जो गरीब लोगों की नावें हैं उनको डुबा दिया गया। आपको मालूम है, हाजीपुर में नाव उनकी जब्त करके वहां रख लिया गया। कौन घाट कहलाता है और इधर वो नया गांव और सोनपुर के इस तरफ के इलाके के, पुलिस ने जाकर के नावें पकड़ के उनको डुबा दिया। पानी भर गया। नावें डुबा दीं उन्होंने कि जनता पार न करे। तो जनता ने केले के थम्भ बांध करके और बांस की टट्टियां बनाकर के (तालियां) गंगा पार किया, गंगा पार किया है, गंगा बड़ी हुई उस जमाने की। अब तो धीरे-धीरे सिमटती जा रही है। तो देखा जायेगा। जब भी चुनाव होगा देखा जायेगा।

एक ही बात का हमें डर है मित्रो। न रुपया का कोई जान चलेगा न लाठियों का भय है। न कोई बोगस का मुझे भय है। जनता जाग्रत हो गयी है। नहीं होगा उस दिन पोलिंग नहीं होगी, टूट जायेगी अगर बोगस चलेगा तो (तालियां)। असली वोटर वोट देने आयेगा और पोलिंग आफीसर कहेगा कि तुम्हारे तो वोट पड़ गये भाई, हम क्या करें, दूसरा ले आकर डाल दिया है। वो कहेंगे कि अच्छी बात है आप तशरीफ ले जाइये यहां से फिर 'रिपोलिंग' होगी यहां। हम असली वोटर हैं। हमारा वोट देकर कौन चला गया? आज भी तो स्थिति है कि कालेज के प्रोफेसर आते हैं वोट देने तो कहा जाता है कि प्रोफेसर साहब, आपका वोट तो पड़ गया। अब प्रोफेसर वापस आ जाते हैं। क्या करें बिचारे। क्या करें वहां? ये नहीं चलनेवाला है, जनता अब जाग्रत हो गयी है। लेकिन भय इस बात का है मुझे, मैं वो भी कह देता हूं, इसलिए कह देता हूं कि आप लोग सोचिए अपने दिमागों को, सरों को जोड़कर के कोई हल निकालना पड़ेगा, खासकर उन लोगों को जिनको रत्ती रत्ती मालूम है कि वो जो बदमाशियां चलती हैं, भय इस बात का है कि पिछले दिनों में इन्दिराजी के राज्य में, जिस तरह *से सार्वजनिक जीवन का राजनैतिक जीवन का पतन हुआ है, नैतिक* मूल्यों का पतन हुआ है पहले भी हुआ था ' लेकिन इतना अधःपतन! इस तेजी के साथ गिरता गया हमने देखा नहीं कि प्रशासन में जो लोग लगे हुए हैं वो भी आज 'डि-मारलाइज्ड' हैं, उनका *भी नैतिक बल टूट चुका है। कुछ जिनके आज भी हिम्मत है, लेकिन* बच्चे हैं, बेटी है शादी करने को, जवान बेटा है कालेज में पढ़ाने को। दो हजार की तनख्वाह मिलती है, नौकरी चली जायेगी तो भीख *मांगेंगे कि क्या करेंगे? जयप्रकाश नारायण खिलायेंगे कि छात्र* संघर्ष समिति खिलायेगी कि जन संघर्ष समिति खिलायेगी? तो डर इस बात का है कि जिन लोगों को पहरेदार बनाया गया है कि सारा *चुनाव ठीक ढंग से हो, बेइमानी न हो, वही पोलिंग आफिसर, नहीं* भ्रष्ट प्रिसाइडिंग आफीसर से कहा जायेगा कि तुम अगर इस से कर दो, ऐसा कर दो, ऐसा कर दो - वो भेद हमको नहीं मालूम है, आज-*तक जन्म में चुनाव लड़ा नहीं हूं, मैं जानता नहीं हूं—तो तुम्हारी* तरक्की हो जायेगी, तुमको इनाम दिया जायेगा, कुछ और कर दिया जायेगा, तो बहुत लोग आज मिल जायेंगे जो अपना ईमान बेचने को तैयार होंगे। बस इस बात का डर है। इन्दिराजी के करोड़ों रुपये का डर नहीं है। किसी लाठियों का डर नहीं। वह जमाना लद गया है। बिहार में कम से कम वह बातें अब नहीं, अब नहीं होंगी, नहीं होंगी, नहीं होंगी (तालियां) 'अबलौं नसानी, अब ना नसैहों', (जोरदार ताली)।

कोई छिपाने की बात नहीं

तो मित्रो आगे का कार्यक्रम संक्षेप में। मेरा कहने का अनुभव है कि हम लोगों ने अपनी ईमानदारी से, सचाई से कि कोई हमें चोरी-छिपे काम करना नहीं है, खुला हुआ आन्दोलन है, शान्ति रखो

है। मैंने तो इसको अहिंसक कहा नहीं इसलिए कि अहिंसा में किसी का स्थान नहीं, है शान्तिमय कहा है जैसे मैंने कई दफे समझाया कि आजादी की लड़ाई 'पीसफुल लेजिटिमेट मास'—कांग्रेस के उद्देश्य में यही लिखा था 'अचीवमेंट आफ कम्पलीट इडिपेंडेंस बाई पीसफुल एंड लेजिटिमेट मीन्स-कभी उसको नान-वायलेंट मीन्स में बदला नहीं जा सकता। विरोध हुआ। अन्त में ३४ में गांधीजी अलग ही हो गये, कांग्रेस छोड़ करके। शायद एक कारण वो भी था। जो भी हो। तो शान्तिमय आन्दोलन, फिर भी हम लोग गुप्त ढंग से कुछ करना नहीं चाहते थे। डी० आई० जी० साहब ने फोन किया, आई० जी० साहब ने फोन किया कि क्या प्रोग्राम है, क्या हो रहा है। हमारे दफ्तर से कि ये प्रोग्राम हो रहा है। कोई छिपाने की बात थी नहीं, पर्चे भी बंट जाते थे। हम भी भाषण दे जाते थे। अब ४ नवम्बर के बारे में मैं अपने दौरे पर गया तो चारों तरफ उसका खुद ही प्रचार किया, जहां-जहां मैं गया। सब जगह तो गया नहीं। अब उसका नतीजा यह हुआ कि लोग पहले से ही तैयारी कर लेते हैं। बिलकुल एन्टी-डिमोक्रेटिक है। अगर कोई कानून तोड़ता है तो अरे बाबा ४जून को किसी ने एक रोड़ा भी नहीं फेंका होगा, और आपको सुनकर ताज्जुब होगा और शर्म भी होगी कि पटना के सरकारी डाक्टरों के ऊपर, ऊपर से दबाव डाला गया कि आप सर्टिफिकेट दे दीजिये कि फलाने मजिस्ट्रेट और फलाने पुलिस के आफिसर और फलाने पुलिस के सिपाही आज घायल हुए। ४ नवम्बर को ये घायल हुआ, ये आप सर्टिफिकेट दे दीजिये। इन डाक्टर बन्धुओं की जितनी तारीफ की जाये उतनी कम होगी। इन्होंने इन्कार किया और इनकी तरफ से चिट्ठी लिखी गयी है इसके खिलाफ 'प्रोटेस्ट' करते हुए। अब इतना नीचे उतर सकते हैं ये लोग। कैसे लड़ाई लड़ी जाये। तो इसलिए मैं कोई ज्यादा खोल के बात समझा नहीं देना चाहता हूँ। कुछ बातें आपके सामने रख देना चाहता हूँ। जैसे पहलवान एक बड़ी कुश्ती के बाद—भले ही कुश्ती वह जीत भी गया हो और ४ नवम्बर की कुश्ती तो जनता ने जीती, सरकार ने नहीं जीती, इसमें तो कोई सन्देह किसी को हो ही नहीं सकता है जो थोड़े भी निष्पक्ष हों—थक जाता है, वह पहलवान और थोड़ा सुस्ताना है तो वो थोड़ा समय इस वक्त जा रहा है। और शक्ति बटोरने का प्रयास हम लोग कर रहे हैं। बहुत गिरफ्तारियां हुई, छात्र-नेता, जन-नेता, राजनीतिक-नेता गिरफ्तार हुए और पकड़े गये। सैकड़ों की तादाद में ४ नवम्बर से पहले। उसमें से बहुत-सारे छूटे नहीं। कुछ छूट कर आये। उनकी जगह आपसे आप भरती नहीं क्योंकि एक एडहाक संगठन है। गांधीजी को तो कांग्रेस का हथियार था कांग्रेस का संगठन था पच्चीस वर्षों का बना हुआ, उसको उन्होंने नया रूप दिया, उसको काट छांट कर ठीक किया, लड़ाई के लायक किया। लेकिन यहां तो कुछ नहीं, छात्र संघर्ष समिति, जन संघर्ष समिति बन जाती हैं और इतना बड़ा काम उसके कन्धों पर आ पड़ा है।

तो इस समय हम लोग इस सुस्ताने और तैयारी करने के बाद वो काम कर रहे हैं जो सबसे महत्व के काम हैं, बुनियादी काम हैं। वो एक है कि जिले-जिले में संगठन मजबूत किया जा रहा है। हर जिले, हर प्रखण्ड के नीचे ग्राम पंचायत के स्तर तक जन संघर्ष समितियों, और छात्र वहां हों तो छात्र संघर्ष समितियों का निर्माण, यही हर मुहल्ले में आपको करना है। मुहल्ले-मुहल्ले पटना नगर में समितियों को लेकर आपस में थोड़ी कटुता भी हुई, थोड़ा विरोध भी हुआ लेकिन इतने त्याग, बलिदान के बाद अगर छात्र नेताओं, जन नेताओं की अपनी-अपनी लीडरी की महत्वाकांक्षाएं अगर कुंठित नहीं होंगी तो इतिहास उनको क्षमा नहीं करेगा, कभी माफ नहीं करेगा। आप नहीं जानते कि आपस के ये झगड़े पैदा करके कितना नुकसान पहुंचा रहे हो अपने आन्दोलन को। ये बन्द होने चाहिये, यह लीडरी के झगड़े, पैसों के ये झगड़े। आज भी हमारे पास यह शिकायतें आती हैं पैसों के बारे में। हिसाब ठीक करने को कहा जाता है तो धमकी दी जाती है कि अच्छा देख लेंगे। यानी कि उनको पिटवा देंगे कुछ छात्रों से। अजब हालत है। भ्रष्टाचार के विरुद्ध आन्दोलन कर रहे हैं और खुद हमारी सेना में ऐसे लोग हैं जिनको नेतागिरी की सूझी है, जिनको और कुछ सूझी है। तो ये बन्द होने चाहिए। और संगठन कठोर दृढ़, मजबूत होना चाहिए। दूसरा कार्यक्रम है कि जितने नये, पुराने कार्यकर्त्ता हैं उन सबको ट्रेनिंग हो, प्रशिक्षण हो। एक दिन का, तीन दिन का, दस दिनों का प्रशिक्षण। चुने हुए लोगों का दस दिनों का। जो दूसरों को प्रशिक्षण कर सकते हैं, ट्रेनर्स की ट्रेनिंग दस दिनों की। ये दिसम्बर के महीने में दस दिनों की। यही काम नारायण भाई के जिम्मे था और इस सरकार ने उनको बिहार से बहिष्कृत कर दिया। यह गैरकानूनी है। जनता के, नारायण भाई के देश का एक नागरिक होने के नाते जो उनका जन्मसिद्ध अधिकार है उससे उनको वंचित किया गया। भारत के हर नागरिक को यह अधिकार है कि जहां चाहे वहां रहे, जहां जाना चाहे वहां जाये। यह अधिकार है तो नारायण भाई का यह भारत नहीं है? केवल गुजरात है उनका? उनका बहिष्कार किसलिए किया? कौन-सा गैर कानूनी काम कर रहे थे वे? अगर कोई गैरकानूनी काम किया था तो उन पर मुकदमा क्यों नहीं चलाया? यह कायरता है। हुकूमत की हिम्मत नहीं है सामने मैदान में आने की। यह समझते हैं कि जयप्रकाश नारायण के दाहिने हाथ काट देंगे तो वह लाचार क्या करेगा?

प्रशिक्षण कार्यक्रम

तो मित्रो यह प्रशिक्षण का, पटना नगर में भी प्रशिक्षण होंगे। पहले से सूचना नहीं दी जायेगी कि यहां प्रशिक्षण चल रहा है। २५ आदमियों का प्रशिक्षण हो रहा है, पुलिस ने छापा मारा और २५ के २५ ले गये। क्यों भाई? इकट्ठे होकर सरकार को उलटने का षड्यंत्र मचा रहे थे। बाबा प्रशिक्षण ले रहे थे, हम भ्रष्टाचार और महंगाई को समझ रहे थे। इस आन्दोलन के अपने कार्यक्रम को समझ रहे थे। लेकिन यही होता रहा है। अभी रिजर्व बैंक का कर्मचारी नारा लगा रहा था और खुद डी एस.पी.ने उसको पीटा। बाबा नारा लगाना इस देश में अपराध हो गया है, और डी. एस पी. की यह हिम्मत हो जाती है इतने लोगों की भीड़ में। तो डी. एस. पी. को पकड़ियेगा? और घेराव भी मत कीजियेगा मेहरबानी करके। उनके पास बन्दूक और पिस्तौल होगी तो वह चला ही देंगे। और उन्होंने यह भी कहा

कि नौकरी खा लेंगे, नौकरी खा लें वह। कालपुरुष बन कर आये हैं यह लोग तो कालपुरुष इन्हीं को हजम कर जानेवाला है। इन सब अफसरों की ब्लैक लिस्ट बन रही है। मैं कई बार कह चुका हूं।

तो मित्रो, तीसरा काम यह कि जनसभा, जन विधानसभा, जनता की विधानसभा का चुनाव करना, अब नोटिस की बात नहीं है। उन्होंने कह दिया कि विधान सभा भंग नहीं होगी। मैंने कहा था कि चार नवम्बर के प्रदर्शन के बाद, लाखों लोगों की आवाजें सुनने के बाद एक महीने का नोटिस (अखबारवालों ने उलट दिया इसमें, समझते ही नहीं मेरी बात, पता नहीं क्यों, बार बार समझाता हूं) दूंगा। एक महीने में विधान सभा भंग नहीं होती तो यह नहीं कहा कि राजेन्द्र बाबू के जन्मदिवस ३ दिसम्बर को जनता की विधानसभा का चुनाव होगा। अरे बाबा, चुनाव कैसे इतना जल्दी हो जायेगा। फिर ३ दिसम्बर से तैयारी शुरू कर देंगे, यह कहा था। लेकिन चूंकि प्रधानमन्त्री ने ऐलान कर दिया कि हरगिज नहीं होगा विधानसभा भंग, तो ठीक है हरगिज नहीं होगा। बात समझ ली आपको। तो तैयारी। तो तैयारी में क्या क्या भुगतना पड़ेगा, मैं नहीं कह सकता। जनता की विधानसभा का चुनाव करना, यह भी संघर्ष का कार्यक्रम है। संघर्ष का नया रूप है। इसके माने इसके वहां हर चुनाव क्षेत्र में जनता को जागृत करना, संगठित करना, पंचायत के स्तर तक जन संघर्ष समितियों का निर्माण करना, संगठन करना, यह सारा काम करना, संघर्ष का काम है। लेकिन एक बहाना है कि यह जनता की विधान सभा का हम चुनाव करेंगे। तो लोग पूछते हैं कि जयप्रकाश ने कहा कि जनता की विधान सभा पटना के गांधी मैदान में बैठेगी। जैसे पठानों के बैठते हैं सीमान्त पर अफगानिस्तान में और जनता बैठेगी हजारों की तादाद में। तो बैठेगी कि नहीं भगवान जाने। चुनाव भी होंगे कि नहीं भगवान जाने। कहीं पोलिंग बूथ हमने बनाया, वहां पेटी रखी और पुलिस ने हमला किया और उसको उठाकर ले गये। उठाकर ले जाओ, यह भी संघर्ष है। यह संघर्ष है। जनता दरसाती है आपको कि हम तो एक चुनाव कर रहे हैं अपने प्रतिनिधियों का, शान्तिमय तरीकों से कर रहे हैं। आपने कानून में मना किया नहीं है करने का। तो हम कर रहे हैं। मान लीजिए खेल ही कर रहे हैं। बच्चों का खेल है। खेलने दीजिए। अगर हम बच्चे हैं नादान तो तोड़ लेंगे। अब यहां विधान सभा के विधायक लोग आयेंगे। वह शायद आ भी नहीं सकेगा कि वह लोग सब आ जायें। आ जायें तो लाठी चलेगी शायद। अरे, विधान सभा तो, कहेंगे, यहां है, तुम कहां से आ गये। भागो यहां से नकली लोग। तो यह संघर्ष का नया रूप है। इसे इस लाइट में आप लीजिये।

आज पूछते हो कि विधान सभा बैठेगी तो क्या करेगी? उसका शासन कैसा होगा। उसका मन्त्रिमंडल कैसे बनेगा? अरे बाबा? अगर विधान सभा बैठ गयी, जनता की विधान सभा का चुनाव अगर इन लोगों ने करने दिया और विधान सभा बैठ गयी तो इंदिराजी भी देखेंगी, गफूर साहब भी देखेंगे और बरुआ साहब भी देखेंगे और सब लोग देखेंगे कि जनता की विधान सभा कैसे काम करती है, कैसे काम सबों में करती है, सबके सामने करती है। कानून नहीं बना सकती है यह विधान सभा? आखिर जो यह विधान सभा कानून बनाती है या दिल्ली की लोक सभा कानून बनाती है उसके पीछे सैंक्शन क्या है? कानून वही चलता है जिसको जनता मान्य करती है। जिस कानून के पीछे जनता की मान्यता न हो, वह रद्दी की कागज पर लिखा हुआ है। कोई कीमत नहीं उसकी। और कितने कानून हैं पड़े हुए उनके कानून की किताब में। अगर इस विधान सभा ने कोई कानून बनाया तो जनता का समर्थन लेकर आये हैं जनता उस पर अमल करेगी, चाहे वह भूमि व्यवस्था के बारे में ही क्यों न हो। हां, उसके पास पैसा नहीं होगा। करोड़ों और अरबों रुपयों का विकास का काम वह नहीं कर सकती है। लेकिन बहुत सा ऐसा काम कर सकती है जो यहां नहीं हो सकता है। यहां हो सकता है। तो सबका जवाब तो मेरे पास नहीं है। जब जनता के विधायक यहां आकर बैठेंगे तो वह भी तो कुछ सोचेंगे। उनको भी सोचने के लिए तो कुछ होना चाहिए। कि सब बनाकर हम रख दें कि आपको यह करना है, यह करना है। अरे बाबा तुम जनता का वोट लेकर आये हो तो तुम बैठकर फैसला करो ताकि उसका जवाब वह देंगे आपको। लेकिन मैंने आपको समझाने के लिए दो बातें कह दीं। अब इसके लिए इलेक्शन कमिश्नर की खोज है। उनको बहुत कुछ करना नहीं है। कंटेस्ट तो होगा नहीं। कांग्रेस, कम्युनिस्ट खड़े नहीं होंगे। यह पार्टियां आपस में मेल करके कोई एक उम्मीदवार खड़ा कर देंगी। जहां नहीं होगा, जनसंघर्ष, छात्र संघर्ष समितियां खड़ा कर देंगी। अब मैं जब बार बार कहता था कि यह लोकतन्त्र में हमारी बहुत बड़ी कमी है। इस लोकतन्त्र में जनता के लिए एक ही स्थान है। एक ही काम है। वह क्या है कि जब चुनाव आये तो मतदान पेटी में मतदान-पत्र डाल देना और यह अधिकार भी जनता का छिनता जा रहा है रुपयों के जोर से, लाठियों के जोर से बेईमानी से। पिछले चुनाव में देखा है, धोखा बनते जाते हैं, मजाक होते जाते हैं। यह चुनाव है। जनता का एकमात्र अधिकार छिनता जा रहा है। ऐसी हालत में इस लोक-तन्त्र में केवल तन्त्र ही तन्त्र है। यह बार बार मैंने आपसे कहा कि इसको इंदिराजी ने पकड़ कर रखा है कि पांच वर्ष तक विधान सभा रहेगी। पांच वर्ष तक विधान सभा तो नहीं रही केरल में, गुजरात में। और विघटित हो गयी उत्तरप्रदेश में भी। बाद में उसको रिवाईव करके चुनाव किया। चुनाव किया वह अवधि पूरी होने के पहले। '७४ में।

कानून केवल कागज पर

तो मित्रो! जनता की विधान सभा का चुनाव करना एक राज-नीतिक क्रान्ति का, एक राजनीतिक जागरण का, संगठन का एक नमूना होगा। एक बड़ा प्रयास होगा। इसलिए उसको हलका फुलका मत समझिये। जनता की सरकार—विधान सभा अगर बैठी तो वह जनता की सरकार इतना ही चला सकती है कि जो उसको मत मिला है उसके अनुसार जनता को कुछ आदेश दे, कुछ कानून बनाये और जनता उसका पालन करे—वह भी जनता का सरकार हुआ। और भी बड़ी बातें हो सकती हैं, कोई छोटी बातें ही होंगी, ऐसी बात नहीं है।

जो उ.से कानून मे नहीं होता, कानून पास हो जाता है लेकिन रहता है कागज पर। लेकिन जो जनता की सरकार, जिसकी चर्चा हम लोग करते रहे हैं, वह यहां माने मे संभव है, आज की परिस्थिति मे संभव है, ग्राम सभाओं मे, गांवों मे ग्राम पंचायत के क्षेत्र मे। और प्रखण्डों और अंचलों के क्षेत्र मे। यह भी वहीं संभव है जहां कि संगठन है और छात्र और जनसंघर्ष समितियां दोनों मजबूत हैं, प्रखंड को या अंचल को ठप्प कर दिया है जैसा कि सिमरी में कर दिया था। आज भी करीब ठप्प है। इतने मे एक दिन वहीं बी०डी०ओ० साहब आते हैं। वहां के बी०डी०ओ० साहब तो बोरिया-बिस्तर बांधकर चले गये। और उस प्रखण्ड मे जनता की जो सरकार है उसके अध्यक्ष हैं सूर्यनारायण शर्माजी। यह नयनताराजी यहां पर बैठी है इंदिराजी की अपनी फुफेरी बहन हैं। ख्यातनामा पत्रकार हैं और लेखिका हैं। बिहार आंदोलन का निष्पक्ष भाव से अध्ययन करने आयी हैं। चाद और रोहतास में कई दिनों तक वहां जनता सरकार चली। अब अनुमान के केवल उस क्षेत्र से एक हजार आठ आदमी गिरफ्तार हैं।

तो इतना मैंने कार्यक्रम आपके सामने रखा है। यह सब चलता रहेगा। लेकिन यह सब कार्यक्रम सम्पूर्ण क्रांति का तो नहीं है। यह कार्यक्रम थोड़े दिनों का है। लेकिन अपने दूर के उद्देश्यों को मत भूलियेगा। बहुत दूर जाना है। यह लंबा सफर है। सारे समाज को बदलना है और इसी मंच से कह चुका हूं कि अकेला बिहार का समाज नहीं बदल सकता है, जब तक कि सारे भारत का समाज नहीं बदले। तो भारत के समाज को भी बदलना है। वह भारत की जनता करेगी। भगवान आपका साथ दे। आपको सुबुद्धि दे। हमारी शुभकामनाएं आपके साथ।
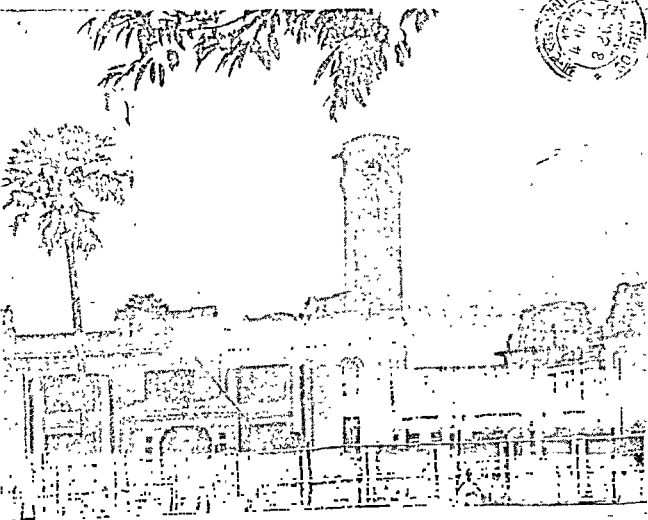
वार्षिक शुल्क—१५ रु० विदेश ३० रु० या ३५ शिलिंग या ५ डालर, एक अंक का मूल्य ३० पैसे।
प्रभाष जोशी द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं ए० जे० प्रिंटर्स, नई दिल्ली-१ में मुद्रित।

सर्व सेवा संघ का साप्ताहिक मुख पत्र
नई दिल्ली, सोमवार, ९ दिसम्बर '७४

जे० पी० के दिल्ली दौरे की रपट (पृष्ठ १४ व १५ पर)

पत्र और पत्रांश

'तंत्र' ही सरकार के पास

जे. पी. का आन्दोलन अब जन-आदोलन बनने के साथ-साथ सारे देश मे फैल रहा है। यह आन्दोलन कितना शान्तिपूर्ण-अहिंसक है इसका प्रमाण देने की जरूरत नहीं। पटना की सड़कों पर उनके नेतृत्व मे मौन जलूस मे हजारो सत्याग्रही मुह पर पट्टी बांधे और दोनो हाथ कमर पर बाध कर निकल चुके हैं।

'हमला चाहे जैसा भी हो, हाथ हमारा नहीं उठेगा' का सकल्प इन अनगिनत सत्याग्रहियों ने ५ जून को तथा ४ नवम्बर को भी निभाया। ५ जून की विशाल सभा जुलूस पर इन्दिरा ब्रिगेड के गोली चलान के बाद भी ऐसी शान्त रही जैसे महात्मा गांधी स्वय इसआन्दोलन का नेतृत्व कर रहे हो।

भारत मे चल रहे इस अहिंसक जन आन्दोलन के समाचार आज सारा विश्व बडे चाव से सुन रहा है। गाधी की धरती पर गाधी के पुत्र उसी प्रशासन की निन्दा कर रहे हैं जिसे गांधी ने प्राप्त कर उन्हें सौंपा। जे. पी. के अनुसार लोक लुप्त हो गया तत्र ही सरकार के पास है। आज लोक खडा हो रहा है। बिहार मे ही नहीं पजाब मे भी दस लाख लोगो का नेतृत्व करके जे. पी. ने दिखा दिया कि देश-देश की जनता-अब अन्याय, शोषण औरभ्रष्ट शासन बर्दाश्त नही करेगी। आकाशवाणी ने भले ही इस रैली का समाचार नही सुनाया और न ही दूरदर्शन तथा फिल्म डिवीजन के कैमरे जे. पी. को देख पाये। ४ नवम्बर को पटना मे खुले आम सत्याग्रह की हत्या कर सैकड़ो सत्याग्रहियो पर आसू गैस, लाठियो की बौछार का तथ्य रघुराय के चित्रो से साफ जाहिर हो जाता है। जे. पी. पर एक साथ चार-चार लाठिया पड़ी और वे सब कुछ सहकर अचेत हो गये। ऐसा ही हमला लाला लाजपतराय पर हुआ था तब गाधीजी ने कहा था, 'लालाजी ने कोई गलती नही की थी। वे जिस जुलूस का नेतृत्व कर रहे थे उसने भी कोई गलत कदम नही उठाया था। ......पुलिस को यह प्रदर्शन करनेवालो की दृढता बहुत अखरी, इसलिए उसने लालाजी को 'सबक सिखाने' का निश्चय किया और उन पर आक्रमण कर दिया।' ठीक उसी तरह जे. पी. को भी आज की सरकार 'सबक सिखाना' चाहती है, ऐसा लगता है। लुधियाना स्टेशन पर जे. पी. को मारने के लिए एक आदमी ने इतनी जोर से भींचा था कि वे चिल्ला उठे, 'बचाओ मरा मरा' और हमलावर सुरक्षा अधिकारियो के होते हुए भी साफ निकल भागा उनकी छाती की एक हड्डी तोडकर। उन्होंने उस दिन भी इस घटना के बारे मे कुछ नही कहा, अपने पर किये गये हमले के बारे मे मौन रहे इसलिए कि दस लाख की सख्या मे उमड पडी जनता कही अहिंसा की प्रतिज्ञा न खो बैठे। यदि अपने आपको लोकतत्रीय बतानेवाली सरकार ऐसे घिनौने तरीके अपनाकर खिलवाड करती है तो लोकनायक की रक्षक जनता को अपना आन्दोलन और भी तीव्र करना पडेगा — हाल ही अपने दिल्ली मुकाम के दौरान जे पी ने विभिन्न जन प्रतिनिधियो के मिश्रण पर जो कहा है उससे भी यही निष्कर्ष निकलता है।

अम्बाला — देवीशरण 'देवेश'

सोवियत दिलचस्पी !

भारत की तरक्की मे सोवियत सघ की दिलचस्पी से भारतीय जनता परिचित है और अनेक अवसरो पर इसके लिए उसने सोवियत संघ के प्रति अपनी कृतज्ञता भी जाहिर की है। किन्तु कभी कभी सोवियत संघ हमारी भलाई के लिए इतना अधिक उत्सुक उतावला भी दिखाई देता है कि हमे शका होने लगती है। बिहार मे जबसे भारत के आज के एक शीर्षस्थ जननेता श्री जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में वहा की जनता ने यथास्थितिवाद मे कुछ मौलिक परिवर्तन के लिए आदोलन छेडा है तब से सोवियत सघ ने उस बारे मे अखबारो की सूचनानुसार कई बार अपनी चिंता व्यक्त की है। अभी एक भारतीय अखबार की २३ नवम्बर १९७४ की एक रिपोर्ट के अनुसार सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी और सरकार के भी मुखपत्र प्रावदा ने फिर बिहार आदोलन पर अपनी चिंता व्यक्त करते हुए कहा है कि इस दक्षिणपन्थी आंदोलन के द्वारा भारत की आर्थिक कठिनाइया बढ रही हैं। इतना ही नही आदोलन के सर्वमान्य नेता श्री जयप्रकाश नारायण के बारे मे भी कहा गया है कि उनका चरित्र जटिलता और विरोधाभास से पूर्ण है और वे समय-समय पर अपने विचार बदलते रहते हैं और परस्पर विरोधी विचार प्रकट करते है।

हमारी समझ मे रूस की यह चिन्ता फाजिल होने के साथ-साथ हमारे लिए अपमानजनक है। श्री जयप्रकाश के आदोलन से सभी भारतवासी पूरी तरह से सहमत हो या नही किंतु वे भारत के अत्यन्त ही सम्मान्य नेता हैं और भारत के हित को सोवियत रूस या प्रावदा से कहीं अधिक समझते हैं। उनके चरित्र पर प्रावदा की यह टिप्पणी एकदम अवाछनीय है। सभी लोग जानते है कि सोवियत रूस मे किस तरह क्राति की गयी, उनका क्या चरित्र रहा और धीरे-धीरे बदलते रह कर आज उसने क्या रूप ग्रहण कर लिया है। आज एक ओर रूस और चीन के बीच की खाई, और दूसरी ओर रूस तथा अमरीका तथा चीन की दोस्ती को मार्क्स के द्वन्द सिद्धान्त की कसौटी पर कसकर समझने का प्रयास करने की अब ससार को आवश्यक नही रह गयी है। भारत इससे सबक सीख रहा है।

सेवाग्राम (वर्धा) — कामेश्वर प्रसाद बहुगुणा

सम्पादक

राममूर्ति · भवानी प्रसाद मिश्र

कार्यकारी सम्पादक : शारदा पाठक

वर्ष २१ ९ दिसम्बर, '७४ अंक १०

१६ राजघाट, गांधी स्मारक निधि, नई दिल्ली-११०००१

'गांधी-मार्ग' और साप्ताहिक 'सर्वोदय' के सम्पादक कवि भवानी प्रसाद मिश्र रविवार १ दिसम्बर ७४ को कानपुर में दिल का दौरा पड़ने से बीमार हो गये हैं। उनका इलाज कानपुर के लाजपतराय अस्पताल में चल रहा है और स्वास्थ्य में सुधार हो रहा है। वे अगले कुछ सप्ताहों तक किसी कार्यक्रम में शामिल नहीं हो सकेंगे।

व्यापार में भ्रष्टाचार

दिल्ली के अपने प्रवास से लौटकर जे. पी. ने पटना में जो महत्वपूर्ण घोषणा की है, वह है—व्यापार में फैले भ्रष्टाचार के खिलाफ आंदोलन करने की। इस घोषणा से जनता को बड़ी आशाएं बंधी हैं और लगने लगा है कि यदि यह आंदोलन ठीक से चल सके और सफलता तक पहुंचाया जा सके तो देश की एक बड़ी बीमारी दूर हो जायेगी।

व्यापार में भ्रष्ट तरीकों के अपनाये जाने की बात पुराने जमाने से चली आ रही है। लेकिन पहले ईमानदारी अधिक थी, भ्रष्टाचार करने वाले थे तो जरूर पर उनकी संख्या आटे में नमक से भी कम थी। अब भ्रष्ट राजनीति के संरक्षण में व्यापार इस कदर भ्रष्ट हो गया है कि ईमानदारी अपवाद ही मानी जाने लगी है। व्यापार में भ्रष्टाचार का कारण धन की बढ़ती हुई प्रतिष्ठा है और इसलिए काले धन का जमाव भी होता जाता है। यह भ्रष्टाचार भी बहुत हद तक चुनाव के भ्रष्ट तरीके से आरंभ होता है। चुनाव में लाखों रुपये खर्च करनेवाला आगे चलकर उसे मय ब्याज के वसूलने का उपक्रम करता है और वह व्यापारियों से लम्बी रकम लेकर उन्हें कोटा परमिट, लाइसेंस आदि देता है। ये व्यापारी यह सब खर्च ही नहीं बल्कि उसका कई गुना जनता से वसूल करते हैं। चीजों का महंगे होते जाना, मिलावट, ठेके का काम घटिया होना आदि सभी व्यापार में भ्रष्टाचार के उदाहरण हैं। इनके कारण जनता की जिन्दगी से दिनरात खिलवाड़ होता रहता है।

हाल ही में तस्करों की धरपकड़ का जो नाटक चला वह एक हद तक जनता को यह दिखलाने के लिए था कि सरकार व्यापार में भ्रष्टाचार नहीं चलने देना चाहती। लेकिन उस नाटक का जो हश्र सामने आ रहा है, उससे यह बहुत साफ होता जा रहा है कि सरकार के असली इरादे क्या हैं, वह व्यापार से भ्रष्टाचार मिटाने में दिलचस्पी ले रही है या उसमें सहभागी बन कर रहना चाहती है। इस नाटक के जोरशोर से होने के बावजूद जनता को यही लग रहा है कि पहाड़ खोदकर निकाली गयी चुहिया भी अब मरने को हो आयी है। ऐसे में जयप्रकाशनारायण की घोषणा बड़ी उत्साहवर्धक है। वे अगर लोकशक्ति को इस ओर प्रेरित करके काम कुछ आगे बढ़ा सके तो जन-जीवन एक बड़े त्रास से छुटकारा पा सकेगा, इसमें संशय नहीं। इस काम के लिए घर-घर, गांव-गांव, मुहल्ले-मुहल्ले और सभी जगह वातावरण बनाना पड़ेगा कि व्यापार में भ्रष्टाचार करनेवालों से लोग न केवल व्यवहार ही न करें वरन् जरूरत पड़ने पर उनका सामाजिक बहिष्कार भी करें। इस क्षेत्र में जे. पी. का कार्य उनके उन विरोधियों का मुंह भी बन्द कर देगा जो सामाजिक भ्रष्टाचार के खिलाफ आवाज न उठाने का बेतुका आरोप जे. पी. पर लगाने नहीं सकुचाते।

शा. पा.

असमय दिवंगत नेता सुचेता कृपलानी

स्वतंत्रता संग्राम की एक अगुवी सेनानी और उत्तरप्रदेश की भूतपूर्व मुख्य मंत्री श्रीमती सुचेता कृपलानी का देहावसान रविवार १ दिसम्बर, ७४ को सुबह नयी दिल्ली के अखिल भारतीय चिकित्सा संस्थान में हो गया। उन्हें दिल का दौरा पड़ने से इसके कोई चार घन्टे पूर्व ही रात दो बजे वहां भरती किया गया था। उनकी अन्त्येष्टि रविवार की शाम निगमबोध श्मशानघाट में हुई और इस अवसर पर केन्द्रीय तथा उत्तरप्रदेश सरकारों के कुछ मन्त्री भी मौजूद रहे।

सर्वोदय-जगत में 'दीदी' के स्नेहपूर्ण नाम से सम्बोधित की जानेवाली श्रीमती कृपलानी गांधी स्मारक निधि की सम्मानित ट्रस्टी और पिछले सत्रह वर्षों से उसकी उपाध्यक्ष थीं। वे कस्तूरबा स्मारक ट्रस्ट की प्रथम सचिव थीं और लोक कल्याण समिति से बहुत निकट से सम्बंधित थीं।

डा. एस. एन. मजूमदार की पुत्री के रूप में 1908 में अम्बाला में जन्मी सुचेताजी ने दिल्ली विश्वविद्यालय से इतिहास में एम. ए. किया और सर्वप्रथम आने के लिए स्वर्णपदक प्राप्त किया। वे बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में व्याख्याता नियुक्त हुईं जहां उनका परिचय इतिहास के प्राध्यापक आचार्य जे. बी. कृपलानी से हुआ और उनसे विवाह भी हो गया। इसके बाद कृपलानी-दम्पती विश्वविद्यालय में अध्यापन का काम छोड़कर राजनीति और समाज सेवा के क्षेत्र में आ गए। सुचेताजी कांग्रेस के महिला विभाग

की मन्त्री बनीं। सन ४२ में कांग्रेस महामंत्री आचार्य कृपलानी जब गिरफ्तार हुए तो उनका काम सुचेताजी ने बखूबी चलाया। इस दौर में वे अंग्रेजों के गुप्तचरों के जाल से बचकर न केवल कांग्रेस का कार्यालय वरन उसका गुप्त रेडियो केन्द्र भी चलाती रहीं।

वे संविधान-सभा की सदस्य थीं और १४-१५ अगस्त की मध्यरात्रि हुई संसद की विशेष बैठक में स्वतन्त्रता की घोषणा के समय राष्ट्रीय गान उन्होंने ही गाया था। उसी साल वे कांग्रेस कार्यसमिति की सदस्य बनीं। किन्तु इसके तीन ही साल बाद वे कांग्रेस छोड़कर आचार्य कृपलानी के साथ उनके द्वारा स्थापित किसान मजदूर प्रजापार्टी के काम में जुट गयीं और इसी दल की ओर से प्रथम लोकसभा में चुनी गयीं। तथापि कांग्रेस के अवाडी सम्मेलन के बाद वे पुनः कांग्रेस में आ गयीं और १९५८ से ६० तक दल की महासचिव, ६० से ६३ तक उत्तरप्रदेश की श्रममन्त्री और ६३ से ६७ तक मुख्यमन्त्री रहीं। इस पूरे समय में उनके पति आचार्य कृपलानी कांग्रेस के विरोधी रहे। १९६७ में वे पुनः लोकसभा के लिए निर्वाचित हुईं और दो वर्ष बीतते न बीतते कांग्रेस के विभाजन का समय आ गया। गांधीवाद में दृढ़ आस्था रखनेवाली सुचेताजी ने व्यक्तिगत फायदे के मुकाबले दल के अनुशासन को जरूरी माना और फलस्वरूप वे नयी कांग्रेस में न जाकर पुरानी कांग्रेस में ही बनी रहीं जिससे वे प्रधान मन्त्री इन्दिरा गांधी के विरोधी माने जानेवाले खेमे में आ गयीं। इससे अपने पति आचार्य कृपलानी से उनका राजनीतिक मेल पुनः हो गया।

सुचेताजी को बापू के निकट आने का सौभाग्य मिला था और उन पर बापू का प्रभाव गहरा था। उन्होंने १९३४ में बिहार के भूकम्पपीड़ितों की अथक सेवा की। देश के विभाजन के सामने पर भड़के दंगों के समय वे नोआखाली में दंगापीड़ितों की सहायता पहुंचाने में जुटी रहीं और तिब्बत के चीन के शिकंजे में चले जाने पर भारत आये तिब्बती शरणार्थियों को राहत के काम में उनका योगदान महत्वपूर्ण रहा।

उन्होंने गांधीजी के द्वारा निर्देशित १८ सूत्रीय कार्यक्रम को मूर्त स्वरूप देने के पूरे-पूरे प्रयास किये। उत्तरप्रदेश के मुख्यमन्त्री के रूप में अपने कार्यालय में उन्होंने अछूतोद्धार, खादी, ग्रामोद्योग कार्यक्रमों को सदा आगे बढ़कर प्रोत्साहन दिया। उनके कुशल प्रशासन की छाप राज्य के हर क्षेत्र में दिखायी पड़ती थी।

वे स्नेह और ममता की मूर्ति थीं। छोटे से छोटे कार्यकर्ता की भी तकलीफें जानने और उन्हें दूर करने के लिए वे आतुर रहती थीं। कांग्रेस संगठन हो, सरकार अथवा सर्वोदय कार्यकर्ता निस्संकोच अपनी बात 'दीदी' से कहते थे और वे उनकी समस्या हल करने में कभी पीछे नहीं हटती थीं।

उनके निधन से अपूरणीय क्षति हुई। मृदुला साराभाई के देहावसान के बाद इतनी जल्दी सुचेता कृपलानी का भी न रहना रचनात्मक व्यक्तियों और संस्थाओं पर दो वज्रपात हो गया है।

भगवान से प्रार्थना है कि उनकी आत्मा को सद्गति प्रदान करे।

चार नवम्बर की कहानी : 'पुलिस के एक आदमी' की जुबानी

सेन्ट्रल रेंज डी०आई०जी० के आदेश से हवलदार श्री सुरेशसिंह को सर्वोदय नेता श्री जयप्रकाश नारायण की सुरक्षा मे तैनात किया गया था। ये पटना मे ४ नवम्बर, ७४ को आयोजित रैली मे जे०पी० के साथ थे। उनसे ली गयी एक भेंट-वार्ता बिहार छात्र-संघर्ष समिति के बुलेटिन से यहां प्रस्तुत है।

—सम्पादक

"आपका नाम क्या हुआ ?"

"सुरेशसिंह"

"आप क्या काम करते हैं ?"

"हम पुलिस में काम करते हैं। हवलदार पद पर हैं।"

"कब से आप पुलिस मे हैं ?"

"१९६१ के नवम्बर माह से"

"इसके पहले आप कहां पोस्टेड थे ?"

"रांची मे पोस्टेड थे"

"यहां किनके आदेश से आये ?"

"सेन्ट्रल रेंज डी० आई० जी० के से।"

"जयप्रकाशजी की सिक्यूरिटी मे कब से हैं आप ?"

"उनकी सिक्यूरिटी मे वैसे २६ सितम्बर लेकिन इनकी पूर्ण सुरक्षा के लिए ५ तक से हैं।"

"४ नवम्बर को जो जुलूस निकला, उसमें आप इनके साथ थे ?"

"जी हां"

"कहां से आप इनके साथ थे ?"

"हम इनके डेरा महिला चर्खा समिति से इनके साथ थे ?"

"वहां से जुलूस चला—जयप्रकाश नारायण जीप से चले। इनकी गाडी पहुंची जगजीवन नारायण रोड पर तो वहां पुलिस की काफी व्यवस्था थी। पुलिसवालों ने जो गाडियां जा रही थी उनको रोका, जनता को रोकने का प्रयास किया। लेकिन जनता रुक नहीं सकी। किसी न किसी रूट से जगत-नारायण रोड पर पहुंच गयी। हमारी सिक्यूरिटी की गाडी थी उसको भी रोका सी०आर०पी० वालों ने। हम लोगों ने बहुत कहा कि सिक्यूरिटी की गाडी है, जाने दो, जाने दो। लेकिन उन लोगों ने नहीं माना। उनके एक अफसर आये। उन्होंने ही कहा कि "सिक्यूरिटी की गाडी है, जाने दीजिये। ये बराबर जे०पी० के पीछे रहते हैं। उनकी सुरक्षा के लिए हैं", तब उन्होंने हमारी गाडी को पास दिया। जगतनारायण रोड से जुलूस बुद्धमूर्ति की तरफ चला और बुद्ध-मूर्ति से होते हुए राजेन्द्रनगर की तरफ गया। राजेन्द्रनगर में एक चौकी थी जहां पर पुलिस का खासा बन्दोबस्त था। उस जगह भीड को तितर-बितर करने के लिए बहुत जोर लगाया। लाठी-चार्ज उस जगह नहीं हुआ। थोडा आगे पीछे हटते हुए भी जयप्रकाश की गाडी के साथ जुलूस बढ़ता ही गया। आगे बढ़ते-बढ़ते बी०एन० कालेज के पास जब जुलूस गांधी मैदान मे प्रवेश करने के लिए हुआ तब बांस बल्ली की काफी रोक थी। सी०आर०पी० के जवान वहां पर काफी तैनात थे।"

"बी०एम०पी० के लोग थे वहां पर ?"

"बी०एम०पी के भी थे शायद। उतना मैं नहीं कह सकता लेकिन बी०एम०पी० के लोग भी थे। वहां पर काफी रोक-थाम हुई, लाठी चार्ज हुआ। लोग तितर-बितर हो गये। बहुत से आदमी घायल हुए।"

"लाठी-चार्ज से पहले लोगों को चेता-वनी दी गयी थी ?"

"चेतावनी वगैरह कुछ नहीं दिया गया। भीड बांस-बल्लियों का जो घेरा था उसको पार करके गांधी मैदान पहुंचना चाह रही थी, तब उन पर एकाएक लाठी-चार्ज हुआ। काफी भगदड मची। जे०पी० अपनी गाडी से उतर गये।"

उसके पहले जे०पी० गाडी पर थे और आप उनके साथ थे ?"

"हम उनके साथ थे, हमारे साथी भी सब थे।"

"कितने हैं साथी आपके ?"

"वैसे तो हम सेन्ट्रल रेंज डी०आई०जी० के आदेश मे चार आदमी हैं। दो और सी०आई०डी० वाले थे। हम ६ आदमी थे। जयप्रकाशजी वहां पर जितने अफसर थे उनको डांटने लगे, "किसके आदेश से तुमने लाठी-चार्ज किया, पहले मुझे मारो। उनको क्यों मारा ?-ये निहत्थे आदमी हैं, किसी तरह का कुछ नहीं कर रहे हैं, इन पर तुमने लाठी चलायी।" एस०पी० को भी डांटे। एस०पी० हाथ जोडकर "हम नहीं थे, हम नहीं थे" कहते हुए चले गये। वहां पर कुछ देर हुई। वहीं पर भगदड से कुछ को चोटें आयीं। कुछ गिरफ्तार हुए, कुछ भाग चले। उसके बाद जयप्रकाश नारायण उस बांस-बल्ली के घेरे को पार करते हुए आगे बढे।"

"उनके साथ कुछ लोग गये थे क्या ?"

"जी हां, करीब हजार, पांच-सौ आदमी होंगे उनके पीछे। गांधी मैदान में जो रेलिंग घेरा हुआ है, उसको टप करके (लांघ करके) जयप्रकाशजी ने गांधी मैदान मे प्रवेश किया।"

"जे०पी० भी रेलिंग टप कर गये ?"

"जी हां, उस समय चारों तरफ से आदमी दौड पड़े। इतने आदमी आये कि गांधी मैदान में बीस हजार के करीब आदमी जमा हो गये। पुलिस के जवान लोग, सी० आर०पी० वाले, कुछ बी०एम०पी० के जवान भी थे जो कि राइफलधारी भी थे, लाठी-धारी भी थे, उनको रोकने का प्रयास करते रहे, लेकिन उनका प्रयास विफल रहा। उसके बाद लोगों ने चाहा कि हम मंच पर कब्जा कर लें जिससे जयप्रकाश नारायण कुछ बोल सकें। हमको समझायें। शुरू मे करने नहीं दिया गया। अन्त मे सत्याग्रहियों ने मंच पर कब्जा कर लिया। जयप्रकाशजी पैदल बढ़ते रहे। उनके साथ ५-१० हजार की भीड थी। आगे बढकर जयप्रकाशजी स्टेट बैंक में चले गये, और आम के गाछ के नीचे बैठ गये।"

"स्टेट बैंक में किधर से घुसे ?"

"उस समय तो गेट बंद था। रेलिंग से कूद करके भीतर गये। वहां करीब आधा घंटे तक बैठे रहे क्योंकि वृद्ध आदमी हैं, थके हुए थे। उसी समय गांधी संग्रहालय की ओर से टीयर गैस, फायर की आवाज आयी। काफी भगदड़ मची। वहां पर उस समय दस हजार आदमी जयप्रकाशजी के साथ थे। जब वहां भी टीयर गैस छोड़ा गया, वहां भी भगदड़ मची और पुलिस अधिकारी व सी. आर. पी. के जवान लोग भीड़ पर लाठी-चार्ज कर भीड़ को तितर-बितर करने लगे ?"

"स्टेट बैंक में आ करके लाठी-चार्ज किया ?"

"जी हां भीतर प्रवेश करके।"

"टीयर गैस भी भीतर गिरी ?"

"जी हां, फिर जयप्रकाशजी बाहर निकल करके चलने लगे। उनके साथ-साथ जुलूस भी। वे गार्डिनर रोड पर पैदल ही जा रहे थे, जीप उनकी आयी और चढ़ने के लिए आग्रह किया गया, लेकिन वह नहीं चढ़े। कुछ ही दूर आगे बढ़े होंगे कि फिर लाठी-चार्ज हुआ और टीयर गैस फाइरिंग हुई। वहां पर काफी लोग घायल हुए। जे. पी. के सिर पर जो लाठी आ रही थी उसको मैंने अपने हाथों पर पर रोक लिया। उसके बाद हमारी पीठ पर तीन लाठियां और लगीं।"

"अगर आप न रोकते तो वे तीन लाठियां जे. पी. पर लग सकती थीं ?"

"लग सकती थीं। कुछ दूर बढ़कर वे गाड़ी पर बैठ गये। गाड़ी बढ़ी। बीच-बीच में पुलिसवाले गाड़ी को रोकते थे। बहुत भगदड़ मचाते थे। लेकिन जुलूस शांतिपूर्ण नारा लगाता हुआ जा रहा था।"

"कितने लोग होंगे उस समय जुलूस में ?"

"उस समय जुलूस में करीब बीस हजार आदमी होंगे क्योंकि गार्डिनर रोड से लेकर गांधी मैदान तक जुलूस काफी बड़ा हो गया था। रोड की दोनों ओर लोग थे। जुलूस शांतिपूर्वक बढ़ता जा रहा था। बढ़ते-बढ़ते कोतवाली के पास पहुंचा।"

"एक बात आपको याद है, जुलूस में क्या नारे लगाये जा रहे थे ?"

"नारे लग रहे थे, हमला चाहे जैसा होगा, हाथ हमारा नहीं उठेगा; विधायकों इस्तीफा दो, मन्त्रियों इस्तीफा दो।" कोतवाली के पास भी पुलिस की काफी रोक थी। पुलिस की रोक लगने पर भी जयप्रकाशजी की गाड़ी धीरे-धीरे आगे बढ़ती गयी, और जुलूस भी साथ-साथ बढ़ता गया। उसके बाद सेक्रेटेरियट आफिस जहां से एम. एल. ए. फ्लैट में प्रवेश करने का अन्तिम घेरा बांस-बल्लियों का था, उसको पार करके एम. एल. ए. फ्लैट में प्रवेश किया जा सकता था। वहां पुलिस का काफी प्रबन्ध था।"

"उसके पहले भी घेरा मिला होगा ?"

"बहुत घेरा मिला।"

"उन घेरों को पार करने के लिए क्या करना पड़ा ?"

"वहां भी पुलिस के जवान रोकते थे लेकिन लोग किसी-न-किसी तरह से प्रवेश कर जाते थे। लाठी खाते और फिर आगे बढ़ते।"

"घेरा टूट जाता था ?"

"घेरा टूटता भी था, नहीं भी टूटता था। गेट से भी प्रवेश कर जाते थे। इतने ज्यादा लोग थे कि पुलिस का घेरा काम नहीं आता था।"

"घेरे को टूटने से रोकने में किसी पुलिस को चोट लगी ऐसा देखा क्या आपने ?"

"ऐसा तो हम बता नहीं सकते हैं, क्योंकि हम तो जयप्रकाश की रक्षा में ही रहते थे कि इनकी सुरक्षा हो। जब सेक्रेटेरियट आफिस के पास पहुंचे तो काफी जमाव हो गया था। जुलूस भी काफी बड़ा था। उस जगह कुछ समझौता होने लगा कि हमको जाने दो, हम आयेंगे। 'मन्त्रियों इस्तीफा दो, विधायकों इस्तीफा दो, हमला चाहे जैसा होगा, हाथ हमारा नहीं उठेगा' आदि नारा लगाते हुए लोग उस जगह खड़े हो गये। वहां पर जो बांस-बल्ली लगा हुआ था उसको उठाकर लोगों ने भीतर प्रवेश करना चाहा। इतने में माइक से आवाज आयी कि 'लाठी-चार्ज, लाठी-चार्ज, टीयर-गैस-चार्ज।' पहले टीयर गैस-चार्ज हुआ। उसके बाद लाठी-चार्ज हुआ। माइक से फिर आवाज आयी, 'हैवी लाठी-चार्ज एण्ड हैवी टीयर गैस,—पूरा लाठी-चार्ज करो।' गैस से बचने के लिए बहुत आदमी रोड पर सो गये। सो जाने पर भी उन पर डण्डा बरसता रहा। बाद में देखा कि जे. पी. की गाड़ी की अगल-बगल भी टीयर गैस गिरा। फिर जे. पी. की गाड़ी के ऊपर भी टीयर गैस के गोले गिरे, जिससे कुछ लड़कियों के फ्राक में आग लग गयी, कुछ के बाल जल गये। जब जयप्रकाशजी को टीयर गैस का धुंआ लगा तो गमछा से उन्होंने अपनी आंख ढक ली और गाड़ी से उतरकर आगे बढ़े।"

"आप साथ थे ?"

"जी हां, साथ थे। हमारे साथी भी अगल-बगल में थे। लेकिन टीयर गैस के धुए से कौन कहां चला गया, पता नहीं चला। जयप्रकाशजी आगे बढ़े और कहने लगे—पहले मुझे मारो, पहले मुझे मारो, लेकिन माइक से बराबर एनाउंस हो रहा था कि "हैवी-लाठी-चार्ज, हैवी-लाठी-चार्ज।" उस जगह पुलिस के आदमी व सी. आर. पी. वाले भी थे कि दोनों थे वह नहीं सकते। लेकिन काफी लाठी बरसायी। जयप्रकाशजी को बचाने में हमें लाठी खानी पड़ी। अन्त में जब आगे बढ़करके पुल से पार हुए तो जयप्रकाशजी वहीं ठोकर खाकर गिर पड़े। गिर जाने के बाद भी लाठी ऊपर से बरस रही थी। हमने नानाजी को देखा। एक लाठी आ रही थी। यदि उस लाठी को नानाजी अपने हाथ पर नहीं लेते तो वह लाठी जयप्रकाशजी के सिर पर लगती। लाठी नानाजी के हाथ पर लगी। उसके बाद नानाजी को नहीं देखा हमने कि वे कहां गये। दूसरे कुछ आदमी भी साथ में खड़े बचा रहे थे। हम तो हाथों से घेरा कर उनको बचा रहे थे और कह रहे थे, "मत मारो जयप्रकाश नारायण हैं⋯मत मारो जे. पी. हैं⋯जे. पी. हैं⋯हल्ला कर रहे हैं⋯हम उनके सिक्यूरिटी हैं मत मारो⋯मत मारो⋯।" जब वे गिर गये, उसके बाद भी लाठी बरस रही थी ऊपर से। हम जितना ही हल्ला करते लेकिन हमारी कोई नहीं सुनता था। उसके बाद हमने अपना आइडेंटिटी-कार्ड (परिचयपत्र) निकालकर दिखलाया

बाल्त यरमा ने यादवजी के शरीर और उनकी शरीरी-शक्ति का अपने व्याख्यान में भी बड़े गर्व से वर्णन किया और उनकी इस बात के लिए भी तारीफ की कि उन्होंने स्वर मिलाकर बोलने में गामी भीड़ इकट्ठा कर दी है। इन्हीं शक्तिशाली लोगों के बल पर मानों लोग हॉर्न-ट्रॉक कर लाये गये थे।

इसे एक सौभाग्य की बात ही कहना चाहिए कि जुलूस जे. पी. के निवास के पास से न गुजरने की बात मान गया। दूसरी मजेदार बात जो देखने में आयी; वह थी पसीने में तर कांग्रेस के मंत्री महोदयगण। इन्हें बरसों से किसी ने भी किसी भी कारण से पसीना टपकाते हुए नहीं देखा था। बेचारों को पैदल चलने की आदत नहीं थी। उस दिन ६-८ मील पैदल चलना पड़ा। भला जिन्हें किसी प्रकार के श्रम की आदत न हो, उनका इतने चलने पर ऐसा हाल न होता तो क्या होता। बरुआ साहब दूसरे ही दिन जयपुर में दूसरे जुलूस का नेतृत्व करने के लिए हवा में उड़ गये और लगता है कि अब आगे से वे किसी जुलूस का नेतृत्व नहीं करेंगे। जिस तरह बिहार में जुलूस का नेतृत्व यादव ने किया, इसी तरह दूसरे स्थानों पर वे जुलूस का नेतृत्व करने के लिए यादवजी की जोड़ का कोई न कोई आदमी ढूंढते रहेंगे। ऐसे तगड़े और भीमकाय-व्यक्ति के बगैर छोटा-मोटा जुलूस अपने आप फीका लगने लगता है। इसलिए नेता तो कम से कम वजनी चाहिए ही। उस दिन सार्वजनिक सभा में बरुआ साहब ने कहा कि दिल्ली में जे. पी. जिनके यहां मेहमान की तरह ठहरते हैं, उसके खिलाफ कई मामले हैं। यह उनका सौजन्य ही था कि उन्होंने मेजबान का नाम नहीं लिया और उन पर किस-किस अपराध से सम्बन्धित मामले हैं, इसका भी जिक्र नहीं किया। या हो सकता है कि वे खुद जिन-जिन लोगों के यहां मेहमान रहते हैं, नाम और मामलों की तफसील को जाहिर करना उनके ख्याल से खतरनाक रहा हो। यह एक बड़ी अच्छी बात है कि जुलूस में शामिल होने, उलटे-सीधे भाषण और वक्तव्य देने के अतिरिक्त वे कुछ मामलों के बारे में चुप्पी भी साध सकते हैं और रहस्यों पर परदा डाल सकते हैं।

जयपुर रवाना होते हुए हवाई अड्डे पर बरुआ साहब ने जो कुछ कहा उससे मेरे सामने यह बात साफ हो गयी कि केन्द्रीय शासन के लिए बिहार केवल आन्दोलन का नाम नहीं है। वह उसका एक बड़ा सिरदर्द बन चुका है। उन्होंने कहा कि बात-चीत का दरवाजा अभी बन्द नहीं हुआ है और सम्भावना इस बात की है कि जे. पी. और पी एम. में फिर से मुलाकात हो। यह बात कहते समय उनका स्वर कुछ ऐसा था कि मानो १९७१ के युद्ध के बाद वे हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के बीच समझौते की बातचीत कर रहे हैं। अगरचे यह मिलान एक पुरानी उपमा देता है मगर फिर भी उनके मुंह से सुनकर अच्छा लगा। इसके बाद उन्होंने सामने खड़े हुए अपनी पार्टी के लोगों से कहा कि वे अपने-अपने क्षेत्रों में लौटकर गांववालों को श्रीमती गांधी की नीति समझायें-बुझायें। चूंकि चुनाव सामने हैं, मेरा ख्याल है कि यह तत्काल शुरू किया जाना चाहिए। नहीं तो गांववालों के मन पर जो यह छाप पड़ चुकी है वह चुनाव में अपना रंग दिखाये बिना नहीं रहेगी। मैं पटना से ७५ मील दूर एक गांव में गयी थी। वहां के अनुभवों के आधार पर मैं कह सकती हूं कि गांववालों को समझाना बुझाना अब आसान नहीं है। वे सब राजनीतिवालों की तरफ शक की निगाह से देखते हैं और कांग्रेस की तरफ से उनमें विरोध की भावना ने घर कर लिया है।

उस रात मैं संघर्ष-समिति के लोगों से मिलकर मुझे बड़ी चैन मिली। एक तो इसलिए कि जुलूस किसी भी तरह का क्यों न हो मुझे परेशानी पहुंचाता है। दूसरा इसलिए कि मैं उस पटना के बाहर निकल आयी थी, जिसमें चारों तरफ पुलिस घूम रही थी और जहां शहर के बाहर तक कांटेदार तारों का घेरा लगा हुआ था। इन कांटेदार तारों के घेरे के बावजूद दो-एक चीजें ऐसी भी थीं, जिनसे सुकून मिलता था और वे भी उस दिन की हल्की ठंडी हवा, नरम-नरम धूप, सुन्दा आसमान और मेरे तरुण साथी, जो मुझे अपनी-अपनी गिरफ्तारियों की कहानियां सुनाते हुए और नवम्बर ३ के बन्द का ब्यौरा देते हुए मन में उत्साह भर देते थे। स्वतन्त्रता के बाद हमने सोचा था कि समाज कल्याण के कामों से समाज का सचमुच कहीं कुछ कल्याण होगा किन्तु हुआ ऐसा कुछ नहीं। अब इन जागृत तरुणों के काम और जयप्रकाशजी के नेतृत्व में उन्हें चुस्ती से काम करते देखकर इस बात की आशा कम से कम मुझे तो जरूर बंधने लगी है कि समाज का कल्याण शुरू हो गया है।

पिछले दिनों बिहार में मेरा सबसे शानदार अनुभव जे. पी. की वह शानदार सभा है, जो आज तक की सारी सभाओं से बड़ी थी और 'पी. टी. आई' के प्रतिनिधि के मुताबिक, गांधी-मैदान में इससे पहले कभी इतने ज्यादा आदमी नहीं देखे गये थे। यह एक रोमांचित कर देनेवाला दृश्य था। किन्तु इससे भी बढ़कर वह दृश्य इस बात का साक्षी था कि हमारे देश के इतिहास में किसी शान्त और साहसी आदमी के नेतृत्व में चलनेवाला यह दूसरा बड़ा जन-आन्दोलन है। बेशक पहला आदमी था महात्मा गांधी और दूसरा आदमी है—जयप्रकाश नारायण जो अपने तराशे हुए चेहरे और चेहरे पर प्रकाशित भावना के कारण बुढ़ापे में भी जवान दिखायी देता है।

अब सरकार के सामने दो ही विकल्प हैं। या तो वह अपने दमनचक्र को तेज से तेजतर करे और सारे प्रदेश पर दोजख की आग बरसा दे या आशा और शक्ति से इस खिलते हुए फूल को देखकर मुग्ध हो जाये और अपनी सारी क्रूरता उसके चरणों में रख दे।

एक और बात याद रखने की यह है कि हमारे मूर्धन्य साहित्यकार रेणु ने उसी सभा में अपने पद्मश्री छोड़ने की घोषणा की और उसी के बाद नागार्जुन ने ३०० रुपये की वह वृत्ति त्याग देने की घोषणा की, जो उन्हें एक साहित्यिक के रूप में सरकार से मिलती थी। मैं आशा करती हूं कि हमारे दूसरे सृजनात्मक साहित्यकार भी इस जीवनी-शक्ति से प्रेरणा ग्रहण करेंगे और समझेंगे कि यह वह शक्ति है जिसमें गौरवपूर्ण जीवन बिताना कोरी जीविका से लाखों गुना बेहतर है। ●

● रामनारायण उपाध्याय

हमारी राष्ट्रभाषा 'हिन्दी'

जिस तरह लोकभाषाओं से राष्ट्रभाषा समृद्ध होती है, उसी तरह राष्ट्रभाषा से राष्ट्र का व्यक्तित्व निखर कर उसे ऐसा मंच प्रदान करता है, जहां विश्व के समस्त भाषा-भाषियों से मैत्री स्थापित की जा सके। जब हम राष्ट्रभाषा हिन्दी की बात करते हैं, तो उसका अर्थ किन्हीं दूसरी भाषाओं का विरोध करना नहीं वरन प्रत्येक भाषा को उसका उचित स्थान दिलाते हुए सबके बीच समन्वय स्थापित करना है। इसे स्पष्ट करते हुए गांधीजी ने कहा था—

"मुझमें अंग्रेजी का या दूसरे पश्चिमी लोगों का द्वेष न कभी था, न आज है। उनका कल्याण मुझे उतना ही प्रिय है, जितना कि मेरे देश का। इसलिए मेरे छोटे से ज्ञान भंडार से, अंग्रेजी भाषा का बहिष्कार कभी नहीं होगा। मैं उस भाषा को भूलना नहीं चाहता। न यह चाहता हूं कि सारे हिन्दुस्तानी अंग्रेजी भाषा को छोड़ें या भूलें। मेरा आग्रह हमेशा अंग्रेजी को उसकी योग्य जगह से बाहर न ले जाने का रहा है। वह कभी राष्ट्रभाषा नहीं बन सकती और न हमारी तालीम का जरिया।

लोकभाषा, राष्ट्रभाषा और अन्तर्राष्ट्रीय भाषा का समन्वय साधते हुए उन्होंने कहा—

"हिन्दुस्तान को अगर सचमुच एक राष्ट्र बनाना है तो चाहे कोई माने या न माने, राष्ट्रभाषा तो हिन्दी ही बन सकती है। क्योंकि जो स्थान हिन्दी को प्राप्त है वह किसी दूसरी भाषा को कभी नहीं मिल सकता। हिन्दू मुसलमान दोनों को मिलाकर, करीब बाइस करोड़ लोगों की भाषा, थोड़े बहुत हेर-फेर से हिन्दी, हिन्दुस्तानी ही है। इसलिए उचित और संभव तो यही है, कि प्रत्येक प्रान्त में उस प्रान्त की भाषा, सारे देश के पारस्परिक व्यवहार के लिए हिन्दी, और अंतर्राष्ट्रीय उपयोग के लिए अंग्रेजी का उपयोग हो। हमारा जीवन अपने इन किसानों और मजदूरों के ऊपर निर्भर करता है। और हमारी संस्कृति भी इसी चीज को स्वीकार करती है। इन किसानों और मजदूरों की भाषा, ऐसी भाषा जिसे वे सहज ही समझ सकें, हिन्दी या हिन्दुस्तानी ही है। और वही हमारी राष्ट्रभाषा हो सकती है।"

एक भाषा को तरह एक लिपि पर जोर देते हुए आचार्य विनोबा भावे का कहना है कि—

"मैं नागरी पर जोर दे रहा हूं। नागरी लिपि अगर हिन्दुस्तान की सब भाषाओं के लिए चले तो हम सब बिलकुल नजदीक आ जायेंगे। खासकर दक्षिण की भाषाओं को नागरी लिपि का लाभ होगा। वहां की चार भाषाएं अत्यन्त नजदीक हैं। उनमें संस्कृत शब्दों के अलावा उनके जो अपने प्रान्तीय शब्द हैं, तेलगु, कन्नड़ और मलयालम के, उनमें बहुत से शब्द समान हैं। वे शब्द नागरी लिपि में अगर आ जाते हैं, तो दक्षिण की चारों भाषाओं के लोग, चारों भाषाएं पन्द्रह दिन में सीख सकते हैं।"

"दूसरी लिपियां चलें, इसका मैं विरोध नहीं करता। मैं तो चाहता हूं, कि वे भी चलें, और नागरी भी चले। उत्तर भारत की जो लिपियां हैं, वे बहुत नजदीक हैं ही। बंगाली याने क्या? बंगाली याने "टेढ़ी-मेढ़ी नागरी"। नागरी गोल। वही टेढ़ी हुई तो बंगला। उड़िया याने क्या? उड़िया में एक छोटा सा, 'क' और उसमें बड़ा सा फंदा। नागरी का जो 'क' है वही उसमें छोटा है। लेकिन उसका तुर्रा बड़ा है। नागरी में क्या-क्या उपलब्ध है। नागरी में एक है संस्कृत साहित्य, दूसरा है पाली साहित्य, तीसरा है मागधी साहित्य। ये तीनों पूरी तरह नागरी लिपि में हैं। इसके अलावा नागरी में हिन्दी भाषा, मराठी भाषा, और नेपाली भाषा, इन तीनों का साहित्य है।"

"अगर दक्षिण भारत के लोगों को नागरी का ज्ञान हो जाये, तो उनको दक्षिण भारत की चारों भाषाएं जल्दी सीखने की सुविधा हो जाये। प्लस हिन्दी, इंग्लिश, संस्कृत, मराठी इत्यादि। इस तरह भारत की एकता के लिए नागरी लिपि सीखना अत्यन्त आवश्यक है, ऐसा मेरा दृढ़ विचार है।"

अब राष्ट्रभाषा के मार्ग में कठिनाई क्या है, इस पर दर्द व्यक्त करते हुए राष्ट्रकवि दिनकर ने कहा था—

"जिस भाषा को कलकत्ता मिला उसका प्रचार आसान है। जिस भाषा को बम्बई मिला उसका भी प्रचार आसान है। जिस भाषा को मद्रास मिला उसका भी प्रचार आसान। लेकिन जिस भाषा को इलाहाबाद, बनारस, पटना और लखनऊ मिला उसका प्रचार आसान नहीं है। उसके लिए दिल्ली दूर है। और वह है अभागी राष्ट्रभाषा हिन्दी।"

महादेवी वर्मा ने उज्जैन में विक्रम विश्वविद्यालय के अपने दीक्षान्त भाषण में कहा था—"हिन्दी को राष्ट्रभाषा के पद पर प्रतिष्ठित करके हमने मन्दिर में जिस मूर्ति की प्रतिष्ठा की उसे वहां से हटाना मूर्ति को खण्डित करने जैसा असह्य अपराध है।"

राष्ट्रभाषा के मार्ग में सबसे बड़े बाधक अहिन्दी भाषी प्रान्त नहीं, हिन्दी भाषी प्रान्त

□ सिद्धराज ढड्ढा

फैसले की घड़ी : तीसरा विकल्प नहीं

रात का डेढ़ बज रहा था। रेल की बोगी के बाहर से अचानक 'लोकनायक जय-प्रकाश—जिन्दाबाद, जिन्दाबाद' के नारों से हमारी नींद टूट गयी। वास्तव में तो नींद ठीक से आयी भी नहीं थी क्योंकि उससे पहले पिछले दो स्टेशनों पर भी इसी प्रकार भीड़ और नारों के कारण जागना पड़ा था। 26 अक्टूबर की रात जयप्रकाश नारायण के साथ उनके राजस्थान के दौरे में हम लोग जयपुर से बीकानेर जा रहे थे।

बाहर के शोरगुल और नारों की आवाज पर बोगी से निकलकर मैं दरवाजे पर आया, रात के घने अन्धकार के कारण, नजर बहुत दूर तक नहीं पहुंचती थी, लेकिन मेड़ता रोड जंक्शन स्टेशन के प्लेटफार्म की रोशनी में सामने और दायें-बायें जहां तक नजर जाती जन-समूह नजर आ रहा था। मेरे बोगी के पायदान पर पहुंचने पर एक बार फिर नारों का जोर बढ़ा। मैंने हाथ के इशारे से लोगों को शान्त करने की कोशिश की और उनसे हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि जयप्रकाशजी की तबियत अच्छी नहीं है, जयपुर के दिनभर के व्यस्त कार्यक्रम के कारण वे बहुत थके हुए हैं इसलिए मेहरबानी करके आप लोग शान्त हो जायें और उन्हें जगायें नहीं। भीड़ में से एक अधेड़ उम्र के नागरिक ने तुरन्त जवाब दिया—'उन्होंने तो सारे देश को जगाया है, फिर हम उन्हें क्यों नहीं जगायें।' इस लाजवाब दलील का मेरे पास क्या जवाब होता ?

...

हां जयप्रकाशजी ने सारे देश को जगाया है। बिहार में तो उनकी मीटिंगों में लाख-पचास हजार की उपस्थिति मामूली बात हो गयी है, बिहार के बाहर पिछले 2-1 महीने में उनका यह पहला दौरा था। हम लोग राजस्थान और पंजाब के दौरे पर निकले थे। 25 अक्टूबर को सबेरे 5 बजे जब दिल्ली से जयप्रकाशजी जयपुर पहुंचे तब डिब्बे में घुसते ही पहली बात जो उन्होंने कही वह यह कि दिल्ली से जयपुर तक उस रात को वे बिलकुल सो नहीं पाये। रास्ते में तीनों जगह जहां मेल ठहरती थी—रेवाड़ी, अलवर और बांदीकुई, वहां सैकड़ों की भीड़ के सामने हाजिर होना पड़ा। फिर तो जयपुर से बीकानेर जाने, बीकानेर से दिल्ली जाने और दिल्ली से लुधियाना जाने सब जगह यही हालत रही। दिन हो या रात, स्टेशनों पर सैकड़ों हजारों की भीड़ जयप्रकाश के दर्शन के लिए उमड़ती रही।

हां, जयप्रकाश ने देश को जगाया है। अब जयप्रकाश व्यक्ति न रह कर एक प्रतीक बन गया है। प्रतीक-देश की जनता की आकांक्षाओं का प्रतीक, उसकी आशाओं का केन्द्र-बिन्दु। निराशा के गर्त में डूबी हुई, असहाय और मूक जनता को मानो जयप्रकाश ने वाणी दी है। इसलिए जयप्रकाशजी का समय अब उनका अपना नहीं रहा। रात हो या दिन, जहां मौका पड़ा वहां जनता उस व्यक्ति से आंखें मिलाना चाहती है जिसने उसको भविष्य के लिए कुछ आशा की झलक दिखलायी है।

इन्दिराजी कहती हैं, आज 'कुछ लोगों' के कहने से बिहार विधानसभा भंग की जाये तो कल दूसरे प्रांतों में यही आवाज उठेगी, और इस तरह जनता द्वारा चुनी हुई विधान सभाओं को चन्द लोगों के सड़क पर निकल कर नारे लगाने से हम भंग करते जायें तो जनतन्त्र कहां टिकेगा ? इन्दिराजी ठीक कहती है। उनका यह अनुमान ठीक है कि अब यह केवल बिहार की विधानसभा के विघटन का प्रश्न नहीं रहा। राजस्थान और पंजाब के छोटे-बड़े बीसों स्टेशनों पर जमा भीड़, जयपुर और लुधियाना के लाखों के जुलूस और आम-सभा ने यह सिद्ध कर दिया है। इन्दिराजी ने बात को ठीक पकड़ा है। आज बिहार, कल राजस्थान, परसों पंजाब, फिर कर्नाटक, आन्ध्र और महाराष्ट्र, बारी-बारी से सब जगह यह आवाज उठेगी। एक मामले में शायद इन्दिराजी की बात गलत है। और वह यह कि यह मांग और आवाज चन्द लोगों की नहीं, इस देश के अन्त तक सोये हुए लाखों-लाख लोगों की पुकार बन गयी है। इन्दिराजी जिसको जनतन्त्र समझती रही हैं वह केवल 'तन्त्र' है। उस तन्त्र की जकड़ से 'जन' निकल कर सड़कों पर और प्लेटफार्मों पर आ गया है। इन्दिराजी ने तन्त्र को पकड़ रखा है, जयप्रकाश ने जन या लोक को। इन्दिराजी निर्जीव तन्त्र को या ढांचे को जन से, या लोक से, कब तक बचा पायेंगी ? दुर्भाग्य से वे इस बात को समझ नहीं पा रही हैं जिसको इस देश का जन समझ गया है। जनतन्त्र को अगर जनता की शक्ति अनुप्राणित नहीं करती रहती, तो उसका तन्त्र केवल निर्जीव कंकाल रह जाता है। इन्दिराजी उसी को जनतन्त्र समझती हैं। जब तक उनकी ऐसी समझ है तब तक यह स्वाभाविक है कि वे उसकी रक्षा के लिए प्राणपण से कोशिश करती रहें। शायद जाग्रत जनता की भावनाओं का उमड़ता हुआ समुद्र उनको समय रहते यह अहसास करा, कि वे कंकाल से चिपटी हुई हैं।

इन विधानसभाओं को तथा लोकसभा को जनतन्त्र के इस तन्त्र को, जनता सचमुच तोड़ना चाह रही है। क्योंकि वह इससे ऊब गयी है। पिछले 25-27 वर्षों के अनुभव से उसने समझ लिया है कि यह ढांचा उसकी रक्षा नहीं कर रहा बल्कि उसको रात-दिन अपने शिकंजे में अधिक-से-अधिक जकड़कर उसका शोषण कर रहा है, उस पर अन्याय कर रहा है।

इन्दिराजी कहती हैं कि हिन्दुस्तान का जनतन्त्र दुनिया का सबसे स्वतन्त्र जनतंत्र है। किस बात की स्वतन्त्रता और किसके लिए स्वतन्त्रता। इस देश के सैकड़ों-हजारों लोग, स्त्री-पुरुष, बच्चे-बूढ़े शब्दशः भूख से मरते जा रहे हैं। लाखों-करोड़ों बिना काम और बिना भोजन तरस-तरस कर क्षीण होते जा रहे हैं और मृत्यु की तरफ बढ़ रहे हैं। शहरों में मध्यम वर्ग तक के लोगों को हर चीज के लिए क्यू में खड़ा होना पड़ता है। चीजों की कमी इतनी नहीं है, लेकिन कमी है काम की और दाम की। चीजें हैं भी तो उनकी कीमतें आसमान छू रही हैं। देश में अकाल लगभग स्थायी होता जा रहा है। इन्दिराजी और उनके साथी इसकी जिम्मेदारी या तो प्रकृति पर डाल देते हैं या अधिकांश उनकी कल्पना के जमाखोरों और चोर-बाजारियों पर। जमाखोर और चोरबाजारिये नहीं हैं सो बात नहीं है। वे हैं, लेकिन, वे भी पनपे हैं सरकारी नीतियों के कारण और चुनावों के लिए करोड़ों रुपयों की मांग के कारण। आज की समस्याओं की जिम्मेदारी सूखे या बाढ़ पर या प्रकृति पर डालना या जन संख्या की बढ़ोत्तरी पर डालना सरासर झूठ और धोखा है। सूखा और बाढ़ भी तो अधिकांश में गलत नीतियों के परिणाम हैं, यह अब तक लोग भी कह रहे हैं। जमाखोरी और चोर-बाजारी भी ऐसे भूत हैं जिनसे अब और अधिक दिनों तक जनता को नहीं डराया या भ्रम में रखा जा सकेगा।

भारत के जिस जनतन्त्र, या ढांचे को पवित्र मानकर इन्दिराजी जिसकी रक्षा में लगी हैं वह चन्द लोगों के लिए जरूर वरदान साबित हुआ है। देश की लोकसभा से लगाकर प्रदेशों की विधानसभाओं, जिला-परिषदों, पंचायत-समितियों, ग्राम-पंचायतों आदि के जो सदस्यगण शासक दल में हैं या उनसे मिले हुए हैं उनके लिए तथा सुरसा के मुंह की बढ़ती जा रही नौकरशाही के अफसरों के लिए और नेताओं तथा इन अफसरों से साठ-गांठ करके शोषण करनेवाले बड़े पूंजीपतियों और व्यापारियों, जमाखोरों और सूदखोरों के लिए भारत के जनतन्त्र का तंत्र वास्तव में वरदान साबित हुआ है। इन सबके ऊपर प्रतिष्ठित हो गयी है राजनैतिक नेताओं की निरंकुशता, स्वेच्छाचारिता और अमर्यादित भ्रष्टाचार। उन्हीं की छाया में भ्रष्ट अफसर और शोषण करनेवाला व्यापारी समुदाय पनप रहा है। जनता के प्रतिनिधि कहलानेवाले ये लोग जनता के कष्ट, बेकारी, महंगाई और गरीबी आदि दूर करने में तो असमर्थ साबित हुए हैं, लेकिन बेशर्मी के साथ अपने वेतन-भत्ते और सुविधाएं आदि लगातार बढ़ाते चले जा रहे हैं, क्योंकि इन सब बातों के लिए कानून बनाना उनके अपने हाथ में है। समाजवाद की बात करनेवाले इन लोगों ने अपना एक अलग सुरक्षित वर्ग बना लिया है।

...

जनता अब जाग रही है। इन सब बातों को और सारी परिस्थिति को वह धीरे-धीरे समझ रही है। जयप्रकाश उसकी एक मूक चेतना को वाणी प्रदान करनेवाला बन गया है और बन गया है चारों तरफ व्याप्त निराशा के घने अन्धकार में आशा और आत्मविश्वास के प्रकाश की किरण! इसीलिए लाखों लोगों के कंठ से अनायास निकल पड़ता है—'देश की आशा, जयप्रकाश!'

इन्दिराजी इस प्रवाह को रोकना चाहती हैं। उन्होंने तय किया है कि वे इसके लिए अपना राजनैतिक जीवन भी दांव पर लगा देंगी। इस्तीफा दे देंगी लेकिन 'चन्द लोगों की मांग के सामने झुकेंगी नहीं। उधर जयप्रकाश ने घोषणा की है कि अब सवाल केवल बिहार का नहीं है। जब इन्दिराजी ने इस तरह हठ पकड़ लिया है तो स्वाभाविक ही यह सवाल देश की सारी जनता के जीवन-मरण का प्रश्न बन गया है। दीवाली के तत्काल बाद जयप्रकाशजी देश के विभिन्न पक्षों के नेताओं, अन्य प्रमुख निर्दलीय नागरिकों, सर्वोदय कार्यकर्ताओं और देशभर के छात्र-नेताओं को बुलाकर सारी परिस्थिति पर विचार-विनिमय कर चुके हैं। स्थिति साफ है। एक तरफ देश का शासनतन्त्र और शोषक वर्ग है जिसके पास हिंसा और दमन के तथा कायरों और स्वार्थियों को खरीदने के असीम साधन मौजूद हैं। दूसरी ओर अन्याय और शोषण की बेड़ियों को तोड़कर आजाद होने वाली असंख्य जनता की जग रही चेतना है। हो सकता है, अन्धकार प्रकाश को दबा दे। हिंसा और दमन जनता को कुचल दे। तब इन्दिराजी के 'जनतन्त्र' की विजय होगी; तन्त्र प्रतिष्ठित होगा, लेकिन जन तिरोहित होगा। भविष्य के गर्भ में क्या है सो तो भविष्य या भगवान जाने, देश के लोगों के सामने, नौजवानों के सामने, दो ही विकल्प हैं—कायर और स्वार्थी बनकर सत्ता के निहित स्वार्थ के साथ मिल जाना या अन्याय, अत्याचार, दमन और शोषण के सामने खड़े हो जाना। अब और कोई तीसरा नजर नहीं आता, क्योंकि उसके सब दरवाजे सत्तावाले और निहित स्वार्थवाले बन्द करते चले जा रहे हैं। उनका निजी स्वार्थ जनता के हित के विरोध में खड़ा हो गया है, चाहे वे उसे महसूस न कर रहे हों। सत्ता अपने नग्न रूप में सामने आ गयी है। वह जन-विरोधी बन गयी है। ●

१ दिसम्बर को ६०वें वर्ष में प्रविष्ट

काका कालेलकर

—यशपाल जैन

श्रद्धेय काका कालेलकर, देश की एक महान विभूति हैं। प्रारम्भ में वह क्रांतिकारी रहे। अस्त्र-शस्त्र में उनका विश्वास था। प्रयत्न किया कि हिंसात्मक उपायों से विदेशी सत्ता को भारत से निकाल बाहर करें। लेकिन दक्षिण अफ्रीका में जब गांधीजी का पराक्रम देखा तो उन्होंने अनुभव किया कि हिंसा से कहीं अधिक शक्तिशाली अस्त्र अहिंसा का है।

काका साहब कुछ समय शांति निकेतन में रवीन्द्र ठाकुर के साथ रहे। दक्षिण अफ्रीका से लौटकर जब गांधीजी भारत आये और उन्होंने कुछ दिन शांति निकेतन में बिताये तो उनके विचारों और कार्य पद्धति ने काका साहब को उनकी ओर आकर्षित किया। कुछ समय पश्चात वह गांधीजी के आश्रम में साबरमती आ गये। वहां उन्होंने किस-किस क्षेत्र में गांधीजी की क्या-क्या सहायता की, इस सबका उल्लेख करना संभव नहीं है लेकिन इतना कहना पर्याप्त होगा कि काका साहब ने शिक्षा, साहित्य, संस्कृति, भाषा आदि के क्षेत्रों को इतना दिया है कि भारतीय समाज उन का चिरऋणी रहेगा।

वह उच्च कोटि के शिक्षा शास्त्री रहे हैं, उन्होंने विपुल साहित्य की रचना की है, संस्कृति का संदेश दूर दूर तक प्रसारित किया है और भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी की ही नहीं, मराठी, गुजराती आदि भाषाओं की भी निष्ठापूर्वक सेवा की है और आज भी कर रहे हैं।

हम लोग उन्हें 'विश्वकोश' कहा करते हैं। आप उनसे किसी भी विषय पर चर्चा कर लीजिए—उनका ज्ञान अगाध है। वह विद्याव्यसनी हैं। इस अवस्था में भी निरंतर पैनम और नये-नये ग्रन्थों का स्वाध्याय करते रहते हैं। उनकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि पुराने होते हुए भी उन्होंने नवीन को कभी अस्वीकार नहीं किया। यही कारण है कि उनकी पुस्तकों तथा 'मंगल प्रभात' आदि पत्रों में प्रकाशित उनके विचारों में गजब की ताजगी है। यद्यपि वह कहा करते हैं कि वृद्धावस्था के कारण उनकी स्मरण-शक्ति कुछ क्षीण हो गयी है लेकिन उनकी रचनाओं तथा उनके भाषणों में उनकी स्मरण शक्ति के अद्भुत नमूने देखने को मिलते हैं।

काका साहब का सैलानी स्वभाव उन्हें देश-विदेश के सभी प्रमुख स्थानों में ले गया है और सारी दुनिया के साथ उनका आत्मीयता का नाता जोड़ दिया है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के सिद्धांत में उनका विश्वास है और उसी की संसिद्धि के लिए उनका जीवन समर्पित रहा है।

इधर उनकी मान्यता बनी है कि अहिंसा को सबसे अधिक बल अगर किसी से मिलेगा तो वह महिलासमाज से। पुरुष स्वभाव के कठोर होते हैं। अतः काका साहब मानते हैं कि आगामी युग में स्त्रियों की भूमिका बड़ी महत्वपूर्ण होगी। यही कारण है कि वह स्त्रियों में नयी चेतना उत्पन्न करने के लिए सतत प्रयत्नशील हैं।

काका साहब ओजस्वी वक्ता हैं। वह अपनी बात को बिना लाग-लपेट के कहते हैं। किसी को बुरा लगे उन्हें चिन्ता नहीं। जो उन्हें ठीक लगता है, उसे कहने में वह कभी संकोच नहीं करते।

बड़े ही सरल और सजीव हैं। कुछ समय पहले उनके पेट में दर्द हुआ। मैंने फोन करके उनका हाल पूछा तो बोले, 'इधर जबसे नया उपचार किया है तब से बिलकुल ठीक हूं।'

मैंने जिज्ञासावश पूछा—उपचार क्या किया है?

बोले, 'मैंने सब पैथियां आजमायीं—एलोपैथी, होमियोपैथी, नेचरोपैथी, किसी से फायदा नहीं हुआ। अब एक नयी पैथी आजमायी तो एकदम लाभ हो गया। आप जानते हैं, वह नयी पैथी क्या है?'

'नहीं।'

'वह है एपैथी, अर्थात रोग के बारे में सोचना नहीं। मेहमानदारी न करो तो जैसे मेहमान चला जाता है, वैसे ही रोग की परवाह न करो तो वह भी भाग जाता है।'

जे० पी० के दिल्ली दौरे की रपट

आन्दोलन को सभी सहायता की घोषणाएं
मार्च में संसद के सामने विराट प्रदर्शन

आंदोलन के अगले चरण के बारे में विरोधी नेताओं और तरुणों से बातचीत करने के लिए जयप्रकाश नारायण बुधवार २० नवम्बर को पटना से विमान द्वारा दिल्ली आये। उसी दिन कांग्रेस के संसद-सदस्य चन्द्रशेखर ने उनके सम्मान में एक चाय पार्टी का आयोजन किया, जिसमें सत्तारूढ़ कांग्रेस के लगभग ६० संसद-सदस्य उपस्थित थे। इन लोगों ने ४ नवम्बर को जे. पी. पर पटना में लाठियों से हुए हमले के लिए खेद व्यक्त किया। बिहार के संसद-सदस्य शंकरदयाल सिंह ने कहा कि संसद के कांग्रेसी सदस्यों में से ६० प्रतिशत जयप्रकाश नारायण का सम्मान करते हैं और चाहते हैं कि सरकार से उनका टकराव न हो। इस पार्टी में श्री के० हनुमन्तैया, विभूति मिश्र, नीतिराजसिंह आदि भी थे। श्रीमती तारकेश्वरी सिन्हा ने इस पर जोर दिया कि श्रीमती गांधी और जे. पी. को देश के हित में एक साथ बैठना चाहिए। जे०पी० ने इसके उत्तर में कहा कि वे इसके लिए तैयार हैं लेकिन यह बात प्रधानमंत्री से कही जानी चाहिए। इसी पार्टी में जे०पी० ने घोषित किया कि वे नौ सूत्रीय कार्यक्रम से हटने को तैयार नहीं है और न ही विधानसभा-भंग की अपनी मांग छोड़ने को तैयार। जे०पी० के इस ऐलान से उनकी इन्दिरा गांधी से पुनः भेंट होने की संभावनाएं समाप्त हो गयीं। इस भेंट के लिए दिनेशसिंह और चन्द्रशेखर माहौल बनाने में लगे हुए थे।

कांग्रेस के संसद सदस्यों की जे०पी० से हुई यह मुलाकात सी०पी०आई० से जुड़े हुए बहुत से लोगों को रास नहीं आयी और सुभद्रा जोशी ने तो कुछ लोगों के साथ मिलकर यह तक मांग कर डाली कि जे०पी० के साथ चाय पार्टी में शामिल हुए कांग्रेसियों के खिलाफ अनुशासन की कार्रवाई की जानी चाहिए। इस पर कई संसद सदस्यों ने, जिनमें बंगाल के मुख्यमंत्री की पत्नी श्रीमती माया रे भी शामिल हैं, सफाई दे डाली कि उस पार्टी में जयप्रकाश नारायण के मौजूद होने की पूर्व सूचना उन्हें नहीं थी।

अगले दिन जे०पी० ने संगठन कांग्रेस, मार्क्सवादी, जनसंघी व द्रमुक नेताओं से अलग-अलग बातचीत की और उनसे बिहार आंदोलन के लिए देशवासियों का समर्थन जुटाने की अपील की। इन नेताओं में संगठन कांग्रेस के कामराज और अशोक मेहता, मार्क्सवादी नम्बूदरीपाद, राममूर्ति और सुन्दरैया, भारतीय लोकदल के पीलू मोदी और जनसंघ के अटलबिहारी वाजपेयी, नानाजी देशमुख, लालकृष्ण अडवानी तथा विजयाराजे सिंधिया प्रमुख थे।

शनिवार २३ नवम्बर को जे० पी० ने तरुणों के एक सम्मेलन को सम्बोधित किया और उनका आव्हान किया कि वे शिक्षा और चुनाव प्रणाली में सुधार, बेरोजगारी तथा भ्रष्टाचार के उन्मूलन एवं बिहार विधानसभा भंग की माँगों के समर्थन में संसद के सामने विशाल रैली आयोजित करें। उन्होंने कहा कि रैली में पाँच से लेकर दस लाख लोग तक होना चाहिए। छात्रों की बैठकें दो दिन तक चली और उनमें ४६ विश्वविद्यालयों के लगभग ३०० छात्र शामिल हुए। इनमें विद्यार्थियों के विभिन्न संघों के अलावा राजनीतिक दलों के युवक संगठनों के प्रतिनिधि भी बड़ी संख्या में थे। सम्मेलन के अन्त में जो निर्णय लिये गये उनका आशय था कि एक अखिल भारतीय समन्वय समिति का गठन किया जाये, लोक-सभा तथा आकाशवाणी के सभी केन्द्रों का घेराव हो और संसद के विपक्षी सदस्यों से एक दिन के लिए अधिवेशन का बहिष्कार करने को कहा जाये। सम्मेलन में बिहार सरकार के खिलाफ चलाये जा रहे आंदोलन का स्वागत किया गया और सरकारी दमनचक्र को जनता के बुनियादी अधिकारों का हनन कहा गया।

छात्रों से विचार-विमर्श के बाद २५ और २६ नवम्बर को जयप्रकाश नारायण ने देश के राजनीतिक दलों के नेताओं, समाजसेवियों, विद्वानों, पत्रकारों और अर्थशास्त्रियों का एक सम्मेलन आयोजित किया। इस सम्मेलन की चार बैठकें चलीं, जिनकी अध्यक्षता क्रमशः चरणसिंह, लालकृष्ण अडवानी, अशोक मेहता और एन०जी० गोरे ने की। इस सम्मेलन ने आंदोलन को अपना पूरा समर्थन देने की घोषणा की। लेकिन जे०पी० ने चरणसिंह के इस प्रस्ताव को मंजूर नहीं किया कि आंदोलन का साथ देनेवाले सभी दलों को मिलाकर बने एक राष्ट्रीय दल का नेतृत्व जे पी करें। जे. पी ने माना कि सत्तारूढ़ दल और केन्द्रीय सरकार का मुकाबला करने के लिए विरोधी दलों का संयुक्त मोर्चा काफी नहीं होगा। उनका कहना था कि आन्दोलन आम जनता का है इसलिए दलों के चुनावी समझौतों के अलावा जनता की जरूरतों के आधार पर जन-अभियान चलाया जाना चाहिए। एक राष्ट्रीय राजनीतिक दल बनाये जाने के सुझाव पर जे. पी. ने व्यक्त किया कि विभिन्न राजनीतिक दलों को एक झंडे के नीचे ले आना ज्यादा अच्छा रहेगा।

सम्मेलन ने व्यक्त किया कि बिहार की जनता के दुःख दर्दों से प्रधान मंत्री तथा उनके सहयोगी आँखें मूँद रहे हैं। रेडियो जैसे सरकारी प्रचार साधन, जनता के पैसे आदि का

उसयोग शान्तिपूर्ण बिहार आंदोलन के दमन में बर्बरता से किया जा रहा है। लेकिन जनता ने चुनौती मंजूर कर ली और वह न केवल बिहार में वरन सारे देश में मुकाबले के लिए तैयार है। वैसे यह साफ है कि विधान सभा को बार बार सभी राज्यों के सामने मांग जैसी लागू नहीं की जा सकती। किसी भ्रष्ट, नाकाबिल और अपरिजनक मंत्रिमंडल का होना एक दूसरी बात है, और जहां जरूरत हो वहां इस प्रकार की मांग उठायी जा सकती है। सम्मेलन ने कहा कि बिहार और उसके पहले गुजरात की घटनाएं अपने आपमें अकेली नहीं हैं। ये तो लगातार कुशासन के खिलाफ लोगों के उठ खड़े होने की सूचना हैं। बिहार आन्दोलन के निकटवर्ती लक्ष्य राजनीतिक भ्रष्टाचार उन्मूलन, मूल्य-वृद्धि रोकना, बेरोजगारी समाप्ति और चुनावों में तथा शैक्षणिक सुधार माने गये हैं। लेकिन व्यापक और दूरगामी दृष्टि से इसमें बुनियादी आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और शैक्षणिक परिवर्तन शामिल हैं, जिनका सीधा अन्त में संपूर्ण क्रांति के रूप में सामने आता है। सम्मेलन ने अर्थतंत्र के विकेन्द्रीकरण और कृषि के विकास पर जोर दिया। इसने आर्थिक विकास के साथ ही समाज के कमजोर वर्गों के उत्थान के लिए कोशिश करते जाना भी जरूरी माना। सम्मेलन ने जे. पी. के नेतृत्व में एक ऐसी समिति बनाने का भी निर्णय लिया जो देश के आर्थिक और सामाजिक विकास का कार्यक्रम तैयार कर सके। सम्मेलन में उपस्थित सभी लोगों ने बिहार आन्दोलन को न केवल वित्तीय सहायता सहित सभी प्रकार की सहायता देने का वचन दिया वरन स्वयंसेवक भेजने के लिए भी आश्वासन दिये। सम्मेलन के अन्त में एक राष्ट्रीय समन्वय समिति बनाने का निर्णय किया गया और श्री राधाकृष्ण को उसका संयोजक बनाया गया। समिति में जो अन्य २० सदस्य शामिल किये गये उनमें जनसंघ के नानाजी देशमुख, अटलबिहारी वाजपेयी, संगठन कांग्रेस के अशोक मेहता, श्यामनन्दन मिश्र, भारतीय लोक दल के पीलू मोदी और राजनारायण, सोशलिस्ट पार्टी के जार्ज

फर्नान्डिज और सुरेन्द्रमोहन, रेवलूशनरी सोशलिस्ट पार्टी के प्रदीप चौधरी और ज्योतिन चक्रवर्ती, अकाली दल के प्रकाशसिंह बादल, सर्व सेवा संघ के सिद्धराज ढड्ढा, तरुण शान्ति सेना के नारायण देसाई के अलावा श्रीधर महादेव जोशी, आचार्य कृपलानी, कर्पूरी ठाकुर, पुरुषोत्तम मावलंकर तथा श्रीमती सरला भदौरिया भी शामिल किये गये।

इस सम्मेलन ने रेल मंत्री ललित नारायण मिश्र और हरियाणा के मुख्य मंत्री बंसीलाल के खिलाफ आरोपों की जांच के लिए एक गैरसरकारी जांच समिति भी बनायी जिसमें भारत के भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश के॰ सुब्बाराव और उत्तरप्रदेश के एडवोकेट-जनरल जगदीशस्वरूप को शामिल किया गया।

दिल्ली में अपनी चर्चाओं के बाद बुधवार २७ नवम्बर को जयप्रकाश नारायण हरियाणा में कुरुक्षेत्र गये। वहां उन्होंने एक विशाल रैली को सम्बोधित किया। उन्होंने घोषणा की कि हरियाणा में लोकतंत्र की रक्षा का युद्ध कुरुक्षेत्र से ही चालू होगा जहां कि महाभारत लड़ा गया था और बुराई के खिलाफ सत्य को विजय प्राप्त हुई थी। उन्होंने कहा कि इन्दिरागांधी के नेतृत्व से अब कोई आशा नहीं रह गयी। इसलिए नये भारत का निर्माण करने के लिए दिल्ली की सरकार हटाना जरूरी है। उन्होंने पुलिस, सशस्त्र पुलिस और सेना का आह्वान किया कि वे जन-क्रांति में अपना योग दें। जे. पी. ने कहा कि जब तक चुनाव के तरीके में परिवर्तन न हो, तब तक चुनाव न होने दें।

हरियाणा में करनाल के पास कुछ लोगों ने जे पी की कार पर हमला भी किया। कुछ लोगों ने उनकी कार का घेर लिया और उस पर डंडे बरसाये। किसी ने रोड़ा भी उन पर फेंका। लेकिन वे बच गये। इस अवसर पर कुछ लोगों ने अंग्रेजी दैनिक 'स्टेटस्मैन' के मुख्य फोटोग्राफर रघुराय के सिर पर जोर का डंडा जमा ही दिया जिससे काफी खून बहा। कहा जाता है कि इन डंडे चलानेवालों में हरियाणा पुलिस के कर्मचारी बड़ी संख्या में थे, जो मुफ्ती में थे। उल्लेखनीय है कि रघुराय ने ४ नवम्बर को पटना में जे पी पर हमले के दौरान जो चित्र उतारा था, ('भूदान-यज्ञ' के ११ नवम्बर के अंक का मुख-पृष्ठ) उसने संयम बरते जाने के सरकार के सारे दावों की धज्जियां उड़ा कर रख दी थीं।

जे. पी. के इस प्रवास में यह भी तय हुआ कि संसद के सामने १० लाख लोगों का विशाल प्रदर्शन आयोजित किया जायेगा। पहले यह प्रदर्शन दिसम्बर के चौथे सप्ताह में करने की योजना थी लेकिन कई बातों को देखते हुए उसे अगले मार्च तक के लिए टाल दिया गया है।

हरियाणा से लौट कर जे. पी. दिल्ली आये और २६ नवम्बर की सुबह विमान से पटना रवाना हो गये।

X

समाचार

पटना में ४ नवम्बर को जयप्रकाश नारायण पर लाठियों से हुए हमले के खिलाफ देश के विभिन्न भागों में सर्वोदय कार्यकर्ताओं तथा नागरिकों ने २४घंटे के उपवास किये। इन उपवासों में महिलाएं भी बड़ी संख्या में शामिल हुईं।

ग्वालियर में २४ नवम्बर को आयोजित सामूहिक उपवास मे किसान, मजदूर, डाक्टर, वकील, अध्यापक, साहित्यकार और विभिन्न राजनीतिक दलों तथा तरुण संगठनों के लोग शामिल हुए। इन लोगों ने जिला प्रशासन को एक ज्ञापन सौंपा। रात्रि मे बाड़े मे हेमदेव शर्मा की अध्यक्षता मे एक आम-सभा हुई जिसमे वक्ताओं ने बिहार आंदोलन पर प्रकाश डाला।

रायपुर मे उपवास २३ नवम्बर को शास्त्री चौक पर हुआ जिसमे ४२ कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। रामानन्द दुबे की अध्यक्षता मे जनसभा हुई और जनसंघर्ष समिति का गठन भी हुआ।

भिण्ड मे उपवास का कार्यक्रम ६ नवम्बर को अपरान्ह आरंभ होकर तीन दिन तक चलता रहा। तीनों दिन बड़ी संख्या मे लोग उसमे शामिल हुए। जिला प्रशासन को एक ज्ञापन भी सौंपा गया।

जबलपुर और इन्दौर नगरों में भी सामूहिक उपवास के आयोजन हुए।

जोधपुर में छात्र युवा समन्वय समिति के १५ तरुणों ने आन्दोलन के समर्थन मे २४ घंटे का उपवास किया। श्री गिरधारीसिंह बाफना की अध्यक्षता मे वकीलों की एक सभा हुई जिसमें जे०पी० पर लाठी प्रहार की भर्त्सना की गयी।

मथुरा मे २३ नवम्बर को लोकसेवा पुस्तकालय मे आयोजित उपवास मे बड़ी संख्या मे विभिन्न वर्गों के लोग शामिल हुए।

हरियाणा के हिसार और रेवाड़ी नगरों मे भी उपवास आयोजन हुए। रेवाड़ी मे अन्य लोगों के साथ खुशीराम लोकसेवक, रामजीलाल जैन और वयोवृद्ध लोकसेविका माता शान्तिदेवी भी शामिल थे। इस अवसर पर एक प्रदर्शनी भी लगायी गयी। नारनौल में छात्रों ने एक जुलूस निकाला और विभिन्न अधिकारियों को ज्ञापन सौंपा।

बरेली मे जिला सर्वोदय मंडल के भूतपूर्व अध्यक्ष एवं वर्तमान उपाध्यक्ष सतीशचन्द्र सतोषी का हृदयगति रुकने से ५३ वर्ष की आयु मे २३ नवम्बर को देहान्त हो गया। वे नगर की ४० संस्थाओं से सम्बद्ध थे।

रुद्रपुर (नैनीताल) के तीन तहसील मुख्यालयों मे ४, ११, १५, २० नवम्बर को बिहार आंदोलन के समर्थन मे जनसभाएं हुईं।

नेताननगर (जिला सिरमौर) में २३ नवम्बर को हरिजन सेवक संघ का सम्मेलन हुआ। सम्मेलन मे अखिल भारतीय हरिजन सेवक संघ के अध्यक्ष वियोगी हरि भी उपस्थित रहे।

छतरपुर मे मध्यप्रदेश आचार्यकुल का द्विदिवसीय सहचिंतन शिविर जबलपुर के प्राध्यापक डा० शिवानन्द झा की अध्यक्षता मे संपन्न हुआ। शिविर मे ग्वालियर, इन्दौर, रीवा, सतना, टीकमगढ़, पन्ना, धार, छिन्दवाड़ा सहित आचार्यकुल की ५० जिला इकाइयों के प्रतिनिधि शामिल हुए। शिविर मे चार बैठकों मे शिक्षा की विभिन्न समस्याओं पर विचार किया गया। शिविर को सर्वोदय विचारक दादाभाई नाइक और काशीनाथ त्रिवेदी का मार्गदर्शन भी मिला। प्रदेश संयोजक गुरुशरण ने संस्था के कार्यों की जानकारी दी, संयुक्त संयोजक रामकुमार शर्मा ने गोष्ठियों का संचालन किया और गांधीभवन छतरपुर के प्रबन्धक शिवनाथ शर्मा ने हर प्रकार की सुविधाएं जुटायीं।

दुर्ग जिले के पाटन क्षेत्र मे तरीघाट ग्राम के गोवर्धन प्रसाद पत्रकार ने जयप्रकाश नारायण को भेजे एक पत्र मे सूचित किया है कि आंदोलन का समर्थन करते हुए वे तब तक नंगे बदन रहेंगे जब तक छत्तीसगढ़ में सभी लोगों को वस्त्र सुलभ नहीं होंगे।

वार्षिक शुल्क—१५ रु० विदेश ३० रु० या ३५ शिलिंग या ५ डालर, एक अंक का मूल्य ३० पैसे।
प्रभाष जोशी द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं ए० जे० प्रिंटर्स, नई दिल्ली-१ में मुद्रित।

सर्व सेवा संघ का साप्ताहिक मुख पत्र

नई दिल्ली, सोमवार, १६ दिसम्बर '७४

छात्र शक्ति की नयी करवट

● आनेवाली पीढ़ी हम लोगों को क्या कहेगी : बी एन. ठाकुर ● स्वप्रेरणा से निर्माण बिना लोकतन्त्र नहीं (धीरेन दा के उत्तर) ● माँओं पर हमला—अश्लील पोस्टर : विनोबा ● पोस्टर को चुनौती ● नयी तालीम में योग, उद्योग, सहयोग ● वर्धा जिले में शराबबन्दी की माँग

पत्र और पत्रांश

'तंत्र' से मुक्ति

महिला लोकयात्री दल के श्रीलंका जाने से सम्बन्धित प्रधान मन्त्रियों के पत्रों पर बाबूराव चन्दावार द्वारा व्यक्त पीड़ा, उन हजारों सर्वोदय कार्यकर्ताओं की पीड़ा है जो नेताओं की रीतिनीति व कार्यकलापों से दुखी हमारे सम्मेलनों का उद्घाटन राजनेता गे। उनमें प्रधान अतिथि या स्वागताध्यक्ष होंगे। ग्रामदान यात्राओं का प्रबन्ध सर-री अफसर कर्मचारी करेंगे। ग्रामदान वे रवायेंगे। उसकी पुष्टि वे करेंगे। ग्राम-राज्य कोष उन्होंने इकट्ठा करवाया। हमारी स्थाओं से चलनेवाली संस्थाओं को अनु-न सरकार देगी। यह सब दर्शाता है कि त्र मुक्ति की बात करनेवाले हम लोग तन्त्र न्सि बुरी तरह आश्रित हैं और तन्त्र हम हावी है। राजनेताओं की कृपा हमारे ए गौरव का विषय बनी हुई है।

विनोबाजी के साधुमना नेतृत्व ने सर्वोदय 'रेडग्रास' बना दिया। दुख है कि क्रांति-री जयप्रकाशजी भी 'तन्त्र' से मुक्त न हो है। उन्होंने विधान सभा भंग करने की माग रके आज के तन्त्र के अस्तित्व को स्वीकार या है—सिर्फ उसमें सुधार की माग की है। ा विधान सभा भग होने से आज की समस्या बुराइयां खतम हो जायेंगी?

हमारे पास 'ग्राम स्वराज्य' का दर्शन था र उसी को कार्य रूप देने की आवश्यकता ।। अगर हम बिहार में यह आंदोलन उठाते र गाँव अपने यहाँ के टैक्स और लगान देना न्द कर, अपनी समस्त व्यवस्था व निर्माण कास कार्य स्वयं करना चालू कर दें, और समें केन्द्र और राज्य सरकार का हस्तक्षेप न रनें, तो यह 'तन्त्र' मुक्ति होता। इस प्रकार आंदोलन से रचनात्मक व सार्थक बहुम श में छिड़ जाती। अब भी इस पर सक्रिय वतन हो सकता है।

तलाम मदनमोहन व्यास

आध्यात्मिक आचार्य

रजत की खबर उसी दिन मिल गयी थी। ईमानदारी से काम करनेवाले का आज यही पुरस्कार है। ईमानदारी यदि नौकरी में है तो यह हाल है और यदि बाहर सामा-जिक कार्य में है तो उसे 'इग्नोर' किया जाता है। आज की राजनीति का यही रवैया बना हुआ है और इसकी जिम्मेदारी भी हमारे ही नीति की बागडोर अपने हाथ में लिये बैठे नेताओं की है जो हर समय उनका समर्थन किया करते हैं, कुछ अपने स्वार्थ के लिए और अन्य कुछ अविरोध की चादर ओढ़े-ओढ़े। ये अन्य तो आध्यात्मिक आचार्य होते हैं न! इनका आशीर्वाद मिलने पर राजनीतिज्ञों को और क्या चाहिए। 'करेला और नीम चढ़ा। कभी-कभी तो लगता है ऐसे ही लोग ठीक हैं। माया भी मिलती है और राम भी।

वर्धा सत्यनारायण बजाज

श्रीमनजी के विचार

जे. पी पर हमले की भर्त्सना में श्रीमनजी के विचार 'सर्वोदय' में पढ़े। आंदोलन ८-६ माह से चल रहा है और उसके बारे में श्रीमनजी के दो-टूक वक्तव्य की प्रतीक्षा भी हम लगभग तभी से कर रहे थे। जे पी. पर ४ नवम्बर के हमले के चार ही दिन बाद रजत पर भी हमले की घटना ने ही तो श्रीमनजी की पीड़ा को व्यक्त होने के लिए क्या विवश नहीं कर दिया?

आंदोलन के बाद में जे. पी शुरू से ही कह रहे हैं कि आंदोलन सम्पूर्ण क्रांति का है, विधान-सभा भंग तो उसका एक पहलू भर है। उन्होंने इन्दिराजी को हटाये जाने की बात भी साफ-साफ कही है। इन्दिराजी और उनके चमचों द्वारा देश में मचायी जा रही अंधेरगर्दी को देखते हुए हम इस मुद्दे पर भी श्रीमनजी के बेलाग विचार जानने को उत्सुक हैं। क्या वे इनायत करेंगे?

नयी दिल्ली प्रमोदचन्द्र

ग्राम स्वराज्य कोष

सन् १९७० में विनोबाजी के अमृत महोत्सव के निमित्त एक करोड़ रुपये की थैली उनको भेंट करने का प्रस्ताव सर्व सेवा संघ ने स्वीकृत किया था। उसके अनुसार देश-भर में ७५ लाख रुपये 'ग्राम स्वराज्य कोष' के रूप में एकत्र हुए, जो विनोबाजी को सम-र्पित किये गये।

'ग्रामस्वराज्य कोष' संग्रह के अवसर पर ही तय हुआ था कि कोष का विनियोग एक संचित निधि के रूप में न करके आंदोलन की विविध प्रवृत्तियों को आगे बढ़ाने के लिए तीन सालों में किया जायेगा। इस बात को अब चार वर्ष हो गये हैं। ग्रामस्वराज्य कोष का दशमांश केन्द्रीय अंश के रूप में १२ से १३ लाख रुपये, जो सर्व सेवा संघ में जमा हुआ उसके विनियोग की तफसील और कार्य का संक्षिप्त विवरण प्रकाशित कर दिया गया है।

सर्व सेवा संघ सोसाइटीज रजिस्ट्रेशन एक्ट तथा पब्लिक ट्रस्ट एक्ट के अन्तर्गत रजिस्टर्ड संस्था है और उसके हिसाब-किताब की नियमित जाँच करवायी जाती है। अतः ग्रामस्वराज्य कोष के हिसाब की पूरी तफसील प्रधान कार्यालय में है।

ग्रामस्वराज्य कोष का केन्द्रीय अंश १० प्रतिशत जाकर बचे ९० प्रतिशत अंश का विनियोग विभिन्न प्रदेशों और जिला संगठनों द्वारा हुआ है। केन्द्रीय कार्यालय को समय-समय पर दी गयी सूचनाओं के अनुसार कुछ प्रदेश और जिला संगठनों ने भी हिसाब प्रका-शित किया है। जिन प्रदेश या जिलों से हिसाब अब तक प्रकाशित नहीं हुआ उनसे कहा जा रहा है कि वे भी जल्दी ही प्रकाशित कर दें।

ग्रामस्वराज्य कोष के संग्रह में दान-दाताओं का व्यापक सहयोग मिला है। सर्व सेवा संघ मानता है कि सर्वोदय-आंदोलन जिस विचार का प्रतिनिधित्व करता है उसमें इन दाताओं की श्रद्धा का प्रतीक रूप था। आशा है, भविष्य में भी आंदोलन के कामों में रुचि लेंगे और उनके विकास में सक्रिय सहयोग देते रहेंगे। हम दाताओं के अत्यंत आभारी हैं।

गोपुरी, वर्धा सत्यव्रत

सम्पादक

राममूर्ति : भवानी प्रसाद मिश्र
कार्यकारी सम्पादक : शारदा पाठक

वर्ष २१ | १६ दिसम्बर, '७४ | अंक ११

१६ राजघाट, गांधी स्मारक निधि, नई दिल्ली-११०००१

गाजीपुर बैठक

सर्व सेवा संघ की कार्यकारिणी ने गाजीपुर में हुई अपनी बैठक में बिहार आन्दोलन की पुष्टि कर दी है। साथ ही यह भी कहा कि संघ कहीं आन्दोलन आरम्भ नहीं करेगा किन्तु किसी भी आन्दोलन में अपने आपको शान्ति का रक्षक मानेगा। बिहार आन्दोलन में सर्व सेवा संघ की भूमिका इस वक्तव्य से बहुत साफ हो जाती है। आज बहुत लोगों को गलतफहमी है कि बिहार आन्दोलन जयप्रकाश नारायण या सर्व सेवा संघ का आन्दोलन है। असलियत यह है कि यह आन्दोलन जनता का आन्दोलन है और जयप्रकाशनारायण तथा सर्व सेवा संघ उसमें आगे इस उद्देश्य से हैं कि आन्दोलन हिंसक न होने पाये। सब जानते हैं कि बिहार में तरुणों के एक से अधिक गुट हो चुके थे और यदि जे. पी. बीच में न आते तो वहां गृह-युद्ध जैसी स्थिति आगे-पीछे बन जाने की आशंका थी। जे. पी. ने इस विस्फोटक स्थिति को रचनात्मक मोड़ दिया और सर्व सेवा संघ अब जे.पी. के प्रेरक नेतृत्व में हालात रचनात्मक बनाने में जुटा है। अखबारों में छपनेवाले गलत समाचारों तथा सरकारी प्रचारतंत्र के कारण यह भ्रम हो सकता है कि विधानसभा भंग ही आन्दोलन का प्रमुख लक्ष्य है। यह तो केवल एक पड़ाव मात्र है, उस रास्ते का जिसकी मंजिल है—सम्पूर्ण-क्रांति। विधान-सभा तो न जाने कब की भंग हो चुकी होती यदि जे. पी. ने इस मांग को उसके एकांगीपन से उठाकर देश की समस्याओं के रूप में सामने लाकर बुनियादी सवालों से न जोड़ दिया होता। आज आन्दोलन से देश की समस्त जनता में नयी चेतना जाग रही है। पूरा समाज बुराइयों को दूर करने के लिए धीरे-धीरे ही सही उठ कर खड़ा हो रहा है। समय भले अधिक लगे, आन्दोलन का फल जो अन्त में आयेगा, वह देश के हित में होगा।

बैठक में सर्वोदय के सात कार्यकर्ताओं के आन्दोलन से मतभेद का समाचार भी अखबारों में छपा है। इस विषय में इन सात में से एक श्री देवेन्द्रकुमार ने बताया है कि अखबारों में समाचार इस तरह से दिया गया है कि बात यथार्थ से परे हो गयी है। सातों सदस्यों से अखबारों में छपे समाचार से फैल रही गलतफहमी दूर करने के लिए कुछ करने की अपेक्षा है।

सी. बी. आई. रिपोर्ट

बहुचर्चित लाइसेंस काण्ड की सी बी आई द्वारा की गयी जांच की रिपोर्ट संसद को बताने के लिए सरकार आखिर उस समय तैयार हुई जबकि सवाल पर विरोधी पक्ष दोनों सदनों में सत्याग्रह शुरू करनेवाला था। सरकार इस पर सहमत हुई है कि रिपोर्ट दलों के नेताओं की एक समिति को ही दिखायी जायेगी। परन्तु उस पर आगे कार्रवाई का अधिकार उसने सुरक्षित रखा है।

सत्याग्रह वापस लेने की घोषणा करते हुए मोरारजी देसाई ने भी स्पष्ट कर दिया कि दस्तावेजों की जांच के बाद वे रिपोर्ट पर कार्रवाई की मांग के अपने संसदीय अधिकार का उपयोग करने पर विचार करेंगे। बहरहाल, इस मामले में अभी क्या-क्या गुल खिलेंगे, कहा नहीं जा सकता।

वाजपेयीजी का इस्तीफा

लोकसभा में जनसंघ के नेता अटलबिहारी वाजपेयी ने लोकसभा की अपनी सदस्यता से इस्तीफा देने की इच्छा व्यक्त की है और कहा है कि वे इसके लिए दल से इजाजत मांग रहे हैं। उसके मिलते ही वे अपना इस्तीफा लोकसभा के अध्यक्ष को सौंप देंगे।

आज के जमाने में जब लोग अपनी कुर्सी छोड़ने के लिए किसी भी तरह तैयार नहीं होते और उसे बचाये रखने के लिए कुछ भी कर गुजरते हैं, वाजपेयीजी का यह निश्चय कुछ लोगों को हैरत में डाल देनेवाला हो सकता है। लेकिन उनकी स्पष्टवादिता से परिचित लोग जानते हैं कि उन्होंने यह निश्चय बहुत ममहित होकर किया होगा। सत्तारूढ़ दल के प्रचंड बहुमत के तले अब संसद में जो कुछ होने लगा है उसे देखकर किसी भी विवेकशील व्यक्ति को यही लगेगा कि संसद क्रमशः अपनी उपयोगिता खोती जा रही है। विरोध की संख्या-शक्ति भले ही कम हो लेकिन जिस प्रकार आज उसको ताक पर रखा जा रहा है, स्वस्थ प्रजातंत्र में वैसा होना नहीं चाहिए। जरूरी तो यह है कि सत्तारूढ़ पक्ष विरोध से पूरा-पूरा सहयोग ले। किन्तु सत्तारूढ़ पक्ष के लोगों में विरोध को सैद्धान्तिक के बजाय व्यक्तिगत मानने की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। विरोध की स्वस्थ आलोचना से भी वे खीज से भर उठते हैं। ऐसी हालत में कोई भी समझदार व्यक्ति यदि संसद से अलग हो जाने की सोचे तो उसका सोचना ठीक ही माना जाना चाहिए। हम वाजपेयीजी को इस साहस के लिए बधाई देते हैं और ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि उनका अनुकरण करने की सद्बुद्धि बिहार के उन विधायकों में भी जागे, जो मृतप्राय विधानसभा को वैसे ही जकड़े रहना चाहते हैं जैसे बंदरिया अपने मरे बच्चे को चिपटाये रहती है। शा० पा०

अगले अंक में

लीक लीक गाड़ी चले

The helping hand of UCOBANK

आनेवाली पीढ़ी हम लोगों को क्या कहेगी

❀ जी० एन० ठाकुर

२० नवम्बर को जे० पी० के सम्मान में चन्द्रशेखर के आवास पर आयोजित चाय पार्टी में उपस्थित ६० संसद सदस्यों में से एक का भाषण यहां दिया जा रहा है। सं०

सभापतिजी मैं चाहूंगा, अपनी बात हिन्दी में कहूं, हिन्दी में इसलिए चाहता हूं, हां शुरू से, लेकिन शुरू करूंगा क्योंकि सभी तो अंग्रेजी में बोले हैं। श्री विवेकानन्द ने कहा है कि, "टु सक्सीड यू मस्ट हैव ट्रमेन्डस प्रजे-[illegible], ट्रमेन्डस विल, आई विल ड्रिंक दि ओशियन सेज दि प्रसवरिंग सोल, एट माई विल माउंटेन विल क्रम्बल। हैव दि गॉट आफ इनर्जी, हैव आफ विल, वर्क हार्ड एंड यू विल रीच दि गोल।" सवाल है कि आज हम देश में जो हम आप बैठे हैं संसद के सदस्य और खासकर के मैं राष्ट्रीय मजदूर कांग्रेस के नेताओं को धन्यवाद दूंगा कि इस प्रश्न पर इस गोष्ठी का आयोजन किया कि हम लोग खोल कर सोचें कि आज ऐसा क्यों? जिस प्रजातन्त्र को हम लाये हैं, कांग्रेस पार्टी ने जो आजादी दिलायी है और जिस समाजवाद को कबूल किया है, आज वह प्रजातन्त्र और समाजवाद खतरे में पड़ा है। अगर भारतवर्ष में प्रजातन्त्र खतरे में पड़ा है तो सोच लीजिये कि जितने पड़ोसी हैं या दुनिया का, मैं समझ सकता हूं कि प्रजातन्त्र खतरे में पड़ सकता है एक दो को छोड़ कर। जब भारत को आजादी मिली थी मुल्क के चारों तरफ

जितने छोटे-छोटे मुल्क थे, हमारी प्रेरणा से, सभी जगह आजादी दिलायी गयी और सभी को आजादी मिली है, चाहे वह नेपाल की आजादी हो, चाहे बर्मा की आजादी हो, चाहे श्रीलंका की आजादी हो और पाकिस्तान तो हमारा भाई था और हम लोग साथ-साथ आजाद हुए हैं। लेकिन हर जगह की आजादी टूट गयी। क्यों टूटी? इसलिए कि आजादी के बाद उस राष्ट्र का एक मजबूत नेता नहीं था और उस राष्ट्र का स्पष्ट नक्शा नहीं था। अगर काम भी हुआ, समाजवाद की ओर बढ़े भी, इतनी तेजी से, इतनी गलतफहमी में बढ़े कि टूट गये, पीछे हट गये। लेकिन भारतवर्ष में पंडित जवाहरलालजी नेहरू जैसे मजबूत नेता और गांधीजी के सिद्धान्त साथ में थे तो भारत की आजादी बरकरार रही और भारत की आजादी में समाजवाद को स्वीकार किया गया और आज हम इसी दुनिया के सामने हैं, जब दुनिया दो भागों में बंटी हुई है, एक तरफ डिक्टेटरशिप का नारा और दूसरी ओर डेमोक्रेसी की बात होती है, एक तरफ आर्थिक बराबरी है और दूसरी तरफ आर्थिक स्थिति ठीक है। बराबरी की बात भी है तो आजादी नहीं है, तो भारत तलवार की धार पर चल रहा है। आज हम आर्थिक बराबरी भी लायें और प्रजातंत्र को भी कायम रखें और इसकी आज सबसे जबर्दस्त जिम्मेदारी फिर कांग्रेस पार्टी पर आ गयी है। कहते हैं लोग, हर बात में वह देते हैं आनन्दमार्ग ने कर दिया, जनसंघ ने कर दिया, सी. आई. ए. वाले, मालूम पड़ता है जैसे व्यावहारिकता और कहने में कोई, कथनी-करनी में कोई सम्बन्ध नहीं। अगर सी. आई. ए. की इतनी हैसियत है कि किसी सूबा को जला दे, किसी मजबूत हुकूमत को तुड़वा दे, अगर आनन्द मार्ग की इतनी हैसियत है कि किसी मजबूत सरकार को एक दिन जला दे, तुड़वा दे, तो समझिये...कहा जा रहा है, यह बात तो हमको सोचनी पड़ेगी। आज जरूरत इस बात की है और खास करके कांग्रेस के लोग, संसद के सदस्य, हम लोग यहां बैठे हुए हैं कि हम आत्मनिरीक्षण करें कि ऐसा क्यों हो हो रहा है हर जगह। क्यों नहीं एक बार 'इलेक्ट' करता, क्यों नहीं हमारी दिल्ली के खिलाफ, प्रधान मन्त्री के खिलाफ होती नहीं, इसके पीछे है कि भारी बहुमत रहने के बाद भी हमारे खिलाफ यह आवाज उठती है, तो आवाज क्यों उठती है? उसका कारण हुआ थोड़ा हम कथनी और करनी से दूर हुए। हमारे नेता ने जिस नारा पर, जिस घोषणा-पत्र पर वोट लिया था जनता से, और जिस ओर अपनी गाड़ी बढ़ाना चाही थी, क्योंकि उस पर १९७१ में जनता को इस देश के तमाम गरीबों को, नौजवानों को यह बड़ा भरोसा हुआ। पंडितजी की मृत्यु के बाद पिछले सात वर्षों में हिन्दुस्तान नेता-विहीन लगता था। लगता नहीं था कि इस देश में कोई नेहरू के बाद, कोई नेता होगा और दुनिया के लोग इस पर मजाक उड़ाते थे कि 'हू आफ्टर नेहरू।' 'पंडित नेहरू के बाद कौन' और इस प्रश्न को दूसरे ढंग से उठाया जाता था लेकिन श्रीमती इन्दिरा गांधी जिस हिम्मत के साथ, जिस कान्फिडेंस के साथ, लोकसभा को डिजॉल्व कर जनता के बीच गयी और एक नया प्रोग्राम लेकर गयी कि मैं गरीबी हटाना चाहती हूं और ये विरोधी दल के लोग हमें हटाना चाहते हैं, तुम चाहते क्या हो? जनता ने कहा कि हम आपको चाहते हैं और गरीबी भी हटाना चाहते हैं। आज दो वर्षों के बाद-तीन वर्षों के बाद हवा दूसरी हो रही है। बहुत आत्म-निरीक्षण करने की आज जरूरत है। लोग मजाक करते हैं कि कांग्रेस के लोग अपनी गरीबी हटा रहे हैं जनता की गरीबी नहीं हटा रहे। आप जाइये गांव में, बड़ी शंका कर बैठते हैं लोग, पूछ बैठते हैं कि कांग्रेस के लोग तो भई डाक्टर हो गये हैं सबसे पहले हम अपनी गरीबी हटायेंगे तब हम मरीज का इलाज करेंगे और इस बात को 'अपोजिशन' के ये लोग 'एक्सप्लाइट' करते हैं। वही विरोधी पार्टियां नहीं हैं। आप देख लीजिये उठाकर कोई पोलिटिकल पार्टी नहीं कि इस स्थिति पर किसी राष्ट्रीय आंदोलन का नेतृत्व कर सके। यह तो नौजवान आया है, विद्यार्थी आया है इस बात को कहने के लिए। आप गुजरात में जो कुछ कह लीजिए, मैं भी बाहर जाकर सारी बातें कहूंगा, लेकिन विद्यार्थियों ने जो कुछ कहा वह था कि आपकी सरकार भ्रष्ट है और आपको कबूल करना पड़ा और चिमन भाई पटेल को निकालना पड़ा। यह सब आपने क्यों किया? इसमें कौन से सी. आई. ए. के लोग आये थे और कौन आनन्द मार्ग के लोग गये थे? १६८ में हाउस में जहां १४० आपका एम एल. ए. और वहां की आप विधान सभा नहीं बचा सके गलत आदमी के हाथ में देकर तो आप सोच लीजिये दूसरे सूबे का क्या हाल होगा? इसलिए आज जरूरत है इस बात की कि आप बोगस मेम्बरी पर मत जाइये, मैं तो कहूंगा ट्रेड यूनियन के बड़े नेता, हमारे स्टीफन साहब यहां बैठे हुए हैं, आपकी रिपोर्ट है कि आपकी हाइएम्ट मेम्बरशिप है साहब १३, २६, १५२, जी हां यही तो लिखा हुआ है १३, २६, १५२ हमको जो फिगर मिला है। लेकिन आप एक भी हड़ताल रोकने में सक्षम नहीं हैं। आप पर क्या भरोसा किया जाये? आप कौन सगठन हैं? या तो आप बोगस मेम्बर बनकर दफ्तरों में हम लोगों को दिखाते हैं या नहीं तो आपकी ताकत है तो क्यों नहीं आप ट्रेड यूनियन मैदान में कूदते हैं और मजदूर यानी बहुमत आपके साथ है तो फिर हड़ताल करानेवाला कौन होता है? मैं कहना चाहूंगा कि आज बड़े से बड़े हमारे नेता लोग और ये पुराने पालियामेंटेरियन अपनी राय दिये हैं, लेकिन शक्ति को नजर-अन्दाज मत कीजिये, सही बात को मत छोड़िये आज भी समय है। मैं कहना चाहता हूं कि तीन महीना और समय है अधिक अब नहीं है प्रधान मन्त्री को सही बात कहिये। कहीं कांग्रेस पार्टी में किसी का बाप नहीं जन्मा है जो इन्दिरा के विरुद्ध जाये, इन्दिरा गांधी के खिलाफ जाये। इस सवाल पर हर कांग्रेसी एक है लेकिन प्रधान मन्त्री को गलत ढंग से कहा जाता है कि आपके ये दुश्मन हैं और ये आपके दोस्त हैं। तो हम लोगों के यहां संस्कृत में कहावत है 'अतीव भक्ती चोरेर लक्षण' अत्यन्त भक्ति भी चोर की निशानी है जो अपने नेता को सही बात नहीं कहे, सच्ची बात नहीं कहे, समझिये वह देशभक्त नहीं है, देशद्रोही है और इसलिए इन्दिरा गांधीजी के सवाल पर कोई दो राय नहीं हैं। अगर इन्दिरा का कोई सच्चा भक्त है तो इन्दिरा ने

गरीबी हटाने का पैगाम दिया है देश को, उस पैगाम को सफल करना चाहिए। गरीबों के लिए कितना लड़ना है, गरीबों के सवाल पर क्या करना है, अपनी जमीन का बटवारा किया है कि नहीं, अपनी दौलत में सीलिंग किया है कि नहीं, अपने आचरण में समाजवाद को लाना है कि नहीं। यह नहीं है कि इन्दिरा गांधीजी से जाकर यह कहो कि सच्चे समाजवादी हम हैं। सब दिन-रात दौलत पर रहने का इन्तजाम करो, यह इन्दिरा गांधी और देश के साथ अन्याय हो रहा है। मैं कहना चाहूंगा कि आज कोई पार्टी नहीं है, जयप्रकाश नारायण जैसे आदमी को भी कहना पड़ा और बीच राष्ट्रीय सभा में कहना पड़ा। विरोधी दल के लोग गये, जयप्रकाश नारायण ने कहा कि कांग्रेस से आप लोग गये हैं, आपका कोई कैरेक्टर नहीं है। भाग गये तमाम लोग ये विरोधी। अब गाली दे रहे हैं जयप्रकाश नारायण को। भाग गये सभी। एक भरोसा हम पर है मतलब कांग्रेस पार्टी पर है और कांग्रेस पार्टी के लिए दोहरी जिम्मेदारी है क्योंकि कांग्रेस पार्टी ने आजादी के लिए खून बहाया है, कांग्रेस पार्टी ने आजादी के लिए हजारों नौजवानों को शहीद करवाया है, कांग्रेस पार्टी ने दुनिया में एक नया मिसाल दिया है। जिसके नेता के नेतृत्व में यह क्रांति सफल हुई, वह नेता जिसने ताज नहीं पहना, वह नेता बाहर बैठा और अपना उत्तराधिकारी पंडित जवाहरलाल को चुन कर दिया और गांधीजी का डायरेक्टर हुआ, कांग्रेस पार्टी एक नयी चीज दुनिया को दे रही है। कहीं ऐसी मिसाल दुनिया के इतिहास में बहुत कम मिलती है। लेकिन क्या कारण है कि कांग्रेस पार्टी को ही लोग ज्यादा बदनाम करते हैं कि कांग्रेसी बड़े चोर होते हैं, कांग्रेसी बड़े बेइमान होते हैं, कांग्रेस-पार्टी जब मेज ठोक कर मैदान में आती है, कांग्रेस पार्टी का आचरण ठीक रहे, कांग्रेस पार्टी के पास अच्छा मिशन है, कांग्रेस पार्टी के पीछे इतिहास है, इसने हर मौके पर सही नेतृत्व किया है, इसके नेता इन्दिरा गांधी सहित अपने देश को आजादी ही नहीं दूसरे देश की आजादी को भी हिफाजत कर सकते हैं, दूसरे देश को हम आजादी दिला सकते हैं, तब बड़ा दुर्भाग्य है कि आज हमें अपने देश में सोचना पड़ता है कि आजादी पर क्या करें? इसलिए सभापतिजी, मैं कहना चाहूंगा, चार-पांच बातों की ओर आपका ध्यान दिलाना चाहूंगा कि आज हम नया एक्सपेरिमेंट कर रहे हैं और २५ वर्षों में हमने अपनी आजादी को शानदार ढंग से 'प्रिजर्व' करके अपने देश को तरक्की के रास्ते पर लाकर हमने इस बात को साबित किया है कि हम कहां बढ़ रहे हैं। आज दीर्घकालिकी जरूरत है और वह सबसे पहले मैं चाहूंगा कि आजादी की लड़ाई में जिस विद्यार्थियों ने महत्वपूर्ण पार्ट अदा किया था अगर आप देखना चाहें तो पटना के सेक्रेटेरियट को देखें जहां आज भी सात नौजवानों का स्मारक बना हुआ है, जो झंडा फहराने गया था सेक्रेटेरियट पर १९४२ में। चाहे और जगह "चौधरी के लड़के भी हैं उनकी भी वहां मूर्ति है। वहां पर आज इस देश में लेबर फेल है, पोलिटिकल पार्टियां फेल हैं, सब फेल हैं, फिर वह विद्यार्थी जागा, क्यों? पिछले २६ वर्षों में आपने नौजवानों के लिए कौन-कौन सा कानून बनाया है उसकी हिफाजत के लिए। आज से पांच साल पहले किसी भी राजनीतिक पार्टी की हिम्मत नहीं थी कि मेडिकल कालेज और इंजीनियरिंग कालेज में हड़ताल करा दे, क्यों? उनकी नौकरी की सिक्युरिटी रहती थी, गारंटी रहती थी, वे लोग अच्छे विद्यार्थी माने जाते थे, और उन्हें यह विश्वास रहता था कि हड़ताल या हंगामा करने जाने पर हमारी नौकरी गड़बड़ हो जायेगी। हमारा भविष्य सिक्योर्ड है। आज वह भी डिस्टर्ब हो गये हैं। नौजवानों के पास कोई फ्यूचर प्लानिंग नहीं रहता है कि हम युनिवर्सिटी से निकलेंगे, कालेज से निकलेंगे तो हम क्या करेंगे तो उनको बहकाने के लिए ये जो बैठे लोग क्या करेंगे पोलटिकल पार्टी वाले? 'अपोजिशन', तो हम आप उम्मीद क्या करेंगे। कोई हमारी आपकी स्तुति करे, कोई हमारा आपका गीत गाये, एक झटका जनता ने दिया। १९७१ में तो दो वर्षों तक 'अपोजिशन' शान्त था, ठंडा था। मालूम होता है, कोई चारा नहीं था। तो कहता था इन्दिराजी स्याही लायी थीं और स्याही लगायी, फिर जब लोगों ने प्रश्न पूछा कि कहीं से स्याही लातीं तो फिर तमिलनाडु में क्यों समझौता किया? अगर स्याही लानी तो १९ सीट क्यों जीत जाती। बंगाल में, अगर स्याही लातीं तो इन्दिराजी और सीट क्यों नहीं ले लेतीं तो सारे लोग चुप हो गये और सारा फर्क खत्म हो गया। अब लोग मजाक करने लगे ये झूठ हैं। हम कुछ नहीं, हमें कुछ नहीं है जितना हमने जनता से 'कमिट' किया है 'कांग्रेस मेनिफेस्टो' में १९७१ और १९७२ में, सिर्फ उतने प्रोग्रामों को हम मजबूती से 'इम्प्लीमेंट' कर दें और इसके आगे जो भी शक्ति आये उसको हम चूर-चूर कर दें तो फिर कांग्रेस पार्टी का भविष्य है और इन्दिरा गांधी एकमात्र नेता हैं इसमें शंका की कोई राय नहीं, कहीं नहीं है। बहुत लोग कहते थे, मुझे उत्तरप्रदेश जाने का मौका मिला और मैं एक-दो उदाहरण कहना चाहता हूं। बहुत लोग कहते थे इस बार इन्दिरा गयीं, और उत्तरप्रदेश में तो गयीं, जहां कहीं भी कांग्रेसी नेताओं का 'इमेज' सही था वहां कांग्रेस भारी बहुमत से जीती है। मैं कहना चाहता हूं, माना शीलाजी यहां बैठी हुई हैं, लखनऊ का हेड आफिस था तमाम विरोधियों का, लेकिन कांग्रेस के खिलाफ, वहां के नेता के खिलाफ लोगों के मन में कोई शंका नहीं थी। सेंट परसेंट सीट आप जीती हैं, लेकिन जहां लोगों के मन में शंका बन जाती है, लोग आपको देख लेते हैं तो परोपदेश वाली बात अब चलनेवाली नहीं, जनता बहुत जागरूक हो चुकी है और गरीब को मत छोड़िये, वही आपका आधार है। ये एफेक्शोश आपके नहीं हैं। ये जहां थोड़ी उड़ान भरे कि फिर आपसे दूर हुए। आज भी इस मुल्क के गरीबों में और मैं खासकर यू०पी० के सम्बन्ध में कहूंगा कि एक कौम ने कांग्रेस को खुलकर सपोर्ट किया, ६० पर्सेंट वोट दिया तो वह कौम हरिजन थी जिसके आगे कोई भाषण दूसरा नहीं कर सका। तो आज भी विश्वास है कि इन्दिराजी हमारा उद्धार कर सकती हैं। तो आज जरूरत इस बात की है कि आज भी हमारी पार्टी बड़ी पार्टी है लेकिन बोगस पार्टी छोड़िये, क्या कोजिवेगा बोगस मेम्बरशिप बनाकर, पांच-लाख कम मेम्बर रहे, मैं पूछता हूं कि जिस पार्टी के पास इतनी

मेम्बरी हो तो यह पार्टी क्यों नहीं जनता के बीच मैदान में आती है यहाँ? अगर आप सोचिये बिहार के इतने २० साल मेम्बर हैं तो आज ५ साल बाद सड़क पर बाजू मगाते रहा है। कहा है हमारी २० साल की चीज जो आदर जनता को इस्तेमाल करते कि देखो बहुमत यहां है, यह चीज है जनता की, और ये मुद्दों की चीज है, ये तो पार्टी ए. की चीज है, आनन्द मार्ग की चीज है। यहां, नहीं साम-प्रधान कीजिये, यह वोटर-लिस्ट देखकर उधार भी है। मेम्बरी और उस मेम्बरी के बल तो हम इन्दिराजी के समाज-वाद को मजबूत कर सकते हैं, न देश के प्रजातंत्र को हम मजबूत कर सकते हैं और न १९७६ में इन्दिरा गांधी के हाथ मजबूत कर सकते हैं। अब एक साल के बाद हम इनको बदल नहीं सकते हैं तो बहुमत रहने पर भी हम इन्दिरा गांधी की क्या मदद करेंगे? हम उनको धोखा देते हैं और ठगते हैं। इन्दिरा गांधी तो अब इतिहास की चीज बन गयी है। उन्हें क्या लेना देना है बिचारी को। असल सवाल यह है कि आनेवाली पीढ़ी जो है, आनेवाली जो सन्तान है, वह हम लोगों को क्या कहेगी कि हमारे पिता कितने गैर जिम्मेदार थे कि अपने स्वार्थों में हमारी आजादी को नष्ट किये, अपने २५ साल, ५० साल काट लिये, हमारा भविष्य क्या होगा। और इस सम्बन्ध में हम यह कहेंगे कि युद्ध नौजवानों के लिए खासकर सोचिये, विद्यार्थियों के लिए, कि उन्हें यह विश्वास हो, उनको यह भरोसा हो कि भविष्य हमारा है।

बहुगुणा को धीरेन दा के उत्तर

स्वप्रेरणा से व्यवस्था निर्माण बिना लोकतंत्र नहीं

प्रश्न—जे०पी० के मूल विचारों में कोई अन्तर नहीं आया है। मुंगेरी में वे जिस प्रेरणा से बढ़े थे, वही प्रेरणा आज भी है। लेकिन, सर्व सेवा संघ और सर्वोदय कार्यकर्ताओं में उस वक्त आज जैसा उत्साह नहीं था। उस समय जे०पी० ने केवल आठ सक्षम कार्यकर्त्ता मांगे थे, पर वह भी उन्हें नहीं मिल सके थे। इस बार के उत्साह का कारण कहीं यह तो नहीं है कि ग्रामस्वराज्य पर हमारी वैचारिक आस्था के बजाय बौद्धिक स्वीकृति मात्र रही है। इस प्रकार, हम नास्तिक खेल करते रहे हैं। इस प्रकार जनता के बजाय सत्ता पर हमारा विश्वास रहा, यह अब प्रकट हो रहा है।

उत्तर—जे०पी० एक विशिष्ट जन हैं और बुनियादी तौर से वह क्रान्तिकारी व्यक्ति हैं। बाकी संस्था और उसके कार्यकर्त्ता सामान्य जन होते हैं। क्रान्तिकारी स्वयं प्रेरणा से काल-प्रवाह के संकेत को समझकर क्रान्ति-विचार का उद्घोष करता है। सामान्य-जन का मानस पूरे वातावरण पर काल के प्रत्यक्ष आलोड़न के साथ ही आलोड़ित होता रहता है। उसकी निष्ठा सामान्य जन जैसी हर चीज में बौद्धिक होती है, तब ये सामान्य कार्यकर्त्ता भी सामयिक तौर पर आलोड़ित होते रहे हैं। इन लोगों का उत्साह केवल इसी बार नहीं रहा है बल्कि १९५३ में भूदान के लिए और १९६५ में ग्रामदान के लिए भी हुआ था। प्रथम उत्साह १९५७ में और द्वितीय उत्साह १९६९ में ठण्डा हो गया था। इस बार भी यह उत्साह देश के सामान्य उत्साह के समाप्त होते ही ठण्डा हो जायेगा। आजादी, जो प्राणी मात्र की चाह का प्रतीक है, उसमें भी सामान्य-जन का उत्साह १९२१ में जितना था, सालभर में ठण्डा पड़ गया था। फिर, १९३०-३२ और १९४२ में पुन उभार आया था। लेकिन, दोनों उभार थोड़े ही दिनों में फिर ठण्डे पड़ गये। अगर द्वितीय विश्व युद्ध के बाद की जागतिक परिस्थितियों के कारण ऊपर-ऊपर के नेताओं से बात करके आजादी की घोषणा नहीं हुई होती तो कहना कठिन था कि जनता का उत्साह फिर कब उमड़ता। जे.पी. के आन्दोलन का चरित्र भी वैसा ही रहनेवाला है। उसमें भी कुछ दिनों के बाद आम जनता समाज की प्रचलित परम्परा के साथ पार्टी आदि में 'मर्ज' हो जायेगी और गांधीजी के साथ जिस तरह हम कुछ अल्पसंख्या वाले विचारनिष्ठ साथी डटे रहे, इसमें भी कुछ संख्या में उसी तरह रह जायेंगे। फर्क इतना ही होगा कि हमलोग जितनी संख्या में डटे थे, उसमें कुछ अधिक संख्या में ये लोग आज डटे रहेंगे। कारण यह है कि उस बार का आन्दोलन नेता और जमात द्वारा प्रेरित हुआ था, लेकिन, इस बार का आन्दोलन जनता द्वारा स्वतः स्फूर्त होकर प्रारम्भ हुआ है तथा अधिक व्यापक हुआ है।

प्रश्न—बिहार में अहिंसक आन्दोलन के विरुद्ध सेना का उपयोग प्रशासन द्वारा किये जाने के बाद ऐसा लगता है कि भविष्य में सेना का मुख्य रोल विदेशी हमले से रक्षा के बजाय राष्ट्रीय स्वातन्त्र्य को दबाना ही होगा (क्योंकि आगे चलकर युद्ध असम्भव होते जायेंगे) और वह इसमें अधिक निष्ठुर होगी। इस मुद्दे पर आपका क्या अभिप्राय है?

उत्तर—आपने जो कुछ कहा है, वह शत *प्रतिशत सही है। आगे ऐसा ही होनेवाला* है। आप लोगों को सिर्फ उसके मूल कारणों पर विचार करना चाहिए। नहीं तो यह चीज आप लोगों को इतनी भयभीत कर देगी कि आप सब नया मार्ग खोजने के बदले निराश होकर ठण्डे पड़ जायेंगे।

मैं आप लोगों से हमेशा कहता रहता हूं कि हर चीज का अपना एक स्वाभाविक तर्क होता है और उसका एक निश्चित फलित होता है। कुमारप्पाजी हमेशा कहते थे कि आप किसी चीज को स्वीकार करें और उसके 'कारोलरी' को इन्कार करें, यह असम्भव है।

अतः समझना होगा कि आपने जिस समस्या का जिक्र किया है वह भी अपने आप में कोई चीज नहीं है बल्कि एक फलित मात्र है।'

मनुष्य ने जो यह निर्णय कर रखा है कि दण्डशक्ति और संचालन पद्धति से ही समाज चलेगा, यह समस्या उसी का परिणाम है। बाद में, आधुनिक काल के ऋषियों ने जो एक नयी बात कही थी कि दण्डशक्ति के स्थान पर सम्मति शक्ति से समाज चलाना है, उसे नेताओं ने छोड़कर दण्डशक्ति और

आंखों पर हमला

अश्लील पोस्टर

अखिल भारतीय महिला सम्मेलन द्वारा देश में अश्लील एवं अशोभनीय पोस्टरों के खिलाफ विरोध दिवस के अन्तर्गत सिने पोस्टर, चलचित्र, पत्रिकाओं में स्त्री के चित्रों के साथ गन्दे विज्ञापन, कैलेण्डरों व अश्लील साहित्य का बहिष्कार किया जाता है। इस अवसर पर आचार्य विनोबा भावे का यह लेख प्रस्तुत किया जा रहा है। स

भारत में स्त्रियों का बहुत बड़ा आदर है। उसे यहां 'महिला' कहते हैं। इतना उन्नत शब्द, मुझे दुनिया की २०-२५ भाषाओं का ज्ञान है—परन्तु उनमें से किसी भाषा में नहीं है। यह शब्द ही सुझाता है कि स्त्री के बारे में भारत की क्या राय है और क्या अपेक्षा है।

स्त्री-काम वासना का साधन

परन्तु स्त्री का इतना गौरव होते हुए भी आज स्त्री की तरफ लोग देखते हैं कामिनी के तौर पर। वह काम-वासना का एक विषय माना गया है। यह मातृशक्ति का सबसे ज्यादा अपमान है। इसलिए स्त्री-शक्ति को यदि बढ़ाना है तो काम-वासना प्रेरक जो-जो चीजें हैं उन पर प्रथम प्रहार करना होगा।

गृहस्थाश्रम की वंचना

इस समय भारत में चरित्र-भ्रंश आयोजन हो रहा है। उसका विरोध और प्रतिकार बहनें नहीं करेंगी, तो फिर परमेश्वर ही भारत को बचाये, यही कहने की नौबत आयेगी। आज शहरों की दशा बड़ी खतरनाक है। पढ़ी-लिखी लड़कियां रास्तों पर चलती हैं, तो लड़के उनके पीछे लगते हैं। शहरों में 'ईव-टीजिंग' नाम का कार्यक्रम चलता है—मतलब लड़के आदम (इव) को घूमने निकलते हैं तो ईव (यानी आदम की ईव) का टीजिंग करता है। यह क्या बात है? यह जो चरित्र-भ्रंश हो रहा है, जिसमें गृहस्थाश्रम की प्रतिष्ठा ही गिर रही है, उसका विरोध करने के लिए बहनों को सामने आना चाहिए। माताओं को समझना चाहिए कि अगर देश का आधार शील पर नहीं रहा तो देश टिक नहीं सकता। शिवाजी महाराज की सुप्रसिद्ध कहानी है। उनके एक सरदार ने लड़ाई जीती और एक यवन-स्त्री को वे शिवाजी महाराज के पास ले आये। शिवाजी महाराज ने उसकी तरफ देखकर कहा, "मां, अगर मेरी माता तुझ जैसी सुन्दर होती, तो मैं भी सुन्दर होता।" ऐसा कहकर उन्होंने उसे आदरपूर्वक विदा किया। ऐसी संस्कृति जिस देश में चली, उस देश में इतना चारित्र्य-भ्रंश हो और सारे लोग देखते रहें, यह कैसे हो सकता है।

दीवारों पर नग्नता का नंगा नाच

मैंने इन्दौर में दीवालों पर इतने भद्दे, घृणित और बीभत्स चित्र देखे थे कि जिनके स्मरण से आंखों में आंसू आ जाते हैं। माता-पिता इन चित्रों को कैसे सहन करते हैं? उन पोस्टरों को देखकर मेरी आत्मा में गहरी ग्लानि हुई। ऐसे पोस्टरों से तो गृहस्थाश्रम की बुनियाद ही उखाड़ी जा रही है। बच्चा अक्षर सीखता है तो एकाग्र होकर पढ़ता है और चित्र देखता है। ऐसे अपरिपक्व मन के बच्चे पर इन गन्दे चित्रों का क्या संस्कार होता होगा? पोस्टर्स यानी बच्चों के लिए "फ्री एण्ड कम्पलसरी एजूकेशन इन सेक्सुअलिटी (विषयासक्ति की मुफ्त और लाजमी तालीम) है। ऐसे पोस्टर्स हटने चाहिए। यदि कानून से नहीं हट सकते हैं तो धर्म से हटें। धर्म कानून से ऊंचा होता है। जो कानून धर्म का रक्षण नहीं कर सकता, उस कानून की दुरुस्ती के लिए कानून भंग करने की जरूरत महसूस होती है।

ये पोस्टर रास्ते में होते हैं और हरेक की आंखों पर उनका आक्रमण होता है। शहरों में नागरिकों, बहनों को शर्मिंदा होना पड़ता है, निगाहें नीची करनी पड़ती हैं। आम रास्ते पर चलनेवाले नागरिकों की आंखों पर हमला करने का किसी को क्या हक है? अगर किसी को ऐसे पोस्टर्स लगाने हों तो अपने रंगमहलों में लगायें। हरएक नागरिक को अपने कर्तव्य के बारे में जागरूक रहना चाहिए। ऐसी लाचारी बरदाश्त नहीं करनी चाहिए। इसके खिलाफ सत्याग्रह करना चाहिए। अशोभनीय पोस्टरों को हटाना ही चाहिए।

'अशोभनीय' की व्याख्या

इन्दौर में जब बहनें सिनेमावालों के पास गयीं तो उन्होंने बहनों से पूछा था कि आपकी 'अशोभनीय' की व्याख्या क्या है? बहनों ने अत्यन्त उचित जवाब दिया था कि "जिन पोस्टरों को माता-पिता बच्चों के साथ नहीं देख सकते, वे अशोभनीय माने जायेंगे।" फिर भी अपने-अपने शहर की ऐसी एक समिति बने, जो पोस्टरों के बारे में निर्णय दे। फिर थियेटरों के मालिकों को उसे वहां से हटाने के लिए समझाया जाये। तिस पर भी वह न हटे तो फिर सत्याग्रह करना होगा।

सत्याग्रह नहीं, स्वच्छताग्रह

वैसे तो मैं इसको सत्याग्रह नाम भी देना नहीं चाहता। मेरे मकान के सामने मरा हुआ सूअर पड़ा हो और उसकी लाश में से बदबू आती हो और उस सूअर का मालिक उसे वहां से न हटाता हो और मैं उसे हटा दूं तो क्या वह सत्याग्रह कहा जायेगा? व्यापक अर्थ में तो सत्याग्रही का प्रत्येक कार्य सत्याग्रह ही है। हमारा भूदान सौम्य सत्याग्रह ही था, शांतिसेना सौम्यतर सत्याग्रह ही है, क्योंकि उसके बारे में कम-से-कम लोगों का विरोध होगा। अशोभनीय पोस्टर रखने से समाज का कल्याण होता है, ऐसा कहनेवाला कोई पक्ष तो होगा नहीं। यदि ऐसा विचार रखा जाता हो कि इस प्रकार के शिक्षण से बच्चे भावी जीवन के लिए तैयार होते हैं, इसलिए ऐसे पोस्टर जाहिर में रखना जरूरी है, तब तो ऐसे समाज में रहने के बजाय मैं मरना या जंगल में चले जाना ज्यादा पसन्द करूंगा। इसमें तो बच्चों पर आक्रमण है।

यह अन्याय है। गृहस्थ धर्म पर इससे जो आक्रमण होता है, उसे हटाना हमारा कर्तव्य है।

सिनेमा देखना लाजमी नहीं

वैसे तो कुछ सिनेमा भी गंदे होते हैं। उसके खिलाफ हम सत्याग्रह की बात नहीं करते, क्योंकि उनको मिटाने के लिए तो जनमत तैयार करना होगा। सिनेमा देखने के लिए तो लोग पैसा देकर जाते हैं। इसलिए 'सेन्सर' अच्छा हो, ऐसी माग कर सकते हैं। लोगो मे जाकर प्रचार करना होगा। परन्तु इसमे तो इच्छा न हो तो भी अपने रास्ते पर चलनेवालो की आखों पर आक्रमण होता है। तो ऐसे अशोभनीय पोस्टर भी नहीं सहन करेंगे। यह सभव है कि यहा जो अशोभनीय होगा, वह लदन मे शोभनीय माना जाता हो। हमारे यहा भारत मे कुम्भ-मेला मे साधू लोग लगोटी पहनकर घूमते हैं परन्तु लदन मे कोई इस तरह घूमने जायेगा तो उसे जेल मे डाल सकते हैं। हम भी उसे अच्छा तो नही कहते, परन्तु उसे सह लेते हैं। लदन में तो यह नही चलेगा। तो हरेक देश की अपनी-अपनी भिन्न-भिन्न सभ्यता और सस्कृति होती है। उसके मुताबिक चलनेका हरेक का अधिकार होता है। इस तरह अशोभनीय पोस्टर या चित्र को हम बरदाश्त करें तो वह अयोग्य है।

सिनेमा का विरोधी नहीं

एक बात स्पष्ट होनी चाहिए। वह यह कि मैं सिनेमा उद्योग का विरोधी नहीं हूं। मैं तो विज्ञान का समर्थक हूं। अच्छे अच्छे चित्र प्रदर्शित हो, यह मैं चाहू गा। ऐसे कुछ चित्र सामने आये भी हैं। मैं तो हमेशा कहता हू कि कि अध्यात्म और विज्ञान के समन्वय के बिना विकास सभव नही, इतना ही नहीं, दुनिया बचेगी भी नही। लेकिन इतनी बात जरूर है कि मैं यह जरूर चाहू गा कि रात मे देर तक सिनेमा न चले। सिनेमा का एक ही 'शो' चले। और वे अच्छे हो।

सिनेमा अच्छे हों

रशिया मे खराब सिनेमा होते नहीं। इग्लैंड, अमरीका, वगैरह देशों मे होते है, परन्तु रशिया में नहीं होते। क्योंकि रशिया के पास बहुत ज्यादा जमीन है और वहां लोग कम पड रहे हैं। इस वास्ते वे लोग सर्नात को उत्तेजन देते हैं। वे मातृशक्ति का गौरव करना चाहते हैं। हमारी परिस्थिति अलग है। हमारे यहा लोग ज्यादा, जमीन कम है, इसलिए हम सतति-नियमन करना चाहते हैं। परन्तु सतति-नियमन के साथ-साथ मातृ गौरव और गृहस्थाश्रम की प्रतिष्ठा चाहते हैं तो हमें सयम बढाना होगा, ब्रह्मचर्य को उत्तेजन देना होगा। समाज को सयम प्रधान बनाना होगा। इसलिए यह जरूरी है कि *सिनेमा गदे न हों।*

सरकार को भी निर्णय करना चाहिए कि खराब सिनेमा भारत में नहीं चलेंगे। अपने देश मे से खराब सिनेमा को तो हटाना ही पडेगा। इसके लिए नेताव वगैरह पार्लियामेंट के सामने और इन्दिराजी के घर के सामने भी कर सकती हैं।

शील मिटा तो देश मिटेगा

तो इस तरह, आज की परिस्थिति मे बहनों के सामने यह शील-रक्षा का बहुत बडा कार्य पेश है। शील और शांति की रक्षा का कार्य, सस्कृति और सभ्यता की रक्षा का कार्य बहनो का है और इसलिए बहनो को सारे भारत मे घूमकर लोगो को समझाना चाहिए कि सिनेमा द्वारा कितना निर्लज्ज अत्याचार चल रहा है। आज मातृत्व पर खुले आम इतना प्रहार होता रहे और हम सब खुले आम उसे सहन कर रहे हैं। मैं नही मानता कि इससे प्रगति की राह खुली होगी। केवल भौतिक उन्नति मे देश ऊचा नही उठता। जब शील ऊचा उठता है, तभी देश उन्नति करता है। इसलिए मैं बहनो से कहता हू कि अब देश की शील-रक्षा आपके हाथ मे है।

चीफटन को चुनौती

पिछले बारह साल मे सतपुडा के अचल मे जो मूक सेवा हो रही है, उसके अब फल आने शुरू हुए हैं, यह कहा जाये तो अति-शयोक्ति नहीं होगी। वहीं के एक कार्यकर्ता श्री उद्धवसिंह सूरजवशी, जिन्होंने भाऊ (दामोदरदास मूदडा) के साथ काम किया था, उन्हीं के सहयोग से सतपुडा की तराई मे काम करने लगे। वहाँ की जनता का दुख उनसे सहा नहीं गया। बडा आन्दोलन खडा हुआ—ग्रामस्वराज्य समिति कायम हुई और आदिवासियों की जमीनें जो साहूकारों के काबिज थी, वापिस लेने का कार्यक्रम शुरू हुआ। नतीजा यह हुआ कि पिछले बबई अधिवेशन में यहा शासन ने कानून बनाया कि सन् १९५७ के बाद से जिस किसी आदि-वासी की जमीन किसी भी रूप मे दूसरे के पास गयी हो तो वह उस मूल भूमिधारक को वापस मिलेगी। यह एक क्रातिकारी कदम वहा शासन ने सतपुडा के आन्दोलन के फल-स्वरूप उठाया जिसका श्रेय श्री मकर सिंह महाराज को था। उनके साथी एव वहा बरसो से चल रहे विधायक कार्य को ही है।

अब वहां के एक हिस्से में अभी तक चीफटन मानसिंग की जमीन पर चली आ रह जनता ने इसे मानने से इन्कार कर दिया है। जनता का कहना है कि चीफटन तो अग्रेजो की निर्मिति है। अग्रेज गये राजा लोग गये। अब ये चीफटन कहा से आये? विधान में इनको अगर कोई मान्यता दी गयी है तो वह हम लोगो की जानकारी के बिना दी गयी है। यहा की जमीन हमारी है। हम उसका लगान शासन को देते हैं। यह पर्याप्त है। चीफटन से हमारा कोई वास्ता नहीं।

इस प्रश्न पर वहा आदोलन खडा होने की सभावना है। सतपुडा सर्वोदय के श्री भाऊ इसमे जनता का मार्गदर्शन कर रहे हैं। अभी २० नवबर को बडा मोर्चा सपादित किया गया है।

इसी तरह इलाके मे जो लोग बरसों से जगल इलाके में बस रहे हैं, उनमें से कुछ गावो में जगल विभागीय शासन ने बडा जुल्म किया है। फसलें नष्ट कर दी गयी हैं, मकान तोड दिये गये हैं। लोकसभा मे गृह मत्रीजी ने यह कह कि किसी झोपडी को हाथ नहीं लगाया है, जनता को गुमराह करने की कोशिश की है। अभी तक वहां के लोगों को अन्यत्र कहीं बसने के लिए जगह नहीं मिली है। वहा भी आन्दोलन सुलग रहा है। सतपुडा सर्वोदय मडल इस दिशा में क्रियाशील है। जगल मे बसनेवाले लोगो ने तय किया है कि जब तक उन्हें किसी अन्य स्थान पर बसाया नहीं जायेगा, वे वहां से हटेंगे नहीं।

छात्र शक्ति की नयी करवट

सम्मेलन की तीन उपलब्धियां

२३ और २४ नवम्बर को दिल्ली में छात्र और युवा नेता सम्मेलन हुआ। जड़ता को भंग करने की सम्भावनाओं को गर्भ में लिये जो युवा आक्रोश देश भर में फैला रहा है, उसे संगठित व समायोजित संघर्ष का रूप प्रदान करने की दृष्टि से यह सम्मेलन बहुत महत्वपूर्ण रहा। पहली बार तमाम महत्वपूर्ण अखिल भारतीय युवक और छात्र संस्थाओं के चोटी के नेता एक मंच पर बैठे और बैठकर उन्होंने गंभीरतापूर्वक देश की समस्याओं पर विचार किया विशेष रूप से बिहार आंदोलन को सहयोग देने, कुशिक्षा से सुशिक्षा की ओर बढ़ने, भ्रष्टाचार के खिलाफ जेहाद छेड़ने तथा चुनाव पद्धति में सुधार व आकाशवाणी के चरित्र में परिवर्तन करने के सवालों पर आंदोलन खड़ा करने की दृष्टि से कार्यक्रमों पर व्यापक विचार विमर्श हुआ।

एक मंच पर

इस सम्मेलन की मूलप्रेरणा थे स्वयं जयप्रकाशजी। जयप्रकाशजी के आह्वान और दिल्ली विश्वविद्यालय छात्रसंघ के निमंत्रण पर उन अधिकांश विश्वविद्यालयों के छात्र संघ के अध्यक्ष या मन्त्री आये थे, जहां छात्र संघों के चुनाव होते हैं। इनके अलावा अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद, समाजवादी युवजन सभा, भारतीय लोक युवक दल, युवक कांग्रेस (संगठन कांग्रेस), भारतीय युवा संघ, नवनिर्माण समिति (गुजरात), छात्र संघर्ष समिति (बिहार) आदि के प्रमुख छात्र नेताओं ने इसमें भाग लिया। अनेक ऐसे छात्र नेताओं ने भी भाग लिया जिनका किसी भी पक्ष से संबंध नहीं था। इसी बात को अगर दूसरे ढंग से कहा जाये तो सम्मेलन में उन सब पक्षों और दलों के प्रमुख छात्र व युवा नेताओं ने भाग लिया, जो जयप्रकाशजी के नेतृत्व में चलनेवाले आंदोलन का समर्थन करते हैं।

इन तमाम छात्र और युवक शक्तियों के प्रमुखों का एकत्र होना इस सम्मेलन की बहुत महत्वपूर्ण सफलता थी। हो सकता है कि कुछ लोग इस तथ्य का महत्व ठीक से न समझें, लेकिन जिन लोगों को छात्र संगठन में कार्यरत युवकों की पक्षीय निष्ठा की प्रगाढ़ता की अनुभूति है, जो इन विभिन्न पक्षों के बीच अविश्वास और घृणा की खाई को जानते हैं, वे जयप्रकाशजी की इन विभिन्न पक्षों को जोड़नेकी महत्ता बेहतर ढंग से समझ सकते हैं।

समन्वय समिति

इस सम्मेलन की दूसरी महत्वपूर्ण उपलब्धि थी समन्वय समिति का निर्विघ्न निर्माण। इसके दो संयोजक हैं—दिल्ली विश्वविद्यालय छात्र संघ के अध्यक्ष श्री अरुण जेटली और जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय छात्रसंघ के अध्यक्ष श्री आनन्द कुमार। इसमें युवा और छात्र संगठनों के दो-दो प्रतिनिधि लिये गये हैं। इनके अलावा गुजरात की नवनिर्माण समिति और बिहार की छात्र संघर्ष समिति के एक-एक सदस्य लिये गये हैं। विश्वविद्यालय छात्र संघों के वे सब चुने हुए अध्यक्ष जो जयप्रकाशजी के आंदोलन का समर्थन करते हैं, भी इस समन्वय समिति के पदेन सदस्य हैं।

कार्यक्रम

इस सम्मेलन की तीसरी महत्वपूर्ण उपलब्धि वे कार्यक्रम हैं जो प्रस्ताव के रूप में पारित हुए हैं। इन कार्यक्रमों से समग्र क्रांति के प्राथमिक संघर्ष का सूत्रपात होगा और आंदोलन अन्य राज्यों में फैलेगा। उक्त प्रस्ताव में सम्मिलित महत्वपूर्ण कार्यक्रम इस प्रकार हैं:

1. दिल्लीमें लोक-सभा का घेराव इन मांगों के लिए 6 मार्च 1975 को किया जाये।

(क) चुनाव पद्धति में सुधार, (ख) मन्त्रियों के भ्रष्टाचारों पर रोक, (ग) बिहार आंदोलन का समर्थन, यह प्रदर्शन छात्र तथा जनशक्ति के संयुक्त कार्यक्रम के तौर पर होगा और व्यूहरचना का निर्णय समन्वय समिति द्वारा किया जायेगा।

2 एक निश्चित दिन सारे राष्ट्र में आकाशवाणी के केन्द्रों पर प्रदर्शन किया जाये और जहां संभव हो उन्हें पूरी तरह से ठप करने का प्रयास किया जाये।

3 देश के जिले-जिले में राष्ट्रीय आंदोलन के समर्थन में प्रदर्शन आदि के कार्यक्रम किये जायें। इसके लिए आवश्यक संगठन, प्रचार एवं प्रशिक्षण चलाया जाये।

4 सार्वजनिक जीवन में काम करनेवाला हर व्यक्ति अपनी संपत्ति की घोषणा करे तथा समय-समय पर उसका ब्योरा देता रहे। इसकी मांग संघर्ष समितियों द्वारा की जाये।

5. शिक्षा सम्बन्धी कुछ निश्चित मांगों को लेकर एक राष्ट्रीय मांग पत्र तैयार किया जाये और उन्हें पूरा करने के लिए शिक्षाशास्त्री वर्ग तथा प्रशासन को एक निश्चित अवधि दी जाये। अवधि के समाप्त होने तक यदि ये मांगें पूरी नहीं हो, तो उन्हें पूरा करने के लिए सीधी कार्रवाई की जाये।

6. मांग पत्र बनाने तथा अवधि तय करने की जिम्मेवारी समन्वय समिति की रहे।

7. सम्मेलन में से निकलने वाले कार्यक्रमों को चरितार्थ करने की जिम्मेदारी प्रदेश तथा जिला स्तर पर बननेवाली संघर्ष समितियों के संगठन की होगी। राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रीय समन्वय समिति समन्वय का कार्य करे।

प्रस्ताव के अन्त में दो अपीलें की गयी। एक तो युवा संगठनों से कहा गया कि राष्ट्रीय संघर्ष के इस कार्यक्रम को तमाम युवा संगठन अपने-अपने समुचित घरोंदों से ऊपर उठकर निष्पक्ष भाव से करें। दूसरा आग्रह यह था

कि आगामी संपूर्ण वर्ष भर अपने-अपने पक्षीय कार्यक्रमों को स्थगित रखें और पूरी शक्ति इस राष्ट्रीय संग्राम में लगायें। सम्मेलन में बिहार आंदोलन के पक्ष में जो प्रस्ताव पास हुआ, उसमें युवकों की नयी भूमिका की अनुभूति व्यक्त हुई। *गुजरात आंदोलन के पहले* तक छात्र शक्ति को यह गम्भीरता और गरिमा प्राप्त नहीं थी, जो आज है। वह एक बदनाम, विध्वंसक और गैर-जिम्मेदार शक्ति के रूप में देखी जाती थी। बिहार के छात्र आंदोलन ने सार्वदेशिक राजनैतिक, आर्थिक, शैक्षिक तथा सामाजिक परिवर्तनों के साथ छात्रशक्ति को जोड़ दिया और 'छात्र आंदोलन को जन-जन से जोड़कर जन-आंदोलन का रूप दिया है।'

यह सही है कि आंदोलन तो मूलतः छात्रों का था जैसा कि जयप्रकाशजी बार-बार कहते भी हैं, लेकिन बड़ा सच यह है कि आज छात्र चेतना के जागरण में, उनकी अहिंसक संग्राम-शक्ति में और उनके त्याग बलिदान में जयप्रकाशजी की ही मूल प्रेरणा रही है।

शैक्षिक क्रांति के सूत्र

दिल्ली सम्मेलन के उद्घाटन सत्र में जयप्रकाशजी ने प्रारम्भ में ही शिक्षा पर बल दिया। उन्होंने कहा कि शिक्षा की और अर्थ रचना की प्रक्रियाएं आपस में गुंथी होनी चाहिए। *ऐसा नहीं चल सकता कि शिक्षा की* दिशा एक हो और आर्थिक आयोजन की दिशा दूसरी हो। इनकी चूलें एक दूसरी से मिली हुई होनी चाहिए। सम्मेलन में एक प्रस्ताव शिक्षा पद्धति पर भी पारित किया गया।

छात्र नेताओं के दिमागों में किस तरह की क्रांतिकारी शैक्षिक अधिष्ठान की भूमिका थी इसका अन्दाजा इनकी कुछ मांगों से लग जाता है। कोठारी आयोग की रपट में यह *मांग की गयी थी कि शिक्षा पर ६ प्रतिशत* व्यय किया जाये। पर भारत सरकार ने इसे *अस्वीकार कर दिया था। इस प्रस्ताव में शिक्षा पर कुल बजट का १५ प्रतिशत खर्च करने का* सुझाव दिया गया है। मौजूदा गति से निरक्षरता के उन्मूलन में शताब्दियां लग सकती हैं। इसमें मांग की गयी है कि साक्षरता-सेना के माध्यम से युद्ध स्तर पर निरक्षरता का उन्मूलन ५ वर्षों में कर दिया जाये। छात्र नेताओं की समतावादी समाज रचना की व्यग्रता को 'पब्लिक स्कूलों' का खात्मा करने की मांग में देखा जा सकता है। उन्होंने न केवल छात्रों की साक्षरता सेना बल्कि भूमि-*सेना व सिंचाई-सेना खड़ी करने के क्रांतिकारी* सुझाव भी दिये। इतना ही नहीं, हर स्तर पर सह-शिक्षा की बात में नारी जागरण और नारी-मुक्ति के साथ-साथ स्त्री की सह-नागरिका की भूमिका को उठाने की चिन्ता कार्यरत प्रतीत होती है।

जयप्रकाशजी ने युवा चेतना को झकझोरा

असल में जयप्रकाशजी विगत एक-डेढ़ वर्षों में युवा चेतना को जबरदस्त ढंग से झकझोर रहे हैं। दिल्ली सम्मेलन के बाद यह प्रतीत हो रहा है कि राष्ट्रव्यापी पैमाने पर *युवक समग्र क्रांति का वाहक बनने को उद्यत* हो रहा है। दिल्ली सम्मेलन में जयप्रकाशजी ने लोकतंत्र की प्रक्रियाओं में उत्पन्न गतिरोध की ओर छात्रों का ध्यान दिलाया और प्रजातन्त्र के सामने आ रहे तानाशाही खतरे की प्रतीति भी करायी। संसद के घेराव और आकाशवाणी केन्द्रों के काम ठप्प करने की *सीधी कार्रवाई भी प्रस्तावित की।* छात्र नेताओं ने लोकनायक की इच्छा को हाथों-हाथ उठा लिया। लोकनायक की इच्छाएं छात्रों का कार्यक्रम और संकल्प बन गयीं।

छात्रशक्ति के जागरण के संदर्भ में यह स्मरणीय है कि जयप्रकाशजी ने पवनार से 'लोकतन्त्र के लिए युवाशक्ति को आवाहन' दिया था। तब उनका उद्देश्य यहां तक ही सीमित था कि उत्तरप्रदेश के आगामी चुनाव शुद्ध और स्वतन्त्र हों। वे तब उत्तरप्रदेश के *अनेक नगरों में गये और छात्रों को सम्बोधित* किया। कानपुर में उन्होंने कहा था कि आज मैं ४२ की सी स्थिति देखता हूं। आज की *स्थिति उतनी ही क्रांतिकारी है। जयप्रकाशजी* की इस उक्ति से कान सभी खड़े हो गये थे।

उसके बाद गुजरात आंदोलन का दौर आया। जयप्रकाशजी गुजरात गये। उन्होंने और बातों के साथ दो चेतावनियां भी दीं। एक चेतावनी थी 'एक मन्त्रिमण्डल भंग करोगे, दूसरा आयेगा। दूसरी विधान सभा बनेगी। सांपनाथ का नागनाथ आयेगा। फर्क क्या पड़ेगा?'

इन तूफानी लहरों का अर्थ समझो

उन्होंने यह भी कहा था कि दुनिया की कोई भी क्रांति केवल युवाशक्ति के द्वारा नहीं हुई, जनता का साथ अनिवार्य है। जनशक्ति *खड़ी करने की बात उन्होंने गुजरात में कही* थी। वही आगे बिहार में की। उसके बाद बिहार के छात्रों को सम्बोधित करते समय जयप्रकाशजी ने एक ऐतिहासिक उक्ति कही कि, 'यदि नवयुवकों और नवयुवतियों ने अपने चारों ओर उठ रही तूफानी लहरों का अर्थ नहीं समझा तो मेरा निश्चित मत है कि इतिहास का प्रवाह उन्हें दूर फेंक देगा और तब इस बात से कोई फर्क पड़नेवाला नहीं है कि किसके पास कौन सी डिग्री है और किसने कौन सी परीक्षा पास की है।'

और क्या हमारा यह फर्ज नहीं कि क्रांति के गतिमान होते चक्र में अपने कंधे की शक्ति लगा दें? आज नवयुवकों के लिए वह वक्त नहीं है जब वह तमाशबीन बनकर बैठे रहें। मैं मानता हूं कि परीक्षाएं महत्वपूर्ण होती हैं परन्तु, इतिहास के कुछ मोड़ों पर परीक्षाएं और डिग्रियों से ज्यादा महत्व कुछ दूसरी *चीजों का हो जाता है।'*

और जब जयप्रकाशजी अभी दिल्ली आये तो उन्होंने कहा कि नये समाज का निर्माण करना बहुत बड़ा काम है। मैं छात्रशक्ति में आशा की एक किरण देखता हूं। आप ही लोग कुछ कर सकते हैं। आप लोग भी अगर कुछ नहीं करेंगे तो कौन करेगा? आप लोग अपने-अपने राजनैतिक पक्षों से ऊपर उठें और साझे के ढंग से समग्र क्रांति के वाहक बनें। मैं यह नहीं कहता कि अपना पक्ष छोड़ दो। *अपनी संस्था का काम करो।* लेकिन समग्र क्रांति के सिलसिले में दलीय निष्ठाओं से ऊपर उठके खड़े हो जाओ।

जयप्रकाशजी की अपील का सब पक्षों के छात्रों व छात्र नेताओं पर असर हुआ और एक अनुशासन तले छात्रशक्ति के शक्तिशाली ढंग से उठ खड़े होने की बलवती संभावनाएं तैयार हो गयी हैं। समन्वय समिति का गठन हो चुका है। कार्यक्रम के चरण निर्धारित हो चुके हैं। छात्रशक्ति नये समाज का अनुष्ठान कर रही है। ★

नयी तालीम में योग, उद्योग, सहयोग

अखिल भारत नयीतालीम समिति, सेवाग्राम द्वारा आयोजित और २९, ३० नवम्बर और १ दिसम्बर, ७४ को सेवाग्राम में संपन्न अखिल भारत नयी तालीम सम्मेलन में देश के विभिन्न राज्यों से आये हुए नयी तालीम के लगभग २०० कार्यकर्ताओं, शिक्षाविदों, शिक्षाधिकारियों और विविध रचनात्मक कार्यों में लगे लोक-सेवकों ने देश की वर्तमान गम्भीर स्थिति के सन्दर्भ में बुनियादी शिक्षा (नयी तालीम) के व्यापक प्रचार और प्रसार के प्रश्न पर और आज के सन्दर्भ में उसकी बढ़ती हुई आवश्यकता, अनिवार्यता एवं महत्व पर गहराई से विचार किया। सम्मेलन की अध्यक्षता नयी तालीम के अध्यक्ष श्री श्रीमन्नारायण ने की और उद्घाटन उत्तरप्रदेश के मुख्यमन्त्री हेमवतीनन्दन बहुगुणा ने किया। सम्मेलन को ऋषि विनोबा से मार्गदर्शन भी प्राप्त हुआ।

सम्मेलन ने नयी-तालीम के समग्र, व्यापक और विशाल स्वरूप की ओर सभी सम्बन्धितों का ध्यान अपने पूरे बल के साथ आकर्षित किया है और कहा है कि सारे देश में प्रचलित परम्परागत शिक्षा के स्थान पर इस नयी शिक्षा को समूचे लोक-जीवन में प्रतिष्ठित करके शिक्षा-जगत् में और लोक-जीवन में आई हुई विकृतियों, असमानताओं और कुण्ठाओं को समाप्त करने का सामूहिक पुरुषार्थ तीव्रता और तत्परता से किया जाये जिससे नये समाज की रचना का काम सुगम हो सके।

विपरीत और प्रतिकूल परिस्थितियों में भी कुछ प्रान्तों में वहां के कार्यकर्ताओं और सरकारों ने जो नयी तालीम के काम को श्रद्धा और सातत्य के साथ आगे बढ़ाने, विकसित करने और उसकी अनेकानेक सम्भावनाओं को सिद्ध करने का अपना पुरुषार्थ यथाशक्ति जारी रखा उसकी सराहना की गयी।

कुछ प्रान्तों में नयी तालीम के सिद्धान्तों के विरुद्ध उठाये जा रहे कदमों पर चिन्ता व्यक्त की गयी।

शिक्षा को सही दिशा देने और उसे ठोस आधार पर खड़ा करने के लिए विनोबाजी ने योग, उद्योग और सहयोग के तीन-सूत्र शिक्षा-जगत् के सामने रखे हैं, सम्मेलन ने उनका स्वागत और समर्थन करते हुए कहा कि देश की सारी शिक्षा-व्यवस्था को इन सूत्रों के सहारे खड़ा करने का प्रयत्न किया जाये।

नयी तालीम के इन उद्देश्यों और कार्यों को अमली रूप देने की दृष्टि से सम्मेलन ने सिफारिश की कि (१) प्रशासकीय रूप से नयी तालीम समितियों का काम करने की दृष्टि से राज्यों में नयी तालीम समितियों का गठन करके उन्हें सक्रिय किया जाये और उनके माध्यम से राज्यों में व्यापक लोक-शिक्षण के प्रचार-प्रसार की व्यवस्था हो। (२) केन्द्र में और राज्यों में बुनियादी शिक्षा के सचालन के लिए राज्य सरकारों द्वारा बुनियादी शिक्षा मण्डलों का गठन पूरी स्वायत्तता और क्षमता के साथ विधिवत् हो जिसमें नयी तालीम में लगे हुए कार्यकर्ताओं का प्रभावशाली प्रतिनिधित्व हो। मण्डलों की सिफारिशों के अमल के लिए सक्षम प्रशासकीय व्यवस्था हो। (३) राज्यों में नयी तालीम के विकास और विस्तार को प्रतिबिम्बित करनेवाले ऐसे आदर्श और स्वायत्त नयी तालीम विद्यालय चलाने का प्रबन्ध हो जो अपने-अपने क्षेत्र में प्रकाश-स्तम्भ का काम कर सकें। (४) पिछले ३७ सालों में हुए नयी तालीम के विविध प्रयोगों और अनुभवों को ध्यान में रखकर और आज के स्वतंत्र, विकासशील और लोकतंत्रनिष्ठ भारत की आवश्यकताओं के अनुरूप समग्र नयी तालीम का एक संशोधित शिक्षा-क्रम तैयार किया जाये। अखिल भारत नयी तालीम समिति इस कार्य के लिए विशेषज्ञों की एक समिति गठित करे, जो अगले छह महीनों के अन्दर १ से १० श्रेणी तक के इस परिवर्द्धित शिक्षा-क्रम को "योग, उद्योग और सहयोग" मूल्यों के आधार पर प्रस्तुत करे और शिक्षा सचालकों व शिक्षकों के मार्गदर्शन के लिए आवश्यक पुस्तिकाएं उपरोक्त मूल्यों एवं सिद्धान्तों के आधार पर तैयार करे। इसके अतिरिक्त तीन और महत्वपूर्ण सिफारिशें की गयीं।

★

वर्धा जिले में शराबबन्दी की मांग

महाराष्ट्र में शराबबन्दी के प्रथम चरण के रूप में वर्धा जिले में १ अप्रैल १९७५ से पूरी शराबबन्दी लागू करने की माग पर बल देने के लिए शिक्षा मण्डल, वर्धा ने ३० सितम्बर को वर्धा शहर तथा जिले के प्रमुख नागरिकों की एक सभा श्री श्रीमन्नारायणजी की अध्यक्षता में आयोजित की जिसमें ८८ समाज सेवक उपस्थित थे। सभा को श्रीमन्नारायणजी, कमलाताई लेले, डा. रविशकर शर्मा, कामेश्वर प्रसाद बहुगुणा, सत्यनारायण बजाज, गुलाबराव वाघ, च. जे. पानवुडे, शकरराव सोनवणे, बापूराव देशमुख, प्रभाकरजी, वा. गो. गावडे, श्रीराम टोवडीवाल, और मनोहर दीवाण ने सम्बोधित किया तथा अन्त में एक प्रस्ताव पारित कर महाराष्ट्र सरकार से माग की गयी कि एक अप्रेल १९७५ से संपूर्ण नशाबन्दी लागू की जाये। सभा ने चेतावनी दी कि माग मन्जूर न होने पर १ अप्रेल ७५ से जिले में शराब की दूकानों पर पिकेटिंग की जायेगी।

सभा ने वर्धा जिला शराबबन्दी समिति की स्थापना भी श्रीमनजी की अध्यक्षता में की जिसकी बैठक १८ अक्टूबर को बजाजवाडी वर्धा में हुई। समिति ने कार्यसमिति का चुनाव किया जिसमें श्रीमनजी अध्यक्ष चुने गये तथा ३ सचिव और २६ अन्य सदस्य। सभा में बताया गया कि शिक्षा मडल, वर्धा, सेवाग्राम आश्रम प्रतिष्ठान, यशवन्त एजुकेशन सोसायटी, महिलाश्रम, दत्तापुर कुष्ठधाम, कस्तूरबा हेल्थ सोसाइटी और गाधी सेवा सघ से समिति के कार्य के लिए आर्थिक मदद मिली है।

बैठक में श्रीमनजी ने कहा कि शराब परमिट पर पीनेवालों तक को सरकारी नौकरियों में नहीं रखा जाना चाहिए। बैठक ने प्रस्ताव पारित किये कि वर्धा नगर परिषद के शीघ्र हो रहे चुनाव में किसी शराबी को न चुना जाये और प्रत्येक महाविद्यालय के छात्रों का सहयोग लिया जाये। बैठक में विभिन्न कार्यों के लिए संयोजक भी नियुक्त किये गये

उज्जैन में तरुण शांति सेना शिविर

जे० पी० का मध्यप्रदेश दौरा

तरुण शांति सेना का सम्मेलन आगामी ५-६ जनवरी, १९७५ को उज्जैन में हो रहा है। उद्घाटन लोकनायक जयप्रकाश नारायण करेंगे तथा सभापत दादा धर्माधिकारी। सम्मेलन का मुख्य विषय रहेगा—'सम्पूर्ण क्रान्ति का अगला चरण।' सम्मेलन में केवल तरुण शांति सैनिक भाग ले सकेंगे। प्रवेश शुल्क १० रुपये है। इसके पूर्व तरुण शांति सेना के चुने हुए कार्यकर्ताओं का एक शिविर उज्जैन में ३१ दिसम्बर से ४ जनवरी तक होगा।

सम्मेलन में भाग लेनेवाले प्रतिनिधियों के लिए रेलवे विभाग ने एकतरफा रेल किराये में दोनों ओर की यात्रा की रियायत प्रदान की है। सम्मेलन में शामिल होने के लिए अनुमति पत्र और रेलवे कन्सेशन दस रुपये प्रवेश शुल्क भेजकर सम्मेलन संयोजक तरुण शांति सेना, राजघाट, वाराणसी—१ (उ० प्र०) से मंगवाये जा सकते हैं। सम्मेलन में केवल तरुण शांति सैनिक ही भाग ले सकेंगे।

उज्जैन में जे पी. के स्वागत के लिए स्वागत समिति गठित की गयी है और उन्हें नगरवासियों की ओर से ५१ हजार रुपये की थैली भेंट करने की तैयारी हो रही है।

लोकनायक श्री जयप्रकाश नारायण ने इंदौर यात्रा का निमंत्रण स्वीकार कर लिया है। वे आगामी जनवरी के प्रथम सप्ताह में इन्दौर आयेंगे।

उनके इंदौर आगमन के सिलसिले में विस्तृत कार्यक्रम बनाया जा रहा है। वे यहां एक जनसभा को भी संबोधित करेंगे। नागरिक संघर्ष समिति जनता द्वारा उन्हें एक लाख रुपये भेंट करने की पहल कर रही है।

एक सूचना के अनुसार तरुण शांति सेना का राष्ट्रीय कार्यालय स्थानान्तरित होकर पुनः वाराणसी आ गया है। उसका पता तरुण शांति सेना, राजघाट, वाराणसी—२२१००१ है।

खाते पर जासूसी

लोकनायक श्री जयप्रकाश नारायण के इन्दौर आगमन पर जनता द्वारा भेंट की जानेवाली राशि के लिए इन्दौर प्रीमियर को-आपरेटिव बैंक की राजवाड़ा शाखा में एक खाता खुलवाया गया है। खाता खोलकर कर्मचारियों ने एक प्रकार से परेशानी मोल ले ली है क्योंकि प्रतिदिन दो तीन बार खुफिया पुलिस के लोग आकर बैंक कर्मचारियों से तलाश करते हैं कि जे० पी० के खाते में कितना रुपया जमा हुआ? और बैंक कर्मचारियों को बार-बार अपना काम छोड़कर हिसाब का विवरण देना होता है। इधर कांग्रेसी नेताओं आदि ने संचालकों पर दबाव डालना शुरू कर दिया है कि उन्होंने जे पी. के लिए बैंक में खाता क्यों खोल लिया?

बैंक किसी को भी खाता खोलने से इन्कार नहीं कर सकता, लेकिन जे पी. के लिए खाता खोलकर उसने एक सिरदर्द मोल ले लिया है। इस खाते में गत चार-छः दिन में ही १४ हजार रुपये से अधिक जमा हो चुके हैं।

सी० पी० एम० नेताओं के साथ जे० पी०

समाचार

जयप्रकाशजी पर पटना में ४ नवम्बर को लाठियों से हुए हमले के विरोध में सर्व-सेवा संघ के आह्वान पर २३ नवम्बर को देश भर में सम्पन्न २४ घन्टों के उपवास के समाचार लगातार मिल रहे हैं।

रीवा में ५०० से अधिक लोगों ने उप-वास किया जिनमें समरबहादुरसिंह, रोहिणी प्रसाद त्रिपाठी, रामेश्वर मिश्र, 'पंकज', कौशल प्रसाद मिश्र, बालकृष्ण, प्रद्युम्न-जड़िया, केशव गुप्त, राजेन्द्र श्रीवास्तव, नृपेन्द्रसिंह, गिरीश प्रसाद पाण्डेय, प्रकाश नारायण खरे, प्रेमलाल मिश्र, लाल प्रद्युम्न सिंह, स्वामीप्रसाद दीक्षित, श्रीमती प्रेमा शुक्ल, सुरजमुखी सरस्वती और रमा मिश्र प्रमुख थे।

नागपुर में सत्ता कांग्रेस और कम्युनिस्ट छोड़कर सभी राजनीतिक दलों के कार्यकर्ताओं तथा समाजसेवियों ने उपवास किया जिसकी समाप्ति कमला ताई हास्पेट के हाथों फलों का रस ग्रहण करके हुई। कार्यक्रम की सफ-लता में संसद सदस्य जाम्बुवन्तराव धोटे और रामजीवन चौधरी का विशेष योग रहा।

आगरा में ५० से अधिक लोगों ने उप-वास किया। इनमें राजनीतिक दलों और समाज सेवा तथा युवक संगठनों के कार्यकर्ताओं के साथ ही सर्वोदय सेवक भी बड़ी संख्या में थे।

यवतमाल में उपवास में २४ लोग शामिल हुए जिनमें १३ साल वय के गीताई पदयात्री वसन्तराव गाडे और उनके साथी, वसन्तराव बोंबटकर, राममाऊ मुगदर उल्लेखनीय हैं।

जलन्धर में लाला जगन्नारायण, बना-रसीदास गोयल, मनमोहन कालिया, डा० रामरक्षामल, कामरेड टहलसिंह बागी सहित बड़ी संख्या में लोगों ने उपवास में भाग लिया।

जबलपुर में उपवास का संयोजन ठाकुर रामप्रसाद ने किया। समाप्ति ब्योहार राजेन्द्र सिंह के हाथ हुई। भाग लेनेवालों में से विना-मन साहू, सुधीरचन्द्र शर्मा, बलभद्रदास जैन, हरीश बतरा, देशसिंह भावना, प्रभाकर हमिया, राममनवतार राय, ए. जी. तैलंग, वी. के. भावे, एस. के. शुक्ल, महादेव प्रसाद मिश्र 'मनीषी' और बी. डी. शर्मा ने इस अवसर पर हुई सभा में अपने विचार व्यक्त किये। □

सर्वसेवा संघ की एक विज्ञप्ति के अनु-सार नवम्बर, ७४ में ३१७ नये उपवासदान प्राप्त हुए हैं। इस अवधि में सर्वाधिक २११ उपवासदान गुजरात राज्य में मिले हैं और वहां से अब तक प्राप्त कुल उपवासदानों की संख्या ११३७ हो चुकी है। गुजरात अक्टूबर, '७४' में बड़ी संख्या में उपवासदान मिलने से उसी माह उपवासदान के क्षेत्र में भारत में सबसे आगे हो चुका था। नवम्बर में आन्ध्र से १२, उत्तरप्रदेश ६, प० बंगाल १२, बिहार १, मध्यप्रदेश ७, महाराष्ट्र ६२, हिमाचल-प्रदेश २, दिल्ली १ और विदेशों से २ उपवा-सदान मिले। जिन १५३ उपवासदानों का साल पूरा हो चुका है उनमें से ८२ का नवी-करण कराया गया है। उपवासदान में अब तक प्राप्त कुल राशि १ लाख २४ हजार ४८५ रुपये २० पैसे हो चुकी है।

जलन्धर में पंजाब खादी मण्डल के आदमपुर द्वार स्थित प्रधान कार्यालय का निरीक्षण गत दिनों खादी ग्रामोद्योग आयोग के अध्यक्ष श्री. रामचन्द्रन ने कामरेड राम-किशन के साथ किया। इस अवसर पर राज्य खादी मण्डल के अध्यक्ष मोहनलालजी व मंडल की पांचों इकाइयों के अध्यक्ष तथा मन्त्री उपस्थित रहे। कार्यकर्ताओं की एक बैठक भी भीमसेन सच्चर की अध्यक्षता में हुई।

उत्तराखंड में सर्वोदय आंदोलन की जन्मदात्री गांधीजी की अंग्रेज शिष्या सरला बहन (मिस कैथरिन हिलमैन) की ७५ वीं वर्षगांठ के अवसर पर उत्तराखंड के पर्वतीय जिलों में स्त्री-शक्ति जागरण का व्यापक कार्यक्रम बनाया गया है। डा० इन्दु टिकेकर के मार्गदर्शन में जिलास्तर के पूर्व तैयारी शिविर नौगांव (उत्तरकाशी) और सिलियारा (टिहरी-गढ़वाल), गोपेश्वर (चमोली), गरुड़ (अल्मोड़ा) और रुद्रपुर (नैनीताल) में हो चुके हैं। २१ जनवरी, ७५ को उत्तरकाशी से महिलाओं की ७५ दिवसीय पदयात्रा प्रारम्भ होगी, जो ५ अप्रैल को सरला बहन द्वारा स्थापित कौसानी आश्रम, कौसानी में समाप्त होगी। समापन समारोह में सरला बहन भी उपस्थित रहेंगी, वे अभी दक्षिण भारत में स्त्री-शक्ति जागरण और अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष के कार्यक्रमों का संयो-जन कर रही हैं।

सरला बहन हीरक जयन्ती के उपलक्ष में हिन्दी व अंग्रेजी में उनकी आत्मकथा, जिसमें सन् १९३२ में भारत आने और राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के सान्निध्य में उनके आने के पश्चात् का भारत में रचनात्मक कार्यों की प्रगति तथा उत्तराखंड में राष्ट्रीय मुक्ति एवं अन्य जन-आन्दोलनों का एक सजीव चित्रण है, प्रकाशित होगी। मासिक "नयी तालीम" के कार्यकारी सम्पादक श्री कामेश्वरप्रसाद बहुगुणा एक स्मारिका का सम्पादन भी कर रहे हैं। ×

बिहार आन्दोलन की सर्व सेवासंघ कार्यकारिणी द्वारा पुष्टि

अखिल भारतीय सर्व सेवा संघ की कार्यकारिणी की ७ दिसम्बर गाजीपुर में हुई बैठक में बिहार आन्दोलन की पुष्टि कर दी गयी। बैठक में सर्वोदय के प्रमुख नेताओं के साथ ही जयप्रकाश नारायण भी उपस्थित थे।

संघ की ओर से स्पष्ट किया गया कि उसकी स्वयं कोई आन्दोलन छेड़ने की योजना नहीं है लेकिन वह किसी भी आन्दोलन में शान्ति के सरंक्षक की भूमिका निभाता रहेगा। कार्यसमिति के २५ सदस्यों में से १८ के अलावा २७ विशेष आमन्त्रितों में से भी २० इस बैठक में शामिल थे।

वार्षिक शुल्क—१५ रु० विदेश ३० रु० या ३५ शिलिंग या ५ डालर, एक अंक का मूल्य ३० पैसे।
प्रभाष जोशी द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं ए० जे० प्रिंटर्स, नई दिल्ली-१ में मुद्रित।

सर्व सेवा संघ का साप्ताहिक मुख पत्र
नई दिल्ली, सोमवार, २३ दिसम्बर '७४

पत्र और पत्रांश

आंदोलन सर्वथा उचित

इस देश का सब से बड़ा दुर्भाग्य यह है कि कुछ इने-गिने अपवादों को छोड़कर इस देश को ज्ञानी, ईमानदार, निस्वार्थ-शासक नहीं मिले। स्वराज्य के लिए जिन्होंने त्याग तप किया, वे भी शासक बनकर ज्ञानी, ईमानदार निस्वार्थ साबित नहीं हो सके। इस देश में व्यक्तियों का निर्माण हुआ, देवता की तरह पुजनेवाले निर्मित हुए, पर जनता की समस्याएं हल करनेवाले बुद्धिमान, ईमानदार व्यक्ति नहीं मिले। इसलिए सत्ता हाथ में आकर भी कुछ नहीं हुआ बल्कि कुछ अधिक बुरा हुआ।

स्वराज्य को मिले २७ वर्ष हो गये। कभी कल्पना भी नहीं थी कि स्वराज्य और सुराज्य में इतनी दूरी होगी। कदाचित परतंत्रता और स्वराज्य की दूरी से भी बढ़कर होगी। पर २७ वर्ष का अनुभव बतलाता है कि स्वराज्य और सुराज्य में जमीन आसमान का अन्तर है। नागरिक आज वैसा ही अनाथ है, न्यायालयों के अन्धेर ज्यों के त्यों हैं, सरकारी कार्यालयों के अन्धेर कई गुने हो गये हैं, कानूनों का जाल इतना बढ़ गया है कि कैसा भी निर्दोष व्यक्ति, यदि वह सत्ता में नहीं है या सत्ताधारियों का साथी नहीं है तो, अपने को सुरक्षित नहीं समझ सकता। महगाई इतनी बढ़ गयी है जिसकी कल्पना भी कभी नहीं की थी, खरीदने के लिए भिखारियों सरीखी लाइन लगाना पड़ती है, कभी भी किसी भी बहाने से खानातलाशी हो सकती है, समाजवाद की दुहाई लगने पर भी गरीबी और बेकारी को दूर करने का कोई उपाय नहीं है।

अब आजकल जयप्रकाशजी आगे आये हैं। देश ने जितना सहयोग और जितनी प्रतिष्ठा इन्हें दी है उतनी स्वराज्य के बाद किसी को नहीं मिली। इसका मुख्य कारण यह है कि देश २७ वर्ष से बहुत बेचैन है। कोई आगे आये तो उसे पूरा सहयोग देने को तैयार है। सरकार कहती है कि जनतंत्र में ऐसे आंदोलन क्यों होना चाहिए। ये कार्य तो जनतंत्र नाशक हैं। मैं भी इसी मत का हूं। मैं मानता हू कि जनतन्त्र में चुनाव द्वारा ही निपटारा होना चाहिए। परन्तु मुझे शर्म आती है कि इस देश में जनतन्त्र का निष्प्राण या मरणासन्न ढांचा रह गया है। चुनाव में सरकारी पक्ष के प्रत्याशी की पेटी में मतपत्रों के बण्डल के बण्डल निकलते हों और उसके विरुद्ध उठायी गयी आवाज का कुछ मूल्य न हो, जब मंत्री लोग चुनाव की दृष्टि से सरकारी दौरे करते हों, अधिकार के दम पर चुनाव लड़ने के लिए जनता से, खासकर श्रीमानों से, करोड़ों रुपये लेते हो और उन श्रीमानों को मनचाही लूट करने की छुट्टी देते हों, जब लाइसेंस और परमिट चुनाव की दृष्टि से दिये जाते हों, सरकारी कर्मचारी चुनाव में सरकारी प्रत्याशी के प्रति पक्षपात करते हों तब जनतन्त्र के प्राण कहां बचेंगे? इसलिए जनतन्त्र के होने पर भी जनता का तूफानी आंदोलन सर्वथा उचित है। इसके लिए जयप्रकाशजी को दोषी, या जनतन्त्र विरोधी नहीं कहा जा सकता। न जनतन्त्र की दुहाई देकर जनता के पुण्य प्रकोप का विरोध किया जा सकता है।

वर्धा —स्वामी सत्यभक्त

युवा शक्ति

विनोबा और जे. पी. के विचारों में पूर्ण समन्वय है। विनोबा जहां ग्राम-स्वराज्य से लोक-स्वराज्य की बात करते हैं, वहां जे. पी. लोक-स्वराज्य से ग्राम-स्वराज्य की स्थापना चाहते हैं। दलमुक्त सरकार ही राज्य सत्ता को विकेन्द्रित कर सकेगी, सत्ताधारी या सत्ताकांक्षी दल नहीं, ऐसी मान्यता है। जे.पी. ने मशीन के पुर्जों में बदल करके अन्तिम को प्रथम में लगाया है, और लोकशक्ति के उभार के लिए बिहार को उसकी प्रयोगशाला बनाया है जो कि महात्मा गांधी की भूमिका है। सत्य, संयम और अहिंसा उसके आयुध हैं। यह प्रयोग सफल हुआ तो देश और विश्व को आत्मसात करेगा और असफलता में भी अहिंसा के मार्ग में विशेष अनुभव प्राप्त होंगे जिनका मूल्यांकन सफलता से कम नहीं होगा। चोटी के सत्ता के नेता इसे अभूतपूर्व आन्दोलन कहते समय यह क्यों भूल जाते हैं कि देश का राजनैतिक स्वराज्य का मार्ग भी अभूतपूर्व रहा है जो भारत का वैशिष्ट्य है।

युवक समस्या भी अन्तर्राष्ट्रीय बन चुकी है। युवक मन में विद्रोह की भावना जाग उठी है जिसे जे. पी. अनुशासित बनाकर विधायक दृष्टि दे रहे हैं।

आज देश की जनता सब प्रकार से ग्रस्त है। यह भी शुभ लक्षण है क्योंकि सुखी जनता राज्य से चिपक जाती है। किन्तु, आज बरबस मुक्ति के उपायों को खोजना पड़ेगा। फिर भी क्रांति की अगुआ यह युवा शक्ति ही हो सकती है जिसके दिमाग में ठंडक और दिल में देश और समाज के प्रति तड़पन होगी। मेधावी, विचार-प्रवीण, शांतिप्रिय छात्र अपनी शक्ति संचय करके समग्र क्रांति की दिशा में छात्र-संघर्ष समितियों तथा जन-संघर्ष समितियों का गठन करके जिन्हें विनोबा संपर्क समिति नाम देते हैं सक्रिय हों, यही काल प्रवाह की मांग है जिसने जे. पी. को श्रेय दिया है।

मथुरा —शिवनारायण शास्त्री,

शराबबन्दी

महिषी (सहरसा) में शराब की दुकान सौ साल पुरानी थी। दिसम्बर ७३ में मैंने जिलाधीश को इसे उठाने के लिए १८ सूत्रीय ज्ञापन दिया। उन्होंने जांच का आदेश निकाला। इस बीच गांव में अनेक सभाओं में शराबबंदी का माहौल बना। ३० जनवरी को जयप्रकाशजी ने सहरसा की आमसभा में इस कार्य का जोरदार समर्थन किया। इससे मुझे धरना सत्याग्रह के लिए बल मिला। मैंने तरुणों के साथ हस्ताक्षर अभियान शुरू किया। २३१० हस्ताक्षर प्राप्त हुए। २३ फरवरी को प्रखण्ड विकास समिति ने दुकान उठाने का सर्वसम्मत प्रस्ताव किया। ३१ मार्च तक दूकान बन्द करने की मेरी मांग जिलाधीश ने पूरी कर दी। सरकार को इस दूकान से २१ हजार की सालाना आमदनी थी।

महिषी के तरुणों ने अब गांव के प्राचीन तारा मन्दिर में आगे होनेवाली पशुबलि बन्द करने का आंदोलन चलाया है।

महिषी (सहरसा) —दयानन्द झा

सम्पादक

राममूर्ति : भवानी प्रसाद मिश्र
कार्यकारी सम्पादक : शारदा पाठक

वर्ष २१ २३ दिसम्बर, '७४ अंक ११

१६ राजघाट, गांधी स्मारक निधि, नई दिल्ली-११०००१

गणतंत्र दिवस पर भूदान-यज्ञ का लोकतंत्र विशेषांक प्रकाशित हो रहा है। रचनाएं आमंत्रित है। सं०

'ललित' भ्रष्टाचार

रेल मंत्री ललितनारायण मिश्र के खिलाफ भ्रष्टाचार के मामले इस तेजी से सामने आते जा रहे हैं कि लगता है कि ललितनारायण मिश्र भ्रष्टाचार की जीती-जागती मूर्ति हैं। राज्यसभा में जनसंघ के भैरोंसिंह शेखावत ने ताजा आरोप लगाया है कि ललित बाबू ने विदेशी व्यापार मंत्रालय संभालने के अपने काल में एक ऐसी फर्म को आयात लाइसेंस दिये, जिसका पंजीयन खत्म हो चुका था। यही नहीं उन्होंने माल को खुले बाजार में बेचे जाने की इजाजत भी उस फर्म को दे दी। सनतप्रकाश भगवानदास नामक इस फर्म की भ्रष्ट गतिविधियों में ललित बाबू का सीधा हाथ होने का आरोप लगाते हुए जनसंघ सदस्य ने यहां तक कहा कि श्री मिश्र एक मन्त्री के रूप में और कोई नहीं स्वयं हाजी मस्तान ही हैं और उनको मीसा के तहत गिरफ्तार किया जाना चाहिए।

प्रधानमंत्री के सुपुत्र के छोटी कार के कारखाने में ललित बाबू के रिश्तेदारों के शेयर बहुत बड़ी संख्या में होने की बात भी सामने आयी है। शायद इसीलिए प्रधानमंत्री उन्हें अपना 'लाडला' मानती हैं और उनके खिलाफ कुछ कहना, सुनना या करना पसंद नहीं करतीं। यही नहीं उन्होंने यहां तक कहा कि लोगों को वे स्वयं, उनके पुत्र संजय, हरियाणा के बंसीलाल और ललितनारायण मिश्र ये चार ही भ्रष्टाचारी नजर आते हैं। उनके इस कथन से लोगों का खासा मनोरंजन हुआ लेकिन उन्हें अपनी कुर्सी छोड़कर किसी चीज की चिन्ता की जरूरत ही क्या है?

अब संकेत मिल रहे हैं कि ललित बाबू को *मंत्रिमंडल से हटना पड़ेगा।*

इन्दिराजी की जिद से आन्दोलन व्यापक

"जिनके हाथ में सत्ता है उन्होंने २७ वर्षों में गांधी का नाम लिया किन्तु गांधी का विचार उनके मन में बसा नहीं। अतः उनसे गांधी का काम नहीं बना। अभी तक तो हम सर्वोदयवाले भी हवा में बात करते रहे। अब एक आदमी हमें जमीन पर खींच लाया है। बापू की भांति जयप्रकाश एक पवित्र *निश्छल व्यक्ति हैं, वह तर्क नहीं भावना का* आदमी है। भारत का सौभाग्य है कि ऐसे बुरे समय में इतना बड़ा आदमी हमें मिला है। इस संपूर्ण क्रांति में करो या मरो की भावना से जुट जायें।" इन शब्दों में 'गांधी-*मार्ग' और 'सर्वोदय' के सम्पादक कवि* भवानी प्रसाद मिश्र ने ग्राम उद्योग मंडल तथा गांधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र कानपुर द्वारा आयोजित सभा में अपने उद्गार व्यक्त किये।

बिहार आंदोलन के व्यापक स्वरूप का उल्लेख करते हुए मिश्रजी ने बताया कि "बिहार में जे०पी० के पीछे जितने लोग हैं उतने भारत में गांधीजी के पीछे भी नहीं थे। उत्तरप्रदेश कांग्रेस के मुखपत्र द्वारा अनर्गल बातें छापने पर उन्होंने ऐसे पत्र की होली जलाकर सात्विक रोष प्रकट करने की सलाह दी। देश की दुर्दशा और जनता के उत्पीड़न के जिम्मेदार लोगों के प्रति भी 'भारत छोड़ो' का नारा लगाना चाहिए। यदि गांधी की बतायी राह पर चलकर—पुलिस, अदालत आदि का काम जनता स्वयं सम्हाल ले तो मार्क्स का 'सरकार झड़ जायेगी' का सपना भी साकार हो जायेगा और हमें सड़े शासन से भी मुक्ति मिलेगी। उनके हाथों में कुछ नहीं हो सकेगा। लगता है वे हाथ काले धन में *पले हैं। विधानसभा भंग न करने की इन्दिरा-*जी की जिद से आंदोलन को गहराई और व्यापकता में जाने का सुअवसर मिल रहा है।" अन्त में मिश्रजी ने अपनी दो रचनाएं सुनाकर सबको अनुप्राणित किया।

अध्यक्ष पद से बोलते हुए कानपुर विश्वविद्यालय के पूर्वकुलपति राधाकृष्णजी ने सत्तारूढ़ दल की गलत नीतियों की असफलताओं के कारण जनता की गम्भीर संकटावस्था में उबारने के लिए जयप्रकाशजी के संपूर्ण क्रांति के आंदोलन को सफल बनाने में सबके सक्रिय सहयोग की कामना की। प्रारंभ में गांधी शान्ति प्रतिष्ठान के मन्त्री विनय भाई की प्रस्तावना तथा ग्राम उद्योग मंडल के मन्त्री धर्मप्रकाश गुप्त के स्वागत भाषण के बाद प्रोफेसर दीनबन्धु त्रिवेदी ने मिश्रजी का परिचय देते हुए उन्हें वादों के घेरे से मुक्त, चिन्तन एवं भावना के सम्यक समन्वयवाले कवि बताते हुए मन, वचन और कर्म से एकरूपता याने सहज स्नेहशील व्यक्तित्व का धनी बताया। विषय प्रवेश करते हुए डा० सोमनाथ शुक्ल ने अपने को मौजूदा जनसंघर्ष का पक्षधर बताते हुए लोकनायक जयप्रकाश *नारायण को दक्षिणपंथी प्रतिक्रियावादी और* लोकतन्त्र विरोधी बतानेवाले साम्यवादी और कांग्रेसियों को जनक्रांति के विरोधी होने के नाते यथास्थितिवादी, प्रकृतिवादी और अल्पमत वाली सरकार को अलोकतन्त्रवादी सिद्ध किया।

गुर्राती है,
टीले पर बैठी है बाघिन

एक और गांधी की हत्या होगी अब क्या ?
बर्बरता के भोग चढ़ेगा योगी अब क्या ?
पोल खुल गयी शासक दल के महामंत्र की
जयप्रकाश पर पड़ी लाठियां लोकतन्त्र की।
उतर चुका है रंग आज भूरी दिल्ली का
पटना आकर उखड़ चुका है दम दिल्ली का
समता धागे जोड़ रही है नव विहार में
बर्बरता दम तोड़ रही है नव-बिहार में
राष्ट्रतत्व चढ़ गया सानपर नव-बिहार में
जूझ गये हैं तरुण आनपर नव-बिहार में
लोकतन्त्र का संशोधन है नव-बिहार में
जन-गण-मन का उद्बोधन है नव-बिहार में
कोटि-कोटि ताजे कंठों की अभिनव हुंकृति
राष्ट्र भारती की वीणा में अभिनव झंकृति
अश्रुतपूर्व अभियानघोष, जनरव की जय हो
नव-नव अंकुर, नयी कोंपलें, सबकी जय हो
भटक गया था देश दलों के बीहड़ वन में।
कदम-कदम पर संशय गहराता मन था में।
नेता क्या थे, निज-निज गुट के महापात्र थे।
राष्ट्र कहा था शेष, शेष बस 'राज्य' मात्र थे।
एक और गांधी की हत्या होगी अब क्या ?
बर्बरता के भोग चढ़ेगा योगी अब क्या ?
पोल खुल गयी शासक दल के महामन्त्र की
जयप्रकाश पर पड़ीं लाठियां लोकतन्त्र की।
लम्बी जिव्हा, मदमाते दृग झपक रहे हैं
बूंद लहू के उन जबड़ों से टपक रहे हैं
चबा चुकी है ताजे शिशु मुंडों को गिन-गिन
गुर्राती है टीलेपर बैठी है बाघिन।
पकड़ो, पकड़ो अपना ही मुंह आप न नोचे
पगली है, जाने, अगले क्षण क्या सोचे।
इस बाघिन को रक्खेंगे हम चिड़ियाघर में।
ऐसी जंतु मिलेगी भी क्या त्रिभुवन भर में।

नागार्जुन

बिहार आन्दोलन एक नजर में

भारत सरकार के एक प्रतिष्ठान भारतीयजन सम्पर्क संस्थान के जे०एस० यादव ने बिहार के चार प्रमुख जिलों (पटना, मुजफ्फरपुर, मुंगेर और गया) और उनके गांवों में जयप्रकाश के नेतृत्व में चल रहे आन्दोलन पर, जनमत का जो सर्वेक्षण किया है उसका प्रतिवेदन हाल ही प्रकाशित हुआ है। उसमें कहा गया है कि ५० प्रतिशत जनता आन्दोलन के पक्ष में है। विश्लेषण से पता चलता है कि ८१.१ प्रतिशत लोग इस कथन से सहमत हैं कि आन्दोलन संविधान से परे, किन्तु लोकतान्त्रिक एवं नैतिक है।

९४.३ प्रतिशत ने जनता का विश्वास खो देने पर, निर्वाचित प्रतिनिधियों को वापस बुलाये जाने का समर्थन किया।

आन्दोलन में प्रयुक्त धरना, सत्याग्रह, अनशन एवं उपवास और घेराव के समर्थन में क्रमश ७८ ८, ७६.७ और ६६.७ प्रतिशत मत मिले। ७३ प्रतिशत ने इसके विरुद्ध मत दिया कि आन्दोलन विरोधीदलों का मात्र जाल है और ८३ प्रतिशत ने इसका समर्थन किया कि निर्वाचित प्रतिनिधियों को हटाने या वापस बुलाने के किसी संवैधानिक प्रावधान की अनुपस्थिति में, ऐसे आंदोलन के सिवा कोई विकल्प नहीं है। सिर्फ १०.४ प्रतिशत इसके समर्थन में थे कि आकाशवाणी द्वारा इस आंदोलन के बारे में सही समाचार प्रसारित किये जाते हैं। ४८ ८ प्रतिशत ने व्यक्त किया कि आकाशवाणी द्वारा प्रसारित जानकारी गलत होती है।

सर्वेक्षण में शामिल अधिकांश लोग निम्न मध्यमवर्गीय थे। दो तिहाई की मासिक आमदनी ५०० रुपये से कम थी। इनमें ६८ प्रतिशत से अधिक लोग किसी भी राजनीतिक या सांस्कृतिक संस्था से सबद्ध नहीं थे। आंदोलन में और घायलों के संबंध में कहा गया है कि गोलीकांड में १० जगहों में मृत व्यक्ति बड़ी संख्या में पिछड़ी हिन्दू जातियों के 'हरिजन और मुसलमान' हैं।

सरला देवी

गलत वन नीति से जंगलों का सर्वनाश

[गांधीजी की शिष्या 'सरला बहन' की हीरक-जयन्ती देश भर में मनायी जा रही है। अपना देश छोड़कर पराये देश भारत के पहाड़ी इलाकों की सेवा में उम्र लगा देनेवाली सरला-बहन का प्रस्तुत लेख इस अवसर पर प्रकाशित किया जा रहा है। स]

असम के कई क्षेत्रों में बाढ़ से लोगों का संरक्षण करने के लिए इस साल फिर फौज बुलायी गयी। हर साल हमारे देश में बाढ़ की परिस्थिति ज्यादा से ज्यादा भयानक हो जाती है। अनियमित वर्षा तथा उससे जमीन के कटाव से बही हुई मिट्टी को हमारी नदियां सोख नहीं पातीं। हर साल उत्तरप्रदेश, बिहार तथा असम की जनता को उस बढ़ती हुई भयानकता का शिकार बनना पड़ता है मनुष्य तथा पशुओं के प्राण जाते हैं, लोग विस्थापित होते हैं, फसलें और सम्पत्ति नष्ट होती है। सतपुड़ा पहाड़ में भी गलत-वन-नीति की वजह से हर साल गुजरात की जनता को नर्मदा नदी की बाढ़ से त्रस्त होना पड़ता है।

इसके साथ-साथ सारे देश में वर्षा अनियमित होने के कारण कहीं बाढ़ से, कहीं सूखा से, फसल नष्ट होती है। हमारे देश में दो तिहाई लोग गरीबी की रेखा के नीचे रहते हैं, 1960-61 के सरकारी आंकड़ों के अनुसार इनकी मासिक आय 20 रुपये फी व्यक्ति से कम है।

इस प्रकार गलत वन नीति से हम वनों को बर्बाद करके अपने देश की उर्वरा-शक्ति तथा कृषि उत्पादन की क्षमता को घटाते जा रहे हैं। फिर हम कल्याण के लिए मुफ्त खुराक की योजनाएं बनाते हैं। एक तरफ तो

इन लोगों की उत्पादन क्षमता को घटाते हैं, और दूसरी तरफ उन्हें भिखारी बनाते हैं। दोनों तरफ से हमारे देश की आर्थिक-हानि होती है। जहां 1972 के अन्त में ६८.९६ लाख लोगों के नाम सरकारी रोजगार दफ्तरों में दर्ज थे, 1973 के अन्त में 82.18 लाख लोगों के नाम दर्ज थे। सब बेकार लोगों के नाम सरकारी रोजगार दफ्तरों में दर्ज तो होते नहीं हैं, लेकिन फिर भी, इससे स्पष्ट होता है कि देश में बेरोजगारी बढ़ रही है।

अब अरुणाचल में कॉफी तथा चाय के बगीचे लगाने का प्रयोग हो रहा है। यदि यह योजना सफल हो, तो शायद कुछ विलायती मुद्रा कमाने का नतीजा आ सकता है। लेकिन ये बगीचे अक्सर प्लान्टरों (यानी पूंजीपतियों) के हाथों में रहते हैं। गरीब लोग उनके भूमिहीन नौकर बन जाते हैं। इसके साथ-साथ, वन काटकर उन बगीचों को लगाने से वर्षा की अनियमितता बढ़ेगी तथा इससे जमीन का कटाव भी शुरू हो जायेगा। असम के पहाड़ों में अभी तक वनों में मनुष्य का हस्तक्षेप कम हुआ है, इसलिए वहां पर वर्षा अच्छी तरह होती रही तथा असम में उत्पादन सन्तोषजनक है, और गरीबी कम होती है। वहां पर सिर्फ 20.8 प्रतिशत लोग गरीबी की रेखा के नीचे रहते हैं, जहां अन्य कुछ प्रांतों में आधे से ज्यादा लोग उस परिस्थिति में रहते हैं। अभी तक कॉफी के बगीचों में छाया डालने के लिए बड़े पेड़ों का उपयोग होता था, जिससे वर्षा क्रम में कोई बाधा नहीं होती थी। लेकिन अभी उस काम के लिए छोटे पेड़ों का उपयोग हो रहा है जिससे भूस्खलन और अनियमित वर्षा प्रारम्भ हो जायेगी।

हिमाचल प्रदेश तथा जम्मू-कश्मीर में तेजी से केन्द्रित उद्योगों की ओर बढ़ने की योजनाएं बन रही हैं। हिमाचल प्रदेश में दो मिनी-स्टील (इस्पात) के कारखाने, 100,00 टन के कागज और लुगदी सयन्त्र, एक सलफाइट लुगदी तथा टिशू सयंत्र दो क्राफ्ट्स, दो कागज सयन्त्र, दो केलिसयम कार्बाइड के संयन्त्र, एक काच की शीशी बनानेवाला कारखाना तथा चार दूध संयन्त्र खोलना तय हो रहा है। ये सब योजनाएं ऐसी हैं जिनमें पूंजी ज्यादा लगेगी तथा श्रम कम लगेगा, याने देहाती बेरोजगारी पर उनका प्रभाव विपरीत पड़ेगा। कागज बनाने के संयन्त्रों की मांग पहाड़ों में बढ़ रही है। यह सही है कि उसके लिए कच्चा माल, यानी लकड़ी काफी मात्रा में उपलब्ध है लेकिन उसके लिए वनों के कटने से हमारे देश के मौसम पर बहुत विपरीत प्रभाव पड़ेगा। जैसे हम ऊपर देख चुके हैं। वैसा ही, छोटी कागज की इकाइयों के निर्माण में वनों का इतना बड़े पैमाने पर नाश नहीं होता, क्योंकि स्थानीय लोग छांट-छांट कर पेड़ निकालते हैं और फिर लगा भी लेते हैं। संदूषण की दृष्टि से भी, छोटी इकाइयों का सदूषण प्रकृति सोख सकती है, जहां बड़ी इकाइयों का सदूषण आगे बढ़ कर हमारे देश की बड़ी नदियों को भी सदूषित करता है। जो वन इस प्रकार नष्ट होने वाले हैं, उनके पुनर्निर्माण के बारे में भी हम कुछ नहीं सुनते हैं।

दूध के सयन्त्र बनाने से लोगों को अपना दूध बेचने को प्रोत्साहन मिलेगा, जिससे उनके बच्चों के लिए दूध तथा दूध से बननेवाले पदार्थों की कमी पड़ेगी। इस कमी की पूर्ति के लिए शायद मुफ्त पौष्टिक खुराक बांटने की योजना बनेगी? इस बारे काम में लगभग 27 करोड़ 15 लाख की पूंजी लगेगी। इसमें कितने लोगों को मजदूरी मिलेगी, उसका भी कोई जिक्र नहीं है। लेकिन यह निश्चित है कि लगायी पूंजी के लिहाज से मजदूरी कम होगी।

कश्मीर में क्योंकि एम आर. टी. पी. (मोनोपली तथा रिस्ट्रिक्टिव ट्रेड प्रेक्टिसज एक्ट) लागू नहीं है, इसलिए बाहर के पूंजीपतियों को वहां पर अपनी बड़ी योजनाओं को चलाने का प्रोत्साहन मिल रहा है। कश्मीर की सरकार भी प्राइवेट पूंजी के बनिस्बत, 'कॉर्पोरेट सैक्टर' को ज्यादा प्रोत्साहन दे रही है—याने छोटे उद्योगों के बनिस्बत बड़े उद्योगों को प्रोत्साहन दे रही है।

पहाड़ में उन बड़े उद्योगों को कच्चा माल रेल से आने में तथा पक्का माल रेल तक भेजने में, भाड़े पर 50 प्रतिशत राहत मिलती है। यानी कर देने वालों को उस राहत की कीमत को चुकवाना पड़ता है। एक तरफ बेरोजगारी बढ़े, दूसरी तरफ बेरोजगारी बढ़ानेवालों के लिए टैक्स भी दो। उन बड़े पूंजीपतियों के लाभ के लिए सरकार की तरफ से शोध भी हो रही है—उसका खर्च भी कर देनेवालों से ही तो लिया जायेगा।

कश्मीर में अब वनों का राष्ट्रीयकरण हो रहा है। यानी हमेशा के लिए गांव के लोग अपनी विरासत के हक से वंचित रहेंगे और हमें मालूम है कि सरकारी व्यापारी योजनाएं कितनी खर्चीली और अकुशल रहती हैं। इस केन्द्रीकरण से होने वाले नुकसान पर कौन नियन्त्रण करेगा? श्रीनगर से दूरस्थ वनों का सरक्षण कैसे होगा?

1972-73 में 19 54 लाख घनफुट लकड़ी निकाली गयी। 73-74 में 42 लाख घन फुट तथा आगे 65 लाख घन फुट निकालने का लक्ष्य रखा गया है। आशा है कि इस साल में सरकार को 478 करोड़ की आमदनी होगी। लेकिन मौसम पर उसके विपरीत प्रभाव से देश की कितनी हानि होगी, भूस्खलन, बाढ़, अनियमित वर्षा के रूप में, क्या उसका हिसाब लगाया जा सकता है? इन सारे वनों के पुनर्निर्माण की योजना के बारे में कुछ नहीं लिखा है।

नागा विद्रोहियों ने नागालैंड की सरकार को चुनौती दी कि वे फौरन ही नागालैंड में शराब-बन्दी की नीति की घोषणा करें। क्या यह मांग गलत कही जा सकती है? एक तरफ तो सरकार गांववालों के स्थानीय रोजगार कमाने के साधन घटा रही है, दूसरी तरफ उन्हें अपनी अल्प कमाई को शराब जैसी हानिकारक वस्तुओं में बर्बाद करने को प्रोत्साहन दे रही है।

मणिपुर में भी कागज, चावल तथा सन के कारखाने खुल रहे हैं। चावल के मिल खोलने से लोगों के स्वास्थ्य पर गलत प्रभाव पड़ेगा। अभी तक पहाड़ में लोग हाथ का पिसा हुआ आटा और हाथ से कुटा हुआ चावल खाते थे—इससे अन्य पौष्टिक खुराकों के अभाव में भी वे हट्टे-कट्टे और स्वस्थ रहते थे। श्रम तो अवश्य लगता था लेकिन उस श्रम का लाभ भी मिलता रहा। स्रोत के निकट ही ये नदियां प्रदूषित हो जायेंगी।

दार्जिलिंग में घड़ी का कारखाना खोलने की योजना हो रही है। घड़ी बनाने में हाथ की काफी कला और श्रम लगता है, और

कच्चे और पक्के माल का वजन, इसमें लगने वाली मजदूरी और पूंजी के मुकाबले काफी हल्की है। स्विटजरलैंड तथा फ्रांस के पहाड़ों में यह उद्योग काफी सफल रहा। उसमें पूंजी के बनिस्बत मजदूरी ज्यादा लगती है, और आयात निर्यात का खर्च कम पड़ता है। इस प्रकार के उद्योग पहाड़ों में ज्यादा सफल हो सकते हैं।

लोगों ने समझा है कि कुमाऊं और गढ़वाल में, उद्योग की छोटी इकाइयों के लिए बहुत गुंजाइश है। यह अच्छी बात है। लेकिन सब सुझाव वाले उद्योग वास्तव में अनुकूल हैं या नहीं, और उनकी व्यवस्था कैसी होगी, उस पर गंभीरता से सोचने की बहुत आवश्यकता है। गांववालों के नियन्त्रण में यदि प्लाईवुड तथा स्ट्रा बोर्ड की स्थानीय छोटी इकाइयां बनें और यदि जंगल की व्यवस्था भी स्थानीय जनता के हाथ में हो तो वनों का बहुत नुकसान नहीं होगा—लेकिन यदि व्यवस्था बाहर के लोगों के हाथ में हो तो जंगलों का काफी नुकसान हो सकता है। रेजिन और टरपेन्टाइन की इकाइयों में अगर लीसा निकालने के लिए पक्का माल बनाने तक (याने रेजिन से बननेवाले मास-वार्निश, पेन्ट, साबुन इत्यादि तक) पूरी व्यवस्था स्थानीय ग्रामीण संस्थाओं के हाथ में हो, तो काफी लाभ हो सकता है। यदि ठेकेदारी प्रथा तथा बाहर की पूंजी से और मजदूरों से व्यवस्था हो तो स्थानीय लोगों को क्या लाभ होगा? और यदि स्थानिक पूंजी तथा व्यवस्था हो तो जंगलों की रक्षा कौन देखेगा? वह नुकसान जो आज हो रहा है, चलता रहेगा? चावल के मिल लगाने के बदले यदि घर घर ओर में चावल कूटने की आसान पद्धतियों में संशोधन होगा तो अच्छा होगा। गांववालों की खुराक की पौष्टिकता नहीं घटती। रासायनिक पदार्थ तथा एल्युमिनियम के कारखाने लगाने से कच्चा माल बाहर से लाना पड़ेगा और उसके माल को बाहर भेजना पड़ेगा। सारी दुनिया को शक्ति देने का उपयोग करने के बारे में एक सख्त चेतावनी मिली है। इस दृष्टि से कारखाने के बारे में सोचना बहुत आवश्यक है। इन उद्योगों में
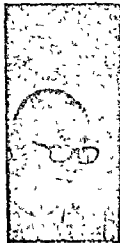
सरला बहन

विशेष मजदूरी लगेगी, ऐसा नहीं है। ये पूंजी आधारित रहेंगे। सर्जिकल इन्स्ट्रुमेंट का सुझाव घड़ी के कारखाने के सुझाव की तरह उपयोगी हो सकता है। लेकिन उन दोनों उद्योगों के लिए अभी एक आवश्यक कला लोगों के हाथों में नहीं है। उसके लिए उनके प्रशिक्षण की योजना बननी चाहिए।

सीमेंट ब्लाक को बनाने के लिए भले ही कच्चा माल स्थानीय तौर पर मिल जाये किंतु निर्यात के लिए ये बहुत भारी पड़ेगा। रेडीमेड कपड़ों के कारखाने से स्थानीय दर्जी बेकार हो जायेंगे।

सारे देश का भौगोलिक स्वास्थ्य पहाड़ों की स्वस्थ परिस्थिति पर निर्भर है, इसलिए देश के हर नागरिक का फर्ज है कि वह पहाड़ों में विकास किस दिशा में हो, इस बात पर गंभीरता से विचार करे।

पहाड़ी जीवन बहुत कठिन है इसलिए पहाड़ी लोग शक्तिशाली, मेहनती, धैर्यवान और दूरदर्शी माने गये हैं। ये गुण ऐसे हैं, जो देश को बहुत लाभदायक होते हैं। एक प्रकार से हम कह सकते हैं कि जैसे भौगोलिक दृष्टि से पहाड़ देश की रीढ़ की हड्डी और रक्षक होते हैं, वैसे ही पहाड़ के लोग देश के रक्षक बनते हैं। विशेष करके जब ये पहाड़ देश की सीमा पर होते हैं, तब देश की स्थिति में उनके निवासियों का महत्व बहुत ज्यादा बढ़ता है। इस दृष्टि से हमारे देश में हिमालय पहाड़ तथा असम के सीमावर्ती पहाड़ों का बड़ा महत्व है और यह बहुत आवश्यक है कि गंभीरता से और विस्तार से उनके विकास के बारे में सोचा जाये—तथा दुनिया भर के पहाड़ों में विकास किस प्रकार से हुआ है, उस पर भी विचार किया जाये। हालांकि आजकल भी दुनिया भर में 'खाओ-पियो-मौज उड़ाओ' की नीति चल रही है— पहाड़ के प्राकृतिक साधनों को बेरहमी से फूंका जा रहा है।

शुरू से ही पहाड़ों में आवागमन के साधन रहे नहीं। एक घाटी से पड़ोसी घाटी तक आना जाना भी कठिन रहा, इसलिए पहाड़ी लोग ज्यादातर छोटी स्वावलम्बी इकाइयों में बटकर रहते थे। इसलिए ये स्वतंत्र मिजाज के रहते थे, अपने जीवन में बाहर से आनेवालों के हस्तक्षेप का विरोध करते थे। उसे हम अवगुण कह सकते हैं, लेकिन बाहर से देश का संरक्षण करने की दृष्टि से यह एक बहुत बड़ा गुण भी है। आजकल अवश्य पहाड़ों में आवागमन के साधन बढ़ रहे हैं। लेकिन फिर लड़ाई के जमाने में ये सड़कें बहुत जल्दी हवाई हमले का शिकार बन सकती हैं, जिससे, यदि पहाड़ी जीवन उन आवागमन के साधनों पर निर्भर रहता हो, तो बहुत जल्दी से उनकी जीवन व्यवस्था में गड़बड़ी हो सकती है। इसलिए, पहाड़ी जीवन में उद्योग और खुराक के लिए लोग कम से कम उन आवागमन के साधनों पर निर्भर रहें ऐसी व्यवस्था जरूरी है।

इसका मतलब है कि वहां का उद्योग स्थानीय कच्चे माल पर आधारित रहना चाहिए और आवश्यकताओं की दृष्टि से लोगों को ज्यादा से ज्यादा स्थानीय साधनों पर निर्भर रहना चाहिए।

दूसरी बात वहां पर काफी मात्रा में जीविका उपार्जन के साधन रहने चाहिए। आजकल पाया जाता है कि पहाड़ों में उद्योग तथा अन्य जीविका उपार्जन के साधनों के सम्पूर्ण अभाव की वजह से, बहुत कम पुरुष स्थायी तौर पर पहाड़ के गावों में रह पाते हैं। परम्परा से, वहां की महिलाएं मुख्य तौर पर कृषि का काम करती हैं। कृषि के उत्पा-

दन के द्वारा ये एक हद तक अपने परिवारों को सभाल पाती हैं। "तेल-नमक" के लिए कमाने के साधनों के अभाव में, पुरुष देश में नौकरी की खोज में निकलते हैं—चौकीदार, बरतन मलनेवाले, फौज के सिपाही से लेकर प्रोफेसर तथा उच्चाधिकारियों तक, सब जगह ये लोग पाये जाते हैं, जो परम्परागत अधिकार से, एक ऐसी व्यवस्था में रहने चाहिए, जिससे ये स्वभावतः ही हमारी सीमा के शक्तिशाली रक्षक बन सकें, वहा एक संतोषी स्वावलम्बी स्वतंत्र जीवन जी सकें।

इलाज क्या है ?

पहाडी जीवन में कृषि के सिवा या शायद कृषि से कहीं ज्यादा महत्व जगलो का है। वनों की स्वस्थ परिस्थिति पर कृषि-गोपालन की हालत निर्भर है। पशुओं के लिए चारा और बिछावन, जिस पर दूध तथा कृषि के लिए खाद निर्भर है, के साथ, ये लकडी तथा मूल्यवान जडी बूटियों के स्रोत हैं। और इसके साथ-साथ, हमारे देश की वर्षा को समतोल में रखने से, ये पहाडो में पीने तथा सिचाई के पानी को नियत्रण में रखते हैं, तथा देश में बहनेवाली नदियों के पानी के बहाव पर भी नियत्रण रखते हैं। सिर्फ पहाडी जीवन के लिए नहीं, बल्कि सारे उत्तर भारत के स्वस्थ और सतुलित जीवन को कायम रखने के लिए, उन पहाडी वनों का बडा महत्व है।

लेकिन पहले, से ब्रिटिश सरकार ने उन वनों को आमदनी का साधन माना था। चौडी पत्तियों के वृक्षों के वनों को खत्म करके लीसा तथा लकडी के निर्यात के लिए उन्होंने चीड के वनों को लगाया। उसकी व्यवस्था या तो सीधे सरकार के द्वारा, या ठेकेदारों के द्वारा हुई—जिससे गाव के निवासियों को उस काम में मजदूरी के सिवा और कोई हिस्सा नहीं रहा—न उन्हें अपने जगलो की व्यवस्था में न उनकी सुरक्षा में कोई प्रोत्साहन मिला। ये देखते थे कि उनके वनों का नाश हो रहा है और उस नाश का लाभ औरों को मिल रहा है, तो ये भी वनों की परिस्थिति के बारे में लापरवाह होने लगे और ये भी उनका नाश करने में भाग लेने लगे।

जब वनों का उत्पादन सडको तथा नदियों से नीचे मैदान की ओर बहने लगा, तब पहाड के लोग भी नीचे मैदान की ओर बहने लगे। तब तक पहाडी जीवन कठिन अवश्य था, लेकिन स्वस्थ था। पशुओं के दूध, दही, घी की वजह से यह स्वास्थ्यवर्धन की दृष्टि से संपन्न था। लेकिन गलत वन-नीति का प्रभाव कृषि पर पडा, उत्पादन घटने लगा, और घटिया किस्म का होने लगा, नौकरी के लिए पुरुष बाहर जाने लगे, गावो में बूढे, बहनें और बच्चे ही दिखायी देते हैं, ग्रामीण व्यवस्था और परिवार व्यवस्था टूट गयी हैं। कोई शिक्षा-सपन्न या शरीर शक्ति सपन्न पुरुष पहाड में नहीं रहना चाहता है।

अतः देश के मौसम की दृष्टि से तथा देश के चरित्र की दृष्टि से, पहाडो के लिए विकास की योजना बनाते समय, बहुत गभीरता से सोचने की आवश्यकता है। किस प्रकार हमारे पहाडो की भौगोलिक (याने प्राकृतिक) तथा मानवीय परिस्थिति स्वस्थ हो सकती है।

हम आशा करते थे कि स्वराज्य मिलने पर हमारी लोकप्रिय सरकार इस ओर ध्यान देगी लेकिन वन नीति में कोई भी परिवर्तन नहीं हुआ। पहाडी वनों के लिए, पहाडी लोगों की जीवन-व्यवस्था की सुरक्षा की दृष्टि से, उनकी योजनाओं में कोई प्रयास नहीं दीखता, बल्कि पहाड किस प्रकार से सरकारी आमदनी का स्रोत बन सकें, यही उनकी मुख्य चिंता रहती है। ●

राष्ट्र परिषद का सुझाव और विनोबा

सुरेश ठाकरान

बिहार आन्दोलन को लेकर विनोबाजी और जयप्रकाशजी में मतभेद होने का भ्रम आम हो चला है। एक ओर आन्दोलन में कुछ सक्रिय व्यक्ति मतभेद मानते हैं तो दूसरी ओर विनोबाजी के अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सोचने की बात कहकर उनके आन्दोलन से तटस्थ होने की बात भी कही जा रही है। सत्य, सयम और अहिंसा की सीमाओं में आन्दोलन को बाधकर वे बरी हुए हैं, ऐसी भी धारणा है। अभी-अभी हाल ही में गाधीवादी विचारक एवं मूर्धन्य साहित्यकार श्री जैनेन्द्रकुमार, जिनकी आन्दोलन पर सूक्ष्म दृष्टि और कुछ मुद्दो के समीक्षक भी हैं, बाबा के पास पवनार होकर लौटे हैं। जैनेन्द्रजी ने आन्दोलन के भावी स्वरूप को देखते हुए राष्ट्र-परिषद का सुझाव दिया है। इसे लेकर भी उन्होंने बाबा से बातचीत की। मैंने उनसे कुछ प्रश्न किये जिनसे पाठकों को भी बाबा को समझने में सहायता मिल सकती है।

प्र० . बिहार आन्दोलन के विषय में आप बाबा से मिलकर आ रहे हैं। आन्दोलन के किस मुद्दे को आपने उनके सामने रखा और उन्होंने क्या प्रतिक्रिया व्यक्त की ?

जैनेन्द्रजी टीक-टीक आन्दोलन के विषय में मैंने चर्चा नहीं की। चर्चा आंदोलन की आवश्यकता जहा से उगी है, उस मूल के बारे में की। वह मूल राजनीति के भवर में खोया-सा हो जाता है। पर वही है, जहा शक्ति लगनी चाहिए।

चुनाव का समय आने में अभी दो वर्ष के लगभग हैं। पर तब तक क्या आज की दुरवस्था नागरिक व्यथा और पीडा ज्यों की त्यों चलती रहे ? आन्दोलन का जो रूप बना है, उससे यही लगता दीखता है। या नहीं तो बीच में ही हिंसा का विस्फोट हो सकता है। दोनों स्थितिया अनभीष्ट हैं। हिंसा से जनतत्र टूटेगा। तत्रतत्र आयेगा। अगले चुनावों की प्रतीक्षा से भी जनतत्र का शरीर निभेगा, आत्मा कुचली जाती रहेगी।

अर्थात्, कुछ होना चाहिए। शासन और विरोध की इस रस्सा-कस्सी में राष्ट्र का हरण जाया नहीं होना चाहिए। इसलिए सुझाव उठा कि राष्ट्र की अपनी परिषद हो और वह पक्षातीत हो। राष्ट्रपति का पद वैसा ही पक्षोत्तीर्ण समझा जाता है। इसलिए प्रथमतः परिषद राष्ट्रपति की ओर से आमं-

विनोबा
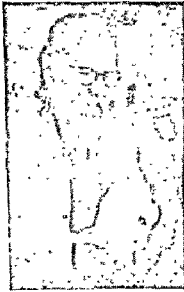
त्रित हो। आधे लोग उसमें राजनीतिक दलों से बाहर के इसलिए हों कि आधा राष्ट्र चुनावों में अपना वोट ही नहीं देता है। शेष आधे में दलगत तत्व रहें।

विनोबा को अभिमत पसद

प्र: कुछ का कहना है बाबा आन्दोलन को नहीं चाहते। कुछेक कहते हैं बाबा को राष्ट्रीय बातों से कोई सरोकार नहीं। क्या विनोबाजी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सोचने के इरादे से आन्दोलन से बचना चाहते हैं?

जैनेन्द्रजी : *नहीं, विनोबाजी सर्वथा उत्तीर्ण या निश्चित मुझे नहीं लगे।* स्थिति से अवगत हैं और दुःखी हैं। पर तनाव नहीं चाहते। प्रजा का कष्ट क्या राजा के लिए तनाव का कारण नहीं होता? अर्थात्, तनाव दलगत ही नहीं है। सामान्य और राजन्य वर्ग के बीच भी गहरा फटाव है। विनोबा अवश्य चाहते हैं कि वह दूर हो। सबको मे विश्वास आये। सामञ्जस्य बढ़े और राष्ट्र यथार्थ में बलशाली हो। जयप्रकाश नारायण का बल इन्दिरा को कम करे, अथवा इन्दिरा का बल जयप्रकाश को निस्तेज करे क्या यही एक विकल्प बच गया है? अहिंसा की परीक्षा इसी में है कि दोनों का नैतिक बल बढ़े और विरोधी बल घटे। मेरी अपनी आशंका यह है कि वैसी गहरी अहिंसा बीच से गायब हो चली है और वातावरण शून्य हो गया है।

प्र: आपने अभी राष्ट्र-परिषद की बात कही। *क्या राष्ट्रपति ऐसी परिषद बुलायेंगे?* क्यों बुलायेंगे?

जैनेन्द्रजी : निश्चित ही वह कोई भी परिषद क्यों बुलायेंगे? अर्थात्, इसके लिए वैसी परिस्थिति का निर्माण आवश्यक होगा। परिस्थिति अर्थात्, 'प्रबल-लोकमत'। कठिनाई इसके लिए वैसी है कि राज के आस-पास लोकमत घिरा माना जाता है। देश का वह तत्व अछूता अनबोला रह जाता है, जो अपनी मेहनत से जीता और राष्ट्र को जिलाये रखता है। *जनतन्त्र की पहली आवश्यकता है,* पहला लक्षण है कि यह नागरिक तत्व जगे और प्रबुद्ध हो। काम वही मूलगामी करता है और परिषद उसके परिणाम स्वरूप हो पायेगी और फिर उस जागरण में कारणीभूत भी होगी। जयप्रकाशजी की समानान्तर सरकार की बात का सही आशय क्या स्वावलम्बी समाज में नहीं आ जाता? हाँ उसमें उसकी चुनौती की ध्वनि नहीं है। तो राष्ट्र-परिषद राष्ट्रीय स्तर पर उसी स्वावलम्बन का आरंभ है। स्वावलम्बन का आरंभ हुआ।

सुझाव में ये भी गर्भित था कि राष्ट्रपति या राज्य की ओर से इस दिसम्बर अन्त तक राष्ट्र परिषद का आश्वासन न प्राप्त हो तो उसका बुलावा विनोबाजी की ओर से आये। सुझाव का वह उत्तर पक्ष अवश्य अनुत्तरित रहा। *विनोबा का उत्तर मुझे स्वयं स्पष्ट था* कि उन्होंने सूक्ष्म में प्रवेश किया है। उनके मुख से वह और भी स्पष्ट हो गया। उसमें सुझाव का अनादर नहीं देख सका। बल्कि विनोबा की व्यावहारिक सूझ-बूझ का प्रमाण ही मुझे उसमें मिला। अर्थात्, स्थिति उतनी परिपक्व होनी चाहिए।

प्र यानि परिषद के सुझाव के लिए स्थिति अभी अपरिपक्व है। फिर सुझाव का क्या लाभ?

जैनेन्द्रजी : लाभ यह कि विचार को दिशा मुड़ती है। अभी इस वातावरण में दल संघर्ष है। मान का तनाव है। मुठभेड़ की संभावनाएं हैं। इनमें से शुभ परिणाम निकलनेवाला नहीं है। उपयोगी वह संघर्ष

जैनेन्द्रकुमार
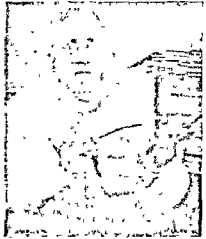
होता, और होगा, *जिसमें यदि राज-बल* दैहिक हो तो सम्मुख आनेवाला लोकबल सर्वथा नैतिक हो। ठीक वैसी स्थिति आज नहीं रह गयी है। इसलिए आन्दोलन की गति में मोड़ आना चाहिए। परिषद का प्रस्ताव उसी का सूचक है।

प्र आज राष्ट्र मानस विभ्रम में है। वह ठगा-सा रह गया है। शासन और विरोध के दोनों पक्षों की ओर से जनतंत्र की रक्षा का दावा है। नागरिक ठगे से लगते हैं और *दोनों तरफ से आम सभाएं और रैलियां* की जा रही हैं। इससे दिग्भ्रम और दिग्भूलता *बढ़ रही है। क्या ये आप नहीं मानते?*

जैनेन्द्रजी : मानता हूं। इसलिए कहता हूं कि राजनीतिक शब्दों का भरोसा न किया जाये। उनका खेल एक अरसे से खेला जा रहा है। इस खेल के दस पुरुषों के अतिरिक्त भी तत्व है, और नागरिक स्तर उसमें शून्य नहीं है। ऐसे अनेक वर्ग हैं जो नैतिक भाषा में रहने-पलने आये हैं। भारतीय प्रजा के लगभग वे ही *संस्कार हैं। वह प्रजा ऊपर* की राज-लीला से अछूती ही बची रह जाती है। राजनीति अंग्रेजी में चलती है। प्रजा देशी भाषाओं में रची पची बच जाती है। यह कृत्रिमता समाप्त होनी चाहिए। विलायतों से आयी उधार मानसिकता और शब्दावली का बोझ भारत के माथे से उतर जाना चाहिए। तब हम देखेंगे कि इस भारत-राष्ट्र

का स्वास्थ्य भीतर से खिलता चला आ रहा है। आज सब कुछ आर्थिक है। इसलिए जो कुछ नैतिक था वह सब समाप्त है। ये स्थिति का निचोड़ है। वे सपनों में भूलते हैं जो शक्ति के खेल में नैतिक विचार का प्रवेश चाहते हैं। वहाँ उस चीज की सगति ही नहीं इसलिए आपको चीजों को मूल से ही लेना होगा। जे० पी० ने काफी किया पर उस अध्यात्म का दिशा-दर्शन आवश्यक है। जहाँ से गांधी की प्रेरणा आती थी वहीं विनोबा भारतीय राजनीति और कर्मनीति को लेना चाहते हैं।

लग सकता है आपको कि यह विश्लेषण यथार्थ नहीं है। इसमें न कांग्रेस कहीं आती है न सी०पी०आई०। न जनसंघ न ही दूसरे दल। यहाँ तक कि उनके गठबन्धों का भी जिक्र नहीं है। लेकिन अखबारी यथार्थ के नीचे ५७ करोड़ से सबंध रखनेवाला कुछ वास्तविक यथार्थ भी है। राजनीति कुछ लाखों तक होगी। मानव-नीति से कब किसी को वास्ता है। निगाहों को खा मकर आज तल तक आना है।

लीक लीक गाड़ी चले

भारत एक कृषि प्रधान देश है। ८० प्रतिशत जनता गाँवों में रहती है। बैलगाड़ी 'परिवहन संस्थान' का कितना महत्वपूर्ण अंग है और यदि इसमें सुधार हो तो भारत को कितना लाभ होगा, इस उद्देश्य से बंगलोर के 'भारतीय प्रबंध संस्थान' ने कुछ महत्वपूर्ण सर्वेक्षण किये हैं। आंकड़े बोलते हैं कि इस परमाणु-युग में भी साधारण ही दिखनेवाली बैलगाड़ी को भी समुचित आदरपूर्ण स्थान मिलना चाहिए। दूसरा एक और तथ्य जिसने बैलगाड़ी को महत्वपूर्ण बना दिया है वह पेट्रोल की कमी व बहुत बढ़ा हुआ मूल्य है।

गाँवों के सर्वेक्षण से उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार भारत में १॥ करोड़ बैलगाड़ियाँ हैं। इनके द्वारा और उनसे संबंधित अन्य उद्योगों में २ करोड़ लोग रोजगार पाते हैं। इस परिवहन साधन पर भारतीयों का ३,००० करोड़ रुपया लगा है जबकि रेलों पर ४,००० करोड़ और अन्य सड़क-परिवहनों पर १,००० करोड़ लगा है। भारवाहन क्षमता इन तीन (बैलगाड़ी, रेल, बसें आदि) की क्रमशः १०,१६० और ८४ अरब टन है। यह दुःख की बात है कि भारत में ३ लाख इन्जीनियर होने पर भी बैलगाड़ी के आधुनिकीकरण के लिए यथोचित प्रयास नहीं हुआ है। हालांकि कुछ राज्यों में कुछ सुधार हुए हैं, कुछ प्रदर्शन के लिए नमूने तैयार भी हैं। फिर भी लोहमंडित लकड़ी के पहियों के स्थान पर ठोस रबड़ के टायर, हवा भरे टायर और बाल-बेयरिंग उपयोग करके और अधिक सुधार किये जा सकते हैं। सुधरी हुई गाड़ी की वहन क्षमता को ५ गुना किया जाये व पशुओं पर भी बोझ तथा जोर कम पड़े ऐसा संभावित लक्ष्य है। इस प्रकार बैलगाड़ी का अनुमानित मूल्य ३,००० रुपये से बढ़कर ४,५०० रुपये तो अवश्य हो जायेगा परन्तु नयी बैलगाड़ी मालिक को उसकी लागत पूंजी पर २० से ३० प्रतिशत आय देने में सक्षम होगी जबकि पहले इससे आय ५-७ प्रतिशत थी।

पशु-विज्ञान शास्त्रियों की सलाह के अनुसार बैलों से ६ घंटे प्रतिदिन से अधिक काम नहीं लेना चाहिये परन्तु बंगला देश में १२ घंटे प्रतिदिन काम लिया जा रहा है। इससे उनकी आयु १५ वर्ष से गिरकर १० वर्ष रह गयी है। वे अन्य कई रोगों से भी पीड़ित हैं। इस सुधार के बाद पशुओं पर यह निर्दयता नहीं रहेगी। सड़कों की हालत जो लोहे के हालवाले पहियों से खराब हो जाती है सो नहीं होगी। सड़क रखरखाव पर भी व्यय कम हो जायेगा।

प्रायः गाड़ीवान गरीब व अशिक्षित पाये गये हैं। वे बैलगाड़ी (बैल+गाड़ी) खरीदने के लिए धन साहूकारों से लेते हैं जिसपर उन्हें ४० से १०० प्रतिशत तक ब्याज देना पड़ता है। यदि बैंक अधिकारी व परिवहन अधिकारी इन ग्रामीणों के प्रति सहायता का दृष्टिकोण लेकर चलें तो ये नये विकसित, सुधरे हुए बैलगाड़ी वहन साधन ग्राम अर्थव्यवस्था में क्रान्ति ला देंगे जो कि सचमुच करोड़ों गरीब किसानों को खुशहाली देगी। अधिक खेती से ग्राम अर्थ-विकास और इससे पूरे देश की अर्थ-व्यवस्था पर एक बड़ा प्रभाव हो सकता है। आशा है कि ग्राम जीवन का यानी कि ८० प्रतिशत भारत का उत्कर्ष चाहनेवाले विचारवान् व हृदयवान् इन्जीनियर इस सुझाव पर विचार कर सुधार के प्रयास करेंगे।

—सुनचन्द

नीरु देसाई

सरकार ने लोगों की श्रद्धा खो दी है

बिहार में श्री जयप्रकाशनारायण के नेतृत्व में जो व्यापक जन आन्दोलन चल रहा है, इसने देश के राजकीय क्षितिज पर अनेक नये प्रश्नों को प्रकाशित और प्रसारित कर दिया है। स्वराज्य और प्रजातन्त्र के साथ-साथ सत्याग्रह और आन्दोलन किस हद तक सुसंगत है, इसकी चर्चा विस्तार से अब सर्वत्र हो सकेगी। किन्तु एक ऐसा समय भी अभी-अभी तक था, जब कई गांधीनिष्ठ विचारक जोरशोर से इसे असंगत कहकर प्रतिपादित करते थे। श्री ईश्वर भाई के नेतृत्व में भूमिहीनों ने एक आन्दोलन किया था और उस समय स्वर्गीय मगनभाई देसाई ने यह निर्णय दिया था कि सत्याग्रह किया जा सकता है। जो गांधीपरस्त सत्ता में प्रतिष्ठित थे, जैसे ठाकुरभाई देसाई उन्होंने उस आन्दोलन का प्रतिवाद यह कहकर किया था कि ऐसा आन्दोलन अहिंसक नहीं रह सकता।

आजादी के २७ वर्ष बाद प्रजा का जो अनुभव है उसे उस अनुभव के प्रकाश में चलने का अधिकार है। यदि वह इस अनुभव के आधार पर आचरण न करे तो लोकतन्त्र निष्प्राण और खोखला हो जायेगा। आज सभी क्षेत्रों में लोग इस तथ्य की प्रतीति कर रहे हैं।

लोकतंत्र में हम जिस न्याय, समानता, व्यक्तिस्वातन्त्र्य, आर्थिक समता आदि जनाभिमुख भावनाओं की अपेक्षा रखते हैं वह इसी प्रकार की जनजागृति के बल पर प्रेरणा पाती रह सकती है और इस प्रकार की प्रेरणा को पोषित करनेवाले संघर्षों के लिए प्रजा को सदा जागृत रह कर तैयार रहना चाहिए। यदि ऐसा न हो तो प्रजातन्त्र के नाम पर शासक दल और सरकार सारी सत्ता अपने हाथ में लेने का ही प्रयत्न करेगी और कहेगी कि हमीं लोकतन्त्र के सबसे बड़े संरक्षक हैं। वह और प्रस्था से चुनाव जीतकर यह कहने की हकदार हो जायेगी कि हमीं लोकतन्त्र के सच्चे प्रतिपालक हैं। हमारा यह दावा बिलकुल वाजिब है और इसलिए जो इस दावे से इनकार करते हैं वे सब प्रजातन्त्र के नाम पर दुश्मन हैं, प्रतिक्रियावादी हैं, प्रतिक्रान्तिकारी हैं और फासिस्ट आदि हैं। यदि प्रजा में सत्तारूढ़ दल या दलों की इस नीति और रीतियों का प्रतिकार न हो तो फिर सत्तारूढ़ दल प्रजातन्त्र के नाम पर आन्दोलन को कुचलना, उसे दबाना आदि कर्तव्य मानकर आरम्भ कर देंगे। सत्तारूढ़ दल तब इस बात का प्रतिपादन करेगा कि हमें अपनी सरकार चलाने का सर्वाधिक अधिकार प्राप्त हो चुका है और तब यह होगा कि वह प्रजातन्त्रहीन तौर-तरीकों से सत्ता को टिकाये रखना एकदम ठीक मानने लगेगी। तब उसके लिए आन्दोलन में जो थोड़ी-बहुत हिंसा हो जाती है, वह उसे माफ नहीं करेगी और अपने को अहिंसा का प्रवक्ता मानकर छोटे-बड़े हर आन्दोलन को, और आन्दोलन के नेताओं को नेस्त-नाबूद करने की कोशिश करेगी। वह भूल जायेगी कि सरकार अपने राज का सारा काम-काज प्रकट अथवा अप्रकट रूप से पुलिस और सेना की मदद लेकर उद्दाम हिंसा के द्वारा चलाती है। सरकार के लिये ऐसी उद्दाम हिंसा क्षम्य बनी रहेगी क्योंकि माना यह जाता है कि राज्यतन्त्र में व्यवस्था बनाये रखने के लिए इस प्रकार की हिंसा अनिवार्य और आवश्यक है। वह इसे बिना हिचके मानेगी और कहेगी भी। बिहार और अन्यत्र आज ये दोनों बातें स्पष्ट रूप से हमारे सामने आ रही हैं। श्री जयप्रकाशजी के आन्दोलन में संभव है कि एकाध-दो विचारों के विषय में मतभेद हो। वे लोगों के मन में स्पष्ट न हो जैसे यह कहा जा सकता है कि विधान सभा का भंग होने मात्र से वर्तमान समस्या हल होनेवाली नहीं है। और यह भी कहा जा सकता है कि गांधी और विनोबा के सुझाये हुए दलहीन सभा के विकल्प केवल कल्पना पर आधारित हैं, अव्यावहारिक हैं, उस पर अमल नहीं किया जा सकता। किन्तु बुनियादी सवाल तो इतना ही है कि प्रजा के ३० प्रतिशत वोटों के बल पर आज जो दल शासनारूढ़ बैठा है, उन्होंने सत्ता के जो सूत्र अपने हाथ में ले रखे हैं क्या उस कारण के आधार पर कहा जा सकता है। (यह भी याद रखना चाहिए कि लगभग ५० फीसदी जनता मत डालने नहीं आती इसलिए ३० प्रतिशत के बल पर बहुमत से चुन गये प्रतिनिधि वास्तव में १५ प्रतिशत जनता का प्रतिनिधित्व करते हैं। सं०)

यह एक मौलिक सवाल है। इस पर कोई समाधानकारक जवाब हमें कहीं से नहीं मिलता। यदि ऐसी सरकार पर से लोगों की श्रद्धा उठ गयी हो और यदि प्रजातन्त्र में आजादी छिन गयी, समानता पल-पल पर खंडित दिखायी दे रही हो और समाजवाद के आने की कोई सूरत न दिखायी देती हो तो सत्ता उस दिशा में कोई कदम उठाने को आतुर न हो, बल्कि उसकी नीतियां किसी दूसरी ही दिशा में बढ़ती हुई जा रही हों तो इस बात का विचार होना ही चाहिए कि जनता ऐसी सरकार को वापस जाने के लिए कहे। यदि ऐसा नहीं होता तो लोकशाही के नाम पर एक झूठा प्रजातन्त्र चलता जायेगा और प्रजा के सारे अधिकारों का लोप हो जायेगा। बिहार के आन्दोलन ने कम से कम एसा प्रतिपादित कर दिया है कि जनता को ऐसी प्रतीति होने लगी कि सत्ता जिम्मेदार नहीं रही है तो उसे हक होना चाहिए कि वह सत्ता को हट जाने के लिए कहे। जयप्रकाशजी ने प्रजा को सचेत किया और प्रजातन्त्र की रक्षा के लिए वह बधाई के पात्र हैं। सरकार के मन में जो यह भय है कि यदि इस प्रकार का प्रचार होने दिया जायेगा तो लोगों के मन से उसकी धाक उठ जायेगी सो ठीक ही है। इस आन्दोलन के द्वारा सरकार जिस तरह से राज्य चलाती आ रही थी,

उनके प्रति लोगों के मन में अविश्वास की भावना तीव्र होती चली जायेगी। सरकार इस बात से डर रही है। किन्तु याद रखना चाहिए कि सरकार और शासन प्रजा के उत्कर्ष का एकमात्र साधन नहीं है। एक साधन है। लोकशक्ति के बिना लोकशाही टिक नहीं सकती, यह बिलकुल ठीक है। सरकार भी इस बात से इन्कार नहीं कर सकती। ऊपर यह भी कहती है कि प्रजातंत्र को बलवान बनाने के लिए प्रजा को शक्तिशाली होना चाहिए। प्रजा को प्रजा का सहयोग मिलना चाहिए किन्तु उसका यह कहना केवल ऊपर की बात है। वह मन ही मन यह तो चाहती है कि लोक-शक्ति जागृत न होने पाये। जयप्रकाशजी के आन्दोलन जैसे संघर्षों से लोकशक्ति क्षीण और प्रजातंत्र को धक्का पहुंचता है, आजकल वह ऐसा कह रही है। और ऐसा कहकर आन्दोलन को कुचलने की कोशिश कर रही है। सर्व-सत्ताधीशता और फासिज्म में कोई बहुत बड़ा अन्तर नहीं है। यह अलग नाम से एक ही थैले के चट्टे-बट्टे हैं। कहा जा सकता है कि दूसरे का जन्म पहले में से होता है। किसी भी सत्ता के हाथ में सारी ताकत आ जाने पर वह एकाधिकारवादी या फासिस्ट हो जाती है। यदि लोक-जागृति न हो तो सर्वसत्ताधीश सरकार प्रजातंत्र में मान्य तौर-तरीकों की खास परवाह नहीं करती। वह अपने मन में अपने मन की राह पर चलती रहती है किन्तु जब इस प्रकार के सर्वाधिकार के प्रतिकार की चर्चा होने लगती है तो तब सत्ताधारी दल उस चर्चा को विद्रोह की सज्ञा देने लगता है। उस समय उसका कहना ही सत्य कथन और उसका आचरण ही सदाचरण बन जाता है और परिस्थिति ऐसी बनायी जाती है कि जो कुछ वह करे लोग भी वही करें। इस प्रकार के समीकरण की रचना सर्वसत्ताधीश प्रजातंत्र के समय कई जगह सिद्ध होती देखी गयी है। मूल सिद्धान्त और विचारों का स्रोत व्यक्ति है। इसलिए जो कुछ विचारवान व्यक्ति कहते हैं उसको स्वीकार करके चलना चाहिए और विचारवान व्यक्ति अर्थात् वान व्यक्ति अर्थात् दल (शासक) है ऐसा भी प्रचलित करने की कोशिश करते हैं। एकाधिकारवाद और साम्यवाद और इसी तरह फासिस्टवाद इसी तथ्य का समर्थन करते हैं। एकाधिकवाद वे मानते हैं कि व्यक्ति का अर्थ दल का महामन्त्री या सर्वेसर्वा ही है। तब वह जो कुछ विचार सामने रखता है उसे थीसिस कहा जाता है और उसके मुताबिक कामों को आगे बढ़ाया जाये इस बात के लिए साधारण जनता से राय ली जाती है। दल के प्रमुख व्यक्ति की बात राज्य या राष्ट्र की स्वीकृति सिद्धांत बन बैठती है। जो उसे ठीक नहीं मानता और अपनी इस मान्यता को प्रकट करता है, वह राष्ट्र-विरोधी और गद्दार कहा जाता है।

क्या हमारे देश में ऐसी ही परिस्थिति नहीं बन रही है। श्री जयप्रकाश नारायण और उनके सहयोगियों के ऊपर इसी प्रकार के लांछन लगाये जा रहे हैं। उनके आन्दोलन को कुचलने के लिए उन नीतियों का आश्रय लिया जा रहा है जो केवल बिहार में ही नहीं समूचे देश में कमज्यादा तीव्रता से दमन के रूप में प्रकट हो रही है। जिस प्रकार की नीतियों का आश्रय लिया जा रहा है, और जिन नीतियों को सुनीति कहकर घोषित किया जा रहा है, उसे देखकर तो ऐसा ही लगता है कि सत्ता किसी न किसी प्रकार अपने को लगाये रहने और दृढ़ करने के लिए फासिज्म और ला रही है। और यह बहुत ही खतरनाक स्थिति है। श्री जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में आन्दोलन ने जो रूप धारण किया है उसकी तुलना में शासन ने जो तौर-तरीके अख्तियार किये हैं वह अधिक भयकर हैं। लोकशाही को खतरा श्री जयप्रकाश के आन्दोलन से नहीं खड़ा हुआ बल्कि शासकीय दल के एक विशिष्ट ग्रुप के रस के कारण खड़ा हुआ है। सत्तारूढ़ दल में साम्यवादी विचार के पर्याप्त लोग हैं। साम्यवादी दल की प्रवृत्तियों को जाननेवालों के निकट यह कोई नयी बात नहीं है। जर्मनी में हिटलर का झंडा उड़ा और उसका कारण यह है कि वहां के साम्यवादी सोशल डेमोक्रेट्स को पसंद नहीं करते थे। वहां के साम्यवादियों को नाजियों की अपेक्षा ये समाजवादी, अधिक प्रत्याघाती जान पड़ते थे। साम्यवादी चुनाव में तटस्थ रहे और इसलिए हिटलर के पक्ष का झंडा उड़ने लगा। उसने प्रजातंत्र को निरस्त कर दिया। साम्यवादी पक्ष और प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में उसके साथ सहानुभूति रखनेवाले लोग भारत में ऐसी ही परिस्थिति पैदा कर देंगे। वे जयप्रकाशजी के समाजवाद के बजाय एक झूठे समाजवाद का साथ दे रहे हैं। इसका वही फल होगा जो जर्मनी में हुआ। जिस देश में साम्यवाद अथवा फासिज्म का उदय हो गया उस देश में लोग हुक्म के बन्दे हो जाते हैं। वे चुपचाप मनमाने तौर-तरीकों को चलने देते हैं। इससे संघर्ष नहीं करते। १९३६ में स्पेन ने जनसंघर्ष के द्वारा ऐसा प्रतिकार किया था किन्तु वह सफल नहीं हुआ था। हम फिलहाल इस बात की गहराई में नहीं जायेंगे। केवल इतना ही कहना चाहेंगे कि हमें अपने देश में ऐसी स्थिति नहीं बनने देनी चाहिए। असहाय और मूक होकर जनता एक-एक करके अपने अधिकारों को छोड़ती जाये, यह बरदाश्त करने लायक बात नहीं है। जे पी का आन्दोलन सफल हो इसी में प्रजा की भलाई है।

(गुजराती से)

उपवासदान दीजिये और इसके लिए दूसरों को प्रेरणा भी

विनोबा की प्रेरणा से जिणधम्म संगीति

—कृष्णराज मेहता
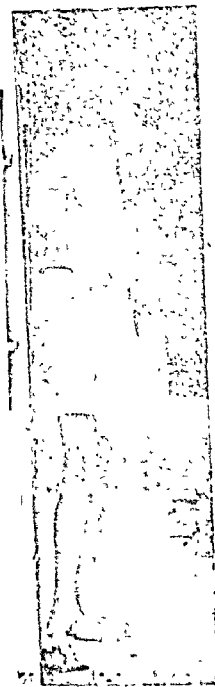
विनोबा का जीवन-कार्य दिलों को जोड़ने का रहा है। उन्होंने अनेक धर्मग्रन्थों पर इसी दृष्टि से कार्य किया कि सर्वधर्म समभाव जाग्रत हो तथा सब एकत्र आयें। सब धर्मों में जीवनप्रेरक मूलतत्त्व एक से हैं। विनोबाजी अनेक बार कह चुके हैं कि विश्व के कुछ प्रमुख धर्मों के धर्म ग्रन्थों पर तो कार्य किया गया, पर जैन धर्म का भी एक सार संकलन सर्वमान्य होना चाहिए। इसके लिए संगीति बुलानी चाहिए और साधु तथा पंडित लोग बैठकर निर्णय करें। उनकी इस भावना का मूर्तरूप इस बार दिल्ली में आयोजित जिणधम्म संगीति में देखने को मिला। संगीति अणुव्रत विहार तथा जैन बालाश्रम में दो दिन तक चली।

दो वर्ष पूर्व की बात है सर्व सेवा संघ प्रकाशन की ओर से ऐसे प्रयास का शुभारम्भ किया गया। श्री जिनेन्द्रवर्णीजी का संपर्क हुआ। उनके समक्ष विनोबाजी की भावना रखी गयी। उन्होंने विनोबाजी के द्वारा सम्पादित संकलित ग्रन्थों का अवलोकन किया। विनोबाजी की भावना उनके हृदय को स्पर्श कर गयी। फलस्वरूप जनवरी ७३ के प्रारंभ में वर्णीजी और विनोबाजी की चर्चा ब्रह्मविद्या मंदिर में हुई। विनोबाजी ने ग्रन्थ संकलन के संदर्भ में मार्गदर्शक सुझाव और मर्यादाएं रखीं। तदनुसार श्री वर्णीजी ने तत्परतापूर्वक दिगंबर एवं श्वेताम्बर वाङ्मय का अवलोकन करके जैन धर्म सार नामक ग्रन्थ संकलित किया। इसमें ४३० गाथाएं संस्कृत छाया तथा हिन्दी अनुवाद सहित थीं। वर्णीजी की ओर से उनका हस्तलिखित ग्रन्थ ११ सितम्बर १९७३ को सिद्धराज ढड्ढा, अध्यक्ष सर्व सेवा संघ ने विनोबाजी को समर्पित किया। विनोबाजी ने उस अवसर पर कहा कि संकलन अच्छा हुआ है। इसमें खूब मेहनत की गयी है। अब यह ग्रन्थ शीघ्र मुद्रित कर जैन धर्म के प्रमुख विद्वानों और प्रमुख लोगों के पास भेजा जाय। सब लोग इसपर विचार करें और संगीति द्वारा इसको सर्वमान्यता प्रदान करें। इसमें जो संशोधन परिवर्धन करना हो उन्हें कर लेने पर बहुत बड़ा काम हो जायेगा।

जैन धर्म सार ग्रन्थ मुद्रित करके लोगों के पास भेजा गया। इसपर लोगों के अनेक सुझाव आये। विनोबाजी के मस्त प्रेरणा के कारण सब लोगों ने इसमें गहरी दिलचस्पी ली। श्री राधाकृष्ण बजाज और मानवमुनि इस सिलसिले में अनेक मुनियों और विद्वानों से मिले। पं० सुखलालजी के विद्वान शिष्य पं० दलसुखजी मालवणिया ने तो '५७० गाथा प्रमाण' एक नया संकलन ही तैयार कर लिया। सारे सुझावों तथा इस नये संकलन को ध्यान में रख कर श्री जिनेन्द्र वर्णीजी ने '८०७ गाथा प्रमाण जिणधम्म' नामक नया संकलन तैयार किया। इस वर्ष दिल्ली महानगरी में दिगम्बर, श्वेताम्बर, स्थानकवासी तथा तेरापंथी चारों सम्प्रदायों के अनेक मुनिराजों के चातुर्मास हुए। तय किया गया कि जैन धर्म सार की संगीति दिल्ली में ही आयोजित की जाये। आचार्य श्री तुलसीजी, मुनि श्री विद्यानंदजी, मुनि श्री सुशील कुमारजी, मुनि श्री नथमलजी, तथा आचार्य श्री विजयसूरिजी ने संगीति में काफी दिलचस्पी ली। और सबकी अनुकूलता को देखकर २९-३० नवम्बर ७४ की तारीखें संगीति के लिए तय की गयीं।

ग्रन्थ का प्रारूप तैयार होते ही मुद्रण के लिए प्रेस में दिया गया। विद्वानों के पास निमंत्रण भेजे गये और इस प्रकार २९-३० नवम्बर को संगीति चार बैठकों में समाप्त हुई।

यह संगीति अनेक अर्थों में अभूतपूर्व थी। विनोबाजी की धन्य प्रेरणा तो थी ही, महावीर परिनिर्वाण महोत्सव होने से तथा सब धाराओं के मुनिराजों के एकत्र होने से संगीति का भव्य रूप प्रकट हुआ। संगीति में बाहर से लगभग ३० विद्वानों ने आकर अपना सहयोग प्रदान किया। अनेक सुझाव सामने आये। वास्तव में ग्रंथ का संकलन ही बड़ा कठिन काम था। संगीति का आयोजन तो और भी कठिन। क्योंकि इस ग्रंथ में दिगम्बर तथा श्वेताम्बर वाङ्मय से गाथाएं चुनकर सार संकलन तैयार करना था। चारों के

विद्वानों तथा मुनिगणों को सदेह था कि समन्वय कैसे हो पायेगा। हजारों वर्षों की साम्प्रदायिक दीवालों को तोडकर एकत्र आना कठिन मालूम पड रहा था। लेकिन इस संगीति ने असम्भव को सम्भव बना दिया। सब आम्नायों के मुनिराज एक मंच पर बैठे, उनका हृदय एक हुआ। पारस्परिक विश्वास का झरना फूट पड़ा।

संगीति चार बैठकों में समाप्त हुई। मुनिगणों ने उदारता तथा सहभावना-पूर्वक समन्वय की भूमिका निर्माण की। समस्त विद्वानों ने एक स्वर से मुनिराजों पर श्रद्धापूर्वक विश्वास किया और कतिपय संशोधनों के द्वारा ग्रन्थ के नामकरण, विषयक्रम तथा प्रारूप आदि की अन्तिम जिम्मेदारी चारों आम्नायों के मुनिगणों को सौंप दी और कहा कि हमारे मुनिगण जो निर्णय करेंगे वह सर्वमान्य होगा।

दिगम्बर तथा श्वेताम्बर आगमय विपुल है। तात्त्विक मतभेद न होते हुए भी अनेक बातों में काफी मतभेद है। सैद्धान्तिक शाखाओं के अनेक ग्रन्थ हैं। फिर भी ऐसा कोई ग्रन्थ नहीं था जो सबके हाथों में दिया जा सके। अब तक जितने भी प्रयास हुए थे वे सब साम्प्रदायिक स्तर के माने गये। ऐसे एक ग्रन्थ की नितान्त आवश्यकता थी जिसमें जैन धर्म का सम्यक्दर्शन, ज्ञान, चारित्र्य रूप सांगोपांग संक्षिप्त सारूप हो तथा समन्वय मूलक हो और सम्प्रदायातीत हो। विनोबाजी की प्रेरणा से इसका शुभारम्भ हुआ और अब कहा जा सकता है कि यह ग्रन्थ सर्वमान्यता के साथ सामने आयेगा। आचार्यों ने अनुभव किया कि इस संगीति से एक महान उपलब्धि हुई है कि सब सम्प्रदायों के मुनिगण विद्वान एकत्र आ गये हैं। संगीति के बाद एक सप्ताह तक मुनिगण नित्य ग्रन्थ संशोधन काम में लगे रहे और एक सर्वांग सर्वमान्य सुन्दर ग्रंथ समण सुत्तम के नाम से तैयार हो गया है और वह आचार्य विनोबाजी के सुझावों के लिए जिनेन्द्र वर्णी के साथ वर्धा भेजा गया जिसका नया नामकरण "श्रमण सूक्त" किया गया।

इस सारे प्रयास का बहुत कुछ श्रेय सर्व सेवा संघ प्रकाशन का है जिसके कार्यकर्ताओं ने निरन्तर दौड़धूप कर के संगीति का आयोजन किया। साहू शान्तिप्रसादजी जैन, रमारानी जैन, साहू श्रेयांस प्रसादजी जैन, श्री प्रभुदयालजी डाबड़ीवाला, मिश्रीलालजी गंगवाल, श्री राजकुमारसिंहजी कासलीवाल, इंदौर तथा प्रमुख श्रावकों ने इस संगीति में उपस्थित रहकर अपना सहयोग प्रदान किया।

सर्व सेवा संघ समस्त आचार्यों, मुनिराजों, विद्वानों तथा श्रावकों का कृतज्ञ है जिन्होंने प्रार्थना पर ध्यान देकर संगीति सफल बनाने में अपना समय और शक्ति लगायी। संयम और विनम्रता की मूर्ति जिनेन्द्रजी के प्रति किन शब्दों में कृतज्ञता प्रकट की जाये, यही समझ में नहीं आता। जटिलता और कठिनाइयों के मार्ग में से तथा निराशा और उपेक्षा के वातावरण में से लक्ष्य तक पहुँचने में वे निरन्तर गतिशील रहे। गठरी भर पुस्तकें और अप्रतिहत रूप से [illegible] के हाथ में [illegible] [illegible] का दर्शन वर्णीजी में होता है। जैनेन्द्र सिद्धान्त कोश आपकी एक ऐसी देन है जो अभूतपूर्व तो है ही भविष्य में भी सैकड़ों वर्षों तक ग्रंथ अपना आलोक फैलाता रहेगा। दर्शन, ज्ञान और चारित्र्य के समन्वित रूप में वे युगयुगों तक विभूति के रूप में स्मरण किये जाते रहेंगे।

समाचार

बिहार सरकार ने मधु लिमये, नानाजी देशमुख और सरला भदौरिया के राज्य से निष्कासन के आदेश वापस लेने के बाद श्रीधर महादेव जोशी, समर गुहा, भाई महावीर, ए. बी. जेम्स और सिद्धराज ढड्ढा के निष्कासन आदेश भी वापस ले लिये हैं। जिन लोगों के खिलाफ निष्कासन आदेश अभी जारी है उनमें राजनारायण, जार्ज फर्नांडिज र नारायण देसाई प्रमुख हैं।

आंदोलन की जितनी गहराई बढ़ रही , उतनी ही बिहार के मुख्यमंत्री की बौखलाहट। उन्होंने १२ दिसम्बर को विधान सभा में जो भाषण दिया उसके कुछ अंश इस प्रकार हैं —

'श्री नारायण उसी क्षण अपना आंदोलन बंद कर देंगे यदि आज प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी अपनी विदेश नीति को बदल दें। इसके बाद जयप्रकाशजी अपने समर्थकों से मिलने पर भी नहीं मिलेंगे और यदि मिलेंगे तो कहेंगे कि उनके पास अब समय नहीं है।

मैं जनसंघ, कम्युनिस्ट, अमेरिका, रूस अर्थात् सारी दुनिया की बात समझ सकता हूं किंतु जयप्रकाशजी की बात नहीं समझ पाता। इसका एक ही कारण है कि वे दो दिन भी एक बात पर अटल नहीं रह सकते। श्री नारायण सबसे अधिक असत्यवादी आज के युग के हैं।

'आदिवासी पर जे. पी. का कोई जादू नहीं चलेगा क्योंकि वे आदिवासी संत विनोबा भावे से भी मिलने तक नहीं गये थे।'

गफूर साहब के मानसिक संतुलन का परिचय इसी बात से मिल जाता है कि १६ नवम्बर की कांग्रेस की दस-बारह हजार की सभा को ५०-६० लाख कहने में भी उन्हें हिचक नहीं हुई।

विधानसभा के विघटन की मांग को लेकर चलाये जा रहे सत्याग्रह के दौरान विधायकों का उनके निवास पर घेराव तथा विधानसभा के फाटकों पर धरना देने के सिलसिले में ७ दिनों में १२ दिसम्बर तक लगभग १०० व्यक्ति गिरफ्तार कर के जेल भेजे गये। १२ दिसम्बर को ही १०० व्यक्ति धरना देने में गिरफ्तार हुए जिसमें ५१ महिलाएं हैं। अब पटना, सिंहभूम, नालंदा, रोहतास, गया, रांची, मुंगेर, भागलपुर, मुजफ्फरपुर, हजारीबाग, समस्तीपुर और गिरिडीह के विधायकों के निवासों और विधानसभा के फाटकों पर धरना दिया गया है। इस बार विधानसभा की बैठक कुल सत्रह दिन ही चलनी है और ३१ दिसम्बर तक बैठकें होंगी। सरकार इस बार गिरफ्तारियां कम-से-कम इसलिए करना चाहती है कि एक तो यह दिखाने के लिए कि सत्याग्रह में कम लोग आये और दूसरे सरकार की जेलों में न जगह है, न समुचित व्यवस्था।

गत ८ दिसम्बर को पटना सिटी क्षेत्र के विधायक जमील अहमद के घेराव के समय जमील अहमद द्वारा घेराव करनेवाले छात्रों पर गोली चलाये जाने की घटना के बाद सरकार जमील अहमद को जुर्म से बचाने के लिए तरह-तरह से कानूनी मार्ग खोज रही है, वहीं वह यह भी साबित करना चाहती है कि जयप्रकाशजी का आंदोलन हिंसक रूप ले रहा रहा है। सरकार जानती है कि आंदोलन को दबाने के लिए इसे हिंसक बनाना जरूरी है। जो भी हो पटना सिटी में घेराव करनेवालों पर गोली विधायक जमील अहमद ने चलायी या उनके अंगरक्षक ने, यह तो जांच करने से मालूम होगा। लेकिन गोली किसी ने भी चलायी हो, यह गोली कांड क्या अपराध में शामिल नहीं किया जायेगा? गोली कांड के दूसरे दिन पटना सिटी पूरा बंद रहा, और पटना छात्र संघर्ष समिति के तत्वावधान में इस गोली कांड के विरोध में एक जुलूस वदरघुमा स्थित क्रांतिकारी मैदान से नगर की मुख्य सड़कों से होता हुआ वापस क्रांतिकारी मैदान आकर एक सभा के रूप में बदल गया। जुलूस में बड़ी संख्या में महिलाएं भी थीं।

जमील अहमद ने विधानसभा में बयान दिया कि यदि अंगरक्षक ने गोली न चलायी होती तो उनकी जान चली जाती। उनके वक्तव्य को चुनौती देते हुए कई विपक्षी नेताओं ने सरकार से इस मामले की निष्पक्ष जांच करने की मांग की है। बिहार राज्य मजदूर संघर्ष समिति के संयोजक योगेन्द्र ठाकुर ने विधानसभा के सदस्यों से अनुरोध किया है कि वे इस मामले की निष्पक्ष जांच कराने के बाद ही कोई निर्देश दें। उन्होंने जमील अहमद और अंगरक्षक के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की ३०७ वीं धारा के अंतर्गत कार्रवाई की मांग की है।

बिहार आंदोलन के समर्थक राजनैतिक दलों तथा छात्र एवं जनसंघर्ष समितियों के सदस्यों ने भी अपने-अपने वक्तव्यों में जमील अहमद के बयान को सफेद झूठ बताते हुए निष्पक्ष जांच की मांग की और सरकार को चेतावनी दी कि इस मामले में जमील अहमद और उनके अंगरक्षकों को गिरफ्तार न करके निर्दोष छात्रों की गिरफ्तारी के बुरे परिणाम होंगे।

संघर्ष कार्यालय, पटना से प्राप्त जानकारी के अनुसार लोकनायक श्री जयप्रकाश नारायण २४ दिसम्बर को दिल्ली पहुंचेंगे तथा २५ से २९ दिसम्बर तक अहमदाबाद रहेंगे। ३०-३१ दिसम्बर को बम्बई व १-२ जनवरी, ७५ को पूना के प्रवास के बाद ३ जनवरी को इन्दौर के लिए प्रस्थान करेंगे। ४ जनवरी को इन्दौर तथा ५-६ जनवरी को उज्जैन में तरुण शांति सेना के राष्ट्रीय सम्मेलन में भाग लेंगे। ७ जनवरी को उज्जैन से पटना के लिए प्रस्थान करेंगे।

अखिल भारतीय नयी तालीम समिति की ओर से बुनियादी शिक्षा का पाठ्यक्रम बनाने के हेतु एक विशेष समिति का गठन श्री द्वारिकाप्रसादसिंह की अध्यक्षता में किया गया है। समिति कक्षा १ से १० वीं तक के विद्यार्थियों के लिए नये परिप्रेक्ष्य में पाठ्यक्रम तैयार करेगी और उसकी रिपोर्ट समिति के अध्यक्ष श्रीमन्नारायणजी को छ माह के भीतर देगी। समिति के संयोजक कनुभाई पटेल हैं और वे इस वर्ष अखिल भारतीय नयी तालीम समिति के मन्त्री चुने गये हैं। डॉ० जे० हातेकर को सहायक मन्त्री मनोनीत किया गया है। समिति की प्रथम बैठक सेवाग्राम में आगामी २ व ३ जनवरी को होगी और पाठ्क्रम पर विचार विनिमय किया जायेगा। विनोबाजी से भी सलाह ली जायेगी।

एक समाचार के अनुसार बुन्देलखंड क्षेत्र के आत्मसमर्पित बागियों के प्रति मध्यप्रदेश सरकार उदासीन दिखाई पड रही है। बागियों और उनकी सामान्य मांगों की उपेक्षा हो रही कही जाती है।

शान्ति मिशन के सूत्रों से ज्ञात हुआ है कि ७-८ माह पहले सागर जेल में अनाज सम्बन्धी घटना में कतिपय बागियों ने जेल वार्डनो से मारपीट की थी। तब ४ बागियों को सागर जेल से हटाकर जबलपुर सेन्ट्रल जेल स्थानान्तरित किया गया था। शान्ति मिशन के प्रभारी अधिकारी गणेशप्रसाद नायक ने इन बागियों को जबलपुर से सागर वापस लाने की सभी सुविधाएं उपलब्ध कराने तथा शासन से न्याय की अपेक्षा की है। ●

इन्दौर के निकट रचनात्मक प्रवृत्तियों के केन्द्र माचला ग्राम में लगभग ८० प्रतिशत कृषक सामूहिक-सहकारी कृषि कार्यक्रम में सम्मिलित हो गये हैं। उन्होंने इसके लिए ग्रामस्वराज्य कृषि सहकारी समिति गठित की है। इससे पूर्व की गांव की तीनों सहकारी समितियां विसर्जित हो गयी हैं। दीपावली के अवसर पर खादी-ग्रामोद्योग विद्यालय में आयोजित एक सादे समारोह में अनुविभागीय अधिकारी विश्वनाथसिंह चौहान ने नवगठित समिति के अध्यक्ष किशोरीलाल भियोरिया को ५६३ एकड़ भूमि का पट्टा प्रदान किया। गांव की ८० प्रतिशत भूमि सहकारी समिति के अन्तर्गत आ गयी है और कोई भूमिहीन नहीं रह गया। नयी समिति ने खेती शुरू कर दी है।

४० एकड़ की खेती कुंए का खर्च चुकाने के लिए अलग रखी है। उस पर प्रबन्धक के मार्गदर्शन में खेती शुरू हुई है, २-२ एकड़ भूमि १० परिवारों को अलग-अलग जोतने को दी है। १२० एकड़ जमीन पर ६ टोलियां घास-बीड की व्यवस्था भी कर रही हैं और छोटा-सा जंगल लगाने का प्रयत्न भी कर रही हैं। देवउठनी ग्यारस पर एक साथ समिति की भूमि पर ११ कुंए खोदने का शुभारम्भ हुआ।

समिति में कुल ११८ सदस्य हैं जिसमें महिलाएं भी हैं। यह जिले में किसी एक गांव में सबसे बड़ी कृषि सहकारी समिति है।

केन्द्रीय गांधी स्मारक निधि द्वारा हर साल की तरह वार्षिक स्वाध्याय गोष्ठी ५ से ७ जनवरी, ७५ तक पवनार में विनोबा के सान्निध्य में आयोजित की जा रही है। इस बार चर्चा का विषय 'रचनात्मक संस्थाओं का गुणात्मक विकास' है।

विनोबाजी इन दिनों सर्वोदय विचार के चिन्तन को व्यापक बनाने की दृष्टि से पारिभाषिक शब्दों की जकड़ से मुक्ति की बात पर जोर दे रहे हैं और दूसरी बात कह रहे हैं कि विचार-भेद भले रहे पर मन-भेद नहीं रहना रहना चाहिए। गोष्ठी में शामिल हो रहे लोगों से अन्य विषयों के साथ इन बातों पर भी चिन्तन करके आने की अपेक्षा करते हुए गांधी स्मारक निधि के मंत्री देवेन्द्रकुमार ने अनुरोध किया है कि ४ जनवरी की दोपहर तक पवनार पहुंचने का प्रयत्न करें जिससे उसी दिन तीसरे पहर कुमारप्पा दिवस पर होनेवाले बाबा के प्रवचन का लाभ उठा सकें।

महाराष्ट्र की समाजसेवी संस्था आन्तर-भारती द्वारा साने गुरुजी की स्मृति में उनके ७५ वें जन्म वर्ष के अवसर पर २८ से ३० दिसम्बर ७४ तक चन्द्रपुर जिले के सोमनाथ प्रकल्प में कार्य प्रवर्तन युवा मेला आयोजित किया जा रहा है। शामिल होने के इच्छुक आन्तर-भारती, ४३० शनिवार पेठ, पूना या दीनानाथ मंगेशकर महाविद्यालय, अंबड़ जोगाई, जिला उस्मानाबाद (महाराष्ट्र) से सम्पर्क करें।

उदयपुर के जिला सर्वोदय मंडल के संयोजक दीनदयाल दशोत्तर ने टोंटरी बनेड़ा में बिहार आन्दोलन के सम्बन्ध में एक भाषण देकर जे. पी. के व्यक्तित्व के बारे में किये जा रहे भ्रामक प्रचार व आन्दोलन के प्रति गलत धारणाओं का खंडन किया और कहा कि यह आन्दोलन जनतंत्र को सही दिशा देने का कार्यक्रम है।

मध्यप्रदेश राज्य शिक्षा सम्मेलन श्रीमन्नारायण की अध्यक्षता में फरवरी, १९७५ के प्रथम सप्ताह में भोपाल के रवीन्द्र भवन में होगा। उद्घाटन राज्य के शिक्षामन्त्री अर्जुनसिंह करेंगे। सम्मेलन में राज्य के सरकारी और गैर सरकारी सभी प्राथमिक से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक के शिक्षक शिक्षाधिकारी और शिक्षाविद् सम्मिलित होंगे। विस्तृत जानकारी के लिए मुख्यसंयोजक, मध्यप्रदेश आचार्यकुल, ६८, सिंधी कालोनी, ग्वालियर-१ से सम्पर्क किया जा सकता है।

खादी ग्रामोद्योग की विचारधारा सम्बन्धित लोकगीत और कविता पर प्रथम द्वितीय, तृतीय पुरस्कार क्रमशः ३०० २००) और १००) रुपये के तथा इसी तरह कहानी और एकांकी पर भी तीन पुरस्कार के लिए रचनाएं ३१ जनवरी, ७५ तक सदस्य साहित्य-खादी ग्रामोद्योग समिति, ६८, सिंधी कालोनी ग्वालियर-१ के पते पर आमंत्रित की गयी हैं।

मध्यप्रदेश में ७० लोकशिक्षा के केन्द्रों के लिए खादी-ग्रामोद्योग की विचारधारा आधारित भूगोल, इतिहास और नागरिक जीवन से सम्बन्धित विषयों पर प्रत्येक पुस्तक की अक्षर-ज्ञान ग्रन्थों की खरीद होगा। नमूने की दो पुस्तकों के साथ अधिकतम व न्यूनतम मूल्य का उल्लेख करते हुए सदस्य, लोकशिक्षा साहित्य-प्रकाशन समिति, ६८, सिंधी कालोनी ग्वालियर-१ के पते पर ३१ जनवरी, तक विवरण भेजा जा सकता है।

रैवाड़ी में गांधी अध्ययन केन्द्र विभिन्न दलों तथा विचारों के नागरिकों की एक सभा एडवोकेट रामशीतलराम राय की अध्यक्षता में हुई। बैठक में हरियाणा के विभिन्न सभा दोनों की स्वतंत्रता सेनानियों के कार्य पर विचार किया और इस बात के लिए कि २१ वर्ष की आयु पूरी कर लेने वाला व्यक्ति पूर्णतः शामिल हो, स्वतंत्रता सम्मान समिति का गठन किया जिसके मुख्य सदस्य मोतीलाल मोहनलाल बनाये गये।

वार्षिक शुल्क—१५ रु० विदेश ३० रु० या ३५ शिलिंग या ५ डालर, एक अंक का मूल्य ३० पैसे।
प्रभाष जोशी द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं ए० के० प्रिंटर्स, नई दिल्ली-१ में मुद्रित।

सर्व सेवा संघ का साप्ताहिक मुख पत्र
नई दिल्ली, सोमवार, ३० दिसम्बर '७४

ल भर को बाबा मौन

तैयार रहो !
नवजीवन पथ

—महेन्द्र कार्तिकेय
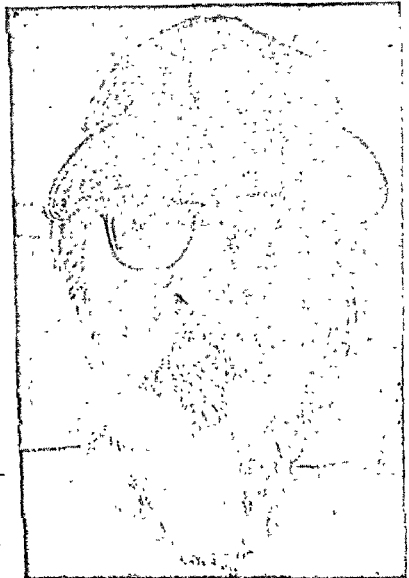
आंदोलन में आ रहा मध्यप्रदेश

"जनशक्ति अणु विस्फोट की शक्ति से भी प्रबल है। यह बात बिहार के जन-आंदोलन से प्रकट हो गयी है। बिहार का आंदोलन जनता के द्वारा (बाई दी पीपुल) है। जे॰पी॰ ने कहा कि वे आंदोलन नहीं चला रहे हैं। बिहार का आंदोलन 'संपूर्ण क्रान्ति' (टोटल रिवोल्युशन) है। संपूर्ण क्रांति के लिए तीन चीजें चाहिए 'चिन्तन की इच्छा' (डिजायर टु थिंक), 'प्रश्न पूछने का साहस' (करेज टु क्वश्चन) तथा 'क्रियात्मक संकल्प' (विल टु एक्ट)। मध्यप्रदेश के ७० हजार ग्रामों की जनता में आप *को इन तीनों गुणों का विकास करना होगा।* गांधीजी द्वारा प्रतिपादित जीवन-मूल्यों की प्रस्थापना से ही इस देश की जनता की यथार्थ सेवा हो सकती है।"

मध्यप्रदेश के प्रतिनिधि जन-नेताओं के दो दिवसीय सम्मेलन के उद्घाटन भाषण में व्यक्त विचारों में से ये कुछ हैं। सम्मेलन दिसम्बर के मध्य में जबलपुर की राजा *गोकुलदास धर्मशाला में हुआ* और उद्घाटन करनेवाले थे सर्वसेवा संघ के प्रबन्ध समिति तथा राष्ट्रीय समन्वय समिति सदस्य गोविन्दराव देशपांडे। सम्मेलन में तदर्थ संघर्ष समिति के सदस्यों के साथ ही प्रदेश के गैर कांग्रेसी दलों के नेताओं, प्रमुख सर्वोदय कार्यकर्ताओं, युवा-छात्र संघर्ष समिति के प्रतिनिधियों और कतिपय स्वतंत्र एवं निर्दलीय *किन्तु जे.पी. समर्थक व्यक्तियों* को आमंत्रित किया गया था।

सम्मेलन में जनसंघ, सोशलिस्ट पार्टी, भारतीय लोकदल, संगठन कांग्रेस, मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी तथा तदर्थ संघर्ष समिति के २७ प्रतिनिधि *शामिल थे।* जनसंघ अध्यक्ष बृजलाल वर्मा ने सम्मेलन के संयोजक को ट्रंक पर अपरिहार्य कारणों से *सम्मेलन में न आ सकने* का तथा संघर्ष में समस्त बंधनों को तोडकर शामिल होने की अभिभूतता के साथ स्थानीय अध्यक्ष को सम्मेलन का प्रतिनिधि मानने को कहा था।

दो दिवसीय सम्मेलन के चार सत्रों की अध्यक्षता क्रमश: सोशलिस्ट पार्टी के जमनाप्रसाद शास्त्री, भारतीय लोकदल के शिवप्रसाद चनपुरिया, मध्यप्रदेश सर्वोदय मंडल के अध्यक्ष हेमदेव शर्मा तथा जनसंघ के बाबूराव परांजपे ने की। महावीर परांजपे के अन्तिम उद्बोधन के साथ १५ दिसम्बर की शाम को सम्मेलन का समापन हुआ।

इस सम्मेलन में बिहार आंदोलन की *धन-जन से सहायता करने की दृष्टि से* मध्यप्रदेश में लोकनायक जयप्रकाश के दौरे पर पांच लाख रुपया देने का निश्चय किया गया जिसकी प्रथम किश्त डेढ लाख रुपया जे. पी. को इन्दौर आगमन पर जनवरी में भेंट किया जायेगा। सम्मेलन ने प्रदेश स्तर पर पच्चीस व्यक्तियों को आंदोलन में सहायता करने हेतु बिहार भेजने का निश्चय व्यक्त किया।

राज्य में बिहार आंदोलन के विस्तार की संभावना पर विचार करते हुए सभी ने यह माना कि बिहार जैसी स्थिति देश-प्रदेश *सभी जगह व्याप्त है, परिस्थितियां* क्रांति के अनुकूल हैं। सम्मेलन ने मध्यप्रदेश विधानसभा के शीतकालीन अधिवेशन के समय भोपाल में एक शान्तिपूर्ण विराट प्रदर्शन करने का निश्चय किया।

संगठन के संबंध में १५ जनवरी तक राज्य के ४५ जिलों में जन-संघर्ष समितियों के निर्माण करने का निश्चय व्यक्त किया *गया तथा इस कार्य के* लिए विभिन्न क्षेत्र के लोगों को इस कार्य का दायित्व सौंपा गया।

तदर्थ संघर्ष समिति के स्थान पर ३० सदस्यीय मध्यप्रदेश जनसंघर्ष समिति तथा *११ सदस्यीय प्रदेश समन्वय समिति* का गठन किया गया। गणेश प्रसाद नायक दोनों समितियों के संयोजक तथा आचार्य, श्रीराम शर्मा सह-संयोजक रहेंगे।

.प्रदेश की आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक *स्थिति तथा किसान, मजदूर तथा पिछड़े वर्गों* की स्थिति का आकलन करते हुए कहा गया कि वर्तमान शासन अपने दायित्वों में पूरी तरह असफल हुआ है। अकाल की स्थिति भयंकर है। राहत अपर्याप्त है। इस संबंध में अनेक मुद्दों पर सांगोपांग विचार करने तथा *उन्हें अन्तिम रूप देने के लिए* वे प्रादेशिक समन्वय समिति को सौंप दिये गये।

जबलपुर लोकसभा के उपचुनाव में गैर-कांग्रेसी दलों की ओर से सर्वसम्मत एक ही प्रत्याशी खड़ा करने तथा चुनाव को संपूर्ण क्रांति की दिशा में मोड़ देने का निश्चय हुआ।

सम्मेलन की प्रबंध व्यवस्था जिला जन *संघर्ष-समिति की ओर से की गयी थी जिसमें* एडवोकेट चिंतामन साहू, एडवोकेट हरीश बतरा, ठाकुर रामप्रसाद, श्रीगोपाल पटेरिया चरनजीत साहनी सक्रियता से जुटे रहे।

सरकार आज कल सारे देश में विपक्ष के राजनीतिक कार्यकर्ताओं तथा सर्वोदय सेवकों के दमन हेतु मीसा, डी॰ आई॰आर॰ आदि वाले कानूनों का जो प्रयोग खुलकर कर रही है उसमें इन कार्यकर्ताओं को संवैधानिक सुरक्षा प्रदान कराने हेतु, मध्यप्रदेश जनसंघर्ष समिति की पहल पर, विधिवेत्ताओं की एक समिति मध्यप्रदेश स्टेट बार काउन्सिल के अध्यक्ष पं॰ रामकिशोर पांडे की अध्यक्षता में गठित की गयी है। समिति के अन्य ६ सदस्यों में लाल सत्येन्द्रसिंह बघेल, आनन्द राव हरवे, सी॰ पी॰ दास, कमल*नारायण अग्रवाल*, गुलाबचन्द्र चौहान, चिन्तामन साहू, हरीसिंह कराडू, निर्मलचन्द जैन और आर॰ पी॰ तिवारी हैं।

कागज का संकट लगातार बढ़ते जाने से 'भूदान-यज्ञ' १६ पृष्ठों का निकालते रहना अब असंभव हो गया है। इसलिए जनवरी, ७५ से 'भूदान-यज्ञ' की पृष्ठ संख्या १२ कर देने को हम विवश हो गये हैं। तथापि हमारी *कोशिश रहेगी कि पाठकों* को १२ पृष्ठों में ही अभी तक के १६ पृष्ठों जितनी पाठ्य सामग्री मिलती रहे। आशा है 'भूदान-यज्ञ' के सहृदय पाठक, एजेन्ट और विज्ञापनदाता अपना सहयोग बनाये रखेंगे।

नये ईस्वी वर्ष के अवसर पर 'भूदान-यज्ञ' अपने सभी सदस्यों और शुभचिन्तकों के सुखी एवं सम्पन्न जीवन के लिए मंगल-कामना करता है। —सम्पादक

सम्पादक

राममूर्ति : भवानी प्रसाद मिश्र
कार्यकारी सम्पादक : शारदा पाठक

वर्ष २१ ३० दिसम्बर, '७४ अंक ११

१६ राजघाट, गांधी स्मारक निधि, नई दिल्ली-११०००१

बीस साल

सन १६७४ विदा हो रहा है और १६७५ का आगमन। नये साल के आरम्भ में बीते वर्ष का लेखा-जोखा करने की एक परंपरा सी रही है।

मुड़कर पीछे देखने पर हम पाते हैं कि १६७४ का वर्ष घटनाक्रम की दृष्टि से अन्य कई सालों की तुलना में अधिक हलचल भरा रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में सबसे महत्त्व की घटना अमरीका के राष्ट्रपति निक्सन के हटने की रही। अमरीका का संविधान जिस प्रकार का है उसके अनुसार उस देश का राष्ट्रपति दुनिया का सर्वाधिक सत्ता-सम्पन्न व्यक्ति बन जाता है। इतने महत्वपूर्ण पद पर रहने के बावजूद निक्सन की जो दुर्दशा हुई उसमें बहुत साफ हो गया है कि छल और फरेब को लोग भले ही राजनीति का पर्याय मानते रहें लेकिन झूठ के पांव नहीं होते और एक झूठ पकड़े जाने पर उस परदा डालने के लिए जो हजार झूठ लगातार बोले जाते हैं वे नौका डुबा कर ही छोड़ते हैं।

इंग्लैंड में विल्सन की सरकार ने इस साल पुन मतदाताओं का विश्वास प्राप्त करके अपनी सत्ता बनाये रखने में सफलता प्राप्त की। साइप्रस में आर्चबिशप मकारियोस को सत्ता उखाड़ दिया जाना जितनी चिन्ता की बात नहीं रही उतनी यह रही कि इस छोटे से देश को तबाह कर देने के लिए तुर्की और यूनान के बीच प्रतिद्वन्दिता आरम्भ हो गयी।

अन्तर्राष्ट्रीय जगत में यह साल तेल की राजनीति का रहा। तेल के उत्पादक देशों ने इस तथ्य को ताक पर रखकर कि खनिज पदार्थों पर मानवमात्र का समान हक है जो मोर्चाबन्दी आरम्भ कर दी, उसने समूची दुनिया को भारी संकट के शिकंजे में कस दिया। लेकिन इसका एक सुखद पहलू यह भी है कि दुनिया के वैज्ञानिक ऊर्जा और शक्ति के वैकल्पिक स्रोतों की खोज के लिए प्रवृत्त हुए हैं। पिछले दो दशकों की राजनीति में दुनिया के दो प्रतिद्वन्दी शक्ति गुटों से अलग एक तीसरा निष्पक्ष गुट उभरा था, तटस्थता का परचम लेकर। इस गुट के प्रमुख शिल्पी भारत, मिस्र और यूगोस्लाविया थे। अब जो हालात सामने हैं उनसे लगता है कि भारत और मिस्र तो रूस की झोली में गिर चुके हैं और तटस्थ गुट का वह सपना जो कभी नेहरू-नासिर-टिटो ने देखा था, दिवास्वप्न बन कर रह गया है। आज तो तीसरे गुट के रूप में तेल उत्पादक देशों का समूह एक होकर उभरा है और बाकी दोनों गुटों से आर्थिक लड़ाई के लिए कमर कस चुका मालूम पड़ता है।

भारत के लिए १६७४ का साल आशा और निराशा दोनों का ही वर्ष रहा। जीवनोपयोगी चीजों की लगातार बढ़ती जा रही कीमतों ने इस साल कल्पनातीत तेजी दिखायी और वे जनसामान्य की पहुंच के बाहर हो गयीं। गहराती निराशा के इसी आलम में उत्तरप्रदेश की विधानसभा के लिए चुनाव हुए और तथाकथित लोकतंत्र की विडम्बना एक बार फिर अपने दुखद रूप में सामने आयी। मतदातासूची के आधे लोग ही चुनाव में मतदान करते हैं और इन डाले गये मतों में से भी मात्र ३२ प्रतिशत पाकर ही कोई दल सत्तारूढ़ हो जाता है। इस प्रकार 'लोक' के १६ प्रतिशत से ही समर्थन पाकर शासन चलानेवाले दल में स्वयं अपने अन्दर भी बहुमत से निर्णय होता है जिससे आवाज मात्र ८-६ प्रतिशत लोगों द्वारा चुने गये व्यक्तियों की रह जाती है और इनमें से भी सूत्र इने-गिने दो चार व्यक्तियों के ही हाथ में होता है। सच कहा जाये तो प्रजातंत्र के नाटक की आड़ में इन दो-चार की तानाशाही चलती है और भोली भोली जनता के सामने मूक दर्शक बने रहकर नजारा देखने के सिवा कोई चारा नहीं रहता।

प्रजातंत्र के इस झूठे नाटक में जनता को, 'लोक' को मुक्ति दिलाने के लिए एक नये जागरण का सूत्रपात भी भारत में १६७४ के साल में ही हुआ और इस नजरिये से यह वर्ष लोगों के लिए नयी आशा का वर्ष माना जायेगा। 'तंत्र' से परेशान हो चुके 'लोक' ने आखिरकार भ्रष्ट 'तंत्र' को उखाड़ने के लिए संकल्प लेकर कोशिश चालू कर दी। इसका श्रीगणेश गुजरात में हुआ जहां छात्रों के आंदोलन के आगे चिमन भाई की सरकार आंधी में उड़नेवाले पत्ते की भांति उड़ गयी। गुजरात के बाद बिहार के तरुणों ने इस अभियान का सेहरा अपने सिर पर लिया और वहां एक ऐसा संघर्ष चालू हो गया जिसका लक्ष्य 'संपूर्ण क्रांति' के माध्यम से एक ऐसी व्यवस्था का निर्माण है जिसमें जनता को वास्तविक स्वराज्य की अनुभूति हो सके। दो दशकों से अधिक के कांग्रेसी शासन ने लो हालात का यहां पहुंचा दिया है जहां बहुत से लोग खुले आम यह कहने लगे हैं कि इनसे अच्छे और सुखी तो वे अंग्रेजों के राज्य में गुलाम रहकर भी थे। जाहिर है कि इस हालत को बदलना जरूरी हो गया था।

बिहार के आंदोलन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहलू है उसका नेतृत्व जयप्रकाश नारायण द्वारा ग्रहण किया जाना। जे० पी० ने बिहार को और कहा जाये तो पूरे देश को रक्तस्नान से बचाया है। अन्यथा बिहार में जो चिनगारी सुलगी थी, वह पूरे देश में खूनी क्रांति का रूप ले सकती थी। लेकिन सत्ताधीशों ने इस तथ्य की ओर से आंखें मूंद लीं और जयप्रकाश को अपना विरोधी मानने लगे। इन्हीं ने इसे अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लिया। फल यह हुआ

कि बिहार की विधानसभा जो कभी की भंग हो चुकी होती आज भी कायम है और दमन पूरी तेजी से चल रहा है। लेकिन गांधी के तरीके के अहिंसक सत्याग्रह की हवा पजाब, हरियाणा, उत्तरप्रदेश, राजस्थान और मध्यप्रदेश में फैल चुकी है। जयप्रकाशजी अगले चुनाव तक इन्तजार की चुनौती मंजूर कर चुके हैं। जितना समय मिलता जा रहा है, आंदोलन उतना ही प्रबल होता जाता है। भयभीत सत्ताधारी हर तरह की तिकड़में आजमाकर असफल होते जा रहे हैं और उन्हें इस बात में लेशमात्र भी संशय रह गया नहीं लगता कि चुनाव में उनका सफाया हो जायेगा।

तस्करों की धरपकड़ का नाटक और बहुर्चाचित लाइसेंस कांड की लोकसभा में गूंज भी १९७४ की उल्लेखनीय घटनाएं रही हैं। इनके बारेमें कुछ कहने की जरूरत नहीं। सब जानते हैं कि इन घटनाओं ने शासकों के भ्रष्ट चरित्र को उजागर करके रख दिया है।

अब १९७५ अपनी संभावनाएं लेकर सामने है। आशा करना चाहिए इस वर्ष कुछ ऐसा होगा जो जन-जन के लिए मंगलकारक हो।

—दा० पा०

साल भर को बाबा मौन

पूज्य विनोबाजी ने २५ दिसम्बर १९७४ से एक वर्ष के लिए मौन धारण किया है। मौन में बाबा अपवाद रखनेवाले नहीं हैं। लेखन भी बन्द रहेगा। केवल पढ़ना जारी रहेगा। २५ तारीख इसलिए निश्चित की गयी क्योंकि वह ईसा का जन्म-दिन है और इस साल उस के साथ ही गीता जयन्ती भी थी। ब्रम्ह विद्या मन्दिर में २५ से २७ तक गीता शिविर चला जिसका उद्घाटन भाषण बाबा का वर्तमान मौन के पहले आखिरी भाषण था।

बाबा के मौन की जानकारी देते हुए सर्वसेवासंघ के सह मंत्री नरेन्द्र दुबे ने कहा है कि यह वर्ष आत्मचिन्तन, सह-चिन्तन और गण-सेवकत्व के अधिष्ठान का वर्ष बने यह अभिलाषा सहज स्वाभाविक है। १९७५ का वर्ष भूदान-यज्ञ का रजत जयन्ती वर्ष है और सुखद संयोग है कि इसी वर्ष बाबा ८० वर्ष पूरे करेंगे इस अवसर के उपयोग के लिए राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम बन रहे हैं।

बाबा ने सब सेवकों के लिए (१) शस्त्रा-रगदे। अर्थात् ब्रम्हविद्या, ग्रामस्वराज्य, शान्तिसेना, आचार्यकुल तथा देवनागरी लिपि, (२) उपवासदान, (३) पचशक्ति सहयोग और (४) सर्वसम्मति से जो निर्णय है वह मान्य-जो यह चतुःसूत्री दी है, उस पर सतत विचार होना चाहिए।

○ आचार्य राममूर्ति

जनता सरकार क्या क्यों कैसे ?

बिहार में जो आन्दोलन चल रहा है उसका दावा है कि यहाँ की मंत्रि-परिषद और विधानसभा दोनों ने जनता का विश्वास खो दिया है, इसलिए उसकी माँग है कि दोनों भंग कर दी जायें, नयी विधान सभा का चुनाव हो और नयी सरकार बने। इसके जवाब में सरकार का कहना है कि विधायकों का चुनाव पाँच वर्षों के लिए हुआ है, इसलिए उसके दिन बीतने के पहले इस तरह की माँग संविधान के विरुद्ध है। इसके उत्तर में आन्दोलन का आग्रह है कि भ्रष्ट, निकम्मी और जालिम सरकार को तथा उसका समर्थन करनेवाली विधानसभा को भंग करने की माँग लोकतंत्र में जनता किसी भी समय कर सकती है। लोकतंत्र में जनता की सत्ता सबसे ऊपर होती है। अपनी मर्जी की सरकार बनाना उसका जन्मसिद्ध अधिकार है। इसी आधार पर १९५९ में केरल की सरकार हटायी गयी। पंजाब एवं उत्तरप्रदेश की विधान सभा निलंबित की गयी और राष्ट्रपति का शासन लागू किया गया तथा गुजरात में मंत्रिपरिषद् का इस्तीफा हुआ और विधान सभा भंग की गयी। फिर बिहार में ही यह माँग क्यों नहीं मानी जा रही है जबकि वहाँ ६० प्रतिशत से अधिक जनता इस माँग के पक्ष में है? मतदान के द्वारा जनता ने जो प्रमाण प्रस्तुत किया है उससे अधिक क्या प्रमाण चाहिए? और, अगर चाहिए तो आन्दोलन की माँग मानकर सरकार नया चुनाव क्यों नहीं करती?

सन १९५२ से अब तक पाँच चुनाव हो चुके हैं। इन वर्षों में जनता को चुनाव तथा अपने चुने हुए प्रतिनिधियों की सरकारों का क्या अनुभव हुआ? एक अनुभव यह हुआ कि चुनाव की आज की पद्धति में कम वोट पानेवाली पार्टी शासक बन जाती है। ऐसा न होता तो ३२ प्रतिशत वोट पाकर उत्तरप्रदेश में कांग्रेस गद्दी पर कैसे बैठ जाती और विरोधी दल ६८ प्रतिशत वोट पाकर भी क्यों रह जाते? दूसरा अनुभव यह हुआ कि चुनाव पैसे, झूठे प्रचार, डंडे और भ्रष्टाचार से जीते जाते हैं। बिहार में भ्रष्टाचार चरम सीमा पर पहुँच गया है। गुंडों के बल पर मतदान केन्द्रों पर कब्जा कर लेना और मनचाहे ढंग से वोट डाल देना आम बात हो गयी है। यहाँ तक हुआ कि अनेक केन्द्रों पर मतदान तो हुआ लेकिन मतदाता नदारद थे। ऐसे भ्रष्ट चुनाव से जनता का सही मत कैसे प्रकट होगा, और भ्रष्ट लोग जीतकर उनके हितों और अधिकारों की रक्षा कैसे करेंगे?

'तंत्र' का बोलबाला

१९५२ से अब तक कितनी सरकारें बनीं, कांग्रेस के अलावा दूसरे दलों की भी बनीं, लेकिन जनता की स्थिति बिगड़ती ही चली गयी। असहाय होकर भोगते रहने और गुस्सा पीते रहने के सिवाय उसके सामने कोई चारा नहीं रह गया। जो विरोधी दल कहलाते हैं, वे भी क्या कर सके? उनकी राजनीति भी वही थी जो कांग्रेस की थी। उनका विश्वास भी जनता की शक्ति न बढ़ाकर राज्य की ही शक्ति बढ़ाने में था जैसे कांग्रेस का था, चरित्र भी उनका वही था जो कांग्रेस के लोगों का था। जैसे जैसे समय बीता विधायक अधिक स्वार्थी और अवसरवादी होते गये। वे पैसा, दबाव की ओर सहज खिंच जाते हैं, उन्हीं के बल पर जीतते हैं और उन्हीं की चाल पर चलते हैं। चुनाव के पहले या चुनाव के बाद विधायकों पर जनता का किसी प्रकार का अंकुश नहीं रहता। कितने विधायक तो चुनाव हो जाने के बाद अपने क्षेत्र में जाते तक नहीं।

आज हमारे लोकतंत्र का यही हाल है कि हर जगह 'तंत्र' का बोलबाला है, 'लोक' कहीं दिखाई नहीं देता। शांति, सुव्यवस्था, विकास, शिक्षा, न्याय, व्यापार आदि जनता के जीवन का कोई भी क्षेत्र नहीं बचा है जो सरकार की मुट्ठी से बाहर रह गया हो। जनता की रोजी-रोटी सरकार के हाथ में चली गयी है। यह आश्चर्य है कि ऐसी असीम प्रभुता पाकर सरकार निरंकुश हो गयी और जनता से अधिक अपनी सैनिक शक्ति पर ही भरोसा करने लग गयी? क्या संविधान और मत-प्रणाली, लोकतंत्र की सारी प्रक्रियाएँ अवसरवादियों का दाँव-पेंच बन गयीं और और जनता एक भीड़ से अधिक और कुछ नहीं रह गयी।

जिस सरकार को जनता ने इतनी आशा और विश्वास के साथ बनाया, उससे बदले में उसे क्या मिला? मिला भ्रष्टाचार, महँगाई, बेरोजगारी, कुशिक्षा और कुशासन। जब जनता की सरकार जनता की दुश्मन बन गयी तो जनता के सामने उस सरकार का प्रतिकार करने के सिवाय दूसरा क्या उपाय रह गया?

बिहार का संदेश। जो भ्रष्ट और निकम्मी सरकार आज बनी है, वह हट जाय, तथा जो विधान सभा उस सरकार के कारनामों, उसकी कार्यवाहियों, नीति-रीति और लाठी-गोली पर मुहर लगाती है वह भंग कर दी जाय, जनता की इससे भिन्न माँग इसके सिवाय दूसरी क्या हो सकती है? यही माँग बिहार की जनता ने की है। मौजूदा सरकार हटे, कुछ दिन के लिए राष्ट्रपति का शासन लागू हो फिर नया चुनाव हो और नयी सरकार बने जो जनता के साथ रहकर, उसके विकास के लिए साधन जुटाये, आवश्यक व्यवस्था करे न कि अपनी गद्दी बचाने के लिए जनता पर लाठी, गोली बरसाये। क्या यह माँग गलत है?

निरंकुश सरकार पर जनता का अंकुश

यह अनुभव भी आया है कि जनता के हित की दृष्टि से पाँच वर्षों में एक बार वोट देकर ही संतोष मान लेना काफी नहीं है। इससे अधिक भी कुछ करना पड़ेगा। वह क्या? एक तो यह करना होगा कि जनता अपने प्रतिनिधियों (विधायकों) पर अंकुश रखे। दूसरे यह कि जहाँ तक संभव हो जनता अपने रोजमर्रा के जीवन को सरकार के हाथ से निकालकर अपने हाथ में ले ले। सरकार रहे, लेकिन जनता की सहायता करे, उसके सीने पर सवार न हो। यह कैसे होगा?

प्रतिनिधियों पर अंकुश रखने के लिए तीन काम करने होंगे: (१) हर निर्वाचन क्षेत्र की जनता चुनाव में अपने उम्मीदवार खड़े करे, (२) जनता देखे कि चुनाव साफ और निष्पक्ष हो, (३) चुन लिया जाने के

स्वायत्त होगी, ऊपर की हर इकाई अपने नीचे की इकाइयों को सहायता करेगी, और उनके काम को जोड़ेगी, 'कोऑर्डिनेट' करेगी। यही रोल अपनी जगह राज्य सरकार का भी होगा। वह विशेष स्थितियों में ही हस्तक्षेप कर सकेगी। इस प्रकार सरकार के कार्य, उसका दायरा और अधिकार सभी क्रम से घटते और सीमित होते जायेंगे। शासन घटेगा, स्वशासन बढ़ेगा। स्पष्ट है कि इस योजना में जनजीवन के निकट काम करनेवाली इकाइयों का महत्त्व बहुत अधिक होगा। वे ही वास्तविक जनता सरकार होंगी। आज की पंचायतों की तरह वे प्रशासन की कड़िया नहीं होंगी, बल्कि स्वशासन की पीढ़िया बनेंगी, जो अपने क्षेत्र की जनता के प्रति उत्तरदायी होंगी। ये इकाइयां अधिक से अधिक जनता की सहकार शक्ति से काम करेंगी, सरकार की दमन शक्ति से नहीं। शान्ति, सुव्यवस्था, न्याय, शिक्षा, स्वास्थ्य, खेती, उद्योग, व्यापार, सूद, मजदूरी, रोजगार, भूमि के नियम और कानून, साधनों का स्वामित्व, विकास की योजना आदि ऐसे क्षेत्र हैं जिनमें हर ग्राम सभा अपने गांव में अपनी समितियों द्वारा निर्णायक ढंग से काम कर सकती है। और तभी जनता को व्यावहारिक लोकतंत्र का अनुभव होगा- 'लोक' 'तंत्र' को अपने हाथ में रख सकेगा। अगर कभी सरकार द्वारा शक्ति का दुरुपयोग होगा तो गांव गांव के लोग जोर—जुल्म के विरुद्ध संगठित होकर प्रतिकार के लिए खड़े हो सकेंगे। गांधीजी ने लोकतंत्र की यही असली पहचान बतायी थी कि जनता में अधिकारों के दुरुपयोग के विरुद्ध प्रतिकार की शक्ति आनी चाहिए। अगर ऐसा नहीं होगा तो लोकतंत्र का बाहरी ढांचा रखते हुए भी राजशक्ति निरंकुश हो जायेगी और तानाशाही भेष बदलकर दमन और शोषण करेगी, जैसा आज हमारे देश में हो रहा है। इस दृष्टि से हर ग्राम-सभा छात्रों और युवकों का, शान्ति के वाहक के रूप में, ग्राम शान्ति-दल, संगठित करेगी, जो संघर्ष और विकास दोनों काम करेगा।

सम्पूर्ण क्रान्ति दूर का आदर्श नहीं

अभी जब तक पटना की जनविरोधी मंत्रि परिषद् और विधान सभा का अन्त नहीं हो जाता तब तक 'जनता सरकार' की सभी इकाइयों को, मुख्य रूप से गांव से ब्लाक तक पटना सरकार से संघर्ष करना होगा। वे सत्याग्रह, कर- बन्दी आदि के कार्यक्रम चलायेंगी, सरकार की हिंसा और दमन- शक्ति को समाप्त करना जनता सरकार का मुख्य काम होगा।

गांधीजी ने ३० जनवरी १९४८ के अपने अन्तिम वसीयतनामे में साफ-साफ यह चेतावनी दी थी कि भारत के लोकतांत्रिक विकास में सैनिक शक्ति बनाम नागरिक शक्ति की टक्कर अनिवार्य है। वही टक्कर इस वक्त बिहार में हो रही है। उस टक्कर को विधान सभा के विघटन तक पहुंचाने के बाद जनता सरकार का रचनात्मक कार्य (समाज-परिवर्तन और समाज निर्माण) शुरू होगा जिसके द्वारा जन-जन का जीवन दमन और शोषण से मुक्त होगा। सेवा और राहत के कई काम जनता-सरकार की इकाइयां तुरन्त हाथ में ले सकती हैं जैसे कपड़ा, अन्न, चीनी आदि का वितरण और सस्ती दुकानों की देखभाल (२)सरकारी कर्मचारियों या मुखिया आदि के द्वारा घूस या दूसरी अनीति का निराकरण, (३)आपसी झगड़ों का पुलिस-अदालत में गये बिना पंचफैसला द्वारा निपटारा, (४)रेडबाजी की रोक, (५)गरीब या कमजोर पर किसी प्रकार के जोर-जुल्म का प्रतिकार, (६)कोई अन्य काम जो आपस में राय बात करके तय हो,,

जनता सरकार पड़ोसियों के साथ वह या टैक्स-वसूली की नीति नहीं अपनायेगी। जरूरत पड़ने पर निर्णय न माननेवाले के विरुद्ध सामाजिक बहिष्कार का कदम उठा सकती है और किसी योजना के लिए चन्दा इकट्ठा कर सकती है। लोकशक्ति के प्रकट होने पर ही उस सम्पूर्ण क्रान्ति-राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक-की प्रक्रिया शुरू हो सकेगी जिसका आह्वान लोकनायक जयप्रकाश ने किया है। आज का सम्पूर्ण ढांचा—सत्ता और सम्पत्ति पर आधारित—क्रान्ति विरोधी, जनविरोधी, जीवनविरोधी है, उसे बदले बिना भ्रष्टाचार, बेरोजगारी, महंगाई और शिक्षा में सुधार जैसी समस्याएं भी नहीं हल हो सकतीं। इसलिए 'सम्पूर्ण क्रान्ति, कोई दूर का आदर्श नहीं है, बल्कि भारत की करोड़ों करोड़ जनता की रोजी-रोटी का प्रश्न है। सम्पूर्ण क्रान्ति सम्पूर्ण जनता की ही शक्ति से सम्भव है, किसी दल, वर्ग या वर्ण की अधूरी शक्ति से नहीं। बिहार में जनता को क्रान्ति का वाहक बनाने का प्रयोग क्रान्तियों के इतिहास में शायद एक नया अध्याय जोड़ेगा। जब प्रचलित लोकतंत्र के दरवाजे बन्द हो गये हों और हिंसक षड्यन्त्र के गोरख रास्ते भी कुछ इने-गिने आदमियों के लिए ही रह गये हों तो जनता के सामने गान्धी के बनाये हुए शान्तिपूर्ण सत्याग्रह (असहयोग और घरना) के रास्ते पर चलने के सिवाय दूसरा रास्ता नहीं रह गया है। वही रास्ता सही है। बिहार की जनता अपनी मुक्ति के लिए उसी रास्ते पर चल रही है।

○ धर्मपाल सैनी

आन्दोलन : तीसरी शक्ति : सर्वोदय

सर्वोदय विचार में निष्ठा रखकर काम करनेवाले हम सब मित्रजन बिहार आंदोलन के प्रति एक अपूर्व दुविधा और स्वीकार सकार की गिरफ्त में होते यदि विनोबाजी ने गंगा-ब्रह्मपुत्रा कहकर उसे मर्यादित न कर दिया होता। इसके बाद भी दुविधा कम नहीं है। बिहार के आंदोलन में अब चुनाव और क्रांति एक साथ हो गये हैं। उसने पार्टी की राज-नीति और जनता की राजनीति को एक साथ स्वीकार किया है। इस तरह स्वाधीनता में वह स्वराज्य के संग्राम की तरह लोकतंत्र का संग्राम बन गया है।

लोकतंत्र के अभी तक के विकास में पार्टी, लोकतंत्र के अस्तित्व की आवश्यकता है। पार्टी भी एक नहीं, अनेक। उनमें भी दो इतनी समर्थ कि जनता के हितों, आशा-आशाओं और आक्रोश के मुताबिक आस्था और सत्ता परिवर्तन की शक्ति बनी रहे। इससे जनतंत्र अखण्ड और सार्वभौम प्रभुता सम्पन्न राष्ट्र बने रहने के लिए आवश्यक और

निरन्तर प्रतिद्वंद्विता बनी रहती है। भारत में अभी तक दूसरी पार्टी का अस्तित्व ही परिपूर्ण नहीं हुआ है। जनता के आंदोलन का कोई भी वास्तविक विस्फोट पार्टी से अलग रहकर एक संगठित शक्ति नहीं बना रह सकता। इसी तरह अभी तक की बड़ी-बड़ी विरोधी पार्टियों व संगठनों को यह तोड़े-जोड़े बिना नहीं रह सकता। भारत में लोकतंत्र की ऐसी अवस्था आ गयी है, जब उसे दूसरी पार्टी चाहिये। बिहार उसका प्रारम्भ बन गया है।

सर्वोदय विचार, पार्टियों से अलग, तीसरी शक्ति को माननेवाला और उसका पोषण करनेवाला रहा है। उसने गांधी के इस विचार को मूर्त रूप देने की कोशिश की है कि सत्ता के बाहर रहकर जनता के हित में उस पर प्रभावशाली अंकुश रखने की शक्ति पैदा हो। तीसरी शक्ति का विचार प्रस्तुत कर उसने दो पार्टियोंवाले लोकतंत्र की सम्पूर्णता से इनकार नहीं किया है। बल्कि दो पार्टी का लोकतंत्र जनहित और जनसत्ता का अंतिम मापदण्ड नहीं है, और इसकी पूर्ति में उसने तीसरी शक्ति को जोड़ा है, जो राजसत्ता से अलग पर लोकसत्ता के लिए प्रभावशाली ढंग से उपस्थित हो।

लोकतंत्र में कोई एक पार्टी सत्ताधारी और दूसरी उसकी आकांक्षी होने से विरोधी की भूमिका में सुसज्जित होगी। पर बिना सत्ता में जाये ही तीसरी शक्ति सहकार और विरोध की जनसत्ता बनी रह सकती है। वस्तुतः यह रचनात्मक शक्ति के रूप में निरन्तर और सविनय अवज्ञा के रूप में प्रयोजन या परिस्थिति के अनुसार काम करती रहेगी। जनता के राज्य के लिए यह सत्याग्रह की सत्तावाली तीसरी शक्ति जरूरी है। कोई भी सत्ताकांक्षी दल इस चरित्र का निर्वाह करनेवाला नहीं रह सकता। सत्ता में या उसके बाहर रहते हुए वह दोनों सहकार या विरोध में से किसी न किसी एक के लिए पंगु-सा सिमित रहेगा। लोकतंत्र के मूल्यों के लिए यदि जनता में रचनात्मक इच्छा और शक्ति न हो तो यह निरर्थक हो जायेगा। इसी तरह तंत्र में कमियों, शिथिलता व खतरों के प्रति जनता में सविनय अवज्ञा की शक्ति न रहे, तो वह ढांचा ही ढह सकता है। लोकतंत्र के पंगु होने और ढह जाने के खतरों का मुकाबला करने में केवल पार्टी-पद्धति भारत में समर्थ होती नहीं लगती। भारत की विविधता तथा विस्तार के साथ अन्तर्राष्ट्रीय अन्तर्विरोधी शक्ति-स्वार्थों के संदर्भ में, लोकतन्त्र के लिए तीसरी शक्ति अनिवार्य आवश्यकता है। तीसरी शक्ति जनता के राज्य के लिए राजसत्ता और विरोध-सत्ता को निरंकुश नहीं होने देने तथा उन्हें सही दिशा देने की नैतिक प्रक्रिया का काम करेगी। इसके बिना भारतीय लोकतंत्र लाखों ग्राम और करोड़ों गरीबों के लिए सार्थक रोल अदा नहीं कर सकेगा।

अभी तक सर्वोदय विचार में काम करनेवाले कम-ज्यादा ही सही लोकसत्ता की तीसरी शक्ति में विश्वास करनेवाले रहे हैं। इसके लिए पार्टी की बजाय जनता के प्रतिनिधि चुनाव में खड़े करने का विचार भी विकसित हुआ है। बिहार आंदोलन के दौरान अब पार्टी द्वारा भी चुनाव की बात स्वीकार की गयी है। यह दूसरी पार्टी के अस्तित्व के लिए तो जरूरी है। किन्तु लोकसत्ता वाली तीसरी शक्ति का क्या होगा? जे० पी० सम्पूर्ण क्रांति के लिए जनता, छात्र और युवा शक्ति पर अवलम्बित हैं। उसमें नयी प्रतिभा और क्षमता तो ये प्रक्रिया चुनाव और पार्टी के बाद भी तीसरी शक्ति की संभावनाओं को विद्यमान रखेगी? आशा और प्रयत्न अमर हैं। पार्टी और चुनाव तात्कालिक आवश्यकता की पूर्ति तो करते हैं परंतु चुनावों में हार के क्षति को एक हार भोगनी पड़ सकती है और सहयोगी पार्टी की जीत से उसमें एक रुकावट-सत्ता से अलग तीसरी शक्ति बनने में रुकावट-पैदा हो सकती है। यह बड़ा खतरा है। सत्ताधारियों की चुनौती और व्यूहरचना ने आंदोलन के लिए चुनाव के इस खतरे को उठाने के लिए प्रेरित किया है। अन्यथा आंदोलन यथार्थ से मुंह मोड़ लेनेवाला बन सकता था। ऐसा करने पर यह एक क्रांतिकारी स्मारक बनने का खतरा उठाता। जे० पी० ने दोनों में से एक जीवनीय खतरे को स्वीकार किया है। और चुनावों के लिए पार्टियों तथा सम्पूर्णक्रांति के लिए जनता छात्र-युवा वाली व्यूह रचना का निर्माण किया है। इस तरह लोकतंत्र के लिए एक पार्टी के सामने दूसरी पार्टी के निर्माण और साथ ही जनसत्ता की तीसरी शक्ति के विकास के प्रयत्न को ठोस रूप देने का प्रयत्न किया गया है। सम्पूर्ण-क्रांति के लिए इतना लक्ष्य तो होना ही चाहिए।

इस स्थिति के साथ सर्वोदय में काम करनेवाले कितना तालमेल बैठा पायेंगे यह एक अहम् सवाल है। क्योंकि आंदोलन के प्रयत्नों में अब एक नयी पार्टी का निर्माण भी जुड़ गया है। क्या वे इसके प्रति उदासीन रहेंगे और केवल सम्पूर्ण क्रांति में अलग से भाग लेते रहेंगे? उनमें से कुछ नयी पार्टी और चुनाव के हित में भाग लेना चाहेंगे? शायद स्वयं खड़ा होने की तैयारी कोई न भी करे। इसे सर्वोदय विचार पर परिस्थितियों का आक्रमण कहा जायेगा? इस सारी उथल-पुथल में भी यदि हम सब अपने आपको तीसरी-शक्ति के लिए ही विचारबद्ध मानते रहे, तो तीसरी-शक्ति के भाग्य-निर्माता बने रहेंगे।

एक प्रश्न और रह जाता है कि राजसत्ता और पार्टी निर्माण के काम से जो बुनियादी रूप से पृथक रहना चाहते हैं, उनका रोल क्या होगा? क्या वे विभाजन को स्वीकार कर लेंगे? अथवा इन्तजार करेंगे कि सम्पूर्ण क्रान्ति के लिए प्रयत्नशील और चुनावी हारजीत से असम्पृक्त मिलजुल एक न एक दिन साथ हो ही जायेंगे। लगता है कि तीसरी शक्ति के लिए सम्पूर्ण क्रान्ति के परिणाम देखने के इन्तजार का महापुरुषार्थ करना होगा। बल्कि तीसरी शक्ति जगाने के कार्यक्रम को अपनी रूप देने का प्रयत्न करना होगा। दूसरी तरफ सम्पूर्ण क्रान्ति में भाग ले रहे मित्रों को सत्ता से उतार कर दूसरे को सत्ताधारी बनाने से ज्यादा लोकसत्ता और ग्रामस्वराज्य की दिशा में सम्पूर्ण क्रान्ति को आगे बढ़ाने का इन्तजार भरा परम प्रयत्न करना होगा। ऐसा करने पर तात्कालिक परिस्थितियों का दबाव समन्वय और साथ के अवसर तक पहुंचने में कोई वास्तविक और अटूट बाधा नहीं बना रह सकेगा।

सीताराम सिंह

लोकतंत्र नहीं तंत्रलोक

अविकसित देश भारत के सत्तारूढ दल तथा उसके पिछलग्गू द्वितीय महायुद्ध में अंग्रेजी साम्राज्यवादी शासन ने 'लोकतंत्र बचाओ' 'जनतंत्र की रक्षा करें' के जो नारे चालू किये थे उन्हें दुहराये जा रहे हैं। सर्वप्रथम इसी का कुछ विवेचन करना है। भारत में ही नहीं सारे संसार में शासन के विरुद्ध विद्रोह की ज्वाला भड़कना चाहती है।

मानव विकास के निमित्त जितनी शासन प्रणालियां प्रचलित हुई हैं उनमें लोकतन्त्र, साम्यवाद, समाजवाद प्रमुख हैं। इनका आविष्कार क्यों और कैसे हुआ, इतिहास में बहुत साफ है। पूर्व निहित स्वार्थी, धनाढ्य उच्चवर्ग ने सामन्ती शासन के विरुद्ध दलित मानव चेतना-शून्य जनता का भरपूर लाभ विद्रोह कराकर अपने विचारों के अनुरूप शासन पद्धतियों का आविष्कार कर लोकतन्त्र, साम्यवाद आदि नामों से (मूल और मुख्य विचारों से परे) किया। लोकतन्त्र का विचार कई सौ वर्षों पहले आया था और उसे सर्वप्रथम पश्चिमी देशों ने अपनाया। एक लम्बे अर्से से इंग्लैंड में लोकतन्त्रीय शासन चल रहा है। इसी की नकल दुनिया के अन्य देशों में की गयी है। बीसवीं सदी में दुनिया के मानचित्र और इतिहास में बहुत से परिवर्तनों के साथ-साथ विज्ञान और तकनीकी नवीन खोजों के परिणाम प्रकाश में आये। दुनिया में प्रचलित दलीय शासनों ने विज्ञान और तकनीक का उपयोग भौतिक सुख की समृद्धि में भरपूर किया। प्रतिफलस्वरूप शोषण का रूप बदलने के साथ-साथ मानव के श्रेष्ठ गुणों मानवता और नैतिकता के विपरीत क्रूरता का प्रसार हुआ। मानव का सुदृढ समुदाय इस प्रकार विघटित कर दिया गया जो अब कभी समुदाय बन ही नहीं सकता। वर्तमान सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक जीवन आज शासन के तंत्र से प्रभावित है जिससे मानव अस्तित्व ही खतरे में पड़ गया है। विघटित मानव का अन्धाधुन्ध शोषण वर्तमान शासन द्वारा तेजी से किया जा रहा है। भूख से जर्जर मानव को संकट में डाल के शहरी जनता, बुद्धिजन, वैज्ञानिक, समाजशास्त्री, शिक्षाशास्त्री आदि शासकवर्ग को भौतिक सुख तथा भोजन देने की मशीन बना दिया गया है। तीनों शासन पद्धतियां मानव विकास और जन-कल्याण के नाम से मनलुभाने वाले नारों के सहारे चलायी जा रही हैं।

दुनिया के समस्त दलीय शासन अपने-अपने राष्ट्र की रक्षा, उन्नति और विकास में सेना की सुदृढता और क्रूर शासन तंत्र की बाहुल्यता को समस्याओं से निपटने का महान अस्त्र मानते हैं। संसार भर की अधिकांश आय मानव के विनाश पर नैतिकता और राष्ट्रीयता के नाम पर धड़ाधड़ व्यय की जा रही है जिससे आज भयानक स्थिति उत्पन्न हो गयी है। दण्ड और हिंसा शक्ति पर आधारित शासन के विरुद्ध सारे संसार में अशान्ति, विद्रोह की लहर दृष्टिगोचर हो रही है। वर्तमान प्रचलित शासन पद्धतियों का एकमात्र लक्ष्य भौतिक सुख की बढ़ोत्तरी ही अबतक रहा है जिससे यन्त्रीकरण के कारण प्रकृति में परिवर्तन, जलवायु दूषित होने का संकट विचित्र और नवीन प्रकार से पैदा हो रहा है। भ्रष्टाचार और अन्याय से कोई भी क्षेत्र अछूता नहीं है। पद, प्रतिष्ठा और पैसा के प्राप्त करने में ईमान खुली बाजारों में और न्यायालयों में बिक रहा है जो किसी से छिपा नहीं है। विधान सभा के सदस्यों से लेकर राष्ट्रपति तथा निम्न चपरासी से लेकर राज्यसचिव तथा अन्य उच्च अधिकारियों तक में भ्रष्टाचार, अन्याय, बेईमानी इस कदर घुस चुकी है कि अब यह लाइलाज बन गयी है। अविकसित नकलची देशों की कौन कहे दुनिया में प्रचलित और विकसित देश भी भ्रष्टाचार से नहीं बच सके हैं। अमेरिका, इंग्लैंड, रूस आदि देशों में भौतिकता का इतना विकास हुआ है कि सुख और समृद्धि में पागलों की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। इसका निदान आजका विज्ञान नहीं कर सकता है।

दुनिया के जनकल्याण और शान्ति के लिए सभी देशों के शासनों ने मिलकर एक संगठन बनाया है जो राष्ट्रसंघ के नाम से जाना जाता है। अब तक संयुक्त राष्ट्रसंघ द्वारा घोषित लक्ष्य की उपलब्धि शून्य ही है। इस का मुख्य कारण अनाधारित कहा जानेवाला आध्यात्मिकता शून्य, भौतिकतावादी, निहित दलीय स्वार्थरत शासन ही है। अधिनायकतन्त्र अथवा एकतन्त्रीय शासन में मानव जीवन जो कुछ बचा-खुचा था वह लोकतन्त्रीय अथवा अन्य शासकों ने विकास और कल्याण का नारा देकर भ्रष्ट कर दिया है। मानव शासन और यन्त्रों का पुजारी मात्र रह गया है। दुनिया के समाजशास्त्री, वैज्ञानिक, इतिहासकार, लेखक, शिक्षक आदि किसी न किसी तरह शासन के चंगुल में फंसे ही नजर आते हैं।

दुनिया के शासन संगठनों में बुद्धिजीवियों, विचारकों तथा अन्य कलाकारों का कोई स्थान नहीं है जिससे शासन सत्ता के असीमित अनियन्त्रित अधिकारों के विरुद्ध प्रत्येक देशों में विद्रोह की ज्वाला फूटने की स्थिति उत्पन्न हो गयी है। किसी देश में शान्ति नहीं है चाहे वे विकासशील हों या अविकसित।

शोषित और दलित मध्यम और उच्च वर्गों के नवयुवक जिनका निहित स्वार्थ अंग्रेजी शासन के रहते हुए साधना असम्भव था, सर्वप्रथम वे ही गांधी के साथ स्वतन्त्रता आंदोलन चलाने के अगुआ बनकर आये थे और कांग्रेस संगठन में उन्हीं का बोलबाला था। गांधीजी भी इसको भलीभांति जानते थे परन्तु उनको स्वयं पर इतना विश्वास था कि वे कभी-कभी कांग्रेस को भी अपने से अछूता रखते थे। स्वतन्त्रता आंदोलन अन्तिम 'भारत छोड़ो' गांधीजी के नेतृत्व में सफलतापूर्वक चला, अंग्रेजी शासन डगमगाया। शासन कहिये या राजनैतिक चाल कहिये कि गांधी का साथ उस भारतीय कांग्रेस के नेताओं ने ठीक उस समय छोड़ दिया जब अंग्रेजी शासन के पैर भारत से उखड़ चुके थे। 'जुआड़ी देखे अपना दाव' की बात चरितार्थ करते गांधीजी की बात नहीं मानी गयी। क्रिप्स प्रस्ताव और पाकिस्तान का बटवारा एकमात्र कांग्रेस दल की सत्ता हथियाने की लिप्सा थी। विवशता थी पद, प्रतिष्ठा और पैसे की।

गांधीजी को यह नहीं पसन्द था कि कांग्रेस के नेतागण सत्ता में रहें। उनकी आखिरी वसीयत स्पष्ट है कि

कांग्रेस का कार्य गांव-गांव में है। प्रत्येक गांव जो अंग्रेजी शासन से शोषित और पंगु बनाया गया है, उसका नव निर्माण हो, मतदाता सूची बनाना, ग्रामीण उद्योग पुनः खड़ा करना, दलित मानव को जागृत करना, मानव समुदाय को सहयोग और सहकार पर पूर्व की भांति रचना करके स्वावलम्बी बनाना। शासन के बारे में उनका स्पष्ट यह कहना था कि शासन मानव के लिए भयानक जहर है जिसके छूने से ही मानवता नष्ट होती है। अर्थात शासन को वे मानव के शोषण का भयानक यन्त्र मानते थे। इन्हीं सब विचारों के कारण तत्कालीन शासकदल (कांग्रेस) गांधी से भिन्न हो गया और तब से अब तक सत्तारूढ़ है। देवताओं के राजा इन्द्र भी इन्द्रासन छोड़ना नहीं चाहते फिर हम तो इन्सान ठहरे। सुख-सुविधा और सत्ता छोड़ता कौन है?

शासन सत्ता आज जो भारत में चल रही है उसने तो कमाल ही कर दिया है। राजनीति और शासन सत्ता कुछ सरफिरे, निठल्ले विचारशून्य व्यक्तियों के हाथों की कठपुतली बन कर रह गयी है। कुछ विशेष व्यक्तियों के लिए पद प्रतिष्ठा, पैसे का एक खेल चल रहा है जो येन-केन-प्रकारेण जनता का मत प्राप्तकर शासन चलाता है। -

दल-बदल का रोग आज की स्वार्थपरता की ही उपज है जिससे जनतन्त्र की बुनियाद हिल गयी है। प्रत्येक राजनैतिक दल अपने-अपने दल के सदस्यों की संख्या भांति-भांति के अनैतिक प्रजातन्त्र घातक प्रलोभनों से बढ़ाते हैं। परिणाम होता है कि सत्ताधारी पार्टी साधन सम्पन्न होने के कारण इस कार्य में पूर्ण योग्य और सफल है। इस प्रकार लोकतन्त्र को समाप्त करनेवाला और कोई नहीं सत्तारूढ़ दल स्वयं है।

भारतीय संविधान क्या देवताओं ने बनाया है या लोकतन्त्र के प्रारम्भ में मानव के पूर्व बनकर आया या जिसकी दुहाई सत्तारूढ़ दल दे रहा है? अधिनायकतन्त्र या राजा यदि कोई विधान अपने अधिकारों के रक्षार्थ समयानुसार बना ले तो क्या वह बदल नहीं सकता या जनहितैषी राजा स्वयं उसमें संशोधन, जनहित को देखते हुए नहीं कर सकता? विचार शून्य सत्तादल क्यों यह अनैतिकता और मानवता से परे प्रचार कर रहा है? पांच वर्षों के पूर्व चुनाव कराना या किसी प्रकार का संविधान या नियम का मानव हित में संशोधन क्या संविधान का उल्लंघन है? लोकहितैषी और जनाधारित कही जानेवाली सरकार के लिए यह आचरण किसी भांति उचित नहीं है।

जब कोई शासन भ्रष्टाचार, पद, प्रतिष्ठा पैसा और निहित स्वार्थ में जनहितैषी कर्तव्यों का पालन न करे तो जनता का यह मौलिक अधिकार है कि शासन बदल दे और अपनी मर्जी की सरकार बना ले

आज भारत में इन दोषों के खिलाफ एक आंदोलन चल रहा है जिसके विरुद्ध शासक दल अपने आपको लोकतन्त्रीय घोषित करता है। यह सत्य और स्पष्ट है तो क्यों नहीं अन्य लोकतन्त्रीय शासनों की भांति अपनी स्थिति को वह बहुमत प्राप्त करके सिद्ध कर देता? साल-दो-साल और जनता की छाती पर जबरन मूंग दलना क्या अनैतिकता और भ्रष्टाचार नहीं है? सरकारें कोई भी हो, जड होती हैं, लेकिन मनुष्य चेतन।

वर्तमान भारतीय लोकतन्त्र में लोक को पीछे ढकेलकर, तन्त्र ही प्रधान हो रहा है। 'लोक' तो अब तन्त्र के पैरों तले इस प्रकार कुचला जा रहा है कि शासन में उसका कोई ख्याल नहीं है। यह स्थिति अब आज जो है, वह 'तन्त्र-लोक' ही कही जा सकती है, भले ही अपने स्वार्थ में वर्तमान शासक-दल लोकतन्त्रीय अपने को कहे और अधिनायकतन्त्री आचरण करे। ★

□ श्यामबहादुर 'नम्र'

लड़ाई जितनी लम्बी जीत उतनी जनता की

बिहार का जन-आंदोलन ज्यों-ज्यों अगले चरण में प्रवेश कर रहा है, लोक-अभिक्रम जाग रहा है और सरकारी दमन एवं बर्बरता दम तोड़ने की स्थिति में पहुंच रही है। गत ४ नवम्बर के सफल घेराव, १८ नवम्बर को जे. पी. की सभा में उमड़ा अपार जन समुद्र और उसके समक्ष ११ नवम्बर की भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी तथा सत्ता कांग्रेस की नदी-नाले जैसी दोनों रैलियों ने जहां यह सिद्ध कर दिया कि बिहार में कांग्रेस की हुकूमत नहीं बल्कि 'लोक' की व्यवस्था काम कर रही है, वहीं यह भी साफ हो गया कि इस देश में बड़ी-से-बड़ी लोक-शक्ति की अभिव्यक्ति किसी भी कीमत पर सुनने और समझने के लिए न बिहार की सरकार तैयार है और न दिल्ली की।

बिहार विधानसभा का विघटन जनता की मांग है अथवा मात्र कुछ लोगों का राजनैतिक स्वार्थ, यह सरकार अच्छी तरह जानती है। इस आंदोलन के संदर्भ में सूचना और प्रसारण मंत्रालय के अन्तर्गत शोध कार्य करनेवाली एक संस्था इंडियन इंस्टिट्यूट आफ कम्यूनिकेशन द्वारा पटना, मुजफ्फरपुर, गया और मुंगेर जिलों में सामान्य लोगों का सर्वेक्षण किया गया। सर्वेक्षण से पता चला कि ६५.२ प्रतिशत लोग विधायकों को समय से पूर्व वापस बुलाने के अधिकार का समर्थन करते हैं तथा ८१.१ प्रतिशत लोग वर्तमान आंदोलन के पक्ष में हैं। इस रिपोर्ट में यह भी कहा गया कि मात्र ६.९ प्रतिशत लोगों ने इस आंदोलन के विरोध में अपना मत प्रगट किया है।

विधानसभा में फिल्म लेने की छूट

जयप्रकाशजी से बात करने के बाद ही प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने स्पष्ट कर दिया था कि बिहार विधानसभा किसी भी कीमत पर भंग नहीं होगी। सरकार की यह जिद अभी तक बरकरार है और दुनिया को यह दिखाने के लिए कि विधानसभा सामान्य रूप से काम कर रही है उसकी बैठक ४ दिसम्बर से शुरू कर दी गयी। इस सामान्य स्थिति का दर्शन पूरे विश्व को कराने की दृष्टि से ही शायद किसी फोटोग्राफर को विधानसभा में फिल्म लेने की छूट दे दी गयी थी?

विधानसभा के शीतकालीन सत्र ने एक बार पुनः सत्याग्रहियों को धरना और घेराव का मौका दिया। यद्यपि कार्यालय ने सत्याग्रह की पूर्ण योजना प्रकाशित नहीं की, लेकिन

सरकार ने सुरक्षा की पूरी कार्रवाई पहले ही कर ली। बस और बल्ले तो लगे ही हुए थे। जगह-जगह सी०आर०पी० और बी०एस०एफ० की टुकड़ियां पुन. तैनात कर दी गयीं। इस बार के सत्याग्रह में सत्याग्रहियों ने विधान सभा के गेट के साथ-साथ विधायकों के निवास को भी धरना और घेराव का लक्ष्य बनाया। योजना इस प्रकार बनी कि जिस क्षेत्र के सत्याग्रही आयें, उनमें से कुछ अपने क्षेत्र के विधायक को उनके निवास पर ही रोक दें और बाकी लोग विधानसभा के फाटक पर धरना दें। गत ७ जून से चलनेवाले सत्याग्रह में विधानसभा पर धरना देने में कुल लगभग साढ़े तीन हजार लोग गिरफ्तार हुए थे। बिहार सरकार देश को यह दिखाने के लिए कि अब सत्याग्रह में दम नहीं रहा, इस बार कम-से-कम गिरफ्तारियां कर रही है। सत्याग्रह के प्रथम दिन कुल दो सौ पचास लोग पकड़े गये, जिनमें केवल १३५ लोगों को ही जेल भेजा गया। इसी प्रकार ५, ६, ६ तथा १० दिसम्बर को क्रमशः मात्र ७२,७०,५४ और १६ सत्याग्रही ही जेल भेजे गये। इन चार दिनों के सत्याग्रह में पटना—सिंहभूम, सारण, रोहतास, गया, रांची, मुंगेर और भागलपुर के विधायकों का घेराव उनके क्षेत्र की जनता ने किया। बिहार विधानसभा की कुल ३२८ सीटों में अब तक ३८ विधायकों ने इस्तीफे दिये हैं। उनमें संगठन कांग्रेस के ब्रजकिशोरनारायण सिंह और स्वतन्त्र दल के तेजनारायण यादव ने इस्तीफा गत २ दिसम्बर को प्रस्तुत किया।

विधायक के गुण्डों का हमला

इस घेराव और धरना कार्यक्रम में जहां कुछ विधायकों ने सत्याग्रहियों के साथ अभद्र व्यवहार किया वहीं कुछ विधायकों ने सत्याग्रहियों की बातें शान्तिपूर्वक सुनी और इस्तीफे की मांग पर विचार करने का आश्वासन दिया। ५ दिसम्बर को पुनपुन सुरक्षित क्षेत्र के विधायक श्री महावीर पासवान का घेराव जब उनके क्षेत्र के नागरिकों ने किया तो वे विधानसभा नहीं जा सके। जब पुलिस ने सत्याग्रहियों को हटाना चाहा, तो श्री पासवान ने पुलिस को यह कहकर हटा दिया कि ये लोग हमारे क्षेत्र के नागरिक हैं, हम कितने दिन तक पुलिस संरक्षण में रहेंगे। उसी दिन जब एक विधायक श्री भोलाप्रसाद सिंह के यहां सत्याग्रहियों ने धरना दिया तो सिंह के गुंडों ने सत्याग्रहियों पर हमला किया।

घेराव के दौरान पटना सिटी में एक दुःखद घटना घटी। ८ दिसम्बर को पटना सिटी के विधायक जमील अहमद जब सिटी अस्पताल की नवगठित निगरानी समिति की बैठक में भाग लेने पहुंचे, तो छात्रों के दल ने उन्हें घेर लिया और इस्तीफे की मांग की। थोड़ी देर की गरमा-गरमी और धक्का-मुक्की के बाद अहमद ने अपने अंगरक्षक से रिवाल्वर छीनकर गोलियां चला दीं। परिणामस्वरूप पांच छात्र घायल हो गये, जिसमें पटना सिटी छात्र संघर्ष समिति के सदस्य दीपक कुमार की हालत गम्भीर बतायी जाती है। दूसरी ओर सरकारी प्रवक्ता का कहना है कि गोली अहमद के अंगरक्षक ने उस समय चलायी जब कि छात्रों में किसी एक ने हमला करना चाहा। पटना की जनता सरकार के वक्तव्यों को खूब जान चुकी है। वह सही या गलत सरकार के मुंह से नहीं अपनी समझ से पहचानती है। कुछ दिन पहले कांग्रेस अध्यक्ष बरुआ की गाड़ी से जब एक बालक दबकर मर गया था तब सरकार ने बयान दिया था कि वह बरुआ की गाड़ी से नहीं पुलिस की गाड़ी से दबकर मरा। जयप्रकाशजी ने १८ नवम्बर के भाषण में यह रहस्योद्घाटन किया कि पटना के कुछ डाक्टरों पर सरकार की ओर से दबाव डाला गया था कि वे कुछ पुलिसवालों पर चोट की गलत रिपोर्ट दे दें ताकि यह सिद्ध हो सके कि ४ नवम्बर के घेराव में प्रदर्शनकारियों ने भी पुलिस पर आक्रमण किया था। वैसे डाक्टरों ने सरकार के दबाव और प्रलोभन को ईमानदारी और दृढ़ता से अस्वीकार कर दिया। उपर्युक्त दोनों बातें पटना सिटी की ८ दिसम्बर की दुःखद घटना के संदर्भ में सरकार के बयानों की सच्चाई समझने के लिए रास्ता दिखाती हैं। पटना सिटी के नागरिकों ने सही बात समझ ली और दमन के विरोध में ९ दिसम्बर को पूरा बाजार बंद रखा।

जेलों में जगह नहीं

सत्याग्रहियों की पूरी गिरफ्तारी न करके जहां सरकार यह दिखाना चाहती है कि इस बार सत्याग्रही कम संख्या में आ रहे हैं वहीं दूसरी ओर गिरफ्तार सत्याग्रहियों के लिए जेलों में जगह भी नहीं दिखती। इस प्रकार के क्रम में यह अनुभव आया है कि सरकार सत्याग्रहियों को रास्ते से पीटकर भगा देती है अथवा कुछ दूर ले जाकर छोड़ देती है। ४ दिसम्बर को गिरफ्तार कुछ सत्याग्रहियों को बिना भोजन-पानी के रात भर कोतवाली में रखा गया और दूसरे दिन दो बार फुलवारीशरीफ जैल भेजा गया। लेकिन जब फुलवारीशरीफ के जेलर ने जगह के अभाव में उन्हें लेने से इंकार किया तो उन्हें दूसरे दिन शाम को आरा जेल के फाटक पर लगभग तीन घंटे तक बस में बिठाये रखा गया और फिर पूरी बस को छोड़ कर पुलिस सब-इन्सपेक्टर और राइफलधारी सिपाही वहां से गायब हो गये। लगभग ८ बजे तक सभी सत्याग्रही बस से उतरकर दूसरे दिन पुनः घेराव की तैयारी में पटना वापस आ गये।

जून में आयोजित सत्याग्रह में विधानसभा तक सत्याग्रही पहुंच नहीं पाते थे लेकिन इस बार पूरी घेरेबंदी और पर्याप्त पुलिस व्यवस्था के बावजूद अनेक सत्याग्रही विधानसभा के अन्दर घुस गये और मंत्रियों से इस्तीफे की मांग के नारे लगाये।

जहां विधानसभा के बाहर धरने और घेराव कार्यक्रम से लोकशक्ति अपने को संगठित और मजबूत कर रही है वहीं सत्ता अपनी टूट की चरम सीमा पर पहुंच रही है। इसके लिए दमन और बर्बरता तो जिम्मेदार है ही, बिहार के मुख्यमंत्री की अक्लमंदी भी एक हद तक जिम्मेदार है। बिहार के लिए कांग्रेस सरकार जितने दुर्भाग्य की सूचक रही, अब्दुल गफूर जैसा मुख्यमंत्री उतने ही मनोरंजन का पात्र। गफूर साहब अंतर्विरोधी, हल्के और निरर्थक वक्तव्यों के लिए प्रसिद्ध हैं। एक बार उन्होंने विधानसभा में यह कहा था कि जे.पी. को उनके असली मुकाम पर पहुंचा दिया जायगा। इस बार उन्होंने कहा है कि जे.पी. के ऊपर एक मक्खी का बैठना

भी हम बर्दाश्त नहीं करेंगे। विधानसभा का सत्र शुरू होने के दूसरे दिन उन्होंने पत्रकारों को धमकी दी कि वे ठीक-ठीक ढंग से समाचार प्रकाशित नहीं करेंगे (ठीक ढंग क्या होता है यह तो गफूर साहब ही जानें) तो सरकार के लम्बे हाथ उन्हें नहीं छोड़ेंगे। प्रेस की स्वतंत्रता पर इस प्रकार की धमकी और दबाव विधानसभा की गैलरी में बैठे पत्रकार बर्दाश्त नहीं कर सके। वे विधान-सभा और विधान परिषद दोनों से मुख्यमंत्री के वक्तव्य के विरोध में उठकर बाहर चले गये। पत्रकारों ने यह भी निश्चय किया कि विधानसभा की कोई कार्रवाई अखबारों में प्रकाशित नहीं की जायेगी। १० दिसम्बर तक विधानसभा की कोई कार्रवाई अखबारों में प्रकाशित नहीं हुई।

करबन्दी चलती रहेगी

एक तरफ वर्तमान जन-विरोधी सरकार को हटाने के लिए सत्याग्रह चल रहा है दूसरी ओर बिहार के गांव-गांव तक संघर्ष समितियां एवं जनता सरकार के गठन के समाचार भी मिल रहे हैं। इस संदर्भ में अनेक पंचायतों में पंचायत स्तर की जनता सरकार सर्व-सम्मति से गठित कर ली गयी है। जहां-जहां संघर्ष समितियों का गठन और जनता सरकार की स्थापना हो चुकी है वहां-वहां कर-बन्दी अभियान चलाने की योजना बन रही है। इसके अतिरिक्त जगह-जगह से सरकार के विरुद्ध प्रदर्शन, घेराव आदि के समाचार आ रहे हैं। भागलपुर के युवकों ने तो आधे घंटे तक भागलपुर आकाशवाणी केन्द्र को घेर रखा था। चूंकि लड़ाई अब पूरी तरह लम्बी हो गयी है और जयप्रकाशजी ने इंदिराजी की चुनौती स्वीकार कर ली है कि इसका फैसला अगले चुनाव में होगा, इसलिए जनता को संघर्ष के कार्यक्रम द्वारा सतत् जगाये रखने के लिए कर-बंदी अभियान बहुत महत्त्व रखता है। बिहार की जनता ने वर्तमान सरकार को अस्वीकार कर दिया है, लेकिन उसे सत्याग्रह द्वारा हटा नहीं पा रही है। इसलिए भले ही अगले चुनाव तक जनता इस सरकार को न हटा पाये, लेकिन उसे हटाने की मांग, उसके लिए प्रदर्शन, घेराव और उसे आर्थिक दृष्टि से कमजोर करने के लिए कर-बंदी अभियान चलता रहेगा। लड़ाई जितनी लम्बी होगी, जीत उतनी जनता के पक्ष में आयेगी। ❖

❖ देवीशरण 'देवेश'

हरियाणा में जाग रहा छात्र आंदोलन

हरियाणा में छात्र आन्दोलन जे० पी० के समर्थन में आयोजित ४ नवम्बर के बिहार दिवस से शुरू हुआ। *हरियाणा के एकमात्र विश्वविद्यालय के छात्रों ने २७ नवम्बर को जे.पी. को कुरुक्षेत्र बुलाकर संघर्ष बढ़ाया।* जे० पी० के आने से पूर्व छात्र आन्दोलन कुरुक्षेत्र, सोनीपत, करनाल तथा जगाधारी, यमुना नगर के साथ-साथ रोहतक, हिसार में भी फैल चुका था। हरियाणा के मुख्यमंत्री ने करनाल में दिखा ही दिया था कि जब सरकारी लोग जे०पी० पर हमला बोल सकते हैं तो जनसाधारण की क्या हस्ती? अम्बाला क्षेत्र इस आन्दोलन से परे था। नागरिकों के कथनानुसार पिछले आठ वर्षों में कोई आन्दोलन छात्रों ने नहीं किया। इसके कई कारण हैं। पहला यह कि हरियाणा की सरकार का भय इतना है कि नागरिक और छात्र दोनों ही यह हिम्मत नहीं कर पाते कि वे कुछ कह सकें। दूसरे उन्होंने देखा है कि जब बिजली कर्मचारियों ने आन्दोलन किया अपनी मांगों को लेकर तो बंसीलाल ने सख्ती से दबाया तथा नेताओं को जेलों में करारी मार पड़ी। *यही हालत पिछले वर्ष शिक्षकों के आन्दोलन की रही हालांकि उस आन्दोलन में छात्रों का मूक सहयोग तो था ही, कहीं-कहीं खुलकर भी वे आगे आये।* राज्य परिवहन निगम के कर्मचारियों ने जब आन्दोलन किया तो उन्हें भी सख्ती से दबाया गया। राज्य सरकार के कर्मचारी भी भुगत चुके हैं। ऐसी हालत में जहां अलग-अलग सबको सख्ती से निपटा गया, लगता था सभी की कमर झुक चुकी है। भले ही हरियाणा में रिवासा जैसे कांड हुए हों, मगर किसी की हिम्मत नहीं हुई कि जनता के बीच आकर वह सके। जो इक्का दुक्का आगे बढ़ा उसे कुचल डाला गया बेरहमी से हरियाणा के लोकतंत्र में। तीसरे यहां के महाविद्यालयों में छात्र संघ नहीं हैं। जब छात्र मांग करते हैं तो उन्हें छात्रसंघ गठित करने का हक नहीं दिया जाता और यदि किसी दल ने जोरदार मांग की तो सरकारी मदद से प्रधानाचार्य महोदय ने उसे सख्ती से दबा दिया।

हरियाणा विरोध दिवस

जे० पी० के जाने के बाद अम्बाला में एक समाचार छात्रों में फैला कि *बिहार की बहनों ने हरियाणा के छात्रों को उनके पराक्रम के निमित्त चूड़ियां भेजी हैं* और ये चूड़ियां स्थानीय सनातन धर्म कालेज जहां पिछले दिनों जे०पी० विरोधी मोर्चे की गृह-मंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी कर गयी थीं, में भेजी गयी, छात्रसंघ नहीं तो उसका अध्यक्ष भी नहीं है और इससे चूड़ियां छात्रों को नहीं मिल सकीं मगर समाचार कानोंकान कार्यालय से छात्रों तक पहुंच गया। ५ दिसम्बर को कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के छात्रों की मांग पर हरियाणा छात्र संघर्ष समिति के आह्वान पर सारे प्रदेश में (हरियाणा) विरोध दिवस मनाया गया। अम्बाला के छावनी और शहर के छात्रों का कोई संयुक्त संगठन तो था नहीं। छात्र एक दूसरे से मिले, अम्बाला छात्र-युवा संघर्ष समिति का गठन हुआ। सरकारी आदेशों पर ५ दिसम्बर अवकाश का दिन घोषित किया गया।

लाठी-चार्ज और पत्थरबाजी

जानकारी मिली कि हरियाणा के मुख्य-मंत्री अम्बाला में एकदम शान्ति चाहते हैं। अधिकारियों ने अपना काम शुरू किया। कांग्रेस के दोनों गुटों को भी यही आदेश मिला कि जे० पी० विरोधी मोर्चा यदि अम्बाला में सफल होता है तो हम सभी कसूर-वार होंगे। ५ दिसम्बर को संघर्ष समिति ने शहर और छावनी के छात्रों से सम्पर्क कर ६ दिसम्बर से अनिश्चित सत्याग्रह की मांग की। छात्र संघर्ष समिति ने कहा कि हमारा यह आन्दोलन हरियाणा छात्र संघर्ष समिति की मांगों के समर्थन में है। यह पूर्णतया अहिंसक होना था। छात्र जहां कहीं भी हिंसा का पुट देखें तुरन्त पीछे हट जायें। समिति ने

यह भी सूचना दी कि आन्दोलन को शुरू में ही हिंसात्मक बनाने के लिए कुछ लोग छात्रों में घुसपैठ कर तोड़फोड़ करेंगे, इसलिए छात्र अधिक सावधानी बरतें। छात्रों ने छावनी के दो कालेजों के बाहर हाथ से लिखे पोस्टर लगाये, रात में, सुबह ६ बजे से पूर्व एक कालेज के प्रधानाचार्य तथा एक प्रोफेसर महोदय को पोस्टर उतारते देखा गया। ६ दिसम्बर को अम्बाला नगर और छावनी दोनों में पूर्ण हड़ताल रही। छावनी में गांधी मेमोरियल नेशनल कालेज के बाहर छात्रों पर हल्का लाठीचार्ज किया गया, वहां से छात्र आर्य कन्या महाविद्यालय गये और बहनों को साथ लेकर रायबाजार में जुलूस 'जय प्रकाश नारायण जिन्दाबाद' के नारे लगाता हुआ आगे बढ़ा। मांगों के समर्थन में तथा 'छात्र एकता जिन्दाबाद' के नारों के साथ-साथ 'हाथ हमारा नहीं उठेगा हमला चाहे जैसा भी हो' का नारा भी गूंजता रहा। जुलूस में कोई रिकार्ड नहीं था। चार-पांच हजार छात्रों का यह जुलूस जब विजय चौक से सदर बाजार की ओर चला तो छात्र नेताओं के कथनानुसार उन्हें चौक से पहले ही रोका गया और यह जुलूस एक ओर सड़क से फरूवा खालसा कन्या विद्यालय होता हुआ खालसा स्कूल पहुंचा। वहां स्कूल के बच्चे बाहर आ गये।

खादी आयोग के दफ्तर के नजदीक इस स्कूल के पास हरियाणा पुलिस ने लाठी चार्ज किया। शान्त जुलूस जो सिर्फ नारे लगा रहा था उस पर लाठीचार्ज ही नहीं वहां तैनात रिवाल्वरधारी अधिकारियों को पत्थर चलाते भी लोगों ने देखा। छात्रों की ओर से भी पत्थरबाजी हुई। इसी बीच एक छात्र अधिकारियों के पास गया और कहा "आप स्टूडेन्ट को क्यों भड़का रहे हैं अभी सौदागर बाजार की आग ठंडी नहीं हुई है (पिछले दिनों आग की घटना से सौदागर बाजार अम्बाला छावनी में बहुत हानि हुई थी) यह सब बन्द कीजिये, शान्ति से जुलूस निकालने दीजिये।" अधिकारियों ने समझ से काम लिया और हरियाणा पुलिस को बीस कदम पीछे चलने को कहा गया।

हर कीमत पर शांति

जुलूस जब विजय चौक पहुंचा तो वहां एक छात्र ने छात्रों को सम्बोधित करते हुए कहा "भाइयो, यह जो घटना अभी घटी उसे भूल जाइये। छात्रों ने जो पत्थर फेंके उससे स्कूल का भी नुकसान हुआ। हम ऐसा कोई काम नहीं करें जिससे हमारे आन्दोलन में हिंसा भड़के। अभी यहां से नगर के मुख्य बाजार में जायेंगे। शान्ति हर कीमत पर बनाये रखें। हो सकता है तोड़फोड़ करने वाले हमारे बीच हों। सावधान रहें।" जुलूस आगे बढ़ा। सदर बाजार तथा नगर के हिस्सों से होकर पुनः सनातन धर्म कालेज की ओर जाकर समाप्त हुआ।

फिर कहीं कोई पोस्टर नहीं

छात्र संघर्ष समिति ने उसी दिन अपने वक्तव्य में छात्रों से मांग की कि वे शांतिपूर्ण तरीके अपनाकर ही अपने उद्देश्य प्राप्त करें। *समिति की बैठक में यह भी तय किया* गया कि प्रधानाचार्य और प्रोफेसर जब हमारे पोस्टर उतारते हैं तो उन्हें स्पष्ट होता है कि ऐसा कार्य छोड़ें जिसमें गुरुओं को कष्ट हो तथा गुरु-शिष्य सम्बन्ध बिगड़ें। आन्दोलन तो नित नये दिन में प्रवेश कर रहा है लेकिन इस बात के गवाह न केवल गुरुजन वरन अम्बाला के नागरिक भी हैं कि कोई पोस्टर फिर कहीं नहीं लगाया गया। आन्दोलन ने जड़ पकड़ी, हरियाणा की सरकार ने सख्त आदेश भेजे कि १० दिसम्बर से प्रारम्भ होनेवाली परीक्षाएं हर हालत में हों। अम्बाला के उप-आयुक्त ने प्रधानाचार्यों को हरियाणा पुलिस की पूरी-पूरी मदद का भरोसा भी दिलाया।

कालेज के प्रधानाचार्यों ने प्राध्यापकों को काम सौंपा कि छात्र अन्दर आकर बाहर न जाने पायें। सी पी आई समर्थक प्राध्यापकों ने इसमें पूर्ण सहयोग दिया। *कुछ अन्य भी साथ रहे। परीक्षा के दिन १० दिसम्बर* को अम्बाला छावनी में *सनातन धर्म कालेज* और गांधी मेमोरियल *नेशनल कालेज, दोनों* में पुलिस की गाड़ियां पहले से ही खड़ी मिलीं। बाहर में भी यही हाल था। नगर में पुलिस टुकड़ियां गश्त दे रही थीं।

लोहे का दरवाजा बंद

सनातन धर्म कालेज के छात्रों के अनुसार छात्र-छात्राएं परीक्षा भवन में गये, पर्चे लिये और तभी 'छात्र एकता जिन्दाबाद' के नारे लगे। 'जयप्रकाशनारायण जिन्दाबाद' के नारे भी लगे। छात्रों ने एक दूसरे के प्रश्न-पत्र फाड़ दिये और बाहर निकल आये। हरियाणा पुलिस के ७५ जवान हाथों में शील्ड तथा लाठियां लिये लोहे के मेन गेट के अन्दर थे। बिना किसी हिंसात्मक वारदात के हुए वे अन्दर पहले से ही बैठे थे। लोहे का दरवाजा बन्द था। जब सभी कमरों में छात्र आने लगे तथा बाहर के छात्र भी दीवार कूद कर अंदर आने लगे तब पुलिस ने बर्बरतापूर्ण लाठीचार्ज किया। अध्यापक भी यह तमाशा देखते रहे। विद्यालय में छात्र इधर उधर भागे, दीवार कूद कर बाहर गये क्योंकि मुख्य दरवाजा पहले से ही बन्द था। कुछ छात्रों को इधर-उधर पत्थर मिले तो जवाब में पुलिस पर फेंकने लगे। बाहर पहले से ही सौ-डेढ़-सौ *पुलिस के जवान बैठे थे। उन्होंने बाहर जाने*वाले छात्रों की जमकर पिटाई की। एक छात्र को जो अन्य महाविद्यालय में बैठा था उसे विद्यालय के होस्टल से खींचकर लाया गया और लाठियों से बेरहमी से मारा गया। उसे बाद में पुलिस गाड़ी में बैठा दिया गया। छात्र बाहर निकले और जुलूस की शक्ल में गांधी मेमोरियल नेशनल कालेज की ओर बढ़ चले। अधिक घायल छात्रों को उपचार के लिए ले जाया गया। छात्रों के अनुसार ७-८ छात्रों को पुलिस ने पकड़ा। उनमें से ३ छात्रों को प्रधानाचार्य महोदय ने विद्यालय के बाहर ही छुड़ा लिया। शेष ४ छात्र थाने ले जाये गये।

जनता में रोष

गांधी मेमोरियल कालेज में भारी मात्रा में पुलिस थी, अतः छात्रों को खदेड़ दिया गया। सनातन धर्म कालेज में शांतिपूर्ण आन्दोलन चला रहे छात्रों पर लाठीचार्ज किये जाने *पर जनता में भी रोष बढ़ा, प्राध्यापकों ने भी एक गुप्त सभा की। प्रधानाचार्य ने फिर छात्रों को छुड़वा दिया।*

छात्र संघर्ष समिति का कहना है कि सनातन धर्म कालेज में पहले से ही पुलिस को बिठा कर रखना तथा मुख्य लोहे के दरवाजे का ताला लगा देना और नारे लगा रहे छात्रों

पर बिना चेतावनी के लाठी चार्ज करना बर्बरतापूर्ण व्यवहार है। साथ ही कालेज के प्रधानाचार्य तथा उप-आयुक्त अम्बाला पर छात्रों पर नियोजित आक्रमण भी है। पुलिस के साथ जो अधिकारी वहां थे न तो उनके पास माइक था और न ही उन्होंने छात्रों को लाठी-चार्ज की कोई चेतावनी दी। हरियाणा के मुख्य मन्त्री का सख्त आदेश जो था कि भले ही यह आंदोलन शांतिपूर्ण रहे मगर छात्रों को कुचल डालो।

पूर्ण हड़ताल

छात्रों ने फिर भी संयम से काम लिया। उनका आंदोलन आज भी शांतिपूर्वक जारी है। अम्बाला शहर छावनी के एक, विद्यालय को छोड़कर सभी में पूर्ण हड़ताल रही। छात्रों ने पुलिस हिंसा के बाद शहर में जुलूस इसलिए नहीं निकाला कि नगर में यदि हिंसा और तोड़फोड़ की शुरुआत कुछ तत्व कर देंगे तो अपनी ही हानि होगी। शहर में ऐसे तत्व माने जा रहे हैं जो जे. पी. के आंदोलन के विरोधी हैं। वैसे नगर के व्यापार मंडलों, शिक्षकों, वकीलों आदि सभी ने तय किया था कि यदि छात्र आम हड़ताल की मांग करेंगे तो बाजार आदि सब बन्द हो जायेगा।

इसे जे. पी. के आंदोलन की हरियाणा में भी शुरुआत कहें या परीक्षा बलपूर्वक करवाने की सरकार की जिद को चुनौती, इसमें संशय नहीं है कि राज्य में छात्र-जागरण की नयी लहर आयुकों है और उन्हें ताकत के बल पर दबाने की कोशिश की गयी तो परिस्थिति काबू के बाहर हो सकती है। ❖

सुरेश ठाकरान

जनता का भी दिमाग फिर आया है क्या?

अटरम सटरम सब घट रहा है। करना-धरना कुछ रह नहीं गया है। जनता का आन्दोलन इसे नहीं माना जा रहा। जन-समूह का उत्तर दहशत पहुंचानेवाली रैलियां दे रही हैं। सरकार का ३२ प्रतिशत जन देश की सम्पूर्ण हिमा का स्वामी है—६८ को फिर आगामी से कुछ क्यों करने दे। जिस पर यह लोकतांत्रिक देश है। विरोधी दल जे.पी. में सिमट आये हैं। कुछ भी करने को तैयार हैं। सत्ता के लिए हायतोबा उनका जीवन है। अवसर वे खोने देना नहीं चाहते। गद्दी को लेकर वे संघर्ष में हैं और रहेंगे। जे. पी. चाहें भी तो वे उनसे अलग नहीं होंगे। देश-हित में साथ देनेवाले को जे. पी भी अलग नहीं करेंगे चाहे सत्तारूढ दल उन्हें शुद्ध राजनीतिक मानें अथवा कि नहीं। जे. पी. के व्यक्तित्व के कारण ही अब उनकी बन आयी है। चरणसिंह, वाजपेयी-आडवानी आदि ने लंगोट कसे हैं। 'विधान-सभा भंग करो', 'नहीं करेंगे' का मुद्दा पुराना पड़ता जा रहा है। वहां उसके न होते आन्दोलन धीमा पड़ आया था, श्रीमती इंदिरा गांधी की चुनाव की चुनौती से अब कुछ गति पकड़ गया है। संसद भवन हमारी भेड़ों का बाड़ा बना है। सोक है। शोक है। आन्दोलन को समाप्त करने के लिए धमकाने से लेकर गोली तक चली है। "हूं! हम देखेंगे, आने दो समय" वाली बंदर-घुड़की अब खूब उभार पर आयी है। चुनाव की चुनौती है और जे पी को स्वीकार है। तलवार है और उसकी धार साफ चमक रही है। चुनाव तक आन्दोलन घसीटा गया है। तख्तर शायद इसीलिए छोड़े गये हैं, वक्त पड़े काम आ सकें। 'मीसा' को लेकर संविधान में हेर-फेर-बदल का तोहफा उन्हें दिया गया है। राष्ट्रपति का स्वर्णपदक कहें तो अधिक ठीक। 'सब कीजिए' वाली भाषा का प्रयोग एक लोकतान्त्रिक देश की प्रधान मन्त्री कर रही हैं। गांधी का देश 'लोकतान्त्रिक' माना भी गया है। पर सत्तारूढ दल पूछे अपने से, कहां तक पूजा है उस लंगोटीवाले को? आजादी में जन दिवाना था और बूढ़ा नंगी धरती पर अपने पांव फोड़ रहा था। बेताब था दिल उसका उस दिन भी।

वाह री सरकार

जे. पी का कहना था और है कि मेरा आंदोलन भ्रष्टाचार के खिलाफ है। सरकार ने खबर छापी, हम भी यही चाहते हैं। दोनों टिप्पणियों से आन्दोलन समाप्त होना चाहिए। सरकार को जे. पी. की बात सुननी चाहिए। सहयोग का हाथ बढ़ना चाहिए। ६० मिनट तक बात सुनी भी लेकिन दलहित में शायद न रही। ६० मिनट में सरकार ने भ्रष्टाचार समाप्त न करने का फैसला जे. पी. और जनता को सुना दिया। कहा, आप जो करें, करें। न विधान-सभा भंग होगी, न आप की सुनी जायेगी। आप प्रतिक्रियावादी हैं। केवल विरोधी हैं। बातचीत के दरवाजे फिर भी खुले है। फिर अंदर बैठी मूर्ति का क्या कीजियेगा? राष्ट्रपति के अध्यादेश को क्या कहें? या ये मानूं कि बर्नीस साहब को आफिस से बाहर करके अच्छा किया? सरकार भ्रष्टाचार टिकाये है। डाकू टिके हैं, पुलिस टिकाये है। व्यवस्था का प्रश्न है भाई, वरना पुलिस को रोटी कौन देगा?

भ्रष्ट बसी भ्रष्ट स्वर

बचपन में मां से छिपकर सेव छिपा लिया। मां को स्थिति का ज्ञान हो गया। बोलीं, सेव कहां है? मैंने कहा नहीं है। एक तो दोष दूसरा झूठ, तीसरे मैं सहमा था। दोषी जो था। मां ने सेव मेरे ही सामने निकाल दिया। पूछा, यह क्या है? मैं सहमा था लेकिन फिर भी कह दिया ये तो जो आप लायी थीं, वह है। स्थिति यही है। मुख्य मंत्री महोदय ने कहा जे. पी. यहां आयें, स्वागत होगा। गांवों में जायें और देखें क्या वे यहां आन्दोलन उपजा सकते हैं। वाह साहब, दोषी हैं, सेव छिपा है। झूठ आप बोल रहे हैं और सहमे हैं। फिर भी कह रहे हैं 'सेव' नहीं है। सुना गया है कि बंसीलालजी ने छात्रों को धमकाया है कि आन्दोलन में भाग लेनेवाले किसी भी छात्र को सरकार नौकरी नहीं देगी। जो हैं निकाल दिये जायेंगे। जे. पी. यहां गये। कुछ भाग लेनेवालों को पहले से ही सीखचों में बन्द किया गया था। कार का घेराव हुआ। स्वागत का यही तरीका अपनाया जाता है क्या? एक ओर चुनौती दूसरी ओर सीधी कार्रवाई? 'मुख्यमन्त्री' के खिलाफ ११७ संसदसदस्यों ने याचिका दी है, अब तक। कार्रवाई करनेवालों को साफ दिखता है कि बंसीलालजी ने प्रधान मंत्री के पुत्र को जमीन दी है। केवल एक ही तो इंजीनियर है हमारे देश में, 'संजय'। शेष देश में रहते हैं तो पानी का लेते हैं, बेकार

है। भूख ने उन्हें सिर्फ रोटी के लिए दिमाग लड़ाने पर मजबूर किया है। दर-दर की ठोकरें शायद हमारे बरुआ साहब ने नहीं खायी हैं। वरना ऐसे शब्दों का प्रयोग वे एक जन-नेता के लिए नहीं करते। देश की हालत पर वे यदि बौरा रहे हैं तो इसमें उनका क्या दोष ? राजनीतिक वेश ही ऐसा है। नीतियाँ ही ऐसी हैं।

भ्रष्टाचार के हरियाणा में बहुत से उदाहरण हैं। रिवासा काण्ड से और बरनाला काण्ड से सब परिचित हैं। जो 'है' उसे 'नहीं है' कहा जा रहा है। यदि स्थिति यह नहीं तो जे. पी. की कार पर हमला क्यों किया गया ? प्रेस-फोटोग्राफर रघुराय का सर क्यों फोड़ा गया ? कुरुक्षेत्र के छात्र नेताओं को गिरफ्तार करने का क्या औचित्य ? बसी की बसी चाहे कैसे भी बजे, हमारी प्रधानमंत्री को वह स्वर भा रहा है।

हम कहां जा रहे हैं

सिक्का किसी भी देश की 'गुडविल' होता है। रुपये की कीमत चार पैसे रही है। नैतिक और धार्मिक क्षेत्र में भी विश्व में भारत का कोई स्थान नहीं। गांधी को लेकर हम उनसे मिलते हैं। गांधी, जिसको दुनिया ने तो स्वीकार किया है, हमारे देश की राजनीति ने उसे समाप्त किया है। इस संदर्भ में हमें विश्व कभी स्वीकार कर भी नहीं सकता। खासकर आधुनिक भारत को। दिशाहीन है भारत, नीतिहीन है भारत। यह आश्रित है। उधार पर जीता है। अर्थनीतियां विश्व के कूड़े से उठायी गयी हैं। हमारी जनसंख्या हमारे लिए ही भयावह हो आयी है। ये स्थिति खतरनाक है।

पत्रकारिता पर मुक्का है। वर्गीस साहब ने शायद गलती की है। राजनीतिक होते तो ये नौबत न आती। अर्थ अनेक हैं। और उसमें अपने देश का ध्यान नहीं रखा जा रहा। एक समस्या उठी थी बांगला देश की। प्रधान मंत्री ने कहा, "शरण देना हमारी परम्परा है।" इस परम्परा के कारण अब तक सीमा पार के रहे रोज २ करोड़ रुपया खर्च हुआ। परम्परा निभाने की सीमा है। देश में तो सुनता हूं एक मां ने अपने बच्चे को ५ रुपये में भूख के कारण बेच दिया। एक मां ने बच्चे को खा लिया। वीभत्स काण्ड है। समाधान कहां है ? हमारी सरकार इस पर भी राज्य करने का दावा करती है। रोजमर्रा की चीजों की जरूरत जिस देश की अर्थव्यवस्था पैदा नहीं कर सकती, जिस देश के राजनीतिज्ञों का अन्तिम भरोसा हथियारों हो आया हो, जिस देश का बचपन टूट गया हो, उस देश पर राज्य करनेवालों को क्या कहा जाये, शब्दों के लिए शब्द नहीं हैं।

सब 'रेणु' नहीं

अनेक मुद्दे हैं। उन पर भाषा बढ़ायी जा सकती है। कुन है कि समाजवाद कांग्रेस को कभी अपना नहीं बना सकेगा। गांधी से कुछ मिल सकता था, मिला है। उसमें खतरा है उस खतरे को सरकार खूब जानती है, समझती है। गांधी से ली गयी सत्ता सेवा मांगती है, जनसेवा। वह सेवक मांगती है, 'नेता-सेवक' चाहती है। आज उलट है, पुलट है, सुलट कुछ नहीं है। सेवक जनता को बनाया गया है। सन ७० में लालकिले पर प्रधानमंत्री श्रीमती गांधी ने कहा, 'इस दिन हम उसके सेवक से मिलते हैं।' अहोभाग्य ! मैं समझा था कि शासक को अपने सेवक होने का भान हुआ। लेकिन 71 आते-आते वह सब हवा हो गया। राजनीतिज्ञ के कहे शब्द जो तनिक भी लगोटीवाले के पास के होकर नहीं थे क्यों न खोखा-पट्टी होते। बुद्धि ने श्रम पर राज्य किया है। परिणाम सामने है। तड़प सामने है। बुद्धि भी आज चकित है। समस्याएं दो और थीं। गद्दी का मोह नहीं छूटा, चारों ओर हो आयीं। आस्था डग-मगा आयी है। ऐसे में भाग्य से एक सत्यनिष्ठ व्यक्ति उठा है तो उसका सत तोड़ने को यह आतुर हैं। अवसर मिला तो बाज नहीं आये। धमकियां दी जाती हैं। योजना क्रियान्वित करके कहा जाता है, 'अच्छा ऐसा हुआ ! अगर ऐसा हुआ तो हम माफी मांगते हैं।' मार दीजिये डन्डा, मांग लीजिये माफी। दण्ड-दमन के देश में यह चलता है। राष्ट्रपिता ने कहा था 'मैं भारत को आजाद तब मानूंगा जब इस देश का मजदूर गद्दी पर बैठेगा।' उनकी समाधि है। पास ही संग्रहालय है। पुस्तकें हैं। सुन्दर बाईडिंग में ये शब्द धरे हैं। 'राष्ट्रपिता' 'महात्मा' कहा तो है। इससे अधिक और क्या चाहिये यह कहकर बरी हुए हैं। यही लिबास है—भले आज कुछ खास है। भाषण है। कीड़े-वाला राशन है। त्यौहार पर एक मुट्ठी भीख-मंगों की तरह झोली में डाल दिया जाता है। गम्भीर देश की हालत है। घोर आर्थिक विष्य हैं। अब जन सतुष्ट नहीं। माथ आया बुद्धिवादी ताकत से सहमा है। सब 'रेणु' नहीं सब नागार्जुन नहीं। जिसके पास जो है, सीधे सत्ता से प्राप्त है। छोड़ने में ताकत चाहिए।

शब्दों नहीं अर्पण की आवश्यकता

कहूं कि लोकतन्त्र की सफलता तब है जब लोक-प्रतिनिधि जन से लोक से अलग-थलग न हो। ललकारों में कहीं हल नहीं। राज्य जन पर भारी न बने। हिंसा से उपजी गयी समस्याओं का समाधान अहिंसा में है। लम्बा जाने से भला है, छोटे और सही पर जायें। चुनौतियों, चेतावनियों का देश इसे नहीं बनने देना है, न बनाना है। अपने ही घर में उन प्रश्नों पर जिन पर हम सब चाहते हैं, मुलभें क्यों राजनीति की छड़ी पर नचाया जा रहा है ?

अभी-अभी सुनता हूं सुचेताजी गयीं। राष्ट्रपति ने शोक संदेश में कहा है, 'देश ने एक बेशकीमती स्वतंत्रता सेनानी खो दिया है।' सुचेता जी जे. पी. आंदोलन में भी सक्रिय भाग ले रही थीं। राष्ट्रपति के शोक-सदेश पर क्या कहूं ? एक स्वतंत्रता-सेनानी को अन्य संग्राम की क्या आवश्यकता हुई ? यहां शब्दों की आवश्यकता नहीं थी, अर्पण की आवश्यकता है। शब्दों की घट-बढ़ और काल की बात नहीं, क्या कहा गया यह महत्वपूर्ण और सर्वोपरि है।

सत्याग्रहात्मक आंदोलन जरूरी

जनता के पास सदा से कुछ नहीं रहा। वह शब्द से जनता है और जन उसके पास है मात्र। दण्ड-दमन राज्य की प्रक्रिया रही है। जनता के पास है जो, प्रकट होने पर उसे गलत भाषा में बाधा जाता है। उसे आतंक, उपद्रव, ईंट-रोड़ा, छापामार दस्ते की संज्ञा दी जाती है। उपद्रव पर दण्ड दिया जा सकता

है। इसलिए इसे उपद्रव मानते हैं। सत्ता तो यही मानती है। दण्ड का प्रयोग करने हेतु उसे मुद्दा चाहिए। जनता हृदय की बात तभी कहती है जब उसके पैर में शूल चुभता है। कोई जनसमूह नहीं जो अपने 'नेता' को नीचे बुलाये, अपने देश में कोई सकट चाहे। ये विकट परिस्थितियां हैं, जो कुछ कर रही हैं। हमारे एक मुख्य मंत्री ने कहा है, 'जे.पी. का दिमाग खराब हो आया है।' मैं पूछता हू जनता का भी दिमाग फिर आया है क्या? आप इसे तर्क मानते हैं—मैं इसमें कोई त्रुटि नहीं देखता। एक दल होता है, कई अन्य दल भी होते हैं। जो सत्ताधारी नहीं हैं, जनता के पक्षधर हैं। जनता की चूचू वे सुनते हैं। संसद में उनकी आवाज नक्कारखाने में तूती के बराबर हो जाती है तो जनता असहाय हो जाती है। यथास्थिति से समझौता करना कायरता है। लोकनायक उसे मिले हैं। आदमी को पैर का आभास तब होता है जब उसमें दर्द होता है। हाथ लिखता रहता है, उसका 'हाथ' होने का ज्ञान तब होता है जब उसमें हाथ के होने जैसी घटना घट जाती है। कांटा गड़ा है। लग आया हाथ है, पैर हैं।

इस प्रकार की व्यथा की लहर को कोई रैली कोई व्यक्तित्व कोई उपदेश नहीं रोक सकता। इतिहास की साक्षी मुझे नहीं देनी। मैं प्रत्यक्ष देखता हू जलते हुए बिहार को। शस्त्र-बल के सामने आत्मबल ने 'सरेन्डर' कभी नहीं किया। राम विजयी हुए हैं, कृष्ण विजयी हुए हैं, ईसा विजयी हुए हैं। मैं सत्याग्रह की कहता हू, असहयोग की कहता हू। रात की कालिमा की नहीं दिन की लालिमा की बात करता हू। सत्याग्रह जिसमें हृदय परिवर्तन है। मजबूरी जैसा उसके पास कुछ नहीं है। लग आता है कि ये हमारा देश है। कोई आदेश नहीं है।

हम जनता में है

जे. पी. कोई आतंक नहीं हैं। जनता कोई आतंक नहीं है। वे केवल आत्मबल जगाना चाहते हैं, जिससे यदि सत्ता को डर दीखना है तो दीखे। उनको बजाय आंदोलन को दबाने के यह लग आना चाहिए कि जनता भूखी है, नंगी है, व्याकुल है, भ्रष्टाचार है, जमाखोरी है। यह लगना है कि इतना आत्मबल कहां से आया? सरकार अर्थ समझे, जन की शक्ति को समझे। ये आतंक नहीं जिसमें वह दण्ड पर उतर आयी है। ये सत्याग्रह है। रैलियों में देश चल नहीं सकता। वह 27 साल का बूढ़ा बना है। सेवक बनें। बुद्धि को चौंकायें नहीं। किराये पर न जायें, उधार पर न जीयें, आयें, जनता से हाथ मिलायें। हाथ मिलाने का समय केवल चुनाव नहीं है। मरना है मारना नहीं है। गृह युद्ध की स्थिति कैसी बन जा सकती है, सोचें, समझें। नरौरा में कोई हल नहीं, हल जनता में है। खायें नहीं, खिलायें। हंसे नहीं, हंसायें। जान लेना है कि 57 करोड़ का भार है।

○

समाचार

"गुजरात के तरुणों ने प्रचलित राजनीति को एक झटका दिया। बिहार का आन्दोलन कुछ मुद्दों को लेकर शुरू हुआ और लोकनायक जयप्रकाश के नेतृत्व ने उसे सम्पूर्ण क्रान्ति का स्वरूप दिया। अब उत्तरप्रदेश का आन्दोलन कुछ सतही मांगों को लेकर नहीं सम्पूर्ण क्रान्ति के संघर्ष से ही शुरू होगा। क्रान्ति का लक्ष्य जितना ऊंचा होता है उसकी तैयारी भी उतनी गहरी होनी चाहिए। अच्छी तैयारी के बाद उत्तरप्रदेश में संघर्ष छिड़ेगा तो वह दिल्ली और देश की राजनीति को बदल देगा। यथास्थितिवादी व्यवस्था के परिवर्तन के इस आन्दोलन को तरुणों और नागरिकों की क्रान्तिकारी शक्ति की अपेक्षा है। कानपुर अपनी क्रान्तिकारी परम्परा के अनुसार समर्पित कार्यकर्ताओं के द्वारा प्रदेश भर को बल देगा, ऐसा हमारा विश्वास है।" इन शब्दों में उत्तरप्रदेश सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष तथा उत्तरप्रदेश संघर्ष समन्वय समिति के संयोजक महावीर-सिंह भाई ने गत १६ दिसम्बर गुरुवार को डी० ए० वी० कालेज हाल में जनसंघर्ष समिति तथा छात्र युवा संघर्ष समिति की कार्यकर्ता-गोष्ठी को सम्बोधित किया। सभा में सभी गैर साम्यवादी विरोधी दलों के प्रतिनिधियों, सर्वोदय और सामाजिक कार्यकर्ता तथा डी० ए० वी० कालेज, वी० एस० डी० कालेज और क्राइस्ट चर्च कालेज के छात्र नेताओं ने भाग लिया।

महावीर भाई ने बताया कि उत्तरप्रदेश के संघर्ष के लिए तैयार सभी संगठनों ने गत १८ दिसम्बर ७४ को लखनऊ में हुई बैठक में प्रतिनिधित्व किया है और काशी में कार्यक्रम और सीधी कार्रवाई के मुद्दों पर आन्दोलन छेड़ने की पूरी तैयारी बतायी है। दूसरी ओर शासन व्यवस्था ने भी आन्दोलन को जन्म से पहले ही मार डालने की नाकामयाब कोशिशें शुरू कर दी हैं। हमें इस चुनौती का उत्तर देना है। कोई भी क्रान्ति बिना कुरबानी के नहीं होती है। इसके लिए प्रदेश में एक हजार समर्पित कार्यकर्ता चाहिए। तो जनता का सहयोग, बुद्धिजीवियों का समर्थन, तथा सहकारी शक्तियों का बल उन्हें मिलेगा ही। हम जो बुनियादी क्रान्ति करना चाहते हैं उसमें छुआछूत, साम्प्रदायिकता, शोषण को स्थान नहीं मिलेगा।

मधु बहन के गीत के बाद वरिष्ठ सर्वोदय कार्यकर्ता एम० जी० वर्मा की अध्यक्षता में सभा प्रारम्भ हुई। विनय भाई ने अतिथि का परिचय देते हुए उन्हें उपस्थित कार्यकर्ताओं तथा कानपुर में आन्दोलन की भूमिका का परिचय दिया। सभा को रेवतीरमन रस्तोगी (अध्यक्ष-भारतीय जनसंघ), रामचरण भारतीय (अध्यक्ष संगठन कांग्रेस), रघुनाथसिंह (मंत्री भारतीय लोकदल) तथा राणा प्रताप-सिंह (छात्र युवा संघर्ष समिति) ने अपने-अपने संगठनों की ओर से संघर्ष में जुटने का आश्वासन दिया। एम० के० शर्मा, एडवोकेट, हरेन्द्रसिंह आदि ने आन्दोलन के समर्थन में अपने विचार रखे।

वार्षिक शुल्क—१२ रु० विदेश ३० रु० या ३५ शिलिंग या ५ डालर, एक अंक का मूल्य ३० पैसे।
प्रभाष जोशी द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं ए० जे० प्रिंटर्स, नई दिल्ली-१ में मुद्रित।

सर्व सेवा संघ का साप्ताहिक मुख पत्र
नई दिल्ली, सोमवार, ६ जनवरी '७५

कुरुक्षेत्र कहां होगा, किसे पता ?

मेरे दोस्त
मत पूछ कि क्या है लोकतन्त्र !
मैं बता नहीं पाऊंगा
क्योंकि जानता हूं
इतना कटु है यह
कि तू बर्दाश्त नहीं कर पायेगा
और मूल्यों के विघटन में दुखी हो
बार-बार पछतायेगा।
लोकतन्त्र पूंजीवाद से बना है
इसमें गरीब-गरीब होता है
अमीर-अमीर ही होता जाता है,
लोकतन्त्री शासन
होता है दुर्योधन
जो खींचता रहता है द्रौपदी की साड़ी
अनवरत
द्रौपदी लाचार हो देखती रहती है
पांचों पतियों को,
वैसे ही सामन्तवाद
भारत में पूंजीवाद का ही पर्याय है
महाभारत के महायुद्ध में
खप गये हैं सभी महारथी
कुरुक्षेत्र
इस बार कहां होगा
किसे पता,
लेकिन महायुद्ध की आग में
सारी परिभाषायें
मिलेंगी नयी शक्लें
तैयार रहो !
नवजीवन पथ

अमृतलाल नाणावटी

चरखासेवक नारणदास भाई

२६ नवम्बर १९७४ शुक्रवारको कार्तिक पूर्णिमाके दिन नारणदासभाई गांधीका राजकोट में ८६ वर्षकी उम्रमें देहान्त हो गया और महात्मा गांधीके विशाल परिवारमें एक महत्व के व्यक्तिका स्थान खाली हो गया जिसे भरना आसान नहीं होगा।

गांधीजीके चचेरे बड़े भाई खुशालचन्द गांधीने अपने चारों बेटे गांधीजी को सौंप दिये और वे कृतार्थ हुए। इन चार पुत्रोंमेंसे छगनलाल गांधी और मगनलाल गांधी तो ठेठ दक्षिण अफरीकामें गांधीजी के साथ थे। गांधीजी जब सन १९१५ में भारत लौटे और बादमें जब साबरमतीमें उन्होंने सत्याग्रहाश्रमकी स्थापना की तो उस आश्रमके प्रथम व्यवस्थापक मगनलाल गांधी थे। उस समय नारणदासभाई निजी व्यवसाय में थे। बादमें वे भी आश्रममें सहकुटुम्ब आ गये। जमनादास आश्रममें आते-जाते रहे परन्तु अधिकतर वे राजकोटमें ही रहते थे। मगनलालभाई गांधीके देहान्तके बाद आश्रमके व्यवस्थापक कुछ दिनोंके लिए छगनलाल जोशी रहे और बादमें अन्त तक याने गांधीजीने जब सत्याग्रहाश्रमका विसर्जन किया तब तक नारणदासभाई उसके व्यवस्थापक रहे।

सन १९३० में गांधीजीने आश्रमसे दांडी-कूच करके नमक सत्याग्रह किया था। उन्होंने सन १९३३ में आश्रमसे दूसरा कूच रास-कूच (खेड़ा जिलेमें रास गांवके लिए कूच) निकाला था। बापूको तो पहले ही गिरफ्तार कर लिया गया था लेकिन आश्रमवासियोंको साबरमती आश्रमसे कुछ कदम दूर चन्द्रभागाके पुल पर गिरफ्तार किया गया। आश्रमवासियोंके इस कूचमें बापूने मुझे भी शामिल किया था। हमें १-८-३३ को छः महीनेकी सख्त कैदकी सजा हुई और हम २१-८-३३ तक साबरमती जेलमें रहे और बादमें हमारी बदली नासिक जेल हुई। हम ग्यारह थे और हमें हास्पिटलके एक वार्डमें रखा गया था। मेरे बिस्तर की दाहिनी ओर नारणदासभाई का बिस्तर था और बायीं ओर लक्ष्मीदासभाई पुरुषोत्तम आसर का। पंडितजी नारायणराव मोरेश्वर खरे, बालजीभाई, पानेकरजी, चित्रेजी, बाल कालेलकर, श्री रामुलु (जिन्होंने अलग आंध्रके लिए बादमें आमरण उपवास किया) टिलकमजी, शनाभाई सब आश्रमवासी थे। हमारे साथ कारवार-धारवाडके श्री जोआकिम आलवा बारहवें कैदी थे। हमारा वार्ड बिलकुल अलग था और छ महीने हमने साथ-साथ आश्रम-जीवन बड़े आनन्दसे बिताया। जेलके दूसरे किसी राजनैतिक या अन्य कैदीके हमें दर्शन नहीं हुए। मैं और बाल १९३४में सबसे पहले छूटे।

मैं बम्बई, सूरत होते हुए सीधा अहमदाबाद पहुंचा और काकासाहेबसे मिला। विद्यापीठ तो सरकारके कब्जेमें था। एक सोसायटीमें किसीकी कोठी पर काकासाहेब ठहरे थे और दूसरे दिन गिरफ्तार होनेकी तैयारी कर रहे थे। मैंने भी तैयारी बतायी। मेरे साथ नारणदासभाईका छोटा पुत्र कनु था जिसकी उम्र उस समय १४ के आसपास थी। काकासाहेबको हमसे अलग कर दिया गया और हमें नौ महीने की सख्त कैदकी सजा हुई। साबरमती जेलमें कनुको छोटे लडकोंकी बैरेकमें रखा गया और मुझे चक्की पीसनेके वार्डमें अलग कोठरीमें। बादमें गांधीजीने सत्याग्रहका आंदोलन बंद किया और हम जल्दी ही छूट गये।

इस प्रकार नारणदासभाईके परिवारसे हमारा स्नेह-संबंध बना रहा था। साबरमती आश्रमके विसर्जनके बाद नारणदासभाई राजकोटमें स्थिर होकर बैठे और राष्ट्रीयशालाके मकानको उन्होंने चरखा और अन्य रचनात्मक प्रवृत्तियोंका मजबूत केन्द्र बनाया। सौराष्ट्र रचनात्मक समितिके वे वर्षों तक अध्यक्ष रहे। जब मैं राष्ट्रभाषा प्रचार प्रवृत्तिमें कार्य करने लगा और गुजरातका संगठन किया तो राजकोटकी राष्ट्रीयशालामें भी उसका केन्द्र खुला। राष्ट्रभाषा प्रचारके सिलसिलेमें मेरा राजकोट जाना हुआ (सन १९४०) तो, नारणदासभाईके यहाँ ठहरा था। और उस समय उनके पिताश्री खुशालचंद बापूजी भी वहीं थे, उनके दर्शनका लाभ मुझे मिला था। उन सबका हँसता हुआ चेहरा आज भी मुझे याद है। सौराष्ट्र हिन्दी प्रचार समितिका मुख्य कार्यालय भी आज राजकोटकी राष्ट्रीयशालामें ही है।

नारणदासभाई जब कभी देखें तो वे चर्खा (सुदर्शन चक्र) चलाते नजर आते थे। अकाल-राहतका काम भी राष्ट्रीयशाला से वे करते रहते थे।

बापूके रहते ही उन्होंने अपने यहां गांधी-जयन्ती—चर्खा द्वादशी अनोखे ढंगसे मनाना शुरू कर दिया था। बापूको चर्खा प्यारा था इसलिए जितने सालकी वर्षगांठ हो उतने दिन पहलेसे अखंड चर्खा-कताई राष्ट्रीयशालामें शुरू की जाती थी। अगर बापूकी सत्तरवीं जन्मजयन्ती हो तो चर्खा-द्वादशीसे सत्तर दिन पहले अखंड कताई शुरू की जाती थी। बापूको यह कार्यक्रम बहुत पसन्द आया था। लोगोंसे उतनी गुंडिया भी इकट्ठी की जाती थी।

१९७० में जब काकासाहेब का ८६वां जन्मदिन सारे भारतमें सूतांजलिके रूपमें मनाया गया था तो राजकोटमें नारणदासभाईने इस निमित्तसे करीब नौ हजार रुपयेकी गुंडिया लोगोंसे इकट्ठा की थी और यह रकम उन्होंने राष्ट्रीयशाला में कताई-भवन बनानेमें खर्च की थी।

उनके ज्येष्ठ पुत्र पुरुषोत्तम गांधीकी पुत्री निरुपमा जब विद्यार्थिनी थी तब उसने काकासाहेबसे पत्र-व्यवहार करके कई प्रश्नोंकी चर्चा की थी। यह पत्र-व्यवहार गुजराती में नवजीवन कार्यालयकी ओर से 'विद्यार्थिनी ने पत्रो' नामसे किताबके रूपमें छपा है।

भाई पुरुषोत्तम और भाई कनु दोनों बरसोंसे गांधी-कार्यमें लगे हुए हैं। नारणदासभाई काकासाहेबकी उम्रके ही थे। अपना दीर्घ जीवन गांधी-कार्यमें उन्होंने बिताया।

उनका जीवन धन्य था।

●

'भूदान-यज्ञ' के २३ दिसम्बर अंक की अंक संख्या १२ और ३० दिसम्बर अंक की १३ तथा सम्पादकीय के शीर्षक में 'बीम' के के स्थान पर 'बीना' पढ़ें। सं.

सम्पादक

राममूर्ति . भवानी प्रसाद मिश्र

कार्यकारी सम्पादक : शारदा पाठक

वर्ष २१ ६ जनवरी, '७५ अंक १४

१९ राजघाट, गांधी स्मारक निधि, नई दिल्ली-११०००१

आत्ममंथन का वर्ष

ईस्वी सन् १९७५ का नया वर्ष प्रारम्भ हो गया है और किसी भी नये वर्ष से जो जो अपेक्षाएं की जाती हैं वे सब इस वर्ष से भी की जा रही हैं। राष्ट्रसंघ इस वर्ष को अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष के रूप में मना रहा है। संयोग से इसी वर्ष भारत के पिछड़े इलाकों की सेवा में अपने जीवन के कई दशक खपा देनेवाली गांधीजी की प्रिय शिष्या सरला बहन (मिस कैथरीन हिलमैन) का अमृतोत्सव भी पड़ता है। आयोजन को समुचित गरिमा के साथ मनाये जाने के लिए कार्यक्रम चालू हो गये हैं।

सर्वोदय-जगत के लिए यह वर्ष एक ओर विनोबा के मौन का वर्ष है तो दूसरी ओर उनकी ८० वीं सालगिरह और भूदान-आन्दोलन की रजत-जयन्ती का वर्ष भी। और इन सबके साथ है जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में बिहार से शुरू हुआ 'सम्पूर्ण क्रांति' का आन्दोलन। कुल मिलाकर प्रवसर गहरे आत्म मंथन का बनता है। आत्म-मंथन के लिए 'भूदान-यज्ञ' आरम्भ से ही उचित पृष्ठभूमि तैयार करता रहा है। जुलाई में बाबा के द्वारा आन्दोलन में शामिल होने की अनुमति सर्वोदय कार्यकर्ताओं को दिये जाने की अभिव्यक्ति को लेकर भाष्य के सम्बन्ध में जो विचार-भेद सामने आये, उन्हें इस पत्र ने दादा धर्माधिकारी, कान्ति और डेनियल माजगावकर के लेखों में उजागर किया। उसके बाद दिसम्बर में गाजीपुर में सर्व सेवा संघ की कार्यकारिणी की बैठक हुई जिसमें बिहार आन्दोलन पर विचार हुआ।

संघ की कार्यकारिणी की गाजीपुर बैठक में बिहार आन्दोलन में लगे सदस्यों ने संघ के जुलाई अधिवेशन के बाद की बिहार की घटनाओं का उल्लेख करते हुए अपनी रपट दी। बैठक की कार्रवाई का विवरण देते हुए संघ के सहमन्त्री श्री नरेन्द्र दुबे ने हमें जो पत्र भेजा है उसमें बताया है कि आंदोलन पर विचार के दौरान कुछ सदस्यों की राय यह रही कि जयप्रकाशजी के द्वारा १८ नवम्बर को गांधी मैदान पटना की सभा में चुनाव की चुनौती मंजूर कर लिये जाने और चुनाव में दो पक्ष ही क्रमशः सत्ता और जनता के उम्मीदवार के रूप में सामने आने की बात से संघर्ष होना है जो सर्व सेवा संघ की पक्षमुक्त संगठन की भूमिका को कुंठित करता है। इन सदस्यों की राय यह भी रही, कि आन्दोलन के विभिन्न राज्यों में प्रसार को देखते हुए भी जुलाई-अधिवेशन में आन्दोलन में भाग लेने के लिए दी गयी अनुमति निरर्थक हो जाती है। इन चर्चाओं की जानकारी जयप्रकाशजी को दी जाने पर उन्होंने कहा कि *उन्होंने यह आन्दोलन स्वयं की जिम्मेदारी से* उठाया है, सर्व सेवा संघ और विनोबाजी को 'कमिट' नहीं किया है। संघ की मर्यादा में आन्दोलन की अनुमति न हो सकने की स्थिति में जे० पी० ने संघ छोड़ने की पेशकश की और आह्वान किया कि जो साथी उनके साथ रहना चाहें, जरूरत होने पर वे भी संघ छोड़ दें। इस ताजी परिस्थिति में विनोबा की राय जानने के लिए अधिवेशन के बाद एक प्रतिनिधिमण्डल ने उनसे भेंट की। पता चला है कि बाबा ने कहा कि सर्व संघ के जो सदस्य आन्दोलन में भाग लेना चाहते हैं, वे उसी प्रकार करें जैसे कोई भी व्यक्ति निजी कार्य के लिए जाते समय नियोजक से छुट्टी लेकर जाता है।

इसके साथ ही सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष का एक वक्तव्य भी हमें हाल ही *मिला है। विनोबाजी की उपर्युक्त राय की* सूचना देते हुए उन्होंने कहा कि सवाल जो सामने आते हैं वे यह हैं कि छुट्टी कौन ले, किससे ले आदि।

अध्यक्ष ने अपने वक्तव्य में सूचित किया है कि *विनोबाजी को यह भी सुझाया गया* था कि एक-दो वर्ष के लिए संघ को 'फ्रीज' कर दिया जाये, संघ के नाम से कोई काम न हो तथा लोकसेवक अपनी-अपनी रुचि और इच्छा के अनुसार काम करते रहें। फ्रीजिंग की अवधि के बाद फिर संघ बैठकर सोचें और तत्कालीन परिस्थिति के अनुसार फैसला करें। इस बीच संघ के अध्यक्ष, मन्त्री, प्रबन्ध समिति आदि न रहें और सम्पत्ति की रख-रखाव व रोजमर्रा के जरूरी काम प्रबन्ध न्यासी चलाते रहें। इस सुझाव पर बाबा की क्या प्रतिक्रिया रही, यह अभी स्पष्ट नहीं हो पाया और उनके मौन धारण कर लेने से इस *बारे में किसी मार्गदर्शन की आशा भी नहीं।*

हालत अब वहां है जहां लोकसेवकों को अपने विवेक का उपयोग करने की जरूरत है। सर्वोदय जगत में मतभेद या विचारभेद तो रहा है लेकिन मन-भेद से यह क्षेत्र अभी तक सौभाग्य से बचा रहा है। किसी सामाजिक संस्था का कोई सदस्य जब कोई समाज-सेवा कार्य करता है तो उसकी संस्थागत और व्यक्तिगत हैसियत के बीच सीमा-रेखा बहुत *बारीक होती है। बाबा के मौन को देखते हुए* समझदारी की बड़ी जरूरत है। आन्दोलन और सर्वोदय के आपसी सम्बन्धों को लेकर बहस चाहे जितनी हो, संघर्ष की या विभाजन की ओर एक कदम भी किसी को न बढ़ने देना जरूरी है। इस कार्य में एक विचार-मंच के रूप में अपनी भूमिका पहले जैसी ही निभाते रहने के लिए 'भूदान-यज्ञ' उत्सुक है। दोनों ही पक्ष अगर व्यापक दृष्टिकोण से विचार करेंगे तो उनमें आपस में तालमेल होने और आगे चलकर कभी विचारों का मेल भी हो सकने की सम्भावना से इन्कार नहीं किया जा सकता।

शा० पा०

❖ सुरेशराम

एक नाम जयप्रकाश

हृदय की सरलता जयप्रकाश की साम खूबी है लेकिन यह सरलता अपने नाम की तरह सरल नहीं है। यह तो दुनिया की कठिन-से-कठिन चीजों से भी ज्यादा कठिन है। इस सरलता के लिए चार बातें चाहिये—मन में स्वार्थ न हो, अहंकार न हो, किसी को डराने या हानि पहुंचाने की कामना न हो और न हो ऊपर उठकर या आगे बढ़कर नीचे गिरा देने या पीछे धकेल देने या विशिष्ट बनने की चाह। इसलिए यह सरलता तभी सधती है जब आदमी अपने को छोटे से छोटा समझे, अपने को कुछ भी न समझे। दूसरे शब्दों में अपने को कुछ भी-नहीं, 'जीरो' या शून्य बना ले। जहां शून्यता वहां सरलता। इसी वजह से यह सरलता आसान होते हुए भी बहुत मुश्किल हो गयी है।

लेकिन जयप्रकाश ने इसे साध लिया है। इसके आध्यात्मिक पहलू में वह नहीं जाते। उनके लिए अध्यात्म का मतलब है—अपने-पराये का भेद मिटाना। पराया कोई नहीं, सभी अपने हैं। इस अपनाहट से ही जयप्रकाश की क्षमा-याचना निकलती है। बचपन में जब घोड़ी ने उनके लात मारी तब से ही उन्होंने इस अपनाहट का अभ्यास किया है।

इस अपनाहट का सबूत मिला २२ अगस्त, १९७४ को। वह आये हुए थे लखनऊ। यूनिवर्सिटी में भाषण था। जबरदस्त मजमा। उनकी जय-जयकार होने लगी। जयप्रकाश ने मना किया—खबरदार। आप मेरी जय नहीं बोलिये, अपने गुणों की जय बोलिये—अनुशासनहीनता की जय। परिश्रम न करने की जय। बहनों को छेड़ने की जय। अध्यापकों को गाली देने की जय। परीक्षा में नकल करने की जय।" कोई दूसरा होता तो उसकी शामत आ जाती और लखनऊ के विद्यार्थी उसकी ऐसी दुर्गत बनाते कि हमेशा याद रखता" लेकिन नहीं, वे सारे चुपचाप सुनते रहे"'क्योंकि जयप्रकाश नहीं बोल रहा था, उन छात्रों का ७२ वर्ष का अग्रज पिता, उनका सच्चा हमजोली, उनका

मैकमिलन कम्पनी, दिल्लीसे जयप्रकाश नारायण पर एक पुस्तक 'जयप्रकाश' ११ अक्टूबर को प्रकाशित हुई थी डा० लक्ष्मीनारायणलाल की लिखी। उस पुस्तक के स्वागत से उत्साहित मैकमिलन कम्पनी ने पाकेट बुक साइज में जयप्रकाशजी पर एक और पुस्तक 'लोकनायक जयप्रकाश' निकाली है सर्वोदय-जगत के जानेमाने सुरेशराम भाई की लिखी, जिसका एक अंश यहां प्रकाशित किया जा रहा है।

प्यारा अपना, अपना, अपना ही बोल रहा था।

ऐसा जयप्रकाश जब यह देखे कि बेतिया में गोली चली पटने में चली, यहां वहां गोली जब यह देखे कि छात्रों को पीटा गया, घसीटा गया, मुर्गा बनाया गया "जब यह देखे कि हट्टे-कट्टे लोगों को मेहनत-मजदूरी के लिए काम नहीं मिलता जब यह देखे कि मजदूर बेदखल किया जा रहा है और *उनके बाल-बच्चे दाने-दाने को तरस रहे* हैं जब यह देखे कि एक तो मोटरमें बैठकर मजे से निकल जाये और दूसरा उनके पहिये में दब जाने तो उसे अस्पताल में भरती भी कोई न करे" जब यह देखे कि बड़े अधिकारी, मिनिस्टर तक मोटी थैली लेकर अफसरों के तबादले कर रहे हैं जब यह देखे कि 'महंगाई बढ़ती ही जा रही है"

जब यह सब देखे तो जयप्रकाश क्या करेगा?

चुप बैठा रहे तब आगे चलकर भारत का इतिहासकार सिर पकड़ कर रोयेगा कि क्या गांधी के बाद हिन्दुस्तान में कोई माई का लाल ऐसा नहीं बचा, जिसके मुंह से अपने देश-वासियों की दुर्दशा देखकर आह! तक निकली हो "कोई उनकी आवाज उठानेवाला नहीं था?" कोई उनका साथ देनेवाला नहीं था?" सब नींद में सोये थे। सब ऐसे गाफिल पड़े थे कि करवट तक नहीं बदले।

इतिहासकार सिर पकड़ कर रोयेगा कि वह गांधी जिसने अपने सार्वजनिक जीवन की शुरुआत बगावत से, दुश्मन का हुक्म न मानने से की, जिसके पिता ने भी अंग्रेज को

सलाम दाहिने हाथ से इन्कार कर बायें से ही किया था"'वही गांधी व्यवस्था व राजकाज के साथ इतना जकड़ दिया गया कि उसका नाम लेनेवालों का काम सरकार की जय-जयकार और खुशामद करना बन जायेगा और जो इससे इनकार करे वह बागी या गांधी-विरोधी या देश का दुश्मन कहलायेगा। "'इस ठकुरसुहाती या सरकार-परस्ती के *कारण ही तो यह देश गुलाम हो गया* था"'।

इतिहासकार सिर पकड़ कर रोयेगा कि आजाद कहे जानेवाले हिन्दुस्तानमें सबके होश

गर्भे लड़ाते हैं और विद्यार्थी बखौला बना घूमता है। कुलपति की कोई सुनता नहीं कुछ पदाधर हैं तो कुछ कट्टर खिलाफ वाले। छात्रों के दोनों ही शत्रु हैं शिक्षा से उनका कोई सरोकार नहीं। गुलछर्रे उड़ाना और निरंकुश रूप में इधर-उधर टहलना बस इतना ही उनके जिम्मे है।

छात्र अगर इन बातों को लेकर आंदोलन करते हैं तथा अपनी दिक्कतों के लिए संघर्ष करते हैं तो उन्हें इसका पूरा अधिकार है। शिक्षकों की मनमानी बर्दाश्त से बाहर हो चली थी और जब तक यह भय नहीं हो कि छात्र हमारे लिए ऊधम मचा डालेंगे तो कोई पढ़ाने का नाम न लेता।

विश्वविद्यालय प्रशासन में छात्रों का प्रवेश निसन्देह एक सराहनीय कदम कहा जायेगा बशर्ते छात्र उसका अनुचित लाभ न उठाकर रचनात्मक कार्य की ओर आगे बढ़ें। छात्र जब तक यह एहसास नहीं करेंगे कि विश्वविद्यालय हमारा है और हमें इसको स्वस्थ दिशा प्रदान करनी है, दुनिया की कोई ताकत विश्वविद्यालयों के बिगड़ते हुए वातावरण में तब्दीली नहीं ला सकती सिवाय विद्यार्थियों के।

कुलपतियों की नियुक्तियां विश्वविद्यालयों में व्यापक सुधार लाने का सही मापदण्ड हो सकती हैं। अक्सर चुनाव हारे हुए राजनीतिक लोग, रिटायर्ड जज अथवा आई० ए० एस० कुलपति ही राज्य सरकारें नियुक्त कर डालती हैं। शिक्षा से इनका कभी कोई ताल्लुक नहीं होता इसलिए वे छात्रों की बहुतर समस्याएं समझने की जगह उनमें सांठगांठ करने 'फूट डालो और शासन करो' की घिसीपिटी नीति ही अपनाते हैं। नतीजा छात्रों में खलबली पैदाकर उन्हें ऐसा रास्ता दिखलानेवाला होता है जिससे शिक्षा की भलाई की जगह छात्रों में परस्पर वैमनस्य, ईर्ष्या तथा शत्रुता का बीजारोपण हो जाता है। जब तक शिक्षाविदों का ही विश्वविद्यालयों में वर्चस्व नहीं रहेगा विश्वविद्यालय दिन-प्रति-दिन रसातल को जाते रहेंगे। ●

भागलपुर विश्वविद्यालय के कुलपति श्री देवेन्द्र प्रसाद सिंह ने कहा है कि जो लोग श्री जयप्रकाश नारायण को देशद्रोही आदि की संज्ञा देकर उन पर कीचड़ उछालते हैं, वे मूर्ख तथा भ्रष्ट हैं।

उन्होंने बड़े जोशीले शब्दों में कहा कि मैं लोकतंत्र के सच्चे प्रहरी जयप्रकाश बाबू की सम्पूर्ण क्रांति में विश्वास रखता हूं और छात्रों की मांगों की पूर्ति के लिए मेरी कोशिश जारी रहेगी।

कुलपति तेजनारायण बनैली कालेज स्टेडियम मैदान में भागलपुर विश्वविद्यालय के पांच हजार छात्रों की एक रैली को सम्बोधित कर रहे थे।

श्री सिंह ने कहा कि जयप्रकाश देश के एक निष्पक्ष एवं स्वार्थहीन महान नेता हैं आन्दोलन महंगाई, भ्रष्टाचार, बेरोजगारी तथा शिक्षा नीति में आमूल परिवर्तन के लिए है। इसमें छात्र नौजवानों को अवश्य सफलता मिलेगी।

❖ यदुनाथ थत्ते

अमृतपुत्र साने गुरुजी

गत २४ दिसम्बर से देश में अमृत-पुत्र साने गुरुजी की अमृत-संवत्सरी मनायी जा रही है। इस अवसर पर भारत की अद्वैत-संस्कृति के इस महान द्रष्टा की पुण्य स्मृति में श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए प्रस्तुत लेख प्रकाशित किया जा रहा है।

२४ दिसम्बर, १८९९ के दिन महाराष्ट्र राज्य के रत्नागिरी जिले के पालगढ नामक एक छोटे से गांव में श्री सदाशिव [साने]जी के घर में एक सुपुत्र का जन्म हुआ। [श्री] सदाशिव साने उस गांव के खोत याने [छो]टे से जमींदार थे। पुत्र की माता का नाम [था] यशोदाबाई। घर में हद-दर्जे की गरीबी [थी]। श्री सदाशिवराव लोकमान्य तिलक द्वारा [प्रव]र्तित स्वदेशी के आंदोलन में हिस्सा ले [चु]के थे और जेल-यात्रा भी कर चुके थे। [मा]ता यशोदाजी उच्चकोटि के संस्कारों से [सम्प]न्न एक हस्ती थीं। अद्वैत की मानो प्रतिमूर्ति। अपने बच्चों के शरीर ही नहीं, उनके हृदय को भी उसने बहुत अच्छे ढंग से संवार सम्हाल की। अपनी माता के जीवन का ही नहीं, मातृत्व का महान गौरव साने गुरुजी ने "श्याम की मां" नाम की अपनी पुस्तक में एक अनोखे ढंग से किया है। मातृ-महिमा गाने वाली विश्व साहित्य की एक अद्वितीय कलाकृति यह पुस्तक है। जीवन के छोटे-छोटे प्रसंगों को लेकर यशोदाजी ने अपने बालकों को जो शिक्षा दी उसका वर्णन इस पुस्तक में किया गया है।

साने गुरुजी ने लिखा है, 'माता की महिमा अपार है। 'मा' 'ता' इन दो अक्षरों में मानो श्रुति स्मृतियां समाहित हैं। सारे महाकाव्य भरे हैं। ये दो अक्षर याने माधुर्य का सागर, पवित्रता का आगार। फूल की कोमलता, गंगाजी की निर्मलता, चन्द्रमा की रमणीयता, सागर की अनन्तता, पृथ्वी की क्षमाशीलता का अनुभव करना हो तो पुत्र बनकर माता के सान्निध्य में अनुभव करो। सारे वैभव मानो माता के रूप में सगुण साकार हो गये हैं। माता याने अपरम्पार त्याग अनंत सेवा। माता बच्चे के लिए लोरियां गाती है, उसमें पूरा सामवेद समाया हुआ है। बच्चे के स्वास्थ्य के लिए जिन औषधियों का वह उपयोग करती है उसमें सारा आयुर्वेद आ जाता है। माता बच्चों को जो कथा-कहानियां सुनाती है उसमें सारा साहित्य आ जाता है। माता बच्चों को कभी-कभार जो उपदेश वचन कहती है उसमें सारे उपनिषद् आ जाते हैं। वह बच्चों को फूल दिखाती है, पेड़ दरख्त दिखाती है, तोता-मैना दिखाती है, चांद और तारे बताती है। उससे सारा सृष्टिशास्त्र बच्चों को मिलता है। माता के वात्सल्य में सारे शास्त्र, कला, विद्या आदि का उद्गम है। माता याने 'मोक्ष'। माता याने पुष्टि, तुष्टि दृष्टि। माता याने 'शांति शांति शांति।' माता मेरा गुरु माता कल्पतरु' ऐसी साने गुरुजी की धारणा थी। मन अपने जीवन में मातृत्व सम्पूर्ण करने की साधना साने गुरुजी ने आमरण की। संत ज्ञानेश्वर को महाराष्ट्र के वारकरी सम्प्रदाय के लोग 'ज्ञानेश्वर माउली' याने ज्ञानेश्वर मैया के नाम से पुकारते हैं, उनके बाद यह पदवी पानेवाली एक ही हस्ती हुई और वह थी साने गुरुजी।

एक वाक्य में साने गुरुजी के जीवन का मर्म समझना हो तो कहना होगा कि 'वह एक ऐसी हस्ती थे जिसने दूसरों की भलाई के लिए अपना जीवन समर्पित किया।' साने गुरुजी ने एक स्थान पर स्वयं लिखा है, 'मैं जीवन का एक विनम्र उपासक हूं। आसपास का जीवन सुखी तथा समृद्ध हो। ज्ञान-विज्ञान सम्पन्न तथा कलामय हो, सामर्थ्य सम्पन्न तथा प्रेममय हो यही एक लगन मुझे लगी है। मेरा लिखना तथा बोलना, मेरे विचार तथा मेरी प्रार्थना बस, इसी एक ध्येय की सिद्धि के लिए होती है।' रामकृष्ण परमहंस रवीन्द्रनाथ तथा महात्मा गांधी उनके आदर्श थे। 'एक परांश रामकृष्ण, एक परांश रवीन्द्रनाथ तथा एक परांश महात्मा गांधी अगर अपने जीवन में मैं साकार कर सकूं तो मेरा जीवन धन्य हो जायेगा। रामकृष्ण की तरह वृत्ति निर्द्वन्द्व हो, रवीन्द्रनाथ की तरह लेखनी के द्वारा मांगल्य का आविष्कार हो और बापू की तरह हाथ निरन्तर रचनात्मक कार्य में लगे रहें, यही मेरी कामना है' ऐसा वे कहते थे।

एम. ए. की उपाधि पाने पर साने गुरुजी एक माध्यमिक पाठशाला में अध्यापक बने। छात्रावास के अधीक्षक बने। एक नया विद्यार्थियों के सामने उन्होंने आदर्श किया। अध्यापक का एक नया आदर्श ही उन्होंने प्रस्तुत किया। आचार्यकुल ने इसीलिए संकल्प किया है कि साने गुरुजी का जन्म-दिन देश भर में मनाया जाये। आचार्य की त्रिविध निष्ठाओं की साने गुरुजी प्रतिमूर्ति थे। ज्ञाननिष्ठा, विद्यार्थी निष्ठा तथा समाजनिष्ठा का एक आदर्श साने गुरुजी के जीवन से मिलता है। छात्रों के लिए साने गुरुजी हस्तलिखित छात्रालय दैनिक वर्षों तक निकालते थे। साने गुरुजी की अपनी विशेष शैली है। 'साकी छन्द' का लालित्य तथा सौंदर्य साने गुरुजी के गद्य में भी हम पाते हैं। साने गुरुजी ने सौ से अधिक पुस्तकें लिखीं। अपने वाचक का पूरा ध्यान हम उनमें पाते हैं। साने गुरुजी कहा करते थे, 'करता मनरंजन जो बालकों का, नाता जुड़ता है प्रभु से उसी का।' इसी श्रद्धा से उन्होंने अपनी लेखनी चलायी और मराठी साहित्य में अपने लिए एक स्थान बना लिया।

स्वतंत्रता आंदोलन में १९३०-३२, १९४०-४२ में साने गुरुजी ने जो कार्य किया उसको स्वर्ण-अक्षरों में अंकित करना होगा। साने गुरुजी और विनोबा की भेंट कारावास में हुई। उसमें एक अनूठा प्रेमभाव बना। भारतीय साहित्य में एक अनुपम ग्रंथ के रूप में 'गीता प्रवचन' स्थान पा गया है। विनोबाजी के ये प्रवचन लिपिबद्ध करने का काम साने गुरुजी ने किया, जिसके लिए संसार उनका ऋणी रहेगा। देश की सभी भाषाओं में आज गीता प्रवचन उपलब्ध है। 'भारतीय संस्कृति' उनकी पुस्तक एक अनूठी कलाकृति है। भारतीय संस्कृति का मर्म समझाते हुए उन्होंने लिखा है, 'भारतीय संस्कृति हृदय तथा बुद्धि की पूजा करती है। उदार भावना तथा निर्मल ज्ञान के द्वारा जीवन को सुन्दर बनाने वाली यह संस्कृति है। ज्ञान विज्ञान से हृदय को जोड़कर जीवन में मधुरता का निर्माण वह करती है। भारतीय

संस्कृति याने कर्म-ज्ञान-भक्ति की जीती जागती महिमा।'

पाठशाला के अध्यापन का त्याग करने पर साने गुरुजी सांस्कृतिक लोक शिक्षक के रूप में सामने आ जाते हैं। पूरा समय इसी में उनका बीतता था। स्वतंत्र भारत को एकात्मक भारत बनाने की धुन उन पर सवार थी। जाति-प्रथा, उच्च नीच, गरीब अमीर, शिक्षित अनपढ ये सब खामियां जब तक मिटेंगी नहीं, देश के लोग सुखी सम्पन्न नहीं हो सकेंगे। स्वाधीनता की आहट लगने पर साने गुरुजी बेचैन हो गये। अपने देशवासियों में कुछ लोगों को अस्पृश्य रखकर क्या हम स्वाधीनता का स्वागत करेंगे? महाराष्ट्र के भागवत सम्प्रदाय में पंढरपुर का एक विशेष स्थान है। अपने प्राणों की बाजी लगाकर साने गुरुजी ने पंढरपुर के मन्दिर के दरवाजे अस्पृश्यों के लिए खोल दिये और बंदिस्त विट्ठल को मुक्त कर दिया। देश में फूट और बिखराव, अविश्वास तथा भय पनपता रहेगा तो स्वाधीनता की रक्षा की नहीं जा सकेगी। इसी दृष्टि से साने गुरुजी ने एकात्मक भारत के नव निर्माता के आंदोलन के रूप में आंतर-भारती का प्रवर्तन किया। एक बार किसी ने उनसे पूछा, गुरुजी एकात्मता क्या होती है?' साने गुरुजी ने बड़ी सुलभता से एकात्मता की कल्पना स्पष्ट की। कहा, "पांव में कांटा चुभता है तो मुंह से आह निकलती है, आंखों में आंसू छलकते हैं और हाथ कांटा निकालने के लिए दौड़ पड़ता है। एकात्मक याने इस तरह सहसंवेदित होना। जब तक राष्ट्र का कोना कोना इस तरह सहसंवेदित नहीं होगा राष्ट्र एकात्म बना ऐसा नहीं कहा जा सकेगा, समाज की सभी इकाइयों के, अभिमान के तथा लज्जा के, हर्ष के तथा विषाद के विषय एक नहीं बनते तब तक राष्ट्र एकात्म नहीं बनेगा। भारत एक तरह से विश्व का प्रतीक है। भारत की सेवा में मानव की सेवा आ ही जाती है। यहां सभी धर्म और सभी सांस्कृतिक धाराएं हम पाते हैं। भारत की एकात्मता का अनुभव करनेवाला विश्व की एकात्मता का भी अनुभव कर सकेगा।" विनोबाजी ने इसी दृष्टि से कहा था, 'विश्व भारती हमारा आदर्श है लेकिन आन्तर-भारती के कदम उठाते हुए ही हम उस मंजिल तक पहुंच सकते हैं।" आन्तर-भारती का महावस्त्र ताने और बाने से बुना जायेगा, उसका भान उनको था। अतः एक तरफ भिन्न-भाषी समुदायों को सन्निकट लाने की उन्होंने कोशिश की तो दूसरी तरफ सामाजिक विषमता के खिलाफ भी जंग छेड़ा। आन्तर-भारती ही उनके जीवन का अन्तिम ध्यान था। अपने अन्तिम दिनों में उन्होंने लिखा था, "जन्मदात्री माता, भारतमाता तथा विश्वमाता जगदम्बा ने आज तक मुझे सम्हाला, अब मृत्यु मैया की गोद में सुलाकर माताएं विदा करेंगी। मृत्यु भी प्रेम-वात्सल्य का ही एक रूप है। जीवन से जो काम बनता नहीं वह कभी-कभी मृत्यु द्वारा सम्पन्न होता है; हम समझते हैं मृत्यु याने अन्धकार नहीं मृत्यु याने अमर, अनन्त प्रकाश। मृत्यु, निर्वाण याने अनन्त जीवन का जन्म। मृत्यु याने अमर आशावाद। मृत्यु याने नये जोश, नये उत्साह से अपने ध्येय की मंजिल तक पहुंचने की नयी उड़ान का प्रस्थान। मृत्यु का भय काहे का? अगर निद्रा का भय नहीं है तो चिर निद्रा का भय क्यों कर?"

मृत्यु माता की गोद में ११ जून १९५० को साने गुरुजी सदा के लिए सो गये। मृत्यु-पूर्व सबको संबोधित करते हुए उन्होंने लिखा "सबसे मेरी अन्तिम विनय: लोकतान्त्रिक सत्याग्रही, समाजवाद का ध्येय अपने सामने रखो। वही हमारा भविष्य उजागर करेगा। अजातीय तथा अहिंसक लोकतांत्रिक तथा सत्याग्रही दृष्टि हम अपना लें। भारत में रक्तपातरहित समाजवाद आये, व्यक्ति स्वातंत्र्य के साथ समाजवाद पनपे।"

उनके निधन पर विनोबाजी ने लिखा था, "पचास साल ही की तो उनकी आयु थी। लेकिन इतनी छोटी आयु में कितने कमाल के काम उन्होंने कर दिखाये। महाराष्ट्र की पूरी तरुण पीढ़ी पर उनके विचारों का प्रभाव है। बालबच्चों को तो मानो उन्होंने पागल बना दिया था। तुकारामादि संतों की मालिका में मैं निःशंक उनको रखता हूं। योगी की समता यद्यपि उन्होंने पायी नहीं थी, लेकिन भक्ति उनकी उत्कट, आर्त थी। "परपीडक हैं हमारे दुश्मन" ऐसी उनकी मनोभूमिका थी। इसलिए उनके रागद्वेष भी प्रबल थे, लेकिन वे सब ईश्वर को समर्पित थे। उनकी मृत्यु पर मैं विश्वास नहीं कर सकता। उन्होंने नाटक खेला है, ऐसा मैं मानता हूं। अमृतपुत्र ही उनकी वास्तविक पदवी है।"

साने गुरुजी का शरीर जीवित होता तो उसके पचहत्तर साल २४ दिसम्बर, १९७४ को पूरे होते और उनका अमृतमहोत्सव बड़ी धूमधाम से मनाते। खैर, शरीर तो नश्वर होता ही है, भले हम कितने ही अमृतमहोत्सव समारोह आयोजित करें। अमर होते हैं इस अमृतपुत्र के विचार और ध्येयस्वप्न। उनको हृदयों-हृदयों में संक्रमित करना ही सही अमृतमहोत्सव है। ★

❖ रामचन्द्र परमार

अम्बाह के हरिजनों को राहत की जरूरत

पिछले दिनों माह जून ७४ की १२ व १३ तारीख को मुरैना जिले की अम्बाह तहसील के ग्राम मड़ोलीकापुरा में ठाकुरों द्वारा हरिजनों के मकान जला दिये गये। कृषि-साधन-नलकूप, अनाज वगैरा तमाम नष्ट कर दिया गया था, जिसके फलस्वरूप हरिजन सवर्णों के बीच तनाव व्याप्त हो गया था। आज भी अपने ढंग का तनाव व वैमनस्य अपना घर बनाये है। कुछ लोग इसे समाप्त करना चाहते हैं और कुछ विघ्नसन्तोषी बनाये रखना चाहते हैं। राजनैतिक लोग अपनी अलग ही कलाबाजी दिखा रहे हैं। वे इस प्रकरण में आम चुनाव की पृष्ठभूमि तैयार करने में व्यस्त हैं। इस प्रकरण को वे चुनाव तक सरसब्ज बनाये रखने के लिए हरिजनों, ठाकुरों व राजनैतिक लोगों के बीच तालमेल जमाये हुए हैं। इन सबके बीच मड़ोलीकापुरा के हरिजन मात्र खिलौना बन गये हैं।

मैं अपने साथी सुरेशचन्द सोनी के साथ १०-१०-७४ को अम्बाह पहुंचा और क्षेत्र में पदयात्रा कार्यक्रम बनाया, मड़ोलीकापुरा में भी हम लगभग एक माह तक उस क्षेत्र में रहे। मड़ोलीकापुरा में जो घटना घटी उसकी

मैंने मौके पर जानकारी प्राप्त की और ग्राम बरवाई जो कि इस घटना से सम्बन्धित है, वहां भी गये। घटित घटना जो हरिजनों की खुशहाली, जातिगत वैमनस्य के कारण घटी है, विकराल रूप लेकर सामने आयी। वह लायी गयी थी तथा तैयार की गयी थी।

पाहुजनी के बाद हरिजन-युवियों ने सवर्ण लड़की जिसका गहना वगैरा लूटा गया था, लूटनेवाला एक हरिजन बताया जबकि यह रहस्य ही बना हुआ है कि असल चोर कौन था। हरिजनों ने विवश होकर हरिजनों को ही अपराधी माना उसकी जेवर की पूर्ति व नुकसानी देने तक को तैयार हो गये थे मामला साइन पर आ रहा था लेकिन ग्राम बरवाई के एक ब्राह्मण देवता ने ठाकुरों को भड़काया, उन्हें उत्तेजित किया। परिणाम-स्वरूप विनाश-लीला का दिल-दहाड़े ताण्डव हुआ। हरिजनों को सभावित घटना का पता चल चुका था। उन्होंने जान-माल की रक्षा के लिए अम्बाह पुलिस में रिपोर्ट दर्ज करायी, लेकिन वहां से भी नाममात्र को कार्रवाई की गयी, महोनीकापुरा में आगजनी, लूटपाट पुलिस के सामने हुई। घटना की भयकरता की जानकारी होते हुए भी पुलिस सुरक्षा के नाम पर ४-५ जवान व दो वाई. एस. पी. सी आई. तथा सब-इन्सपेक्टर ही थे। घटना घट गयी, पुलिस केस तैयार होकर चल रहा है।

इस घटना के बाद जैसा कि शासन को हरिजनों के मामले में गंभीरता से पहल करनी चाहिए थी, उतनी नहीं की गयी, मात्र घटना की कार्रवाई का रूप बना हुआ है।

शांति-मिशन के मित्रों ने अपने सीमित कार्यकर्ताओं के माध्यम से शांति सद्‌भावना का कुछ कार्य किया है, जो ऊंट के मुंह में जीरे के समान है।

मैंने जहां तक इस क्षेत्र के लगभग ४० ग्रामों में भ्रमण करके देखा वही पाया कि हरिजनों के इस मामले को सही तरीके से समझा नहीं गया है। जिसने जैसा समझा, पहल की है। अब तो अम्बाह क्षेत्र में हरिजनों व सवर्णों के बीच शांति-सद्‌भावना का कार्य निम्न प्रकार करना उचित होगा।

१. तीन-चार रचनात्मक संस्थाओं के चुने हुए कम-से-कम ५ कार्यकर्ताओं की एक टोली क्षेत्र में लगातार कम से कम तीन माह भ्रमण करे, बड़े-बड़े कस्बों में गोष्ठिया, रात्रि-सभाएं की जायें, दो शांति-सद्भावना सम्मेलन अम्बाह और पोरसा में किये जायें।

२ सवर्ण हरिजन सरपच, पच सम्मेलन हो, जिसमें शासकीय सहयोग यथेष्ट मिले। सम्मेलन का सयोजन ३-४ संस्थाओं द्वारा मिलकर ही हो।

३ अम्बाह क्षेत्र के प्रमुख हरिजन, सवर्ण तथा समस्त राजनैतिक दलों व रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ताओं का मिलाजुला एक या दो दिवसीय शिविर अम्बाह या पोरसा में हो।

४ क्षेत्र में प्रमुख समाजसेवी, विचारक, प्रभावशाली सत वृत्तिवाले व्यक्तियों को समय समय पर आमंत्रित कर एकता-सद्‌भावना परस्पर विश्वास पैदा करने के प्रयत्न किये जायें।

५ हरिजनों को गुमराह करनेवाले कार्यकर्ताओं, शासकीय अधिकारियों से बचाया जाये। ऐसा करनेवालों की गुप्तचर विभाग द्वारा देखरेख की जाये व उचित कार्रवाई हो।

६. हरिजनों व सवर्णों के बीच चल रहे प्रकरण में कुछ बेगुनाह लोग भी फंसे हुए हैं यानी पुलिस केस बिलकुल ही लचर है, मात्र साधारण केस जैसा 'ढील' किया जा रहा है, इसमें आपसी समझौता न हुआ तो क्षेत्र में पुन. तनाव पैदा होगा व झगड़े की स्थिति पैदा हो सकती है क्योंकि इस 'केस' में वे लोग शामिल नहीं किये गये हैं जो वास्तविक दोषी हैं। ऐसी दशा में अगर बेगुनाह को दण्ड मिलेगा तो वह अवश्य ही हरिजनों से बदला लेगा, क्योंकि बदला लेने की वृत्ति इस क्षेत्र में कूट-कूट कर भरी हुई है।

७. इस मामले की पुन न्यायिक जांच खुले रूप में होनी चाहिए ताकि वास्तविकता सामने आ सके।

८. हरिजनों को जो आर्थिक सहायता मिल चुकी है वह अपर्याप्त है। जहां तक मुझे जानकारी मिली है, उक्त सहायता हरिजनों तक सही रूप में नहीं पहुंची है। कागजों के हिसाब से उसके वितरण में कोई खामी नहीं है।

९ पीड़ित हरिजनों को जो सहायता मिली है और जो मिलने के लिए कोशिश की जा रही है, उसकी देखरेख के लिए एक शासकीय एव अशासकीय लोगों की मिली जुली समिति बने, जो कि प्राप्त सहायता की देखरेख कर मार्ग-दर्शन प्रदान कर सके।

१०. हरिजन-सेवक-सघ की ओर से एक प्रचार केन्द्र, छात्रावास, बालवाड़ी तथा नशाबन्दी-केन्द्र खोलकर कार्यकर्ताओं की एक टीम तैयार करें।

११ शासन हरिजनों को शीघ्र ही अनाज, बीज, मकान बनाने के लिए बांस, बल्लियां, सस्ता गल्ला पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध कराये जो कि नहीं हो पा रहा है। कर्मचारियों की लापरवाही से तो बहुत ही ज्यादा हरिजन लोग परेशान हैं।

इन सारी बातों का आशय यही है कि उक्त क्षेत्र में व्यापक रूप से, रचनात्मक दृष्टिकोण से हरिजन सवर्णों के बीच शांति-सद्‌भावना का कार्य तरीके से किया जाये।

अत मित्रों से निवेदन है कि अम्बाह क्षेत्र के हरिजन-सवर्णों के बीच कार्य दिशा की पहल हेतु मार्ग-दर्शन प्रदान करेंगे। ■

जो अब नहीं रहे

शंकरराव देव

सर्वोदय जगत के वयोवृद्ध नेता शकरराव देव का ३० दिसम्बर को पूना के वैकुंठ नर्सिंग होममें प्रात.काल देहावसान हो गया। उनकी अन्त्येष्टि उसी दिन दोपहर वैकुंठ शवदाहगृह में सपन्न हुई।

वे इसके एक सप्ताह पूर्व तक ठीक थे लेकिन इसी बीच उन पर पक्षाघात का आक्रमण हुआ। शुरू में आश्रममें उपचार के बाद उन्हें अस्पताल पहुंचाया गया जहां दिल के दौरे से वे दिवगत हुए।

४ जनवरी १८९४ को पूना जिले के मोर नगर में जन्मे शकरराव देव ने बड़ौदा में उच्चशिक्षा प्राप्त की और १९१० में चम्पारण सत्याग्रह के समय आजादी की लड़ाई में कूद पड़े। उसी वर्ष उन्होंने मुलशी-पेट सत्याग्रह में भाग लिया जो सरकार द्वारा

किसानो की जमीन छीनकर पनबिजलीघर के लिए टाटा को दिए जाने के विरोध मे था। अगले साल वे महाराष्ट्र प्रदेश काग्रेस के मंत्री बने और फिर अध्यक्ष चुने गये। उन्होंने अपने कार्यकाल मे प्रबल विरोध के बावजूद राज्य काग्रेस को सुदृढ़ता प्रदान करने मे सफलता प्राप्त की। वे सन २५ में अखिल भारतीय काग्रेस कार्यकारिणी के सदस्य बने और बाद मे चार वर्षों तक दल के महामत्री रहे। वे सविधान सभा के भी सदस्य रहे थे।

श्री देव ने नमक-सत्याग्रह मे सक्रिय भाग लिया था। वे सन २७ के साम्प्रदायिक दगो के समय अहर्निश शान्ति कार्य में जुटे रहे थे। सन ४२ के आदोलन मे वे पुन. गिरफ्तार हुए थे।

गत एक चौथाई सदी से श्री देव सर्वोदय से सम्बद्ध थे। वे सर्वसेवासघ के मत्री रहे और भूदान आदोलन मे सक्रिय हिस्सा लिया। ६२ मे चीनी आक्रमण के बाद आयोजित 'दिल्ली-पेकिंग' मैत्री यात्रा के वे सयोजक थे। गाधीजी के ट्रस्टीशिप के विचार को विकसित करने मे उनका उल्लेखनीय योगदान रहा।

श्री देव ने सर्वोदय विचार से संबधित अनेक पुस्तकें लिखी है जिनका अनुवाद देश-विदेश की कई भाषाओ मे हुआ है।

उनके शोक मे मगलवार ३१ दिसम्बर को नयी दिल्ली के गाधी स्मारक संग्रहालय के सभाकक्ष मे गाधी स्मारक निधि, गाधी शांति प्रतिष्ठान, गाधी स्मारक सग्रहालय, सर्वसेवासघ, हरिजन सेवकसघ तथा अन्य रचनात्मक सस्थाओ की एक सभा गाधी शांति प्रतिष्ठान के मत्री श्री राधाकृष्ण की अध्यक्षता मे हुई जिसमे दिवगत नेता को श्रद्धाजलि अर्पित करते हुए शोक-प्रस्ताव पास किया गया।

कपिल भाई

श्री गाधी आश्रम के बुजुर्ग सदस्य श्री कपिलदेव पाण्डेय जो कि सर्वोदय-जगत मे कपिल भाई के नाम से जाने जाते थे, उनका १३ दिसम्बर ७४ को वाराणसी मे स्वर्गवास हो गया।

७४ वर्षीय कपिल भाई हिन्दू विश्व-विद्यालय छोड कर गाधीजी के असहयोग आन्दोलन मे शामिल हुए थे। वे गाधी आश्रम के सस्थापक सदस्य थे। आजादी की लडाई मे वे ६ बार जेल गये। वे सन ४२ तक प्रदेश कांग्रेस के सदस्य रहे और सन २० से ६० तक चालीस वर्ष तक लगातार गाधी आश्रम के अर्थमत्री।

सन १९६० मे ग्रामदान, ग्रामस्वराज्य आन्दोलन में पूरा समय देने की दृष्टि मे वे आश्रम से अलग हुए थे और तब से आन्दोलन मे बराबर सक्रिय थे। वे उत्तरप्रदेश ग्राम-दान प्राप्ति समिति का कार्यभार भी लगातार सभालते रहे और सर्व सेवा सघ की प्रबन्ध समिति के भी सदस्य रह चुके थे।

हमारी विनम्र श्रद्धाजलि

स्वामी शरणानन्द

मानव सेवा संघ, वृन्दावन के संस्थापक स्वामी शरणानन्दजी का गीता-जयन्ती के दिन २५ दिसम्बर, ७४ को सुबह ८ बजे शरीरान्त हो गया। उनका अन्तिम सस्कार उनकी ही इच्छा के अनुसार उसी दिन तीसरे पहर आश्रम मे सम्पन्न हुआ।

प्रचारसे दूर रहनेवाले स्वामीजी के सम्बन्ध जानकारी अधिक नहीं मिलती। जो थोड़ा बहुत विवरण उनके प्रारम्भिक जीवन के बारे मे प्राप्त होता है उसके अनुसार स्वामीजी जब तीसरी कक्षा में थे, तभी उनके नेत्रो की ज्योति चली गयी थी। इसके बाद वे इटावा जिले मे चम्बल नदी के किनारे इसी गाव के पास एक गुफा मे तपस्या करते रहे। बाद मे 'गीता-प्रेस' के एक प्रतिनिधि से मुलाकात होने पर उसके आग्रह से वे एक घटा रोज प्रवचन भी प्रतिदिन करते रहे।

लोगो के सुख दुख मे वे बचपन से ही शामिल रहते आये थे। जब छोटे थे तो डाकिये के साथ-साथ घूमा करते थे और जिस घर मे पत्र पानेवाले पढना नही जानते होते वहा पत्र पढकर सुना देते। देश की स्वतन्त्रता के बाद के हालात ने उन्हें निवृत्ति छोडकर प्रवृत्ति मे आने को प्रेरित किया और उन्होने १९५३ मे मानव सेवा सघ की स्थापना की। यह सस्था बच्चों, महिलाओ, रोगी, विरक्त तथा समाजसाधको की सेवा मे जुटी है। इस समय आश्रम मे लगभग ५० बच्चे हैं। प्रचार से दूर रहने की स्वामीजी की वृत्ति के कारण ही उनका नाम न तो आश्रम के किसी पद पर और न ही उसके किसी प्रकाशन मे मिलता है, फिर भले ही वे उसके सब कुछ रहे हो।

लगभग ७२ वर्षीय स्वामीजी का विचार रहा है कि सर्व हितकारी भाव सर्वात्मभाव प्रदान करता है, अर्थात सेवक सभी मे अपने को ही अनुभव करता है। इस तरह 'सेवक', 'सेवा' और 'सेव्य' मे अभिन्नता आ जाती है।' उन्होंने अप्रैल १९७३ मे कुरुक्षेत्र (हरियाणा) मे हुए २१ वें सर्वोदय सम्मेलन का उद्घाटन किया था।

इस समर्पित व्यक्तित्व को हमारी और सर्वोदय-परिवार की विनम्र श्रद्धाजलि। ×

रेलमंत्री ललितनारायण मिश्र का ३ जनवरी को निधन हो गया है। सर्वोदय परिवार की श्रद्धांजलि।

वार्षिक शुल्क—१५ रु० विदेश ३० रु० या ३५ शिलिंग या ५ डालर, एक अंक का मूल्य ३० पैसे।
प्रभाष जोशी द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं ए० जे० प्रिंटर्स, नई दिल्ली-१, में मुद्रित।

सर्व सेवा संघ का साप्ताहिक मुख पत्र
नई दिल्ली, सोमवार, १३ जनवरी '७५

मध्यप्रदेश में जे. पी. का दौरा

अ. भा. गीता-प्रचार सम्मेलन का निवेदन

गीता प्रतिष्ठान की ओर से पूज्य विनोबाजी के सानिध्य में गत २५-२६ दिसम्बर को *गीता-जयन्ती* के अवसर पर आमन्त्रित अखिल भारत गीता प्रचार सम्मेलन कई दृष्टियों से महत्वपूर्ण रहा है। यह अपूर्व योग था कि गीता-जयन्ती के साथ-साथ ईसाइयों का धार्मिक पर्व क्रिसमस व मुस्लिमों को ईद भी एक साथ आ गये, जैनियों का भगवान महावीर का निर्माण महोत्सव भी चल रहा है। परधाम जैसे शांत और पवित्र वातावरण में पूज्य बाबा का इसे मार्गदर्शन व उद्बोधन मिला, और उद्बोधन के बाद ही उन्होंने एक साल का मौन लिया है। इस *सम्मेलन में केन्द्रीय सरकार के वरिष्ठ मंत्री* श्री उमाशंकर दीक्षित की उपस्थिति और उनका उद्बोधन भी प्राप्त हुआ। देश के विभिन्न क्षेत्रों से लगभग १०० गीता-प्रेमी व गीता प्रचार का कार्य करनेवाली संस्थाओं के प्रतिनिधि, सर्व सेवा संघ के अनेक कार्यकर्ता, आश्रमवासिनी बहनें व भाई उपस्थित थे।

संसार के प्रबुद्ध विचारकों का मत है कि गीता व्यक्तिगत साधना में आध्यात्मिक व नैतिक विकास में सहायक तो बनती ही है साथ ही सामाजिक, राष्ट्रीय तथा विश्व की जटिल समस्याओं को सुलझाने का अमोघ उपाय बतानेवाला महान् ग्रन्थ भी है। संसार आज विषमता, असंतोष, संघर्ष, अन्याय, अभाव व भ्रष्टाचार से पीड़ित है। दुःख व भय से त्रस्त मानवता को मुक्त करने की शक्ति गीता के सन्देश में विद्यमान है।

उपस्थित तथा अनुपस्थित मानव-कल्याण की कामना रखनेवाले गीता-प्रेमियों से सम्मेलन के द्वारा अनुरोध किया गया कि वे गीता प्रसार के महान यज्ञ में अपना योगदान दें और कहा गया कि गीता प्रचार के *काम में लगे हुए कार्यकर्ता गीता-दर्शन* अपने जीवन में उतारने का प्रयत्न करते हुए उसका जनता जनार्दन में विनम्रतापूर्वक और सेवा-भावना से प्रसार करें। वर्ष १९७५ में राष्ट्र-संघ की ओर से महिला शक्ति जागरण वर्ष मनाया जा रहा है। इसलिए निवेदन किया गया कि महिला संस्थाएं सन १९७५ में अपने कार्यक्रम में गीता प्रचार को विशेष स्थान देने की योजना बनायें।

गीता का संदेश सिर्फ एक धर्म के लिए सीमित नहीं है—वह सारे संसार के लिए *एक भव्य जीवन-दर्शन है। सम्मेलन का आग्रह* रहा कि इसे सभी शिक्षण-संस्थाओं के अभ्यास-क्रम में योग्य स्थान दिया जाना चाहिए।

इस महान तथा गुरुतर कार्य को सफल बनाने के लिए सभी संस्थाओं को एकत्र होकर योजनापूर्वक कार्य करना आवश्यक है। आज भी देश तथा विदेश में गीता प्रचार का काम अनेक संस्थाओं तथा व्यक्तियों द्वारा हो रहा है। यदि यह बिखरी हुई शक्ति मिलकर योजनाबद्ध कार्य करे तो निश्चित ही इस काम में विशेष सफलता प्राप्त हो सकती है। *इसलिए सम्मेलन ने गीता प्रतिष्ठान के अध्यक्ष* श्री श्रीमन्नारायण को अधिकृत किया है कि वे विभिन्न संस्थाओं के प्रतिनिधियों की एक समन्वय समिति का गठन करें। सम्मेलन की यह भी राय रही है कि इस तरह के सम्मेलन प्रतिवर्ष विभिन्न क्षेत्रों में होते रहें।

आंध्र में आंदोलन को व्यापक समर्थन

बिहार आन्दोलन का महत्व लोगों को समझाने, उनका समर्थन हासिल करने तथा आंध्र में *जन-आंदोलन की संभावनाओं* का अध्ययन करने के लिए सर्व सेवा संघ के महामंत्री ठाकुरदास बंग ने १८ दिसम्बर से २ जनवरी तक राज्य के २१ में से १३ जिलों का दौरा किया। वे १६ नगरों और ग्रामों में गये जिनमें से १२ जिला मुख्यालय थे। श्री बंग ने राज्य के तीनों भागों तेलंगाना, रायलसीमा और सरकार का दौरा किया और आंध्रप्रदेश सर्वोदय मंडल के अध्यक्ष आर.के. राम, मंत्री *सुरभि शर्मा तथा भूतपूर्व प्रदेश* कांग्रेस अध्यक्ष थिम्मा रेड्डी उनके साथ रहे। *सभी स्थानों में जन-सभाएं हुई जिनमें अच्छी* उपस्थिति रही। विजयवाड़ा, गुन्टूर, तिरुपति चिराला और विशाखापतनम में तो काफी भीड़ थी।

श्री बंग ने छात्रों और राजनीतिक कार्यकर्ताओं की सभाओं को भी सम्बोधित किया। दो स्थानों पर उन्होंने बार एसोसिएशन और आर्य दर्शन स्थलों पर पत्र वार्ताओं को सम्बोधित किया। समाचारपत्रोंमें इनका अच्छा प्रचार हुआ। *उन्हें महसूस हुआ कि बिहार आन्दो*-लन के बारे में उत्सुकता के साथ सभी जगहों पर कुछ शंकाएं भी हैं। श्री बंग को इन शंकाओं का पूर्वाभास था इसलिए अपने भाषणों में उन्होंने इन पर प्रकाश डाला और अन्त में उन्हें लगा कि उपस्थितजन संतुष्ट हो गये हैं। लोगों को आन्दोलन के बारे में पूरी और ठीक जानकारी नहीं थी। बिहार में हो रहे अत्याचारों का वर्णन सुनकर वे स्तब्ध हो *गये और आन्दोलन में अपनाये जा रहे लोक*-तन्त्री तरीकों की सराहना करते रहे। दौरे के पांचवे दिन से श्री बंग ने जनसभाओं के बाद वित्तीय मदद की मांग की और कुछ स्थानों में उनके भाषण के दौरान छोटे नोट और रेजगारी मौके पर ही दिये गये। इस तरह इकट्ठे २५०० रुपये में से आधे से अधिक छोटी-छोटी राशियों से एकत्र हुए। समय की कमीके कारण बड़ी राशियां दे सकनेमें समर्थ लोगों के यहां जाने का अवसर नहीं मिला।

श्री बंग ने महसूस हुआ है कि आंध्र के लोग बिहार के आन्दोलन का समर्थन करते हैं और उसका संदेश आंध्र के कोने-कोने में *फैलाकर तथा वित्तीय योगदान* देकर उसकी मदद करना चाहते हैं। जहां तक आंध्र में आन्दोलन शुरू करने की बात है लोग महसूस कर रहे हैं कि आंध्र की समस्याएं भी बिहार की समस्याओं से अलग नहीं हैं। लेकिन आंध्र के लोग हाल ही जय-आंध्र और उसके पहले जय-तेलंगाना आन्दोलन चला चुके हैं। राजनीतिक नेताओं की धोखेबाजी के कारण उन्हें इन आन्दोलनों में निराशा हाथ *लगी है। इससे पहुँचे आघात से उबरने* में उन्हें अभी कुछ समय लगेगा। इसलिए आंध्र में सम्पूर्ण आन्दोलन के लिए अभी अवसर नहीं है। इस बीच लगातार प्रचार, साहित्य वितरण, विचार-विमर्श, बिहार आंदोलन के समर्थन में कार्यक्रमों और कुछ स्थानों में किसानों की समस्याओं के मामले में हस्तक्षेप अभियान चलाये जाने की जरूरत है।

भूदान-यज्ञ

सम्पादक
राममूर्ति : भवानी प्रसाद मिश्र
कार्यकारी सम्पादक : शारदा पाठक

वर्ष २१ | १३ जनवरी, '७५ | अंक १५

१९ राजघाट, गांधी स्मारक निधि, नई दिल्ली-११०००१

समस्तीपुर बम कांड

नये साल १९७५ के पहले दिन जहां देश को क्रिकेट मंच में जीत के रूप में खुशी का उपहार मिला वहीं दूसरे दिन समस्तीपुर बम-कांड के रूप में उस पर एक ऐसा कलंक का टीका लग गया जो उसके एक अहिंसक देश होने के दावे पर सीधा प्रहार करता है। उस दिन समस्तीपुर में एक नयी रेल लाइन का उद्घाटन समारोह आयोजित था। रेलमन्त्री ललितनारायण मिश्र ने अपना भाषण पूरा किया ही था कि मंच पर एक बम फटा और कई व्यक्ति घायल हुए। ललित बाबू को दानापुर रेलवे अस्पताल ले जाया गया जहां ३ जनवरी के सबेरे एक आपरेशन के दौरान उनकी मौत हो गयी।

ललित बाबू की मौत की खबर से सारा देश स्तब्ध रह गया है। उसी दिन नयी दिल्ली के बोट क्लब में जयप्रकाश नारायण की एक सभा थी। जे. पी. ने सभा को शोक-सभा में बदल दिया और श्रद्धांजलि अर्पित करने के सिवा अन्य कोई बात नहीं कही।

जयप्रकाश के सौजन्य की तुलना सत्तारूढ़ कांग्रेस के रुख से की जाये तो गहरा अन्तर नजर आता है। अभी तक जो कुछ भी हुआ है उससे लगता है कि सत्तारूढ़ दल ललितबाबू की मौत का पूरा पूरा राजनीतिक लाभ उठाने और जयप्रकाश नारायण तथा आन्दोलन को बदनाम करने का अभियान शुरू कर चुका है।

समस्तीपुर बमकांड की मुकम्मल जांच के आदेश हो चुके हैं और प्रारम्भिक रूप से कुछ तथ्य सामने आये हैं, उनसे आभास होता है कि इस मामले की तह में असन्तुष्ट रेल कर्मचारी हैं। यह सब अखबारों में छप चुकने के बाद यदि प्रधानमन्त्री और उनके आसपास के लोग इस घटना की जिम्मेदारी जयप्रकाश तथा आन्दोलन पर डालने की कोशिश कर रहे हैं तो कोई भी समझ सकता है कि जनता को गुमराह किया जा सकना सम्भव नहीं है।

ललितबाबू को श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए कांग्रेस की ओर से जो सभा हुई उस में प्रधान मन्त्री सहित अनेक वक्ताओं ने बजाय ललितबाबू के गुणों के उल्लेख के सारा ध्यान इसी बात पर जोर देने में लगाया कि इस बमकांड से किसी न किसी तरह जे. पी. और आन्दोलन का ताल्लुक है। जे. पी. ने कहीं यह कहा कि उनका लक्ष्य ललितबाबू नहीं थे। इस बात से उनका आशय यही था कि उनका ललित बाबू या अन्य किसी से व्यक्तिगत विरोध नहीं। इस सीधी और साफ समझ में आनेवाली बात को प्रधान मन्त्री विचित्र ढंग से ले उड़ीं तथा यह कहने में भी नहीं चूकीं कि निशाना ललित बाबू नहीं वरन वे स्वयं थीं। उन्होंने अपने सारे भाषण में इस बात की ओर इंगित करना चाहा कि अहिंसा का नारा लगानेवाले अर्थात जयप्रकाश नारायण के समर्थक हिंसा पर उतारू हो गये हैं।

प्रधानमन्त्री से भी बढ़कर जयप्रकाश पर रोष उनके आसपास के लोगों ने, शायद अपने नेता के तेवर देखकर व्यक्त किया। इनमें भी दरबारी विदूषक के नाम से लोकप्रिय होते जा रहे कांग्रेस अध्यक्ष देवकान्त बरुआ का भाषण बहुत मनोरंजक था। न जाने क्यों सत्तारूढ़ दल के लोग अपनी इस शेखचिल्ली समझ से दूर हटने को तैयार नहीं हैं कि यदि वे आम को इमली कहेंगे तो जनता इमली मान लेगी।

ललित बाबू की मौत का कांग्रेस के द्वारा राजनीतिक लाभ उठाये जाने की कोशिश बहुत से सवालों को जन्म देती है जिनकी चर्चा करना फिलहाल जांच चलते समय उचित नहीं है। इस सम्बन्ध में ललित बाबू का आपरेशन करनेवाले डाक्टरों का यह बयान बहुत महत्व-पूर्ण है कि ललित बाबू को डाक्टरी मदद ठीक समय पर पहुंचाने में संगीन लापरवाही रही है, अन्यथा उनकी जान बच सकती थी। यदि यह लापरवाही जानबूझ कर हुई है तो यह समझने में कोई शक नहीं रह जाता कि वे कौन लोग हैं जो ललित बाबू को बलि का बकरा बनाना चाहते थे।

उस दिन समस्तीपुर की सभा के लिए सुरक्षा के जो भारी भरकम प्रबन्ध किये गये थे, वे भी असाधारण कहे जाते हैं। किसी लोकप्रिय सरकार के सदस्य को तो क्या ताना-शाह को भी इतने सुरक्षा प्रबन्ध की जरूरत नहीं पड़ती। इसका रहस्य क्या है, यह तो प्रबन्ध करनेवाले ही जानें किन्तु जनता भी इससे कुछ निष्कर्षों पर पहुंचती है।

आंदोलन वापसी की मांग

ललित बाबू की मौत के बाद १७ संसद सदस्यों तथा कुछ अन्य लोगों ने जे. पी. से आन्दोलन वापस लेने की मांग की है। इस बारे में चौरीचौरा कांड का भी हवाला दिया गया। जे. पी. ने इसके उत्तर में साफ कर दिया है कि उनके आंदोलन का हिंसा से कोई संबंध नहीं है। उन्होंने यह भी कहा कि अगर सत्ता-रूढ़ दल यह कहता है कि आंदोलन असफल हो रहा है तो उसकी वापसी की अपील की क्या जरूरत है।

न जाने लोग यह क्यों भूल जाते हैं कि यह आंदोलन किसी व्यक्ति या दल के खिलाफ न होकर समाज में व्याप्त बुराइयों के खिलाफ 'सम्पूर्ण क्रांति' का अहिंसक आंदोलन है। भ्रष्टाचार में सने लोगों को छोड़कर बाकी सब समझते हैं कि आंदोलन समाज मात्र के हित में है। और फिर अगर जे. पी. आंदोलन अपने हाथ में लेकर उसे अहिंसक मोड़ न देते तो समस्तीपुर बम कांड जैसी हिंसा रोजमर्रा की बात हो जाने की परिस्थिति क्या देश में पैदा नहीं हो चुकी थी? बात को गहराई से समझने की जरूरत है। — शा० पा०

The helping hand of UCOBANK:

ready with finance to help small-scale Industrialists.

If you're thinking of setting up a small-scale industry—or of expanding your existing set-up, come to UCOBANK for finance.

Under our new schemes, you'd get loans for building construction, purchase of plant and machinery, etc.

The terms are easy. The only condition is that your present investment in plant and equipment must not exceed Rs 7.5 lakhs

For details, contact the nearest branch of UCOBANK.

United Commercial Bank

helping people to help themselves – profitably

मुनादी

धर्मवीर भारती

खलक खुदा का, मुल्क बादशाह का
हुक्म शहर कोतवाल का······
हर खासो—आम को आगाह किया जाता है
कि खबरदार रहें
और अपने-अपने किवाड़ों को अन्दर से
कुंडी चढ़ाकर बन्द कर लें
गिरा लें खिड़कियों के पर्दे
और बच्चों को बाहर सड़क पर न भेजें,
क्योंकि
एक बहत्तर बरस का बूढ़ा आदमी
अपनी कांपती कमजोर आवाज़ में
सड़कों पर सच बोलता हुआ निकल पड़ा है।
शहर का हर बशर वाकिफ है
कि पच्चीस साल से यह मुजिर है
कि हालात को हालात की तरह बयान किया जाये
कि चोर को चोर और हत्यारे को हत्यारा कहा जाये
कि मार खाते भले आदमी को
और अस्मत लुटती हुई औरत को
और भूख से पेट दबाये ढांचे को
और जीप के नीचे कुचलते बच्चे को
बचाने की बेअदबी की जाये।
जीप अगर बादशा की है तो
उसे बच्चे के पेट पर से गुजरने का हक क्यों नहीं?
आखिर सड़क भी तो बादशा ने बनवायी है।
बुड्ढे के पीछे दौड़ पड़नेवाले
अहसान-फरामोशो, क्या तुम भूल गये कि बादशा ने
एक खूबसूरत माहौल दिया है जहाँ
भूख से ही सही, दिन में तुम्हें तारे नजर आते हैं
और फुटपाथों पर फरिश्तों के पंख रात भर
तुम पर छाँह किये रहते हैं
और हूरें हर लैम्प-पोस्ट के नीचे खड़ी
मोटरवालों की ओर लपकती हैं।
कि जन्नत तारी हो गयी है जमीं पर
तुम्हें इस बुड्ढे के पीछे दौड़कर
भला और क्या हासिल होनेवाला है?
आखिर क्या दुश्मनी है तुम्हारी उन लोगों से
जो भलेमानसों की तरह अपनी-अपनी कुर्सी पर चुप-चाप
बैठे-बैठे मुल्क की भलाई के लिए
रात-रात जागते हैं
और गाँव की नालों की मरम्मत के लिए
मास्को, न्यूयार्क, टोकियो, लंदन की खाक
छानते फकीरों की तरह भटकते रहते हैं······
तोड़ दिये जायेंगे पैर
और फोड़ दी जायेंगी आँखें
अगर तुमने अपने पाँव पर चलकर
महलसरा की चहारदीवारी फलाँगकर
अन्दर झाँकने की कोशिश की।
क्या तुमने नहीं देखी वह लाठी
जिससे हमारे एक कद्दावर जवान ने निहत्थे
काँपते बुड्ढे को ढेर कर दिया
वह लाठी हमने समय-मंजूषा के साथ
गहराइयों में गाड़ दी है
कि आनेवाली नस्लें उसे देखें और
हमारी जवांमर्दी की दाद दें।
अब पूछो कहाँ है वह सच जो
इस बुड्ढे ने सड़कों पर बकना शुरू किया था?
हमने अपने रेडियो के स्वर ऊंचे करा दिये हैं
और कहा है कि जोर-जोर से फिल्मी गीत बजायें
ताकि थिरकती धुनों की दिलकश बुलंदी में
इस बुड्ढे की बकवास दब जाये।
नासमझ बच्चों ने पटक दिये पोथियाँ और बस्ते
फेंक दी हैं खड़िया और स्लेट
इस नामाकूल जादूगर के पीछे चूहों की तरह
फदर-फदर भागते चलते आ रहे हैं।
और जिसका बच्चा परसों मारा गया
वह औरत आँचल परचम की तरह लहराती हुई
सड़क पर निकल आयी है।
खबरदार यह सारा मुल्क तुम्हारा है
पर जहाँ हो वहीं रहो
यह बगावत बर्दाश्त नहीं की जायेगी कि
तुम फासले तय करो और
मंजिल तक पहुँचो।
इस बार रेलों के चक्के हम खुद जाम कर देंगे
नावें मँझधार में रोक दी जायेंगी
बैलगाड़ियाँ सड़क किनारे नीम तले खड़ी कर दी जायेंगी
ट्रकों को नुक्कड़ से लौटा दिया जायेगा
सब अपनी-अपनी जगह पर ठप्प:
क्योंकि याद रखो कि मुल्क को आगे बढ़ना है
और उसके लिए जरूरी है कि जो जहाँ है
वहीं ठप कर दिया जाये

भूदान-यज्ञ: सोमवार, 11 जनवरी 71

बेताब मत हो
तुम्हें जलसा-जुलूस, हल्ला-गुल्ला, भीड़-भड़क्के का शौक है
बादशा को हमदर्दी है अपनी रियाया से
तुम्हारे शौक को पूरा करने के लिए
बादशा के खास हुक्म से
उसका अपना दरबार जुलूस की शक्ल में निकलेगा-
दर्शन करो।
वही रेलगाड़ियां तुम्हें मुफ्त लाद कर लायेंगी।
ट्रकों को झंडियों से सजाया जायेगा
नुक्कड़-नुक्कड़ पर प्याऊ बिठाया जायेगा
और पानी मांगेगा उसे इस बार शर्बत पेश किया जायेगा।
लाखों की तादाद में शामिल हो इस जुलूस में
और सड़क पर पैर घिसते हुए चलो
ताकि वह खून जो इस बुड्ढे की वजह से
बहा, वह पुछ जाये।
बादशाह सलामत को खून-खराबा पसंद नहीं।
खलक खुदा का मुल्क बादशाह का......हुकुम......

('कल्पना' के सौजन्य से)

● ब्योहार राजेन्द्रसिंह

सर्वोदय, जे. पी. और आंदोलन

ब्रह्म विद्या समाज के ६६ वें सम्मेलन में शामिल होने के लिए गत माह वाराणसी गया तो स्टेशन पर पहुंचते ही पता लगा कि जयप्रकाशजी भी काशी में हैं। उनसे मिलने का अच्छा अवसर अनायास ही हाथ लग रहा था। वे सारनाथ में पूर्वांचल के कार्यकर्ताओं के सम्मेलन में मार्गदर्शन देने के लिए आये थे। उनके सान्निध्य में कार्यकर्ताओं ने निश्चय किया कि बढ़े हुए लगान तथा विकास कर और भ्रष्ट मन्त्रियों के विरोध में उत्तरप्रदेश में जन-आंदोलन चलाया जाये।

मिलने का समय मांगने पर उन्होंने दूसरे दिन अपने साथ जलपान के लिए बुला लिया। हालैंड से आये एक पत्रकार से वार्तालाप करने के बाद उन्होंने मुझसे बातचीत शुरू की। दिसम्बर के मध्य में जबलपुर में हुई प्रान्तीय कार्यकर्ताओं की सर्वदलीय बैठक और संघर्ष समितियों के निर्माण की चर्चा की और उनसे जबलपुर पधारने की प्रार्थना की। पता चला कि मार्च तक के कार्यक्रम निर्धारित हो चुकने के कारण उसके बाद ही वे समय निकाल सकेंगे। अभी इन्दौर और उज्जैन में उनका दौरा हो ही चुका है।

आंदोलन के संबंध में बातचीत चलने पर उन्होंने बताया कि देशव्यापी समस्याओं के अतिरिक्त प्रांतीय समस्याओं को लेकर भी आंदोलन चलाया जा सकता है जैसा कि उत्तर प्रदेश के कार्यकर्ताओं ने मिलकर तय किया है।

इस समय मैंने जो प्रश्न पूछे और उनके जो उत्तर मिले वे इस प्रकार हैं:

प्रश्न : क्या आप आंदोलन को देशव्यापी रूप देना चाहते हैं?

उत्तर : यह प्रांतीय कार्यकर्ताओं की तैयारी व स्थानीय समस्याओं पर निर्भर है।

प्रश्न : बिहार की समस्या को लेकर आपका आंदोलन सर्वोदय के कार्यक्रमों को छोड़कर क्या राजनैतिक रूप धारण करता जा रहा है?

उत्तर : मेरा उद्देश्य राजनैतिक नहीं *किन्तु लोकशक्ति का जागरण करना ही है।*

प्रश्न: इस आंदोलन में पड़ने के कारण रचनात्मक कार्यकर्ताओं की ओर से लोगों का ध्यान मुड़कर राजनीति की ओर न हो जायेगा?

उत्तर : आंदोलन के समय ऐसा होना स्वाभाविक है किन्तु रचनात्मक कार्यों में लगे हुए कार्यकर्ता अपना काम किये जा रहे हैं।

प्रश्न : आपके आंदोलन के कारण सर्वोदयी कार्यकर्ताओं में भी सार्वजनिक कार्यकर्ता दो दलों में बंटते जा रहे हैं। क्या इससे सर्वोदय आंदोलन को क्षति नहीं पहुंचेगी?

उत्तर : मैं ऐसा नहीं मानता। सर्व सेवा संघ ने कार्यकर्ताओं को स्वतंत्रता दे दी है कि स्वेच्छा से भी आंदोलन में लगना चाहें तो लग सकते हैं। देश में शासन की नीतियों के प्रति जो असन्तोष व्याप्त है उसे व्यक्त करने के लिए मैंने उन्हें अहिंसा का मार्ग ही सुझाया है

प्रश्न : वर्तमान विधायकों के इस्तीफा देने से क्या बिहार की समस्या हल हो जायेगी? अगले चुनाव में भी इसी प्रकार के विधायक चुन लिये गये तो क्या होगा? क्या आप अपनी ओर से प्रत्याशी खड़े करेंगे?

उत्तर : यह समस्या विचाराधीन है।

प्रश्न : जब तक चुनाव की प्रणाली में आमूल परिवर्तन नहीं होता तब तक विधायकों के बदलने से क्या होगा?

उत्तर : चुनाव प्रणाली पर विचार करने के लिए एक समिति बना दी गयी है। उसका प्रतिवेदन आने पर आगे की नीति निर्धारित करेंगे।

प्रश्न : क्या आप परोक्ष चुनाव के पक्ष में हैं?

उत्तर : इससे कोई विशेष लाभ होने की आशा नहीं है।

प्रश्न : सुना है आपने सर्व सेवा संघ से इस्तीफा दे दिया है?

उत्तर : दे तो दिया था किन्तु अभी वह स्वीकृत नहीं हुआ है। उसका अन्तिम निर्णय नवदीप की बैठक में होगा।

प्रश्न : आपका आंदोलन सारे देश में फैल जायेगा तो आप अकेले उसका नेतृत्व कैसे सम्भालेंगे?

उत्तर : मैं तो देश के युवकों के हाथों में नेतृत्व देकर खुश होऊंगा। यदि वे चाहेंगे तो सलाह अवश्य देता रहूंगा।

प्रश्न : संघर्ष के लिए जो चार मुद्दे आपने निश्चित किये हैं अर्थात भ्रष्टाचार, महंगाई, बेरोजगारी और शिक्षा में सुधार ये समस्या जो देश भर में एक ही समान हैं। इनके आधार पर देशव्यापी आंदोलन क्यों नहीं चलाया जा सकता?

उत्तर : मुद्दों की कमी नहीं है किन्तु आंदोलन चलानेवालों की कमी है। उनके साथ यदि स्थानीय या प्रांतीय समस्याएं जुड़ जायेंगी तो वहां के कार्यकर्ता और अधिक उत्साह पा सकते हैं।

बाहर बहुत से लोग जे. पी. से मिलने के लिए इन्तजार में बैठे थे, इसलिए मैंने उनका अधिक समय न लेकर विदा मांग ली।

एक रपट

मध्यप्रदेश में जे. पी. का दौरा

मध्य प्रदेश के दौरे पर जाने के लिए जयप्रकाशनारायण पटना से जब दिल्ली पहुचे लगभग उसी समय समस्तीपुर बम-काड हुआ और फलस्वरूप रेलमन्त्री ललितनारायण मिश्र का निधन हो गया। दिल्ली मे अपनी एकमात्र सभा मे जे पी ने ललित बाबू को श्रद्धांजलि दी और मध्यप्रदेश के दौरे पर रवाना हो गये।

जयप्रकाशजी इस दौरे में पहले उज्जैन गये जहा उन्होंने तरुण शांति सेना के अखिल भारतीय शिविर को सम्बोधित किया। उस के बाद वे इन्दौर पहुचे जहा जनसभा के कार्यक्रम के अलावा उन्होंने मध्यप्रदेश मे आंदोलन के सम्बन्ध मे विचार विमर्श भी किया। दोनो ही नगरों में उनका अभूतपूर्व स्वागत हुआ।

तरुण शांति सैनिकों को सम्बोधित करते हुए जे. पी. ने उनका आह्वान देश के नव-निर्माण में शरीक होने के लिए किया। इस दौरे के अवसर पर उनके सामने आंदोलन वापस लेने के अनुरोध भी आये जिनका उन्होंने समुचित उत्तर दिया। एक अनुरोध यह था कि जिस प्रकार 1921 मे गाधीजी ने चौरी-चौरा का हिंसक कांड हो जाने पर आंदोलन वापस ले लिया था, वैसा ही जे. पी. भी ले लें। इस पर जे पी ने साफ किया कि उनके आंदोलन का किसी भी तरह की हिंसा से कोई सम्बन्ध नहीं है, इसलिए उसे वापस लेने का सवाल ही नहीं उठता। उन लोगों को जो कहते हैं कि आंदोलन मर चुका या असफल हो रहा है, उत्तर देते हुए जे. पी. ने कहा कि यदि ऐसा है तो आंदोलन वापस लेने की जरूरत ही क्या रह जाती है। उन्होंने कहा कि यदि आंदोलन मर चुका है तो मैं 'मुर्दे को वापस लेकर क्या करूंगा?'

जे.पी. के सान्निध्य का लाभ उठकर इस अवसर पर मध्यप्रदेश की हाल ही गठित जन-संघर्ष समिति ने राज्य में आंदोलन प्रारम्भ करने पर विचार-विमर्श किया। इस चर्चा मे तय हुआ कि समिति का पुनर्गठन किया जाये और इसके लिए बैठक २७ जनवरी को आमन्त्रित की गयी है।
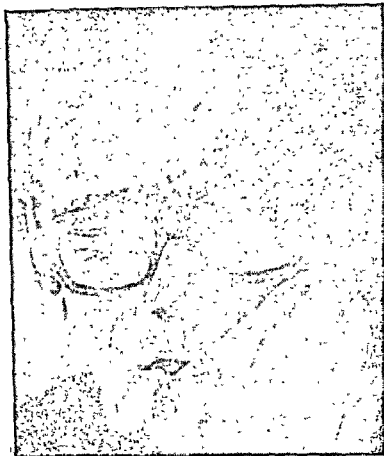
जे पी के मध्यप्रदेश के दौरे का प्रमुख उद्देश्य जन जागरण था और इसमें वे पूरी तरह सफल रहे। उनका जिस प्रकार और जितना स्वागत हुआ उससे स्पष्ट हो गया कि मध्यप्रदेश के लोग भी 'सम्पूर्ण क्रांति' का आंदोलन शुरू करने के लिए उतावले हो रहे हैं। लेकिन कदम सोच समझकर उठाये जाने की जरूरत है। मध्यप्रदेश मे बिहार के समान विधान सभा भंग या मन्त्रिमंडल की बर्खास्तगी की माग की जरूरत नहीं है लेकिन राजनीतिक-सामाजिक दशा में सुधार के लिए स्थानीय मुद्दों को आधार बनाकर आंदोलन चलाये जाने का औचित्य तो है ही। इनमे एक मुद्दा छत्तीसगढ़ का अकाल है जिससे राज्य के डेढ़ करोड़ से अधिक लोग प्रभावित हैं। इस अकाल का उपयोग बहुत से राजनीतिज्ञ अपनी राजनीति की रोटियां सेंकने के लिए कर रहे हैं। अकाल की इस समस्या को राज्य में आंदोलन के लिए एक मुद्दे के रूप मे शामिल करने का निर्णय किया गया और जे. पी. निकट भविष्य मे छत्तीसगढ़ का दौरा करके हालात के मौके पर अध्ययन तथा जन-जागरण के लिए सहमत हो गये। संघर्ष समिति मे शामिल विरोधी दलों ने उन्हें आश्वासन दिया कि वे लोग उनके दौरे के पहले ही अकाल से सम्बन्धित आंकड़े एकत्र करके उन्हें भेज देंगे। ●

मध्यप्रदेश की यात्रा में

समाचार

खादी आयोग की ओर से पंजाब की सभी खादी संस्थाओं के मंत्री व व्यवस्थापकों का दो दिन का एक लोक-शिक्षण शिविर खादी आयोग के प्रतिनिधि की देखरेख में खादी संघ के जलन्धर कार्यालय में हुआ। एक प्रार्थना सभा में संत विनोबा के मौन को लोक कल्याण के लिए एक महान तपस्या मानते हुए बाबा की लम्बी आयु और स्वास्थ्य के लिए भगवान से प्रार्थना की गयी।

सर्व सेवा संघ से प्राप्त सूचना के अनुसार दिसम्बर ७४ में ३५४ नये उपदानदाता प्राप्त हुए और १२४ उपदानदाताओं का नवीकरण हुआ। सन ७४ के अन्त तक प्राप्त कुल उपदानदाताओं की संख्या ४३३५ पहुंच गयी है।

इस माह में सबसे अधिक २२६ उपदानदाता तमिलनाडु से मिले। उत्तरप्रदेश से ३७ हरियाणा से ३१ और पश्चिमी बंगाल १६, आंध्र तथा मध्यप्रदेश ६-६, महाराष्ट्र ५, राजस्थान तथा दिल्ली ४-४, गुजरात ३, कर्नाटक, बिहार तथा अरुणाचल २-२ और विदेश से १ उपदानदाता मिला।

भूदान की जमीन का नया वितरण अभियान करछना तहसील से प्रारम्भ करने के लिए ३०, ३१ दिसम्बर को करछना ब्लाक में शिविर हुआ और १ जनवरी से ४ जनवरी तक टोलिया गांव-गांव में गयीं। वहां ग्रामीणों की ग्राम सभाएं की गयीं और सर्वसम्मति से भूमिहीनों को पट्टे बांटे गये। अन्तिम समारोह भीरपुर के सर्वोदय शिक्षा सदन इन्टर कालेज में हुआ। आयोजन में सुरेशराम भाई, दादा मल्लूसिंह एवं हरिप्रसाद गुप्त का मार्गदर्शन प्राप्त रहा। ब्रह्मलोचन दुबे और सुधीर मिश्र का सहयोग सराहनीय रहा।

कपिल भाई के निधन पर रायबरेली के रचनात्मक कार्यकर्ताओं की एक शोकसभा बद्रीविशाल दीक्षित की अध्यक्षता में हुई। लक्ष्मीकान्त पांडे, कृष्णकुमार भाई तथा कपिल अवस्थी ने कपिल भाई के संस्मरण सुनाये और शोक प्रस्ताव पारित हुआ।

डा. गोपीचन्दजी भार्गव की पुण्यतिथि पर पंजाब खादी मंडल के सभी कार्यकर्ताओं ने आदमपुर दाबा में सभा का आयोजन किया जिसमें वक्ताओं ने डा. भार्गव का मार्ग अपनाने की प्रेरणा दी।

जयपुर में गांधी शांति प्रतिष्ठान द्वारा आयोजित विचार-गोष्ठी में डा० हुकमचंद भारिल्ल ने 'भगवान महावीर आधुनिक संदर्भ में' विषय पर भाषण दिया। अध्यक्षता देवेन्द्रराज मेहता ने की। केन्द्र के सचिव रामेश्वर विद्यार्थी ने आगन्तुकों का स्वागत किया। गांधी शांति प्रतिष्ठान में आयोजित एक अन्य सभा में नगर की रचनात्मक संस्थाओं, सार्वजनिक कार्यकर्ताओं तथा नगर की ओर से स्वामी शरणानन्द, हीरालाल शास्त्री और शंकरराव देव को श्रद्धांजलि अर्पित की गयी। गोकुलभाई भट्ट, रामनारायण चौधरी, जवाहिरलाल जैन, रामेश्वर अग्रवाल, राजरूप टांक आदि ने दिवंगतों की जीवन-साधना पर प्रकाश डाला।

सिद्धराज ढड्ढा, खादी बोर्ड के अध्यक्ष श्री भोगीलाल पंड्या, पूर्णचन्द जैन, भगवानदास माहेश्वरी भी शोक-सभा में उपस्थित रहे। सभा के अध्यक्ष विष्णुदत्त शर्मा ने कहा कि जो समाज के लिए अपना जीवन अर्पित करता है, वह मरकर भी जीवित रहता है।

अजमेर में स्थानीय गांधी शांति प्रतिष्ठान केन्द्र की ओर से जयप्रकाशजी के रेकार्डित भाषणों को सार्वजनिक रूप से सुनाने के कार्यक्रम चल रहे हैं। पहला कार्यक्रम प्रतिष्ठान के सभाकक्ष में और दूसरा व तीसरा कार्यक्रम नगर के नल्ला बाजार व मदारगेट चौराहे पर हुआ। इन कार्यक्रमों में भारी भीड़ रही। जनवरी में प्रतिष्ठान की ओर से नगर के प्रत्येक वार्ड में कम से कम एक स्थान पर इन टेप भाषणों के सुनाने का कार्यक्रम चलाया जा रहा है।

अजमेर में गांधी शांति प्रतिष्ठान केन्द्र में सर्वोदय विचार परीक्षा केन्द्र शुरू किया गया है। पहली बार अजमेर में इन परीक्षाओं के लिए फार्म भराये जा रहे हैं। जनवरी ७५ में परीक्षार्थियों के लिए कक्षाओं व भाषणों का भी आयोजन होगा।

'भूदान-यज्ञ' का अगला अंक लोकतन्त्र विशेषांक होगा और गणतन्त्र दिवस पर प्रकाशित होगा। इस अंक की तैयारी के कारण सोमवार २० जनवरी का अंक नहीं निकलेगा। स०

सही संघर्ष किसान के खेत में होगा

बिहार जन-आंदोलन के संदर्भ में बिहार सरकार द्वारा गैरकानूनी तरीकों से किये गये दमन की कलई जब न्यायालयों के फैसलों से खुलने लगी तो उसने अब दूसरा रास्ता अपना लिया है। वह पहले आंदोलनकारियों को किसी-न-किसी कानून में पकड़ती है और जब आंदोलनकारी उच्च न्यायालय या उच्चतम न्यायालय में सरकार को चुनौती देते हैं, तो मुकदमे की सुनवाई के २-४ दिन पूर्व सरकार मुकदमे वापस ले लेती है। पिछले दिनों न्यायालयों द्वारा सुने गये मुकदमों में ९० प्रतिशत से ऊपर के फैसले सरकार के खिलाफ हुए हैं। शायद अब सरकार अधिक मुकदमे हारना नहीं चाहती, इसलिए सुनवाई की तारीख से पूर्व ही अपने आदेश वापस ले लेती है। इस संदर्भ में पिछले दिनों अनेक छात्र-नेता तथा जननेता 'मीसा' आदि काले कानूनों के तहत गिरफ्तार थे, उन्हें सुनवाई के पूर्व ही छोड़ दिया गया। उसी संदर्भ में पांच वरिष्ठ नेताओं का भी बिहार से निष्कासन आदेश सरकार ने वापस लिया है। १६ दिसम्बर को पटना हाईकोर्ट में सिद्धराज ढड्ढा आदि कुछ निष्कासित नेताओं की सुनवाई होनेवाली थी। सिद्धराजजी ने सरकार के निष्कासन आदेश का उल्लंघन किया और १५ दिसम्बर को ही पटना आ गये। उसी दिन सरकार ने सिद्धराज ढड्ढा, एस० एम० जोशी, भाई महावीर, ए० बी० जेम्स तथा समर गुहा के निष्कासन आदेश वापस लिये।

इतना ही नहीं अनेक गिरफ्तार किये गये लोगों पर सरकार द्वारा लगाये गये आरोपों में कुछ मनोरंजक तथ्य भी सामने आये हैं। जैसे बिहार सोशलिस्ट पार्टी के अध्यक्ष रामानन्द तिवारी को १ अक्तूबर को मीसा के अन्तर्गत गिरफ्तार करते समय लगाये गये पच्चीस आरोपों में से एक आरोप इस प्रकार था :

"रामानन्द तिवारी १९४२ में बिहार पुलिस के कांस्टेबल थे। उन्हें तब राजनीति में सक्रिय भाग लेने पर नौकरी से निकाल दिया गया। बरखास्त हो जाने के बाद, उन्होंने राज्य भर में बिहार पुलिस और जेल कर्मचारी संघ का संगठन किया और लगभग सभी जिलों में इसकी शाखाएं खोलीं। १९४७ के पुलिस-विद्रोह में उन्होंने सक्रिय रूप से भाग लिया और उसको भड़काया। यह विद्रोह आखिर में कुचल दिया गया और भारतीय दंड विधान की १२१/,१२१ए/१२० बी धाराओं के तहत पटना, गया, मुंगेर और सारन जिले के कई कांस्टेबलों पर मुकदमा चलाया गया और उन्हें जेल की सजा दी गयी। आजादी के बाद उनको रिहा जरूर कर दिया गया लेकिन फिर से बहाल नहीं किया गया। रामानन्द तिवारी ने राज्य के कांस्टेबलों पर अपना प्रभाव बनाये रखा। उनके द्वारा गठित यूनियनों को सरकारी मान्यता प्रदान नहीं की गयी लेकिन वे अनधिकृतरूप से काम करती रहीं।"

सरकार के इस आरोप से क्या यह सवाल नहीं उठता कि भारत की वर्तमान सरकार एक आजाद देश की सरकार है अथवा अंग्रेजी शासन की एक कड़ी ?

शुतुरमुर्ग सरकार

गत २६ दिसम्बर को हजारीबाग में आरक्षी प्रशिक्षण महाविद्यालय के वार्षिक धारणपरेड की सलामी लेने के बाद शाम को संवाददाताओं से बात करते हुए बिहार के आरक्षी महानिरीक्षक ए० के० घोष ने प्रदेश में शान्ति व्यवस्था संतोषजनक बताते हुए कहा कि जयप्रकाशजी का आंदोलन अब शिथिल पड़ गया है। बिहार में शांति व्यवस्था के सवाल पर विधान सभा में बोलते हुए वित्त मंत्री दरोगा प्रसाद राय ने कहा है कि जे०पी० का आंदोलन मर चुका है।

वैसे उपर्युक्त दोनों महानुभाव इस आंदोलन के समक्ष काफी बौने हैं फिर भी उनके कथन यह सिद्ध करते हैं कि आंदोलन का अर्थ तोड़फोड़, अराजकता आदि बनाये रखना ही है। यदि हिंसक वारदातें और तोड़फोड़ आदि की कार्रवाई न हो तो सरकार यह बयान देने लगती है कि आंदोलन अब मृतप्राय हो रहा है। वास्तविकता यह है कि आंदोलनकारी आंदोलन के दौरान हिंसक और तोड़फोड़ की घटनाओं को आंदोलन के लिए अत्यंत हानिकर मानते हैं। यह बात सही है कि आंदोलन अब जिस चरण में पहुंच रहा है उसमें हो-हल्ला कुछ कम दिखाई पड़ेगा। लेकिन अब जनता को सरकार के समक्ष आकर नहीं बल्कि सरकार को ही जनता के बीच जाकर अपने अस्तित्व हेतु लड़ना पड़ेगा। गांव-गांव में संघर्ष समितियों के निर्माण और जनता सरकार की स्थापना के बाद जब नागरिक टैक्स देने से इन्कार करेंगे तो मजबूर होकर सरकार को टैक्स वसूली के बहाने गांव तक जाना पड़ेगा। उस समय संघर्ष की सही शुरुआत होगी जो विधान सभा के गेट पर नहीं बल्कि किसान के खेत में होगा। संघर्ष का यह स्वरूप सरकार को अपनी शुतुरमुर्गी से भले न दिखाई पड़े लेकिन इस व्यापक संघर्ष में सरकार को मुंह की खानी पड़ेगी।

संघर्ष समितियां

बिहार जन-आंदोलन के संदर्भ में प्रमंडल से पंचायत तथा ग्राम स्तर तक छात्र एवं जन-संघर्ष समितियों का गठन लगभग पूरा हो रहा है। पूर्णिया जिले के रूपौली प्रखंड में २१ तथा भवानीपुर प्रखंड में ५ पंचायतों में संघर्ष समितियों का गठन हो चुका है। इसी प्रकार कटिहार जिले में मनिहारी प्रखंड में ११ संघर्ष समितियों का गठन हुआ है। सिमरी प्रखंड में जनता सरकार के गठन की सूचना प्राप्त हुई है। वहां की सभी पंचायतों में संघर्ष समितियों का गठन हो चुका है। राजपुर प्रखंड में आधी से अधिक पंचायतों में संघर्ष समितियां बन चुकी हैं और जनता सरकार की स्थापना का प्रयास चल रहा है। औरंगाबाद जिले में ६२ पंचायतों में संघर्ष समितियों के गठन की सूचना मिली है। सारन जिले में लगभग हर प्रखंड में छात्र एवं जन-संघर्ष समितियों का गठन पंचायत स्तर पर हो गया है। नवादा में १५ प्रखंडों में समितियां बनी हैं तथा दरभंगा में वार्ड स्तर पर ११ महिला संघर्ष समितियां बनी हैं। कौआकोल में ११ पंचायत स्तरीय और १२३ ग्राम स्तरीय संघर्ष समितियों के गठन की घोषणा हुई है। संघर्ष समितियों के गठन के

समाचार तीव्र-गति से प्राप्त हो रहे हैं और जनता सरकार के गठन तथा करबंदी अभियान जोर-शोर से चलाये जाने की सूचना मिली है।

भ्रष्टाचार तथ्य प्रकाशन समिति

बिहार प्रदेश छात्र संघर्ष समिति के तत्वावधान मे राजनैतिक, प्रशासनिक, व्यापारिक तथा अन्य क्षेत्रो मे व्याप्त भ्रष्टाचार के तथ्यों का पता लगाने, उन्हें जाच कर प्रकाशित करने तथा भ्रष्ट व्यक्तियो के विरुद्ध अभियान चलाने की दृष्टि से श्यामबहादुर 'नम्र' के संयोजकत्व मे एक पाच सदस्यीय भ्रष्टाचार तथ्य प्रकाशन समिति की स्थापना की गयी है। समिति की तरफ से उड़न-दस्तो का गठन होगा जो विभिन्न क्षेत्रोंमें भ्रष्टाचार का पता लगायेंगे और समिति की ओर से० सबधित व्यक्तियो के विरुद्ध अभियान की कार्रवाई शुरू की जायेगी।

पढ़ाई नहीं तो फीस नहीं

बिहार के छात्रो ने व्यापक रूप से 'पढाई नही तो फीस नहीं' अभियान चलाना शुरू किया है। इस सदर्भ मे मगध विश्वविद्यालय के कुलपति के निवास पर हजारो छात्रो ने प्रदर्शन किया और विद्यालयो की बदी की अवधि की फीस माफ करने की माग करते हुए विद्यालय मे फैली दुर्व्यवस्था के लिए कुलपति तथा वर्तमान सरकार को दोषी ठहराया। कुलपति की अनुपस्थिति मे छात्रो ने जिला अधिकारी के समक्ष एक स्मरण-पत्र प्रस्तुत किया। ज्ञात हुआ है कि मगध विश्वविद्यालय के छात्र ५ जनवरी से विद्यालय का कामकाज ठप्प करने का अभियान चलायेंगे।

'पढाई नही तो फीस नहीं' अभियान मात्र पटना से ही नहीं बल्कि प्रदेश के अन्य जिलों मे भी ज़ोर-शोर से चलाने के समाचार प्राप्त हो रहे हैं। पता चला है कि गत ११दिसम्बर को सासाराम के हजारो छात्रो ने रोहतास के जिलाधिकारी के कार्यालय के समक्ष 'पढ़ाई नही तो फीस नहीं' का नारा लगाते हुए प्रदर्शन किया तथा फरवरी ७४ से नवम्बर ७४ तक का शिक्षण शुल्क माफ करने, मीसा में गिरफ्तार छात्रों को रिहा करने और उन पर चलाये गये मुकदमे वापस लेने सहित दस सूत्री मार्गे प्रस्तुत की।

विधान सभा के समक्ष सत्याग्रह

बिहार विधानसभा के शरदकालीन अधिवेशन के १२ वें दिन १६ दिसम्बर तक कुल ६०० सत्याग्रही विधायकों के घेराव तथा विधानसभा के फाटको पर धरना देने के सिलसिले मे गिरफ्तार हुए। इस संदर्भ मे अब तक पटना, सिंहभूमि, नालदा, रोहतास, गया, राची, मुगेर, भागलपुर, मुजफ्फरपुर, हजारीबाग, समस्तीपुर, गिरीडीह, सथाल-परगना, मधुबनी, धनबाद, सहरसा, बेगूसराय, नवादा, खगड़िया, औरगाबाद, पूर्णिया और छपरा जिले के विधायको का घेराव संबधित विधायको के क्षेत्र की जनता ने उनके निवासों तथा विधानसभा के फाटको पर किया है। छात्र सघर्ष समिति की विज्ञप्ति मे बताया गया है कि अबतक कई हजार सत्याग्रहियो ने इस कार्यक्रम मे भाग लिया। लेकिन सरकार ने उन्हे गिरफ्तार न करके छोड़ दिया। ❖

□ रमाकान्त चौधरी

कांग्रेस और शासन का नैतिक अधिकार

बहस की दृष्टि से यह मान भी लें कि जे० पी० का सारा मार्ग ही गलत है तो सवाल उठता है कि कांग्रेस क्या कर रही है? कांग्रेस के पास आज इतनी ताकत है कि जितनी किसी अशोक या अकबर के पास भी नही होगी। अत: यदि कांग्रेस जे० पी० को चुनावी अखाड़े मे असफल सिद्ध करना चाहे तो यह काम शायद वह कर सकती है। परन्तु इससे होगा क्या? जे० पी० द्वारा उठाये गये सारे प्रश्नो के उत्तर दे दिये जायेंगे? यदि जे० पी० के सारे उत्तर गलत हैं तो क्या कांग्रेस के सारे उत्तर सही हैं?

प्रधान मन्त्री कहती हैं कि जिसे कांग्रेस को गलत सिद्ध करना हो वह चुनाव में खड़ा हो और उसे गलत सिद्ध करे। बिल्कुल ठीक बात है। लेकिन कांग्रेस को यह कैसे लगता है कि उसे जो बहुमत प्राप्त हो जाता है वह इस देश के लोगो की पूर्ण सहमति का द्योतक है। उसे जो मत प्राप्त होता है वह तो निषेधात्मक मत है, विधेयात्मक नहीं। यह केवल इस बात का द्योतक है कि सगठन की दृष्टि से आज भी विपक्ष मे एक भी शक्तिशाली पार्टी नही है।

मान लीजिये कि इस देश के समस्त ईमानदार, देशभक्त और राष्ट्रवादी कांग्रेस मे ही हैं। यह भी मान लें कि कांग्रेस ही एकमात्र ऐसा दल है कि जो इस देश को एकता दे सका है और दे सकता है। यह भी मानें कि सारे विपक्षी दल भ्रष्टो और देशद्रोहियो से भरे पड़े है। लेकिन यदि ऐसी बात है तो देश आगे क्यो नही बढ़ पाता? नौकरशाही, व्यापारियो, राजाओ, उद्योगपतियो विपक्षी नेताओ और जनता ने यदि कांग्रेस को सहयोग नही दिया, तो इन्हे सहयोग देने के लिए प्रेरित करना किसका काम था? कचहरी में कोई किसान जाये और उसका काम न होता हो, उद्योगपति बिना रिश्वत दिये उद्योग नही खोल सकता हो, हाथ गर्म किये बिना नौकरी न मिलती हो, बिना कुछ खर्च किये यदि स्थानान्तर नहीं हो सकता हो और काला बाजार मे गेहूँ खरीदे बगैर किसी का पेट न भरता हो तो इसकी जवाबदारी इस देश के मतदाता की है?

अब जे० पी० जब चुनाव प्रणाली पर प्रश्नचिह्न लगाते हैं तो कोई बहुत बड़ा अन्याय नही करते (आशा है कि कुछ लोगों को स्मरण होगा कि उनके शासन मे ससदीय प्रजातत्र को बुर्जुआ प्रजातत्र कहा जाता है) कांग्रेस ने मजबूरियो से लड़ने की कब कोशिश की? कांग्रेस चाहती तो अमीरो से चन्दा लिये बगैर भी चुनाव लड सकती थी। स्वस्थ प्रजातांत्रिक परम्पराओं का निर्माण करना भी उसका काम था। उसके पास इतना बड़ा बहुमत था कि वह उदार होने का खतरा भी उठा सकती थी। उसमें इतनी शक्ति और महत्ता थी कि वह अपनी स्वस्थ परंपराओं के साथ पूरे राष्ट्र को लेकर चल सकती थी। परन्तु वह राष्ट्रीय नेतृत्वसे पतित होकर दलीय नेतृत्व पर उतर आयी। उसने अपना चक्रवर्तित्व स्थापित करने के लिए एक ऐसी शिक्षा व्यवस्था व अर्थव्यवस्था को जन्म दिया कि उसमें उसके खिलाफ कोई चुनकर न आ सके।

उसने एक ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी कि गलत काम करें तो भी उसके खिलाफ कोई चुनौती उत्पन्न न हो।

आज भी यदि कांग्रेस चाहे तो इस सारी व्यवस्था को बदला जा सकता है। वह लक्ष्मी व सत्ता को तस्करों, कालाबाजारियों, व बेईमान राजनीतिज्ञों की कैद से निकालकर उन उत्पादकों के पास पहुंचा सकती है कि जो इस देश की दौलत में वृद्धि करते हैं। कानून में बिना परिवर्तन किये ही वह घोषणा कर सकती है कि भविष्य में जो चुनाव होंगे उसमें वह एक पैसे के काले धन का भी उपयोग नहीं करेगी। वह चाहे तो आज ही घोषणा कर सकती है कि हम वर्षों तक महलों में रह लिये, आज से हमारा वास झोपड़ियों में होगा। वह आज ही लाल किले पर से ऐलान कर कह सकती है कि आज के पश्चात् यदि कर्मचारी व अधिकारियों ने या किसी मंत्री ने एक पैसे की भी बेईमानी की तो उसका सामाजिक बहिष्कार होगा। वह यह भी कह सकती है कि अब तक बहुत हरामखोरी हो चुकी है, अब जो हरामखोरी करेगा वह अधिकारी हो या कारकुन उसे रोजी से हाथ धोना होगा।

यही जे० पी० के आन्दोलन का उचित उत्तर हो सकता है। इसके बजाय अन्य किसी ढंग से उत्तर देकर कांग्रेस चुनाव में बहुमत प्राप्त भले कर ले, वह इस देश पर शासन करने का नैतिक अधिकार खो ही बैठेगी। जो लोग केवल कांग्रेस को समाप्त करने में ही दिलचस्पी ले रहे हैं वे भी देश में एक शून्य पैदा करने में सफल हो सकते हैं। कहा जाता है कि जे० पी० और विपक्षी दल मिलकर प्रजातंत्र का विनाश कर रहे हैं। लेकिन प्रजातन्त्र के प्रति जो आस्था टूटी है उसके लिए कांग्रेस जवाबदार नहीं है? कोई शक नहीं कि विपक्ष ने भी धन, हिंसा, राजाओं और सामंतों का आश्रय लिया। क्या इसके साथ विद्यार्थियों का यह आरोप सच नहीं है कि कांग्रेस ने चुनाव जीतने के लिए व्यापक पैमाने पर सत्ता और धन का बेतहाशा उपयोग किया।

कांग्रेस ने अब भी अपनी राह नहीं बदली तो जे० पी० भले ही असफल हों (अन्य किसी में अपने आपको बदलने की क्षमता भी नहीं है) लेकिन भारत भी पूर्ण असफल होकर उसी सामंती युग की ओर लौट जायेगा जिसमें राजा तो बदल जाता था लेकिन तन्त्र वही का वही रहता था। तलवार बदल जाती थी और वही की वही रह जाती थी बकरे की गरदन।

खैर जो हुआ सो हुआ। पर उसका आगे का *क्या कार्यक्रम है?* क्या वही रफ्तार बढ़ेगी, आगे भी जारी रहनेवाली है कि जो अभी तक जारी है। या कोई परिवर्तन होगा? *यदि बेढंगी रफ्तार में परिवर्तन नहीं होगा* तो परिस्थितियों में परिवर्तन किस प्रकार होगा? ○

— शिवमूर्ति

सर्व सेवा संघ और आन्दोलन का चौराहा

जयप्रकाश बाबू के नेतृत्व में भ्रष्टाचार *महगाई और बेरोजगारी से सम्बन्धित* जो आन्दोलन चल रहा है, उस सम्बन्ध में लोकसेवकों और सर्व सेवा संघ के कुछ सदस्यों में मतभेद की बात की जाती है। इस सम्बन्ध में कभी-कभी पर्चे भी वितरित होते हैं और *बात यहां तक आ गयी है कि जयप्रकाश बाबू* द्वारा सर्व सेवा संघ से त्याग-पत्र देने की बात भी सुनी जाती है।

जयप्रकाश मार्क्सवाद से तथाकथित गांधीवाद के रास्ते पर आये हैं। तथाकथित *इसलिए कहा है कि सम्भवत: गांधीजी स्वयम्* ही गांधीवाद जैसे किसी नामकरण को स्वीकार करने के पक्ष में नहीं थे। लेकिन आम जनता साधारण तौर पर व्यक्ति और उसके विचारों से ही प्रभावित होती है। शेष बौद्धिक वर्ग तदनुसार ही उसको समझने का प्रयास करता है। आन्दोलन कोई भी हो, *उसके दो पक्ष होते ही हैं। एक विधायक* अथवा रचनात्मक और दूसरा अवरोधक। किसी भी आन्दोलन के सामने जो अवरोधक तत्व होते हैं उनको मार्ग से हटाना आवश्यक होता है। अवरोधक तत्वों के रास्ते से हटाने की प्रक्रिया का नाम ही संघर्ष है। जब तक *संघर्ष द्वारा अवरोधक तत्वों को हटा नहीं* दिया जाता, तब तक विकास, सुधार, उत्थान तथा क्रान्ति का मार्ग अवरुद्ध रहता है और फिर हम किसी भी प्रकार अपने लक्ष्य तक पहुंचने में समर्थ नहीं हो पाते। इससे संघर्ष के उग्र होने की सम्भावना सदा मौजूद रहती है। यही बात वर्तमान आन्दोलन के सम्बन्ध में भी कही जा सकती है। देश में भ्रष्टाचार, महगाई और बेरोजगारी इतने *सर्वव्यापी हो गये हैं* कि उनके खिलाफ जन-भावनाएं बड़ी उग्र हो चुकी हैं। फल यह है कि कभी-कभी विस्फोटक स्थिति दीख पड़ने लगती है और विद्यार्थी, गृहिणियां, मजदूर, कर्मचारी तथा अन्य वर्ग सामने आते हैं। लेकिन चूंकि भावनाओं का यह सारा प्रदर्शन असंगठित और छिटपुट होता है, इसलिए आग पर रखे पानी भरे *पात्र में डालेवाला एक उफान साबित होता* है जिससे आग बुझती नजर आती है और सारा प्रयास विफल हो जाता लगता है। जिन तत्वों ने अपनी इन भावनाओं का समय-समय पर प्रदर्शन किया, वे इस बात को समझ गये और उनको उपर्युक्त सदर्भ में यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि उनको एक ऐसा मार्गदर्शक मिले जिसके दिल में आग हो और दिमाग अत्यन्त शीतल हो अथवा जो महान क्रान्तिकारी हो। इस विचार के साथ वे लोग जयप्रकाश बाबू के पास पहुंचे और उन्होंने उनके नेतृत्व की मांग की। जयप्रकाश बाबू ने इसे स्वीकार किया। आज वह इन लोगों का नेतृत्व कर रहे हैं और संगठित रूप में उनको सामने ला रहे हैं।

जिन लोगों ने लोकनायक जयप्रकाश को देखा है वे जानते होंगे कि इतना बड़े क्रान्तिकारी नेता होने पर भी उनकी वाणी में न कहीं आवेश होता है और न उग्रता। शब्दों द्वारा उनकी अभिव्यक्ति सौम्य से सौम्यतर और सौम्यतम होती है। ऐसा भी अवसर आता है जब नवयुवकों के बीच जयप्रकाश बाबू उपस्थित रहते हैं लेकिन युवकों को उनकी उपस्थिति का भान नहीं रहता और आवेश में युवक जो मन में आता सो कहते हैं। फिर भी लोकनायक को देखने से ऐसा नहीं लगता कि उनको यह एहसास हो रहा हो कि उनकी उपेक्षा हो रही है। बल्कि वह

नवयुवकों को अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति का पूरा अवसर देते हैं और फिर उनका मार्गदर्शन करते हैं। इससे बड़ा अहिंसा का इस प्रकार का मूर्तिमान स्वरूप शायद ही कोई और रहा हो जिसने इस प्रकार नवयुवकों को प्रभावित किया हो।

जयप्रकाश वह नेता हैं जो जानबूझकर ज्वालामुखी के मुंह पर बैठने को आतुर रहते हैं और जब तक वहां पर बैठे रहते हैं तब तक ज्वालामुखी भी शीतल और शांत रहता है। इसलिए किसी को भी ऐसे नेता से आशंकित होने की जरूरत नहीं है।

जहां तक सर्व सेवा संघ की बात है उस सम्बन्ध में इतना ही कहा जा सकता है कि गांधीजी के जाने के बाद विनोबाजी ने गांधीजी के विचारों को स्वरूप देने का सफल प्रयास किया। वह सारा प्रयास ही एक आंदोलन के रूप में सामने आया। उसकी जो निष्पत्ति-निरसी वह आज तक के सभी आन्दोलनों से बहुत आगे रहा। इतनी सफलता किसी को नहीं मिली। एक संगठित सरकार-द्वारा जो आशा की जा सकती थी वह भी पूरी नहीं हुई, और उसके मुकाबले विनोबाजी के द्वारा संचालित आन्दोलन के आधार पर भू-दान में जो कार्य हुआ वह अनोखा और अद्वितीय रहा। सामन्तयुगीन, पूंजी पर आधारित और व्यक्तिवादी समाज में ग्राम-दान के द्वारा वर्गनिराकरण तथा स्वतन्त्रता, बन्धुत्व, और समानता का जो प्रयास किया गया वह भी अपने में एक ही रहा है। वह भारत की धरती के अनुरूप और शान्ति तथा सद्भावना का दृढ़ आधार रहा है। लेकिन ऐसे ऊंचे और व्यापक ध्येय और कार्यक्रम की सफलता के लिए लोकसेवकों की जिस बड़ी सेना की आवश्यकता थी और है उसका अभाव पहले भी था और आज भी है। अब इस आन्दोलन को सफल बनाने और क्रान्ति के तत्व से जोड़ने का बहुत बड़ा श्रेय लोकनायक जयप्रकाश को है। लेकिन आज की शिक्षा के कारण समाज का बहुत बड़ा वर्ग इसको पूरी तरह समझ नहीं पाया क्योंकि जो आया वह समझता है उसका भू-दान ग्राम-दान, नयी तालीम, खादी और ग्रामोद्योग तथा सर्वोदय की अन्य गतिविधियों में अभाव रहा है। आज वह अवसर जयप्रकाश के साथ अपने आप आ गया। देश की शक्ति का वह सर्वोदय की दिशा में संगठन और उपयोग कर रहे हैं। इससे अच्छा और कौन सा प्रसंग हो सकता है। आन्दोलन में ऐसे लोगों के सम्मिलित होने की सम्भावना हो सकती है जो थोड़े उग्र हों तथा कुछ कटुता से भरे हों। लेकिन मधुर और गुण-ग्राही लोकनायक तुलसीदास की उस चौपाई को चरितार्थ कर रहे हैं जिसमें कहा गया है कि, 'धूमहु तजइ सहज करुआई। अगरु प्रसंग सुगंध बसाई।' मन विश्वास है कि अंत में सब कुछ मधुर और सुगंधयुक्त ही रहेगा?

जहां तक सर्वोदय से सम्बन्धित सौम्य तरीके की बात है समझ लेना आवश्यक है कि यह तब तक पूरी होनेवाली नहीं है जब तक भारत के प्रत्येक गांव में समझ-बूझ कर काम करनेवाला कम से कम एक लोकनायक न हो। सारा काम सत्य और अहिंसा का प्रतीक हो, न कि आज जैसा गतिहीन और जड़वत काम हो जो एक ढर्रे पर चल रहा है और धीरे-धीरे चेतनाहीन खादी और ग्रामोद्योग का रूप लेता जा रहा है।

अंत में कहा जा सकता है कि सर्व सेवा संघ के लोग नैतिक-पथ का ध्यान रखें और विनोबाजी के सामने लोगों ने जो संकल्प किया और निर्णय लिया है, उससे अलग न हों। अत्यन्त प्रेमपूर्वक एक दूसरे से अपना सम्बन्ध बनाये रखें तथा जो लोग आन्दोलन के साथ जाना चाहें वे आंदोलन के साथ जायें और जो ग्राम-स्वराज्य की स्थापना के लिए अन्य तरीके से रचनात्मक कार्य करना चाहें, वे वैसा करें। ऐसा होने पर न जयप्रकाश बाबू को त्याग-पत्र देने की आवश्यकता होगी और न अन्य लोगों को परेशान और भयभीत होने की बात होगी। सर्वोदय, पूज्य विनोबा और लोकनायक जयप्रकाश के सम्बन्ध इतने अटूट और दृढ़ हैं कि वे एक दूसरे से अलग हो ही नहीं सकते। □

धूलिया जिले में नये संघर्ष की शुरुआत

धूलिया जिले में एक नये संघर्ष की शुरुआत हो रही है क्योंकि वहां 'अक्कलकुवा तहसील में सदियों से कब्जेदार की हैसियत से बसे सात हजार किसानों को टैनेंट बना देने की कोशिश सरकार कर रही है। इनको १६१० के और उसके पहले के भी सभी सर्वेक्षणों में कब्जेदार माना गया था।

कब्जेदारों को टेनेंट बनाने के इस काम के लिए पन्द्रह तहसीलदारों को खास तौर पर [illegible] किया गया है कि वे गांव-गांव जाकर लोगों की सहमति मुआवजा देने के पक्ष में [illegible] करें। लेकिन ये लोग कब्जेदार की राय [illegible]ने के बजाय तालुका पंचायतों की जीपों में घूमते हुए लोगों को डरा-धमकाकर सहमति ले रहे हैं। वे यह कहने में भी नहीं चूकते कि सहमति नहीं दोगे तो जेल में बन्द कर दिये जाओगे या जमीन छीन ली जायेगी।

तहसीलदारों के इस रवैये के विरोध में गांव-गांव में जागरण हो चला है और सभाएं की जा रही हैं। ऐसी सभाएं जमाना, दाब, जामली, मोलगी, खापर, अक्कलकुवा, मोरंबा, अमलीबारी में हो चुकी हैं। एक संघर्ष समिति भी गठित हुई है जिसके संयोजक सतपुड़ा सर्वोदय मंडल के संचालक दामोदरदास मूंदड़ा बनाये गये हैं। सदस्यों में जेवमसिंह, यार मोहम्मद, गोरजी शूरजी, बुलाखीदास भाई, धनजी भाई, भाऊ गोविन्द चौधरी, जमादार साहब, पी. ओ. कुलकर्णी तथा डा. वसुधा भाई धागमवार शामिल हैं।

मामले की जांच महाराष्ट्र सर्वोदय मंडल की ओर से कराये जाने के प्रस्ताव भी सभाओं में पारित हुए हैं।

'भूदान-यज्ञ' में प्रकाशन के लिए सामग्री देवनागरी लिपि में अच्छे अक्षरों में लिखी या टाइप की हुई हिन्दी भाषा में ही भेजें तो उसके जल्द से जल्द प्रकाशन में हमें सुविधा होगी। सभी सम्बन्धितों से सहयोग अपेक्षित है। स०

वार्षिक शुल्क—१५ रु० विदेश ३० रु० या ३५ शिलिंग या ५ डालर, एक अंक का मूल्य ३० पैसे।
प्रभाष जोशी द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं ए० जे० प्रिंटर्स, नई दिल्ली-१ में मुद्रित।

भूदान-यज्ञ

लोकतंत्र विशेषांक

सर्व सेवा संघ का साप्ताहिक मुख पत्र
नई दिल्ली, सोमवार, २७ जनवरी '७५

सेठ गोविन्ददासजी के निधन से खाली जबलपुर लोकसभा क्षेत्र का उपचुनाव सम्पन्न हो गया है जिसमें सत्ता कांग्रेस के रविमोहन को जनता उम्मीदवार शरद यादव के मुकाबले ८७ हजार से अधिक वोटों से पराजय भोगनी पड़ी। इसे एक ओर समग्र क्रांति के आंदोलन के फलस्वरूप जनता में आ रही जागृति का सूचक माना जा रहा है तो दूसरी ओर इस बात का भी कि कुछ साल पहले आयी 'इंदिरा लहर' पूरी तरह उतर चुकी है। Ⓐ

सर्व सेवा संघ के मंत्री ठाकुरदास बंग ने एक परिपत्र द्वारा सभी प्रदेश, जिला एवं नगर सर्वोदय मंडलों से कहा है कि प्रति वर्ष जनवरी में लोकसेवकों का 'एनरोलमेंट' होता है जिसकी अन्तिम तिथि ३१ जनवरी है। लोकसेवक निष्ठा पत्रक में वर्णित निष्ठाओं का वास्तविक पालन करनेवाले व्यक्तियों को ही लोकसेवक बनाया जाना चाहिए। जिस प्रकार राजनैतिक संगठनों में गलत तरीकों से बोगस सदस्य बनाये जाते हैं, सर्वोदय संगठन में उसका कोई स्थान नहीं है। इसका पूरा पूरा ध्यान रखा जाना चाहिए। जिला सर्वोदय मंडल के पदाधिकारियों तथा सर्व सेवा संघ के लिए जिला-प्रतिनिधि चुनने की कार्रवाई १५ फरवरी, १९७५ तक पूर्ण कर उसकी जानकारी सर्व सेवा संघ प्रधान कार्यालय, गोपुरी, वर्धा (महाराष्ट्र) को भेजी जाना है। □

देश भर में आगामी ३० जनवरी से १२ फरवरी तक मनाये जानेवाले सर्वोदय पक्ष के साथ ही 'उपवासदान सप्ताह' मनाने की अपील सर्व सेवा संघ ने की है। इस अवधि में अधिकाधिक उपवासदान संकलित हो—ऐसा

जे० पी० का भाषण पृष्ठ २१ पर

सम्पादक
राममूर्ति : भवानी प्रसाद मिश्र
कार्यकारी सम्पादक : शारदा पाठक

वर्ष २१ २७ जनवरी, '७५ अंक १६-१७

१९ राजघाट, गांधी स्मारक निधि, नई दिल्ली-११०००१

समाज और शासन

इस बात को सभी मानते हैं कि समाज का जन्म पारस्परिक सहयोग की आवश्यकता और शासन का जन्म पारस्परिक राग-द्वेषों के कारण होता है। पारस्परिक सहयोग लोगों के सुख को बढ़ाते हैं और राग-द्वेष जो शासन के जन्मदाता हैं, समाज के दुख को बढ़ाते हैं। समाज में पारस्परिक राग-द्वेष जितने कम होंगे, शासन उतना ही कम शक्तिशाली होता जायेगा। पारस्परिक सहयोग समानता और शासन तरह-तरह की असमानता को जन्म देता है। याद रखना चाहिए कि शासन किसी भी सभ्य समाज रूपी महा-सागर की एक लहर ही है। किन्तु अनेक कारणों से आज 'महा-सागर महत्वहीन हो गया है और लहर ही महत्वपूर्ण बन गयी है।

समाज और संस्कृति के मूलभूत और बड़े-बड़े सिद्धान्त जब अपनी सहज गति से संचरित हो पाते हैं तब उनसे जो प्रगति होती है वैसी प्रगति भी शासनतंत्र उपलब्ध नहीं करा सकता। इसीलिए यह माना गया है कि जो संस्कृति जितनी अधिक परिपूर्ण होगी, उसमें शासन उतना अधिक कम हो जायेगा। समाज बिना किसी तंत्र के भी चलता रहेगा और यदि तंत्र को कभी लाना ही पड़ा, तो वह बहुत अस्थायी और लगभग नाममात्र का तंत्र होगा। कायदे-कानून, व्यवस्था, दण्ड, राष्ट्रीय शिक्षा, सेना और इसी प्रकार की अन्य अनिवार्य संस्थाएं, सच कहें तो समाज के लिए कलंक-स्वरूप हैं। जब तक ये हैं, तब तक सच्ची संस्कृति नहीं है। इनका समाप्त होना ही सम्पूर्ण क्रान्ति है।

यह कब और किस प्रकार होगा, इसे कहना बहुत कठिन होगा। तथापि संसार के सभी विद्वान इस दिशा में सदा से खोज करते चले आये हैं और समय-समय पर बढ़ते-शासन की शक्ति को कम करने के लिए क्रान्तियाँ हुई हैं। आज सारे संसार में तंत्र चाहे अधिनायकवाद हो, चाहे किसी अन्य प्रकार का तंत्र, प्रजातंत्र निश्चित नहीं है। सब जगह प्रजा त्रस्त है और तंत्र बदलना चाहती है। हमारे देश में तो परिस्थिति नितांत गम्भीर है। वह गम्भीरतर होती चली जा रही है। सभी मानते हैं कि गरीब अधिक गरीब हो रहा है, धनवान् अधिक धनवान्। भ्रष्टाचार, चोरबाजारी, रिश्वतखोरी और शासन में मनमानी रोजरोज बढ़ती चली जा रही है।

हमने इस अंक में इन्हीं सब बातों पर यत्किंचित प्रकाश डालने की कोशिश की है। भारत के संविधान के इस रजत-जयन्ती वर्ष में हम सोच रहे हैं कि भूदान-यज्ञ के हर अंक में प्रजातंत्र के किसी न किसी पहलू पर एक लेख अवश्य जाता रहे और वह वैचारिक स्तर पर हो, आन्दोलनात्मक स्तर पर नहीं। इससे हमारे पाठकों को शासन और समाज के सम्बन्धों को तटस्थ रूप से सोचने-समझने का अवसर मिलेगा और साथ ही वे इन सम्बन्धों को बदलने की आवश्यकता को भी समझेंगे। इसके लिए हमारा प्रयत्न है कि हम विभिन्न विद्वानों के पास एक निश्चित विषय-सूची भेजकर प्रजातंत्र से सम्बन्धित विभिन्न पहलुओं पर सामग्री मंगाते रहने की कोशिश करते रहें। पाठकों को भी जब जो सूझे पत्रों के रूप में हमें लिखें, जिससे आज की उथल-पुथल के बीच प्रजातंत्र का सम्यक् स्वरूप सबके सामने उपस्थित करने में पत्र जितना हो सकता है, उतना सहयोग दे सके।

जबलपुर का चुनाव

जबलपुर में सेठ गोविन्ददास के निधन के कारण संसद का उप-चुनाव आवश्यक हुआ और उसमें कांग्रेस के उम्मीदवार के मुकाबले में इस बार विभिन्न दलों ने चुनाव नहीं लड़ा, बल्कि एक उम्मीदवार 'जनता उम्मीदवार' की हैसियत से खड़ा किया गया। कांग्रेस जो ५० बरसों में यहां नहीं हारी थी, इस बार हार गई—सो भी बुरी तरह से। जानकार सूत्रों का कहना है कि उक्त चुनाव में जनता के सामने तीन उद्देश्य स्पष्ट किये गये थे। पहला यह कि भ्रष्ट कांग्रेस सत्ता और विदेशों की ओर मुंह रखनेवाली कम्युनिस्ट पार्टी के गठबन्धन के विरुद्ध एक सर्व-सम्मत प्रत्याशी खड़ा किया गया है। दूसरा यह कि सत्ता बराबर जनता के हित के विरोध में जा रही है, इसलिए इसे बदलने का प्रयास शुरू होना चाहिए। इस तरह संघर्ष को सत्ता-विरुद्ध जनता का स्वरूप मिलेगा। तीसरा उद्देश्य यह भी सामने रखा गया कि जयप्रकाशजी का आन्दोलन समस्त जनता का आन्दोलन है, उसका किसी दल विशेष से सम्बन्ध नहीं है, वह बिहार की सीमा को लांघ चुका है और देश की सारी जनता के प्रतीक रूप में यहां कांग्रेसी प्रत्याशी को हरा कर समर्थन दिया जाना चाहिए।

इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए मध्यप्रदेश संघर्ष समिति की ओर से देश के सभी गणमान्य नेताओं को प्रचार के लिए आमंत्रित किया गया था। फलस्वरूप जबलपुर की जनता के सामने अशोक मेहता, अटल-बिहारी वाजपेयी, मधु लिमये, मधु दण्डवते, मृणालिनी गोरे, जार्ज फर्नांडिज जैसे अखिल भारतीय नेता अपने-अपने दलों को भूलकर सर्व-सम्मत प्रत्याशी को चुनने के फलितार्थों को समझाते हुए घूमे और जनता ने उसे ठीक ढंग से समझा।

इस उपचुनाव के पहले बम्बई, भोपाल और मऊ के उप-चुनावों में भी इतना तो स्पष्ट हो गया था कि जनता के मन में वर्तमान शासन के प्रति उत्साह घटता जा रहा है। इस उपचुनाव ने तो सारे देश में यह आशा जगा दी है कि यदि अगले चुनावों

मे सब दल अपनी 'दलीयता' को भूलकर 'जनता उम्मीदवार' को स्वीकार कर लें तो आज का सत्तादल अपदस्थ हो जायेगा। अभी सारे देश से इस प्रकार की आशा करना कठिन है, जैसे गुजरात मे पुरानी कांग्रेस ने कहा है कि हम अपना उम्मीदवार खड़ा करेंगे और इसी प्रकार उत्तरप्रदेश मे भारतीय लोकदल अपना उम्मीदवार अलग खड़ा करने की हठ पकड़े हैं। यों शायद चुनाव अभी दूर है। समय पाकर इन दलों की परिस्थिति बदल भी सकती है। सब जगह यदि जनता उम्मीदवार खड़े किये जा सकें तो भारत की राजनीति और जनता की स्थिति मे एक बहुत बड़ा परिवर्तन आने की आशा की जा सकती है। हम उम्मीद करते है कि लोग जयप्रकाशजी के आन्दोलन के मूलभूत विचारों को जबलपुर की इस सफलता मे प्रतिबिम्बित देखेंगे और देश की परिस्थिति को बदलने मे हाथ बँटायेंगे।

□ मदन मोहन व्यास

लोकतंत्र में आर्थिक संघटन का स्वरूप

एक अमरीकी कहावत है कि अर्थशास्त्र राजनीति का दिल है। अत: अगर हमें राजनीति को लोकनीति में बदलना है, सच्चा लोकतंत्र स्थापित करना है, तो हमें अर्थव्यवस्था को बदलना होगा। आज जो विषम आर्थिक स्थिति पैदा हो गयी है, वह सही अर्थों में लोकतंत्री अर्थव्यवस्था न अपनाने का फल है। दुख है कि इस पर किसी का सही अर्थों में ध्यान है—ऐसा नहीं लगता। विरोधी दलों को छोड़ दें तो भी सरकार के दोनों भ्रष्टाचार व तस्करी, जमाखोरी विरोधी प्रयत्न भी इसका सबूत नहीं दे रहे हैं। वे यथास्थिति में सुधार हैं और आज भी स्थिति में सुधार का अर्थ कुछ भी नहीं है।

आज की जो आर्थिक स्थिति है (राजनीतिक भी) वह लोकतान्त्रिक तो है ही नहीं, साथ ही देश की प्रकृति, नियति व संस्कृति के अनुकूल भी नहीं है। देश के स्वतंत्र होने पर हमने जो राजनीतिक व आर्थिक व्यवस्था अपनायी वह अंग्रेजों द्वारा अपने साम्राज्य को बचाने व जनता का शोषण करने के लिए विकसित की गयी थी। फर्क आया है तो सिर्फ इतना कि ब्रिटेन द्वारा भेजे गये गवर्नर आदि की जगह एक गुट द्वारा नामजद व चुनाव के नाटक द्वारा चुने हुए व्यक्ति बैठ गये हैं। दूसरा, रूसी, साम्यवाद-समाजवाद के प्रभाव से राष्ट्रीयकरण के नाम पर सरकारीकरण किया जाता रहा व पुरानी पूंजीवादी व्यवस्था भी कायम रही। इस प्रकार दोनों व्यवस्थाओं की बुराइयां बढ़ती गयीं। तीसरा, तथाकथित विशेषज्ञों व विद्वानों में मानसिक गुलामी के कारण, पश्चिम की 'उपभोग' की जीवनपद्धति, संस्कृति, तकनीक व आर्थिक विकास की नीति अपनाने की दिशा दी।

इन तीनों बातों को यथास्थितिवाद के पोषक नौकरशाही ने पुष्ट किया और वोटों पर चलनेवाली चुनावी राजनीति कोई बुनियादी परिवर्तन करने में असमर्थ रही। नौकरशाही व कामचलाऊ राजनीति पनपी और इन दोनों के सहयोग से पूंजीपति लाइसेंस, कोटा, परमिट प्राप्त कर, कालाबाजारी, तस्करी, जमाखोरी, टैक्स चोरी कर दिन दूना रात चौगुना पैसेवाला बनता गया। इस सबका फल यह हुआ कि राजनीतिज्ञों, नौकरशाहों, विशेषज्ञों व पूंजीपतियों का एक गुट बन गया जो एक दूसरे के हितों को नुकसान पहुंचाये बिना फलता-फूलता गया। यही कारण है कि किसी भी परिवर्तन की चर्चा चलते ही यह गुट उसका तीव्रतम विरोध करने लगता है। समाज के इस गुट को तोड़ने के लिए बुनियादी परिवर्तन करना होगा तभी लोकतंत्री राजनीतिक-आर्थिक व्यवस्था स्थापित हो सकेगी। इसके लिए निम्न मुद्दों पर सक्रिय विचार करना होगा।

(१) कोई भी उत्पादन पूंजी व श्रम के सहयोग से ही होता है अत: उत्पादन के साधन व उत्पादन पर पूंजीपति व श्रमिक का समान अधिकार होना चाहिए। उसके प्रबंध व लाभ-हानि में दोनों का समान हिस्सा होना चाहिए। मजदूर को एक बुनियादी वेतन मिले और पूंजीनियोजक को एक निश्चित ब्याज। मजदूर के कार्य के घंटे व पूंजीनियोजक की पूंजी की मात्रा के अनुपात में लाभ-हानि का वितरण हो। प्रबंध के लिए दोनों के प्रतिनिधियों की समिति हो जिसका निर्णय सर्वमान्य हो। इस प्रकार दोनों उत्पादन व उत्पादन के साधन से जुड़ेंगे।

(२) जीवन के लिए आवश्यक वस्तुओं व अत्यधिक कमीवाली वस्तुओं पर लगनेवाले विभिन्न कर वस्तुओं में ही वसूल किये जायें—मुद्रा में नहीं। ये वस्तुएं ग्रामसभाओं, नगरसभाओं द्वारा सिर्फ समाज के निचले वर्ग को कम मूल्य पर वितरित की जायें। इससे बाजार में भाव स्थिर रहेंगे और वृद्धि हुई भी तो उसका असर समाज के गरीब वर्ग पर नहीं पड़ेगा।

(३) हमारा देश जन-प्रधान देश है। अत: जिन वस्तुओं का उत्पादन कुटीर व ग्रामीण उद्योगों में हो सकता है, ऐसी वस्तुओं का उत्पादन सिर्फ उनके लिए सुरक्षित कर दिया जाये। ऐसी वस्तुओं के जो वर्तमान बड़े कारखाने हैं उन्हें क्रमश: बंद कर दिया जाये। इससे अधिक लोगों को रोजगार मिलेगा, यातायात कम होने से वस्तु की लागत कम होगी, जमाखोरी, मुनाफाखोरी सट्टेबाजी खत्म हो जायेगी। साथ ही, वितरण की समस्या भी नहीं रहेगी।

(४) जो शहर एक लाख या इससे अधिक आबादी के हो चुके हैं, उन्हें न बढ़ने दिया जाये। इसके लिए उनमें नये उद्योग-कारखाने नहीं खोले जायें। इससे दूसरे क्षेत्रों का समुचित विकास होगा, बिजली, पानी, यातायात आदि साधनों की बर्बादी रुकेगी व आवास, स्वास्थ्य, कानून, शांति, सामरिक सुरक्षा आदि की समस्याएं पैदा नहीं होंगी।

(५) हम पश्चिम की नकल में अपनायी गयी व पनप रही 'उपभोग' की जीवन पद्धति व संस्कृति का बिलकुल छोड़ना होगा। इसमें वस्तुओं की कृत्रिम मांग पैदा की जाती है, एक झूठा जीवन स्तर अपनाने की ललक जनता में पैदा की जाती है और वस्तुओं की बर्बादी होती रहती है। अत: शराब, बीड़ी-सिगरेट जैसी वस्तुओं का प्रचार बिलकुल बंद कर देना चाहिए और कपड़े, रेडियो, टेलीविजन, क्राकरी, फिल्म, पंखे, रेफ्रीजरेटर, कूलर जैसी वस्तुओं का प्रचार बिलकुल सीमित कर देना चाहिए। साथ ही जब तक जनसाधारण को जीवन की आवश्यक वस्तुएं नहीं मिलतीं तब तक ऐसी वस्तुओं का उत्पादन बिलकुल नहीं बढ़ाया जाये, बल्कि उसमें लगी क्षमता का उपयोग जनसाधारण के उपयोग की वस्तुओं के उत्पादन में किया जाये।

(६) हमें पश्चिम की तथाकथित तकनालाजी-वैज्ञानिक पद्धति की नकल बिलकुल बंद कर देना चाहिए। इस तकनालाजी में प्राकृतिक साधनों का अन्धाधुन्ध शोषण किया जाता है, तात्कालिक लाभ पाने के लिए उसे विकृत किया जाता है और प्रकृति के चक्र का बिलकुल ध्यान नहीं रखा जाता है। यह सब हमारी प्रकृति व परिस्थिति के प्रतिकूल है। हमें अपनी स्वयं की नयी तकनालाजी विकसित करना होगी—नयी वैज्ञानिक खोजें करना होंगी।

(७) आज के तंत्र का भार 'लोक' पर बहुत अधिक हो गया है और दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। अनुत्पादक वर्ग बढ़ता जा रहा है जो देश की अर्थव्यवस्था पर भार है। इसे कम करने का एकमात्र तरीका यही है कि सत्ता का विकेन्द्रीकरण किया जाये। इसके लिए आवश्यक है कि गांव व नगर अपने क्षेत्र के विभिन्न कर स्वयं वसूल करें और अपने यहां की प्रशासनिक, आर्थिक, सामाजिक, विकास व लोककल्याण की व्यवस्थाएं स्वयं कर लें। जिला, प्रांत व केन्द्र का काम इनमें आपस में सन्तुलन व समन्वय करने भर का हो—इन पर शासन करने का नहीं। इससे अनुत्पादक व्यय तो कम होगा ही, साथ ही सच्चा लोकतन्त्र भी स्थापित होगा।

इन मुख्य मुद्दों के अलावा कुछ अन्य मुद्दे भी हैं जैसे कोटा-लाइसेंस-परमिट के स्थान पर, उद्योगों को प्रोत्साहन के लिए, टैक्सों में छूट दी जाये, सरकार व अन्य नियोजक अपने कर्मचारियों को वेतन का एक भाग मुख्य उपभोग की वस्तुओं के रूप में दें, उत्पादन सीधा कारखानों से ग्रामसभाओं नगरसभाओं को मिले, प्रत्यक्ष कर कम से कम हों, करों की दर व्यावहारिक हो, श्रमजीवी व बुद्धिजीवी के वेतन का अन्तर कम से कम हो, आदि। इनको अमल में लाने पर निश्चित है कि हमारी अर्थव्यवस्था बन सकेगी और फलस्वरूप प्रशासकीय (राजनीतिक) व्यवस्था भी लोकतन्त्री रूप पा जायेगी। ❀

□ शीलकुमार निगम

'तंत्र' के शिकंजे में कसता जाता 'गण'

भारत में जन 'तंत्रीय' शासन व्यवस्था के साथ साथ 'गणतन्त्रात्मक' प्रणाली को भी संविधान ने मान्यता दी है। स्वराज्य प्राप्ति की रजत-जयन्ती तो हम मना चुके। अब 'गणतन्त्र' की रजत-जयन्ती आ रही है। क्या हाल है 'गण' का? बेरोजगारी, भुखमरी और भ्रष्टाचार की मार से गरीब जनता हा-हाकार कर रही है। सत्तासीन नेता, सरकारी अफसर और व्यापारियों की 'त्रिगुटी' ने 'गणतन्त्र' को दबोच लिया है। 'गण' की बजाय 'तन्त्र' स्वराज्य की मलाई खा रहा है। जयप्रकाश नारायण ने इसी भ्रष्ट 'तन्त्र' के खिलाफ आंदोलन छेड़ा है। 'तंत्र' के द्वारा 'गण' को रोजी, रोटी, कपड़ा और मकान उपलब्ध हो सभी तो 'गणतन्त्र' शासन व्यवस्था को जनता स्वीकार करेगी अन्यथा हताश जनता किसी तानाशाह के भ्रमजाल में फंस कर जनतन्त्र और गणतंत्र को 'कैद' करवा देगी।

गणतन्त्र और जनतन्त्र

आम तौर पर गणतन्त्र और जनतन्त्र को एक ही व्यवस्था के दो नाम समझा जाता है। वस्तुस्थिति ठीक इसके विपरीत है। जनतन्त्र अर्थात जनता द्वारा शासित राज्य। अब्राहम लिंकन ने जनतन्त्र की परिभाषा देते हुए कहा है कि 'जनतन्त्र का अर्थ है, जनता का, जनता के लिए, जनता के द्वारा शासित राज्य।' किन्तु भारत में जनतन्त्री व्यवस्था कागजों में होते हुए भी, वास्तव में सत्ताधारी नेताओं का, व्यापारियों व अमीरों के लिए पुलिस और अफसरों के द्वारा शासित राज्य है। भारतीय जनतन्त्र की रुझान तानाशाही की ओर नजर आ रही है। जनता भूख से, लू से और ठंड से दम तोड़ रही है। पुलिस बल जगह-जगह जनतन्त्र के धुर्रे बिखेर रहा है। यह तो हुआ जनतन्त्र का हाल, अब गणतन्त्र का परीक्षण करें। गणतन्त्र का अर्थ है, राज्य का प्रमुख, वंशानुक्रम से अर्थात पेट के हक से आनेवाला न हो बल्कि चुनाव अर्थात पेटी के हक से आता हो। ब्रिटेन में जनतन्त्र है किन्तु गणतन्त्र नहीं है क्योंकि वहां का प्रमुख बादशाह (किंग) अभी भी वंशानुक्रम अर्थात पेट से आता है। भारत में जनतन्त्र भी है और गणतंत्र भी है क्योंकि राष्ट्रपति चुनाव के द्वारा आते हैं। फिर भी क्या भारत का कागजी गणतन्त्र वास्तविक गणतन्त्र है? नहीं क्योंकि राजनेता, व्यापारी और बड़े-बड़े सरकारी अफसर, नये सामन्त बन गये हैं। मन्त्रीगण राजा की तरह रहते हैं। चुनाव प्रणाली धनतन्त्री और भ्रष्ट है। इस कारण केन्द्र में जो एक बार सत्तासीन हुआ वह भ्रष्टाचार करके बना रहता है। चुनाव होते हैं किन्तु नतीजा वही वंशानुक्रम जैसा निकलता है। गणतन्त्र की भावना समाप्त हो चुकी है। इसीलिए गण भुखमरी की स्थिति है और तन्त्र गुलछर्रे उड़ा रहा है।

जनता का काम केवल वोट देना?

भारत में जनता का काम केवल वोट देना है। सरकार पर नियन्त्रण जनता का नहीं है। जहां जनता से सरकार न डरे वहां जनतन्त्र सफल नहीं हो सकता। सच्चे जनतन्त्र में जनता अपना वोट बेचती नहीं है। एक दिन वोट बेचकर, पांच वर्ष की गरीबी खरीदती नहीं है। विरोधी दल का महत्व भी जनतन्त्री जनता समझती है। कबीरदासजी ने ठीक ही कहा है—*निन्दक नियरे राखिये, आंगन कुटी छवाय।*

यह वाणी जनतन्त्रीवाणी है। मनुष्य गलती करता है। जो गलती न करे वह मनुष्य नहीं होता, वह तो भगवान हो जाता है। तो उसकी गलती पकड़कर बताना तथा उसे सुधरवाना ही जनहित में है। एक व्यक्ति करे तो उसका बुरा असर कुछ लोगों तक ही होता है। किन्तु सरकार गलती करे तो उसका बुरा असर सम्पूर्ण देश को भुगतना पड़ता है। इसलिए जनतन्त्र में विरोधी दल का अत्यधिक महत्व है। तानाशाही में विरोधी दल नहीं रहता, क्योंकि तानाशाह अपने आपको भगवान मानने तथा मनवाने लगता है। भारत में यदि जनतन्त्र और गणतन्त्र कायम रखना है तो विरोधी दल का महत्व समझना होगा तथा विरोधी दलों की हंसी उड़ाने की बजाय उन्हें मदद करनी होगी।

न पानी न अनाज

गणतन्त्र दिवस है तो उसे मनाना ही है, किन्तु खुशी है क्या? अनाज नहीं मिलेगा। पानी के लिए लाले पड़ रहे हैं। घासलेट के लिए डब्बा लेकर दौड़ रहे हैं। कपड़े का ठिकाना नहीं है। छप्पर तक, सिर छिपाने के लिए नहीं है। इसी हालत में यदि विरोधी दल, महंगाई रोकने में सरकार की असफलता पर जुलूस निकालते हैं तो महंगाई से त्रस्त जनता उसमें शरीक नहीं होती। इतना ही नहीं, सड़क पर खड़े होकर कहती है कि कितना फीका जुलूस है! वाह वाह री जनता। तुम्हारी कमर तोड़नेवाली महंगाई के खिलाफ

जुलूस निकल रहा है और तुम्हीं उसकी हँसी उड़ा रहे हो। भ्रष्टाचार से तुम खुद परेशान हो और मौका पड़ने पर न्याय प्राप्त करने के लिए लड़ने की बजाय तुम ही रिश्वत देकर काम बना लेते हो। ऐसे जनतन्त्र कैसे सफल होगा? ऐसी जनता, गणतन्त्र को कायम कैसे रख सकेगी?

न्याय के लिए लड़ना सीखें

अन्याय वहीं होता है, जहाँ अन्याय सहन किया जाता है, अन्याय सहन करना भी पाप है। गरीबी सहन करना भी पाप है। जिन सरकारी अफसरों को जनता की भलाई के लिए, जनता की सरकार से वेतन मिलता है, वे ही अफसर काम न करते हुए रिश्वत लेते हैं। राजा-महाराजाओं सी ऐश की जिन्दगी बसर करते हैं। इसके लिए जनता जिम्मेदार है। लड़ने की बजाय रिश्वत देकर काम करवाने की आदत से *तानाशाही का शिकन्जा* भारत को जकड़ रहा है। तानाशाही में अफसर और पुलिस का राज्य होता है। अन्यायी का विरोध करनेवालों का स्थान जेल होता है। आज वही स्थिति है। यदि जनता न चेती तो तानाशाही आ जायेगी। सम्हालने का अवसर आज है, *शायद कल न रहे।* क्या आप जनता का क्रन्दन नहीं सुन रहे हैं। आज चुप रहने का समय नहीं है। शायर ने ठीक ही कहा है।

> दे रहा हो आदमी का दर्द जब आवाज,
> दरदर,
> तुम रहे चुप तो कहो—सारा जमाना
> क्या कहेगा?

दिल्ली

विकास तथा चुनौतियों का नगर

प्रगति के पथ पर

विगत दो वर्षों के विकास की झाँकी

उद्योग

नरेला में नई विशाल औद्योगिक बस्ती का निर्माण हो रहा है। एक हजार बेरोजगार इंजीनियरों के लिए ८६२ औद्योगिक शेडो का निर्माण।

५ लाख बेरोजगारों के लिए कारोबार

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत लगभग १६,००० शिक्षित बेरोजगारों को कारोबार देने के लिए ५६ नई योजनाएं प्रस्तावित और कार्यान्वित की गई है। ग्रामीण बेरोजगारो के लिए सघन कार्यक्रम चालू किये गये है। इस वर्ष २० लाख रुपये की लागत से विशेष रोजगार योजनाए चालू की गई हैं।

शिक्षा

दिल्ली में शिक्षा को कार्य-अनुभव व विज्ञान सम्पन्न बनाने के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रारम्भ किये गये हैं।

हरिजन कल्याण

हरिजन तथा पिछडी जातियों के कल्याण की कई नई योजनाए चलाई हैं जिन पर चौथी योजना के मूल परिव्यय से दुगुना धन खर्च किया जा रहा है।

चिकित्सा सुविधाएं

सन् १६७३-७४ के दौरान पिछड़े तथा झुग्गी-झोपडी क्षेत्रों में १० नये औषधालय खोले गये। इस प्रकार अब तक ५० औषधालय खुल चुके हैं। ५००-५०० बिस्तरो वाले दो अस्पताल निर्माणाधीन हैं।

किसानों को सुविधाएं

छोटे तथा भूमिहीन किसानो को अनुदान तथा सस्ती दर पर कर्ज देने के लिए 'मार्जिनल फार्म एग्रीकल्चरल लेंडलैस लेबरर्स एजेंसी' स्थापित की गई है।

पशु संवर्धन के लिए 'वीर्य बंक' तथा बहुत दूध देने वाली आस्ट्रेलिया की गायों के फार्म की स्थापना की गई है।

दिल्ली की पाचवी पंचवर्षीय योजना में अधिकाधिक नागरिक सुविधाए जुटाने, गृह-निर्माण तथा गन्दी बस्तियों की सफाई, बेरोजगारी को समाप्त करने तथा कमजोर वर्गों के कल्याण आदि कार्यक्रमों को प्राथमिकता दी गई है।

दिल्ली को आदर्श राजधानी बनाने में अपना भरसक योगदान करें;

सूचना एवं प्रचार निदेशालय, दिल्ली प्रशासन, दिल्ली द्वारा प्रकाशित

★ बाबूराव चन्दावार

शोषण से मुक्ति की प्रक्रिया : क्रांति

बिहार का आंदोलन इस देश में एक चर्चा का विषय बना है। लेकिन आंदोलन की मूल धारा को जानने के लिए और गहराई में उतरना आवश्यक है। क्योंकि जो भी चर्चाएं हो रही हैं, उनमें बुनियादी प्रश्नों के निराकरण का उपाय खोज लेना संभव नहीं हो रहा है। यह स्थिति इसलिए बन जाती है कि पहले से जो हमारे आग्रह दिमाग में बैठे हैं उनको हम निकाल नहीं सकते। इन आग्रहों के कारण ही आंदोलन की आकांक्षा के सही स्वरूप को जानना असंभव हो जाता है। बिहार आंदोलन से जनमानस में एक ऐसी आकांक्षा *दिखाई देने लगी है जिसे जानने के लिए* वैचारिक मुक्ति की जरूरत है। मैं स्वयं इस मुक्ति को वहां तक निभा पाऊंगा, कह नहीं सकता क्योंकि पूर्वाग्रह से मैं संपूर्णतः मुक्त हूं ऐसा कह नहीं सकता। लेकिन क्रांति की दिशा में नये प्रयोगों को जानने समझने की मेरी रुचि मेरे पूर्वाग्रहों पर हमेशा प्रहार करते आयी है। इससे वैचारिक मुक्ति की दिशा में बढ़ना संभव हुआ है। राजनीतिक, सामाजिक या आर्थिक दृष्टि से आंदोलन का विश्लेषण कुछ लोग कर रहे हैं। यह विश्लेषण आंदोलन की *क्रांतिकारी धारा से दूर भागना हुआ मुझे* दीखता है। इसी वजह से बिहार आंदोलन पर लिखने को मैं मजबूर हुआ हूं।

दंडशक्ति पर निर्भरता

आंदोलन का प्रारंभ बिहार के छात्रों ने किया। आगे जाकर उसे जन-आंदोलन का रूप मिलने लगा। लेकिन जयप्रकाशजी के लोकनायक बनने की एक पृष्ठभूमि है, इसे भूलना ठीक नहीं है। जयप्रकाशजी ने किसी मामूली कारण से छात्रों का नेतृत्व नहीं किया। कुछ संयोग ऐसा अवश्य हुआ जिसके *कारण उन्होंने छात्रों का नेतृत्व लिया।* इस संयोग का धागा पकड़ कर चलने से वह मूल *पृष्ठभूमि पर हमें पहुंचा देगा।* मूल पृष्ठभूमि सर्वोदय आंदोलन की परिस्थिति है। इस परिस्थिति में दंड-शक्ति से भिन्न हिंसा विरोधी तीसरी शक्ति जो लोकशक्ति है, उसके निर्माण का संकल्प बहुत महत्व रखता है। बिहार में ग्रामदान कार्यक्रम के द्वारा लोकशक्ति को प्रकट करने का प्रयत्न किया गया। विनोबा की पदयात्राओं से इसका वातावरण भी बना है। लेकिन विनोबा के प्रयत्नों से जो प्रक्रिया चलायी गयी उसमें लोकशक्ति प्रकट करने में दंडशक्ति सहयोग करेगी यह आशा निहित थी। वस्तुतः दंडशक्ति लोकशक्ति को बनाने में सहयोग करेगी, ऐसी आशा करना भी बेबुनियाद था। लेकिन यह आशा स्वराज्य आंदोलन के जमाने से ही *बनने लगी थी, जिसके फलस्वरूप ४७ के सत्ता-*हस्तांतरण के बाद की इस देश की कुल स्थिति निराशाजनक और दिशाहीन रही। जिसे हम स्वतंत्रता कहते आये वह केवल राजनैतिक हस्तांतरण बन कर रह गया। इस हस्तांतरण में स्वराज्य की समझदारी नहीं के बराबर थी। अर्थात् स्वराज्य साकार *करने में यह राजनैतिक हस्तांतरण भी* सहायक हो सकता था। लेकिन राजनैतिक हस्तांतरण *का मूल्य हमने जो बनाया वह* स्वराज्य के अनुकूल नहीं था, यह गये २७ वर्षों की स्थिति ने स्पष्ट कर दिया है। राजसत्ता के हस्तांतरण से राजनीति का स्वरूप नहीं बदला क्योंकि राजनीति का स्वरूप बदलना संभव नहीं था। लेकिन इस समझदारी के अभाव में दंडशक्ति को बल मिलता *गया। वह अनियंत्रित होते गयी।* राजसत्ता के हस्तांतरण के बाद दंड नीति पर अंकुश *रखने के बारे में सोचना हमने इसलिए छोड़ दिया था कि सत्ता में जो लोग थे उनकी* ईमानदारी पर हमने निराधार भरोसा किया। किसी नेतृत्व पर भरोसा करना अनुचित नहीं है, यह तर्क पेश किया जा सकता है। लेकिन प्रश्न नेतृत्व में जो थे, उनका नहीं है। प्रश्न है राज्यशक्ति के चरित्र का। राज्यशक्ति का अपना एक चरित्र है, उसे अच्छे से अच्छे आदमी सत्ता में जाने के बाद भी बदल नहीं सकते। अच्छे से अच्छे आदमी राज्यसत्ता को स्वीकार करने से भ्रष्ट होते हैं यह इतिहास में *कई बार साबित हो चुका है।* राज्यसत्ता का चरित्र नहीं बदलेगा और उसे संपूर्णतः समाप्त भी नहीं किया जा सकेगा क्योंकि मनुष्य स्वभावतः कमजोर है। इसी कमजोरी से राज्यसत्ता का अस्तित्व बनता है। मनुष्य कमजोर रहेगा इसीलिए राज्यसत्ता का अस्तित्व रहेगा। लेकिन राज्यसत्ता के दुष्परिणामों से बचने के लिए उसे नियंत्रण में रखा जा सकता है। उसके तरीके भी सोचे जा सकते हैं। इस दिशा में सोचने के लिए दिमाग खुला रखने की आवश्यकता थी। वह अंग्रेजों से सत्ता प्राप्त करने के बाद हो नहीं सका। सत्ता में जो लोग थे उनपर विश्वास करना ही आवश्यक माना गया। इसी वजह से राज्यसत्ता अनियंत्रित हो गयी और जनजीवन *असुरक्षित बन गया। फलस्वरूप राज्यसत्ता* के द्वारा ही जनता का शोषण होने लगा। आगे जाकर जनता के स्वतंत्रता के अवसरों को समाप्त करने की साजिश करते रहना, इस शोषण का मुख्य स्वरूप बना।

विनोबा का अन्तर्द्वन्द्व

विनोबा ने स्वतंत्र लोकशक्ति की परि*भाषा करते हुए लोकशक्ति को हिंसा विरोधी* दंड शक्ति से भिन्न तीसरी शक्ति कहा। इसे उचित मानने में किसी को आपत्ति नहीं होगी। और विनोबा के नेतृत्व में चलाये गये सर्वोदय आंदोलन से एक सीमा तक हिंसा विरोधी लोकशक्ति बनी थी। लेकिन यह लोकशक्ति दंडशक्ति से भिन्न नहीं रह पायी क्योंकि विनोबा दंडशक्ति का सहयोग लेते रहे। दंडशक्ति के विरोधी नहीं बनने की *विनोबा की नीति एक सीमा तक समझ में* आती है। लेकिन दण्डशक्ति से सहयोग लेते रहने की नीति समझ में नहीं *आती। विनोबा के विचारों का अन्तर्द्वन्द्व* भी यहीं पर प्रकट होता है। मेरा यह भी मानना है कि इसी अन्तर्द्वन्द्व के कारण ही दंडशक्ति से संघर्ष करने की अनिवार्यता को विनोबा सोच नहीं पा रहे। लेकिन इसका निष्कर्ष यह निकलता है कि विनोबाने अपनी नीतियों से *स्वतंत्र लोकशक्ति बनने की* प्रक्रिया को अप्रत्यक्ष रूप से रोक दिया है। *और यहीं पर जयप्रकाशजी के संघर्ष करने के* साहस का महत्व बन जाता है। विनोबा के *अन्तर्द्वन्द्वों के कारण जो प्रक्रिया रुकी थी उसे* चलाने की जिम्मेवारी लेकर जयप्रकाशजी ने

क्रान्ति की दिशा में अगला कदम बढ़ाया है। इस यथार्थ को जो नहीं जानेंगे, वह शायद बिहार के आंदोलन को समझ नहीं पायेंगे। जयप्रकाशजी की सम्पूर्ण क्रांति की घोषणा मूलत. हिंसा विरोधी दंडशक्ति से भिन्न स्वतंत्र लोकशक्ति के निर्माण की घोषणा है। लेकिन इसे साकार करने की आंदोलन की दिशा क्रमश. स्पष्ट होती जायेगी। बिहार आंदोलन की आज की स्थिति को देखते हुए दिशा स्पष्ट होने में कुछ बाधाएं सामने खड़ी दिखाई देती हैं। इन बाधाओं के बावजूद आंदोलनको रोका नहीं जा सकता। आंदोलन की विशुद्ध प्रेरणा में सभी बाधाओं को पार करके आगे बढ़ने की क्षमता है। यह बीते ७-८ महीनों में स्पष्ट हो गया है। फिर भी किसी परिस्थिति में आंदोलन के तात्कालिक लक्ष्यों को पाने के लिए दूरगामी लक्ष्यों पर से ध्यान हट सकता है। आंदोलन राजनैतिक स्तर पर ही चलता रहता है तो उसका भविष्य भी अंधकारमय हो जाता है। इस आंदोलन का भविष्य अन्धकारमय बने ऐसी साजिश इस देश की राजनीति कर रही है। राजनीति राजनैतिक लाभ उठाने के लिए तात्कालिक लक्ष्यों पर ही हमेशा अपना ध्यान केन्द्रित करती रही है। और ऐसी राजनीति क्रांति को चाहती भी नहीं। बिहार आंदोलन के तात्कालिक लक्ष्य कम महत्वपूर्ण नहीं माने जायेंगे। लेकिन दूरगामी लक्ष्यों से ध्यान हटाकर तात्कालिक लक्ष्यों पर केन्द्रित करना भी आंदोलन के हित में नहीं है। अर्थात् जो यथार्थ है उससे कोई भाग नहीं सकता इसलिए चित्त को सावधान करके यथार्थ को जानना चाहिए।

युवा शक्ति को मोड़

इस देश का आंदोलन दिशाहीन रहा था। इसके कई कारण हो सकते हैं, जिसमें एक कारण यह भी है कि उसे चलाने की आवश्यकता को ध्यान में रखकर वह नहीं चलाया गया। तब प्रश्न उठाया जायेगा कि किसलिए चलाया गया। इसका उत्तर है संकुचित स्वार्थों को प्रतिष्ठित करने के लिए। इसमें अपवाद होंगे और हैं भी। संकुचित स्वार्थ साधनों की सीमा में ही राजनैतिक स्वार्थ आता है और इस स्वार्थ ने ही युवा आंदोलन को दिशाहीन रखा भी है। युवकों को सुविधा-परस्त बनाने के लिए उनके मन में घटिया आकांक्षा जगाने का घटियापन इस स्वार्थ ने कई बार दिखाया—जिससे युवकों की प्रतिभा तथा गुणात्मकता प्रकट होने के कई अवसर खोये गये हैं। फिर भी डा० राममनोहर लोहिया तथा चारु मजूमदार, इन दोनों की प्रतिभा शक्ति इनमें से कुछ अवसरों का लाभ एक सीमा तक उठा पायी है। इससे क्रांतिकारी मूल्यों के प्रति युवकों की रुचि बनी। डा० लोहिया को क्रांतिकारी परिवर्तन की दिशा में युवकों को ले जाना और सुलभ होता यदि वे राजनैतिक घेरे से युवकों को बाहर रखना चाहते। लेकिन क्रांतिकारी परिवर्तन के लिए राजनीतिक साधन के रूप में उपयोग करना डा० लोहिया जायज मानते थे, जहाँ पर युवा-आंदोलन हमेशा अवरुद्ध होता आया है। यदि वे जीवित रहते तो उनके विचारों में तथा मान्यताओं में परिस्थितिवश अवश्य परिवर्तन होता क्योंकि उनकी क्रांतिनिष्ठा व्यभिचारी नहीं थी। चारु मजूमदार ने युवकों के आत्म-बलिदान पर अधिक बल दिया और क्रांति को आत्म-बलिदान से ही सींचा जा सकता है, इस मूल्य की प्रतिष्ठा बनायी। क्रांति के लिए युवकों के आत्म-बलिदान के महत्व से क्रांति चाहने वाला कोई भी इन्कार नहीं कर सकेगा। लेकिन रणनीति आत्म-बलिदान की नहीं क्रांति की बननी चाहिए थी। इस पर ध्यान नहीं दिया गया जिससे क्रांति की रणनीति नहीं बन पायी। ४७ के राजसत्ता हस्तांतरण के बाद डा० लोहिया तथा चारु मजूमदार इन दोनों का कार्यकाल युवक आंदोलन को क्रांतिकारी मोड़ देने का था। ४७ के पहले युवक आंदोलन का इतिहास अलग है, जिसमें जयप्रकाशजीने भी उत्तरदायित्व निभाया था।

एक नया माध्यम

विनोबा स्वयं क्रांतिकारी चेतना के स्तम्भ माने जाते हैं। लेकिन उनके विचारों के प्रति युवकों का आकर्षण बहुत कम रहा। उनके विचारों पर धार्मिक तथा आध्यात्मिक आवरण है यह मानकर युवक विनोबा के निकट पहुंचे नहीं। धार्मिक तथा आध्यात्मिक प्रवृत्ति क्रांतिकारी चेतना के लिए उपयोगी नहीं बन सकती, ऐसा एक आग्रह क्रांतिवादी युवकों के दिमाग में बैठा है। इसका कारण मूलतः धार्मिक तथा आध्यात्मिक आडंबर और उसके कर्मकांड हैं। क्रांतिकारी चेतना किसी आडंबर या कर्मकांडों में नहीं रुक सकती। जब कभी रुकी है तब चेतना समाप्त हो गयी है। किसी आडंबर या कर्मकांड को विनोबा नहीं मानते, इसका प्रमाण उनके इर्द-गिर्द जो वातावरण बना रहता है उससे नहीं मिलता। और यह वातावरण ही युवकों को उनके निकट जाने में एक रुकावट बन गया है। इससे विनोबा के बारे में युवकों की कई धारणाएं बनी हैं जो दुर्भाग्यपूर्ण मानी जायेंगी। जयप्रकाशजी के नेतृत्व में फिर एक बार युवा आंदोलन क्रांतिकारी मोड़ पर आया है। जयप्रकाशजी के जीवन की एक विशेषता यह है कि राजनैतिक स्वतंत्रता के पहले और उसके बाद दोनों महत्वपूर्ण कालखंडों में युवकों का उन्होंने नेतृत्व किया। इसे कई संयोग कहेंगे। लेकिन इसे संयोग नहीं कहना चाहिए। क्रांतिकारी चेतना का अद्भुत आविष्कार कहना चाहिए। इतिहास में ऐसे उदाहरणों का बहुत अभाव है। दिशाहीन युवा-आंदोलन को निश्चित दिशा देने के प्रयास में जयप्रकाशजी ने बिहार आंदोलनका एक नया माध्यम खोज निकाला है। इसका ऐतिहासिक महत्व इसलिए है कि इस देश के ही नहीं दुनिया के क्रांतिकारी तत्वों को अपने स्वरूप तथा गतिविधियों को फिर से सवारना पड़ रहा है। और क्रांतिकारियों को रणनीति बदलने की दिशा में मजबूर होकर सोचना पड़ रहा है। बिहार आंदोलन क्रांति का एक ऐसा माध्यम बनने की दिशा में बढ़ते दिखाई देता है कि परम्परा से चली आयी क्रांति की मान्यताओंमें निश्चित रूप से फर्क पड़ेगा, नयी मान्यताओं का सृजन होगा। क्रांति से युवा आंदोलन का समयानुकूल मेल बैठाकर क्रांति की परिस्थिति में नया मोड़ लाने की जयप्रकाशजी ने कुशलता दिखलायी। इसलिए नयी मान्यताओं का सृजन होगा। अतः क्रांति के नये मोड़ को जानना आवश्यक है।

क्रांति कोई पुनरोक्ति नहीं

किसी भी परिवर्तनको क्रांति नहीं कहना चाहिए। जिससे शोषण अवसर समाप्त किये

जाते हैं उसे ही क्रांति कहना चाहिए। इस लिए क्रांति का संकल्प शोषण रहित समाज निर्माण करने का है। इसमें शासन का मूल्य इसलिए समाप्त होता है कि शोषण की जड़ें शासन में होती हैं। क्रांतियों का जो इतिहास उपलब्ध है उससे समाज में शोषण की परिस्थिति को समाप्त नहीं किया गया, यही दिखाई देता है। इसलिए क्रांतियां केवल राजनैतिक सत्ता का हस्तांतरण कर सकी हैं, शोषण की परिस्थिति समाप्त नहीं कर सकीं। क्रांतियों की इस विफलता से क्रांति चाहनेवालों को सबक सीखना अनिवार्य हो गया है। इसी कारण क्रांति की रणनीति के बारे में सूझबूझ के साथ सोचना भी अनिवार्य हो गया है। भारत की भूमि समस्या क्रांति का एक महत्वपूर्ण पहलू बनी। साम्यवादियों ने तेलंगाना में इसके लिए संघर्ष छेड़ दिया था। *क्रांति के लिए संघर्ष करने का इस देश में* यह पहला अवसर था। लेकिन यह संघर्ष इतिहास को दुहरानेवाला सिद्ध हुआ। नया *इतिहास बनानेवाला सिद्ध नहीं हुआ।* किसी भी क्रांति में इतिहास को दुहराया नहीं जाता। यदि दुहराया जाता है तो उसे असफल मानना चाहिए। साम्यवादियों के तेलंगाना में संघर्ष छेड़ने से एक नतीजा अवश्य निकला कि विनोबा के भूदान का आरंभ यहीं से हुआ। साम्यवादियों ने इतिहास को दोहराया और विनोबा के भूदान ने नया इतिहास बनाया। इस इतिहास के मूल्य से कोई इन्कार नहीं करेगा। क्रांति की सफल रणनीति बनाने में इसका बड़ा सहयोग मिला है। जिसे भूमि-समस्या कहने का रिवाज था वह भूमि की समस्या नहीं थी भूमिहीन मजदूर तथा भूमि-मालिकों की समस्या थी। अर्थात यह समस्या मजदूर मालिकों के दिलों के बीच बनी गहरी खाई से बनी थी जिसका एकमात्र उपाय था (दिलों के बीचवाली) खाई को ऐसे तत्त्वों से भर देना कि जिससे मालिक-मजदूरों के दिल एक दूसरे के निकट आ सकें। दिलों को जोड़नेवाले तत्त्व की कुशलता से भूदान आंदोलन में दाखिल करके विनोबा ने अपनी प्रतिभा का दुनिया को पहली बार परिचय दिया। जीविका के साधन प्राप्त होने के बाद भी जीवन के प्रश्नों का निराकरण होगा नहीं, इसलिए इन साधनों से भी अधिक महत्वपूर्ण बन जाता है दिलों को जोड़ना। इसलिए जिसे भूमि-समस्या कहने का रिवाज था वह बदल कर दिलों की दूरी की समस्या के रूप में सामने आयी। किसी भी प्रश्न को सही दृष्टि से देखने का विनोबा का अपना एक अनोखा ढंग है, जिसके आधार पर भूदान आंदोलन का इतिहास बना है। संघर्ष छेड़ा साम्यवादियों ने और नया इतिहास बनाया विनोबा के दिल जोड़नेवाले तत्व ने। सत्तावन तक का यह इतिहास क्रांतिकारी परिवर्तन की दिशा में चलनेवाले क्रांतिकारियों को नयी रोशनी देनेवाला सिद्ध हुआ है। सत्तावन के बाद भूदानग्रामस्वराज्य के आरोहण के लिए ग्रामदान के मोड़ पर आया। उसे इसी मोड़ पर आना अनिवार्य था क्योंकि दिलों को जोड़नेवाली भूदान की *प्रक्रिया महत्वपूर्ण होते हुए भी शोषणरहित* समाज बनाने के लिए आरोहण करना केवल भूदान के माध्यम से संभव नहीं था। *भूदान की एक सीमा आ गयी थी।* वह सीमा यह थी कि समाज व्यवस्था की शोषणमूलक रचना पर असर नहीं हो रहा था। शोषणमूलक समाज रचना पर असर करना अनिवार्य था। इसके बिना क्रांति के लक्ष्य की तरफ बढ़ना असंभव था।

शोषण के केन्द्र

भूदान आंदोलन ग्रामस्वराज्य की परिस्थिति बनाने के लिए ग्रामदान के मोड़ पर आया तभी शोषण के सभी केन्द्र जागृत हो उठे। उनका अस्तित्व खतरे में पड़ गया है, यह सभी केन्द्र महसूस करने लग गये थे। और इसलिए ग्रामदान से ग्रामस्वराज्य का आशय हटा देने का प्रयास भी किया गया। ग्रामदान के जितने कानून बनाये गये हैं उनमें से ग्रामस्वराज्य का आशय हटा देने का प्रयास निश्चित-रूप से किया गया, यह उसका जीता जागता प्रमाण है। समाज के सभी शोषणकारी केन्द्रों ने इसके लिए ऐसा जाल बिछाया कि जिससे ग्रामस्वराज्य की लक्ष्य-पूर्ति नहीं हो सके। संयोग से कहिये या और कुछ कहिये नक्सलवादी आंदोलन फिर इतिहास को दोहराने को आगे बढ़ा। नक्सलवादी आतंक बंगाल-बिहार में बनने लगा। बिहार में विनोबा की पदयात्रा से बने ग्रामदान के वातावरण से जो सीमित सफलता दिखने लगी थी उसे असीमित असफलता में बदल देने का प्रयास नक्सलवादियों ने किया। इससे क्रांति का नया इतिहास बनाने का अवसर फिर आया। जयप्रकाशजी नक्सलवादी आतंक से जलते जन-जीवन के बीच सामना करने के लिए १९७० में मुशहरी प्रखंड में जाकर बैठे। डेढ़ साल से अधिक जलते समाज जीवन का सामना करते हुए जयप्रकाशजी ने गहराई से अध्ययन किया। गावों की गलियों में घूमकर, ग्रामीणों के दरवाजे पर क्रांति के नये इतिहास की उन्होंने दस्तक दी। और गांवों को क्रांति का नया *इतिहास बनाने के लिए आवाहन किया।* बिहार में सहरसा जिला विनोबा के नेतृत्व में ग्रामस्वराज्य का अखिल भारतीय मोर्चा *पहले से ही बना था* और मुजफ्फरपुर जिले का मुशहरी प्रखंड जयप्रकाशजी की सूझबूझ से क्रांति के नये इतिहास को बनाने की प्रयोगभूमि बनी। जे० पी० मुशहरी में नक्सलवादी आतंक से मानवीय प्रश्नों के आमने सामने आये। इसके निष्कर्षों ने क्रांति की दिशा में आगे बढ़नेवालों और विनोबा के नेतृत्व में चलनेवाले आंदोलन को नये मोड़ पर लाकर खड़ा कर दिया।

अवसर का उपयोग नहीं

विनोबा के मार्गदर्शन से ही सहरसा में ग्रामस्वराज्य का अन्तिम अभियान २६ जनवरी ७४ से २८ फरवरी ७४ तक भारत के प्रमुख सर्वोदय साथियों द्वारा चलाया गया। इस अभियान ने ग्रामस्वराज्य के ग्रामदान माध्यम को फिर से सोचने समझने के लिए सभी साथियों को स्वर्ण अवसर दिया। लेकिन मेरी मान्यता के अनुसार इस स्वर्ण अवसर का उपयोग सर्वोदय आंदोलन के सूत्रधारों ने *नहीं किया। कुछ इने-गिने साथी ऐसे अवश्य* थे जिन्होंने अपनी सूझबूझ के अनुसार इस अवसर का उपयोग कर लिया। सहरसा जिले के राघोपुर प्रखंड में इन साथियों ने सातत्य से एक महीना गावों में घूमकर क्रांति के अगले चरण को समझा। समग्र क्रांति के एक महान साधक धीरेन्द्र मजूमदार से उनकी लोकयात्रा पदयात्रा में जाकर कई घंटों तक

संवाद किया। धीरेन्द्र भाई को भी अगले चरण की खोज करनी थी, लोकगंगा यात्रा का सयोजन भी इसीलिए था। *क्रांति में दडशक्ति का सहयोग नहीं लिया जा सकता। कानून के सहयोग से क्रांति भ्रष्ट होती है,* साथियों का यह निष्कर्ष धीरेन्द्र भाई के लिए मतभेद का विषय बन गया था। लेकिन जयप्रकाशजी ने बिहार आंदोलन के संघर्ष को अपनाकर *दडशक्ति पर अंकुश लाने का जो* प्रयास किया है उससे क्रांति में दडशक्ति बाधक तत्व है यह सिद्ध कर दिया है। कानून *के सहयोग से लेकर संघर्ष तक का इतिहास* क्रांति का 'अगला कदम' निश्चित करेगा। इसकी चर्चा आगे कभी होगी। (क्रमशः)

जैनेंद्र कुमार

आत्मोदय के बिना कहीं उद्धार नहीं

भारत के लोकतन्त्र में होते जा रहे मूल्यों के विघटन को रोकने के लिए क्या किया जाना चाहिए, इस बुनियादी मुद्दे पर 'भूदान यज्ञ' के सवाददाता सुरेश ठाकरान ने चिन्तक साहित्यकार जैनेन्द्र कुमार से कुछ प्रश्न किये। यहाँ हम वे प्रश्न और उत्तर दे रहे हैं। सं०

प्रश्न : आज की परिस्थितियां विषम हैं। एक दलके हाथों भारत सिसक-सा आया है। शासक दल ३२ प्रतिशत मत पर राज्य चला रहा है। ऐसी स्थिति में ६८ प्रतिशत मत वालों को क्या करना चाहिए ?

जैनेन्द्र : *व्यवहार के प्रश्न 'चाहिए' से* हल नहीं होते। ३२ प्रतिशत पर कांग्रेस दल राज्य पर है तो इसलिए कि बाकी ६८ *कई दलों में बंट गये हैं।* वे दल मिलने बोलते हैं केवल विरोध के तल पर। उस मेल का प्रभाव मतदाता पर सही नहीं पडता। 'इंदिरा हटाओ' के आधार पर लड़े गये चुनाव का फल उलटा ही हुआ था। दूसरी कोई ठोस भूमि विरोधी दलों के पास मिलने की है नहीं। इसलिए स्थिति चल रही है कि ६८ को भुनाकर ३२ राज कर सकता है और कर रहा है। फिर कौन कह सकता है कि *कांग्रेस की वह ताकत भी लोभ-लालसा पर ही आज नहीं* खड़ी है।

दो दलवाली डेमोक्रेसी कई जगह चल रही है। *माना जाता कि उससे* सतुलन बना रहता है। रहता होगा, पर बहुमत अल्पमत को क्यों बहा भी *बेकार नहीं बना दे सकता? इसलिए यदि* देश की शतप्रतिशत शक्ति को उपयोग में लाना हो तो दलीय परम्परा से कुछ अलग और ऊंची *राज-पद्धति का आविष्कार करना* होगा। लोकतंत्र का आशय पूरा तभी हो सकेगा। पारलियामेंटरी पद्धति पर्याप्त नहीं *मालूम होती। पारलियामेंट क्या भारत* में नहीं है? पर दल में गठित बहुमत होने पर पारलियामेंट के शेष तत्वों को आसानी *से व्यर्थ बना दिया जा सकता है। यानी* इस पद्धति में अन्त तक खतरा बना रहता है कि राष्ट्र का बल दल की मुट्ठी में जा पहुंचे। इसलिए प्रश्न उतना राजके *तंत्र का है नहीं।* अर्थात लोक यदि पूरी तरह जाग्रत है तो उस आधार पर कोई भी तंत्र लोकतंत्र का अभिप्राय सिद्ध कर सकेगा। राम कोई चुने गये राजा नहीं थे, दशरथ के पुत्र होने से राजपद उनके भाग में आया था। पर समाज-मानस तब धर्म-प्राणता से ओत-प्रोत था, ऋषिगण की बात चलती थी। इसलिए गांधी जैसे आदर्शशील *व्यवहारज्ञ ने अपनी राम-राज* की ही टेक रखी, दूसरा कोई स्वराज का पक्का नक्शा देने से इकार कर दिया। अमे*रीका में डेमोक्रेसी है, आमने-सामने केवल* दो दल हैं। पर क्या उससे वाटरगेट का काण्ड बच सका? श्री निक्सन जो दो बार *उस देश के इतिहास के सर्वाधिक मत से* अध्यक्ष बने, पीछे कैसे भ्रष्ट अपराधी साबित हुए? अर्थात तंत्र पर निगाह रखने में हम ठगे जा सकते हैं। निगाह में लोक-जागरण को रखना होगा और मान लेना होगा कि शासन वह उतना ही सही है जितना कम शासन है।

इस विचार को स्वीकार करें तो श्रेष्ठ पुरुषों को राजतंत्र का भाग *नहीं बनना* चाहिए। या तो कहो कि 'लेजिस्लेटिव' भर उन श्रेष्ठ पुरुषों का होना चाहिए। 'एक्जीक्यूटिव' फिर सासारिक व्यावहारिक पुरुषों *का बनता रहे। स्पष्ट है कि एक्जीक्यूटिव* को लेजिस्लेटिव के प्रति दायी होना होगा। लेकिन यह सब कल्पना की बातें हैं। आज के *लिए तो सुझाव इतना है कि ३२ प्रतिशत*-वाले कांग्रेस के राज को नम्र रहना चाहिए। ऊपर के 'कंट्रोल' से नहीं नीचे के 'कान्फी*डेंस' से राज करना सीखना चाहिए। ऐसा* होगा तो शेष दल अपने को वचित और दमित नहीं, सक्रिय और सहभागी अनुभव *करेंगे। लोकतंत्री रचना वास्तव में राज्य की* अहिंसक धारणा है। माना गया बहुमत अपने को अल्प-मत के प्रति भी वहां जिम्मेदार *मानेगा। अल्प होने के कारण उस मत की* अवगणना नहीं होगी, पूरा सम्मान होगा। यह शिष्ट और भद्र व्यवहार सभव तभी *बनेगा जब शासन राष्ट्र के समस्त जीवन को* अपनी मुट्ठी में लेना नहीं चाहेगा, बल्कि केवल देश की स्थूल आवश्यकताओं को पूरा करने और परस्पर सबंधों में 'ला एण्ड आर्डर' बनाये रखने तक स्वधर्म की मर्यादा पालेगा। दूसरे तात्विक, वैचारिक, सांस्कृतिक, नैतिक आदि पहलुओं पर निस्पृह पुरुषों को अधिकारी स्वीकार करेगा।

हमारे यहां उत्तम नागरिक से भी सन्यासी का स्थान ऊंचा माना गया है। उसका निःस्वार्थ और निवेदित जीवन होता है। यह आदर्श समाज को स्वस्थ रखता और धन-लिप्सा, पदलिप्सा की मात्रा से आगे स्फीत होने से बचाता है। *यहां धर्म-पुरुषों का क्षेत्र आ जाता है और राज्य का कर्तव्य है कि* ऐसे पुरुषों को वह नमन करे।

सच यह है कि आज तंत्र-चर्चा को अनुपात से अधिक महत्व दे डाला गया। कुल राजनीति ही उतनी महत्व की चीज नहीं है। हमारा ध्यान अब मौलिक मूल्यों की ओर जाना चाहिए और परिस्थितियों की विषमता के निराकरण के लिए वहीं से प्रेरणा प्राप्त करनी चाहिए।

प्रश्न : तो मूल्यों का ह्रास कैसे दूर हो?

जैनेन्द्र : ह्रास वह दूर होगा अपने से शुरू करने से। दूसरों को उपदेश देने से बचना चाहिए। जो उस ह्रास को रोकना चाहता

है उसे अपनी धन-कामना और यश कामना को संयत करना होगा। हिम्मत करनी होगी उसे कि वह गरीब रहे, पर चरित्रशील बने। स्पर्धा में न पड़े और कम में संतोष माने। देख सके कि बाहरी साज सामान का परिग्रह सुख नहीं बढ़ाता झंझट बढ़ाता है। वह उतना चरोरखा नहीं दीखेगा, शायद उलटे लुटाता दीखे। वह देगा ज्यादा, लेगा कम। वह दूसरों पर बोझ नहीं बनेगा, सबका सहारा बनना चाहेगा इत्यादि। भाषा को बढ़ाने की जरूरत नहीं। नैतिक ह्रास को रोकने के लिए हाय-तोबा मचाने से नहीं चलेगा। सरकारों से तो यह काम हो नहीं सकता। कारण, रुपये से नहीं, उदाहरण से ही होना यह संभव है। सरकार के पास वह उदाहरण कहां धरा है? वहां तो लोग दर्प में जीते हैं और जनता पर सवार रहते हैं। नीचे सेवा के स्थान पर आना उन्हें तनिक रुचिकर नहीं होता। उन्हें अपने आस-पास दबदबा चाहिए। निरीह और निस्व बना तो हाकिम कैसा। नैतिक उत्कर्ष आपको चाहिए तो यही निरीह और निस्व होने के आदर्श की स्थापना करनी होगी। दूसरा कोई उपाय नहीं दीखता।

प्रश्न : क्या गांधीजी की उपयोगिता में संदेह किया जाना चाहिए? नहीं तो उनका ही देश उन्हें क्यों भूल गया है? देखता हूं गांधीजी जब जिन्दा थे तब इतना उनका नाम नहीं सुना जाता था, जितना अब। लेकिन काम उलटा है।

जैनेन्द्र : नहीं, देश उन्हें भूला नहीं है। सिर्फ उनकी गहराई का आविष्कार करने में समय ले रहा है। देश में १५ अगस्त के दिन स्वाधीनता का जश्न हो रहा था और देश-वासी उस जगमगाहट में मुग्ध था। उस स्व-राज्य की आतिशबाजी में गांधी कहीं दीखने को था भी कि उसे याद किया जाये? पूछिये कि भला यह क्या राजनीति है कि दिल्ली में स्वराज्य आ रहा है और आप कहीं दूर नंगी धरती पर नंगे पांव एक अकेले पैदल घूमे जा रहे हैं। राजनीति का बोलबाला हो तब ऐसे गंवारू आदमी को पूछने की जरूरत भी क्या है? लेकिन जैसे-जैसे राजनीतिज्ञों के जरिये सन्नेहमें स्वर्ग का स्वप्न टूट रहा है, वैसे-ही-वैसे गांधी का आविष्कार अहरी हुआ जा रहा है। सचमुच लगने लगा है कि राज-धानी की चकाचौंध में असलियत नहीं है। लाखों-करोड़ों के दुख ने भीतर से झटका दिया है कि राजनीति की कर-धर कोरी बना-वटी है। हो यहां तक सकता है कि दुख की यह बाढ़ सबको डुबाती चली जाये और बता दे कि अब सभ्यता को नये सिरे से निर्माण पाना है। लगता है कि आगामी उस मानव-सभ्यता और विश्व सभ्यता के आरम्भ का सूत्र गांधी के अतिरिक्त और कहीं से उपलब्ध नहीं होगा। पर उसमें समय है। अभी राज-नीतिक जन अपनी दुहाई में राजनेता गांधी को ही ऊंचा बनाये हुए हैं। उस गांधी को दुबकाये रख रहे हैं जो स्वराज से मुंह मोड़-कर एकाकी भटकने को चल दिया था। चल दिया था कि राजनीतिज्ञों की भड़काई डाह और दाह को शांत करेगा और उस ज्वाला में अपने को भस्म कर देगा। उस निपट मानव गांधी को राष्ट्रपिता की प्रतिमूर्ति में से खोज निकालना है। मानता भारत देश और सारा संसार उसी शोध और संधान में समय ले रहा है। शायद है कि अणुविस्फोट का भय उस शोध में गति दे और विश्व को निरस्त्रीकरण के उपाय का मार्ग दीख आवे। मत मानिये कि गांधी मरकर मर गया है। जान लीजिये कि गांधी की आत्मा मृत्यु के द्वार में से निकल-कर अमरता पा गयी है और उसका नव्योदय विशेष दूर नहीं है।

प्रश्न : जिस नयी सभ्यता के आरम्भ की बात आपने की क्या वह आज की वैज्ञा-निक सभ्यता के प्रतिकूल होगी? क्या वह किसी अध्यात्म के नाम पर अवैज्ञानिक होगी?

जैनेन्द्र : हां, कुछ अश में वह अवै-ज्ञानिक जरूर लगेगी। विज्ञान को अन्तिम मान लेंगे तो स्वयं वही अविज्ञान बन जायेगा। मानना होगा कि उस वैज्ञानिक वहीं आनेवाली वृत्ति के परिणामस्वरूप ही सभ्यता ने आज मानविक को छोड़कर आर्थिक और भौतिक रूप से ले छोड़ा है। यों उसके वैभव का ठिकाना नहीं, पर पेट में उसके अंधेरा है। अर्थ बड़ा नहीं है, तृष्णा है। वस्तु को चीर कर विज्ञान सत्य की आत्मा को पकड़ लेना चाहता है। पर देखता है कि वस्तु विघटन के लिए अभी भी बची की बची है और आत्म हाथ नहीं आ रही है। अणु के परमाणु, और परमाणु के भी विभजन पर मालूम हो रहा है कि वहां फिर असंख्यता है, अनंतता है विखंडन की कड़ी का कहीं अन्त आनेवाला नहीं है। मैं समझता हूं कि विश्लेषण के इस आग्रह के समक्ष संश्लेषण की आवश्यकता का आविर्भाव हो रहा है। संश्लेषण की यह वृत्ति आध्यात्मिक कही जायेगी। उसका आरम्भ इस प्रतीति से है कि वास्तव और नहीं, केवल चिति ही वास्तव है। कण नहीं है, अणु नहीं है। नितान्त एक आत्ममयता है।

एकीभूत यह आस्था विज्ञान के चिमटे में नहीं आयेगी। विज्ञान विनत्व देता है, आस्था के अभाव में वहां से द्वंद्व फलित होता है। द्वंद्व का बाद तक फलित हो आता है। वही हो रहा है। राष्ट्रों के समूह एक गुट या दो गुट होकर अपनी-अपनी छावनियों में अणुबम की छाया में जी रहे हैं। सारा औद्योगीकरण इस ध्रुवीकरण में योग दे रहा है। दो तीन शताब्दियों से चली आ रही सभ्यता की यही अंतिम परिणति है। कब तक चलेगी प्रतिस्पर्धा विश्व को तो मर रहना नहीं है। आदमी को अस्तित्व से लुप्त नहीं हो जाना है इसलिए एक दूसरे को खाकर आदमी अपने को खतम नहीं कर सकेगा, अपने बावजूद उसे जीना होगा। इसके लिए उसे रणवाद से उद्धार पाना और कोई अधिक ठोस आसरा ढूंढना पड़ेगा। विज्ञान मिट तो नहीं सकता कारण बुद्धि लेकर ही मनुष्य पशु से अलग हुआ है। किंतु विज्ञान अध्यात्म का स्पर्श इस अर्थ में अवश्य स्वीकार कर सकता है कि वह उस परम एक, परम अखण्ड में खंड-विसर्जन की प्रेरणा को गति दे। विज्ञान के इस परिष्कार को मैं अवै-ज्ञानिक नहीं कहूंगा प्रत्युत विज्ञान को उस भांति एक परिपूर्णता, भव्यता, स्निग्धता प्राप्त होगी। वह विश्व को फाड़ने नहीं, जोड़ने के काम आयेगा। विज्ञान की सच्ची धन्यता प्राप्त हुई तभी कही जायेगी। और क्या वैज्ञानिक बराबर अणुशस्त्रों की समाप्ति की बात ही नहीं कह रहे हैं? अपनी ही रचना को विज्ञान स्वयं मिटाने पर आ तुला है तो क्या इसलिए नहीं कि वह अपने ही अपूर्णपन को पहचान गया है? अध्यात्म से

यदि वह विज्ञान योग साध लेगा तो देखा जायेगा कि राजनीति का साम्राज्य उड़ जाता है और उसका स्थान लेने के लिए मानव-नीति उतर आती है।

प्रश्न : क्या राज-निरपेक्ष स्वतन्त्र जन-शक्ति का 'संगठन' जरूरी है?

जैनेन्द्र : संगठन शब्द के आसपास बहुत भ्रम जमा हो गया है। आधी दुनिया ईसाइयत के नाम पर संगठित है तो क्या वह संगठन कोई ईसा मसीह ने किया था? इतने संगठित धर्म हैं, क्या किसी भी धर्म प्रवर्तक ने संगठन को बटोरा था? तमाम ब्रह्मांड एक नियम में गठित है, क्या वह गठन बाहर से हुआ है? या कि गठन का एक अन्तर्नियम घट-घट में व्याप्त है? अर्थात संगठन की जो सचेतन प्रक्रिया ऊपर है, उसमें विशेष सार नहीं है। ऐसी हर संघटना में विघटन का बीज पड़ा रहता है। उस वहम ने आज एक नये सख्यावाद के रोग को जन्म दे रखा है। हमारा शरीर विलक्षण भाव से संगठित है कि नहीं? सब इन्द्रियां परस्पर तारतम्य से काम करती हैं, स्पर्श पांव को होता है और मस्तिष्क ही उसे यह सूचित करता है। यह अद्भुत संघटना कैसे हो गयी? किस वैज्ञानिक ने की? इसलिए मैं कहता हूं कि यथावश्यक संघटना होगी, पहले आत्मोदय होने दीजिये। अन्यथा आये रोज राजनीतिक संगठनों का हाल-बेहाल होता हम देखते हैं। फिर कौन भला-मानस भ्रम में पड़कर ठगा जाना चाहेगा?

प्रश्न : आप कई बार कहते हैं कि भारत अपना मार्ग चुने। वह मार्ग आपकी दृष्टि से क्या होना चाहिए?

जैनेन्द्र : क्या अभी नहीं कहा, आत्मोदय।

प्रश्न : आत्मोदय से क्या सब हो जायेगा? समाज परिवर्तन उससे आ जायेगा, व्यवस्थाएं बदल जायेंगी? किस पुराण काल से भारत में आत्मवाद चला आ रहा है, पर क्या वही भारत आज पिछड़ा और पिछलग्गू नहीं है? आवश्यकता जब क्रांति की है, समाज-क्रांति की, राज-क्रांति की, तब आप वही आत्मोदय का राग अलापना चाहेंगे?

जैनेन्द्र : हां। आत्मोदय शब्द घिसा-पिटा हो सकता है कि उस पर चलनेवाली दुकानदारी ने उसमें से जान तक निकाल ली हो। यह भी सच है कि भारत के जिन क्षेत्रों में आत्मवाद का बोलबाला है उन्हीं में पाखण्ड का राज है। यह भी सच है कि भारत आज पिछड़ा है, दीन है और हीन है। सचमुच वह पिछलग्गू सा बना दीखता है। पर इस दुस्साहस से मुझे डर नहीं है कि ठीक इस स्थिति में मैं उस जराजीर्ण शब्द को दोहराऊं। शब्द वह आत्मोदय सच्चा है, खरा है। क्या इसी गुण से ही आज तक वह दुकानदारी के काम नहीं आता रहा? ऊंचे और संपन्न देश अगर आज सुर्ख और लाल दीखते हैं तो पूछता हूं कि किसके लहू से? वह उन्नति क्या देखते-देखते उन्हें तोड़े नहीं जा रही है? दीन-हीन समझे जानेवाले देशों को सिर्फ आत्मावलम्बी हो जाना है, अपने को दीन-हीन समझना छोड़ देना है और ये अभिमान में सिर रखनेवाले मुल्क जमीन पर गिरे दिखाई देंगे। अविकसित माने गये देश मंडी बने हुए हैं उस माल के जिसका वे अभिमानी देश निर्माण और प्रचार करते रहते हैं। उस चक्कर में आलकर वे आयात का मौका पाते और छोटे देशों को निर्यात के नीचे दबा आते हैं। स्वदेशी की आन लेकर छोटे राष्ट्र अगर स्वाश्रयी बनें तो आज वह प्रवाह उलट जाता है। उन्नति वह खाली और पोली निकलती है और दलित रखे गये देश सिर ऊपर कर आते हैं। यह काम सच्चे आत्मोदय से ही सध सकता है। इसमें करना इतना भर है कि फालतू को फालतू समझ लेना है। अकल को अपनी गांठ से जाने नहीं देना है। बड़ी-बड़ी किताबें और बड़े-बड़े दिग्गज हमें अपनी ही आत्मा के विरोध में चलने को ललचाते हैं और हम उस लालच में आ जाते हैं। महज अपने विश्वास को खो बैठने और भटकाव में पड़कर उन्हीं लोगों को अपना आप्त मान उठते हैं। यह क्रम अभी उलट जाता है अगर हममें आत्मा का भान हो आता है। वही नहीं है और हम उधार जीवन में बहे जा रहे हैं। ⭘

---

३० जनवरी से १२ फरवरी तक उपवासदान पखवाड़ा में उपवासदान जरूर दें

❀ वी० एम० तारकुंडे[1]

आंदोलन : जनतंत्री राजनीति में परीक्षण

जयप्रकाशजी के आंदोलन का मूल्य सम्पूर्ण अवस्थित संकट के संदर्भ में मापा जाना चाहिए जोकि देश में आर्थिक, राजनीतिक, नैतिक सभी रूप में व्याप्त है। जब तक इस संकट के समूलोच्छेद के लिए सक्रिय प्रयत्न नहीं किये गये, इसकी कम ही आशा है कि भारतीय जनतन्त्र कुछ वर्ष से अधिक टिक पायेगा। इस तरह तो देश में एक प्रकार की अराजकता का खतरा है जोकि किसी न किसी प्रकार की तानाशाही को जन्म दे सकती है।

इस बारे में तर्क करना असंगत होगा कि सत्तारूढ़ दल अकेले देश को वर्तमान संकट से पार ले जाने में समर्थ नहीं है। यह संकट वस्तुतः सत्तारूढ़ दल की अन्धकारपूर्ण नीतियों का ही परिणाम है। यद्यपि तीन वर्ष पूर्व दल को लगभग पूर्ण सत्ता प्राप्त हो गयी फिर भी इसके बावजूद उसकी उपलब्धियां राजनीतिक निराशा, आर्थिक संकट और सामान्य नैतिक पतन से अधिक कुछ नहीं हैं।

मार्गदर्शन की जरूरत

कोई भी विरोधी दल वर्तमान संकटपूर्ण स्थिति से देश को उबारने का दावा नहीं कर सकता। किसी भी दल के पास न तो इसके लिए राजनीतिक शक्ति है और न नैतिक बल है जिसके आधार पर वह इस कार्य का बीड़ा उठा सके। सत्तारूढ़ व विरोधी दलों की बढ़ती हुई असफलता का परिणाम जिस गतिरोध में सामने आ रहा है उसका समाधान लोगों द्वारा स्वयं उचित कदम उठाकर ही प्राप्त किया जा सकता है। इसका एक मार्ग गुजरात के छात्रों ने दिखाया है और एक मार्ग बिहार के छात्र और वहां की जनता दिखा रही है। यह स्वाभाविक था कि इन आंदोलनों को किसी ऐसे व्यक्ति का मार्गदर्शन मिले

---

[1]. बम्बई उच्च न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधीश।

जिसे उच्च नैतिक स्तर प्राप्त हो और जो किसी राजनैतिक दल से सम्बद्ध न हो। जयप्रकाशजी के आकस्मिक लोकप्रिय होने के पीछे यही तथ्य है कि वे देश में स्वाधीनता व जनतंत्र की रक्षा की आशा के प्रतीक बन गये हैं।

शिक्षण से ही नियंत्रण

देश को वर्तमान संकट से उबारने के लिए जन-आन्दोलन के दो लक्ष्य होने चाहिए, इसे भ्रष्टाचार को सार्वजनिक जीवन से मिटाने में नहीं तो कम से कम उसे रोकने और घटाने का यत्न करना ही चाहिए। दूसरे इसे इस बात की निश्चिन्तता प्रदान करनी चाहिए कि केन्द्रीय और राज्य सरकारों पर जनता का प्रभाव व नियंत्रण अधिक होगा। यह दूसरा उद्देश्य तभी सफल हो सकता है जब वर्तमान आन्दोलन जनता को जनतंत्र के मूल सिद्धान्तों में प्रशिक्षित करने में समर्थ हो। अर्थात जनता जान सके कि एक अच्छी सरकार कायम करने के दायित्व व अधिकार उनके पास हैं और उसके भ्रष्ट व अक्षम हो जाने पर उसे गिराने के अधिकार भी उनके पास हैं। यदि विधायिका व कार्यकारी अंगों पर जनता का नियंत्रण ही जनतंत्र का पैमाना है तो आत्मनिर्भरता व सहकारी यत्नों में जनता का राजनैतिक शिक्षण ही ऐसे जन-नियंत्रण का एकमात्र माध्यम है।

जयप्रकाशजी के आन्दोलन की उपयोगिता तदनुसार ही आंकी जानी चाहिए। प्रथम, क्या इससे सार्वजनिक जीवन में भ्रष्टाचार घटना सम्भव है? दूसरे, क्या इससे जनता में आत्मनिर्भरता की भावना आती है और वे जनतंत्र में अपनी भूमिका के उचित निर्वाह के लिए तैयार होते हैं। इन मौलिक प्रश्नों की पृष्ठभूमि से अन्य प्रश्न यथा गफूर मंत्रिमंडल की बर्खास्तगी या बिहार मंत्रिमंडल का भंग करना केवल गौण रह जाते हैं।

आन्दोलन की सफलता

एक सीमित दायरे तक यह आन्दोलन भ्रष्टाचार के नियमन में सफल रहा है। हमारे राजनैतिक नेता इस बात से अच्छी तरह सजग थे कि देश में तस्कर किस तरह उसे भ्रष्ट किये रहे हैं लेकिन उनके विरुद्ध तक कोई कार्रवाई नहीं की गयी। इस आन्दोलन ने ही सरकार को मजबूर किया कि वह इन तस्करों के विरुद्ध कुछ करे। कुछ विरोधी लोग कह सकते हैं कि तस्करों व जमाखोरों की गिरफ्तारी केवल एक राजनैतिक चालबाजी है और यह बात कुछ सही भी है। लेकिन यह भी सही है कि सत्तारूढ़ दल को अपनी राजनीतिक इमेज में ताजगी लाने के लिए इस चालबाजी का प्रयोग करना पड़ा। इससे प्रकट है कि गुजरात और बिहार के भ्रष्टाचार विरोधी आन्दोलन किस प्रकार सफल रहे हैं।

एक और आशाजनक तथ्य यह भी है कि बिहार आन्दोलन जनता के राजनीतिक प्रशिक्षण में कुछ हद तक सफल सिद्ध हो रहा है। वैसे राजनीतिक प्रशिक्षण के दो रूप होते हैं। चुनाव के समय पर मतदाताओं को अपने मत उचित रूप से डालना सीखना चाहिए ताकि बेईमान राजनीतिज्ञों को समाप्त किया जा सके। उन्हें धमकियों, दबावों, जाति या धन के आधार पर मतदान में प्रभावित नहीं होना चाहिए।

अधिक जनतंत्री सरकार

चुनावों में मतदाताओं को इस बात से आश्वस्त होना चाहिए कि उनके द्वारा स्थापित सरकार उनकी समस्याओं व आवश्यकताओं के प्रति उदासीन नहीं रहेगी अपितु उन पर पूरा ध्यान देगी। बिहार के विभिन्न भागों में जयप्रकाशजी व उनके अनुयायियों द्वारा नियुक्त जन समितियों और छात्रों ने मतदाताओं को अपने मत निर्भीकता व विवेक से डालने के लिए प्रोत्साहित करने में कदम आगे रखा है। चुनाव के बाद यही समितियां इस बात पर ध्यान दे सकती हैं कि नयी सरकार जनता की आवश्यकताओं पर ध्यान दे। इस बात पर विश्वास करने का कारण है कि बिहार आन्दोलन के परिणामस्वरूप उस राज्य में आनेवाली भावी सरकार अधिक जनतंत्री होगी और जनता के हितों व इच्छाओं के प्रति उदासीनता या पहले जैसी लापरवाही नहीं रहेगी।

उदासीनता से छुटकारा

यह आलोचना कि बिहार का आन्दोलन अप्रजातांत्रिक है, अप्रासंगिक है। देश के चुनाव विशेषकर बिहार के चुनाव स्वयं प्रतिनिधि सरकारों के रूप में प्रस्तुत नहीं हुए हैं जैसा कि जयप्रकाशजी ने पर्यवेक्षण किया है कि इन चुनावों के पीछे लाठी, गोली और जातिवाद की सत्ता रही है। फिर भी कुछ लोग कह सकते हैं कि बिहार विधानसभा भंग करने की मांग अप्रजातांत्रिक है क्योंकि गफूर सरकार को बिहार की जनता अर्थात बिहार विधानसभा में बहुमत प्राप्त है। लेकिन इन दावों का अधिक महत्व नहीं है। गैर-तटस्थ राजनीतिज्ञों जैसे उमाशंकर दीक्षित ने कहा है कि बिहार की जनता का बहुमत जयप्रकाशजी का समर्थन नहीं करता। पर इन राजनीतिज्ञों ने भी इस कथन को दुहराने की हिम्मत नहीं की है कि बिहार की जनता का बहुमत गफूर सरकार का समर्थन करता है। इसका अर्थ यह निकाला जा सकता है कि बिहार में जनता का बहुमत देश के अन्य भागों की तरह राजनीतिक अरुचि और उदासीनता से आक्रान्त है। लेकिन यदि यही बात है तो बिहार आन्दोलन का लक्ष्य भी लोगों को इस उदासीनता से जगाना और उनके अधिकार बताना है। जनता का सहगामी होना जनतंत्र का मूल आधार है।

दलों के सदस्य

बिहार आन्दोलन की एक अधिक समाविल आपत्ति इस तथ्य से प्रस्तुत होती है कि राजनीतिक दल इसमें सक्रिय हिस्सा ले रहे हैं। इन राजनैतिक दलों के सदस्य उसमें चुनकर भाग ले रहे हैं।

लेकिन राजनीतिक दलों के सदस्य अपने दल के अन्तर्गत आन्दोलन में काम नहीं कर रहे हैं अपितु वे जनसंघर्ष समितियों के सदस्य के रूप में आन्दोलन में भाग ले रहे हैं। इस तरह यह आन्दोलन जनता का आन्दोलन है और यह कहना गलत है कि ये विरोधी दलों का आन्दोलन है। वैसे भी इस तरह की आपत्ति उठानेवाले लोग ऐसे लोग हैं जो मध्य-वर्ग के बुद्धिजीवी हैं और जिनमें से अधिकांश किसी राजनीतिक दल से सम्बद्ध नहीं हैं। यदि इन पर बैठकर तमाशा देखने और निरर्थक आपत्तियां उठाने की बजाय वे आन्दोलन में सक्रिय भाग लें तो उसमें विरोधी दलों की भूमिका का सापेक्षिक महत्व स्वतः कम हो जायेगा।

एक महत्वपूर्ण परीक्षण

इन क्षेत्रों से एक और आपत्ति यह प्रस्तुत की गयी है कि यदि बिहार आन्दोलन असफल होता है तो इसका परिणाम न केवल बिहार पर अपितु सारे देश पर गहरी निराशा के रूप में सामने आयेगा। लेकिन वे लोग यह बात न भूलें कि गुजरात और बिहार के आन्दोलन के पूर्व ही ऐसी निराशा की भावना देश में पहले से ही व्याप्त थी। यदि ये आन्दोलन नहीं होते तो भी यह भावना गायब नहीं हो सकती थी। अतः समाधान इसमें नहीं है कि आराम-कुर्सी पर बैठनेवाले राजनीतिज्ञ विलास किया करें अपितु इस प्रकार के आन्दोलनों में सक्रिय भाग लेकर अपना उत्तरदायित्व निभाने में ही इसका हल है। हर उचित आन्दोलन असफल होने पर निराशा उत्पन्न करता है लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि उसकी सफलता के लिए यत्न न किये जायें। पर ऐसा प्रतीत होता है कि जयप्रकाशजी बिहार आन्दोलन को व्यावहारिक जनतंत्री राजनीति में एक परीक्षण के रूप में देख रहे हैं। रेडिकल ह्यूमिनिस्ट्स की तरह सर्वोदय सदस्य भी ग्रामसभा व नगर सभा के रूप में विभिन्न राज्यों में जनतंत्र की इकाइयां स्थापित करने के लिए यत्नशील रहे हैं। अनेक वर्षों के बीच भी इस तरह के यत्न विशेष सफल नहीं हुए। जयप्रकाशजी ने कहा है कि इस अनुभव के बाद मैंने यह महसूस किया है कि ग्राम-स्वराज्य का कदम पूर्ण उचित कदम नहीं था। संघर्षात्मक दृष्टिबिन्दु अधिक सही है। गांधीजी ने इस तथ्य को स्वीकार किया था जबकि उन्होंने निर्माण कार्य के साथ संघर्ष का भी विकास किया था। वे समझते हैं कि जनता और उसके संगठनों का राजनैतिक प्रशिक्षण जनतंत्र की प्राथमिक इकाइयों में ही प्राप्त किया जा सकता है। इसे उपदेश देकर नहीं अपितु उचित राजनैतिक संघर्षों में उसे संलग्न करके ही पाया जा सकता है।

समाधानकारी तकनीक

परीक्षण निःसन्देह अत्यन्त महत्वपूर्ण है। भारत में जनतंत्र उस समय तक स्थिर और सुरक्षित नहीं हो सकता जब तक कि हमारी जनता जनतंत्र के मूल्यों और सिद्धान्तों में प्रशिक्षित न हो। वर्तमान संकट ने यह प्रदर्शित कर दिया है कि ऐसे प्रशिक्षण के लिए हम और अधिक समय नहीं खो सकते। पश्चिमी जनतंत्रों में जिस राजनीतिक विकास ने अनेक पीढ़ियों का समय लिया है, हमें भारत में उसे कुछ ही वर्षों में लाना होगा। बिहार में जयप्रकाशजी द्वारा प्रयुक्त तकनीक इस दिशा में सम्भावित समाधान सिद्ध हो सकती है।

यहां यह उल्लेखनीय होगा कि जयप्रकाशजी के आंदोलन और प्राथमिक जनतंत्री कार्य में उनके वृहद परीक्षण से यह प्रकट है कि जान डेवी की सक्रिय ज्ञानमीमांसा के यह अनुरूप है। जान डेवी ने कहा है कि सच्चा ज्ञान नकारात्मक रूप में ग्रहण नहीं किया जा सकता है, यह केवल सक्रिय कार्य से ही प्राप्त किया जा सकता है। जयप्रकाशजी ने कहा है कि संघर्षों की श्रृंखला के बाद ही जनता आत्मनिर्भरता का गुण प्राप्त कर सकेगी जो सफल जनतंत्र की प्राथमिक आवश्यकता है।

रामरत्न गुप्त

चुनाव-प्रणाली में सुधार की जरूरत

अंग्रेजी दासता से मुक्त होने पर हमारे देश में स्वतन्त्र जनतन्त्र की स्थापना हुई। २६ जनवरी, १९५० से जनतन्त्र का विधि-विधान एक लिखित संविधान के अन्तर्गत आया। संविधान में निहित जनता के मौलिक अधिकार एवं निदेशक सिद्धान्त जनतन्त्र को स्वस्थ एवं सफल बनाने की सामर्थ्य रखते हैं। किन्तु २७ वर्ष बीत जाने पर भी हमारा प्रजातन्त्र यथेष्ट स्वस्थ एवं सफल न बन सका। आज एक ओर विरोधी दलों का कहना है कि शासक दल ने जनतन्त्र का गला घोंट दिया है, तो दूसरी ओर शासक दल का आरोप है कि विरोधी दल मिलकर जनतन्त्र की जड़ें उखाड़ फेंकने के लिए षड्यन्त्र रच रहे हैं। सत्तारूढ़ दल के एक नेता ने सीमित जनतन्त्र का सुझाव भी दिया था। जहां तक जनता का प्रश्न है, अधिकांश जनता इस जनतन्त्र से ऊब उठी है। ऐसे जनतन्त्र से देश की दशा नहीं सुधर सकती—ऐसा बहुतों का विचार बन गया है। कुछ तो देश में जनतन्त्र को ही नकारते हैं। इस सोचनीय स्थिति के लिए शासक दल, विरोधी दलों तथा जनता के दोषों का विश्लेषण न कर अपने जनतन्त्र के विधि-विधान में मौलिक एवं व्यावहारिक दोषों का विवेचन तथा उनके निराकरण के उपायों पर विचार करना अधिक उपयुक्त होगा।

कोई भी तन्त्र अपने आपमें न अच्छा होता है, न बुरा। जो भी तन्त्र किसी देश को सुख, शान्ति एवं शक्ति प्रदान कर सके, वही उस देश के लिए शुभ है। तन्त्र को संवैधानिक तथा व्यावहारिक रूप देनेवालों की अच्छाई और बुराई में ही किसी तन्त्र की अच्छाई-बुराई निहित होती है। राम और रावण, कृष्ण और कंस राजतन्त्र के शुक्ल एवं कृष्ण पक्ष प्रस्तुत करते हैं, कमालपाशा और हिटलर तानाशाही में 'सु' और 'कु' के प्रतीक हैं, अब्राहम लिंकन और निक्सन प्रजातन्त्र के दो विरूप रूपों के नायक रहे। फिर भी जनतन्त्र सब तन्त्रों में श्रेष्ठ माना गया है क्योंकि वह अपने सच्चे स्वरूप में जनता का शासन होता है और जनता के लिए होता है। किन्तु जनतन्त्र अपनी सफलता के लिए देश की प्रकृति, प्रतिभा एवं परिस्थिति के अनुरूप संविधान, स्वस्थ जनतान्त्रिक परम्पराओं, उदात्त मन एवं कुशाग्रबुद्धि राष्ट्रप्रेमी नेताओं, प्रबुद्ध जनता, स्वतन्त्र प्रेस व निर्भीक एवं निष्पक्ष न्यायपालिका की अपेक्षा रखता है।

विदेशी संविधान

हमारे देश का संविधान बहुत कुछ विदेशी ही है और वह पूर्णतया देश की प्रकृति, प्रतिभा एवं परिस्थिति के अनुरूप नहीं है। हमारा जनतन्त्र आयातित एवं आत्मागृहीत जनतन्त्र का ढांचा मात्र प्रतीत होता है जो पाश्चात्यों की प्राणभीजन से जिलाया जा रहा है। हमारे शासकों, विशेष रूप से नौकरशाही की मनोवृत्ति और शासन प्रणाली वही है, जो अंग्रेजों के जमाने में थी। इन्हीं मौलिक कारणों से भारतीय जनतन्त्र यथेष्ट स्वस्थ एवं सफल रूप में न पनप सका।

हमारे देश की अधिकांश जनता अपढ़ एवं राजनीतिक ज्ञान से शून्य है। राजनीतिक दलों की नीतियां भी स्पष्ट नहीं हैं। स्वयं कांग्रेसी सदस्य अपने दल के अधिवेशनों में जनतन्त्री समाजवाद की स्पष्ट रूपरेखा जानने की असफल चेष्टा करते रहे हैं। स्पष्ट नीतियों के स्थान पर आकर्षक किन्तु थोथे नारों से काम चलाया जा रहा है। लम्बे-चौड़े प्रस्तावों और भारी-भरकम घोषणा-पत्रों से जनता को भरमाया जाता है। कथनी और करनी में आकाश-पाताल का अन्तर है। ऐसी स्थिति में, जब पढ़े-लिखे मतदाता ही विभिन्न दलों की नीतियों को समझ पाने में असमर्थ हैं, तो फिर अपढ़ व्यक्तियों का तो कहना ही क्या? शिक्षा और राजनीतिक ज्ञान के बिना मताधिकार दिया जाना घोड़े के आगे गाड़ी जोतना ही है। राष्ट्रीय चेतना और राजनीतिक ज्ञान के अभाव में मतदाता अपने मताधिकार के महत्त्व को समझ नहीं पाता। व्यक्तिगत सम्बन्ध, आकर्षण-प्रलोभनों तथा जाति-सम्प्रदाय-धर्म के हितों को देखकर मत देने से जनतन्त्र का स्वरूप ही विकृत हो जाता है। विडम्बना की बात तो यह है कि १८-२० वर्षीय ग्रेजुएट, जो एक साधारण अपढ़ व्यक्ति की अपेक्षा अधिक राजनीतिक चेतना-सम्पन्न होता है, मताधिकार से वंचित है।

मितव्ययता की जरूरत

हमारा देश अत्यन्त निर्धन है। हमारे प्रजातन्त्र का स्वरूप इस निर्धनता के अनुरूप नहीं है। एक गरीब देश के लिए राज्य-सभा और विधान परिषदों की स्थिति सफेद हाथी पालने के समान है। इनके बिना भी प्रजातन्त्र प्रजातन्त्र ही रहेगा, उसके स्वरूप को किसी प्रकार का बट्टा नहीं लगेगा। केन्द्र व प्रान्तों में मन्त्रियों की संख्या भी देश की आर्थिक स्थिति को देखते हुए समीचीन नहीं है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् बने मन्त्रिमण्डलों में गिने-चुने मन्त्री थे फिर भी राज्य कार्य सुचारु रूप से चलता था। आज सत्तारूढ़ दल के अधिकांश सदस्य मन्त्री बनने का स्वप्न देखते हैं। इसी से जोड़-तोड़ और उखाड़-पछाड़ होती है और मन्त्रिमण्डल बनते-बिगड़ते रहते हैं। विधान-सभाओं और लोक-सभा के सदस्यों की संख्या कम कर देने पर भी प्रजातन्त्र को आंच नहीं आयेगी। प्रजातन्त्र को जितना कम व्ययसाध्य बनाया जायेगा, उतना ही एक गरीब देश के लिए श्रेयस्कर होगा।

चुनाव प्रणाली

हमारे देश में, जहां धर्मनिरपेक्ष राज्य है, आज भी साम्प्रदायिकता और जातीयता के संस्कार प्रबल हैं। चुनावों में जो जनतन्त्र के प्राण हैं, राजनीतिक दल एवं प्रत्याशी इन दुर्भावनाओं का जी भर लाभ उठाते हैं जो जनतन्त्र के लिए विशेष रूप से घातक है। प्रत्याशी चुनते समय इनका ध्यान रखा जाता है और चुनाव लड़ते समय इनको भड़काया भी जाता है। साम्प्रदायिक, जातीय, अथवा वर्गीय आधार पर चुने गये प्रतिनिधि अपने कार्य-व्यवहार में सहज स्वाभाविक रूप से अपने समर्थक तत्त्वों का हित-चिन्तन करेंगे। अतः साम्प्रदायिकता एवं जातीयता की अशिव शक्तियों को कुंठित करने के लिए चुनाव-प्रणाली को बदलना होगा। चुनाव-प्रणाली को बदलने की मांग दिन पर दिन प्रबल होती जा रही है। दूषित चुनावों से प्रजातन्त्र अपनी आत्मा ही खो बैठता है। चुनाव-प्रणाली में सुधार के लिए ये सुझाव दिये जा सकते हैं :

(१) केवल वे ही दल, जो किसी जाति, सम्प्रदाय, क्षेत्र अथवा वर्ग विशेष का प्रतिनिधित्व न करते हों और जिनकी स्वदेश एवं विदेश नीतियां निश्चित, सुस्पष्ट तथा राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत हों, लोक-सभा तथा विधान-सभाओं के चुनावों में भाग लेने के अधिकारी माने जायें। इससे दलों के ध्रुवीकरण को बल मिलेगा और जनतंत्र के अनुकूल स्वच्छ एवं स्वस्थ राजनीतिक वातावरण बन सकेगा।

(२) स्वतन्त्र प्रत्याशियों को चुनाव लड़ने का अधिकार न हो। अधिकतर स्वतंत्र प्रत्याशी किसी न किसी दल के प्रत्याशी की काट करने के लिए खड़े किये जाते हैं। स्वतंत्र प्रत्याशी बहुमत पाकर भी न सरकार बना सकते हैं, न चला सकते हैं। अलबत्ता विशेषज्ञ व्यक्ति जो किसी राजनीतिक दल से सम्बद्ध न हों, लोक-सभा तथा विधान-सभाओं में मनोनीत किये जायें जो अपने विषय से सम्बन्धित समस्याओं पर अपने निष्पक्ष विचार प्रकट करें किन्तु उन्हें मत देने का अधिकार न हो।

(३) जनतन्त्र को साम्प्रदायिकता एवं जातीयता के नागों के विषदन्त से बचाने के लिए चुनाव केवल दल के चुनाव-चिह्न के आधार पर ही होने चाहिए। चुनावों के परिणाम घोषित होने पर विभिन्न दल अपने द्वारा जीते गये स्थानों के लिए अपने योग्यतम एवं निष्ठावान सदस्यों को सभाओं में भेजें और दल की नीति तथा जनहित के विरुद्ध कार्य करने पर किसी भी सदस्य को वापिस बुलाकर उसके स्थान पर किसी अन्य को मनोनीत करने का अधिकार रखें। इससे दलबदल के अभिशाप का, जो मतदाताओं के साथ विश्वासघात और जनतंत्र के साथ जबरदस्ती है, अन्त हो जायेगा। साथ ही, शासन में स्थिरता आयेगी। फिर सच्चे अर्थों में दल का शासन होगा और सदस्यों पर दल का अंकुश रहेगा।

(४) किसी भी सभा की अवधि समाप्त होने से एक माह पूर्व राष्ट्रपति शासन लागू करके एक माह के भीतर ही चुनाव सम्पन्न हो जाने चाहिए। किसी शासन के भंग किये जाने की दशा में भी अनिवार्य रूप से एक मास की अवधि में चुनाव करा दिये जायें। एतदर्थ चुनाव मशीन सदा तत्पर रहनी चाहिए। ऐसा होने पर सरकारी तन्त्र का चुनावों में दुरुपयोग न किया जा सकेगा।

(५) प्रचार-कार्य में जनता को दलों की नीतियों, सिद्धियों तथा असफलताओं से परिचित कराया जाये। चुनाव प्रचार सभाओं, रेडियो, समाचारपत्रों तथा चुनाव घोषणा-पत्रों के माध्यम से हो। जुलूस व लाउडस्पीकरों द्वारा प्रचार निषिद्ध हो। एक दल एक से अधिक पोस्टर का प्रयोग न करे और वह भी सुरुचिपूर्ण हो। दीवालें न रंगी जायें। मतदान के दिन दलों द्वारा कोई डेरे-तम्बू न लगाये जायें। चुनाव कार्यालय द्वारा मत-केन्द्र और मत क्रमांक की चिटें मतदाताओं के घरों पर पहुंचा दी जायें। ऐसा करने से दलों का चुनाव व्यय-कम हो जायेगा।

(६) चुनावों में धन के, विशेष रूप से काले धन के प्रयोग के सम्बन्ध में भूतपूर्व राष्ट्रपति वि० वि० गिरि के उद्गार महत्वपूर्ण हैं। 15 वर्ष पूर्व विश्वविख्यात अर्थशास्त्री निकोलस कालडोर ने पं० जवाहरलाल नेहरू को काले धन की विनाशक शक्ति और उससे पनपनेवाले राजनीतिक भ्रष्टाचार से सावधान किया था। आज हजारों धाराओं में बह रहे काले धन का आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक क्षेत्र में दुष्प्रभाव अपने विकराल रूप में देखने को मिल रहा है। तस्करों और मुनाफाखोरों के धन से चुनाव जीते जाने पर निश्चय ही जनतन्त्र जनता के लिए न होकर इन्हीं लोगों के लिए होगा। चुनाव के धन का खेल बन कर रह जाने से जनतन्त्र की आत्मा का अपहरण हो गया है। यदि यही दशा रही तो देश में प्रभुत्व किसी रावण या हिटलर या निक्सन का होगा और राक्षसी वृत्ति जनतन्त्र के साथ रही सही मानवताओं भी हड़प जायेगी। अत. जनतन्त्र को बचाने के लिए, उसमें प्रजातान्त्रिक आत्मा की स्थापना के लिए राजनीतिक चन्दों पर, स्वदेशी और विदेशी दोनों ही, पर पूर्ण रोक लगानी होगी। मान्यता प्राप्त राष्ट्रीय दलों तथा चुनावों के व्यय को निश्चित सीमा में सरकार वहन करे। इस धन का कर के रूप में देकर भी जनता लाभ में ही रहेगी।

मन्त्रियों की जांच

केन्द्रीय व राज्यों के मन्त्रियों पर विरोधी दल ही नहीं, स्वयं सत्तारूढ़ दल के सदस्य भी भाई-भतीजावाद तथा भ्रष्टाचार के आरोप आये दिन लगाते रहते हैं। अनेक पत्र-पत्रिकाएं भ्रष्टाचार का भण्डा-फोड़ करते रहते हैं। सर्वोदयी नेता जयप्रकाश नारायण के कथनानुसार बिहार में एक भी मन्त्री ईमानदार नहीं है। यदि जनता के मन में व्यापक रूप से इस प्रकार की बात घर कर जाये तो स्वाभाविक ही है। ऐसे अविश्वास और अश्रद्धा के वातावरण में जनतन्त्र फूल-फल नहीं सकता। कुटिलता भरे राजनीतिक वातावरण में दलगत जांच पड़ताल अविश्वास को भेदने में समर्थ नहीं होती। अत. सर्वोच्च एवं न्यायालयों के अवकाश प्राप्त न्यायाधीशों से गठित स्वतंत्र आयोग केन्द्र और प्रान्तों के लिए पृथक-पृथक गठित किये जायें। कोई भी व्यक्ति शपथ-पत्र के आधार पर प्रमाण सहित किसी भी मन्त्री के विरुद्ध पक्षपात, भ्रष्टाचार, अनियमितता एवं जनहित विरोधी कार्य से सम्बन्धित आरोप लगाने का अधिकारी हो, गंभीर आरोपों में तथ्य प्रतीत होने पर आयोग मन्त्री के पदत्याग के लिए सिफारिश करे जो मान्य हो। आरोप सत्य सिद्ध होने पर दोषी मन्त्री को एक साधारण व्यक्ति के समान ही दण्डित कर राजनीतिक क्षेत्र से निष्कासित कर दिया जाये। आरोपों के असत्य एवं निराधार सिद्ध होने पर आरोपकर्त्ता को कठोर दण्ड दिया जाये।

नियुक्तियों, स्थानान्तरण, पदोन्नति, लाइसेन्स आदि में सुनिश्चित नियम हों। विधायक एवं लोक-सभा सदस्य हस्तक्षेप न करें। यदि कोई अधिकारी नियमों का उल्लंघन करता है, तो विधान-सभा तथा लोक-सभा सदस्य का ध्यान आकर्षित कर न्याय दिलाने में सहायक बनें। मन्त्रियों, विधायकों के लिए एक आचार-संहिता हो जिसका पालन न करने पर पार्टी उसे वापस बुला सके।

आंदोलन आत्मा के लिए

हमारे देश में सत्तारूढ़ दल को पदच्युत करने की एक परम्परा सी पड़ गयी है। अतीत में केरल, बंगाल और गुजरात में इस

प्रकार के सफल आंदोलन हो चुके हैं। अब बिहार में इस प्रकार का आंदोलन चल रहा है। इस प्रकार के आंदोलनों से देश और जनतन्त्र का मानस प्रभावित होता है। अतः संविधान में निहित मौलिक अधिकार और निदेशक सिद्धान्त, दल के घोषणा-पत्र, देश-हित तथा जनहित के विरुद्ध कार्य करनेवाली सरकार को हटाने के लिए जनता के पास संवैधानिक साधन होने चाहिए जिससे इस प्रकार के हिंसात्मक अथवा अहिंसात्मक आंदोलनों के लिए अवकाश ही न रहे।

आज जनतन्त्र को उसका सच्चा स्वरूप देने की आवश्यकता है। तभी देश में सुराज्य की स्थापना हो सकेगी। इसके लिए सत्तारूढ़ दल को सच्ची भावना से पहल और प्रयत्न करने चाहिए और विरोधी दलों को अपना पूर्ण समर्थन देना चाहिए। अन्यथा इतिहास जनतन्त्र के हन्ता और देश के अपकर्ताओं को कभी क्षमा नहीं करेगा। आंदोलन केन्द्र अथवा किसी प्रदेश की सरकार को गिराने के लिए नहीं, जनतन्त्र को उसकी अपनी आत्मा दिलाने के लिए करना चाहिए। इस उद्देश्य में सफल होने पर अनेक समस्याओं का स्वतः समाधान हो जायेगा और देश का हित होगा। ❁

❁ देवेन्द्र कुमार

बहुमत के धरातल का विस्तार जरूरी

पिछले चार आम चुनावों के आधार पर यह महसूस किया जा रहा है कि चुनाव की पद्धति में कुछ परिवर्तन किया जाना आवश्यक है। शिकायत यह है कि चुनाव बहुत खर्चीले हैं और ऐसे लोग ही उनमें खड़े होकर भाग ले सकते हैं जिनके पास या तो अपनी या मांगी हुई पैसे की ताकत बड़ी हो। यह पैसा जहां से भी लाया जाता हो देनेवाले लोगों को किसी न किसी रूप में उसका फायदा वापस मिले यह भावना रहती ही है। इसलिए जो लोग चुनकर आते हैं वे अन्ततोगत्वा चुनाव में पैसे से मदद करनेवाले तत्त्वों को लाभ पहुंचाने की कोशिश करते हैं। इससे भ्रष्टाचार का एक ऐसा सिलसिला शुरू हो जाता है जो नीचे तक बढ़ता जाता है। इस स्थिति में ऐसा क्या रास्ता निकाला जाये जिससे चुनाव कम खर्चीले हों और उनमें भ्रष्टाचार न पनपे यह एक सवाल ही बना हुआ है।

तीन शिकायतें

दूसरी शिकायत यह रही है कि आम मतदाता अपने नुमाइन्दों के बारे में कोई राय पहले से नहीं दे पाता। उसका काम केवल उन पांच-सात लोगों में से किसी एक को वोट देना भर रह जाता है जो या तो पार्टियों द्वारा खड़े कर दिये गये हैं या अपने आप स्वतन्त्र रूप से खड़े हो जाते हैं। इसी प्रकार जो चुनकर प्रतिनिधि बन जाता है उसका मतदाता देख नहीं पाता कि वह अपना काम ठीक कर रहा है या नहीं। जिस पार्टी की तरफ से वह चुनकर आया है उसे छोड़कर दूसरी में चला जाता है अथवा अपने पद का व्यक्तिगत लाभ ले लेता है, या अन्य कोई ऐसा काम करता है जो आम जनता की राय से मेल नहीं खाता, तो उसे ठीक रास्ते पर लाने के लिए या वापस बुलाने के लिए कोई अधिकार जनता का नहीं रहता। अर्थात् सिर्फ एक बार वोट देने भर की बात उसके हाथ रहती है। न उससे पहले मतदाता की सलाह ली जाती है कि कौन खड़ा हो और न बाद में उसे कोई अधिकार रहता है कि चुना हुआ आदमी क्या करता है या नहीं करता।

तीसरी शिकायत ज्यादा बुनियादी है कि बहुमत के आधार पर जहां चुनाव और निर्णय होते हैं उनमें जो व्यक्ति चुना जाता है वह उन पांच-सात लोगों को हराकर जीतता है जिनकी वोट संख्या कुल मिलाकर उसके द्वारा प्राप्त वोटों से ड्योढ़ी या दुगुनी भी हो सकती है। इस प्रकार चुने हुए नुमाइन्दों में जो जो सरकार का बोझा उठाते हैं वे कुल प्रतिनिधियों में बहुमत के आधार पर तय किये जाते हैं अर्थात् यदि एक तिहाई लोग विरुद्ध हैं और दो तिहाई पक्ष में तो बहुमत दो तिहाई सरकार की जिम्मेदारी उठाता है। बाकी के उस जिम्मेदारी में जरा भी हिस्सा नहीं लेते (विरोधी पक्ष में कुल ४६ प्रतिशत हों तो भी नहीं)। बहुमत वाली पार्टी में भी प्रमुख उसी को चुना जाता है जिसका उस दल के अन्दर अधिक जोर हो और इस प्रकार कुल मिलाकर पार्टी के अन्दर गुट और वर्ग रहते हैं जो मुश्किल से अपने कुल दल के एक चौथाई लोगों को निर्णायक बना देते हैं। इस गणित से एक तिहाई व्यक्तियों द्वारा चुने हुए लोगों के प्रतिनिधियों में के एक चौथाई लोग अर्थात् कुल के १।१२ मात्र बाकी ११।१२ पर अपनी हुकूमत चलाते हैं। यह माना कि जो बहुमत में नहीं हैं—चाहे प्रतिनिधि सभा में अथवा शासक दल में—वे अपनी बात रखने का हक जरूर रखते हैं पर उस बात का कुछ असर होता है या नहीं कहना मुश्किल है। ऐसी हालत में क्या कोई ऐसा तरीका है जिससे सामूहिक निर्णय पद्धति में बहुमत का धरातल अधिकाधिक विस्तृत करने की ओर बढ़ा जाये। आज तो जैसे जैसे इस बहुमत की पावर-पालिटिक्स के खिलाड़ी अधिकाधिक होते जा रहे हैं वे पुरानी कारीगरी को मात करके कम से कम लोग अधिक से अधिक लोगों की नकेल अपने हाथ में रखने के गुर को और पक्का करते जाते हैं और इस कला में नये मापदण्ड स्थापित करते जाते हैं।

भारत की विशेषताएं

भारत एक ऐसा देश है जो दुनिया का सबसे बड़ा प्रजातन्त्र है। पूरे एशिया, अफ्रीका में यह एक मात्र सुस्थिर प्रजातान्त्रिक मूल्यों का देश माना जाता है। इसका एक बहुत बड़ा कारण है साम्राज्यवाद की विश्व में समाप्ति। इस देश ने बरसों की लड़ाई शान्ति से जीती, इस लड़ाई को गांधीजी का नेतृत्व मिला। उन्होंने अधिक से अधिक लोगों द्वारा स्वातन्त्र्य युद्ध में भाग लेने का तरीका अहिंसक साधनों में रखा। इसलिए यहां थोड़े से बहादुर देशभक्तों ने अपनी जान हथेली पर लेकर देश को आजाद नहीं कराया और न अनायास ही यह मुल्क आजाद हुआ। इस देश के करीब-करीब हर गांव और गली में सन "१५ से ४७" तक के स्वातन्त्र्य के कार्य में किसी न किसी रूप में भाग लेनेवाले लोग मारे मारे और उन्होंने कुछ न कुछ कुर्बानियां दीं। यही वह बुनियाद है जिसके आधार पर इस देश का हर नागरिक अपने को इस देश की आजादी का हकदार भी मानता है और उसे लानेवाला भी। ऐसी भूमिका

मे कोई एक व्यक्ति या गुट अपने हाथ मे सत्ता ले सकेगा और एकतन्त्र राज्य चला सकेगा, यह यहा की धरती और धरती के वासी कभी कबूल नही करेंगे। दूसरे एशिया, अफ्रीका के मुल्कों मे प्रजातन्त्र यदि है भी तो नाममात्र को परन्तु उपर्युक्त कारण से यहा उसकी जडें गहरी हैं इसलिए उम्मीद हर एक के दिल मे है कि आजादी के प्रथम २०-२५ सालों मे अगर हमने जो तरीके पश्चिम के मुल्कों के इस्तेमाल किये हैं उनका अनुसरण करके कुछ सबक सीखे हैं तो हम उसमे जल्दी ही दुरुस्ती करके प्रजातन्त्र की भावना को और भी पुष्ट करनेवाला अपना नमूना पेश कर सकेंगे।

ग्रामीण हिंसा

डा० अवध प्रसाद

ग्रामीण हिंसा की जड़ें समाज की रचना तथा सरकार की अकर्मण्यता मे हैं। बुद्ध ने कहा था कि हिंसा मनुष्य की तृष्णा मे है। सदियों बाद मार्क्स ने कहा कि हिंसा समाज की रचना में है। उसकी जड मालिक द्वारा मजदूर के शोषण में है। इतना कह कर मार्क्स ने मुक्ति के प्यासे मानवको पुरुषार्थ का रास्ता दिखलाया। गाँधीजी ने एक तीसरी बात कही—तृष्णा की हिंसा और समाज की हिंसा दोनों आज के राज्य की हिंसा मे मिल गयी हैं। अतः मनुष्य की वास्तविक मुक्ति इस त्रिविध हिंसा से मुक्ति पाने में ही है। इस दिशा मे डा० अवध प्रसाद द्वारा की गयी शोध पर लिखा गया यह ग्रंथ ग्रामीण हिंसा के विविधि पहलुओं का गहन अध्ययन प्रस्तुत करता है। मूल्य ८/- मात्र

जीवन-भाष्य

जे० कृष्णमूर्ति

जे० कृष्णमूर्ति विश्व की महान विभूतियों मे है। सहज अनुभूति, पूर्वचिंतन तथा जीवन की गहराइयो मे प्रवेश करके सूक्ष्म मानव चेतना की ग्रंथियों का भेदन आपकी अद्भुत विशेषता है। सीधे सादे शब्दो में तलस्पर्शी चिंतन का अनुभव आपके प्रवचनो से निःसृत होता है। प्रस्तुत ग्रंथ मे इनके ८८ प्रवचन हैं जिनमे जीवन की अनेक गहन-गंभीर अथवा धार्मिक, सामाजिक, पारिवारिक, मनोवैज्ञानिक समस्याओं का संवाद या प्रश्नोत्तर के रूप में विश्लेषण किया गया है। पृष्ठ ३८२ मूल्य ८/—

मेरी विचार-यात्रा

जयप्रकाश नारायण

श्री जयप्रकाश नारायण की 'विचारयात्रा' विभूति सम्पन्न है। निरन्तर विकासशील है और दुनिया भर की राजनीति के तथा मतवादों की मृगमरीचिका मे भटकनेवालो के लिए प्रेरक और उद्बोधक है, सम्यक मार्ग प्रशस्त करनेवाली है। साधारण हिन्दी जाननेवाला पाठक भी इस विचारयात्रा के कतिपय पडावों पर समाधान की शीतलता तथा सम्यक बोध की मधुरता का अनुभव करता हुआ जयप्रकाश के साथ-साथ समरस होकर आगे बढता जाता है। पृष्ठ २२४ मूल्य ६/- मात्र।

दादा के शब्दों में दादा

दादाधर्माधिकारी

यह कृति कु० विमला ठकार को अत्यन्त स्नेहयुक्त भावना से लिखे गये दादा के पत्रों की मंजूषा है। आन्दोलन के जल में डूबे हुए फिर भी कमल के समान उससे परे स्नेहशील दादा के निराले व्यक्तित्व की झाँकी पुस्तक में मिलती है। मूल्य रु० ६/ मात्र।

प्रभा स्मृति

सर्वोदय में बड़े ही आदर के साथ 'दीदी' शब्द से संबोधित प्रभावती बहन की पुण्य स्मृति में प्रकाशित यह ग्रंथ दुर्लभ चित्रो के ३२ पृष्ठों से युक्त है जिसमें हमें अकालपुरुष गाधी की प्रेरणा, इतिहास पुरुष जे० पी० का जीवन संघर्ष और मौन साधिका प्रभावती बहन की पुण्य स्मृति मिलती है जो कभी भुलायी नही जा सकेगी। पृष्ठ ३०८ मूल्य ३० रुपये।

जयप्रकाशनारायण

सर्वोदय विचार और वर्तमान आंदोलन

सम्पूर्ण क्रांति का वर्तमान आन्दोलन सर्वोदय की विचारधारा के कहां तक अनुकूल है, इस पर चर्चा आंदोलन के आरंभ से ही होती रही है। सोखोदेवरा में ११-१२ जनवरी को बिहार के सर्वोदय कार्यकर्ताओं के शिविर में जयप्रकाशजी ने इस पहलू पर प्रकाश डाला है। इस अवसर पर उन्होंने जो भाषण दिया, उसे हम यहां प्रकाशित कर रहे हैं। सं

बिहार आंदोलन के संदर्भ में मैं सर्वोदय कार्यकर्ताओं से कुछ कहना चाहता हूं। आप जानते ही हैं, और मेरा ख्याल है कि इस बात की कोशिश भी बहुत की गयी है कि सर्वोदय आंदोलन में फूट पड़े। आप यह भी जानते हैं कि मैंने कई बार कहा है कि यह काम (संघर्ष का) मैंने अपनी व्यक्तिगत जिम्मेदारी पर शुरू किया है। मैंने बिहार सर्वोदय मण्डल को और सर्व सेवा संघ को इसमें नहीं घसीटा था। आपने (बिहार सर्वोदय मण्डल ने) फिर समर्थन का प्रस्ताव किया। बाद में सर्व सेवा संघ ने इस आंदोलन के विषय में चर्चा की, पिछले साल जुलाई में। वहां चार-साढ़े चार सौ से ज्यादा ही लोग उपस्थित थे जिनमें से शायद कुल बारह-तेरह लोग आन्दोलन से सहमत नहीं थे और मानते थे कि हमारी जो मान्यता है सर्वोदय की, उससे हम रास्ता भटक गये हैं। बहुत समय तक रात-दिन चर्चा हुई। मैं तो वहां सिर्फ ढाई घंटे रहा और अपनी बात कह कर चला आया। उस चर्चा में मैंने भाग नहीं लिया कि शायद मेरे रहने से लोगों को दुविधा हो, सफाई से अपनी बात न कह सकें। जो पक्ष में नहीं थे वे अगर यह भी कहते कि जब इतने लोग पक्ष में हैं तो हम विरोध नहीं करेंगे, तो अपना जो विधान है उसके अनुसार प्रस्ताव पास हो जाता। इसी को सर्वानुमति कहते हैं। लेकिन वैसा नहीं हुआ। अन्त में बाबा ने एक रास्ता निकाला कि हम लोग पहले से जो काम कर रहे हैं ग्रामस्वराज्य का, वह भी चलता रहे और जे० पी० का आंदोलन भी चलता रहे। दोनों चलते रहें, और जो जिसमें भाग लेना चाहे, लेते रहें। सत्य, अहिंसा और संयम-वाणी के संयम की मर्यादाएं थीं, उनके दायरे में रहकर सब अपना-अपना काम करें। तो वह जो बड़ा तनाव था, खत्म हो गया और एक अच्छा वातावरण पैदा हुआ। मुझे यह जरूर कहना पड़ेगा आप लोगों की जानकारी के लिए कि उसके बाद वह मित्र और साथी जो बिहार के आंदोलन से सहमत नहीं थे, चुप नहीं रहे। उनसे यह अपेक्षा थी कि वे प्रकट आलोचना तो नहीं करेंगे। बाबा ने वाणी के संयम की बात की थी, लेकिन निर्मला बहन ने खासतौर पर तत्काल बाद आन्दोलन के विरोध में एक वक्तव्य निकाला।

अब जब पहली नवम्बर को मेरी बात हुई इन्दिराजी से तो उसी शाम को उन्होंने एक सभा में कहा कि मैं इस्तीफा दे देना पसंद करूंगी लेकिन बिहार विधान सभा भंग नहीं करूंगी। तो इतना फैसला हो जाये प्रधानमंत्री का कि इस्तीफा दे देंगी लेकिन विधानसभा भंग नहीं करेंगी तो मैंने समझ लिया कि उन्हें जनता की मांग की परवाह नहीं है। एक कदम आगे जाकर उन्होंने कहा कि जे० पी० कहते हैं कि जनता आंदोलन के साथ है तो उन्हें सब्र रखना चाहिए—इस बात का फैसला अगले चुनाव में होगा। १८ नवम्बर को पटना में जो विराट सभा हुई उसमें मैंने कहा कि प्रधानमन्त्री ने जब यह चुनौती दी है तो मैं उसे स्वीकार करता हूं। जनता का समर्थन इस आन्दोलन को है या नहीं इस बात का फैसला, वह चाहती है कि चुनाव में हो, तो होगा। तो चुनाव को उन्होंने (प्रधानमन्त्री ने) संघर्ष के क्षेत्र में खींचा है—यह जो सम्पूर्ण क्रांति का संघर्ष चल रहा है उसमें चुनाव को उन्होंने खींचा है, हम चुनाव में नहीं पड़े हैं। तो इसकी जिम्मेदारी उनकी है, मेरी नहीं, इसका ध्यान उन्हें रखना चाहिए। चुनाव में इस बात का फैसला होगा कि बिहार की जनता संघर्ष के साथ है, फैसला इस बात का नहीं कि कांग्रेस जीतेगी या ये (सामने बैठे हुए सोशलिस्ट नेता रामानन्द तिवारी) जीतेंगे, फैसला इस बात का होगा कि जनता संघर्ष के साथ है या संघर्ष के विरोधियों के साथ। इस संघर्ष का नेतृत्व करने का भार मुझ पर डाला गया है इसलिए मैं इस लड़ाई के मैदान से भाग नहीं सकता। अतः उन लोगों की (आन्दोलन का विरोध करनेवालों की) यह बात सही नहीं है कि हम लोग दलगत राजनीति में पड़ गये हैं और यह बहुत बड़ा डीविएशन है, एकदम हम रास्ता भटक गये हैं, या पीछे की तरफ गये हैं या ऐसा कुछ हो गया है।

मेरा ख्याल है कि अब तक जो बातचीत हुई है—लोगों ने बताया है, मैं तो नहीं गया—उस पर से लगता है कि बाबा को भी कुछ ऐसा लगा है कि जुलाई में जिस बात की स्वीकृति उन्होंने दी थी उससे जे० पी० कुछ आगे चला गया है। सिद्धराजजी और कुछ अन्य मित्रों ने काफी समझाया कि यह चुनाव लड़ने की बात नहीं है। उन्हें बताया गया कि किस संदर्भ में यह बात हुई है। इस चुनौती को स्वीकार नहीं करते तो यह संघर्ष के प्रति गद्दारी होगी।

मान लिया जाये कि हम इस चुनौती को स्वीकार नहीं करते। चुनाव होता, विरोधी दलों में आपस में झगड़े होते। विरोधी दलों को वोट तो कांग्रेस से अधिक ही मिलते हैं—एक-दो बार को छोड़कर ऐसा ही हुआ है—लेकिन इनके वोट बंट जाते हैं। मैं बार बार उन लोगों को कहता रहा कि यह तुम्हारी नालायकी है जिस वजह से ऐसा होता है। आजतक जनता ने भी आपके कान नहीं पकड़े। अब जनता जागरूक हो रही है तो कान पकड़ेगी कि यह क्या बात है वोट आपको ज्यादा दिये फिर भी कांग्रेस कैसे जीत कर आती है। तो खैर, फिर कांग्रेस जीत जाती। फिर उन्हीं मंत्रियों के खिलाफ लड़ना पड़ता। बिहार के सभी कांग्रेस नेताओं का जैसा पिछला इतिहास रहा है इस संघर्ष के प्रति कम-से-कम प्रकट में, उसे देखते हुए वे जे० पी० को बुलाकर यह कहनेवाले नहीं हैं कि आओ हम लोग भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ते हैं, हमारे साथ मिलकर काम करो।

इन्दिरा गांधी कहती हैं कि यह लोकतंत्र

के विरुद्ध आन्दोलन हैं, जनतन्त्र को तोड़नेवाला आन्दोलन है। तो इस बार जीतने के बाद तो उनका सर आसमान पर चला जाता। इस संघर्ष को बहुत बड़ा धक्का लगता, बहुत बड़ा धोखा होता संघर्ष के साथ। संघर्ष के नेता के लिए तो बिलकुल अशोभनीय होता वह। उसे माफ नहीं किया जाता। तो मैं नहीं मानता कि इसमें (चुनाव की चुनौती स्वीकार कर लेने में) कुछ गलत काम हुआ है। जुलाई में बाबा ने जो कहा था उससे कुछ 'डीविएशन' हुआ हो ऐसा नहीं है। हम लोग सही रास्ते पर जा रहे हैं। अगर यह संघर्ष सही था और बाबा ने स्वीकृति दी तो चुनाव तो उसी संघर्ष का मोर्चा है। उसी का अंग बन जाता है।

बाबा ने कई बार कहा कि हम मैदान छोड़ दें, रण छोड़ दें, 'रणछोड़' बन जायें तो इस तरह रणछोड़ बनना बहुत बड़ी हिम्मत का काम होता है। बाबा ने कहा है कि या तो इन्दिराजी रण छोड़ दें या जे० पी० छोड़ दें। लेकिन बाबा से तो अब इसकी चर्चा नहीं हो सकती, बाबा तो साधना कर रहे हैं। हो सकता है कि उस साधना में से कोई नयी चीज निकले। इसके बाद वे नया नेतृत्व दें। तो यह संक्षेप में आपको बता दिया जो कुछ हुआ है। बिहार सर्वोदय मण्डल ने तो सर्व-सम्मति से समर्थन का प्रस्ताव पास किया है। परन्तु यह जो बीच में हुआ वह किस कारण हुआ वह मैं समझा देना चाहता था ताकि कोई भ्रम आपके मन में न रहे।

इस मतभेद की बात को हम लोग भुला भी दें और विचार करें कि सर्वोदय की जो विचारधारा है और उस विचारधारा के आधार पर, उसके अनुसार जो कार्य पिछले वर्षों से हम लोग करते रहे हैं उसमें, और वह आन्दोलन जो चल रहा है उसमें कोई विरोध है या यह उसका पूरक है?—यह मैं आपसे निवेदन करना चाहता हूं। हम लोग बराबर अपने आन्दोलन में यही कहते रहे हैं, —फिर चाहे हम ग्रामदान का काम करते रहे हों, भूदान का काम करते रहे हों, कुष्ट निवारण का काम करते रहे हों या अन्य रचनात्मक काम करते रहे हों सर्वोदय विचार-धारा को मानकर—कि यह आन्दोलन अहिंसक समाज की स्थापना के लिए था। इन सब कामों में हमारा दूरगामी उद्देश्य अहिंसक समाज रचना का था, ऐसा समाज जो शोषण-मुक्त भी होगा और शासन-निरपेक्ष भी। इस प्रकार का एक समाज होगा। शासन निरपेक्ष का मतलब आप लोगों को याद होगा। धीरेन्द्र भाई से मुजफ्फरनगर में सुना था कि जैसे गाड़ी में खतरे की जंजीर लगी रहती है, वैसे सरकार रहनी चाहिए। उस एलार्म चेन की ओर किसी का ध्यान नहीं जाता। जब कोई खतरा उपस्थित हो जाता है तभी उसका ध्यान आता है। यहां तो लोग बगैर खतरे के भी चेन खींच देते हैं (हंसी)। दक्षिण भारत में ऐसा बहुत कम होता है। पश्चिम में भी कम होता है, हमारे यहां जरा ज्यादा होता है। तो इस तरह समाज में सरकार होनी चाहिए। सरकार बिलकुल नहीं रहेगी ऐसा तो शायद कभी होगा नहीं। गांधीजी ने इस सिलसिले में 'यूक्लिड' की रेखा की परिभाषा की है कि 'ए लाइन हैज लेंग्थ बट नो ब्रेड्थ,' रेखा में लम्बाई होती है, लेकिन चौड़ाई नहीं। लेकिन रेखा आप कितनी भी बारीक खींचें कुछ तो चौड़ाई उसमें रहेगी ही। तो शायद ऐसा समाज कभी नहीं बनेगा जहां शासन न हो लेकिन ऐसा हो सकता है कि कम-से-कम हो, यानी शासन-मुक्त नहीं, शासन-निरपेक्ष होगा तो अहिंसक समाज हुआ ऐसा माना जायेगा। पर जबतक शोषण समाप्त न हो तबतक तो समाज अहिंसक हो ही नहीं सकता, इसलिए शोषणमुक्त कहा।

अब इस आंदोलन में हम क्या कह रहे हैं—शान्तिमय सम्पूर्ण क्रांति। पहले जो हम कर रहे थे उसमें और आज जो कर रहे हैं उसमें शब्दों में फर्क हो सकता है अर्थ में कोई फर्क नहीं है। बापूजी तो अहिंसा को मानते थे फिर भी कांग्रेस का नेतृत्व उन्होंने किया, जिसका उद्देश्य था पूर्ण स्वराज्य की प्राप्ति शान्तिमय उपायों से वैध तरीकों से। गांधीजी ने यह तो नहीं कहा कि यदि अहिंसक उपाय नहीं जोड़ा जायेगा। (कांग्रेस के उद्देश्यों में) तो मैं उसमें भाग नहीं लूंगा। कोई आपसे कहे कि जे. पी. तो शान्तिमय सम्पूर्ण क्रांति की बात करते हैं और हम तो अहिंसक समाज रचना की बात कर रहे थे, तो इसमें भी कोई 'डीविएशन' नहीं है यह मैंने आपको बताया। अहिंसक क्रांति, शान्तिमय सम्पूर्ण क्रांति और अहिंसक समाज रचना का हमारा लक्ष्य, ये सब एक ही हैं।

अब साधनों की बात पर विचार करें। सर्वोदय में हमारे साधन क्या रहे हैं? विचार परिवर्तन और लोकशक्ति। हम सबने विचार परिवर्तन ही का तो काम किया। कितना बाबा घूमे, कितने भाषण दिये। हम लोगों ने भी गांव-गांव खाक छानी, और विचार-प्रचार का काफी काम हुआ। सम्पत्ति समाज की है, भगवान की है। यह विचार जितना हम लोगों ने फैलाया, उतना और कोई विचार नहीं फैलाया गया। और उसके टोकन के रूप में कहा कि जो भूमि आपके पास है उसमें से छठा हिस्सा भूदान में दे दो। ग्रामदान आया तो उसमें दे दो, कहा। ग्रामदान में तो जमीन-जमीनवाले के पास ही रहती थी। सौ बीघा जमीन थी तो बीसवां हिस्सा दिया। पचानवे फिर उन्हीं के पास रही। मालिकी का अधिकार भी उन्हीं के पास रहा।

इस आंदोलन में भी हम शान्तिमय उपायों का ही उपयोग कर रहे हैं तो विचार-प्रचार ही तो कर रहे हैं, विचार फैला रहे हैं। वह विचार-प्रचार और इस विचार-प्रचार दोनों में विरोध तो नहीं है। लेकिन कोई सत्ता, कोई शासन निरंकुश बन जाता है भ्रष्टाचारी है दमनकारी है तो उसको हटादेने में सत्याग्रह का प्रयोग करना ऐसा हम जानते हैं। तो निष्पक्ष भाव से विचार करें तो इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि बिहार का शासन अयोग्य भी है, भ्रष्ट भी है और दमन-कारी भी है। उसको हटाने की मांग करना यह हमारा कोई राजनीति में पड़ना नहीं है। ऐसा नहीं है कि हम कोई कुर्सी का विचार कर रहे हैं, और बाकी जो विरोधी दल हैं उनका हम इसलिए साथ दे रहे हैं।

बाबा ने यह बात कही थी गोकुलभाई भट्ट से कि आप (राजस्थान सरकार को) शराबबन्दी का नोटिस दे दीजिये और उतनी अवधि में वे राजस्थान में शराबबन्दी नहीं करते तो मैं स्वयं शासन के विरुद्ध लड़ाई लडूंगा। तो मैं मानता हूं कि हम तो शराब-

बन्दी से कहीं अधिक महत्वपूर्ण उद्देश्य के लिए लड़ रहे हैं, भ्रष्टाचार, महगाई आदि के विरुद्ध। आगे चल कर समग्र क्रांति की बात हमने की है। बाबा के शब्दों मे, टोटल रिवोल्यूशन, समग्र क्राति।

अब इस आदोलन मे अगर राजनैतिक दल आते हैं जो शासक दल के विरोधी है, तो हम उनमे कैसे कहे कि आपका हम सहयोग नहीं लेंगे। यह हम नहीं कह सकते हैं। जन-आदोलन, छात्र आदोलन है, कौन रोक सकता है। हमने तो जाकर तिवारीजी से (श्री रामानन्द तिवारी से) आने के लिए नहीं कहा था। बिहार मे सबसे पहले जो गिरफ्तारियां हुईं राजनैतिक दलोंके व्यक्तियोंकी तो तिवारीजी और कर्पूरीजी को ही सबसे पहले पकड़ा था। उन्होंने खुद तय किया कि वे इसमे भाग लेंगे। और हम उनसे कहें कि हम आपका सहयोग नहीं लेंगे! हां, हम उनसे भी वही अपेक्षा करेंगे (जो आज के शासन से करते हैं।) और अगर उस अपेक्षा की पूर्ति नहीं होगी तो उनसे भी लडेंगे। अभी तो चुनाव की यही प्रथा रहेगी, और अगर उनकी सरकार बनती है और फिर भ्रष्टाचार आदि के विरुद्ध वे कुछ नहीं करते, अच्छी योजना बननी चाहिए, शिक्षा की जो योजना होनी चाहिए, यह सब नहीं करते तो उनके खिलाफ भी सघर्ष चलेगा। तो फिर शायद सत्ता काग्रेस वाले उस सघर्ष में आ घुसें और उसका लाभ उठाना चाहें, हालाकि उनके लिए कठिन होगा। जनता उनसे पूछेगी कि आप आज तक क्या करते रहे थे।

तो मैं इस बारे में (बिहार आंदोलन और सर्वोदय के बारे में) बहुत सोचता रहा हूं, मतभेद होते रहे उन्हे भी समझने की कोशिश करता रहा, तो बहुत सोच समझकर मैं इस नतीजे पर पहुचता हू कि हम लोग गलती नहीं कर रहे हैं, जो कर रहे हैं वह ठीक कर रहे हैं।

यह भी बात कही जाती है कि यह सब पहले क्यों नहीं किया गया। इसका जवाब भी मैं कई बार दे चुका हूं। मैंने इन्दिराजी से भी पहली नवम्बर को कहा था कि १८ मार्च तक भी बात हाथ से बाहर नहीं गयी थी, और परिस्थिति को सभाला जा सकता था। लेकिन आपके अयोग्य मत्रिमडल के कारण यह सघर्ष छात्रों के सर पर लाद दिया गया। वे तो अपनी मागें सरकार के सामने रखना चाहते थे। (इस आन्दोलन के बारे में एक छोटा सा इतिहास श्री श्रवणकुमार गर्ग ने लिखा है, वह आप सब लोगों को पढ़ना चाहिए) इन लोगो ने मागें तैयार कीं और उन्हें लेकर मुख्यमत्री तथा शिक्षामंत्री के यहां गये। जब उन्हें कोई जवाब नहीं मिला, वे लोग टालते रहे, तो ऊब कर छात्रों ने घेराव करने का प्रस्ताव किया। घेराव किया था तो उसके बाद भी मुख्यमत्री, शिक्षामत्री उनके पास जा सकते थे, कह सकते थे कि माफ कीजिये, राज्यपाल को आने दीजिये। तो उस समय बातचीत हो सकती थी। लेकिन वह समय निकल गया, तब सघर्ष छिडा।

यह नहीं है कि इस आन्दोलन का रूप हमेशा सघर्षात्मक ही रहे। मान लीजिये कि विरोधी दलों का शासन बनता है तो जो जन-प्रतिनिधि होंगे उनके साथ मिलकर बात होगी कि बिहार की समस्याओं का हल कैसे निकले। अगर लगा कि ये लोग भी गद्दी पर बैठकर गलत रास्ते पर जा रहे हैं तो फिर उनके खिलाफ भी सघर्ष करना पड़ेगा, वरना नहीं।

मान लीजिये विधानसभा भग हो जाये और राष्ट्रपति का शासन हो जाये तो भी राज तो इन्दिरा गांधी का ही रहेगा। मैंने कई बार कहा है कि तब भी मैं राज्यपाल के पास जाऊगा और कहूंगा कि आप हमारी बात मान लें तो आपके साथ मिलकर काम करूं गा कि भ्रष्टाचार को कैसे खत्म किया जा सकता है।

कहते हैं कि सर्वोदय का धर्म जोड़ने का है तोड़ने का नहीं है। तो कभी कभी जोड़ने के लिए कुछ तोडना भी पड़ता है। कल सिद्धराजजी से बात हो रही थी तो उन्होंने कहा कि मकान पुराना हो जाये तो उसका कुछ हिस्सा तोड़कर ही नया बनाया जाता है। विधानसभा टूटे, मंत्रिमंडल टूटे तो फिर जोड़ने का काम हो सकता है।

अब लोकशक्ति की बात। इसके बारे में मेरी राय है कि हम लोग जिस प्रकार लोक-शक्ति बढ़ाना चाहते थे उस तरह लोकशक्ति हम पैदा नहीं कर सके। अब लोकशक्ति बनी है। ऐसा लगता है कि लोकशक्ति का निर्माण करना हो तो आवश्यक है कि सब लोगों को यह महसूस हो कि ऐसी कुछ समस्याएं जिनसे आज हम ग्रस्त हैं, उन्हे दूर करने के लिए, हल करने के लिए कुछ काम हो रहा है। तो लोग उसे अपनी लड़ाई समझते हैं, जैसा कि आज जनता ने समझा है। तो उस लोकशक्ति को अब सगठित करना है। (लोकशक्ति को पैदा करने के लिए) जिस शस्त्र का उपयोग गाधीजी ने भी किया, उसका उपयोग हम लोग इस आन्दोलन मे कर रहे हैं, सत्याग्रह का उपयोग। वह चल रहा है और आगे भी चलेगा।

अब हम देखते हैं कि जिस ग्रामस्वराज्य की कल्पना हम करते थे वह इस संघर्ष के परिणाम से शायद जनता सरकार के रूप में बन पाये। अगर आप लोग इस बात को समझें तो इस आदोलन का जो महत्वपूर्ण कार्यक्रम है वह यही है "जनता सरकार"। नीचे जनता की सरकार बन पाती है, बिहार मे १०७०० ग्राम पचायतें हैं उनमे पचायत स्तर पर जनता की सरकार बन जाती है और प्रखंडो मे जनता की सरकार बन जाती है तो फिर तो काम ऐसा पक्का होता है कि फिर पटना में चाहे किसी की सरकार हो, वह एक प्रकार से शासन निरपेक्ष सरकार बन जायेगी।

जनता सरकार मे और ग्रामदान की ग्रामसभा मे, आपने देखा होगा कि थोड़ा सा भेद है। आपमे से जो लोग यह बात कहते हैं कि ग्रामसभा बनायें तो जिन्होंने ग्रामदान के समर्पण-पत्र पर हस्ताक्षर किये हैं वही ग्राम-सभा के सदस्य होंगे, तो बाबा ने भी उसका विरोध किया था और मैंने भी विरोध किया था और बहुत ही सैद्धांतिक आधार पर। अंग्रेजी में एक शब्द है 'कम्यूनिटी'। इसके लिए हिन्दी में कोई ठीक शब्द नहीं है। समुदाय है, लेकिन समुदाय में वह अर्थ नहीं आता जो 'विलेज कम्यूनिटी' में है। मेरा कहना यह था कि ग्राम-समुदाय ही एक बड़ा परिवार

हुआ। अब उस समुदाय के, उस परिवार के, कुछ सदस्यों को छोड़कर आप ग्रामसभा, परिवार की सभा, कैसे बनायेंगे ? लेकिन अब मैं सोचता हूं कि ग्रामसभा में ग्रामदान-विरोधी लोग भी थे इसीलिए ग्रामसभाएं काम नहीं कर सकीं। वे ही अक्सर गांव में ताकतवर होते हैं, और वे ही ग्रामसभा में भी आगे आ जाते हैं। वो कुछ काम नहीं करने देते। ग्रामसभाओं में जहां क्रांतिकारी लोग थे वहां उन्होंने जरूर कुछ काम किये। मजदूरी का सवाल उठाया, उसे तय भी किया। इस प्रकार के कुछ और काम किये। लेकिन अधिकांश जगह कुछ नहीं हुआ।

तो इस आंदोलन में हमने कुछ फरक किया है। हमने कहा है कि गांव की सभा बुला ली जाये। उस सभा में सम्पूर्ण क्रांति क्या है, इस विषय में हमारा सदेश पढ़ दिया जाये। समझा दिया जाये, उन्हीं की भाषा में, और फिर पूछें कि सम्पूर्ण क्रांति के विचार से आपमें से जो लोग सहमत हों और इसको रूप देने के लिए तैयार हों वे सब मिलकर अपने गांव की संघर्ष समिति बनायें क्योंकि (ग्रामदान की) ग्रामसभा में फैसले करने हों तो कोई बड़ा आदमी होगा और दूसरा कोई छोटा होगा तो वह बोलेगा नहीं। इसलिए गांव के सब लोगों को मिलाकर संघर्ष समिति नहीं बनेगी। संघर्ष के, सम्पूर्ण क्रांति के विचार को मान्य करके जो आगे आयेंगे उन्हीं की समिति बनेगी। इसमें 'डायनेमिज्म' (गतिशीलता) कायम रहेगी। हमें सम्पूर्ण क्रांति के लिए संघर्ष करना है जिसमें सामाजिक, आर्थिक सब भेदभाव मिटाना है। जनेऊ की बात भी मैं क्यों करता हूं क्योंकि मेरा मानना है कि जन्म से कोई न तो ऊंचा है न नीचा है। हम चाहते हैं कि 'मानव से मानव का मुक्त मिलन' हो।

इस प्रकार से मेरा यह निश्चित मत है, और मतभेदों के बावजूद वह दिनोदिन दृढ़ होता जा रहा है, कि अगर हम इस आंदोलन को सही दिशा में ले जा सकें और इस आंदोलन पर पार्टी के लोगों को हावी न होने दिया गया और मूलभूत सिद्धांतों में परिवर्तन नहीं हुआ तो मैं समझता हूं—और अब मैं यह छोटे मुंह बड़ी बात कर रहा हूं—कि आज तक गांधीजी के दिनों के बाद सर्वोदय के जो भी आंदोलन चले हैं उन सबमें यह आंदोलन प्रभावशाली सिद्ध होगा। जितना भूदान का असर देश के जनमानस पर पड़ा, बाबा ने जब शुरू किया, तो ग्रामदान का उतना गहरा असर नहीं पड़ा। मैं समझता हूं, और लोग ऐसा कुछ अहसास करते हैं कि नौ महीने के इस आंदोलन का यह प्रभाव पड़ा है कि देश में हिंसा का वातावरण कम हुआ है (चोरियां-डकैतियां तो नहीं रुकीं, लेकिन जो उद्देश्य हो कर, आक्रोश में आकर, जनता हिंसा कर लेती थी, वह कम हुई है।

खेद प्रकाश

भूदान-यज्ञ २३ दिसम्बर अंक में 'बाघिन' शीर्षक से जो कविता प्रकाशित हुई है उसे हम अपनी असावधानी की तरह स्वीकार करते हैं और उसके प्रकाशन के प्रति खेद प्रकट करते हैं। यह कहते हुए हमें कोई संकोच नहीं है कि वह हमारी समूची नीति से साथ मेल नहीं खाती है। —सम्पादक

वार्षिक शुल्क—१५ रु० विदेश ३० रु० या ३५ शिलिंग या ५ डालर, इस अंक का मूल्य ६० पैसे।
प्रभाष जोशी द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं ए० जे० प्रिंटर्स, नई दिल्ली-१ में मुद्रित।

सर्व सेवा संघ का साप्ताहिक मुख पत्र

नई दिल्ली, सोमवार, ३ फरवरी '७५

हरियाणा के गाँवों में
नया जागरण

—देवीशरण 'देवेश'

❁

उद्योगों में पश्चिम
की नकल से भटकाव

—शीलकुमार मिश्र

❁

'गुणतन्त्र' बने बिना
सच्चा गणतन्त्र नहीं

—सुरेशराम

मेरा मौन क्यों

—विनोबा
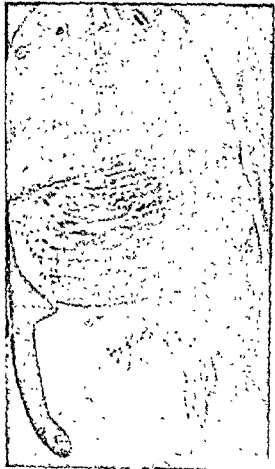
पत्र और पत्रांश

गांधीवाद और राजनीति

समूची दुनिया ही उथल-पुथल से ग्रस्त दीख रही है। इसलिए यदि उथल-पुथल में हम भी कुछ जोड रहे हैं तो ज्यादा भावुक होने की जरूरत नहीं है।

जहां तक सर्वोदय, सर्व सेवा संघ आदि की बात है, मुझे भय है कि खाई बढती जा रही है। गांधीवादी दूसरे तरीके से सोचने हैं। तर्क से कार्य चलता नहीं है। असली लक्ष्य होना चाहिए कि गांधी के बाद हमने सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्रों में जो उपलब्धियां प्राप्त कीं, उनका परीक्षण किया जाये।

ग्रामीण क्षेत्रों तक में गांधी के तरीकों के खिलाफ काम करनेवाली ताकतों पर हमने समुचित ध्यान नहीं दिया है। नहीं तो, ग्रामदान, ग्रामस्वराज्य को अपनी जडें उल्लेखनीय रूप से जमा लेना था। भूदान एक निर्दोष सेवाभावी आंदोलन है। उसका लक्ष्य सामाजिक-आर्थिक ढांचा या मूल्य बदलना नहीं था।

इस सबसे बढकर दुनिया की राजनीतिक और आर्थिक ताकतें नैतिकता से रहित वैज्ञानिक तथा तकनीकी तरक्की के शिकंजे में कसी हैं। जिन्दा रहने और हो सके तो सत्तारूढ रहने की लिप्सा अपने सारे साधनों के साथ राजनीति पर हावी है। गांधीवादी मूल्य जब राजनीतिज्ञों को अनुकूल मालूम पड़ते हैं तो उनका जबानी जमा-खर्च कर लिया जाता है। राजनीति कौटिल्य के जमाने से बदली नहीं है। सिर्फ भाषा में सौजन्य है और साधनों को राजनयिक नाम दे दिये गये हैं।

बंगलोर रंगनाथ रामचन्द्र दिवाकर

श्रीलंका के अनुभव

श्रीलंका की घनी हरियाली के बाद रामनाथपुर जिला (तमिलनाडु) का सूखा देखकर काफी अटपटा लगा। पानी के अभाव में अकाल की स्थिति बनी है। श्रीलंका के अन्तिम व्यक्ति की तुलना में भारत के 'अन्तिम व्यक्ति' की स्थिति ज्यादा शोचनीय है। इधर के इलाके में तो हजारों लोग हैं जिन्हें दो समय कजी भी पीने को नहीं मिलती। कपड़े लत्ते, निवास सुविधा की बात ही छोड़िये। एक तरफ योजनाओं की बड़ी-बड़ी बातें, पार्टियों के ऊंचे-ऊंचे दावे और दूसरी तरफ यह हालत। पूरा राष्ट्र जब तक जन-शक्ति खड़ी करने का बीड़ा नहीं उठायेगा, तब तक कोई आशा दिखायी नहीं देती।

हम चारों श्रीलंका की तीन महीने की यात्रा पूरी करके 15 नवम्बर को लौटे और रामनाथपुर से हमारी यात्रा फिर शुरू हुई। अब तिरुनेलवेली जिला में यात्रा चल रही है, 28, 29, 30 जनवरी को हम कन्याकुमारी में रहेंगे। फिर 6 फरवरी को केरल प्रदेश में प्रवेश करेंगे। श्रीलंका की यात्रा में हमें बहुत देखने तथा सीखने को मिला। वहां सर्वोदय श्रमदान संघ के द्वारा सर्वोदय कार्य चल रहा है। तरुण-तरुणी इस कार्य के लिए आगे आ रहे हैं, यह शुभ लक्षण है। सर्वोदय विचार के अच्छे संगीत बनाये हैं। वे गीत करीब 35 हजार बच्चे, तरुण-तरुणियों को सिखाया है। कार्यकर्त्ता तैयार करने के लिए कई ट्रेनिंग सेंटर हैं। उसमें विचारों के साथ-साथ यांत्रिक शिल्प लोहे का काम, लकड़ी का काम, खिलौना वगैरा सिखाते हैं। खेती भी सिखाते हैं। लड़के-लड़कियों का सम्बन्ध बहुत अच्छा है। करीब 4-5 सौ गावों में संगठन है। वहां लोग एक साथ बैठते हैं। गांव के लिए सामूहिक श्रमदान करते हैं। कुटुम्ब भावना निर्माण करने के लिए प्रथम कदम के तौर पर कुछ कर रहे हैं। ऐसे कई सर्वोदय गांवों में हमारा जाना हुआ। दूसरी बात वहां की सफाई, मलमूत्र त्याग करने के लिए कोई भी बाहर नहीं बैठते। तीसरी उनका आतिथ्य करने का काम। आतिथ्य का बोझ एक घर पर नहीं। आठ-दस घरों से खाना आता था। इसलिए वहां पर गरीबी होने पर भी समृद्धि का दर्शन होता था। मगर ट्रेनिंग सेंटर में सफाई नहीं देखी। फिर भी कुल मिलाकर काफी अच्छा है। लोग काफी सहजता से काम करते हैं।

स्त्री-शक्ति जागरण समाप्त हुआ। कुछ प्रांतों में काफी टोलियां निकलीं। लेकिन कुछ में कम। शायद पूर्व तैयारी की कमी। केरल में स्त्री-शक्ति पीछे है। यह सुनकर आश्चर्य होता है। शायद उन्होंने उस पर अधिक महत्व नहीं दिया होगा। और ठीक है।

तिरुनेलवेली लक्ष्मी फूकन

(लोकयात्री दल की सदस्य)

- नये भारत के निर्माण का दस्तावेज

सम्पादक

राममूर्ति : भवानी प्रसाद मिश्र

कार्यकारी सम्पादक : शारदा पाठक

वर्ष २१ ३ जनवरी, '७५ अंक १८

१६ राजघाट, गांधी स्मारक निधि, नई दिल्ली-११०००१

बंगलादेश की नई क्रान्ति

शेख मुजीबुर रहमान जो अब तक बंगलादेश के प्रधानमंत्री थे और वहां के राष्ट्रपिता कहलाते थे, इसी २५ जनवरी को संविधान में एक बड़ा संशोधन करके राष्ट्रपिता से राष्ट्रपति हो गये। पुराने राष्ट्रपति मोहम्मद उल्लाह इस प्रकार अपदस्थ हुए और नये राष्ट्रपति ने अपने को उन सब शक्तियों से सम्पन्न बना लिया जो किसी भी अधिनायक के पास होती हैं। अब बंगलादेश में पांच बरस तक बिना किसी भी प्रकार के चुनाव के शेख मुजीबुररहमान शासन के लगभग निरंकुश सत्ताधारी हो गये हैं। वे उपराष्ट्रपति को नामजद करेंगे और कहने के लिए एक प्रधानमंत्री भी उन्हीं के द्वारा नामजद किया जायेगा। देश भर में एक ही राजनीतिक दल रहेगा। इस दल का गठन स्वयं राष्ट्रपति ही करेंगे और अब तक जो राजनीतिक दल देश में थे वे सब समाप्त कर दिये जायेंगे। कहा गया है कि इस जबरदस्त परिवर्तन का उद्देश्य राष्ट्र की नीति को ज्यादा कारगर ढंग से सफल बनाने के लिए किया गया है।

शेख मुजीबुर रहमान ने इस परिवर्तन को 'दूसरी क्रांति' का नाम दिया है। बोलचाल की भाषा में क्रांति का मतलब उलट-पलट होता है। इससे कोई इन्कार नहीं कर सकता कि यह एक जबरदस्त उलट-पुलट है। संशोधन के मुताबिक सारे प्रशासनिक अधिकार राष्ट्रपति के हाथ में होंगे। उन अधिकारों का उपयोग वह स्वयं प्रत्यक्ष रूप से अथवा अपने द्वारा नामजद व्यक्तियों से करवायेंगे जो उपराष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, मंत्री आदि हो सकते हैं। स्पष्ट है कि यह परिवर्तन अधिनायकवाद की स्थापना के सिवाय और कुछ नहीं है। यों तो सारे अधिनायकवादी देश यही कहते हैं कि सच्चा प्रजातंत्र अगर है कहीं तो वहीं है। इस प्रकार बंगलादेश में भी सच्चा प्रजातंत्र अब आया है। इस सच्चे प्रजातंत्र के प्रति सारे संसार में विभिन्न प्रतिक्रियाएं हुई हैं। इस नये प्रकार के शासन की घोषणा होते ही भारत ने बंगलादेश में इस नये कदम का समर्थन किया और राष्ट्रपति शेख को बधाई भेजी। रूस ने भी इसके अनुकूल प्रतिक्रिया दिखायी है। पाकिस्तान ने इसका विरोध किया है। स्वयं बंगलादेश में इसकी कोई विशेष प्रतिक्रिया दिखायी नहीं दी क्योंकि वहां इस घोषणा के साथ ही साथ सभाओं और जुलूसों पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया है। सामान्य मनुष्य तो यही कहता पाया गया कि हमें तो रोटी-रोजी चाहिए, चाहे उसे राष्ट्रपिता दें या राष्ट्रपति।

इतनी बड़ी घटना की प्रतिक्रिया कालान्तर में भी बंगला देश में कुछ नहीं होगी, ऐसा मानना कठिन है। चूंकि भारत और रूस ने 'इस क्रांति का समर्थन' किया है, सम्भावना इस बात की है कि चीन छुपे तौर पर ही क्यों न हो इस क्रान्ति के विरोध में वहां के बुद्धिजीवी वर्ग को जाग्रत करने का प्रयत्न करे। भारत में जो आन्दोलन नक्सलाइट आन्दोलन के नाम से जाना गया वह बंगला देश में भारत की अपेक्षा कुछ अधिक जोर पकड़े हुए है और सब जानते हैं कि इस आन्दोलन को चीन की सहानुभूति प्राप्त है। यदि बंगलादेश में इस या अन्य कारणों से गृह-युद्ध की परिस्थितियां उत्पन्न हो गयीं तो भारत को बंगला देश में अपनी संधि के अनुसार वहां जो भी सरकार विद्यमान होगी, उसके पक्ष में मुस्तैद होना पड़ेगा। भारत और रूस मैत्री संधि में इस बात का विधान है कि एक-दूसरे को बाहरी आक्रमण और गृह-युद्ध की परिस्थितियों में मदद करेंगे। भारत ने इस परिस्थिति को शायद तब नहीं सोचा था। अब यह परिस्थिति सामने आ गयी है तो भारत ने इसका समर्थन किया है। अधिनायकवाद का ऐसा खुला समर्थन हमारे देश की प्रजातंत्रीय पद्धति से मेल नहीं खाता। इसलिए मन में सवाल पैदा होता है कि भारत की गृह-नीति में भारतीय कम्युनिस्ट दल का शासन में बढ़ता हुआ प्रभाव हमें भी उसी दिशा में तो नहीं ले जायेगा, जिसमें बंगला देश चला गया है। भारत की आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियां बंगलादेश से बहुत अलग नहीं हैं। इसलिए जो लोग प्रजातंत्र में विश्वास करते हैं उनका काम है कि वे पहले से भी अधिक सावधान हो जायें।

गफूर सा० का मन्शा

जनवरी २९ अर्थात बापू के शहीद दिवस की पूर्वसंध्या में बिहार के मुख्य मंत्री गफूर साहब ने घोषित किया कि जयप्रकाशजी के आंदोलन को हमने बहुत बर्दाश्त किया। अब हम उसे नहीं चलने देंगे और आवश्यक हुआ तो जे पी को गिरफ्तार भी करेंगे।

कांग्रेस के ही संसद सदस्य कृष्णकान्त ने इस कथन को बुद्धिमानी से हीन कहा है और समाजवादी नेता श्री एस. एम. जोशी ने कहा कि सरकार नहीं जानती कि जे. पी. की गिरफ्तारी के देश-भर में और खासकर बिहार में क्या परिणाम होंगे।

शायद सत्ता का ख्याल है कि जे पी की गिरफ्तारी से जनता हिंसक हो उठेगी और तब अब तक के इस अहिंसक आंदोलन को भली भांति कुचल सकेगी। हम सरकार की सुबुद्धि की कामना के सिवा क्या कर सकते हैं?

—भवानीप्रसाद मिश्र

❖ देवीशरण 'देवेश'

हरियाणा के गांवों में नया जागरण

ठीक लुधियानां की तरह ग्रामीण लोगों का झुंड भारत की प्रधान मंत्री के निमंत्रण पर रोहतक नहीं पहुंचा। लुधियाना में सात-आठ लाख जनता जे. पी. के निमंत्रण पर पहुंची थी। पंजाब में विरोधी दल सशक्त नहीं है मगर हरियाणा में भी वही स्थिति है। जैलसिंह तो जवाबी रैली नहीं कर पाये लेकिन हरियाणा के मुख्य मंत्री ने हरियाणा के किसानों को बुलाकर दिखाना चाहा कि हरियाणा का बच्चा-बच्चा प्रधानमंत्री के साथ है। हरियाणा के ट्रक आपरेटर्स को अधिकारियों ने हुक्म दिया था कि हर हालत में रोहतक के सौ किलोमीटर तक के गावों-गावों में ५ से १० ट्रक पहुंचें। जिले के अधिकारियों, विकास अधिकारियों ने गांव-गांव जाकर चेतावनी दी यदि इस रैली में किसान नहीं जायेंगे तो उन्हें बीज, खाद और पानी जो सरकार की मारफत मिलता है, नहीं मिलेगा। विकास अधिकारियों ने मुख्य रैली से एक सप्ताह पूर्व क्षेत्रीय सभाएं आयोजित कीं। किसानों के अनुसार इन सभाओं में कांग्रेसी नेता कम सरकारी अधिकारी अधिक बोले। सरकारी वाहनों पर भागदौड़ में उन दिनों में एक अनुमान के अनुसार लगभग पन्द्रह लाख रुपये खर्च किये गये। गांवों से किसानों को लाने के लिए पंजाब और दिल्ली राज्य के ट्रक तथा प्राइवेट बसें भी बड़ी तादाद में देखी गयीं।

संख्या की दृष्टि से 'इन्दिरा लहर' के बाद हुई प्रधान मंत्री की यह रैली कमजोर रही। आनेवाला किसान भावुक नहीं था और न ही वह कुछ सुनना चाहता था। वह इसलिए आया क्योंकि सरकार ने सब कुछ आज अपने कब्जे में कर रखा है। उसे वह सभी मिल सकता है जब वह अधिकारियों की बात माने।

प्रधान मंत्री भाषण देकर चली गयीं। किसानों से बात करने पर पता चला कि विधान सभा के उपचुनावों के साथ-साथ जे. पी. का डर भी हरियाणा कांग्रेस को है। इसीलिए इसी वर्ष अम्बाला तथा अब रोहतक में प्रधान मंत्री को आना पड़ा। हरियाणा के किसान आजकल अपने-अपने ग्रामीण क्षेत्रों में जन-संघर्ष समिति बना रहे हैं। बिहार की तरह का आंदोलन वहें या हरियाणा का अपनी तरह का आंदोलन खड़ा हो रहा है। हरियाणा के किसानों का कहना है कि आज तक उन्होंने कांग्रेस को आंख मूंदकर वोट दी है। हरियाणा की जाटशाही सरकार बनी रहे इसलिए हरियाणा के किसानों ने भी आजादी के बाद पंजाब हरियाणा के सवाल पर तथा बंसीलाल की सरकार टिकाने के लिए बिना सोचे-समझे ही वोट दे डाले। आज लगता है किसान जाग रहा है। प्रधान मंत्री की कक्षा से लौटे छात्रों की तरह गांव जाकर अपना पाठ याद करना भूल हरियाणा के किसानों ने खुद सोचना शुरू किया। कुछ क्षेत्रों में सवाल उठाये गये कि आखिर प्रधान मंत्री जे. पी. का इतना विरोध क्यों कर रही हैं? क्या जे. पी. सुधार की बात नहीं कर रहे? जे. पी. जब भ्रष्टाचार मिटाने, बेरोजगारी हटाने तथा शिक्षा में परिवर्तन की मांग करते हैं तो शासक दलवाले इसे अपना विरोध क्यों मानते हैं। कुछ किसानों ने बताया कि भूमि सीमा कानून में जो जमीन बड़े-बड़े जमींदारों ने अपने छोटे-छोटे बच्चों से लेकर मवेशियों तक के नाम करा ली है और आखिर जमीन जो भूमिहीन किसान को मिलनी थी, नहीं मिल पायी वह सब वर्तमान सरकार के ही कारण, गरीब-गरीब ही रह गया और जमींदार अभी भी अपना जुल्म ढा रहा है।

सुलझे हुए दार्शनिक की तरह आज का किसान बोल रहा है। हिन्दुस्तान में जातिवाद की बहुत गहरी जड़ है। पढ़ा लिखा आदमी 'हां' में 'हां' मिला देता है तो वह कहता है कि आप नहीं समझे। आजादी के बाद नयी जातियां बनी हैं, एक जाति है भारत के किसान की, दूसरी है साठ-सत्तर की तादाद में पूंजीपतियों की, तीसरी है सरकारी अफसरों कर्मचारियों की, और चौथी है उसकी जो छोटा मोटा व्यापारी या अपना काम करनेवाला मजदूर है। आजादी के बाद इन जातियों ने देश को नये-नये स्वप्न दिखाये, वायदे किये। भारत के किसान ने भी एक वायदा किया अधिक अन्न उपजाने का और आंकड़े इस बात का सबूत हैं कि आजादी के बाद प्रति एकड़ उपज किसान ने अपनी ईमानदारी की मेहनत से बढ़ायी है। चौपाल पर रेडियो चलता है तो पासवाला किसान कह उठता है 'इसे बन्द कर दें चौधरी न बोलने दें।' चौधरी कहते हैं दूसरी जाति है पूंजीपतियों की। देश का उत्पादन, धन, आर्थिक स्थिति इन्होंने सम्भाली और घी, कपड़ा, कागज, इस्तेमाल का हर सामा[न] बाजार से गायब कर, मिलावट कर जन[ता] को दिया वायदा निभाया है। अब तीसर[ी] जाति सरकारी अफसर-कर्मचारियों की खाद से लेकर उस वस्तु तक जो सरका[र] बंटवाती है तथा किसी भी आदमी का का[म] जो सरकारी दफ्तर में पड़ा है बिना रिश्व[त] के नहीं होता। इसके भी आंकड़े हैं। भ्रष्टा[चार], भाई-भतीजावाद, रिश्वतखोरी, काला[-]बाजार, धोखाधड़ी, स्मगलिंग आदि सब सरकारी अफसरों की देख रेख में बढ़ी है। रही बात आम आदमी की जो चौथी जाति है। उसने भी अपना फर्ज नहीं निभाया। वह अपनी कमजोरी के कारण आज तक यही सोचता रहा कि हमारे करने से क्या होगा और जब आज जे. पी. लोगों को जगा रहे हैं तब भी यह आम आदमी सो ही रहा है। लेकिन अब सोयेगा नहीं। सत्ताइस साल में किसने क्या किया है, यह सोचना बाकी नहीं रह गया है। अब धोखा, झूठे वायदे और सब्जबाग दिखाकर जनता को ठगने का जमाना लद गया।

संघर्ष समिति की बात चली लेकिन किसानों में पढ़े-लिखे लोग भी हैं। चर्चा आगे चली, सवाल आया पांचवीं जाति का जो सरकार चलानेवालों की है। नौजवानों की आवाज गूंज रही है। किसान जो देश की बहुसंख्यक जाति है उसने अपना वायदा पूरा किया, अनाज उगाया, वोट भी दिये, हर-बार गाय के नाम पर। लेकिन झूठे कोरे वायदे पूरे न करनेवाली जाति ने कुछ नहीं किया, गरीबी नहीं मिटी। कम से कम बिजली तो सरकार ही बनाती है, वह तो देगी। हर बार,

खेत में लगा बिजली का पम्प, कारखाने में काम कर रहा आम आदमी आज बिजली के न होने से बेकार है। खाद-पानी के उचित वितरण के बिना ही आज तक किसान ने काम किया है। *और इस पर इस जाति का (सरकार चलानेवाली) हर आदमी भले ही वह* प्रदेश का मुखिया है या सारे देश का जे. पी को सिरफिरा यहाँ तक कि बौखलाया पागल बता रहा है।

हरियाणा में जरूरत से ज्यादा पुलिस अत्याचार हुआ है। कानून और व्यवस्था तो शहरों तक से गायब हो चुकी है लेकिन गाव-गाव में किसानों का जागरण यह बता रहा है कि वर्तमान सरकार से जनता की सीधी टक्कर हो सकती है। इस सीधी टक्कर *में जनता का उम्मीदवार, शायद दो ही उम्मीदवार* मैदान में हों। गाववालों ने चुनाव क्षेत्रों में खासकर उपचुनाव के क्षेत्रों में रक्षकदल गठित करने की भी योजना बनायी है। सरकार हरबार चुनाव में जबरदस्ती, जाली वोटों का डलवाना आदि सब कुछ अपनी जीत के लिए करती है। बड़े-बड़े जमींदार जो सरकारी हुक्म मानते आये हैं उन्हें इसबार भी हाल ही में रोहतक में चौधरी बंसीलाल ने समझाया है। जोश में आकर चौधरीजी इतना तक कह गये कि जे. पी के समर्थकों *की सरकार बनी तो उनकी जमीन छीन ली* जायेगी। छोटे किसान कहते हैं कि यह ठीक ही होगा। मवेशियों के नाम पर कब तक जमीन बनी रहेगी। फरजी नाम-काम अब नहीं चलेगा। सीधी कार्रवाई होगी और सरकार जनता की होगी।

❀

❀ शीलकुमार निगम

उद्योगों में पश्चिम की नकल से भटकाव

भारत की अर्थव्यवस्था डगमगा गयी है। मुद्रास्फीति के जाल में हम उलझ गये हैं। महंगाई का घोड़ा बेलगाम हो चुका है। सरकार, असहाय बनी टुकुर-टुकुर ताक रही है। मन समझाने के लिए यहा-वहां उपाय किये जा रहे हैं। दांत खुरचने से पेट नहीं भरता। भूखा और सूखा भारत चाहता है एक "निश्चित अर्थ व्यवस्था।" गांधीवादी अर्थ-रचना की उपेक्षा कर हम पश्चिमी अर्थ व्यवस्था की नकल कर रहे हैं। अमरीकी नमूने के *"ब्लाक डेवलपमेंटों" का प्रयोग हो चुका।* रूसी प्रभाव में गेहूं के "सरकारीकरण" की भूल-भुलैयां हमने भुगत ली। ग्रामीण अर्ध-रोजगारी बरकरार है। शहरी "बाबू" नौकरी दफ्तरों की परिक्रमा ही लगा रहे हैं। उत्पादन बढ़ता नहीं, अनुत्पादक खर्च घटता नहीं। क्या हमारी योजनाएं दिशाहीन सिद्ध नहीं हुई? गांधीजी के विचारों की उपेक्षा करके हम क्या देश को भुखमरी की स्थिति से उबार सके? अब आज भी गांधीजी "पारिवारिक बुजुर्ग" ही बने रहेंगे? क्या गांधीजी का "विकेन्द्रित उद्योग" का विचार अभी भी अव्यावहारिक समझा जायेगा? क्या गांधी साहित्य अभी भी "बैठक के कमरे की सजावट" बना रहेगा?

उद्योगों का विकेन्द्रीकरण

भारत में गांधीजी की हंसी उड़ानेवालों की कमी नहीं। गांधीजी के विचारों का गलत अर्थ लगाकर उन्हें गोली तक मार दी गयी। वे चले गये। उनके विचार हमारा मार्ग-दर्शन आज भी कर सकते हैं। "वाद' के चक्कर में फंस कर जनता को चक्रव्यूह में क्यों फंसाया जा रहा है? चाहे पूंजीवाद हो, चाहे साम्यवाद, समाजवाद हो या फासीवाद, "पूंजी" की आवश्यकता तो पड़ेगी ही। फर्क पड़ता है पूंजी की प्राप्ति, आवश्यकता, विनिमय, उत्पादन के तरीके, देश की श्रमशक्ति का सदुपयोग और उत्पादित माल के वितरण की व्यवस्था में। क्या भारत में पूंजी अधिक है? क्या श्रमशक्ति कम है? यदि उत्तर "नहीं" में आता है तो पाश्चमी अर्थ-व्यवस्था भारत के लिए अनुपयुक्त है। गांधीजी ने खादी एवं ग्रामोद्योग का समर्थन किया तो उन्हें पिछड़ा और यंत्र विरोधी समझ लिया गया। वे यंत्र विरोधी नहीं थे। उन्होंने दर्जी को सीने की मशीन का समर्थन किया क्योंकि इस यंत्र ने दर्जियों में बेरोजगारी नहीं फैलायी। भारत में श्रमशक्ति भरपूर है। भारी यंत्रों के उपयोग से बेरोजगारी बढ़े तो वे हमारे लिए उपयोगी नहीं हैं। गांवों की अर्ध बेरोजगारी दूर करने का सरल उपाय है, गांव गांव तक छोटे उद्योग फैला देना। एक बड़ा कपड़ा मिल न खोलते हुए यदि कपड़ा बुनने की मशीन गांव गांव तक पहुंचा दी जाये और ये मशीनें विद्युत से चलें तो क्या यह पिछड़ापन है। जहां विद्युत नहीं है, वहां विद्युत पहुंचाये जाने तक हाथ से चलेगी। दूसरे विश्वयुद्ध में विनष्ट होने के पश्चात भी जापान आज विश्व का उद्योग प्रधान देश है। वहां पर गांव गांव तक उद्योग फैले हुए हैं। जापान में, ग्रामीण हाथ पर हाथ धरे नहीं बैठा रहता। खेती से बचे समय में वह अन्य उत्पादक कार्य में लगा रहता है। स्विट्जरलैंड में भी घड़ी के बड़े बड़े *केन्द्रित कारखाने नहीं हैं। गांव-गांव में घड़ी* के पुर्जे बनते हैं। ग्रामोद्योगों से यदि जापान और स्विट्जरलैंड पिछड़े देश नहीं कहलाते और पिछड़े हैं भी नहीं, तो भारत ही पिछड़ा क्यों रह जायेगा? मोटे तौर पर बड़े-बड़े उद्योगों में पांच हजार रुपये की पूंजी लगाने पर एक व्यक्ति को रोजगार मिलता है। ग्रामोद्योग में एक व्यक्ति को रोजगार से लगाने के लिए पांच सौ रुपये ही पर्याप्त हैं। मुख्य प्रश्न है रोजगार और उत्पादन का। गांधीजी की खादी योजना को हमने गलत *समझा। उन्होंने कई बार समझाने का प्रयत्न* किया। गांधीजी ने कहा है 'खादी वृत्ति का अर्थ है जीवन के लिए जरूरी चीजों की उत्पत्ति और उनके बंटवारे का विकेन्द्रीकरण" (रचनात्मक कार्यक्रम पृष्ठ-२०)। उन्होंने बड़े उद्योगों की खिलाफत नहीं की। उनका कहना था कि कुछ मूल उद्योग भारी उद्योगों के रूप में रहें, किन्तु मुख्य औद्योगीकरण ग्रामीण क्षेत्रों में ही हो। उन्होंने कहा है "भारी उद्योगों का आशय ही केन्द्रीकरण और राष्ट्रीयकरण करना होगा। परन्तु वे उस विशाल राष्ट्रीय प्रवृत्ति का छोटे से छोटा भाग होंगे, जो मुख्यतः देहात में चलेगी" (रचनात्मक कार्यक्रम पृ० १२)। गांधीजी ने भारत की मूलभूत समस्याओं का सूक्ष्म अध्ययन किया था। आजादी

की लड़ाई लड़ते-लड़ते ही उन्होंने भारतीय अर्थशास्त्र पर विचार व्यक्त करना आरम्भ कर दिया था। वे पूर्ण रूप से एक गरीब भारतीय बन कर ही भारत की समस्या और उसके हल को देखते थे। उनकी दृष्टि वैज्ञानिक थी किन्तु भारत प्रयोगशाला में ही वे अपने प्रयोग करते थे। उनकी चेतावनी पर हमने ध्यान नहीं दिया। उन्होंने १९२८ में ही कहा था "ईश्वर न करे भारत कभी पश्चिम की भांति उद्योगवाद को अपनाये" (अहिंसक समाजवाद की ओर पृ०-३५)।

आर्थिक क्रांति 'नाम जाप' से नहीं

भारत में क्रांति का जाप करनेवालों की कमी नहीं है। कोई हिंसक क्रांति से देश को खुशहाल बनाना चाहता है तो कोई अहिंसक क्रान्ति से देश को मालामाल करने की बात करता है। रूस और चीन छाप क्रान्ति की बात करनेवाले भी हैं और अमरीकी प्रकार की आर्थिक क्रान्ति के हिमायती भी हैं। सरकार, समाजवाद के मार्फत देश की कायापलट करने का हल्ला मचा रही है। कानून बना रही है। क्या 'नामजाप' और 'नारेबाजी' से क्रांति आयी? नहीं! देश की हालत दिन-प्रतिदिन खराब होती जा रही है। गांधीजी के रचनात्मक कार्य में जुटे शिष्य धीरेन्द्र मजूमदार ने इसी सन्दर्भ में कहा कि, "क्रान्ति सिर्फ स्थिति परिवर्तन से नहीं होती। इसके लिए मान्यता परिवर्तन की आवश्यकता है।" समाजवाद की नारेबाजी के संबंध में आपने कहा है कि, "अगर आप चाहते हैं कि समाजवाद का विकास हो तो आर्थिक तथा राजनीतिक ढांचा ऐसा रखना होगा जिससे व्यक्तिवाद को खुराक न मिलकर समाजवाद का पोषण मिलता रहे।...केन्द्रीयवादी राजनैतिक तथा आर्थिक व्यवस्था के कारण आज व्यक्तिवाद का प्रकोप है।...अर्थनीति में परिवर्तन होने के कारण मनुष्य की वृत्ति में कैसा हेरफेर होता है, उसको समझ लेना चाहिए। अगर विकेन्द्रित तथा स्वावलम्बी अर्थनीति चलेगी तो चूंकि प्रत्येक मनुष्य अपनी सारी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अकेला उत्पादन नहीं कर सकता है, उसका स्वार्थ ही उसे अपने पड़ोसी के साथ नाता जोड़ने को बाध्य करेगा। इस कारण उसके स्वभाव में अनिवार्यतः सहकारी वृत्ति का विकास होगा। सहकार ही समाजवाद का मूलतत्व है। केन्द्रित अर्थनीति में गांव में प्रत्येक व्यक्ति को जिंदा रहने के साधन अलग-अलग केन्द्र से ही प्राप्त करना होगा। इससे प्रत्येक व्यक्ति की वृत्ति पड़ोसी की अपेक्षा अधिक सहूलियत प्राप्त करने की होगी, जिससे प्रतिद्वन्दिता का विकास होगा। प्रतिद्वन्दिता व्यक्तिवाद का मूलतत्व है।" (युग की महान चुनौती पृ० ५३-५४)। गांधीजी के प्रत्येक कदम को अर्थशास्त्र के पंडितों ने शंका की दृष्टि से देखा। विशेषज्ञ समुदाय पुरानी किताबों के सूत्रों में उलझा रहता है। नयी बात उनकी समझ में देर से आती है। वे अंकगणित से हिसाब लगाने लगते हैं। कोई भी क्रांतिकारी कदम, गणित के हिसाब से तुरन्त हिसाब लगाने पर शंकास्पद लगता ही है। सर्वोदय के भाष्यकार दादा धर्माधिकारी ने इस तथ्य को इस तरह समझाया है कि, "क्रांति में अंकगणित का हिसाब नहीं होता। बीजगणित का हिसाब होता है। गांधीजी ने एक चुटकी भर नमक की पुड़िया बनाकर बेची। हिसाबनवीस, हिसाब लगाने बैठे कि इस रफ्तार से समुद्र कितने दिन में सूखेंगे, और नमक के भंडार कितने दिन में भरेंगे। इधर इनका हिसाब चला और उधर अंग्रेजों का सिंहासन डोलने लगा। क्रांति की प्रक्रिया में संकेतों का महत्व कभी भी नहीं भूलना चाहिए।" (क्रांति का अगला कदम पृ०-९)। खादी और ग्रामोद्योग के द्वारा गांधीजी ने "विकेन्द्रित अर्थ रचना" का संकेत दिया था किन्तु अर्थशास्त्रियों ने चरखे की हंसी उड़ायी। इस हंसीमें, भारतीय मिट्टी में उपजा विकेन्द्रित अर्थ-व्यवस्था का विचार उड़ गया। सन्त विनोबा भावे ने 'भूदान-यज्ञ' के मार्फत गांधीजी के विचारों को जीवित रखने तथा सत्ता में गये बगैर उन्हें क्रियान्वित करने का प्रयत्न किया। उन्होंने अपने इस कदम को "भूदान मूलक, ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रांति" कहा। कभी गांधीजी के ट्रस्टीशिप सिद्धांत की हंसी उड़ानेवाले और चरखे को बुढ़िया का सहारा कहकर गांधीजी की हंसी उड़ानेवाले जयप्रकाश भी सर्वोदय विचार के प्रमुख स्तंभ बन गये हैं। वे भी सत्ता और अर्थतंत्र के विकेन्द्रीकरण की हिमायत पूर्ण शक्ति से कर रहे हैं। पानी सर से ऊपर जाता देखकर जयबाबू "संपूर्ण क्रांति" का आवाहन कर मैदान में आ गये हैं।

पानी में प्यासी मछली

भारत में क्या नहीं है? श्रम शक्ति है, लगभग हर प्रकार के खनिज है, कोयला और पेट्रोल है, नदी और समुद्र है, विद्युत है, जमीन और जंगल की तो कमी ही नहीं, बुद्धि भी है, अच्छे से अच्छे कारीगर हैं, वैज्ञानिक

अर्थ-बेरोजगारी का
विचार एवं विमान
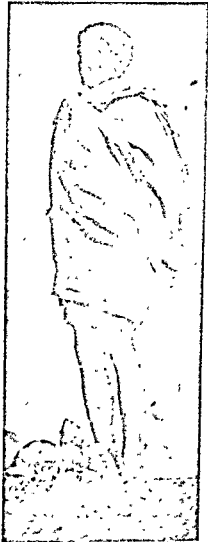
हैं, फिर भी भयंकर बेरोजगारी है, उत्पादन की कमी है, अभी भी वर्षा की स्थिति पर ही कृषि निर्भर है। कृषि लगडी है ग्रामोद्योग, जो पहले कृषि के पूरक थे, समाप्त हो गये है। भयंकर आर्थिक संकट के चक्रव्यूह मे भारत फस गया है। क्यो? इसलिए कि हमने पश्चिम का अन्धानुकरण किया और गांधीजी के विचारो को एक किनारे रख दिया। यदि उनकी कोई बात मानी भी तो आधे मन से यहा-वहा कुछ कर दिया। इस तरह उनके विचारो को विकृत ही किया। आज का विश्व "उत्पादन" का विश्व है। उत्पादन की दौड मे जो आगे है वही देश टिक सकेगा। भारत मे चाहे जिस "वाद" की राजनीतिक व्यवस्था स्थापित करें, आर्थिक व्यवस्था तो विकेन्द्रित ही अपनानी होगी। भारत के सूत्रधार अपनी भूल सुधार लें। पानी होते हुए भी मछली प्यासी मरे, इससे अधिक शर्मनाक स्थिति और क्या हो सकती है? ग्रामोद्योग और लघुउद्योग मूलक नीति अपनाकर अभी भी भारत को बेरोजगारी और भुखमरी की स्थिति से उबारा जा सकता है। आज नीति सुधारने का समय है। शायद कल वह समय भी नहीं रहे और हमारा आर्थिक ढांचा चरमरा कर टूट जाये। तब शायद हमें किसी अन्य देश की "आर्थिक गुलामी" स्वीकार करनी होगी। क्या वह स्थिति भयावह नही होगी? विनोबाजी द्वारा, भूदान आदोलन से, गाधी विचारो को लागू करने का उपयुक्त वातावरण बनाया गया था। सत्तासीनों ने उसे समझा नही। अब पुन गाधी विचारो को लागू करने का अनुकूल वातावरण जयबाबू ने बनाया है। यह दूसरा मौका है। शायद तीसरा मौका न मिले। गाधी के विचारों के अनुरूप क्रांति का मुहूर्त आज पुन युवजनों ने उपस्थित किया है। "अगर-मगर" हमने किया तो पुन हम मौका चूक जायेंगे। समय की रफ्तार किसी का इन्तजार नही करती।

३१
१२

☐ सुरेशराम

'गणतंत्र' बने बिना सच्चा गणतंत्र नहीं

"यह बडी दुर्भाग्यपूर्ण, दुःखद कहानी है कि केन्द्र की भारी भरकम योजनाओ मे गरीबों का कोई स्थान नही है। श्री दुर्गाप्रसाद धर गरीबो के लिए बिना कुछ किये चले गये, अब देखना है कि प्लानिंग कमीशन के नये उपाध्यक्ष क्या करते हैं।"

आज से बारह रोज पहले इसी चौदह जनवरी को मकरसंक्रान्ति के दिन महाराष्ट्र के बोर्डी नामक स्थान मे उपर्युक्त उद्गार प्रकट किये गये। किसने किये? विरोधी दल के किसी नेता ने? जयप्रकाश बाबू के किसी भक्त ने? शिव सेना के किसी कार्यकर्ता ने? किसी गैर जिम्मेदार, सर-दिमाग आदमी ने? नहीं, नहीं, नहीं। यह प्रकट किये महाराष्ट्र राज्य की गद्दी पर दस साल से आसीन, वहा के मुख्य मन्त्री ने।

उसी दिन के आसपास केन्द्रीय सांख्यिकी सगठन की रिपोर्ट निकली। उसमे कहा गया कि १९६०-६१ को आधार मानें तो १९७२-७३ मे भारत की राष्ट्रीय आय में लगभग एक प्रतिशत की कमी आ गयी और प्रति व्यक्ति आय मे लगभग सवा तीन प्रतिशत की। क्या हाल रहा कीमतों का? जानकार क्षेत्रो का कहना है कि १९७४ में लगभग बीस प्रतिशत वृद्धि हुई—थोक बाजार मे। फुटकर का तो कहना ही क्या? सबमे ज्यादा कीमतें कागज की बढीं (लगभग साठ प्रतिशत)। अनाज के दाम ३४.७ प्रतिशत ऊचे चढ गये। बाजार मे आज आटा लगभग ढाई रुपये किलो है और अरहर की दाल का भाव साढे चार रुपये है। कौन मजदूरी-पेशा दोनो जून अपने बच्चो को दालरोटी खिला सकता है?

देश की अर्थ व्यवस्था का एक भयानक पहलू और है। वह यह कि भारत पर विदेश का कर्ज सात हजार करोड रुपये से ऊपर हो गया है। यानी, हर भारतवासी पर लगभग डेढ सौ रुपये। किसी देश के सारे सगठन, राज्य प्रणाली और अर्थनीति का निचोड उसके सिक्के का मूल्य होता है। ससद के गत शीतकालीन अधिवेशन मे वित्त-मंत्री ने बताया कि सन् १९४८ का एक रुपया आज लगभग २७ पैसे रह गया है। यह गिरावट क्रमश नहीं हुई है। इसमें आधे से ज्यादा पतन पिछले पांच साल मे हुआ है।

अगर यही सिलसिला कायम रहा तो देश किधर जायेगा? और रुपया बिचारा गिरकर कहां पहुचेगा? क्या थैला भर नोटो के बदले पुडिया भर अनाज मिलेगा? क्या होगा?

दो गुनहगार

इसका जवाब किसके पास है? इस हालत के लिए कौन जिम्मेदार है? हम सब, भारत के सारे नागरिक दोषी हैं। मगर जिन साठ फीसदी भाई-बहनो को एक रुपया रोज भी नसीब नहीं होता, उनको इसमें सानना नाइन्साफी है। कसूरवार खासतौर से दो समुदाय हैं—एक तो सरकार और दूसरा सर्वोदय आदोलन। क्यो? इसे हम संक्षेप मे स्पष्ट करेंगे।

सरकार इस वजह से गुनहगार है कि उसने शुरू मे ही विदेशी मदद यानी कर्ज की नीति अपनायी और देश की अपनी जनता का भरोसा नही किया। साथ ही, विभिन्न उद्योगो मे विदेशी पूजी को अपना जाल बिछाने का मौका दिया। आज हिन्दुस्तान म बिस्कुट, पावरोटी, साबुन, तेल, दात-मजन, हजामती सामान, कपडा-लत्ता जैसी बुनियादी जरूरत की चीजों मे विदेशी पैसे का दखल है और बढाया जा रहा है। किसके द्वारा? सरकार के। उसके अर्थशास्त्री और योजनाज्ञ हैं, उन सब पर गोरे वर्ण के विद्वानो और विशेषज्ञो का भूत सवार है और उनकी नकल को ही वह तरक्की मानते हैं। नतीजा यह है कि हम अमरीका, जापान और यूरोप के देशो से पीछे हैं। वे आगे हैं, बहुत आगे। हम उनके पीछे दौड रहे हैं, हम जितना बढ पाते हैं, वे उससे कई गुना ज्यादा आगे बढ जाते हैं और हमारी उनकी दूरी बढती जाती है। जितनी यह दूरी बढती है उतना ही हम और उनके पीछे पागल होकर भागते हैं। इस तरह सतत हार की बाजी भारत सरकार ने लगा रखी है। उस हार के नशे में उसे हार का अहसास तक नही रह गया है।

सर्वोदय आंदोलन ने गलती यह की कि सरकार के इस रवैये के खिलाफ असली कदम नहीं उठाया। जबान से तो कहा कि सरकार की नीति गलत है—अन्न-स्वावलम्बन होना चाहिए और हर व्यक्ति को काम मिलना चाहिए। लेकिन जब सरकार ने उसे अनसुना कर दिया तो उसको टोका नहीं, उसको रोका नहीं, उसको ललकारा नहीं। इन पंक्तियों का लेखक भी इस पाप का भागीदार है। पचीस साल की किनारा-कशी का नतीजा यह है कि सर्वोदय आज अजीब हालत में है—न उसमें सरकार का समर्थन करने की क्षमता है और न विरोध के लिए ही तैयारी है। और उभरा जा रहा है राजनैतिक दलदल जो पता नहीं उसे कहां ले जाकर पटकेगा।

हां, राजनैतिक पार्टियां भी कम जिम्मेदार नहीं हैं। लेकिन उनको हम सरकार का ही दूसरा बाजू मानते हैं। सरकार है सत्ताधारी, विरोधी पक्ष है सत्ताकांक्षी। दोनों के मूल्य और मान्यताएं एक-सी हैं। दोनों सत्ता देवी की उपासना में विश्वास करते हैं और दोनों के स्वार्थ, गतिविधि और कार्य-प्रणाली लगभग समान हैं। यही कारण है कि संसद जब जन-विमुख होकर अपने सदस्यों के भत्तों या दूसरी सुविधाओं में इजाफा करती है या प्रादेशिक विधान सभा में इस तरह के मनमानी के काम किये जाते हैं तो सारे विरोधी दल मौन हो जाते हैं। आज तक भारत के किसी विधायक ने किसी स्टेज पर भी सुविधाएं लेने से इन्कार करते हुए संसद या विधान सभा से स्तीफा नहीं दिया।

सारांश में स्थिति यह है कि देश के नेता कहे या सेवक, सभी अपने पथ से विचलित हो गये और देश की रफ्तार को बदलने या मोड़ने में कामयाब नहीं हो सके। इसका एक नतीजा तो राजनैतिक और आर्थिक अस्त-व्यस्तता है, दूसरा है जन-मानस का शांति व अहिंसा में अविश्वास करने लगना ही नहीं, उनसे नफरत-सी करना और अशान्ति व हिंसा की तरफ मुखातिब हो जाना। दूसरे शब्दों में, आज के राजकीय और आर्थिक ढांचे के अन्दर जो निहित शोषण व हिंसा के तत्व छिपे हैं वे अब खुल कर बाहर आ रहे हैं और जन-जीवन को संकट में डाल रहे हैं।

करना क्या है?

तब क्या किया जाये?

यह छोटा-सा सवाल आज भारत का सबसे बड़ा सवाल बन गया है। इसका जवाब कहां से मिलेगा? एक विभूति है जो यह दे सकती है—विनोबाजी की, लेकिन वह मौन हो गये हैं। और उनके मौन हो जाने के बाद उनकी पुरानी कही बातें इस तरह पेश की जा रही हैं मानो उन्होंने आज ही कही हों, जिससे पता चलता है कि उनके प्रचार के पीछे उद्देश्य निराला ही है। हां, तो जवाब कहां से मिलेगा? एक श्लोक है

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत् ।
आत्मैव आत्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मन ।।
(अध्याय ६, श्लोक ५)

इसमें गीता कहती है कि आत्मा ही आत्मा की दोस्त है और आत्मा ही आत्मा की दुश्मन है। यानी व्यक्ति हो, या समुदाय, पार्टी, संगठन, जो भी हो—उसके उत्थान व पतन का जिम्मेवार वह स्वयं है।

यह एक ऐसा सत्य है जिससे कोई इन्कार नहीं कर सकता। कांग्रेस को ही लें। आज उसको जिस संकट का सामना करना पड़ रहा है उसके लिए उसकी भीतरी फूट, गुटबन्दी और ईर्ष्या-द्वेष जिम्मेवार हैं। क्या देश में व्याप्त भ्रष्टाचार का मूल कारण कांग्रेस विधायकों की अनीतिमत्ता नहीं है? अगर वे अपनी जगह ईमानदार और ठोस हों, तो मजाल है कि कोई भी आई. ए. एस. अधिकारी या अन्य कर्मचारी घोटाला कर सके। *कांग्रेस के अन्दर फैली पद-लोलुपता* और राष्ट्र-निर्माण के बजाय भाग्य-निर्माण की वासना उसकी सबसे बड़ी शत्रु है। यही कारण है कि महात्मा गांधी ने २९ जनवरी १९४८ को लिखे अपने लेख में कांग्रेस भंग करने का सुझाव दिया था। इससे भी ज्यादा महत्वपूर्ण बात यह है कि पंडित जवाहरलाल नेहरू ने तो २ अक्तूबर १९३३ को ही लन्दन के प्रसिद्ध दैनिक "डेली हेरल्ड" में छपे अपने लेख में कहा था कि "मुझे यकीन है कि भारतीय राजनैतिक स्वतंत्रता के प्राप्त होते ही कांग्रेस अपने को भंग कर देगी।" आज कांग्रेस की दुर्दशा इन दोनों महापुरुषों के कथन की सुदूरदर्शिता और गहराई साबित कर रही है।

इसी तरह से सर्वोदय संगठन हो या कोई और समुदाय या पार्टी या संस्थान हो, उसके सदस्यों का अनैतिक व्यवहार ही उसके पतन का कारण है। जितनी उसके अन्दर नैतिकता और सेवा-परायणता बढ़ेगी उतनी ही *उसकी उन्नति होगी और वह लोक-प्रिय* बनेगी। अपनी सही करनी ऊंचा उठाती है और गलत करनी नीचे गिराती है। दुश्वारी यह है कि सही या गलत का फैसला कौन करे?

तीन सवाल

गीता कहती है कि वह फैसला भी खुद को ही करना है। दूसरे को न करना है और *न उससे कराना है। ईमानदारी के साथ हमें* आत्म-निरीक्षण करना होगा और अपने से पूछना होगा—

(१) क्या मैंने अपना स्वार्थ देश के हित को ठुकराकर पूरा करने की कोशिश की?

(२) क्या मैंने अपनी पार्टी, संस्था, समुदाय या संगठन के स्वार्थ के आगे देश के हित की अवहेलना की?

(३) क्या मैंने समाज को जितना दिया उतना या उससे ज्यादा, सामने से या आगे-पीछे से *या बाजू से, उससे लेने की कोशिश की?*

अगर अपने दिल पर हाथ रखकर यह तीनों सवाल हम सच्चाई से अपने से पूछेंगे तो कम से कम लेखक की ओर से जवाब एक ही मिलता है—हां, हां, हां! जिनका जवाब "नहीं" में हो उनको सौ-सौ बार बधाई और *दण्डवत प्रणाम। लेकिन* उनसे यानी इस प्रकार के सज्जन महानुभावों से हम एक ही चीज जानना चाहेंगे कि उन्होंने अपनी सज्जनता की शक्ति खड़ी क्यों नहीं की। इस पर वे या तो दयाकर हम पर हंस देंगे या हमें मूर्ख समझ दुतकार देंगे। जो भी हो, हम उन्हें आलसी सज्जन कहे बिना नहीं रह सकते और इस उलाहने के साथ हम उनसे माफी मांग लेंगे।

बड़ी विचित्र स्थिति है—एक तरफ लेखक जैसे दोषी या परोपजीवी हैं और दूसरी तरफ हैं सज्जन जो अपनी सज्जनता-वश युद्ध करने से इन्कार करते हैं। इस तरह

हम गुमराहों और आलसियों ने देश को वह हालत बना दी है जो आज दीख रही है।

तीन कसौटियां

इसमें निकलने का रास्ता यही है कि हम इससे निकल आयें। निकलना भी खुद को ही होगा और अब तक जो "हां" में जवाब दिये उनको नहीं में बदलना होगा। अन्दर ही अन्दर, चुपचाप। और इस दृष्टि-कोण से देखें तो विनोबाजी का मौन एक जबरदस्त अन्दरूनी टटोलना है, अद्भुत हृदय-मंथन है, प्रशांत महासागर के जैसा गहरा और हिमालय पहाड़ के जैसा ऊंचा आत्म-निरीक्षण है। जो काम वह मौन होकर हम-सबके लिए एक विशाल राष्ट्रीय पैमाने पर कर रहे हैं, वह हम अपनी जगह बिना मौन के भी कर सकते हैं।

करने या न करने या ठीक से करने की पहचान क्या होगी? उसकी तीन कसौटियां स्पष्ट हैं

(१) राजनैतिक क्षेत्र में—आपसी *स्वाम और सद्भावना में खूब वृद्धि होगी।*

(२) आर्थिक क्षेत्र में—रुपये की कीमत ऊंची और जमीन की कीमत गिरेगी।

(३) सामाजिक क्षेत्र में—जन जन की शक्ति, व्यक्तिगत और सामुदायिक दोनों तरह से, यानी जन-शक्ति बढ़ेगी और राज्य शक्ति या दण्ड-शक्ति घटेगी और फिर भी दोनों एक दूसरे के पूरक होने में गौरव अनुभव करेंगी।

गणतंत्र की बहार

पश्चिमी देशों में शादी के बाद नव-दम्पति जो समय आमोद-प्रमोद में बिताता है उसे हनी-मून कहते हैं। इसी तरह आजादी के बाद हमने मनी-मून और पावर-मून (पैसे और सत्ता का सोहाग) मनाया, बुरी तरह मनाया।

आज का पचीसवां गणतंत्र दिवस यह मांग कर रहा है कि *यह सोहाग खत्म किया जाये—प्रधान मंत्री इन्दिराजी के डंडे के डर से या जयप्रकाशबाबू द्वारा प्रेरित बन्द के* *शोक* में नहीं, बल्कि अपने अन्दर के मंथन, तेजस्विता और मजबूती से। उसका असर इन दोनों हस्तियों पर भी पड़ेगा, उनके डंक काफूर हो जायेंगे और तब वे मिलकर कदम बढ़ायेंगे। और सारे देश में होश और जोश की नयी बहार खिल उठेगी—जिसके परिणाम-स्वरूप *आज की तरह गणों का तंत्र या,* संख्या-तंत्र नहीं रहेगा, बल्कि मानवीय गुणों *तथा मूल्यों का तंत्र या गुण-तंत्र कायम* होगा। और तभी सच्चा गणतंत्र आयेगा। 🙏

❖ विनोबा

मेरा मौन क्यों?

🙏

गत २५ दिसम्बर, १९७४ से पूज्य विनोबाजी ने एक वर्ष के लिए मौन धारण किया है। इस अवधि में वे न बोलेंगे और न लिखकर ही बातचीत करेंगे। गम्भीर रुग्णा-वस्था में अपवाद रहेगा।

बाबा के मौन के बारे में तरह तरह की अटकलें और *प्रतिक्रिया* व्यक्त की जा रही हैं। अखबारों के सम्पादकीय कालम रंगे जा रहे हैं ऐसे में विनोबाजी के शब्दों में ही उनके अपने मौन के बारे में पाठकों को यह *लेख रुचिकर और बोधगम्य लगेगा। बाबा* के ये उद्गार २५ दिसम्बर को मौन से पूर्व उनके आश्रम पवनार में गीता-सम्मेलन में दिये गये प्रवचन का एक भाग है। स०

🙏

मैंने साल भर का जो मौन सोचा है, उसमें न बोलेंगे यो तो है ही, लेकिन न लिखने का भी है। न बोलना इतना ही होता, लेकिन लिखने का होता तो काफी सहूलियत होती। मनुष्य लिखता है तो 'रिवाइज' होता है, ठीक लिखता है। इसलिए बाबा लिखना जारी रखता, लोग कहते ठीक है, लिखना तो तो जारी रखा है। लेकिन लिखना भी बन्द है। 'टूरिराम' ने अनावा और कुछ लिखेगा नहीं। यह क्या किया। बाबा गांधीजी के पास 7 जून 1916 को गया। उस दिन का बाबा कभी भूलता नहीं उसके 50 साल पूरे हो गये। *1966, 7 जून का। गांधी का सारा* जो कुछ विचार था, जैसा बाबा समझा था उस पर अमल करने की कोशिश बाबा ने की और फिर 1966 में, जब 50 साल पूरे हो गये तब जाहिर किया कि बाबा सूक्ष्म में प्रवेश करेगा—सूक्ष्म में अभिध्यान करेगा। लेकिन उन दिनों में बाबा घूमता था बिहार में। *बिहार तो 'बिगिन्स विथ बी' और 'बी स्टेण्डस् फॉर' बोगस'।* बाबा भी 'बिगिन्स विथ बी' वह भी *बोगस है। इस वास्ते मैंने जाहिर तो किया* कि सूक्ष्म में आया, लेकिन कई स्थूल कार्य *करने पड़े। वे सारे किये, क्या समझ कर?* 'प्रवाह-पतित कर्म कुर्वन नाप्नोति किल्बिषम्।' *प्रवाह-पतित जो काम होता है वह करने वाले* में दोष नहीं लगता है तो दोष नहीं लगा होगा *बाबा को। फिर बाबा आया ब्रह्मविद्या मंदिर* में। तीन-चार साल से यहां रहता है क्षेत्र-*सन्यास लेकर, तो यहां भी कई स्थूल वस्तुओं* में पड़ना पड़ा। स्थूल चर्चा कई करनी पड़ी। *यह भी प्रवाह-पतित समझकर किया।* आठ-साढ़े आठ साल बीत गये। तो बाबा ने सोचा *ठीक है यह कि दोष न लगा हो, परन्तु सूक्ष्म* अभिध्यान की जो शक्ति है, वह तब तक *प्रकट नहीं होगी,* जब तक अधिक सूक्ष्म में प्रवेश नहीं होगा। तो फिर मैंने सोचा कि आगे *बोलना* बन्द करना ही होगा।

आप बापू की कुटी में जाइये, वहां तीन बन्दर देखने को मिलेंगे। एक के कान बन्द हैं एक की आंखें बन्द हैं, एक का मुंह बन्द है। उनमें से दो बन्दर बाबा हो रहा है अभी। यानी बोलना बन्द करेगा और कान तो भग-वान ने बन्द किया ही है। बाबा बहरा हुआ तो दो-तीन कर्णमणि (इयरफोन) उसके पास भेजे गये। बाबा ने कर्णमणि लगाकर देखा तो उत्तम सुनाई देता था। तो दो-चार, दस-बारह दिन लगाकर देखा और छोड़ दिया। क्या समझकर? भगवत् कृपा से कान गया, तो मणि किसलिए लगाना। तो भगवत् कृपा समझकर एक बन्दर तो बाबा बन गया। अब दूसरा बन्दर मुंहवाला बन रहा है। तीसरा बन्दर, आंखवाला नहीं बन रहा है। उसके बदले हाथ काट रहा है। बन्दर से पूछा जाये कि तेरे आंख कटने में ज्यादा नुकसान है या हाथ? तो वह कहेगा हाथ। हाथ के द्वारा *लेखन नहीं होगा, उसका अर्थ हाथ बन्द।* आंख अभी कायम रखी है। किसलिए? इस-*लिए रखी है कि जो कुछ गांधी स्नेही,* नियमित और पर पन्द्रह दिन में एक बार या महीने में एक बार या नियमित रूप से मुझे

पत्र लिखते हैं, और कुछ अनियमित अपनी आवश्यकता के अनुसार लिखते हैं, उन पत्रों का जवाब तो मैं देता नहीं लेकिन पत्र पढ़ लेता हूं और उस पर थोड़ा अभिध्यान करता हूं। उन पत्रों में जो सूक्ष्म विचार पेश किये होते हैं, जीवन की गाठें वगैरा खोली होती हैं, उस पर अभिध्यान शक्ति का असर होता है। और वह चीज पहुंच जाती है लिखनेवाले के पास। अब जबकि बोलना बन्द करूंगा तो जिनके पास रिसीविंग सेट नहीं होगा उनके पास भी पहुंच जायेगा। वह आक्रमणकारी होगा, धक्का देकर पहुंच जायेगा जिसने लिखा उनके पास। उनका अनुभव होगा।

लेकिन एक दस साल की लड़की ने सुन्दर प्रश्न पूछा है—प्रश्न क्या कथन है वह कि बाबा बोलेंगे नहीं, लेकिन पढ़ेंगे तो क्या उनके चित्त में खलबलाहट नहीं होगी? इतना सुन्दर विचार है यह बाबा को बचाने के लिए। पढ़ता रहेगा तो यहां चित्त में विचार पैदा होगा। इस वास्ते पढ़ना क्यों नहीं बन्द करता। जो पत्र चलते हैं उसके लिए यह है। उनमें भी यह जो पूछा है उसका उत्तर है। उन पत्रों में जो वाहियात मजकूर होता है वह बाबा पढ़ता नहीं। बाबा के साथी 'अन्डरलाइन' कर देते हैं कितना पढ़ना चाहिए वह उतना ही बाबा पढ़ता है। कल कोई अगर पालिटिक्स लिख कर पत्र भेजेगा, तो मेरे साथी उस पर अन्डर लाइन नहीं करेंगे तो पढ़ने की जरूरत नहीं रहेगी। यह जो लिखा है उस लड़की ने अत्यन्त सुन्दर सुझाया है। उसका मर्म बाबा समझ गया है। उसके लिए उचित योजना भी बाबा ने कर रखी है। तो वह जो 8-9 साल से चला वह चीज पूरी होगी साल भर में। सवाल यह है कि एक साल क्यों? ऐसे कठिन आध्यात्मिक कार्य में अनुभव के आधार पर आगे जाना होता है। 'मारे एक डगलु बस थाम' एक छोटा-सा डगला है यह कितना छोटा? एक साल सिर्फ। इस वास्ते आगे का सोचा नहीं। सम्भव है कि आगे भी जारी रह सकता है। वह अनुभव के आधार से जो तय होगा, वह होगा। इसलिए अनुभव के लिए यह एक साल की मर्यादा रखी है।

आखिरी एक बात कहकर समाप्त करता हूं, मान लेता हूं फिलहाल कि यह मेरा आखिरी व्याख्यान है। आज तक अनेक व्याख्यान हैं। आज तक अनेक व्याख्यान हुए अनेक दफा बातचीत हुई, व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से हुई होगी, उसमें विरोधी विचार के खण्डन के लिए कई दफा वाणी के द्वारा प्रहार भी किये होंगे। और कई स्नेहियों से, साथियों से विनोद के तौर पर क्यों न हो प्रहार किया होगा, उसके, लिए आज मैं सबसे हृदयपूर्वक क्षमा मांगता हूं। सबको प्रणाम, जयजगत!

---

१२ फरवरी तक

उपवासदान पखवाड़ा

□

उपवासदान दीजिये

समाचार

बिहार भूदान यज्ञ समिति के अध्यक्ष बद्रीनारायणसिंह ने बताया कि बिहार में अप्रैल से अक्टूबर, ७४ तक भूदान के चालीस हजार एकड़ का वितरण हुआ है और सात हजार एकड़ भूदान-भूमि बांटी गयी है। बद्री बाबू ने बताया कि भूदान के दानपत्रों के मुताबिक भूमि बांटने के साथ-साथ राजस्व संबंधी अनेक कार्यकलाप हैं जिसका असर वितरण पर पड़ता है। भूमि सुधार उपसमाहर्ताओं द्वारा दानपत्रों की सम्पुष्टि, अंचलाधिकारियों के द्वारा वितरित भूदान भूमि का लगान निर्धारण तथा सर्वे में भूदान में प्राप्त भूमि के खतेन इन्दराज में सुधार आदि अनेक ऐसे काम हैं। अगर ये काम साथ-साथ होते जायें तो वितरण की गति दुगुनी से भी ज्यादा हो सकती है तथा ज्यादा प्रामाणिक एवं असरदायी भी होगी।

उन्होंने बताया कि भूमि सेवी कानून को संवैधानिक संरक्षण देना आवश्यक है। बिहार में सीलिंग एक्ट की धारा २८ के अनुसार सेवी का प्रावधान है। सेवी में एक एकड़ से पांच एकड़ तक जमीनवालों को बीघा में कट्ठा यानी बीसवां भाग, पांच एकड़ से दस एकड़ वालों को बीघा में दो कट्ठा यानी दसवां भाग तथा बीस एकड़ से अधिक भूमिवालों को छठा भाग भूमि देने की व्यवस्था है। सीलिंग एक्ट के अनुसार २० से अधिक एकड़ रखनेवाले लोग कागज के अनुसार नहीं के बराबर मिलेंगे। फिर भी सभी भूमिपति कम से कम बीघा में एक कट्ठा तो देंगे ही।

विनोबाजी की बिहार यात्रा के अवसर पर बीघा-कट्ठा आंदोलन के समर्थन में तत्कालीन मुख्यमंत्री स्व० डा० श्रीकृष्णसिंह के समय विधानसभा ने सीलिंग कानून की धारा २८ के रूप में इसे पारित किया था। श्री सिंह ने कहा कि केन्द्रीय सरकार ने इस कानून की इस विशेष धारा २८ (सेवी) को संरक्षण नहीं दिया है। सीलिंग कानून में कागजी पैबीदगी के फलस्वरूप पर्याप्त जमीन न मिलने के कारण इस सीधे-सादे सेवी कानून को कार्यान्वित करने के बारे में आज भी बिहार सरकार सोच सकती है तथा तदनुसार केन्द्रीय सरकार को कह सकती है।

हिमालय सेवा संघ की कार्यसमिति की हाल ही नयी दिल्ली में हुई बैठक में श्री उच्छ्रंगराय नवलशंकर ढेबर को संघ का अध्यक्ष बनाया गया है। इसके पूर्व १९७२ से श्री जयप्रकाशनारायण इस पद पर काम कर रहे थे। सन २४ से २६ फरवरी तक अरुणाचल, नागालैंड, मणीपुर, मेघालय, मिजोरम, त्रिपुरा, असम और बंगाल के कार्यकर्ताओं का एक सम्मेलन गोहाटी में कर रहा है।

कानपुर जिला सर्वोदय मंडल के अध्यक्ष एवं स्वतंत्रता संग्राम सेनानी विनय कुमार भाई का मकर-संक्राति के दिन टिटनिस की बीमारी से ६२ साल की आयु में देहान्त हो गया। उनका पूर्व नाम ठाकुर दुर्गासिंह था। वे सन ४० और ४२ में जेल गए थे तथा पिछले ४ वर्षों से सर्वोदय आंदोलन में लगे थे। गत अक्टूबर में बिहार आंदोलन के सिलसिले में दिल्ली में अधिक उपवास करके गिरफ्तार होनेवाली उत्तरप्रदेश की टोली में भी वे शामिल थे।

अखिल भारतीय शान्ति सेना मण्डल की सूचना के अनुसार शांतिदिवस तथा गांधीस्मृति के लिए शांतिदिवस बिल्ले १० पैसे प्रति या बिना सेफ्टीपिन के ६ रुपए सैकड़ा (कम से कम २०० लेने पर) की दर से उपलब्ध हैं जो राजघाट वाराणसी-1 स्थित उनके कार्यालय से प्राप्त किए जा सकते हैं।

उत्तर प्रदेश सरकार ने पर्वतीय क्षेत्र के वनों में श्रमिकों की न्यूनतम मजदूरी की दरें निर्धारित कर दी हैं। 12 फुट लम्बा, 10 इंच चौड़ा और 5 इंच मोटा चौरस मानक स्लीपर चीरने के लिए अब श्रमिक को ३ रु० के स्थान पर ६ रु० मिलेगा। देवदार के स्लीपर की दर साढ़े सात रुपया है। लाली का काम करनेवाले कुशल श्रमिक को साढ़े आठ रुपया और अकुशल श्रमिक को छः रुपया प्रतिदिन तथा दुकान की मजदूरी २५ पैसा के स्थान पर ५० पैसे प्रति चौकी होगी। लीसा निकालने की न्यूनतम मजदूरी ४५ रुपये प्रति कुन्तल निर्धारित की गयी है। रियायत दर पर राशन की पुरानी दरें लागू रहेंगी। नयी दरों के विरोध में ठेकेदारों का आंदोलन प्रभावशून्य हो गया है, क्योंकि श्रमिकों ने पुराने ठेकों में भी नयी दरों की मांग की है। राज्य सरकार ने यह कदम 'चिपको' आंदोलन की मांग पर उठाया और इससे उत्तराखण्ड के १ लाख वन श्रमिक लाभान्वित होंगे।

मध्य प्रदेश सेवक संघ का वार्षिक मिलन आगामी ८ से १० मार्च तक ग्राम भारती आश्रम, टवराई (धार) में होगा इस अवसर पर गांधीजी की अंग्रेज शिष्य सुश्री सरलाबहन 'स्वच्छ जीवन : स्वस्थ जीवन' पर प्रवचन देंगी और बैजनाथ महोदय उनके जीवन-अनुभव पर निबन्ध प्रस्तुत करेंगे। भोजन और निवास की व्यवस्था मध्य प्रदेश सेवक संघ की ओर से रहेगी।

गत ५-६ जनवरी, ७५ को उज्जैन में अ० भा० तरुण शांति सेना सम्मेलन के अवसर पर तरुण शान्ति सेना की राष्ट्रीय समिति का संयोजक बिहार के कुमार शुभमूर्ति को सर्वसम्मति से चुना गया। राष्ट्रीय समिति में सर्वश्री अरुणकुमार चौबे (उत्तरप्रदेश), दिनकर चौधरी (महाराष्ट्र), राजेन्द्र दवे (गुजरात), वेणुगोपाल (केरल), सत्यनारायण शर्मा (मध्यप्रदेश), [illegible] भार्गव (उत्तरप्रदेश), और रमण कुमार (बिहार) को लिया गया है।

भारतीय लोकदल के अध्यक्ष चौधरी चरणसिंह ने ६ मार्च के जन-प्रदर्शन के लिए अभियान में सक्रिय सहयोग का आश्वासन दिया है। जन-प्रदर्शन समिति के संयोजक श्री रूपनारायण से बातचीत के दौरान चौधरी साहब ने हफ्ते में दो दिन इस प्रदर्शन के लिए ही प्रवास करने का संकल्प किया। प्रदर्शन के लिए विशेष प्रयास की दृष्टि से पश्चिमी उत्तरप्रदेश के १६ जिलों को चुना गया है जहां से पांच लाख प्रदर्शनकारियों के आने की संभावना है। २३ फरवरी से ४ मार्च तक के दिल्ली के आसपास के अपने प्रवास के दौरान जयप्रकाश नारायण भी कुछ समय के लिए पश्चिमी उत्तर प्रदेश में प्रवास करेंगे।

जयप्रकाश नारायण को सन ४ से ७ जनवरी के उनके मध्यप्रदेश के चार दिवसीय दौरे में विभिन्न स्थानों पर १ लाख २१ हजार

२१३ रुपये की थैलियां समर्पित की गयी हैं। ये थैलियां जे० पी० को भोपाल, इन्दौर, उज्जैन, देवास मे उनका स्वागत करते हुए भेंट की गयी। इसमें मध्यप्रदेश सर्वोदय मंडल के द्वारा इन्दौर, ग्वालियर, छतरपुर, खंडवा, टीकमगढ़, खरगोन, गुना, सतना, होशंगाबाद रायगढ़, भोपाल जिलों मे एकत्र १६,०५६ रुपये की राशि भी सम्मिलित है।

हरियाणा के लोकसेवक फुलिया भगत ने १९७४ के अन्त तक १६ वर्षों मे २२१३६ मील की पदयात्रा पूरी कर ली और १६८१६ रुपये ५ पैसे का सर्वोदय साहित्य बेचा। १ अप्रेल ५६ से आरंभ अपनी इस यात्रा मे वे ८६१८ गावों में गये और २ लाख से ज्यादा छात्र-छात्राओं मे सर्वोदय विचार का प्रचार किया। सन् ७४ मे वे १०६७ मील चले और १६२५ रुपये ५ पैसे का साहित्य बेचा जबकि इसी साल के दिसम्बर माह मे ८६ मील की यात्रा की और १२३ रुपये ५ पैसे का साहित्य बेचा।

जयपुर गांधी शांति प्रतिष्ठान मे आयोजित एक विचार-सभा मे मानव सेवा संघ की कार्यवाहक प्रधान प्रोफेसर देवकी देवी ने सोयी हुई मानवता को जगाने के लिए व्यक्ति-व्यक्ति के जीवन में क्रांति लाने की आवश्यकता प्रतिपादित की। उन्होंने कहा कि व्यक्तिगत कल्याण और सुन्दर समाज निर्माण हेतु मानव की शक्तियों को जागृत करना होगा। केन्द्र के सचिव रामेश्वर विद्यार्थी ने आगन्तुकों का स्वागत किया। भजन व प्रार्थना का क्रम भी चला।

जयपुरमे प्रदेश के विभिन्न महाविद्यालयों के छात्र संघों के अध्यक्ष तथा सचिवों की एक बैठक मे जयप्रकाशनारायण के सपूर्ण क्रांति के आंदोलन को चलाने हेतु राजस्थान प्रदेश की सदर्य छात्र संघर्ष समिति का गठन किया गया। समिति में सभी जिलों के २६ सदस्य हैं तथा विमल चौधरी और पन्नेसिंह संयोजक मनोनीत किये गये। सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष सिद्धराज ढड्ढा ने बैठक की अध्यक्षता की। छात्र नेताओं ने सर्वसम्मति से गणतत्र दिवस पर स्वतत्र रूप से जनतत्र दिवस मनाने का निश्चय पूरा किया। राज्य विधान सभा के आगामी अधिवेशन पर प्रदेश के सभी महाविद्यालयों के छात्र-प्रतिनिधि अपनी मांगों के समर्थन मे प्रदर्शन करेंगे। एक अन्य निश्चय मे प्रदेश के आकाशवाणी केन्द्रों पर भी सरकार परस्त नीति के विरोध मे प्रदर्शन आयोजित किये जायेंगे। श्री ढड्ढा ने संपूर्ण क्रांति आंदोलन को प्रदेश में चलाने की आवश्यकता प्रतिपादित की तथा इसे राजस्थान की जन मुक्ति का आंदोलन बताया। उन्होंने महगाई भ्रष्टाचार, बेरोजगारी आदि के खिलाफ संघर्ष हेतु युवा शक्ति का आह्वान किया।

टीकमगढ़ मे तालदरवाजा स्थित ग्राम स्वराज्य कार्यालय मे जिले के ६० प्रमुख समाजसेवियों की उपस्थिति और विष्णुमित्र एडवोकेट की अध्यक्षता मे सर्वोदय-सेवक चतुर्भुज पाठक के सयोजकत्व मे २७ सदस्यों की जिला जन-संघर्ष समिति का गठन हुआ। इस अवसर पर मध्यप्रदेश जन संघर्ष समिति के सयोजक गणेशप्रसाद नायक और झांसी जिले के सर्वोदय सेवक लोकेन्द्र भाई का मार्गदर्शन प्राप्त हुआ।

उत्तरप्रदेश मे 15 और 17 जनवरी के कार्यक्रम सारे प्रदेशमे उत्साहपूर्वक होने के बाद 30 जनवरी को राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की निर्वाण-तिथि और शहीद दिवस मनाया गया। इस दिन प्रत्येक जिला केन्द्र मे तीसरे पहर मौन-जुलूस और सायकाल ग्राम सभा का आयोजन हुआ। मौन जुलूस मे छात्र-युवा संघर्ष समिति तथा जन संघर्ष समन्वय समिति के बैनर्स ही थे, भिन्न दलों या सगठनों के नहीं। सम्पूर्ण क्रान्ति विषयक जो नारे और ज्ञापन मे उठाये गये मुद्दों के जो सूत्र प्रातीय समिति द्वारा निर्धारित किये गये, इन्हीं के आधार पर बैनर्स और प्लेकार्ड्स बनवाये गये। ग्राम सभाओं मे सकल्प भी लिया गया।

सर्व-सेवा संघ के महामन्त्री ठाकुरदास बग मध्यप्रदेश मे ६ से २३ फरवरी तक दौरा करेंगे। वे रीवा, सतना, जबलपुर दमोह सागर, छतरपुर, टीकमगढ, दतिया, शिवपुरी गुना, शाजापुर, इन्दौर, सेंधवा, खरगोन, खंडवा, होशंगाबाद, बिलासपुर, रायपुर, और दुर्ग जिलों मे जायेंगे। दौरे का उद्देश्य बिहार जन-आंदोलन के समर्थन और सम्पूर्ण क्रांति हेतु जनता को सगठित और जाग्रत करना है। श्री बग के साथ प्रदेश मंडल के मन्त्री इन्द्रलाल मिश्र भी रहेंगे। साथ मे सम्पूर्ण क्रांति का साहित्य भी उपलब्ध रहेगा।

अगला अखिल भारत सर्वोदय सम्मेलन १४ से १६ मार्च ७५ तक नवदीप धाम में होगा। उद्घाटन रगनाथ रामचन्द्र दिवाकर करेंगे। चैतन्य महाप्रभु का जन्मस्थान नवदीप हावडा से ६० किलोमीटर दूर गगा किनारे है।

रायपुर मे तरुण शांति सेना का गठन किया गया है जिसके संयोजक सर्वसम्मति के रमाशकर तिवारी चुने गये। संयोजन सभा की अध्यक्षता जिला जनसंघर्ष समिति के सह-संयोजक हर प्रसाद अग्रवाल ने की।

उदयपुर मे लायन्स क्लब द्वारा आयोजित कार्यक्रम मे डा० भरत, प्रमुख कार्यकर्ता, गांधी शान्ति प्रतिष्ठान केन्द्र ने बिहार आंदोलन की समाजशास्त्रीय पृष्ठभूमि को स्पष्ट करते हुए, अपने शोध अध्ययन के निष्कर्ष प्रस्तुत किये। नवम्बर मे निवर्तमान शिक्षा उपनिदेशक श्री नारायणलाल वर्मा ने अपने निवास पर मित्र मडली की गोष्ठी मे बिहार आन्दोलन पर विचार विमर्श व प्रश्नोत्तर का कार्यक्रम रखा। लायन्स क्लब, उदयपुर द्वारा उदयपुर से २२ मील दूर गोगुन्दा मे एक सप्ताह का नेत्र चिकित्सा शिविर चलाया गया जिसमे ५४ आख के आपरेशन तथा ३२५ रोगियों के सामान्य इलाज हुए। शिविर विशेषकर आदिवासियों के लाभ के लिए था।×

वार्षिक शुल्क—१२ रु० विदेश ३० रु० या ३५ शिलिंग या ५ डालर, प्रति अंक का मूल्य ३० पैसे।
प्रभाष जोशी द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एव ए० जे० प्रिंटर्स, नई दिल्ली-१ में मुद्रित।

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का साप्ताहिक मुख पत्र
नई दिल्ली, सोमवार, १० फरवरी '७५

शोषित-पीड़ित वर्ग में
आकांक्षा जगाना है
—महावीर भाई

❋

डेमोक्रेसी सब दूर
बस 'मालीर-पानी'
—विनोबा

❋

आन्दोलन के कवच
पक्ष तथा कार्यक्रम

पटना सिटी स्टेशन कांड की जांच रपट

पत्र और पत्रांश

दलों की सरकारों से मदद

तटस्थता के कारण बहुत राजनीतिक दलों की प्रान्तीय सरकारों से हमने मदद ली है। सबसे अधिक मदद केन्द्रीय सरकार से ली गयी है, चाहे वह भूदान के काम के लिए हो, ग्रामदान के लिए हो या खादी-समर्पण के लिए हो। और उन्होंने भी खुले तौर पर लगातार हमारी मदद की है। लेकिन आज उसी दल की जड़ उखाड़ने के लिए हमारे साथी दृढ़-प्रतिज्ञ हैं। यह काम अगर कोई राजनीतिक दल करे तो कोई बात नहीं। लेकिन हमारे साथियों का इस तरह का आचार क्या नैतिकता की कसौटी पर खरा उतरता है? मित्रो! क्या इस तरह के आचार से हम भविष्य में किसी भी दल के विश्वास योग्य बन सकेंगे ?

धर्मशाला — दयानिधि पटनायक

सर्वोदय और अनुदान

जयप्रकाश नारायण द्वारा चलाये गये आंदोलन का विरोध करने का कार्य शासनारूढ़ दल, प्रधान मन्त्री तथा कम्युनिस्ट पार्टी के अतिरिक्त 'सर्वोदय' आंदोलन के कुछ प्रमुख कार्यकर्ता भी कर रहे हैं। प्रधान मंत्री ने गत कुछ दिनों से आचार्य विनोबा से भेंटकर कुछ हासिल करने का प्रयास किया, किन्तु विनोबा ने एक वर्ष का मौन धारण कर लिया। केवल "श्रीराम" ही लिखने का निर्णय कर वे बास और बाँसुरी दोनों से अलग हो गये। फिर भी सर्वोदय कार्यक्रम में से कुछ लोग सरकार ने प्राप्त कर लिये हैं, जिनका उपयोग वह अपने मनचाहे तरीके से कर रही है तथा ये लोग कुल्हाड़ी के बेंट साबित हो रहे हैं।

सर्वोदय के एक प्रमुख कार्यकर्ता डा. दयानिधि पटनायक भी एक ऐसे लोक-सेवक हैं, जो जयप्रकाश के विरोध का नाटक, अभिनीत करने का प्रयास कर रहे हैं। एक पत्रक उन्होंने धर्मशाला (हिमाचलप्रदेश) से अभी प्रकाशित किया है, जिसमें सर्वोदयजनों से इसलिए जे. पी. के आंदोलन से अलग रहने का आग्रह किया है कि यह आंदोलन सरकार अथवा सरकारों के विरुद्ध है, तथा सरकारों से सर्वोदय को अनुदान मिलता है। यदि सरकारों का विरोध किया गया तो सर्वोदय के लिए मिलनेवाली सरकारी धनराशि बन्द हो जायेगी। सत्तारूढ़ दल के इशारे पर देश के करोड़ों लोगों के भविष्य के साथ यह खिलवाड़ खतरनाक है। डा. पटनायक जो अनुदान की राशि पाते हैं, वह सरकार का माल नहीं, देश की जनता का धन है। जनता के हितों की उपेक्षा कर चांदी के चन्द टुकड़े पाते रहने की आकांक्षा में सर्वोदय के सरकारी लोग जो उपक्रम कर रहे हैं, उससे उनके प्रति अश्रद्धा का भाव समाज में जागृत होना स्वाभाविक है। अच्छा हो डा. पटनायक व उनके सभी साथी अपनी भूमिका पर पुनः विचार करें।

रुद्रपुर (नैनीताल) — सुभाषचन्द्र चतुर्वेदी

सर्वोदय के साथियों से

देश की आज की विषम परिस्थितियों में जो जन-आन्दोलन बिहार से प्रारम्भ हुआ है और जिसका नेतृत्व वयोवृद्ध, अनुभवी एवं विशाल व्यक्तित्व-युक्त नेता जयप्रकाश नारायण को करना पड़ रहा है, उनकी अपनी कुछ उपलब्धियां संभावित हैं जो समाज हितकारी साबित होंगी। ऐसी परिस्थिति में सभी सर्वोदय विचार के साथियों का फर्ज हो जाता है कि गम्भीरतापूर्वक विचार करें एवं तन से, विचार से और बुद्धि से आन्दोलन के लिए मददगार साबित हों। जिनकी मानसिक तैयारी प्रत्यक्ष सहयोग की न हो उनका समर्थन ही काफी होगा। जिनके लिए समर्थन देना भी सम्भव न हो उनसे इतना अवश्य ही अपेक्षित होगा कि आन्दोलन के पक्ष में वातावरण प्रतिकूल बनने से बचायें। विचार एवं कार्य-साथी के नाते आन्दोलन के पर्यवेक्षक का काम भी करना अनुपयुक्त न होगा।

आन्दोलन के साथी के नाते यह तो आप सब जानते ही हैं कि समय तथा परिस्थिति के अनुसार आन्दोलन के स्वरूप भी परिवर्तित हुआ करते हैं। इसलिए आन्दोलनकर्ताओं को उतना परिवर्तन स्वीकार करने की तैयारी सदैव रखनी चाहिए। जहाँ कहीं किसी मुद्दे पर आपसी मतभेद हो उस विषय में आपस में ही बैठकर चर्चा होनी चाहिए और सहमति न हो, तब तक एक दूसरे को हार मानकर निराश भी नहीं होना चाहिए। इसी में से आन्दोलन गतिशील हो सकेगा।

हमारे काम में सभी मित्रों का सहयोग सहानुभूति आवश्यक है। एक भी साथी किसी कारणवश आने से टूटता है तो वह अकेले की ही शक्ति से अलग नहीं होता है, वरन अनेक की शक्ति उसके साथ जुड़ी होती है और उन सभी शक्तियों के साथ ही वह विलग होता है। काम थोड़ा कम हो तो हर्ज नहीं पर हम छिन्न-भिन्न न हो जायें। पूर्व प्रयास के बाद भी यदि परिवार को टूटने से न बचाया जा सके तो चिन्ता नहीं परन्तु वे टुकड़े यदि एक दूसरे को तोड़नेवाले साबित होंगे तो वह चिन्ता का विषय अवश्य ही बन जायेगा।

छतरपुर — शिवनाथ शर्मा

सम्पादक

राममूर्ति : भवानी प्रसाद मिश्र
कार्यकारी सम्पादक : शारदा पाठक

वर्ष २१   १० जनवरी, '७५   अंक १९

१९ राजघाट, गांधी स्मारक निधि, नई दिल्ली-११०००१

सर्वोदय पक्ष

सर्वोदय विचार के तात्विक और व्यावहारिक पहलुओं का जनता में साल-दर-साल अधिक परिचय और प्रचार हो सके इस लिए बापू की पुण्य-तिथि 30 जनवरी से श्रद्धांजलि दशी तिथि 12 फरवरी तक सर्वोदय पक्ष अर्थात एक पूरा पखवाड़ा मनाया जाता है। सारे देश में सर्वोदय मंडल प्रार्थना, प्रभातफेरियां, अखण्ड कताई, शराबबन्दी, खादी-प्रचार, अस्पृश्यता निवारण आदि रचनात्मक कार्यक्रमों के साथ साथ गांधीविचार सम्बन्धी साहित्य को भी जनता तक पहुंचाते हैं और जहां-तहां विचार-गोष्ठियों का भी आयोजन किया जाता है। इस वर्ष भी ये सारे ही कार्यक्रम देश के विभिन्न प्रान्तों में सर्वोदय मंडलों द्वारा कम ज्यादा तीव्रता के साथ आयोजित किये गये। हम 'कम-ज्यादा तीव्रता' इसलिए कह रहे हैं कि लोगों का मन इस वक्त भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलनों के कारण बटा हुआ है। गांधीजी के रहते हुए भी जिन दिनों आंदोलन तीव्र होता था, उन दिनों रचनात्मक कार्यक्रमों में कुछ मन्दी आ जाती थी। देश में फैले हुए भ्रष्टाचार आदि के विरोध में इस समय बिहार में जो आंदोलन हो रहा है, उसकी ओर सभी लोग विभिन्न दृष्टिकोणों से देख रहे हैं। ज्यादातर सर्वोदय विचार-वादी लोग आंदोलन के साथ सक्रिय रूप से जुड़े हुए हैं। कुछ लोग तटस्थ हैं, और कुछ लोग इसका विरोध भी कर रहे हैं। कुछ ऐसे भी हैं जो सहानुभूति रखते हैं किन्तु सक्रिय रूप से आंदोलन में लगे नहीं हैं। तथापि लोकसेवकों में ऐसा तो कोई भी नहीं है, जो उत्तर तीन-चार वर्षों में से किसी वर्ष में न आता हो। ऐसी अवस्था में सर्वोदय पखवाड़ा एक तरह से आंदोलन को तीव्र रूप देने की उपाय योजना और अमल से ही ज्यादा सम्बन्धित रहा। सभी प्रान्तों में अब तक संघर्ष समितियों का गठन हो चुका है और पिछले दिनों इस दिशा में बिहार के अतिरिक्त उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश और बम्बई में जयप्रकाशजी के दौरे के बाद पर्याप्त प्रगति भी हुई।

रचनात्मक कार्यों की हद तक देश में मद्य-निषेध सम्बन्धी गतिविधियां बढ़ी हैं। पू० विनोबा ने राजस्थान में चल रहे शराब-विरोधी आंदोलन के संचालन का भार गांधी निधि के अध्यक्ष श्री श्रीमन्नारायण को सौंप दिया है। इस पखवाड़े में वे राजस्थान गये और वहां शराब-विरोध के सम्बन्ध में कैसे आगे बढ़ा जा सकता है, इसकी सम्भावनाओं को समझा और अब आगे के कार्यक्रम की रूपरेखा बनायी जा रही है। दूसरा रचनात्मक बड़ा कार्यक्रम स्त्री-शक्ति जागरण का कुमारी निर्मला देशपांडे के समर्थ मार्गदर्शन में चल रहा है। जगह-जगह महिलाएं पदयात्रा करती हुई, देश की सोयी हुई शक्ति को जगाने में लगी हैं। सरला बहन ने भी इस कार्यक्रम में पिछले वर्ष भर बड़ी तत्परता से काम किया है और इस पखवाड़े में भी वे इस काम को कर रही हैं। तीसरा रचनात्मक कार्यक्रम साहित्य-प्रचार का हुआ है। यह भी अधिकतर उन्हीं टोलियों के द्वारा हुआ जो पदयात्रा करती हुई स्त्री शक्ति जागरण का काम कर रही हैं। साहित्य प्रचार का काम उन पदयात्रियों के द्वारा भी बहुत अच्छी तरह किया जा रहा है जो देश के विभिन्न भागों में विशेषतः महाराष्ट्र में गीता वर्ष होने के कारण पू० विनोबा के गीताई और गीता-प्रवचन को लोगों तक पहुंचा रहे हैं।

हम आशा करते हैं कि सरकार जयप्रकाशजी के नेतृत्व में चल रहे आंदोलन के औचित्य को समझेगी और भ्रष्टाचार आदि जिन बातों को वह स्वयं देश में फैला हुआ स्वीकार करती है, दूर करके समस्त लोकसेवकों को रचनात्मक शक्ति का लाभ उठायेगी। जब तक जनता बेकारी, भुखमरी और महंगाई आदि की परेशानियों में पड़ी हुई है, किसी भी लोकसेवक का कर्तव्य पहले इन्हें दूर करना बन जाता है और फिलहाल वह एक ओर इन खराबियों को दूर करने और दूसरी ओर सरकार का ध्यान यदि और किसी उपाय से सम्भव नहीं है तो आंदोलन के द्वारा इस ओर आकृष्ट करने में लगा हुआ है। सर्वोदय विचार में सत्याग्रह का एक बहुत बड़ा स्थान है। और सच कहा जाये तो सत्याग्रह का अन्तिम उद्देश्य सहयोग की संभावनाएं उत्पन्न करना ही है। हम लोग इन दिनों सम्पूर्ण रूप से गांधी के सत्याग्रह सिद्धान्तों का अनुसरण करते हुए सहयोग की परिस्थितियों को उत्पन्न करना चाहते हैं। इस उद्देश्य को सफल बनाने की दिशा में चिन्तन और मनन उन सब लोकसेवकों का कर्तव्य हो जाता है जो आंदोलन में लगे हुए हैं और जो लोकसेवक आंदोलन में लगे हुए नहीं हैं उनका कर्तव्य पहले की तरह ही रचनात्मक कामों में पूरे मन से जुटे रहना है। इस वर्ष के सर्वोदय पखवाड़े में शराबबन्दी, स्त्री शक्ति जागरण और गांधी साहित्य प्रचार के माध्यम से उन्होंने इसे किया है और अभी कर रहे हैं। उनका रचनात्मक कार्यक्रम आंदोलन के लिए शक्तिदायक बने ताकि जल्दी से जल्दी सहयोग के वांछित वातावरण का निर्माण हो सके।

मनमोहनदासजी

सेठ गोविन्ददास के निधन को साल भी नहीं बीता कि उनके ज्येष्ठ पुत्र मध्यप्रदेश सरकार के उपमंत्री मनमोहनदास का देहान्त ४ फरवरी को हो गया। हम उनके परिवार के प्रति हार्दिक समवेदना व्यक्त करते हुए दिवंगत आत्मा की सद्गति की प्रार्थना करते हैं।

भवानी प्रसाद मिश्र

उपवासदान

यह जो दान मिलेगा, उसके तीन फायदे होंगे। जो उपवास करेगा, उसे अध्यात्मिक लाभ होगा। क्योंकि वह उस दिन चिन्तन-मनन करेगा और एक दिन भगवान् के नजदीक रहेगा, इस वास्ते उसे अध्यात्मिक लाभ होगा; उपवास का अर्थ ही है, भगवान् के नजदीक रहना। केवल खाना छोड़ने को उपवास नहीं कहते। इसलिए उपवास से आध्यात्मिक लाभ होता है। दूसरा, शारीरिक लाभ होता है। प्राकृतिक उपचारवालों का कहना है कि महीने में कुछ-न-कुछ उपवास जरूर किया जाये। तो महीने में एक उपवास से प्राकृतिक स्वास्थ्य भी अच्छा रहेगा। तीसरा लाभ यह है कि इसके जरिये जो दान दिया जायगा वह पवित्र दान होगा। ऐसा पवित्र दान सर्व सेवा सघ को मिलेगा, जो उसका उपयोग भी अच्छी तरह से होगा। गलत खर्च होने की सभावना कम होगी।

गांधीजी के जाने के बाद, जितनी भी अनेक प्रकार की संस्थाए थी— चरखा सघ, ग्रामोद्योग सघ, नयी तालीम, गो सेवा सघ, भूदान-ग्रामदान का काम करनेवाले कार्यकर्ता, सबका एक संघ बने—समूह बने, वह समूह हमने बनाया, सर्व सेवा सघ। हमने उपवास करके जो बचाया वह दान दे दिया सर्व सेवा संघ को, तो वह पवित्र दान हो जाता है। आज तक हमने अनेकों की मदद ली। समुद्र में अनेक नदियां आती हैं। कोई भी मनुष्य कैसा भी पैसा दे—जिससे जो भी आया और जितना भी आया हमने लिया। उसमें हमने कोई गलती की ऐसा मैं नहीं मानता। वह हमने 'सर्वब्रह्म' की उपासना की। अब निर्मल, स्वच्छ, 'शुद्ध ब्रह्म' उपासना करनी है।

भगवान् दो प्रकार का है : एक 'सर्व' भगवान्, भला, बुरा सब भगवान्; दूसरा है 'शुद्ध' भगवान् स्वच्छ, शुद्ध, निर्मल। उसमें से पहला रूप लेकर हमने आज तक काम किया। सबकी सम्पत्ति जो दान मे मिलती थी, ले ली। अब बाबा ने तय किया है कि शुद्ध भगवान् की सेवा करेंगे। अब सर्वोदय को माननेवाला हर मनुष्य हर महीने एक पूर्ण उपवास करे और उससे जो खर्चा बचेगा वह सर्व सेवा सघ को दान दे। एक दिन की बचत साधारणतया दो रुपया मानी जाये तो साल के २५) होते हैं। ऐसे चालीस हजार दाता मिलें तो सर्व सेवा संघ का खर्च चल सकता है।

इस प्रक्रिया से सर्व सेवा सघ सामूहिक समाधि प्राप्त कर सकता है। हमारे सब समूहों को मिलकर हमने नाम दिया है-सर्व सेवा सघ। हम लोग जो काम कर रहे हैं, सबके सब उपवास करके दान दें।

पवनार (वर्धा) विनोबा
११ सितम्बर १६७३

---

३० जनवरी से शुरू उपवासदान पखवाडा १२ फरवरी तक है। अभी तक संकल्प-पत्र भरकर भेज न पाये हों तो अब भेज दें।

भेज चुके हों तो दूसरों को प्रेरित करें।

सर्व सेवा संघ, गोपुरी, वर्धा

उपवास-दान संकल्प

(तप एवं त्याग का संकल्प)

पूज्य विनोबाजी की सेवा में,

आपने स्वयं अपने से आरम्भ करके सर्वोदय-कार्यकर्ता, सहयोगी तथा सर्वोदय-विचार मे श्रद्धा रखनेवाले सर्वोदय-प्रेमी लोगो का आवाहन किया है कि वे हर महीने में एक दिन का उपवास करके उस दिन के भोजन के बचत की रकम, सर्व सेवा सघ को दान दें।

आपने बताया है कि इससे तिहरा लाभ होगा प्रथम आध्यात्मिक, दूसरा शारीरिक तथा तीसरा पवित्र दान। यह पवित्र दान सर्व सेवा सघ को मिलेगा, तो उसका उपयोग भी सोच-सोचकर होगा।

अत आपके इस आवाहन के अनुसार मैं प्रति माह एक या अधिक बार मे एक पूरे दिन का उपवास करके नीचे लिखे अनुसार बचत सर्व सेवा सघ को देने का सकल्प करता हू/करती हू। मैं यह रकम प्रतिवर्ष, सर्व सेवा सघ, गोपुरी, वर्धा (महाराष्ट्र) को भेजता रहूगा/भेजती रहूगी।

नाम ______________________ हस्ताक्षर

पता ______________________

______________________ दिनाक

उपवास-आरम्भ-तिथि ______________________

बचत की वार्षिक रकम ______________________

भेजने का जरिया ______________________

सर्व सेवा संघ कार्यालय

रकम पहुच ता० सदस्य बनाने वाला ______________________

रसीद नं० पता ______________________

रजिस्टर न० ______________________

होता कि शक्ति का प्रयोग करना आवश्यक है कि नहीं और यदि है तो किस प्रकार की शक्ति का किस हद तक प्रयोग करना है। परन्तु जिलाधिकारी ने या तो अपना सतुलन खो दिया और आतंकित हो गये अथवा उन्होंने सोचा कि उच्चतर अधिकारियों तथा सरकार के सामने अपने आपको 'कठोर अफसर' के रूप में दिखाने का यही अच्छा अवसर है। यह स्मरणीय है कि वे वायरलेस पर निर्देश प्राप्त कर रहे थे, अतः लाठीचार्ज के बाद ही अश्रु गैस छोड़ा और गोलीबारी करना शुरू किया और यह चन्द मिनटों में ही हुआ। गोलीबारी का आदेश दिये जाने के पूर्व कोई निश्चित चेतावनी दी गयी, इसका कोई प्रमाण नहीं मिला है। हम लोगों ने इस विषय में सीधा प्रश्न किया। परन्तु नकारात्मक उत्तर मिला। हां, पत्थर फेंके जाने का प्रमाण भी मिला। कुछ साक्षियों ने स्पष्टतापूर्वक कहा है कि पथराव जिलाधिकारी की अगुआई में होनेवाली पुलिस कार्रवाई के बाद हुआ था। अगर पथराव, लाठीचार्ज के पहले हुआ होता तो पुलिस कार्रवाई, नियंत्रित एवं निम्नतम आवश्यकता की सीमा में उचित होती। परन्तु वर्तमान मामले में हम पाते हैं कि शक्ति का प्रयोग परिस्थिति की अनिवार्य आवश्यकता के बजाय अधिकार और सत्ता की उद्घोषणा के रूप में हुआ। धरना पर बैठे हुए लोग अधिकांशतः समाज के उन गरीब वर्गों के थे जो शारीरिक परिश्रम के द्वारा अपने दैनिक जीवन का निर्वाह करते हैं। अगर उन्हें उत्तेजित नहीं किया जाता और समुचित दूरी पर केवल निगरानी रखी जाती तो हम महसूस करते हैं कि दोपहर तक लोग स्वयं बिखर जाते। अगर सरकारी शक्ति के प्रदर्शन के लिए कोई कार्रवाई जरूरी भी थी तो धरना पर बैठे हुए लोगों की गिरफ्तारी शुरू की जा सकती थी। गिरफ्तारी की प्रक्रिया से ही संभव है लोग बड़ी संख्या में धरना छोड़कर चले जाते। ऐसी परिस्थिति में हम असंदिग्ध रूप से यह मानते हैं कि धरना पर शांतिपूर्वक बैठे हुए लोगों को तितर-बितर करने के लिए शक्ति का प्रयोग न केवल अनावश्यक था, बल्कि कौशल की दृष्टि से भी अबुद्धिमत्तापूर्ण था। हम यह समझ नहीं पाते हैं कि जिलाधिकारी को एक ऐसी स्थिति में हस्तक्षेप करने की जरूरत ही क्यों पड़ी जब श्री मुखोपाध्याय सुबह से ही स्थिति को सन्तोषजनक ढंग से सम्भाल रहे थे। लाठीचार्ज, और गोलीबारी एक ही कार्रवाई के अंग थे और करीब-करीब एक ही साथ ये तीनों बातें हो रही थीं, जो हमारी समझ में नहीं आता। कुछ साक्षियों ने बताया कि पथराव लाठीचार्ज के बाद हुआ और कुछ लोगों ने कहा कि गोलीबारी के बाद। परन्तु गंभीर तथ्य यह है कि लाठी-चार्ज और गोलीबारी के समय में सामान्यतः कोई अन्तर नहीं था। एक के बाद दूसरी कार्रवाई तेजी से हुई और तब साथ-साथ होती रही। अगर हम यह मान लें कि लाठी-चार्ज के कारण ही पथराव शुरू हुआ तो इस बात को समझना हमारे लिए कठिन है कि अश्रुगैस और खासकर गोलीबारी पथराव के फलस्वरूप आवश्यक हुई। क्योंकि गोलीबारी के पहले अलग से और निश्चित रूप से कोई चेतावनी नहीं दी गयी थी इसलिए यह मानना कठिन हो जाता है कि अश्रुगैस छोड़ने का और खासकर गोलीबारी का आदेश पथराव से पैदा हुई परिस्थिति के कारण दिया गया। इन दोनों कार्रवाइयों के बीच की विभाजक रेखा इतनी बारीक है कि भेद का पता नहीं चलता। सभी साक्षियों ने धरना के सम्बन्ध में बयान देते हुए कहा है कि ज्योंही लाठीचार्ज शुरू हुआ, धरना पर बैठे हुए लोग भागने लगे और एक भारी भगदड़ मच गयी। जिलाधिकारी और पुलिस के सामने अब एक भागती हुई भीड़ थी। इस भीड़ के एक हिस्से ने प्रतिक्रिया-स्वरूप पत्थर भी फेंके। परन्तु भागती हुई भीड़ के द्वारा पथराव अगर गंभीर भी होता तो क्या लोगों को गोली से मारने या उन्हें गंभीर रूप से घायल करने का यह औचित्य हो सकता है ?

(२) श्री नारायण देसाई के वक्तव्य की ओर हमने अभी तक संकेत नहीं किया है जो हम अब करेंगे। श्री देसाई को श्री जयप्रकाश नारायण ने पटना सिटी भेजा, जब उन्हें मुख्यमंत्री का संदेश मिला। वे करीब पौने दस बजे पटना सिटी रेलवे स्टेशन पर पहुंचे। स्टेशन के पासवाली घेराबन्दी के स्थान से 'आर्यावर्त' और 'आज' के संवाददाता उनके साथ हो गये। श्री देसाई कहते हैं कि जब वे स्टेशन (मुख्य फाटक) के उत्तरी हिस्से में पहुंचे तो उन्होंने गोलीबारी की आवाजें सुनीं। उन्होंने देखा कि करीब १५-२० व्यक्ति स्टेशन से पूरब लगभग ३०० फुट की दूरी पर से पत्थर फेंक रहे हैं। वे फौरन वहां पहुंचे और लोगों को वैसा नहीं करने की सलाह दी। वे रुक गये। परन्तु गोलीबारी की आवाज सुनायी पड़ती रही। पुलिस अधिकारी श्री ईश्वरी प्रसाद ने जो श्री देसाई के साथ थे, स्टेशन लौटकर स्टेशन के अन्दर जिलाधिकारी से वायरलेस सेट पर (जो वहां पुलिस अधिकारी के पास था) संपर्क करना चाहा। श्री देसाई ने वायरलेस सेट पर जिलाधिकारी को किसी के पास यह संदेश भेजते हुए सुना कि केबिन और पटना सिटी स्टेशन जल रहे हैं। वास्तव में स्टेशन में कोई आग नहीं लगी थी और जब श्री देसाई ने आसपास के लोगों से पूछा कि आग कहां लगी है तो उन्हें बताया गया कि कोई आग नहीं लगी है। आग सिर्फ केबिन में लगी थी। जिलाधिकारी ने पुलिस अधिकारी से कहा कि श्री देसाई को स्टेशन पर ही रखें और वे समय पाते ही उनसे मिलेंगे। श्री देसाई ने प्लेटफार्म पर एक अश्रु गैस का फटा हुआ गोला और पूर्वी केबिन से धुआं निकलते देखा। जिलाधिकारी सी० आर० पी० के जवानों के साथ प्लेटफार्म नं० २ पर खड़े थे। जब जिलाधिकारी ने उन्हें देखा तो उन्होंने उनको अपने पास आने का इशारा किया। जब श्री देसाई जिलाधिकारी के पास पहुंचे तो उन्होंने केबिन में लगी आग की ओर बार-बार संकेत करते हुए प्रश्न किया कि क्या यही उनकी अहिंसा है। उस समय स्टेशन से करीब एक फर्लांग की दूरी पर थोड़े से लोग पटरी पर खड़े थे, कुछ लोग सिगनल के पास खड़े, थे और एक भीड़ पूरब में काफी दूर पर खड़ी थी। उत्तर की ओर मजार (मसानी) पर से कुछ पत्थर आ रहे थे। वे उनकी ओर चिल्लाये और पत्थर फेंकना बन्द करने के लिए हाथ से इशारा भी किया। इस समय जिलाधिकारी ने एक व्यक्ति की ओर संकेत किया जिसने दुबारा पत्थर फेंके थे, और वास्तव में

उसकी ओर गोली का निशाना ले लिया गया था। तब जिलाधिकारी की अनुमति से श्री देसाई ने सरकारी माइक्रोफोन का इस्तेमाल किया और जयप्रकाश के जिन्दाबाद के नारे लगाकर लोगों को पत्थर फेंकना बन्द करने की सलाह दी। इसके बाद वे पूरब की ओर पटरी पर आगे बढ़े। जब वे दक्षिण में स्थित चैनपुरा गाव के सामनेवाले कैबिन के पूर्वी कोने पर पहुचे तो बड़ी संख्या में लोग पटरी पर आ गये। उन्होंने लोगों को समझाया कि वे पटरी पर से हट जायें। उन लोगों ने उनसे गाव चलने का अनुरोध किया जिस पर वे राजी हुए और नीचे दक्षिण (नखासपिंड) की ओर गये। उन्होंने यह नहीं देखा था कि जिलाधिकारी और उनका पुलिस दल पीछे-पीछे आ रहा है। जब वे नीचे पहुचे तो जिलाधिकारी और उनका पुलिस दल भी पहुंच गया और वे पटरी के नजदीक आ गये। उन्हें देखकर भीड में से कुछ लोगों ने उन पर दो-चार पत्थर फेंके। फौरन जिलाधिकारी ने पोजीशन लेकर गोली चलाने का आदेश दिया। श्री देसाई ने घूमकर जिलाधिकारी से निवेदन किया कि गोली न चलायें। वे मान गये। उन्होंने (श्री देसाई ने) पुलिस से अनुरोध किया कि वे उनके पीछे न आयें और वे गांव में चले गये। ऐसा लगा कि जिलाधिकारी और उनका दल उत्तर की ओर गया। उन्होंने गाव में अनेक लोगों को घायल पाया लेकिन कोई लाश नहीं देखी। जब वे पटरी पर लौटे तो उन्होंने देखा कि गोलीबारी फिर हुई है और एक व्यक्ति की गर्दन में गोली लगी है। उसका शरीर काप रहा था। उन्होंने एक अधिकारी से पूछा कि उसका क्या होगा तो उत्तर मिला कि प्रबध किया जा रहा है। उसी समय एक दूसरा व्यक्ति स्ट्रेचर पर लाया जा रहा था। ऐसा लगा कि वह मर चुका है। एक अधिकारी को यह कहते हुए सुना गया कि एक और व्यक्ति नीचे पडा है। किसी के यह पूछने पर कि लाश को ले जाने दिया जाये कि नहीं, एक अधिकारी ने नकारात्मक उत्तर दिया, क्योंकि शव-परीक्षा करनी थी। श्री देसाई का वक्तव्य जो कदमकुआं लौटने पर लिखा गया और श्री जयप्रकाश नारायण को समर्पित किया गया था तथा जिसकी एक प्रति उनके हस्ताक्षर से हमें दी गयी है, हमारे सामने के दूसरे वक्तव्यों से सामान्यतः मिलता-जुलता है। सरकारी बयान, जैसा कि समाचारपत्रों (इडियन नेशन ६-१०-७४) में छपा है, कहता है कि पहली गोलीबारी 'इनर सिगनल' के निकट करीब ११-१५ बजे प्रातः हुई, दूसरी केबिन के नजदीक, तीसरी बेगमपुर डाकघर के पास १२ बजे और चौथी उसके बाद मुगलपुरा में हुई। यह बात उन बयानों से सिद्ध नहीं होती है जो हमारे सामने हैं, जिनमें एक श्री नारायण देसाई का भी है। जब श्री देसाई पटना सिटी स्टेशन पर प्रातः पौने दस बजे पहुचे तो गोलीबारी शुरू हो चुकी थी और सभी बयानों के अनुसार लाठीचार्ज प्रातः करीब साढे नौ बजे ही शुरू हो गया था। श्री नारायण देसाई के वक्तव्य से यह भी प्रकट होता है कि प्रात दस बजे तक पटरी पर भीड छट गयी थी सिवा एक-दो छोटे समूहों के जो जहा-तहा खडे थे। हमारे सामने जो बयान हैं, उनसे प्रकट होता है कि पुलिस कार्रवाई शुरू होने के तुरन्त बाद कैबिनमैन और वहा तैनात पुलिस के लोग वापस बुला लिये गये थे और वे कैबिन में ताला लगाकर स्टेशन पर आये थे। तुरत कैबिन में धुआ दिखाई पड़ा। कैबिनमैनों ने यह साक्ष्य दिया है कि जब तक वे वहा थे, कोई आग नहीं लगी थी। हम लोगों ने ३०-१०-७४ को कैबिन का निरीक्षण किया और आग लगने का एकमात्र प्रमाण वहा हमें यह मिला कि कैबिन की निचली मंजिल के दरवाजे के चौखट पर जलने के कुछ निशान थे तथा कैबिन के ऊपरवाले कमरे में एक टेबिल के ऊपर का एक छोटा हिस्सा बीचोबीच जला था। एक साक्षी का बयान है कि स्वय एक पुलिसमैन ने जलती हुई टायर कैबिन के अन्दर फेंक दी थी। इस बयान का लेखा हम अगर न लें तो भी हमारे लिए यह विश्वास करना कठिन है कि अगर कैबिन में पुलिस कार्रवाई शुरू होने (जो उपलब्ध साक्ष्य के अनुसार प्रातः ६-३० बजे हुई) के पहले आग लगी होती तो चूंकि उसको बहुत थोडी हानि पहुची थी, इसलिए आग का धुआं प्रातः १० बजे निकलते हुए दिखायी नहीं देता, जैसा कि श्री देसाई को दिखायी पड़ा। कैबिनमैनों ने कहा है कि लाठीचार्ज शुरू होते ही भीड़ भागने लगी थी और उसके छटते ही वे प्लेटफार्म पर आ गये थे। कैबिन में आग उनके चले जाने के बाद लगी। इसलिए यह जाहिर है कि कैबिन में आग तब लगी जब कैबिनमैन छोड़ चुके थे। इसकी पुष्टि इस बात से होती है कि श्री देसाई ने प्लेटफार्म न० २ पर जिलाधिकारी के पास पहुचने के कुछ ही मिनटों के अन्दर उनको यह कहते हुए सुना था कि कैबिन में और स्टेशन में भी (जोकि निराधार था) आग लगी है। चौखट को मामूली क्षति होना, ऊपरवाले कमरे में रखे टेबिल के एक छोटे हिस्से का जलना, कैबिनमैनों का वापस बुलाया जाना, पश्चिम की तरफ भीड़ के तितर-बितर होने के बाद कैबिनमैनों का वहां से हटना और कैबिनमैनों के हटने के तुरत बाद कैबिन में आग लगना, ये सब बातें इस तथ्य की परिचायक हैं कि कैबिन में लगी आग के पीछे कोई उद्देश्य और योजना थी। वह बर्बादी करने के लिए उतारू किसी हिंसक जमात की करामात नहीं थी। इस प्रकार कैबिन में लगी आग को गोलीबारी के औचित्य का आधार माना नहीं जा सकता, क्योंकि गोलीबारी प्रातः ६-३० बजे के पहले से ही जारी थी। मानी हुई बात यह है कि पहली गोलीबारी कैबिन के निकट नहीं, बल्कि इनर सिगनल के निकट, यानी प्लेटफार्म के बहुत करीब हुई थी।

(शेष अगले अंक में)

✲ महावीर भाई

शोषित पीड़ित वर्ग में आकांक्षा जगाना है

मानव की विकास प्रक्रिया में ही क्रान्तियों का इतिहास बना है और अनन्तकाल तक बनता रहेगा। आज हम जहां हैं वहां से आगे बढ़ने के लिए पिछले अनुभवों का लाभ उठाकर ही आगे बढ़ेंगे। इस क्रम में आधुनिक क्रान्ति के नायकों में गांधी, लेनिन, मार्क्स की अगली पंक्ति में जे. पी. का नाम आता है।

भावी इतिहासकार लिखेगा कि जे पी ने तत्कालीन मानव की माग—स्वतंत्रता एवं समता के लिए पिछले क्रान्तिकारियों से नम्रतापूर्वक सीखा। आज जे पी अपनी क्रांति के लिए किताब लिख रहे हैं।

क्रान्तिकारी परिस्थितियों के विश्लेषण और आकलन में जो समझ लेनिन की थी उसका तो ध्यान रखा ही, उससे आगे संगठनात्मक दृष्टि से क्रांतिकारी शक्ति का संयोजन लेनिन, माओ ने वर्षों में किया वह काम जे पी. ने महीनों में कर दिखाया। पता नहीं वह हमें दीखता है या नहीं। सवाल है इस क्रान्ति के उपयोग का। आज तक की क्रांतियाँ राज्य व्यवस्था, समाज-व्यवस्था, अर्थ-व्यवस्थामें परिवर्तन की भरपूर आकाक्षा लेकर की गयी, लेकिन सांस्कृतिक क्रांति के प्रति प्रारम्भ में उतनी जागरूकता नहीं रही जितनी जागरूकता जे पी की अभिनव क्रांति में बरती जा रही है। इसलिए ही शायद इसको सम्पूर्ण क्रांति की सज्ञा दी गयी, जो उपयुक्त भी है।

अब जो क्रांति के सहकारी मित्र हैं उनमें से कुछ केवल राज्य-व्यवस्था के परिवर्तन में ही सब कुछ क्रांति देख रहे हैं। वे इस सपूर्ण क्रांति के सहयोगी हैं। लेकिन इस क्रांति की मंजिल सम्पूर्ण मानवीय शांति है जिसका सपना ईसा, मोहम्मद, महावीर, गांधी, विनोबा, टालस्टाय, क्रोपाटकिन, मार्क्स ने देखा था। एक नया इसान, नया समाज जिसमें शासन, शोषण नहीं होगा। मानव एक होगा। यह कल्पना ही आज सिद्ध होने जा रही है।

मार्क्स की समानता के लिए सर्वहारा, तानाशाही की जरूरत हुई। जे.पी. की स्वतन्त्रता, समता, संस्कृति के लिए शांतिमय उपायों से वर्तमान व्यवस्था से टकराना पड़ा—जो क्रांति के लिए अनिवार्य आवश्यकता है। यह पृष्ठभूमि है।

आज तक क्रांति की आकांक्षा रखनेवालों में उच्चवर्ग, मध्यवर्ग की अगुआई रही। क्योंकि उसने सामाजिक न्याय व्यवस्था के लिए कुर्बानी दी। जो वर्ग तत्कालीन व्यवस्था से शोषित, पीड़ित था वह केवल द्रष्टा रहा। क्रांति के बाद जो मिला उसी से वह सन्तुष्ट रहा और इसीलिए क्रांति के लिए बारम्बार लड़ाई लड़नी पड़ी। पहली बार भारत में सम्पूर्ण क्रांति की लड़ाई अपने अन्तिम लक्ष्य की पूर्ति के लिए अभिनव साधनों के साथ प्रारम्भ की गयी है। इसलिए इस क्रांति की कसौटी यह है कि जिसके लिए यह क्रांति आवश्यक है वह वर्ग, वह समाज इस क्रांति की लड़ाई में कितना भागीदार ही नहीं, कितना आगे आया। हमारी कसौटी यही होगी। हमें शोषित, पीड़ित वर्ग को इस लड़ाई में शामिल करा देना है। इतना ही अपना काम है ताकि बारम्बार उसे दूसरे का परमुखापेक्षी न रहना पड़े। जब दूसरे करें तब उसे मिले नहीं, अतः उसमें आकांक्षा जगानी है—हमें करना है, हमें पाना है, हमारी आवश्यकता है, इस जमाने में हम इतना ही कर पायें तो बड़ा काम होगा।

वर्तमान लड़ाई में रणनीति का विचारणीय मुद्दा यह है कि पीड़ित वर्ग हमारी पद्धति से अधिक से अधिक तादाद में आसानी से कैसे भागीदार बने। आज की परिस्थिति में वैध और शांतिमय उपायों से पीड़ित वर्ग संसद या विधान सभा में जा नहीं सकता, इतनी शिक्षा नहीं कि भाषण कर सके, प्रदर्शन और जेल जाने के लिए समय नहीं क्योंकि अगले दिन जिन्दा रहने के लिए मजदूरी की तलाश रहती है। यदि मजदूरी न मिले तो परिवार भूखा रहेगा। क्रांति के रणविशारदों को सोचना है कि यह वर्ग किस तरह मदद करे—क्या पूरा परिवार जेलयात्रा के लिए प्रस्तुत हो? अनुभव के आधार पर कहा जा सकता है कि जब इन लोगों को जेल की बात समझा दी गयी और कहा गया कि इस प्रकार कम से कम कुर्बानी से तुम्हारी मुक्ति संभव है, तो उत्तर मिला, "बच्चे क्या खायेंगे? जेल का नहीं कोई भरने का कार्यक्रम, गोली खाने का कार्यक्रम बनाइये।" हम इसी वर्ग के लिए क्रांति करने जा रहे हैं। जे पी की अभिनव क्रांति की यह रीढ़ है। उसे जगाना है, उसे उठाना है वही क्रांति करेगा—सम्पूर्ण क्रांति।

∴ विनोबा

डेमोक्रेसी सब दूर बस 'गाखीर-पानी'

दुनिया में दो चीजों की जरूरत है, एक है शांति और एक समृद्धि। चित्त को शांति चाहिये और पेट के लिए समृद्धि चाहिये। दोनों की दुनियाँ को जरूरत है। सो ये तीन चीजों से सधेगी। तीन शक्तियाँ हैं, वेदांत, विज्ञान और विश्वास।

विज्ञान यानी साइंस और वेदांत यानी स्पिरिचुएलिटी दोनों चाहिये। यह बात तो लोग जान गये हैं लेकिन तीसरी जो शक्ति है, विश्वास, वह अभी लोगों में उतना फैला नहीं है। आज आप और हम एक साथ काम करते हैं तो आपके लिए मेरे मन में विश्वास होना चाहिए। यह एक मामूली बात है। बड़े-बड़े नेता, पोलिटिकल पार्टियों के नेता, विरोधी पक्षों के नेता बाबा के पास आते हैं और अपनी बात कहते हैं तो बाबा उन पर विश्वास रखता है और कहता है कि ठीक है आप काम करिये बाबा का आशीर्वाद आपको हासिल है। अब कोई कहता है कि आपके इस आशीर्वाद को लोग एक्स्प्लाइट करते हैं। लेकिन 'एक्सप्लाइटेशन इज देयर बिजनेस'। वो एक्सप्लाइट नहीं करेंगे तो बेवकूफ साबित होंगे। लेकिन वो जितना एक्सप्लाइट करते जायेंगे उतना बाबा और विश्वास रखता जायेगा। हम कहते हैं कि हिंसा को अहिंसा से, असत्य को सत्य से जीतेंगे। इसलिए सामने जितना अविश्वास होगा उतना विश्वास रखेंगे। अविश्वास का वातावरण है तो हम विश्वास से जीतेंगे। इसलिए उत्तरोत्तर विश्वास रखें। यह बाबा की शक्ति है, विश्वास शक्ति, जो तीसरी शक्ति है।

सरकार को पूर्ण मत मानो

आप लोगों को यह जो लगता है कि महंगाई के खिलाफ सरकार के खिलाफ आंदोलन करना, इसका महत्त्व यह हुआ कि आप सरकार को इतना महत्त्व देते हैं कि सरकार पूर्ण है और आप शून्य हैं। लेकिन बाबा वैसा नहीं मानता है। बाबा मानता है कि इस समस्या को हल करने के लिए गांव-गांव को संगठित करना होगा, गांव की योजना बनानी होगी, बाजार मुक्ति का

कार्यक्रम उठाना होगा। आप मानते हैं कि सब चीजो के लिए सरकार जिम्मेदार है। इसका अर्थ यह हुआ कि आप सरकार को सब कुछ मानते हैं। जैसे एक बच्चा कहता है
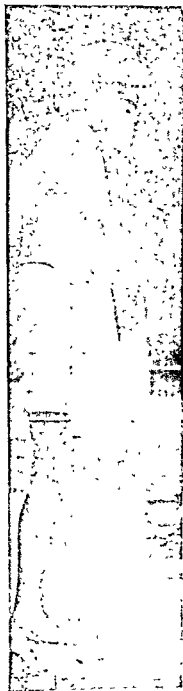
और शराबी, गाय के दूध की बराबरी में खराब नहीं होना। एवरेज होता है, औसत होता है। डेमोक्रेसी रामराज्य के समान उत्तम नहीं हो सकती। रावण के राज्य के समान खराब नहीं हो सकती। वह बीच की रहेगी। उसे मैंने नाम दिया है, उस किताब में बहुसख्यायतन। एक है एकायतन पद्धति, दूसरी है, अल्पसख्यायतन। तीसरी है, जो आज चल रही है, डेमोक्रेसी के नाम से। आखिरी है सर्वायतन अथवा सर्वायतन। सर्वायतन अभी तक बनी नहीं है। जो बनी है वह बहुसख्यायतन बनी है। इस बहुसख्यायतन का अपना एक गणित है। वह साइन्स के गणितशास्त्र से भिन्न है। जो गणित दुनिया में चलता है वह सादृश्य के अनुसार चलता है। यह गणित है, ५१=१००, ४९=०।

एक बाजू ५१ और दूसरी बाजू ४९, इक्यावन का प्रस्ताव पास, और पूरी सौ ताकत इक्यावन के हाथ में। यह आज की डेमोक्रेसी है। इस वास्ते बाबा को लोकशाही के लिए बहुत ज्यादा उत्साह नहीं है। अब इतना ही सवाल है कि वह औसत तो है। वह ज्यादा गदा औसत है या कम गदा औसत है, इतना ही फर्क होना है। यह बाबा का अपना राज्य-शास्त्र है। वह हमें स्वीकार करना है। वह कार्य अपने लिए बाकी है। अभी हिन्दुस्तान में जो चल रहा है, विरोध इत्यादि, एक पक्ष कहता है, हम डेमोक्रेसी के बचाव के लिए काम कर रहे हैं। विरोधी पक्ष कहता है, तुम डेमोक्रेसी की हत्या कर रहे हो। एक दूसरे पर यही आक्षेप है। मुझे पूछते हैं आपका क्या इन्टरेस्ट है, तो मैं कहता हूं कि मुझे न डेमोक्रेसी के बचाव में इन्टरेस्ट है, न हत्या में भी इन्टरेस्ट है। उसमें मुझे रस ही नहीं। बिलकुल नीरस है। असम के लोग इतने सत्य-वादी होते हैं कि जहां भी जायेंगे, वहां आपको दूध नहीं देंगे, 'गाम्भीर-पानी' देंगे। 'गाम्भीर-पानी' में दूध और पानी का मिश्रण होता है। यहां भी हम ऐसा ही करते हैं, लेकिन दूध के नाम से देते हैं। मैंने पटना में देखा, गगा का पानी लाकर दूध में बराबर डालते हैं। मैंने पूछा कि दूध में पानी क्यों डालते हो तो कहा कि हम मामूली पानी डालते हैं? हम तो गगा का पानी डालते हैं। "इतना पवित्र पानी, गगा माता का और दूध भी पवित्र है, गोमाता का। तो गगा-माता और गोमाता इकट्ठा करते हैं। कोई मामूली नाले का पानी होता तब तो हम गुनहगार होते।" तो तात्पर्य, सब दूर जो डेमोक्रेसी चलती है, वह अपना 'गाम्भीर-पानी' है। इतना ही फर्क है कि कुछ लोग कहेंगे कि हमने नाले का पानी डाला क्योंकि गगा का पानी मिला नहीं। इतना ही फर्क है।

जयपुर बैठक की रपट

आंदोलन के कवच पथ्य तथा कार्यक्रम

राजस्थान समग्रसेवा सघ कार्यालय में जनवरी के तीसरे सप्ताह में आयोजित प्रदेश के कालेजों व विश्वविद्यालयों के अध्यक्ष व मत्रियों की बैठक में एक २६ सदस्यीय तदर्थ छात्र सघर्ष समिति के गठन के साथ साथ यह निर्णय लिया गया कि जब नीचे से प्रारम्भ करके विद्यालय महाविद्यालय स्तर से छात्र सघर्ष समितियों का निर्माण होकर उनके प्रतिनिधियों द्वारा जिला प्रतिनिधि का चुनाव कार्य पूर्ण हो जायेगा तब यह तदर्थ समिति विघटित हो जायेगी। कार्य सचालन के लिए दो व्यक्ति विमल चौधरी व पन्नेसिंह को मनोनीत किया गया।

बैठक की अध्यक्षता करते हुए सर्व-सेवा सघ के अध्यक्ष श्री सिद्धराज ढड्ढा ने आंदोलन की भूमिका व विभिन्न पहलुओं को स्पष्ट किया। इस समय देश में जो समस्याएं उभरी हैं वे सभी को छूनेवाली हैं यथा महगाई, बेकारी व जनता के अधिकार का ह्रास जोकि शासन की केन्द्रीकरण की नीति का परिणाम है। इस व्यापक असतोष की परिस्थिति के फलस्वरूप विस्फोट की व अराजकता की स्थिति उत्पन्न हो गयी है तथा तानाशाही पनपने की आशका है।

परिस्थिति से जूझने के लिए गुजरात में व बिहार में व्यापक आंदोलन फूट पड़े। बिहार में आंदोलन का नेतृत्व जयप्रकाशनारायण को सौंपा गया। जे. पी. ने आंदोलन की पद्धति के बारे में दो बातें प्रारम्भ से ही स्पष्ट कीं। (१) जनता की लड़ाई जनता स्वयं लड़ेगी। उसकी ओर से कोई व्यक्ति या सगठन नहीं लड़ेगा। (२) आंदोलन की अगुवाई युवाशक्ति जिसमें छात्र प्रमुख हैं, वह करेगी। युवाओं के लिए अगुवाई करने की कई अनुकूलताएं हैं। उनकी छवि पुरानी पीढ़ी के मुकाबले ज्यादा अच्छी है। उनके दाव भी अधिक बड़े हैं तथा उनके परस्पर मिलन की परिस्थिति बनी हुई है।

इस आंदोलन की व सभी व्यापक जनान्दोलनों की मर्यादा है कि वह शान्तिपूर्ण होगा। इतने बड़े व्यापक पैमाने के जनान्दोलन (मास मूवमेंट) व हिंसा का मेल बैठ नहीं सकता। दूसरा, इस आंदोलन का कवच है सच्चाई व प्रामाणिकता याने इसके सभी कार्य खुले तौर पर होंगे। तीसरा कवच है निर्भयता। आंदोलन के दो पथ्य हैं पहला निष्कामता याने व्यक्तिगत या समूहगत स्वार्थ साधन का प्रयास न हो। दूसरा दलगत भावना से ऊपर उठकर काम करना।

आंदोलन की रणनीति होगी—सघर्ष व सहयोग। आंदोलन में सभी तबकों का समर्थन प्राप्त किया जायेगा। वे सभी लोग इसमें शामिल होंगे जोकि आंदोलन के प्रति निष्ठा प्रकट करते हैं तथा अपना भाग अदा करने की तैयारी से आते हैं। सघर्ष है अन्याय के खिलाफ, कार्यक्रम है अन्याय का प्रतिकार।

कार्यक्रम के चार पहलू हैं जिन्हें भी जे. पी. ने बार-बार स्पष्ट किया है :

(१) प्रचारात्मक या शिक्षात्मक याने विचार लोगों में पहुंचाना।

(२) सगठनात्मक—याने सभी स्तर पर गांव या विद्यालय से प्रारम्भ कर तहसील या पचायत समिति स्तर, फिर जिला स्तर व प्रदेश स्तर तक छात्र सघर्ष समिति, जन सघर्ष समितियों का गठन।

(३) सघर्षात्मक—अन्याय के प्रतिकार के कार्यक्रम।

(४) रचनात्मक—लोगों को उनकी दैनंदिन कठिनाइयों में सीधी सहायता।

तात्कालिक कार्यक्रम पर विचार करते हुए बैठक में निश्चय किया गया कि तदर्थ समिति नीचे से याने विद्यालय महाविद्यालय

स्तर पर सगठन बनाने का कार्य उठायें व शीघ्र पूरा कर जिला प्रतिनिधियो की प्रदेश छात्र सघर्ष समिति का निर्माण करायें।

अन्य तात्कालिक कार्यक्रम जो लेना निश्चय हुआ वह था :

(१) २६ जनवरी को राजकीय समारोहो का वहिष्कार व जनता गणतन्त्र दिवस का आयोजन।

(२) जनता की मांगों को लेकर विधान सभा के समक्ष प्रदर्शन

(३) सरकारपरस्त नीति के विरुद्ध आकाशवाणी के केन्द्रो पर प्रदर्शन।

समाचार

खंडवा मे गणतत्र दिवस पर नवगठित जन सघर्ष समिति द्वारा गांधी भवन के अहाते मे अलग से झन्डावदन किया गया। झन्डा स्थानीय श्री नीलकठेश्वर महाविद्यालय के प्रथम वर्ष के एक छात्र शकरलाल गोयल ने फहराया।

रात को मा०स्मा० वाचनालय मे संघर्ष समिति की ओर से सयोजक जादवजी मारू की अध्यक्षता मे एक आम सभा हुई जिसमे इन्द्रमणि मिश्र, झवरचद सोनी, चन्द्रभान गाथा, सुभाषचन्द नागोरी, सखाराम नीलकठ व गोविन्द प्रसाद गीते ने विचार प्रकट किये।

ग्वालियर मे नगर की युवा-छात्र सघर्ष, समिति, जनसघर्ष समिति एव विरोधी दलो के तत्वावधान मे समान्तर जनता गणतत्र दिवस मनाया गया।

प्रात अचलेश्वर महादेव से युवा छात्रों, राजनैतिक दलो के नेताओ तथा नागरिको की रैली प्रारभ होकर, भ्रष्ट व्यवस्था के विरोध मे नारे लगाती नगर के प्रमुख मार्गों से होती हुई गोरखी मैदान पहुची जहां तरुण छात्र सत्यनारायण शर्मा ने ध्वजारोहण किया। जनता ने मार्ग मे स्वागतद्वार तथा वंदनवार लगाकर फुटपाथो और छतो पर एकत्र होकर रैली का स्वागत किया और जयप्रकाश के नेतृत्व मे विश्वास प्रकट किया। शाम को गोरखी मैदान मे एक आमसभा मे विष्णुदत्त तिवारी, शीतला सहाय, स्वरूप किशोर सिंघल, ऐशीराम पमनानी, किशन चन्द्र, लाजपत आहूजा, के पी सिंह तथा सत्यनारायण शर्मा आदि छात्र नेताओ के भाषण हुए। सर्वोदय कार्यकर्त्ता प्रेमनारायण शर्मा ने अध्यक्षता की।

हरदोई जिले के प्रहलादपुरी मे गणतत्र दिवस के अवसर पर सर्वोदय मडल की ओर से सभा हुई तथा गाधी निर्वाणतिथि को एक बडा मौन जुलूस निकाला गया।

मिरजापुर जिले के अवोही ग्राम मे श्रीकृष्ण पाण्डेय के निवास स्थान के समक्ष गाधी निर्वाण तिथि को शान्ति दिवस मनाया गया। प्रभातफेरी, स्वच्छता अभियान, नशाबन्दी प्रचार के बाद शाम को एक प्रार्थना सभा हुई जिसमे विनोदशकर पाडेय, शीतला प्रसाद गुप्ता, राममनोरथशुक्ला, रमेशबहादुर सिंह आदि ने भाषण दिये।

उत्तरप्रदेश के मुख्यमत्री हेमवतीनन्दन बहुगुणा की अध्यक्षता मे १६ सदस्यो की एक भूमि-व्यवस्था एव वितरण समिति गठित की गयी है। समिति का कार्यकाल एक वर्ष का और मुख्यालय लखनऊ रहेगा। विनोबाजी ने आर. के. पाटिल को समिति का कार्यकारी उपाध्यक्ष बनाया जाना स्वीकार कर लिया है। पाटिल तथा पाच अन्य सर्वोदय कार्यकर्ताओ को अवैतनिक पूर्णकालिक सदस्य मनोनीत किया गया है जिनमें बाबूलाल मित्तल, सुन्दरलाल बहुगुणा, लल्लू दद्दा, आनन्दीभाई और प्रकाश भाई जो समिति के सचिव होंगे, शामिल हैं।

मुख्यमन्त्री आठ अंशकालिक सदस्यो को और मनोनीत करेंगे। पाटिल को पूर्ण मन्त्री स्तर की सभी सुविधाए प्रदान करने की घोषणा भी उत्तरप्रदेश सरकार ने की है।

मध्यप्रदेश भूदान यज्ञ मडल के सचिव सत्यनारायण शर्मा ने बताया कि आगामी १८ अप्रेल, १९७५ से प्रारम्भ होनेवाले भूदान यज्ञ रजत जयन्ती वर्ष मे प्रदेश मे भूदान मे प्राप्त अधिकाधिक भूमि का वितरण किया जायेगा। यदि शासनसे समुचित सहयोग मिला तो मण्डल के पास शेष बची डेढ लाख एकड भूदान भूमि भूमिहीनो मे वितरित करने की योजना है। भूमि के शीघ्रता से प्रमाणीकरण और वितरण मे शासन का सहयोग अत्यावश्यक है, ताकि भू-वितरण के पश्चात दाताआदाताओ के लिए व्यर्थ उलझनें खडी न हों। मडल की ओर से १५ फरवरी से मार्च के अन्त तक शिवपुरी एव गुना जिलो मे भूदान-वितरण का एक सघन अभियान चलाया जायेगा। इसमे रचनात्मक सस्थाओं के कार्यकर्ताओ से भी सहयोग की प्रार्थना की गयी है।

ग्रामीण विकास के लिए स्वयसेवी सस्थाओ के सगठन (अवार्ड) के तत्वावधान मे यहा विद्याभवन स्थित ग्रामीण सस्थान के प्रागण मे ७ व ८ फरवरी को स्वयसेवी सस्थाओ का एक सम्मेलन आयोजित किया गया जिसमे 'ग्रामीण विकास के लिए व्यूह रचना' पर चर्चा हुई। सम्मेलन मे विशेष रुप से ग्रामीण पुनरुत्थान की समस्याओ, कार्यक्षेत्रो तथा गतिविधियों पर विचार-विनिमय हुआ।

एजेण्टों से निवेदन

• 'भूदान-यज्ञ' के बकाया बिलो की राशि शीघ्र भुगतान करने की कृपा करें। 31 जनवरी 74 तक की पूरी राशि भुगतान न भेजनेवाले एजेण्टो को 'भूदान-यज्ञ' भेजना बन्द किया जा सकता है।

—व्यवस्थापक

वार्षिक शुल्क—१५ रु० विदेश ३० रु० या ३५ शिलिंग या ५ डालर, प्रति अक का मूल्य ३० पैसे।
प्रभाष जोशी द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं ए० जे० प्रिंटर्स, नई दिल्ली-१ में मुद्रित।

सर्वोदय
सहयोग
संघर्ष
जनता सरकार
ग्रामसभा
सर्वानुमति
बहुमत
ध्रुवीकरण
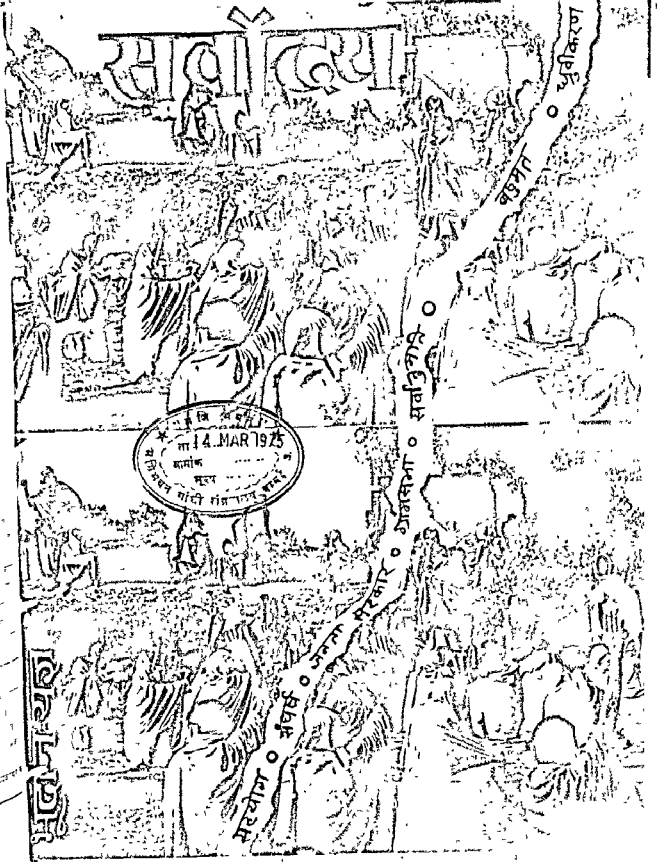
नगरपालिक निगम, जबलपुर

विकास कार्यों के बढ़ते चरण

- नगर की प्रमुख सड़कों का सुधार तथा विस्तार का कार्य निरन्तर जारी है।
- बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण यातायात मे द्रुतगति से हो रही दुर्घटनाओं के बचाव के लिए नगर के प्रमुख चौराहों का विकास किया जा रहा है। चौराहो पर मरकरी लाइट द्वारा आकर्षक प्रकाश व्यवस्था करने का कार्य जारी है।
- नगर के समस्त ४६ वार्डों मे जहाँ मिट्टी के तेल के भभके लगे थे, उनको हटाकर ट्यूब लाइट लगाये जा रहे हैं। वार्डों के भीतर नालियों का निर्माण, गलियों का निर्माण एवं सुधार कार्य जारी है।
- नये मोटर स्टेंड का विकास कार्य द्रुतगति से किया जा रहा है।
- पर्याप्त जलपूर्ति के लिए जहाँ छोटी पाइप लाइन हैं, उनको बदलकर बडी लाइन डाली जा रही है। उप-नगरीय क्षेत्र गढा एव पुरवा में जलपूर्ति की अलग से योजना क्रियान्वित हो रही है।
- रानी दुर्गावती की गजारूढ़ प्रतिमा की स्थापना हो चुकी है। अनावरण शीघ्र शहीद भगतसिंह की माताजी के हाथों होने जा रहा है।
- नगर के ११ वार्डों में गन्दी बस्ती के सुधार की योजना क्रियान्वित किये जाने का प्रयास किया जा रहा है।
- ओमती नाला को पक्का करने तथा गुरन्दी बाजार एव लटकारी के पड़ाव की सुधार की योजना

नगरवासियों से अपेक्षा है कि नगरनिगम मे जनहितकारी योजनाओं के क्रियान्वयन मे सक्रिय सहयोग प्रदान करें।

जी० एन० गुप्ता आयुक्त	बाबूराव परांजपे महापौर	रामकुमार अवस्थी उप-महापौर
	शरतचन्द तिवारी अध्यक्ष : स्थायी समिति	

जनसम्पर्क विभाग, नगर निगम जबलपुर द्वारा प्रसारित

सर्व सेवा संघ का साप्ताहिक मुख पत्र

सम्पादक

राममूर्ति : भवानी प्रसाद मिश्र

कार्यकारी सम्पादक : शारदा पाटक

वर्ष २१, १० मार्च, '७५ अंक २२-२३

१६ राजघाट, गांधी स्मारक निधि, नई दिल्ली-११०००१

सर्व सेवा संघ अधिवेशन विशेषांक

इस अंक में

सम्पादकीय

उत्साह और शान्ति की तसवीर

जयप्रकाशजी के आन्दोलन ने अनेक बिखरी हुई शक्तियों को इकट्ठा किया है। केवल भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी को छोड़कर देश के सारे राजनीतिक दल उनके आन्दोलन के मुद्दों से सहमत हो गये हैं और पूरे मन से दलीय आग्रहों को छोड़कर आन्दोलन मे हाथ बटा रहे हैं। इसका सबसे बड़ा प्रमाण कि देश की सारी जनता जयप्रकाशजी के विचारो को देश की स्थिति सम्भालने के लिए लागू देखना चाहती है, ६ मार्च को दिल्ली का प्रदर्शन था।

प्रदर्शन विशाल था। उसमे कोई पाच-छः लाख व्यक्ति तो कम से कम थे ही, किंतु यह उसकी बड़ी विशेषता नहीं है कि जुलूस मे पाच लाख आदमी थे कि दस लाख थे (कई लोग इस संख्या को दस लाख मानते हैं)। विशेषता यह थी कि इसमे वे सभी लोग शामिल थे जिन्हें सही अर्थों मे जनता कहा जा सकता है। अर्थात् इसमे बूढ़े, बच्चे, स्त्रियाँ, गरीब, अमीर, मजदूर, उद्योगपति, यहा तक कि अपाहिज लोग भी समान उत्साह से शामिल देखे गये। लाल-किले से लेकर संसद तक कोई दस किलोमीटर की लम्बाई को ढाँक कर चलनेवाला यह जुलूस उत्साह और शान्ति की अनोखी तसवीर था। जुलूस का नेतृत्व शान्ति और क्रान्ति के समन्वय की मूर्ति जे० पी० कर रहे थे और विभिन्न राजनैतिक दलो के प्रमुख नेता, जैसा हम कह चुके है सारी दलीयता भूलकर जन की हैसियत से जुलूस मे शामिल थे। जुलूस जब संसद के द्वार पर पहुचा तो जे० पी० ने संसद के अध्यक्ष और उपराष्ट्रपति को जनता का मांगपत्र दिया जिसे उन्होंने बहुत ही सौजन्य के साथ ग्रहण किया। मागो मे वे सभी मागें थीं जो बिहार आन्दोलन के दौरान पेश की जाती रही हैं जैसे—बिहार की विधानसभा का भंग किया जाना, गुजरात और बिहार मे तत्काल चुनावो का प्रबन्ध करना, भूमि के न्यायपूर्ण वितरण के लिए तत्काल ठीक-ठीक प्रबन्ध करना, भ्रष्टाचार दूर करने के विचार से जरूरी कदम उठाना, चुनाव पद्धति मे सुधार करना और शिक्षा मे ऐसे परिवर्तन लाना कि वह बेकारी को दूर करने का ठीक साधन बन सके।

माग-पत्र सौंप देने के बाद जयप्रकाशजी ने संसद के सामने बोट क्लब के मैदान मे एकत्र जनसमूह को सम्बोधित किया और कहा कि हमने आज जो मागें पेश की हैं वे सच्चे स्वराज्य के लिए अनिवार्य मागें हैं। यदि ये मागें नहीं सुनी गयी तो हम बार-बार आकर संसद के दरवाजे पर दस्तक देते रहेंगे, हमारा आन्दोलन पूरी तरह शान्तिपूर्ण होगा। उन्होंने जनता से अपील की कि सरकार उन्हें हिंसा के लिए चाहे जितना भड़काये, वह किसी भी परिस्थिति मे हिंसा का सहारा न ले, अहिंसक शान्ति दुनिया मे किसी के दबाये नहीं दब सकती, फिर भारत मे तो उसकी परम्परा और उज्ज्वल इतिहास है।

६ मार्च के इस विशाल जुलूस ने हमारी आशाओं को बड़ी ताकत दी है और लगता है कि वह दिन दूर नहीं है जब सत्ता जनता की सही मांगें स्वीकार करने पर मजबूर ही नहीं तत्पर हो जायगी।

सर्वेषां अविरोधेन

१२ मार्च से सर्व सेवा संघ का छमाही अधिवेशन विनोबा के मौन सान्निध्य मे ब्रह्म-विद्या मन्दिर के प्रांगण में होने जा रहा है। यह अधिवेशन गाधी विचार-निष्ठ लोगो के लिए बहुत मानी-दानी का ठहरेगा।

सभी लोग जानते हैं कि जयप्रकाशजी के नेतृत्व मे जबसे बिहार आन्दोलन का श्री-गणेश हुआ, तब से सर्व सेवा संघ मे उसे लेकर मतभेद पैदा हुए। कुछ लोगों ने आन्दोलन को राजनीतिक मानकर उसे सर्वोदय विचार अर्थात् 'सर्वेषां अविरोधेन' का विरोधी बताया और दूसरे लोगों ने उसे सही अर्थों मे ग्राम स्वराज्य लाने की दिशा मे उठाया गया कदम की तरह घोषित किया। पिछले वर्ष सर्व सेवा संघ के वर्धा अधिवेशन मे इन दोनो विचारो के माननेवाले लोक-सेवको मे विनोबा ने कोई समझौता न होते देखकर यह सलाह दी कि दोनो ही प्रकार के विचार रखनेवाले अपने-अपने मत के अनुसार 'अहिंसा, सत्य और संयम' की मर्यादा का पालन करते हुए काम करें और मतभेद के बावजूद हृदय की एकता कायम रखें।

विनोबा की इस सलाह का उस समय लोगो पर बहुत अच्छा असर हुआ और लगा कि सर्व सेवा संघ के सामने जो संकट था, वह टल गया है। किन्तु विनोबा की सलाह के बावजूद कुछ लोग आन्दोलन के विरोध मे अपने मत के आग्रह को जहां तहां प्रकट करते रहे जिससे सर्व-साधारण लोकसेवक दुविधा में पड़ गया। यह प्रक्रिया अभी तक चली आ रही है और अब परिस्थिति ऐसी बन गयी है कि इसका कोई न कोई ठीक हल निकालना जरूरी होगया है।

दोनो पक्षो की ओर से प्राय. जो बातें उठायी जाती हैं, उन्हे हमने इस अंक मे अधिकारी व्यक्तियो के द्वारा लिखवा कर प्रस्तुत किया है। अधिवेशन के अवसर पर ये मुद्दे लिखित रूप मे सबके सामने रहेंगे और सभव है विचार-विमर्श के दौरान उनसे मदद मिल सकेगी। स्पष्ट रूप से दोनों मतों के अतिरिक्त हमने उनके बीच सामंजस्य सुझाने वाले लेख भी दिये हैं। श्रीमन्‌जी, देवेन्द्रभाई और द्वारको सुंदरानीजी के लेख इसी प्रकार हैं। आन्दोलन को गलत माननेवालों से भी हमने प्रार्थना की थी और हमे प्रसन्नता है कि हमें दो-तीन लेखों के साथ पाटिलसाहब का एक परिपूर्ण लेख प्राप्त हो गया।

सर्वसेवा संघ के टूटने का मतलब देश की सबसे बड़ी जोड़नेवाली शक्ति का टूटना है, इसलिए आशा तो यही है कि दूसरों के विरोध को भी अविरोधी दृष्टि से देखनेवाले हम आपस में अविरोध की भावना से काम लेकर देश में इस संकट काल में अपनी-अपनी प्रतिभा के अनुसार विभिन्न क्षेत्रों मे काम करते रहकर गाधी विचार की असीम शक्ति को अपने वश भर सार्थक करने में जुटे रहेंगे। O

जे. पी. जनवादी पार्टी बनायें

—श्रीमन्नारायण

इस बात में कोई सन्देह नहीं है कि जयप्रकाश नारायण द्वारा १० महीने पहले शुरू किये गये बिहार के आंदोलन ने देश और विदेश में बड़े पैमाने पर लोगों का ध्यान आकर्षित किया है, स्वतंत्रता के बाद श्री जयप्रकाश नारायण ने निस्वार्थ भाव से जो त्याग तथा बलिदान किया है उसके लिए उन्हें देश भर में अथाह श्रद्धा प्राप्त है। अतः यह स्वाभाविक ही है कि बिहार में या देश के दूसरे हिस्सों में आयोजित की जानेवाली उनकी सार्वजनिक सभाओं में हिस्सा लेने के लिए बड़ी संख्या में श्रोताओं को आकर्षित कर लेते हैं। कोई भी व्यक्ति उनके आंदोलन के कुछ पहलुओं से असहमत हो सकता है लेकिन इस बात में तो फिर भी कोई सन्देह नहीं है कि यदि बिहार में जयप्रकाश का हस्तक्षेप नहीं होता तो वहां बड़े पैमाने पर रक्तपात तथा हिंसा की घटनाएं होतीं। हालांकि बिहार के इस आंदोलन के दौरान हिंसा की छिटपुट घटनाएं हुई हैं लेकिन फिर भी यह बात स्वीकार करनी ही पड़ेगी कि श्री जयप्रकाश नारायण ने बुनियादी तौर पर इस आंदोलन को शांतिपूर्ण बनाये रखा है। नवम्बर मास में उन पर किये गये अमानुषिक लाठीचार्ज के बावजूद वे उग्र छात्रों तथा वर्करों को अपने नियन्त्रण में रखने में सफल हुए। अतः श्री जयप्रकाश नारायण पर हिंसा भड़काने का आरोप लगाना उनके प्रति बहुत बड़ा अन्याय होगा।

इससे भी बड़ी बात यह है कि श्री जयप्रकाश नारायण भ्रष्टाचार, मुद्रा प्रसार तथा बेरोजगारी जैसी सामाजिक बुराइयों के खिलाफ देश भर की जनता का ध्यान आकर्षित करने में सफल हुए हैं। उनके द्वारा बार-बार चुनाव तथा शिक्षापद्धति में सुधार पर बल दिये जाने के सम्बन्ध में भी दो राय नहीं हो सकतीं। श्री जयप्रकाश नारायण बार बार सत्ता के केन्द्रीकरण के खिलाफ अपनी आवाज उठाते रहे हैं जिससे इस बात की महत्ता सिद्ध हो जाती है कि ग्राम्यस्तर पर राजनीतिक तथा आर्थिक शक्ति के विकेन्द्रीकरण की जरूरत है। श्री जयप्रकाश नारायण के प्रेरक नेतृत्व के अन्तर्गत आकर दलगत राजनीति में सीधा सम्बन्ध नहीं रखने वाले लोगों ने भी बिना किसी झिझक तथा संकोच के अपनी भावनाओं तथा विचारों के प्रदर्शन का साहस किया है। अतः उनके आंदोलन पर फासिस्ट अथवा अलोकतांत्रिक आंदोलन का ठप्पा लगाना भी गलत होगा। श्री जयप्रकाश नारायण पूरी ईमानदारी के साथ पूर्ण शिष्टाचारबद्ध तथा शांतिपूर्ण ढंग से सामाजिक बुराइयां रोकने के खिलाफ खड़े हो जाने के लिए कोशिश करते रहे हैं।

कई बार यह बात कही जाती है कि भारत में सत्याग्रह के लिए कोई स्थान नहीं होना चाहिए। मेरा विचार इस सम्बन्ध में यह है कि लोकतन्त्र के अन्तर्गत भी लोगों को सत्याग्रह करने का पूरा अधिकार प्राप्त है जबकि सही लक्ष्य प्राप्त करने के लिए किये जाने वाले दूसरे पग नाकाम हो जायें। हां सत्याग्रह को 'दुराग्रह' में परिणत कर दिये जाने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। लोकतांत्रिक शासनपद्धति में सत्याग्रह तभी किया जाना चाहिए जबकि दूसरे सब तरीके अप्रभावी सिद्ध हों।

अब मैं श्री जयप्रकाश नारायण के आंदोलन के उन कुछेक पहलुओं का उल्लेख करूंगा जिनसे मैं सहमत नहीं हूं। पहली बात जो मेरी समझ में नहीं आती वह यह है कि किस प्रकार बिहार के वर्तमान मन्त्रिमण्डल की बर्खास्तगी तथा विधान सभा भंग कर दिये जाने से बड़ी कीमतों, भ्रष्टाचार तथा बेरोजगारी की समस्याएं स्थायी तौर पर दूर हो जायेंगी? कोई भी आदमी श्री जयप्रकाश के साथ इस मुद्दे पर सहमत हो सकता है कि यदि संसद अथवा विधान सभा में भेजे हुए उनके प्रतिनिधि अपनी जिम्मेदारी निभाने में असफल रहें तो वोट डालकर वहां भेजनेवाली जनता को उन्हें वापस बुला लेने का भी अधिकार है और इसके लिए देश के संविधान में संशोधन करने की आवश्यकता पड़ेगी और इतने बड़े देश में यह भी तो सम्भव नहीं है कि हर आदमी की इच्छाएं पूरी हो ही जायें। लेकिन सारी विधानसभा भंग करने के लिए ही कहना कोई उचित मांग प्रतीत नहीं होती। इस प्रकार की मांगों को स्वीकार करने का मतलब देश में इस प्रकार की प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन देने के अनुरूप होगा जिससे देश की शांति तथा स्थायित्व खतरे में पड़ जायेंगे। इस सम्बन्ध में गुजरात का अनुभव बहुत सुखद नहीं रहा है तथा इस बात का भी भरोसा नहीं होगा कि बिहार का अनुभव गुजरात के अनुभव से भिन्न होगा। दूसरी बात विभिन्न राजनीतिक दलों के सहयोग के सम्बन्ध में है जिनमें पूर्ण वामपंथी से लेकर पूर्ण दक्षिणपंथी दल, मार्क्सवादी पार्टी से लेकर जनसंघ तक शामिल हैं और उन्होंने जे. पी. के आंदोलन को एक अलग ही राजनीतिक रंग दे दी है। यह बात संदिग्ध है कि अलग-अलग सिद्धान्तों और मान्यताओं वाली पार्टियां सत्तारूढ़ पार्टी के खिलाफ संयुक्त चुनाव अभियान में एक दूसरी से सहयोग कर पायेंगी। और यदि ये पार्टियां आपस में सहयोग करने में सफल हो भी जायें तब भी बहुसंख्या प्राप्त करने में स्थानापन्न सरकार की स्थापना की दिशा में उनमें झगड़ा अवश्य होगा। उत्तर प्रदेश, बिहार और मध्यप्रदेश का पूर्व अनुभव बहुत प्रभावशाली नहीं रहा है।

लेकिन लोकतंत्र में एक मजबूत प्रतिपक्ष की उपस्थिति अत्यन्त अनिवार्य है। दुर्भाग्य-

वश भारत में विरोधी पार्टियां इतनी ज्यादा हैं कि वे उस समय भी सगठित होकर सरकार के खिलाफ लड़ाई नहीं लड़ पातीं जबकि वह सही तौर पर अपनी जिम्मेदारी नहीं निभा पा रही हो। अत. यह भारतीय सार्वजनिक जीवन के लिए बहुत ज्यादा लाभदायक होगा यदि श्री जयप्रकाश नारायण एक नई, मजबूत और शक्तिशाली राजनीतिक पार्टी की स्थापना कर लें। इसे वर्तमान राजनीतिक पार्टियों की खिचड़ी नहीं बल्कि युवा पुरुषों तथा महिलाओं पर आधारित भारतीय जनता की पार्टी होना चाहिए जो गांधीवादी लाइनों पर देश को ले जा सके और यह देश के लिए अत्यन्त लाभदायक बात होगी।

अन्त में, सत्तारूढ दल को यह पूरा अधिकार है कि वह राजनीतिक एवं आदर्शों के आधार पर जे. पी. के आंदोलन से उत्पन्न चुनौती का पूरी तरह से सामना करे लेकिन हथियार-बन्द पुलिस की मदद से इस आंदोलन का मुकाबला करना सिर्फ अलोकतांत्रिक ही नहीं बल्कि असभ्य भी होगा।

यह सच है कि पिछले कुछ महीनों में सरकार ने तस्करी, जमाखोरी, टैक्स चोरी तथा कालाबाजारी जैसी बुराइयों के खिलाफ कुछ निश्चित ठोस पग उठाये हैं। परन्तु इन्हें काफी नहीं कहा जा सकता, अभी भी बिना किसी और देरी के, अधिक कठोर निर्णय लिये जाने की आवश्यकता है। बिहार विधानसभा को भंग करने की मांग के अलावा सत्तारूढ दल श्री जयप्रकाश नारायण के करीब-करीब सभी सुझाव स्वीकार कर सकता है और इस प्रकार देश में निर्माणात्मक सहयोग के वातावरण की सृष्टि कर सकता है। O

पक्षाभाव और आंदोलन

—रामकृष्ण पाटिल

यह तो सर्वमान्य होगा कि सर्वोदय परिवार में आज जो विचार मंथन चल रहा है, उसकी जड़ जिसको हम 'बिहार आंदोलन' कहते हैं, वह है। इसलिए उस आंदोलन का असली स्वरूप क्या है, वह समझ लेना चाहिए। यह भी सर्वमान्य होगा कि बिहार आंदोलन की जड़ है गुजरात की घटनाओं में। 'गुजरात की जीत हमारी है, अब बिहार की बारी है' यह घोषणा बिहार की छात्र संघर्ष समिति ने १८ फरवरी को ही की थी। यानी जो घटनाएं गुजरात में हुईं उनकी बिहार में पुनरावृत्ति यह लक्ष्य उनका १८ फरवरी से ही था। १६ फरवरी के 'आर्यावर्त' में यह प्रकाशित किया गया कि १८ फरवरी के सम्मेलन ने एक संयुक्त संघर्ष समिति बनाकर सर्वोदय नेता जयप्रकाशनारायण से आग्रह किया है कि वे बेरोजगारी भत्ता और विश्वविद्यालयों के प्रतिनिधित्व में छात्रों की मांगें लेकर उनके आंदोलन को दिशा-निर्देश दें। २७ फरवरी को छात्रों ने ऐलान किया कि अगर मांगें मंजूर नहीं हुईं तो वे बाध्य होकर १८ मार्च को विधान सभा का घेराव करेंगे।

इधर जयप्रकाश की भूमिका यह बनती गयी कि "राष्ट्र एक दूसरे सन ४२ के किनारे पर खड़ा है। एक दूसरी क्रांति होने जा रही है। शहरों में हिंसाकांड, विद्यार्थियों के उपद्रव और कहीं दूसरे प्रकार से जनता का असंतोष, दुःख प्रकट हो रहा है, देहातों में भी लोगों के दिलों में, मानस में परेशानी है। ये चिह्न हैं आनेवाली क्रांति के।' संक्षेप में उनकी भूमिका जो मैं समझा हूं यह थी कि देश क्रांति के किनारे है और युवाशक्ति उसकी अगवानी करेगी। यह जयप्रकाशजी की भूमिका और बिहार के छात्र संघर्ष द्वारा की गयी घोषणा कि गुजरात की पुनरावृत्ति बिहार में करनी है, इन दोनों भूमिकाओं से बिहार आंदोलन शुरू हुआ।

जयप्रकाश की इस भूमिका का स्पष्ट अर्थ यह होता है कि संसदीय लोकतंत्र से

देश के सब सवाल हल हो सकते हैं, इस भूमिका में अब उनका विश्वास नहीं रहा है। यदि ऐसा होता तो क्रांति की जरूरत ही नहीं होती। साथ-साथ उनके भाषणों में आज की चुनाव पद्धति पर अविश्वास भी जाहिर होता गया। मैं यहां से ही आपको कह सकता हूं कि इन चुनावों के परिणाम क्या होंगे। और बिहार आंदोलन में १६ नवम्बर तक जारी किये गये सब तरीके उनकी मांगों के पीछे जनशक्ति कितनी है, इसका प्रदर्शन करनेवाले थे। १६ नवम्बर की घोषणा के बाद ही इन तरीकों की गहराई एकदम कम हो गयी या बंद करा दिये गये। और फिर जयप्रकाश ने 'जनता की इच्छा चुनाव में प्रदर्शित होगी' इस अर्थ का इन्दिरा गांधी का विचार मान्य किया। जो आलोचक जयप्रकाश का जनतंत्र में विश्वास नहीं रहा, ऐसा आक्षेप करते हैं, उनका कारण यही है। जनतंत्र में लोकमत क्या है, यह तय करने का चुनाव के अलावा दूसरा कोई पर्याय नहीं है, और बिहार आंदोलन के शुरू में जयप्रकाश की यह भूमिका नहीं थी।

बिहार आंदोलन जिस पद्धति से चलाया गया उसके बारे में मेरा यह आक्षेप है कि उसके तरीके प्रतिपक्ष यानी सरकार को हिंसात्मक कार्यवाही करने के लिए यदि मजबूर करने नहीं तो उकसानेवाले थे। इसका यह अर्थ नहीं है कि सरकार के द्वारा वहां जो दमन हुआ उसकी तरफदारी मैं कर रहा हूं। शांतिमय प्रतिकार का स्वरूप क्या हो, इस विषय पर जनता को, उनके नेताओं को, तथा सरकार को अभी बहुत कुछ सीखना है। मैं यहां यही कहना चाहता हूं कि गुजरात के भाषणों में जयप्रकाश ने छात्र आंदोलनों के जो गलत तरीके बतलाये उन तरीकों को बिहार में अपनाया गया। गुजरात में जयप्रकाश ने घेराव का विरोध किया था। विधायकों पर 'प्रेशर टैक्टिक्स' का उपयोग न किया जाये, भीड़ की शक्ति का प्रदर्शन न किया जाये, यह सलाह उन्होंने गुजरात में दी थी। किन्तु बिहार में यह सब प्रयोग किये गये। खासकर सरकार की तरफ से गिरफ्तारी जब होती है तब उसको रोकने की चेष्टा नहीं होनी चाहिए। कारण कि हम गुनाह जान-बूझकर कर रहे हैं जिसका परिणाम गिरफ्तारी में होता है। बिहार में यह हुआ है।

कई कारणों से जयप्रकाश और कांग्रेस की नेता इन्दिरा गांधी में पारस्परिक विश्वास की कमी पैदा हो गयी है। जब तक यह स्थिति है तब तक बिहार आंदोलन खतम होनेवाला नहीं है। इसलिए विधानसभा विसर्जन की मांग में मेरा विरोध नहीं है। जयप्रकाश कहते हैं कि अगर विधानसभा का विसर्जन हो जाये तब मैं पूरी ताकत के साथ सरकार से सहयोग करूंगा किन्तु ऐसा तब तक नहीं होगा जब तक कि दोनों के दिल परस्पर/एक-दूसरे के बारे में साफ नहीं हो जाते। और इसके सब कारण गुजरात की घटनाओं में पहले के हैं, बाद के नहीं। यानी गुजरात के दौरे के बाद जब जयप्रकाश इन्दिरा गांधी से मिले तब यह हालत थी कि बातचीत के दौरान इन्दिरा गांधी ने अगर जयप्रकाश का सहयोग मांगा हो और उन्होंने देने का आश्वासन दिया हो तो भी पूरा मेल-मिलाप नहीं हुआ। वरना बिहार की घटना ही नहीं होती। यहां के विद्यार्थियों के आंदोलन को जयप्रकाश कभी भी रोक सकते थे। उनकी मांगें भी पूरी करने का आश्वासन मुख्यमंत्री व शिक्षामंत्री ने दिया था यानी जिसे वे मंजूर कर सकते थे। भ्रष्टाचार या महंगाई मिटाने की बात मंजूर करना असम्भव था। कारण कि यह उनके वश की बात नहीं थी। मेरा ऐसा ख्याल है कि विद्यार्थियों को किसी भी परिस्थिति में आंदोलन करना ही था। इसलिए मांगें पूरी नहीं हुईं, यह एक बहाना ही था। कारण कि १८ मार्च की विधानसभा की बैठक का घेराव

तो २७ फरवरी को ही जाहिर हुआ था और उसके बाद शिक्षा मंत्री से मांगों के बारे में बातचीत होती रही। मुझे ऐसा लगता है कि देश क्रांति के किनारे है और युवा शक्ति उसका नेतृत्व करेगी, इस भूमिका के अनुसार बिहार की युवाशक्ति को अपने काबू में रखने की जरूरत जयप्रकाश को १८ मार्च की पटना के बाद ही महसूस हुई, इसके पहले नहीं। शायद इस तरह का आंदोलन हो, ऐसा वे चाहते ही थे।

छात्र तो पहले से ही मंत्रिमंडल का इस्तीफा और १४ मार्च के बाद विधानसभा का विसर्जन चाहते थे। कारण उनको गुजरात की पुनरावृत्ति करनी थी। जयप्रकाश की शुरू की भूमिका यह थी कि इससे कुछ मूलभूत परिवर्तन नहीं होगा। किन्तु २४-२५ अप्रेल को उन्होंने इन दोनों मांगों का समर्थन किया। उस समय उन्होंने इस विचार परिवर्तन के कारण नहीं दिये। उस समय अखबारों में इस पर कुछ टीकाएं भी हुईं। इसका कारण जयप्रकाश ने सबसे पहले अपने १४ जून के बयान में बताया। पहला था राजकीय और शासकीय भ्रष्टाचार, दूसरा था विधानसभा के कांग्रेस पक्ष में आपसी गहरे मतभेद जिनका दु-परिणाम लोगों के हितों पर हुआ, और तीसरा था बिहार के छात्रों के शांतिमय आंदोलन को सरकार ने जिस तरह से कुचल देने का प्रयत्न किया वह। इनमें से पहले दो कारण तो ऐसे थे जो बहुत पहले से ही चले आये थे, वे कोई नये नहीं थे। तीसरे कारण से जयप्रकाश को गहरी चोट पहुंची और फिर उन्होंने छात्रों की वही मांग मंजूर की जिसके पहले वे खिलाफ थे। मेरे व्यक्तिगत विचार से विधानसभा के विसर्जन की मांग करने के लिए यह कारण अपर्याप्त है। मेरे लिए यह मांग केवल गुजरात की नकल सी साबित हुई।

आंदोलन के मूल कारण तो यह बतलाये गये कि उनका उद्दिष्ट (१) भ्रष्टाचार निर्मूलन (२) महंगाई रोकना (३) बेकारी को रोकना और (४) शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन-यह है। यह चारों योजनाबद्ध वृत्ति के विषय हैं, आंदोलन के नहीं। यह बात तो जयप्रकाश भी मानते हैं। देश के जो असली दर्द और दुख हैं वे सरकार से सहयोग के विषय हैं, आंदोलन के नहीं हैं। यदि यह देश के लिए जरूरी है, तो सहयोग कैसे मिलेगा?

अब तो बिहार आंदोलन ने अखिल भारतीय स्वरूप लिया है। उसका अखिल भारतीय स्वरूप इन्दिरा सरकार को हटाना, यह है। सन १९७६ के चुनाव में यह सामना होगा। प्रश्न यह है कि बिहार आंदोलन के आज के स्वरूप में सर्व सेवा संघ के सदस्यों को क्या करना चाहिए? बिहार के चुनाव में और अन्य प्रदेशों के चुनाव में बुनियादी अंतर होगा? बिहार में कांग्रेस और सी. पी आई को छोड़कर बाकी सब पक्ष एक हो गये हैं। कहा जाता है कि हरेक पचायत में, ब्लाक में, जिले में, छात्र संघर्ष समिति और जनसंघर्ष समिति उम्मीदवारों का चयन करेगी। इन समितियों में वही लोग हैं जो आन्दोलन के पक्ष में हैं। वे ही जनता के प्रतिनिधि होंगे और शायद कांग्रेस और सी. पी आई. के खिलाफ चुनाव लड़कर जीत भी जायेंगे। बाद में नयी सरकार बिहार में बनेगी। उसको जयप्रकाशजी का सहयोग मिलेगा।

इसका अर्थ यह नहीं लगायें कि किसी जनांदोलन के मैं विरुद्ध हूं या जनतंत्र में जनान्दोलन को कोई स्थान नहीं है, ऐसा मेरा विचार है। जब किसी भी समस्या का हल करने के लिए सब वैधानिक उपाय हार जाते हों तो सत्याग्रह जरूर ही होना चाहिए। और उस हालत में आन्दोलन की जरूरत है। और वह होना भी चाहिए। ऐसे आंदोलन के कोई निश्चित उद्दिष्ट होंगे। और उनकी पूर्ति के लिए यह आंदोलन होगा। बिहार-आंदोलन के शुरू के उद्दिष्ट क्या थे और अब क्या हैं, यह अभी तक मैं समझ नहीं सका हूं। कहने के लिए तो भ्रष्टाचार, महंगाई इत्यादि चार उद्दिष्ट बतलाये गये हैं, किन्तु वास्तव में विधानसभा का विसर्जन ही एकमेव मांग है जिसका उन उद्दिष्टों से कुछ भी सम्बन्ध नहीं दीखता। संघर्ष से जन-शक्ति का निर्माण हो सकता है, यह एक नयी भूमिका बिहार आंदोलन के पीछे दिखाई पड़ती है, किन्तु यह जन-शक्ति रचनात्मक होगी या विध्वंसात्मक होगी, यह बड़ा प्रश्न है जिसका उत्तर भविष्य ही दे सकेगा। अभी तक बिहार आंदोलन द्वारा जो जनशक्ति निर्माण हुई है उसके द्वारा ऐसा कोई अनुभव नहीं आया है। जो कुछ देखने में आया उससे तो ऐसी जनशक्ति की प्रवृत्ति विध्वंसात्मक ही दीखती है।

जयप्रकाश का जवाब है कि 'बिहार की विधानसभा का विसर्जन पहले हो। कारण *यह जनता की मांग है।* इस सिलसिले में उन्होंने कहा है 'इसमें जितनी देर होगी, प्रतिष्ठा पर उतनी ही आंच आयेगी'। इन्दिराजी का यह रुख है कि "मैं इस्तीफा दूंगी, लेकिन बिहार की विधानसभा का विसर्जन नहीं करूंगी।' इन भूमिकाओं में बिहार का सब मामला फंस गया है। ऐसी भूमिकाओं में सहयोग विधानसभा के विसर्जन के बाद भी कभी मिलेगा? एक तो जिस सर*कार का हम सहयोग चाहते हैं* उस सरकार का 'हम हार गये यह ख्याल होगा', तो उस सरकार में सहयोग की वृत्ति कैसे पैदा होगी? मुझे ऐसा लगता है कि बिहार विधानसभा के विसर्जन से भी कुछ नहीं होगा। यह प्रश्न बाद में खड़ा हुआ है। जिन कारणों से जयप्रकाश और इन्दिरा में मतभेद निर्माण हुए वह सब १५ जनवरी के पहले के हैं। तब गफूर सरकार या विधान सभा विसर्जन का कोई प्रश्न ही नहीं था।

सर्व सेवा संघ की नीति चुनावों से अलग रहने की है। ये माना कि सर्व सेवा संघ के सदस्य चुनाव में खड़े नहीं होंगे परन्तु संघर्ष समितियों के उम्मीदवारों के लिए प्रचार तो करना ही पड़ेगा। और यह कांग्रेस पक्ष तथा सी. पी. आई. के विरुद्ध करना पड़ेगा। क्या यह करना उचित होगा? भविष्य में हमारा कार्य क्या होगा? इस पर प्रश्न का सही उत्तर निर्भर है। कारण ऊपर दर्शाया गया बिहार आंदोलन का स्वरूप है जो चुनाव के बाद खतम होगा। यदि यह बात सही है, और जयप्रकाश भी उसे मानते हैं कि पार्टीलैस लोकतंत्र से भारत अभी बहुत दूर है, तो यह मानना पड़ेगा कि भविष्य में पक्ष रहेंगे ही। एक चुनाव में हारने से तो कांग्रेस नष्ट होगी नहीं। तो क्या हमारी पक्षरहित भूमिका को छोड़कर एक पक्ष का विरोध

करना सर्व सेवा संघ के सदस्यों को उचित होगा ? इसका उत्तर स्पष्ट है कि विनोबाजी ने भी निःसंदिग्ध रूप से कह दिया है—किसी भी पक्ष से सम्बन्धित नहीं और जनता की निरपेक्ष सेवा करना यह जिनका ध्येय है, ऐसी यदि सर्व सेवा संघ के जमात को अपना कायम रहना है तो सब चुनावों से हमको दूर रहना चाहिए।

कहा जाता है कि छात्र संघर्ष समिति और जन संघर्ष समिति द्वारा खड़े किये गये उम्मीदवार जनता के प्रतिनिधि होंगे। मेरे विचार से यह 'बहस के बीच एक बात को सत्य मान लेना (बेगिंग दि क्वश्चन) है। जो बात आप सिद्ध करना चाहते हैं यह इसमें गृहीत मान ली है। पूरी ग्राम-सभा बुलाकर सर्वसम्मति से तो इनका चयन होगा नहीं। ऐसी हालत में जो हमारी चयन की पद्धति है उसका आधार लेकर यह उम्मीदवार वैसे ही होंगे यह कहना कहां तक ठीक होगा ?

यही एक प्रश्न आज हमारे सामने है।

आज की परिस्थिति में भारत का उद्धार कैसे होगा ? जरूरत सरकार को बदलने की है या जनता का चारित्र्य ऊंचा उठाने की है। आखिर लोकशक्ति तो चरित्रवान जनता की ही बनेगी। जनता का चारित्र्य ऊंचा उठाना है तो यह कार्य लोकसेवकों के जरिये ही हो सकता है। इसलिए लोकसेवकों की जमात बढ़ना अत्यन्त जरूरी है। क्या एक सरकार को हटाकर दूसरी सरकार कायम करने के प्रयत्न से यह साध्य होगा ? आज की सरकार के समर्थन की मेरी भूमिका नहीं है। जहां सरकार ने कोई गलत कदम उठाया है वहां उसका विरोध जरूर किया जावे। आज की संघर्षवालों की यह भूमिका दिखाई देती है कि इन्दिरा गांधी की सरकार से कोई भी और किसी भी अच्छे कार्य की अपेक्षा नहीं रखी जा सकती। मेरे ख्याल से यह भूमिका गलत है और यही आज के संघर्ष की मूल भूमिका दिखाई देती है। ऐसी परिस्थिति में यह मानना कि बिहार का चुनाव सर्व सेवा संघ के विचार अनुकूल पक्षाभाव जनतंत्र (पार्टीलेस डेमोक्रेसी) के अनुसार ही होगा यह पूरी भूल मालूम होती है। इसी कारण से शायद जयप्रकाश ने भी गाजीपुर में यह सुझाव दिया था कि ऐसी तरकीब निकाली जावे जिससे (१) संघ न टूटे (२) उसकी पक्षाभाव भूमिका बनी रहे व (३) जिनको बिहार आंदोलन में जाना ही है-उनको जाने की छूट रहे। मैं समझता हूं कि जिनको बिहार आंदोलन से निकले हुए चुनाव में हिस्सा ही लेना है तो वे संघ के सदस्य के नाते ऐसा न करें। कारण कि वह लोकसेवक की निष्ठा के अनुसार नहीं होगा। संघ का यह सर्वमान्य कार्यक्रम नहीं है, ऐसा सोचकर, अपनी व्यक्तिगत अनुकूलता के अनुसार चुनाव में सम्मिलित होने का तय करें। O

गुंजाइश दोनों दृष्टियों की

—देवेन्द्रकुमार

सर्वोदय अर्थात् रचनात्मक कार्य के क्षेत्र में दो दृष्टियां हो जाने के कारण एक गंभीर स्थिति उत्पन्न हो गयी है। एक दृष्टि तो उन लोगों की है जो सदैव ही समाज कार्य द्वारा सामाजिक परिवर्तन लाने में उससे सम्बन्धित सभी तत्वों का सहयोग प्राप्त करने के पक्ष में रहे हैं। दूसरी दृष्टि उन लोगों की है जिनको बहुत अरसे से यह लगता रहा है कि सर्वोदय और रचनात्मक कार्य का आन्दोलन, जो शांति के साथ न्याय का और न्याय के साथ शांति का आंदोलन है, अन्याय के प्रतिकार के पहलू को विकसित करने में असमर्थ रहा है। सहयोग की मूल दृष्टि को बनाये रखते हुए भी ऐसे बिन्दु आ जाते हैं जबकि सत्ताधारियों के साथ असहयोग करना या उनका विरोध करना आवश्यक हो जाता है। इनको लगा है कि सरकार तथा प्रस्थापित व्यवस्था उसी दिशा में परिवर्तन का मार्ग अपनायेगी जब वे ऐसे जनमत से विवश किये जायेंगे जिसके पीछे जनता का सक्रिय समर्थन होगा।

युवकों ने इस दिशा में उसी समय से सक्रिय रुचि लेनी प्रारम्भ की जब श्री जयप्रकाश नारायण ने उनके लिए नवम्बर १९७३ में उनका आह्वान किया था। इससे गुजरात की सरकार के विरुद्ध वहां के छात्र आंदोलन को बल मिला और वहां की सरकार भंग की गयी। बिहार के छात्रों को भी अपनी सरकार से शिकायतें थीं। अपने आंदोलन के लिए उन्होंने जे. पी. का मार्गदर्शन चाहा। उन्होंने उसका नेतृत्व स्वीकार भी कर लिया। इस आंदोलन में शीघ्र ही बिहार की विधानसभा को भंग किये जाने की मांग उत्पन्न हो गयी। सरकार की दमन नीति के कारण आंदोलन में तीव्रता आती गयी, किन्तु जे. पी. के नेतृत्व तथा बड़े सर्वोदय नेताओं के भी उसमें आ जाने और अहिंसा पर उनके बल देने से आन्दोलन शान्तिपूर्ण ही बना रहा और वह देश भर की सहानुभूति प्राप्त करता जा रहा है।
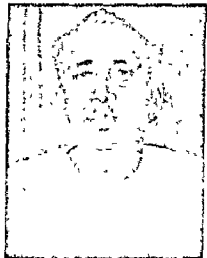
वर्धा में हुए जुलाई ७४ के संघ अधिवेशन में बिहार आन्दोलन पर मतभेद उभर कर सामने आ गये थे। परंपरागत दृष्टिवालों का विचार था कि विनोबाजी इस मत का अनुमोदन करते हैं कि समाज के बुनियादी प्रश्न आमना सामना करके हल नहीं किये जा सकते हैं और सर्वोदय के विचार से मेल खानेवाला तरीका यही है कि जनता को शिक्षित किया जाये, समझाया-बुझाया जाये और सभी सम्बन्धित लोगों के सहयोग से कदम उठाये जायें। उस समय विनोबाजी के कारण दोनों विचार के लोगों में समझौता हो गया और यह तय रहा कि सर्वोदय के अन्तर्गत सत्य, अहिंसा

तथा सयम की सीमा मे आदोलनो का प्रयोग किया जा सकता है तथा जो उस विचार के हैं वे उसमे भाग ले सकते हैं, जो उसमे असहमत हैं वे अपने रास्ते पर ही चलते जा सकते हैं।

इन दो दृष्टियोवाले लोगो मे सदैव मधुर सम्बन्ध न रह सके। बिहार आन्दोलन का दायरा गहरा और व्यापक होता गया और उस सघर्ष ने अन्त मे सरकार को चुनाव द्वारा हटाने की चुनौती स्वीकार कर ली। वे रचनात्मक कार्यकर्ता जो उससे अलग रहे थे, पृथकता अनुभव करने लगे और उनको यह भी महसूस हुआ कि वे भी आदोलन के भवर मे खिचते जा रहे हैं क्योकि बाहरवाले उनमे तथा आन्दोलन मे भाग लेनेवालो मे अन्तर नहीं कर रहे हैं और इस परिस्थिति मे उनकी सहयोगात्मक दृष्टि को अभिव्यक्ति नही मिल पा रही है। इससे दोनो विचारधाराओ मे आपसी मतभेद और बढे। इस तरह जो राजनीतिक दृष्टि से तटस्थ रहना चाहते थे उनके लिए स्थिति असह्य हो गयी। परिस्थिति उनको इसके लिए विवश कर रही थी कि उन्हे चुनाव के बारे मे अपना रुख स्पष्ट कर देना चाहिए। मौन धारण करने के पूर्व विनोबाजी ने यह सलाह दी थी कि उन लोगो को जिनको आदोलन के फलस्वरूप कुछ राजनीतिक दलों के विरुद्ध चुनाव मे काम करना पड रहा है, अपने को सर्व सेवा सघ से छुट्टी पर मानना चाहिए। उनका कहना था कि इससे सघ की निष्पक्षता बनी रहेगी और उस पर विशेष परिस्थिति-वश अस्थायी रूप से अपनाये गये पक्षपातपूर्ण रवैये का प्रभाव नही पडेगा। इस प्रश्न पर सघ का अधिवेशन होने जा रहा है। आशा की जाती है कि दोनो पक्ष सघर्ष से बचेंगे और एक-दूसरे के उद्देश्यों की सच्चाई तथा सिद्धातप्रियता को समझने मे समर्थ होगे। जिस प्रकार उन लोगो के लिए जो इस समय प्रतिकारात्मक कार्यक्रम की अनिवार्यता में विश्वास करते हैं उनका हीन दृष्टि से देखना गलत होगा जिनका उनसे सैद्धातिक मतभेद है, उसी प्रकार उन लोगो को भी, जो यह अनुभव करते हैं कि दूरदृष्टि से वांछनीय सामाजिक परिवर्तनो के लिए अधिक धैर्य की तथा यथास्थितिवादियों के हृदयो को जीतने के लिए गहरे कार्यों की जरूरत है और जिनका विश्वास सभी सम्बन्धित लोगो के सहयोग से जनता मे नये मूल्यो की स्थापना के लिए उत्साह उत्पन्न करने मे है, उनका दूसरे विचार के लोगों की 'आलोचना करना और साथ छोडना गलत होगा। इस दूसरे समूह ने सत्य, अहिंसा और सयम के गाधीजी के बुनियादी सिद्धातो मे विश्वास रखते हुए भी उचित समझा है कि वह युवको, राजनीतिक समूहो तथा जनता की जिनकी न्याय के लिए माग पूरी नही की गयी है, तरफदारी करे। उनका यह विश्वास है, जैसा कि ए० जे० मस्ते का भी था, कि बगैर सत्याग्रह के शक्तिशाली साधनो को अपनानेवाले एक अल्पमत वर्ग के भारत मे गाधीजी की क्रान्ति नही लायी जा सकती है।

सत्य के क्षेत्र मे प्रयोग की बडी गुजाइश है। विरोध मे लगे लोग यदि सफल होते हैं तो वे विभिन्न मत के लोगो को भी जीतने मे सफल होंगे; नही तो उनका स्वयं का मत बदल जायेगा। प्रतिकारात्मक जन-सत्याग्रह का औचित्य उन्हीं क्षेत्रों मे है, जहा समाज ने एक सही मूल्य को पूर्णतया या लगभग अपना लिया है और कोई शक्तिशाली अल्पमत अपने लाभ के लिए उसका निरादर कर रहा है।' इसके विपरीत, उन क्षेत्रो मे जहा समाज ने नये मूल्यो को स्वीकार नही किया है—और ऐसे क्षेत्र बहुत-से हैं—आवश्यकता इसकी है कि समझा-बुझाकर और उदाहरण प्रस्तुत करके जन-शिक्षण किया जाये। इन दोनो प्रकार की पद्धतियो का स्थान है। उनमे विरोध न होना चाहिए और न उनको लागू करने मे विवेकशून्यता बरती जानी चाहिए।

व्यक्तिगत रूप से इच्छा तो यह है कि सघर्ष का क्षेत्र न्यूनतम बने और सहयोग के क्षेत्रो की अधिकाधिक खोज की जाये जिससे देश की पूरी शक्ति न्यायपूर्ण की स्थापना मे लग सके। ○

सर्व-सेवा को सिद्धि अविरोधी भावना से करें

—धीरेन्द्र मजूमदार

सर्व-सेवा-सघ का बहुमत जे पी के आदोलन के पक्ष मे अवश्य है लेकिन आदोलन का समर्थन सघ के सदस्यो द्वारा सर्वानुमोदित नही है। इसलिए मेरी मान्यता यह है कि सर्व-सेवा-सघ के नाम से किसी को आदोलन मे नही पडना चाहिए। मैंने सर्व-सेवा-सघ को यह सलाह दी है कि जब तक सर्व-सम्मति नही होती है तब तक सर्व-सेवा-संघ को स्थगित कर दिया जाये और एक दूसरे को तब तक समझाता रहे जब तक सर्व-सम्मति न हो जाये। जयप्रकाश बाबू के आदोलन को लोग 'सपोर्ट' करना चाहते है, वे व्यक्तिगत रूप से अपनी रुचि के अनुसार अपना काम करें और अपनी रुचि के अनुसार सर्व-सेवा की सिद्धि जिसमे देखते है वैसा अविरोधी भावना से करें अर्थात पक्ष और विपक्ष की भावना को समाप्त कर साम्य बिन्दु पर एक दूसरे के साथ सहकार करें। यह जो विचार है कि सर्व-सेवा-सघ से बहुमत वाले इस्तीफा दे दें या अल्पमतवाले इस्तीफा दे दें, यह सही नही है। दोनों मे विचार-दोष है, ऐसा मैं मानता हू।

मैं बिहार आदोलन को ग्रामस्वराज्य की पूर्व तैयारी का एक कदम मानता हू। लेकिन मैं प्रारम्भ से ही कहता रहा हू कि जो लोग ग्रामस्वराज्य का सीधा काम कर रहे है वे इस 'टोटल रिवोल्युशन' (सम्पूर्ण-क्राति) के रचनात्मक पहलू का काम कर रहे हैं और बिहार-आदोलन उसका आदोलनात्मक पहलू है।

बिहार मे जो काम हो रहा है, मैं ग्रामस्वराज्य का जो सीधा काम कर रहा हू, विनोबाजी अपने अभिध्यान से जो काम कर रहे हैं, आचार्य तुलसी नैतिक वातावरण बनाने का काम कर रहे हैं, यह सब मिलाकर 'टोटल-रिवोल्यूशन' यानी सम्पूर्ण क्राति बनती है। उस क्राति में हरेक का भिन्न रोल है और इसीलिए मैं हरेक काम को सपोर्ट करता हू।'

मैं सर्व-सेवा-सघ मे नहीं हू।' यद्यपि मैं सर्व-सेवा का काम कर रहा हू और वह काम ग्रामस्वराज्य के लिए लोकशिक्षण का है। ○

गाँधी और विनोबा के प्रयोगों का परिपाक

—दादा धर्माधिकारी

स्वराज्य प्राप्ति के बाद विचार तो यही था, कि सार्वजनिक जीवन से निवृत्त होकर किसी जगह, एकान्त मे नहीं, जीवन बिताता रहूं। परन्तु नियति कुछ और थी। पाँच वर्ष मध्यप्रदेश की विधानसभा और भारतीय संविधान परिषद मे रहा। कुछ खोया-खोयासा, भूला-भटकासा—एक हद तक अनमनासा—लगातार बापू से तकाजा करता रहा, कि यहां से मुझे हटा लीजिये, तबीयत नहीं लगती। संविधान परिषद मे मुँह नहीं खोला। यों, वाचालता के लिए मेरी काफी शोहरत है। ऐसी ही कुछ शून्यमनस्क स्थिति मे था, कि इतने में भूदान की धीमी-धीमी आहट कानपर आयी। अन्तस्तल से प्रतिध्वनि उठी। सहज भाव से भूदान मे भाग लेने की प्रेरणा हुई।

मैंने यह तो कभी नहीं माना था, कि अंग्रेजी राज से स्वराज्य बेहतर होगा। अंग्रेज भारतीय नागरिकता, सम्प्रदाय-निरपेक्ष और जातिनिरपेक्ष वैधानिक समानता, सार्वत्रिक शिक्षण का अधिकार, लोकतंत्र की चेतना आदि कई नये-नये तत्व लेकर इस देश में आये थे। गुलामी की मरुभूमि मे ये पौधे पनप नहीं पाये। जिन गमलो में अंग्रेजो ने उन्हें पनपने-पोसने की कोशिश की थी, उनमें आजादी के बाद दरारें पड़ गयीं। पौधे मुरझा गये। फिरसे सम्प्रदायवाद, जातिवाद, क्षुद्र प्रदेशवाद और भाषावाद जैसे अनर्थकारक विकारों का प्रादुर्भाव हुआ। यह सब मेरे लिए अनपेक्षित नहीं था। व्यथित तो हुआ, लेकिन चकित नहीं हुआ। हताश भी नहीं हुआ।

परन्तु चित्त मे एक जबरदस्त कसक रहा करती थी, एक टीस निकलती थी। खुशी इस बात की थी कि हमारे देश का कगाल, निहत्था और अनजान आदमी दिल्ली के तख्त का मालिक तो बन गया। लेकिन कसक इस बात की थी, कि दिल्ली का शहनशाह बनने पर भी वह मुहताज, मजदूर और भूखा-नंगा ही रह गया। गहराई मे सोचने पर इसकी वजह का पता लगा। वजह यह थी कि हुकूमत तो उसकी हो गयी, लेकिन दौलत उसकी नहीं हुई। वह राजा बन गया लेकिन मालिक नहीं बना। तख्त व ताज उसका हो गया लेकिन जमीन उसकी नहीं हुई। भूखों के देश मे मुख्य समस्या भूख ही की है। भूख का जवाब अन्न है। भूख का जवाब खेती है। ऋषि और पैगंबर की पारदर्शक दृष्टि से विनोबा ने जो दरिद्र राजा बन गया था उसे मालिक बनाने की प्रक्रिया का आविष्कार किया। यही भूदान-यज्ञ था।

यह शास्त्रियो के वश की बात नहीं थी। इसके लिए तो मंत्रद्रष्टा विभूति के दिव्य चक्षु की आवश्यकता थी। शास्त्री परम्परा का विवरण करता है। वह प्रचलित सामाजिक प्रणालियो की वेदी पर अर्चना करता रहता है। वह संस्कृति का अभिभावक होता है, प्रणेता नहीं होता। सांस्कृतिक पुनरुज्जीवन और सांस्कृतिक संजीवन उसकी कक्षा के बाहर के प्रयोग हैं। विशेषज्ञ और सिद्धहस्त कार्यकर्ता के सामर्थ्य के बूते की भी यह बात नहीं है। प्रवीण विशेषज्ञ वह है, जो आसानी से मुश्किल काम कर लेता है। कुशलता जिसे दु:साध्य समझती है, प्रतिभा उसे सहजता से कर लेती है। परन्तु प्रतिभा को भी जो असम्भव प्रतीत होता है उसे जो सुलभ बना देता है, उसे विभूति कहते हैं। स्वराज्य के बाद ऐसे विभूतिमत्व के दर्शन विनोबा के रूप मे हुए। भूदानयज्ञ एक मंत्र भी था और यज्ञ भी। एक दर्शन भी था और एक यज्ञ भी। उस यज्ञ के प्रणेता और प्रवर्तक ने उसे प्रजासूय यज्ञ कहा। और स्वयं यजमान होना या अध्वर्यु बनने की आकांक्षा रखने के बदले अनुपम नम्र भाव मे उस प्रजासूय यज्ञ के श्यामकर्ण अश्व बन गये। सारे भारतवर्ष में उद्गाता की निष्ठा से और सहस्र मुखवाले शेष की सामर्थ्य से उस यज्ञ का उद्गायन और संकीर्तन किया। भारतवर्ष के और शायद संसार के इतिहास मे विनोबा की पदयात्रा की कोई मिसाल नहीं है। भारत की धरती मानो मुखरित और अभिमंत्रित हो उठी। बेनिहरों की और सुखियो की आकांक्षाएं और आशाएं आसमान मे गूँज उठीं। उस गूँज मे विग्रह का विसंवाद नहीं था। सहयोगात्मक क्रांति का संवादी संगीत था। आर्थिक क्रांति की विनोबा की प्रक्रिया केवल कलात्मक ही नहीं थी, उसमे ललित-कला की माधुरी भी थी। २५ दिसम्बर १९७४ को मौन लेने से एक या दो दिन पहले आत्मप्रत्ययपूर्वक इस अनूठे क्रांतियोगी ने कहा था, "मुझे गांधी ने अपने आध्यात्मिक ऐश्वर्य का उत्तराधिकारी बनलाया। मैंने अपनी आत्मशक्ति के अनुसार उस उत्तराधिकार का संरक्षण और संवर्धन किया है।" यह अहंकार का उन्मत्त आक्रोश नहीं है, आत्मप्रत्यय का हुंकार है। १९२० से लेकर १९४७ तक गांधी को विधायक और प्रतिकारात्मक असफल प्रयोग करने पड़े। लेकिन उन असफल प्रयोगों की उपलब्धियां दूसरों की सफल प्रयोगो की उपलब्धियों की अपेक्षा कहीं अधिक प्रगतिकारक, लोकोपकारक और उज्ज्वल रहीं। गांधी के प्रयोगो के कारण ही तो दास, नेहरू, राजाजी, अलीबंधु, बादशाह खां और सरदार पटेल जैसे नररत्नो का पानी प्रकट हुआ। निःस्पृह त्यागी और पराक्रमी तथा लोकनिष्ठ कार्यकर्ताओं का एक सैन्य खड़ा हो गया। भूदान की उपलब्धियां किसी कदर कम नहीं हैं। उनमें से जयप्रकाश का विभूतिमत्व, व्यक्तित्व अपनी सारी कांति के साथ निखर उठा। समाजवाद, लोकसत्ता और सजीव भावना सहित शांतियोग के समन्वय का रास्ता अदम्य क्रांतिकारी

जयप्रकाशजी के सामने एकाएक स्पष्ट हो गया। उस मार्ग को प्रशस्त करने में उन्होंने अपना जीवनदान दे दिया। बीस वर्ष तक अपनी सारी ऊर्जा, सारी प्रतिमा और सारी कुशलता भूदानयज्ञ को सफल बनाने के लिए अप्रतिम एकाग्रता से केंद्रित कर दी। यह समर्पण भी अनूठा था, लासानी था। शांतिमय शूरता ने जयप्रकाशजी की वीरवृत्ति को सशोधित और आलोकित कर दिया, जिसका परिपाक हम बिहार के वर्तमान लोकव्यापी आंदोलन में प्रत्यक्ष प्रयोग के रूप में देख रहे हैं।

मेरी दृष्टि मे कार्ल मार्क्स दरिद्र, दलित और पीडित मानवता का पहला पैगम्बर है। उसके सन्देश में तीन सकल्प निहित हैं। एक, ससार से धनसत्ता का अन्त होगा, अर्थात्, गरीबी-अमीरी नहीं रहेगी। दो, राज्यो की सीमाएँ नष्ट हो जायेंगी, अर्थात्, मनुष्य का मनुष्य पर शासन नही रहेगा। तीन, शस्त्रसत्ता और सैनिकसत्ता समाप्त होगी, अर्थात्, न हथियार होगे न लडाइयां। ये सारे सकल्प अभूतपूर्व स्फूर्तिदायक थे। मार्क्स के अनुयायी और उत्तराधिकारी धनसत्ता को विस्थापित करने में एक हदतक सफल हुए, लेकिन राज्यसत्ता और शस्त्रसत्ता के सहारे। फलस्वरूप राज्यसत्ता और शस्त्रसत्ता पहले की अपेक्षा और भी प्रबल और उद्दंड हो उठी। गाधी आया। उसने अपने सत्याग्रह के अपूर्व साधन द्वारा राज्यसत्ता और शस्त्रसत्ता दोनो को सीमित करने का रास्ता रोशन किया। गाधी के उत्तराधिकारी के रूप मे दशग्रन्थी श्रोत्रिय और ब्रह्मनिष्ठ विनोबा आये। उन्होने सहयोगात्मक और सवादी शान्ति की प्रक्रिया का आविष्कार किया। गणित के मुखर अंकों की भाषा मे भी विनोबा की उपलब्धियां शस्त्रधारी और सत्ताधारी समाजधुरीणो की उपलब्धियो की अपेक्षा आकार मे भी विशाल ही रहीं, जयप्रकाशजी ने उन उपलब्धियो का वर्णन अपनी प्रत्ययकारी शैली में कई बार किया है। इन उपलब्धियो के फलस्वरूप एक ऐसा सुयोग प्रस्तुत हुआ जब प्रतिकारात्मक लोकशक्ति के आविर्भाव की सभावना प्रतीत होने लगी। परन्तु वह लोकशक्ति रास्ता नही खोज पा रही थी। बलवा, बगावत, दंगा-फसाद और विद्रोह की पुरानी लीको मे से अधेरी गली मे जाकर कुंठित और परास्त हो रही थी। ऐसी स्थिति मे सत्याग्रह, असहयोग और भूदानयज्ञ के प्रयोगो से प्रशिक्षित और प्रबुद्ध जयप्रकाश नारायण का नेतृत्व घटनाचक्र के स्वाभाविक क्रम मे सहज रूप से प्रकट हुआ।

महाराष्ट्र के एक सुप्रसिद्ध पूर्वमीमासाशास्त्री स्व० आहिताग्नि शंकर रामचन्द्र राजवाड़े के कोई चालीस भाषण नागपुर मे १६२६ मे हुए थे। उन्होने यज्ञ की व्याख्या की थी 'देवपूजा, दान और सगतिकरण'। विनोबा के भूदानयज्ञ मे ये तीनो आयाम चरितार्थ हुए थे। आज जयप्रकाश उसी यज्ञ के उत्तरार्ध का अनुष्ठान नैष्ठिक शाति के आधार पर कर रहे हैं। एक निराले ही अर्थ मे गाधी मार्क्स का उत्तराधिकारी था। विनोबा गाधी के उत्तराधिकारी हैं। और जयप्रकाश के नेतृत्व मे मार्क्स, गांधी और विनोबा तीनो का समन्वित नेतृत्व जयप्रकाश की व्यक्तिगत विशिष्टताओ की मर्यादाओ मे प्रकट हुआ है। इस दृष्टि से उनका वर्तमान आन्दोलन गाधी और विनोबा के प्रयोगो का परिपाक ही माना जाना चाहिए। O

सर्वोदय बनाम बिहार आंदोलन

—नरेन्द्र दुबे
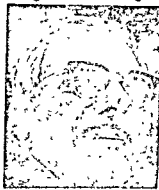
सर्व सेवा सघ के सहमत्री नरेन्द्र दुबे ने सर्वोदय आंदोलन और बिहार आंदोलन को तोला है। उनके अनुसार इन दोनों आंदोलनों मे बहुत बुनियादी तात्विक अंतर है जिसे वे यहाँ बहुत संक्षेप में प्रस्तुत कर रहे है।—सं०

सत्य-अहिंसा बनाम शान्ति और वैध उपाय : जे. पी अक्सर कहते हैं कि वे सत्य-अहिंसा का दावा नहीं करते। आंदोलन शान्तिपूर्ण रहे यही काफी है। इस संदर्भ में अक्सर बापू के और कांग्रेस के बीच के मत-भेद का उदाहरण देते हुए कहते हैं कि कांग्रेस ने बापू के इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया था कि कांग्रेस अपनी कार्य नीति मे शान्तिपूर्ण और वैध उपाय के स्थान पर सत्य और अहिंसा को अपनाये।

लेकिन अब ऐतिहासिक तथ्य सबको मालूम हो गया है कि सन् ३४ से बापू शान्ति और वैध उपायवाली कांग्रेस के चार-आना सदस्य भी नहीं रहे थे। वास्तव में सन् ३४ मे ही बापू कांग्रेस से अलग हो गये थे और इस प्रकार उनका नैतिक समर्थन कांग्रेस खो चुकी थी। उसी कांग्रेस के कारण बापू के अनचाहे सन् ४२ के आन्दोलन मे देश में बेहिसाब हिंसा हुई। अनेक प्रमुख कांग्रेसजन खुले रूप मे रेल की पटरियाँ उखाड़ने और तार काटने का उपदेश देते हुए भूमिगत रहकर काम करते रहे। सन् ४२ के अनुभव के बाद सन् ४७ में सत्य-अहिंसा मे विश्वास करनेवाले बापू के देश का विभाजन न चाहने पर भी शान्ति और वैध उपायवाली कांग्रेस ने देश का विभाजन स्वीकार कर लिया। हमारे सामने इतिहास इस बात का साक्षी है कि शान्ति और वैध उपाय हमें कहां ले जा सकते हैं।

इसलिए सर्व-सेवा-सघ के विधान में और उसके लोकसेवक के निष्ठापत्र मे सत्य और अहिंसा का ही स्थान है, 'शान्तिपूर्ण और वैध उपाय' का उल्लेख तक नहीं है। क्योंकि सर्वोदय का आधार ही सत्य-अहिंसा है, साधन-साध्य अद्वैत है, साधन-शुद्धि है इसलिए सत्य अहिंसा को छोड़कर चलनेवाला आन्दोलन सर्वोदय का आन्दोलन नहीं हो

भारत के समाज की प्राथमिक विचारणा

—काका कालेलकर

एक राष्ट्रसेवक ने कुछ सवाल लिख भेजे हैं, उनमेंसे एक नीचे मुताबिक है—

"काकासाहेब! हमें स्वराज्य मिला, परन्तु उसका आनन्द या उत्साह प्रजामें कहीं भी दीख नहीं पड़ता, बल्कि निराशा ही है। आपके लम्बे समयके अनुभवकी दृष्टिसे इसका क्या कारण हो सकता है?"

हरएक समाजमें नेता और अनुयायी ऐसे दो वर्ग बने हुए होते ही हैं। हरएक युवक (अथवा युवती) शिक्षणमें से गुजरकर ज्ञान पाता है समाजका निरीक्षण करता है, आसपासके लोगोंकी चर्चा सुनता है और बादमें अपने लिए अनुकूल कोई कामधंधा पसन्द कर उसमें कुछ धन कमाता है, साथ ही समाजमें कुछ स्थान और प्रतिष्ठा प्राप्त करता है। फिर समाज-सेवाकी हौस हो तो वह कुछ सेवाकार्य भी शुरू करता है। आगे चलकर उसकी योग्यता देखकर समाज उसको नेताके रूपमें स्वीकार करता है। देश के भिन्न भिन्न प्रदेशोंमें लोग उसे बुलाकर खानगीमें अथवा जाहिरातौर पर उसके सामने समस्याएं रखते हैं और मार्गदर्शन चाहते हैं। समाजसेवाकी संस्थाओंमें ऊंचे स्थान देकर उसका नेतृत्व मंजूर रखते हैं। इस प्रकार नेताओं का वर्ग तैयार होता है। ऐसा नेतृत्व समाजने ही दिया होता है इसलिए उसके प्रति समाजके मनमें आदर होता है और सेवा करते-करते यह नेता लोगोंको तालीम भी देता है। यह है स्वाभाविक परिस्थिति।

परन्तु हमारे यहां जाति-व्यवस्था और वर्ण-व्यवस्था हम चलाते हैं इसलिए हरएक मनुष्यको सामाजिक जीवनमें अपने लिए योग्य स्थान पसन्द करनेका और समाजकी सम्मतिसे नेतृत्व प्राप्त करनेका मौका ही नहीं रहता। अमुक मनुष्य जन्मसे ब्राह्मण है इसलिए धर्मके बारेमें वही जानता है। धर्म-चर्चा ब्राह्मण ही आपसमें करेंगे। बाकीका समाज धर्म-निर्णय ब्राह्मणसे ही प्राप्त करेगा। जो जन्मसे किसान होगा वह और उसके वंशज खेती ही करेंगे, और कोई धंधा करने नहीं जायेंगे। सोनारका धंधा सोनारकी जातिके लोग ही करेंगे, और सामान्य जनताकी जातियां अपने हिस्से आया हुआ मजदूरीका काम शांति से करती रहेंगी।

समाज-व्यवस्था कैसी हो, कैसी चले इसका निर्णय ब्राह्मण जाति देगी। राज्य कैसे चले, उसमें कौनसे परिवर्तन हों इसका निर्णय क्षत्रिय-जाति ही करेगी। बाप-दादाओं का जो धंधा चला आया है उसे वंशज छोड़ ही नहीं सकते। ऐसी वर्ण-व्यवस्थाके कारण समाजके कामके विभाग हो गये और उनके बीचके सहयोगने भी कामके लिए रूप ले लिया। फिर तो राज कौन करे उसकी चिंता क्षत्रिय करें और वह राज्य कैसे चले, उसकी कायमी व्यवस्था ब्राह्मण धर्माचार्य कर दें।

हरएक जातिका अपने लिए संविधान रहता है। अपनी जातिके लिए जो निर्णय करने हों वह जातिके लोग, जातिके बुजुर्ग लोग बहुमतसे करेंगे। उसमें कुछ दोष हों तो ब्राह्मण सुधार सूचित करेंगे। सभी लोग धर्मके *अनुसार चलनेके लिए बंधे हुए थे।*

ऐसी परिस्थितिमें राज्य कौन करे, इसकी चिंता करनेवाले सिर्फ ब्राह्मण-क्षत्रिय थे। ये दो वर्ण जिसे राजा के तौर पर स्वीकार करें उसके प्रति राजनिष्ठा दिखानेके लिए बाकीका समाज बंधा हुआ था।

ऐसी जन्मजात वर्ण-व्यवस्था और जाति-व्यवस्था के कारण विशाल जन-समुदायका जीवन-रस ही मर्यादित हुआ। एक राजा जाये और दूसरा आये तो उसका सुख-दुःख राज्यकर्ताको जमाना जाने। इस प्रकार समाज-मानस बना। इसीलिए जब दो क्षत्रिय राज-कुटुम्ब आपसमें लड़ें और पठान अथवा मुगलोंकी मदद लें तो वह ठीक हुआ या नहीं इसका विचार *ब्राह्मण-क्षत्रिय ही करते थे।* बाकीका समाज ज्यादा सोचे बिना उन दोनों का निर्णय मान्य रखते थे।

इसी कारण हमारे देशमें करोड़ों लोगों के हिन्दू समाजने पठानोंके राज्य चुपचाप मंजूर रखे, बादमें मुगलोंका साम्राज्य मान्य रखा। समाज के नेता ब्राह्मण और राज्य-कर्ता क्षत्रिय जिस वस्तुको चला लेते थे उसके खिलाफ सोचना भी सामान्य जनता के लिए *उचित नहीं था।*

अब हमारे यहां स्वराज्य हुआ, इसका सुख-दुःख सामान्य प्रजाके स्वभावमें नहीं *उतर सकता।* पुरानी समाज-व्यवस्था नहीं रही। चार वर्ण रोटी-बेटी व्यवहारके लिए ही रहे हैं, यह सही है। परन्तु लोक-मानस को तो किसी भी राज्यको चला लेनेका अभ्यास हो गया है। राज्य-व्यवस्था स्वधर्मी हो, चाहे परधर्मी उसे चुपचाप स्वीकारनेकी आदत-वाली जनता बदली हुई परिस्थितियों को पहचानेगी सही, परन्तु उस परिस्थितिका असर उसकी हड्डी और रक्त पर नहीं होगा। सामान्य जनता चुनावमें भाग लेगी, पक्षापक्षी में पनपनेवाली ईर्ष्याको खोलेगी, फिर भी स्वराज्य पानेका उत्साह उसमें जरा भी नहीं *पाया जायेगा। जिस प्रजाने पठान-राज चला* लिया, मुगल-राज चला लिया, पोर्चुगीज और अंग्रेजोंका राज चला लिया वह 'आज चुनाव का राज चला लेनेको तैयार है, परन्तु पारतंत्र्य गया और हम स्वतंत्र हुए हैं, यह उत्साह प्रजामें कहां से आयेगा? मनुष्यके

जीवनने जातिभेदके कारण ऊंच-नीच-भाव जन्मजात आ गया है तब उसमें नया उत्साह उगनेमें देर लगेगी। आज धर्म-व्यवस्थामें चुनाव-धर्म दाखिल हो गया है। हिंदू, मुस्लिम, ईसाई जैसे भीतरसे संगठित और आपसमें एक-दूसरेसे स्पर्धा करनेवाले हैं वैसे ही आजके राजनीतिक पक्षोंकी जमातें बन गयी हैं। मनुष्य अपनी जन्मजात जाति आसानीसे बदल नहीं सकता। कांग्रेस पक्ष और कम्युनिस्ट पक्ष जन्मजात नहीं हैं। उन्हें बदल सकते हैं। लोग अपना एक पक्ष छोड़ कर दूसरे पक्षमें जाते हैं और नयी निष्ठा ग्रहण करते हैं। इसके पीछे सिद्धांत-निष्ठा ही होती है ऐसा नहीं माना जायेगा। जिन लोगोंसे मेरी आत्मीयता हो चुकी हो उन लोगोंकी सलाह मैं मानूंगा। ऐसा न हो सके तब अपने व्यापार-उद्योगमें या नौकरी-चाकरी में जिस ओरसे लाभ मिलने की संभावना हो उस ओर मैं ढल पड़ूंगा, यह वस्तु-हमारी हड्डी-चमड़ीमें उतर गयी है और इसीलिए स्वराज्य मिलनेका और प्रजाराज्य स्थापित होनेका उत्साह प्रजामें दीख नहीं पड़ता हो और चुनावमें जो हीन तत्त्व दाखिल हुए हैं उसके प्रति लोगोंमें नफरत न हो यह भी समझमें आनेवाली बात है।

अभी हम रोटी-बेटी-व्यवहारके द्वारा समाज-संगठन तय करनेके मानसवाले ही हैं। पुराने रस्म-रिवाजोंमें परिवर्तन हुआ है। पुराने आग्रह टूट गये हैं सही। परन्तु हमारी हड्डी-चमडी याने हमारी मनोरचना अभी पुराना गठन छोड़ नहीं सकती। बहुत-सा पुराना टूट गया। परन्तु जैसे धर्म हमारी रग-रगमें फैला हुआ है वैसे राष्ट्रीयता हमारा प्राण नहीं बनी है। इसके लिए शाला-कालेजों द्वारा नहीं, परन्तु जीवनके द्वारा ही प्रजा को तालीम देनी होगी। जैसे गांधीजी एक उच्च आदर्शको लेकर प्रजा पर असर कर सके उसी प्रकार उच्च जीवनका नैतिक आदर्श नेता अपनायेंगे और उच्च नैतिक आदर्शवाले सेवक ही नेता बन जायेंगे तब परिस्थिति बदलेगी। समस्त जीवनका यह सवाल है। केवल राजनैतिक चर्चासे यह सुधार नहीं होगा। गांधीजीने जिस प्रकार अपने आसपास सेवक तैयार किये, उसी प्रकार नये आदर्शवाले सेवक प्रजा-जीवन में परिवर्तन करेंगे तब सुधार होगा। चुनावके उद्देश्यसे होनेवाला प्रजा-शिक्षण प्रायः हीनताको ही बढ़ावा देता है। उच्च आदर्शयुक्त सर्व-धर्म-समन्वयकी शिक्षा प्रजामें अखंड चलेगी तो देखते-देखते स्थिति सुधर जायेगी।

गांधीजीका रचनात्मक काम करनेवाले लोग अलिप्त नहीं रह सकते। सबसे बड़ा रचनात्मक कार्यक्रम जीवन के आदर्शमें परिवर्तन करनेका है। जैसे रोटी-बेटी-व्यवहार रग-रगमें उतर गया वैसे ही सर्वोदय-विचार प्रजाकी रगमें उतरना चाहिये। बादमें वह सर्वोदयी जीवन ही राजनैतिक परिवर्तन करेगा। यह काम चुनावों के द्वारा नहीं होगा।

['मंगल-प्रभात' से साभार]

सर्वोदय में चल रहा मन्थन

—कान्तिलाल शाह

सर्वोदय परिवारमें पिछले एकाध बरस से जबर्दस्त मन्थन चल रहा है। नीति-रीति, मानसिक झुकाव, कार्यपद्धति, परिस्थिति का लेखा-जोखा आदि बातों के बारे में कुछ मत-भेद पैदा हो गये हैं। मूल विचार और आधार-भूत सिद्धांतों के प्रति यों तो अभी तक सब एकमत हैं और सबकी निष्ठा दृढ़ है फिर भी मूल विचार और सिद्धांतों के बारे में अलग-अलग ढंग से सोचने समझने, भाष्य करने और अमल करने की प्रवृत्ति दिखायी देती है और इन्हीं सब बातों को लेकर जहां-तहां बातचीत चलती रहती है।

इस विचार मन्थन को लेकर सभी लोक-सेवकों में कौतूहल, जिज्ञासा और थोड़ी बहुत चिंता होना भी स्वाभाविक है। इसके सिवा प्रकट रूप से कई तरह के अनुमान, अटकल-बाजियां और तर्क-वितर्क चलते रहते हैं। अखबारों में भी तरह-तरह की बातें प्रकाशित होती रहती हैं। आरोप-प्रत्यारोप भी लगाये जाते हैं। और एक दूसरे की आलोचना भी होती है। कोई कहता है कि सर्वोदय कार्यकर्ता विनोबा से हट रहे हैं, उनकी उपेक्षा कर रहे हैं। कोई कहता है कि सर्वोदय कार्यकर्ता स्व-धर्म भूलकर राजनीति के प्रवाह में पड गये हैं। कुछ का कहना है कि जयप्रकाशजी ने आज सच्ची क्रांति शुरू की है इसलिए निरर्थक वितंडावाद और वादावाद में नहीं पड़ना चाहिए। इस तरह अलग-अलग ढंग से बात-चीत चलती है। इसलिए जरूरी है कि हम अपने पाठकों के सामने इस विचार-विमर्श की एक तसवीर पेश करें। मार्च में सर्व सेवा संघ का छमाही अधिवेशन हो रहा है। उसमें संघ और सर्वोदय आंदोलन दोनों की दृष्टि से महत्वपूर्ण चर्चा होगी और निर्णय लिये जायेंगे। उस दृष्टि से भी आज जो विचार-विमर्श चल रहा है, उस पर एक निगाह डाल लेना उचित होगा।

हमारा ख्याल है कि यह विचार-मन्थन सर्वोदय आंदोलन के लिए पर्याप्त रूपमें पोषक और उपकारी सिद्ध होगा। समाज जीवन में बीच-बीचमें इस प्रकारका मन्थन होता है और उसी में से नवनीत निकलता है। विचारों की सफाई होती है, आगे की दिशाएं स्पष्ट होती हैं। आज की घड़ी भी एक ऐसी ही घड़ी है। आज के सर्वोदय मन्थन का एक मुद्दा गुजरात बिहार जैसे आंदोलन के प्रति क्या दृष्टि होनी चाहिए, यह है। उस तरहका आंदोलन दूसरी जगह भी चले या न चले, यह एक महत्वपूर्ण बहस का विषय है। गुजरात में जो आंदोलन चला उसमें अनेक कारणों और परिस्थितियों का हाथ रहा होगा और उसमें कुछ राजनी-तिक दलों ने भी हाथ बटाया था, इसमें कोई शक नहीं। इसके बावजूद इस आंदोलन ने एकाएक जो करवट ली वह एकदम स्वतन्त्र और स्वयस्फूर्त स्वरूप की थी। उस स्वरूप के कारण लोग उस ओर आकर्षित हुए। उनके सामने का परदा हट गया और इस अर्थ में वह आंदोलन सचमुच ही एक लोक-आंदो-लन था।

वह आंदोलन बिलकुल ही असंगठित और

नीचे से उठा हुआ विद्रोह था। लोगों के मन में यह सवाल उठा कि जब हमारे द्वारा चुने गये प्रतिनिधि हमारी ओर से लापरवाह हो-

विनोबा
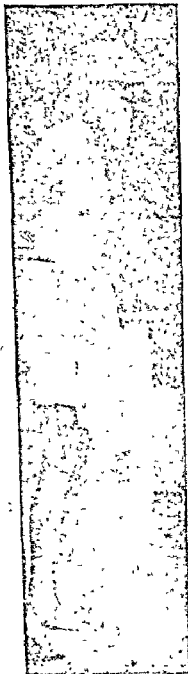
कर जो मन में आये उस तरह का गैरजिम्मेदाराना वर्ताव करने लगे, खुले आम जब लोकतन्त्र में भी सामन्तशाही या राजा-रजवाडों जैसी प्रपंचपूर्ण पद्धति की उठापटक दिनदहाड़े चलने लगे, प्रतिनिधि स्वयं भ्रष्टाचारी हो गये हों या भ्रष्टाचारियों के हाथ की कठपुतली बन गये हो, या भ्रष्टाचार को चुपचाप देखते रहते हों तो क्या ऐसी परिस्थिति में प्रजा को हाथ पर हाथ धर केवल चुप बैठे रहना चाहिए। अगर लोकतन्त्र के ठीक ढंग से न चलने की अवस्था में दूसरी तरह के रोकथाम के कोई उपाय न हो, सन्तुलन उत्पन्न करने के कोई तरीके काम में लाना संभव न हो, अदालत में भ्रष्टाचार आदि के मामले वहां की उलझनों के कारण ले जाना संभव न दिखता हो और अगर इस सबके बावजूद प्रजा मोटे तौर पर और अपनी सूक्ष्म समझ के कारण ही इस मामले में असन्दिग्ध हो गयी हो कि हमारा लोकतन्त्र ठीक नहीं चल रहा है तो क्या उसे कुछ भी नहीं करना चाहिए। जवाब यही हो सकता है कि नहीं। गुजरात के लोगों ने इस परिस्थिति को ललकारा और इन सारी बुराइयों के खिलाफ अपना विद्रोह प्रकट किया। यह विद्रोह पूरी तरह नीचे से उठा हुआ विद्रोह था। लोगों द्वारा इस प्रकार शुरू किया गया आन्दोलन किसी भी लोकनिष्ठ समाजसेवक के लिए उपेक्षा की चीज नहीं हो सकता। इसीलिए सर्वोदय कार्यकर्ताओं का इस आंदोलन के प्रति यह भाव बना कि हम इससे अलग नहीं रह सकते।

यह आंदोलन सत्ता को उलटने की राजनीति से सम्बन्धित नहीं था। इसमें किसी प्रकार की राजनीति नहीं थी। बल्कि यह तो इस तथ्य का एक बुलन्द प्रतिपादन था कि लोकतन्त्र में आखिरी अंकुश जनता का ही है और प्रतिनिधि जनता के प्रति जवाबदार हैं। इस दृष्टि से देखें तो हमारे देश के लोकतन्त्र के इतिहास में गुजरात का यह आंदोलन एक महत्वपूर्ण सीमा चिन्ह माना जायेगा। महंगाई, बेकारी, भ्रष्टाचार की समाप्ति आदि बातें इसके लक्ष्य कहे जाते हैं। किन्तु सच कहें तो इसका मुख्य लक्ष्य यह था कि प्रजा के प्रतिनिधियों और प्रजा की सरकार को लोकाभिमुख और जनता के प्रति जवाबदार बनाया जाये। पहले इतना हो जाये तो फिर प्रतिनिधि और सरकार सत्ता के पीछे दौड़ने के बदले प्रजा की इन सब परेशानियों को दूर करने में जुटें।

किन्तु ऐसा लगता है कि विनोबाजी की प्रतिक्रिया प्रारम्भ से ही ऐसी नहीं रही, इससे भिन्न रही। एक तो स्वाभाविक रूप से ही इस तरह की प्रतिकारात्मक प्रवृत्तियों की ओर उन्हें अरुचि है, इसके सिवाय उनके मन पर एक ऐसी छाप भी है कि ये सारे काम न्यूसेन्स वेल्यू के पक्षपाती राजनीतिक लोगों के ही होते हैं इसलिए उन्होंने इस आंदोलन को भी प्रधान रूप से दलगत राजनीति का एक अटपटा-सा रूप या जल्दबाजी में शार्टकट खोजने की धुन में खड़ा किया गया एक धूमधड़ाका ही माना। कम से कम हमें ऐसा ही लगता है। आज विनोबाजी की बात समझने के लिए कुछ अन्य मुद्दों पर भी विचार कर लेना जरूरी है। विनोबाजी की कोटि के स्वभाव से निवृत्तिपरायण आध्यात्मिक पुरुष ने इतने बरसों तक रोजमर्रा की समस्याओं को लेकर एक क्रान्तिकारी आंदोलन की प्रचंड लोकप्रवृत्ति को चलाया। इस बीच उनके व्यक्तित्व में संत परम्परा और क्रांतिकारी प्रक्रिया तथा परिस्थिति-निरपेक्ष चिन्तन और परिस्थिति सापेक्ष प्रवृत्ति का एक अद्भुत समन्वय देखने में आया। किन्तु सूक्ष्ममें प्रवेश करने के बाद वे स्थूल समस्याओं के बारे में अपने आपको बड़ी हद तक सिकोड़ते रहे हैं। स्थूल प्रश्नों और रोज की समस्याओं की चर्चाओं में भी उन्होंने बहुत दिलचस्पी नहीं ली। वे गुफा में जाकर नहीं बैठे हैं, समाज में रह कर ही अभिध्यान चला रहे हैं। आसपास जो कुछ हो रहा है उसकी वे पूरी जानकारी रखते हैं। इसलिए जब उन्हें बहुत कुछ खोदा जाता है तो वे उस पर अपना अभिप्राय बतला देते हैं। इस सबके बावजूद हम जिन प्रश्नों को 'आजकी ज्वलन्त समस्या कहते हैं उनके प्रति उनका भाव उदासीनता का ही रहा है और वे ऐसे प्रश्नों पर चर्चा करना टालते रहे हैं। इसीलिए वे विनोद, अतितर्क, शब्दों का खेल, मौन उपदेश आदि का आश्रय लेते रहे हैं। इस तरह

पिछले दो चार बरसों में सामयिक परिस्थिति के बारे में उनका बहुत मार्गदर्शन प्राप्त नहीं हुआ, यह सभी लोगों का अनुभव है।

दूसरी बात ध्यान देने की यह है कि समाज के परिवर्तन के तौर-तरीकों को खोजने के प्रति संत परम्परा की भूमिका हमने जो ऊपर लिखा है सदा से कुछ उसी तरह की रही। इसीलिए तो भूदान ग्रामदान की आंदोलनकारी प्रक्रिया को भी विनोबा ने संत परम्परा का एक अनोखा प्रकाश दिया। किन्तु कुछ दिनों से उन्होंने समाज परिवर्तन के लिए आंदोलनकारी प्रक्रिया को बिलकुल ही छोड़कर शुद्ध संत परम्परा का ही अनुसरण करने की मन: स्थिति बना ली है, ऐसा जान पड़ता है। इसी चिन्तन और अनुभव के परिणामस्वरूप इन दिनों उनका जो रुख है वह बना होगा ऐसा हम समझते हैं। फिर भी अभी तक उन्होंने इस मन स्थिति का सार या विश्लेषण समाज के सामने रखा नहीं है।

कुछ भी हो हमने ऊपर जो कुछ लिखा है वह विनोबाजी की आज की भूमिका को समझने की दृष्टि से ही लिखा है। यह मन स्थिति ठीक है या नहीं है, अथवा हमारा विश्लेषण भी बिल्कुल निर्दोष है या नहीं, हम इस प्रकार के विवाद में पड़ने की जरूरत नहीं समझते। अगर पड़ें तो वह एक प्रकार की जल्दबाजी कही जायेगी। हम इस समय जो चर्चा कर रहे हैं उसमे ध्यान देने की बात इतनी ही है कि सामयिक परिस्थिति सापेक्ष समस्याओं के बीच मे विचार करते हुए सामान्य कार्यकर्ताओं की हद तक इस भूमिका को स्वीकार करना कठिन जा रहा है। सर्वोदय परिवार में इन दिनों जो मन्थन चल रहा है यह बात भी उसमें विचारणीय है।

आज की परिस्थिति के सदर्भ मे विनोबाजी का एक मन्तव्य यह रहा है कि पाकिस्तान, भारत और बंगला देश के बीच जब तक पूरा सामंजस्य स्थापित नहीं हो जाता तब तक सरकार के विरोध मे हिंसक तो क्या अहिंसक आक्रमणकारी आंदोलन भी नहीं करना चाहिए। यदि किया जायेगा तो उससे देश के लिए खतरा हो सकता है। यह उन्होंने मार्च १६७४ में कहा था। हम नहीं जानते कि आज भी उनका यह मतव्य बना हुआ है या नहीं फिर भी यह बात सारे सर्वोदय कार्यकर्ताओं के गले नहीं उतरती। संभव है कि दूरदृष्टि रखनेवाले को जो दिखता है वह ह्रस्व दृष्टि रखनेवाले को न दिखता हो। या ऐसा भी कह सकते हैं कि वह दूर पर ही दृष्टि लगाये हैं, आस-पास का देख ही नहीं रहा है।

इसके बाद विनोबाजी ने अप्रैल मे यह कहा, 'आज की मुख्य समस्या यह है कि देश टूट रहा है इसलिए हम लोगों को जोड़ने का ही काम करना चाहिए। नहीं तो देश की एकता के लिए खतरा पैदा हो जायेगा।' इस बात पर भी सर्वोदय परिवार में मतभेद रहा है। कई लोगों को ऐसा लगता है कि इस जोड़ने और तोड़नेके स्थूल-अर्थ को पकड़कर चलने से काम नहीं बनेगा। आज देश की जो परिस्थिति है यदि उसमे सर्वोदय आन्दोलन सक्रिय रूप से हाथ नहीं बटाता तो इसमे से हिंसा फूटेगी और वही परिस्थिति देश की एकता के लिए खतरनाक सिद्ध होगी। इसलिए प्रजा के मन मे जो उथल-पुथल हो रही है, जो बेचैनी चारो तरफ फैल रही है उसे शान्तिमय प्रतिकार के रास्ते पर ले जाना ही आज देश को जोड़ने का काम हो सकता है।

इस तरह परिस्थिति को देखने के दो अलग-अलग नजरिये हैं और इसीलिए दो अलग-अलग प्रयत्न भी चल रहे है। आज के सर्वोदय-मथन का एक मुद्दा यह है अब कि हमारा मतव्य सही है या गलत यह तो समय पाकर ही स्पष्ट होगा।

सर्वोदय परिवार के मंथन का दूसरा बिन्दु है आज की परिस्थिति मे सर्वोदय आन्दोलन की व्यूह-रचना। इस सदर्भ मे विनोबाजी ने जो चार सूत्र सामने रखे हैं वे सबको मान्य हैं। पहला सूत्र है पंच-शक्ति सहयोग अर्थात जनशक्ति, विद्वज्जनशक्ति, महाजन शक्ति, सज्जन शक्ति और शासन शक्ति। दूसरा सूत्र है ब्रह्म-विद्या, ग्राम-स्वराज्य, शान्ति सेना,- आचार्यकुल और नागरीलिपि। तीसरा सूत्र है, उपवासदान और चौथा सूत्र है सर्वसम्मति। किन्तु जब हम इनका भाष्य करने लगते है या व्यवहार मे इनपर अमल करने की कोशिश करने हैं तो अलग-अलग दृष्टिकोण बन जाते हैं।

खुद विनोबाजी का रुझान अलग है। उन्होंने जब मौन लिया उसके तीन दिन पहले यह कहा था कि आजकल मेरा ध्यान ब्रह्म-विद्या और नागरीलिपि पर ही है। यदि हम अपने लोगों के द्वारा भारत भर मे नागरीलिपि को प्रतिष्ठा दे पायें तो नागरीलिपि सारे एशिया को जोडनेवाली चीज बन जायेगी।

इतना ही नहीं पिछले तीन-चार बरसो से विनोबाजी नागरीलिपि पर जोर दे रहे हैं और उसके बारे मे उन्होंने यहा तक कहा है कि तुम लोग जो भूदान ग्रामदान आदि काम कर रहे हो बहुत हो उसके लिए तुम्हे लोग पाच-पचास बरस याद रखेंगे। किन्तु तुम अगर यह नागरी का काम करो और इसमें सफल हो जाओ तो लोग तुम्हे हजार बरस तक याद रखेंगे।

नागरी की ओर विनोबाजी का यह रुझान सभी कार्यकर्त्ताओं के गले नहीं उतरता। हम स्वय पिछले तीन-चार बरस से नागरी की उपासना ही कर रहे हैं। किन्तु सर्वोदय आन्दोलन को आज का ध्रुवपद ही बना दिया जाये यह बात पूरी तरह समझ नहीं आती।

कार्यकर्त्ताओं मे से ज्यादातर लोग आज जिस दिशा मे सोचते हैं वह तो यह है कि ग्राम-स्वराज्य आन्दोलन मे कुछ गतिरोध उत्पन्न हो गये है, उन्हे किस तरह दूर किया जा सकता है। इसके विषय मे विनोबाजी इस तरह की बात कह डालते हैं कि तुम लोगों को जो कुछ करना है वह तो करना ही है, आज तुम जो कुछ कर रहे हो दुनिया मे उसकी प्रतिष्ठा टिकनेवाली नहीं है। इस सबको तो लोग भूल ही गये हैं। यह भूदान ग्राम-दान इत्यादि में ही लिखा रह जायेगा। यह सुनकर हमारे कार्यकर्त्तागण सचमुच ही पसोपेश मे पड़ जाते हैं।

अनेक महापुरुषों को समझना उनके समकालीनो के लिए कठिन हो जाता है, क्या आज भी वही परिस्थिति हमारे सामने है? या यह विनोबाजी की सन्यासवृत्ति का प्रतिरेक है? अथवा जैसा कि हम पहले कह आये हैं कि परिस्थिति निरपेक्ष चिन्तन और

परिस्थिति सापेक्ष हलचलों के बीच उन्होंने जो सेतु बना लिया था वह कहीं टूट तो नहीं गया ? इसका कोई वैकल्पिक निर्णय देना हमारे बस की बात ही नहीं है । यहाँ तो केवल इसी बात पर ध्यान खींचना है कि आज के मथन का स्वरूप कितना गभीर है। समाचार-पत्रों में प्रकाशित उथले वाद-विवाद से उत्पन्न उलझनें अलग हैं और यह मथन अलग।—यह कोई उथला विवाद नहीं है।

पचवर्षिक सहयोग के बारे में भी लोगों के अलग-अलग मत हैं और उनमें भी खास-करके शासन शक्ति के सदर्भ में। विनोबाजी को छोड़ दें तो सर्वोदय परिवार में यदि कोई व्यक्ति शासन शक्ति के अधिक से अधिक सपर्क में रहा है तो वे हैं जयप्रकाशजी। चाहे वह कश्मीर का प्रश्न हो चाहे नागा-लैंड का, चुनाव सुधार की बात हो चाहे योजना आयोग या बगला देश की, हर अवसर पर जयप्रकाशजी ने शासन शक्ति से सहयोग किया है और राष्ट्र के व्यापक हित में जितना बन सका है *उतना हाथ बटाया। प्रधानमत्री* तथा केन्द्र के अन्य मुख्य व्यक्ति राज्यों के मुख्य मत्रीगण, ससद सदस्यों सभी के साथ इनका सदा सपर्क रहा है और इसीलिए हमारा ख्याल है कि जिस शासन शक्ति को इन्होंने सदा सहयोग दिया उसके विरोध में सत्याग्रह करने का पूर्ण अधिकार भी इसी-लिए उन्हें प्राप्त है। उन्हें इन्दिरा-विरोधी या सरकार विरोधी कहकर जो लोग कीचड उछाल रहे हैं और उनमें भी विशेष तौर पर सर्वोदय परिवार के ही कुछ लोग, उन्हें इतना समझने का धैर्य और समझ तो होनी ही चाहिए।

इसके सिवाय बिहार के आन्दोलन में भी जयप्रकाशजी किन-किन सयोगों के कारण आये और किन-किन कारणों से उन्हें उसमें भाग लेना पडा, इस पर ध्यान देना भी बहुत महत्वपूर्ण है। सरकार ने विद्यार्थी आन्दोलन के प्रति बड़ी बेरुखी से काम लिया, लापर-वाही बरती, लाठी गोली चलाकर उनको कुचल डालने का प्रयत्न किया, सरकार का विरोध करनेवाले 'सर्चलाइट' और 'प्रदीप' अखबारों को नेस्तनाबूद कर देने का प्रयत्न किया। इन सब बातों के कारण जयप्रकाशजी को बीचबचाव करना पडा। सत्ता के हुक्म को शिरोधार्य करनेवाले लोगों के विरोध में जो व्यक्ति जीवन भर लडा और जिसने मानव स्वतंत्रता के लिए सदा अपना प्रबल समर्थन दिया हो उसके लिए इस प्रकार बीचबचाव करना अनिवार्य ही था।

जयप्रकाशजी ने आदोलन का नेतृत्व ग्रहण करके जनता के प्रतिकार में आत्म-सयम की शक्ति उत्पन्न की। आजादी के २७ वर्षों में इतना शांतिपूर्ण और अनुशासनपूर्ण जन-आदोलन इसके पहले कभी नहीं हुआ। पहले तो जयप्रकाशजी ने यही कहा था कि विधान सभा को भग करने की मांग नहीं रखनी चाहिए। इतना ही नहीं बाद में उन्होंने विधान सभा को भग करने की माग के साथ-साथ सम्पूर्ण क्रांति की बात भी जनता के सामने रखी।

यह देश के लिए एक दुर्भाग्य की बात ही है कि शासन शक्ति की ओर से कोई अनुकूल प्रतिक्रिया नहीं हुई। वह तो अपने जड पशु-बल और हठधर्मी का ही प्रदर्शन करती रही। दिल्ली ने भी समझदारी से काम नहीं लिया, हमने पुराण-कथाओं में पढा है कि जब कभी कोई ऋषि तपस्या करता था तो इन्द्र का इन्द्रासन डगमगाने लगता था। इसी प्रकार प्रधान मन्त्री और उनके सहयोगियों को ऐसा लगा कि कहीं जयप्रकाशजी उनकी कुर्सी खींचने के लिए तो नहीं निकल पड़े हैं। ऐसा सोचकर उन पर छींटाकशी करने लगे और उनके आंदोलन को कुचल डालने के मूर्खता-पूर्ण प्रयत्नों में लग गये। प्रधानमन्त्री जय-प्रकाशजी से बात करने का अवकाश बडी मुश्किल से १ नवम्बर को निकाल सकी। इसी बीच सत्ता के मद में बिहार की सरकार जिस जनता से वोट लेकर सत्तारूढ हुई थी उसने जनता के साथ जो बर्बर बर्ताव किया उसने तो मानो लोकतंत्र का गला ही घोट दिया। यह दण्डशक्ति नहीं मदान्ध सत्ता का नगा नाच ही था। लोकशक्ति की आराधना के लिए निकले हुए किसी भी व्यक्ति के लिए उसका प्रतिकार करना बिलकुल अनिवार्य था। बिहार आदोलन के बारे में मोटे तौर पर सर्वोदय कार्यकर्त्ता इसी प्रकार सोचने थे। वे आज भी ऐसा नहीं है कि अपनी बरसों की साधना को एक तरफ फेंक कर सत्ता या किसी *दलीय राजनीति में जा पडे हों। लोकशक्ति* की आराधना करते हुए जो स्वधर्म सामने आ गया वे तो इस काम को इसी रूप में देखें। आदोलन चाहे जे० पी० का हो चाहे और किसी का। प्रजा द्वारा चुनी हुई सरकार के हाथों दण्डशक्ति का ऐसा उपयोग लोकशक्ति की आराधना करनेवाले लोग हरगिज बर्दाश्त नहीं कर सकते। यह किसी प्रकार की राज-नीति नहीं है, शुद्ध लोकनीति है। शासनशक्ति *के साथ सहयोग करते हुए भी उसे रास्ते पर* रखने का प्रयोग बीच-बीच में करना ही पड़ता है।

गुजरात आदोलन का अनुसरण करते हुए बिहार में जो आदोलन चल पडा उसे भी भ्रष्टाचार, बेरोजगारी, महगाई आदि के विरोध में चलनेवाला आदोलन गिना जाता है। किन्तु सच कहें तो आज भी बिहार आदो-लन का मुख्य सम्बन्ध पथभ्रष्ट बिफरे हुए *दण्डशक्ति के वृषभ को नाथ डालना ही है।* प्रजा के प्रतिनिधि और प्रजा की सरकार को लोकाभिमुख और जिम्मेदार बनाना ही उसका प्रमुख उद्देश्य है। आज भी प्रजा के मन में जो आक्रोश है वह इसी बात को लेकर है कि सामने सैकडो समस्याएं पडी हैं फिर भी आप लोग सत्ता की खींचतान में से ऊपर नहीं उठ पाते। आज जयप्रकाशजी को अगर लोक-नायक कहा जा रहा है तो उसका कारण यह है कि वे आज इस घडी में प्रजा के मन की बात को बुलन्द आवाज में गुजा रहे हैं।

विनोबाजी ने इन सब बातों के बारे में लगभग चुप रहना ही मुनासिब माना। वे भी सत्ता के इस प्रकार के व्यवहार को उचित बिलकुल नहीं मानते थे। इसके बाद भी अर्थात् यह मानते हुए भी सत्ता कोई भी हो उसका यही स्वभाव होता है हम इस सत्ता को जड से उखाड़ने में लगे हैं। यह बात मन में रखते हुए भी वे इस आदोलन की झझट में नहीं पड़े।

वृक्ष के पत्ते तोड़ना या डालिया तोड़ना समझदारी का काम नहीं है। उसकी जड पर ही सीधा प्रहार किया जाना चाहिए, विनोबा-जी की सदा यही कार्यपद्धति रही है। इस-

लिए व कई बार कह चुके हैं कि 'लोकतंत्र बचाओ' का शोर मचाने में मुझे कोई दिलचस्पी नहीं है। तुम्हारी पश्चिम की यह डेमोक्रेसी डेरी का दूध है, वह उत्तम तो कभी हो ही नहीं सकता। वह तो औसत ही हो सकता है। मुझे इस लोकशाही का कोई मोह नहीं है। मेरा काम तो वह से सरलतायउन पद्धति का किस प्रकार निर्माण हो सकता है इसका प्रयत्न करना ही है।

बरसों पहले लिखी गयी अपनी पुस्तिका 'स्वराज्य-शास्त्र' में विनोबाजी यह सब बातें एकदम स्पष्ट कर चुके हैं। और ग्राम-स्वराज्य आंदोलन के मार्फत सामान्य जनता को सत्ता के शिकंजे में से मुक्त होने का शस्त्र भी सौंप चुके हैं। और इसी में से, एक नयी राजनीति के निर्माण का भगीरथ पुरुषार्थ भी उन्होंने करके दिखाया है। उनका कहना है कि आज की दुनिया भर की सभी समाजें सरकार आधारित हैं। और दुनिया भर की सभी सरकारें शस्त्र आधारित हैं। विनोबा इस परिस्थिति को दे-इज़म कहते हैं। और यह भी कहते हैं कि इन दिनों एक ही तत्व चल रहा है और वह है सैन्यतन्त्र-लश्करशाही। इसलिए जनता को सरकार से मुक्त करो। सरकार मुक्त गाव बनाने के लिए विनोबाजी ने जितनी कोशिश की है उतनी कोशिश दूसरे किसी क्रांतिकारी ने शायद ही की हो। अर्थात् सत्ता को जड़ से खोदने के एकाग्र काम में जिन्होंने अपनी शक्ति उडेली है। बीच-बीच में वही विनोबा सत्ता के अत्याचारों की उपेक्षा करते हैं तो यह बात भी समझ में आ जाती है।

इन सब बातों के साथ-साथ सर्वोदय परिवार इस बात पर भी विचार कर रहा है कि ग्रामस्वराज्य के लिए ऐसा जबर्दस्त पुरुषार्थ करते रहने के बाद आज के लोकतंत्र की ओर बिलकुल उदासीन या बेखबर रहकर काम कैसे चल सकता है। जब तक लोकतंत्र आज जिस रूप में है वैसा ही बना रहेगा तब तक क्या उसे जनता के प्रति जिम्मेदार बनाने के लिए कुछ करना जरूरी नहीं है। अगर कुछ किया नहीं गया तो पथभ्रष्ट दण्ड-शक्ति क्या लोकशक्ति को कुचल नहीं डालेगी।

इसीलिए बहुत से कार्यकर्ताओं को जयप्रकाशजी का आंदोलन आज के संदर्भ में बहुत ही समयोचित लगता है। वे लोग सोचते हैं कि विनोबा तो योगी हैं, इसलिए यह ध्यान एकाग्रता उनके काम करने का तरीका रहा है। अब समग्रता की दृष्टि से उसकी पूर्ति में थोड़ा और करना पड़ेगा। जयप्रकाशजी का आंदोलन वही कर रहा है। जयप्रकाशजी ने हमारे लोकतन्त्र के विशाल राष्ट्रीय मंच पर लोकशक्ति को छुटक-मुटक नाचने के लिए छोड़ दिया। हमारे राजकीय परिप्रेक्ष्य में पहली बार लोक एक असरदार ताकत के रूप में मैदान में उतरा है। गुजरात के आंदोलन में यह शक्ति अपने आप ऊपर आयी थी। आज बिहार के आंदोलन में जयप्रकाशजी के नेतृत्व में यह शक्ति शिक्षित हो रही है और संगठित बन रही है।

बिहार आंदोलन के संदर्भ में विनोबाजी ने कहा है कि यह सारी बातें आंदोलन के नहीं चिन्तन के विषय हैं। सर्वोदय कार्यकर्ताओं के लिए यह समझने में कोई कठिनाई नहीं होती क्योंकि वे साधारणतया इसी तरह से सोचते रहे हैं। खुद जयप्रकाशजी ने भी श्री आर० के० पाटिल के साथ विनोबाजी की इस बातचीत के बारे में यही कहा था कि मेरी बाबा के साथ इस विषय में पूरी-पूरी सहमति है। कहने का अर्थ यह है कि सर्वोदय परिवार में इस कथन को लेकर कोई ऐसा मतभेद नहीं है। फिर भी जयप्रकाशजी और अनेक अन्य कार्यकर्ताओं की यह मान्यता अवश्य है कि इन सारी समस्याओं को इस हद तक फैलने देने में आज की सरकार की कुछ नीतियों का जबर्दस्त हाथ है और इसलिए उसके विरोध में आवाज उठाना जरूरी है।

सर्वोदय परिवार के बीच एक विचार बिन्दु इन्दिराजी के बारे में अपना-अपना मूल्यांकन ही है। विनोबाजी इन दिनों कई बार यह कहते रहे हैं कि इन्दिराजी के काम का मूल्यांकन मैं उनकी विदेश नीति के आधार पर करूंगा। किन्तु यह बात सबके गले नहीं उतरती। विदेश नीति के आधार पर इन्दिराजी को जितना श्रेय देना आवश्यक हो, उतना जरूर दिया जावे, किन्तु इसका कारण अगर कोई यह कहे कि उनकी आन्तरिक नीति के बारे में विचार करने की कोई जरूरत ही नहीं रहती तो यह उचित नहीं होगा। किसी भी देश की विदेश नीति उसकी आतंरिक नीति से एकदम निरपेक्ष रहकर नहीं चल सकती। आतंरिक खोखली नीतियां विदेश नीति को भी रोज-रोज खोखली बना डालती हैं।

इन्दिराजी की दूसरी अनेक रीति-नीति और तौर तरीकों के बारे में जयप्रकाशजी पिछले तीन-चार बरस से देश का ध्यान खींचते रहे हैं। उन पर अब आज गम्भीरता से विचार किये बिना काम नहीं चल सकता। अभी-अभी २६ जनवरी के 'एवरीमैन्स' के अंक में जयप्रकाशजी ने 'कान्स्टीट्यूशन इन क्राइसिस' नाम के अपने लेख में कुछ स्पष्ट बातें सामने रखी हैं। ऐसा शायद ही कोई विचारशील व्यक्ति निकले जो उनके बारे में राष्ट्रीय सर्वसम्मति की आवश्यकता न माने। विनोबाजी भी अवश्य ही चाहते हैं कि राष्ट्रीय सर्वसम्मति रह सकनी चाहिए। सर्वोदय परिवार इस दिशा में शक्ति लगाकर आज भी थोड़ा बहुत कर सका तो उससे देश का बड़ा हित होगा। O

बड़ी अजीब बात है

—चुन्नी भाई वैद्य

बापू ने एक बार अपने अनुयायियों के सामने यह डर जाहिर किया था कि मेरे चले जाने के बाद तुम लोग एक-दूसरे के सिर पर मेरा चरखा फेंक-फेंक कर मारोगे और 'नवजीवन' और 'हरिजन' की फाइलों का उपयोग हथियार की तरह करोगे। महापुरुषों को जितना खतरा उनके कथित विरोधियों की ओर से नहीं होता उतना उनके अपने शिष्यों की तरफ से होता है। आखिरकार महापुरुष देहधारी होते हैं और वे भी पैदा होना, बूढ़ा होना, मर जाना आदि देह के धर्मों से बंधे होते हैं। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि वे इस स्थिति में कालपुरुष या परमात्मा के हाथ में होते हैं। जिस समय उनकी देह और चित्त की स्थिति चरम उत्कर्ष पर होती है तब उनके निमित्त से भगवान् कुछ काम पूरे करा लेता है। उत्कर्ष की यह अवस्था बीत जाने पर 'भीलों ने अर्जुन को लूटा वही धनुष वही

वाए' वाली बात लागू होती है। महापुरुष इस बात को जानते हैं कि वाणी और शरीर की शक्ति धीरे-धीरे कम होती चली जाती है और यह भी सम्भव है कि शारीरिक कमजोरी के साथ साथ विवेक मे भी न्यूनता आ जाती हो। विवेक मे न्यूनता आ जाने के कारण ही आग्रह, सम्प्रदाय, पथ,'वाद आदि तत्वो का जन्म होता है। परिणाम यह निकलता है कि आज तक समय जिनके पीछे-पीछे चलता था वे अब समय को अपने साथ खींचने की कोशिश करने लगते हैं। काल या समय तो किसी के खींचने से खिचनेवाली चीज नहीं है। शिष्यो की स्थिति इससे अलग होती है। गुरु का सत्व ही उनकी पूंजी होती है, इसलिए एक प्रकार से वही उनका वेस्टेड इंटरेस्ट, निहित स्वार्थ, या उसका कारण बन जाता है। हम कई बार सुनते हैं कि मार्क्स स्वय मार्क्सवादी नही था, फिर भी जो इसके पीछे पीछे आये वे सब मार्क्सवादी बन गये। मार्क्स के सिद्धान्तो को उसके शिष्य बडे जोर शोर से खपाने की कोशिश करते हैं और सो भी इस तरह मानों वह कोई परम मूल्य है। इसका कारण यह है कि इनके पास न तो गुरु की दृष्टि है न गुरु की गरिमा। इसलिए वे गुरु के शब्दो को पकड़ कर अपनी ह्रस्व दृष्टि के अनुरूप उसका अर्थ निकालते हैं। इस प्रकार के भाष्यो मे से वितण्डावाद का जन्म होता है।

नजर की कोताही एक दूसरे अनर्थ का कारण बन जाती है। और वह है 'नियरर दि चर्च, फारदर फाम गाड'—मूर्ति से जितने पास, भगवान से उतना दूर। कारण स्पष्ट है, शब्द-देह भी देह ही है, आत्मा नही। यह ठीक है कि इसे अ-क्षर कहते हैं, किन्तु लैटर एंड स्प्रिरिट—शब्द और आत्मा के बीच में जो भेद किया जाता है, उस भेद का अज्ञान ही हमे बेमान बना देता है। गांधीजी इसी बेमानी, बेहोशी और जडता की बात सोच रहे थे और इसी कारण उन्होंने ऐसा कहा।

परन्तु बापू का सौभाग्य था कि उनके बाद विनोबा आ गये। विनोबा की अपनी एक दृष्टि थी, इसलिए उन्हें बापू की फाइलें नहीं ढूंढनी पड़ीं। उन्होंने साफ कह दिया कि गांधी होते तो यह करते, वह करते कहना अपने ऊपर गांधी की बुद्धि और उनकी गरिमा का आरोपण करना जैसा है, मैं अपने आपको इसके योग्य नही मानता, मैं तो जो विचार है उसी की बात करूंगा। बीच मे गांधी को नहीं लाऊंगा। इस तरह वे बापू के पथ के बन्धन या वाद के घेरे मे से निकल गये।

किन्तु स्वय विनोबा के बारे मे ऐसा नहीं हुआ। बगाल के किसी एक पडाव की बात है, उनके साथ सहज बातचीत हो रही थी, बातचीत के दौरान उन्होने कहा, 'जो गुरु खुद अपने से सवाया चेला छोड कर नहीं जाता, वह गुरु नाहक ही हुआ।' मैं कुछ उनके मुह लगा हुआ था, इसलिए बोल पडा, 'बाबा गांधी के बारे मे तो कहा जा सकेगा कि वे सार्थक गुरु हो गये जो जवाहर जैसा स्वप्नदर्शी और आप जैसा आध्यात्मिक शिष्य छोडकर गये। किन्तु आप दोनों के बारे मे तो वही बात लागू होने वाली है जो अभी आपने कही। न जवाहर अपने से सवाया स्वप्नदर्शी छोडकर जा सकेंगे और न आप अपने से सवाया आध्यात्मिक पुरुष।' आज ऐसी सवाई दृष्टि रखनेवाले किसी भी व्यक्ति को कभी स्पष्ट दिखायी दे रही है और इसी-लिए हम एक-दूसरे के सिर पर विनोबा को फाइलें फेंक-फेंक कर मार रहे हैं। सबसे बड़े दुखकी बात तो यह है कि यह सारा पोस्टमार्टम-चीरफाड उनके समक्ष हो रहा है। अभी तो उन्होने केवल मौन लिया है, अगर उन्हें कुछ कहना ही हो तो आज भी उन्हें कोई कहने से रोक नहीं सकता। कोई भी मत उन्हें बांध नहीं पाया है और न बांध सकेगा।

पिछले मतभेद के अवसर पर १२ जुलाई को बाबा ने चेतावनी के दो शब्द (वास्तव मे तीन-अहिंसा, सत्य और सयम) कह कर बिहार आन्दोलन को अपनी अनुमति दी थी। उन्होंने कहा था कि सर्व सेवा सघ के सदस्य और पदाधिकारी आन्दोलन में भाग ले सकते हैं और अगर जरूरत पड़े तो वे इस अभिप्राय को व्यक्त करने वाला सर्वसम्मत प्रस्ताव भी तैयार कर सकते हैं।

आन्दोलन आगे चलने लगा। उसके बाद पूज्य बाबा ने जो कुछ कहा उसे देखते हुए लगता है कि अनुमति देने के बाद उनके विचारों मे फिर से परिवर्तन हुआ अथवा जिस रीति से आन्दोलन का विकास हो रहा था, आन्दोलन का विकास हो रहा था, आन्दोलन का प्रवाह जिस दिशा में हो रहा था उसमे उनका विरोध भले न रहा हो तो भी उसमे उनकी सहमति नही थी। जो बाबा से यह सब कह सकते थे उन्होंने पूज्य बाबा से कहा। जो कुछ कहा गया उसके कुछ सदिग्ध और कुछ स्पष्ट इशारे और वक्तव्य हमारे मुखपत्रों मे आ चुके हैं। फिर भी बहुत से साथियो को ये सारी बातें जची नहीं। उसके बाद सारा मामला साथियो की सत्बुद्धि पर छोडकर 'गुरोस्तु मौन व्याख्यानं'-वाले अपने प्रिय वचन के मुताबिक मौन व्याख्यान की स्थिति में आ गये। बाबा की मान्यता है कि तामसिक और राजसिक उपद्रवो को तो बात छोड़ ही दें जहां शान्त और सात्विक दिखाई देनेवाली सलाह से सम्बन्धित शब्द भी निष्फल जाते लगते हैं वहा एक तरफ खिसक कर बैठ जाना चाहिए और वहीं बैठे-बैठे देखना चाहिए। विश्व नियन्ता की व्यवस्था को इसी तरह काम करने देना चाहिए। नियति को स्वय रास्ता निकालने का अवसर देना उचित है। 'दे अलोन सर्व हू स्टैंड एंड वेट' उन्होने ऐसा ही किया, एक तरफ खिसक कर बैठ गये। किन्तु अपने को विनोबा का प्रवक्ता कहनेवालो ने पुरानी फाइलें निकालीं और वार प्रारम्भ कर दिये। इस तरह पूज्य बाबा को निरर्थक चर्चा मे घसीटा और गांधी के भय को कम से कम विनोबा की हद तक अक्षरश सही सिद्ध कर दिखाया।

विचार के अनुशासन का तकाजा है कि लोगो को एक हद तक ही समझाया जाये। यदि समझाने मे सफलता न मिले, तो ईश्वर से प्रार्थना करके बात साथियो की सत्बुद्धि पर छोड देनी चाहिए और उन्हे अपने मन का करने देना चाहिए। यदि कुछ लोग आफत में फस जायें और परस्पर हाथापाई होने लगे तो दौडकर बचाने लायक मन की तैयारी भी रखें। यदि ऐसा लगे कि साथियो के चित्त पर शैतान सवार हो गया है, वे दुर्वृत्त बन गये हैं, जानबूझ कर अन्याय कर रहे हैं तो उसे भली भांति देखें-परखें और प्राण की बाजी लगाकर भी आडे आकर उन्हें ऐसा करने से रोकें। बेशक सगे-सम्बन्धियो से आदमी

बचता है, इस बायोलाजिकल दैविक तर्क के वशीभूत न हो। इसके सिवा जिनकी भूमिका जिस हद तक 'सर्वथा अविरोधेन' की हो, वे उसे तराजू में अपने और दूसरों के सामने तोलकर देखें। यह भी देखना चाहिए 'सर्वथा' के अन्तर्गत साथी भी आते हैं या नहीं। यदि इतना देखने के बाद उचित लगे तो अन्याय निवारण के लिए कदम उठाने का प्रयत्न करना चाहिए। किन्तु जिसने मौन ले लिया है उसे इन सबमें न घसीटना ही अच्छा है। क्योंकि ऐसा न हो जाये कि एनिमी एंड नेबर-दुश्मन और पड़ोसी के साथ तो प्रेम किन्तु घर के लोगों के साथ वैर। यदि ऐसी ही परिस्थिति हो जाये तो *ईसामसीह का* अन्तिम उपदेश भी बाबा ने बात-बात में याद दिलाया था। लव वन एंड अदर एज आई हैव लव्ड यू—परस्पर एक दूसरे को वैसे ही प्यार करो जैसा मैंने तुम्हें किया है। हमारा इस पर क्या विचार है ? आज तो परिस्थिति यह है कि हमारे साथी परस्पर ऐसी दुश्मनी पर उतारू हो गये हैं जैसी दाना दुश्मन भी नहीं करता। यह बात समझ में नहीं आती। एक बार *बाबा के वचनों का स्मरण करके* और ईश्वर तथा 'सबके उर की सुमति' पर भरोसा करके क्या हम सबको अपने-अपने मत के अनुसार काम करने की स्वतन्त्रता नहीं दे सकते ? O

विधान सभा भंग का सामने खड़ा सवाल

—ए०जी० नूरानी

प्रधानमंत्री की यह दलील कि एक चुनी हुई विधान सभा द्वारा नियुक्त सरकार को तथा उस विधान सभा को अपना कार्यकाल पूरा होने तक किसी भी सूरत में बने रहने का अधिकार है, संवैधानिक कानून और परंपरा दोनों की दृष्टि से एकदम निराधार है।

संवैधानिक कानून के प्रसिद्ध विद्वान डाइसी ने इस सम्बन्ध में जो सही स्थिति है उसका स्पष्टता के साथ अपनी पुस्तक में वर्णन किया है। निश्चय ही ऐसी स्थिति आ सकती है जबकि राजा (संवैधानिक प्रमुख) को ऐसे मन्त्रिमंडल को भंग करने का अधिकार प्राप्त होता है जिसका संसद में बहुमत हो और उस संसद को भी भंग करने का जो मन्त्रिमंडल का समर्थन करती हो।

संक्षेप में, भंग करने के विशेषाधिकार का इस प्रकार उपयोग किया जा सकता है कि वह लोगों द्वारा चुनी हुई संसद की इच्छा के खिलाफ जाता हो। ऊपर-ऊपर से देखने पर ऐसा लगता है कि कुछ मामलों में इस विशेषाधिकार का उपयोग इस प्रकार किया जा सकता है जिससे वह राष्ट्र की इच्छा के विरुद्ध जाता हो। लेकिन वास्तव में बात इसके बिलकुल विपरीत है। राजा को जो विशेषाधिकार दिया गया है वह कभी-कभी इस प्रकार उपयोग में लाया जा सकता है, बल्कि संवैधानिक परम्पराओं के अनुसार ऐसा किया जाना चाहिए, जिससे वह तत्कालीन संसद को उसके अधिकार से वंचित कर सके। लेकिन संसद को इस प्रकार संविधान के अनुसार ही अपनी सत्ता से और अपने अस्तित्व से वंचित करने का कारण यह होता है कि ऐसी परिस्थिति आ गयी है, जिसमें यह मानने का स्पष्ट कारण पैदा हो गया है कि संसद की राय, उसे चुननेवाली जनता की राय नहीं रही है। इस प्रकार संसद या मन्त्रिमंडल को भंग करने का मतलब कानूनी सर्वोच्च सत्ता के खिलाफ राजनैतिक सर्वोच्च सत्ता के पास अपील करने का है।

यह तर्क अकाट्य है। इन परिस्थितियों में विधान सभा या मंत्रिमंडल को भंग करना जनतन्त्र को झुठलाने की अपेक्षा जनतांत्रिक प्रक्रिया को फिर से सजीव करना है। जनता फिर से उसी मंत्रिमंडल को वापस चुनती है या उसे फेंक देती है इस बात का उतना महत्व नहीं है। महत्व इस बात का है कि सरकार और संसद के प्रतिनिधिक स्वरूप के बारे में जो गम्भीर शंका उत्पन्न हो गयी थी उसका निराकरण जनतांत्रिक प्रक्रिया से हो सकता है।

इस बात पर बल देना अनावश्यक है कि भारत के संविधान के अन्तर्गत डा० अम्बेदकर के शब्दों में राष्ट्रपति का वही स्थान है जो इंग्लैंड के संविधान के अन्तर्गत वहां के राजा का है। ड्राफ्टिंग कमिटी के अध्यक्ष होने के नाते उन्होंने ३० दिसम्बर सन १९४८ को भारतीय संविधान सभा में कहा था कि संसदीय शासन-प्रणाली के अन्तर्गत राजा या राष्ट्रपति को केवल दो विशेषाधिकार हैं जिनका वह उपयोग कर सकता है। एक तो प्रधानमन्त्री को नियुक्त करने का और दूसरा संसद को भंग करने का।

अगर यह स्पष्ट संवैधानिक स्थिति है कि वह इस मामले में अपनी राय को व्यक्त करे और यह मांग करे कि उनका विश्वास फिर से प्राप्त किया जाना चाहिए, ऐसी परिस्थिति में राष्ट्राध्यक्ष के सामने यह कर्तव्य प्रस्तुत होता है कि वह जनमत को आंके—कि क्या ऐसी मांग किसी गुट की राय है, कुछ चन्द आदमियों की ओर से अस्वाभाविक रूप से खड़े किये गये आंदोलन की राय है, या व्यापक रूप में और गम्भीरतापूर्वक बहुसंख्यक लोगों की आन्तरिक इच्छा की अभिव्यक्ति है। यह कर्तव्य कठिन जरूर है लेकिन इससे बचा नहीं जा सकता।

कुछ वर्ष पहले प्रिवी काउंसिल को एक ऐसे मामले पर राय देने का अवसर आया था कि एक मन्त्रिमण्डल को इस बिना पर भंग किया गया कि सदन में उसका बहुमत नहीं रहा था। उस मामले में प्रिवी काउंसिल ने निर्णय दिया कि जनतांत्रिक राजनीति में संसद के बाहर या पार्टी की मीटिंगों में दिए हुए भाषण या लिखे गये लेख, मतविभाजन की नौबत न आते हुए संसद में दिये गये भाषण या अन्य कोई कार्यवाही—इन तमाम का उपयोग यह साबित कर सकता है कि जब संसद में वास्तविक मतदान का अवसर उपस्थित हो तो सम्बन्धित सदस्य क्या रुख लेंगे। ये सब बातें और भी महत्त्व की हो जाती हैं जब प्रश्न यह उपस्थित हो जाता है कि क्या स्वयं संसद ने जनता की इच्छा का प्रतिनिधित्व करना बन्द कर दिया है।

अतः जब श्रीमती इन्दिरा गांधी ने एक नवम्बर को यह कहा कि वे सड़कों परसे आयी हुई मांग को स्वीकार नहीं कर सकती, मैं सरकार को चुनने या उसे अपदस्थ करने के लोगों के जनतांत्रिक अधिकार को नहीं छीन सकती, तब वे वास्तव में प्रतिनिधिक सरकार प्राप्त करने का जनता का जो मौलिक अधिकार है उसी से जनता को वंचित रख रही थीं।

बिहार विधान सभा का विघटन जनता के जनतांत्रिक अधिकारों को छीनना नहीं है बल्कि जनता का वह अधिकार कार्यरूप में परिणत हो सकता है, इसकी एक शर्त है। जैसे डाइसी ने सिद्ध किया, अगले चुनाव तक इन्तजार करने के लिए वह बाध्य नहीं है जैसा कि श्रीमती गांधी जोर देकर कहती हैं।

सन १९५९ में अन्तर्राष्ट्रीय न्यायशास्त्री कमीशन की भारतीय शाखा ने केरल में पहले कम्युनिस्ट शासन के समय और उसके भंग होने के बाद वहां की परिस्थिति की जांच के लिए एक कमिटी नियुक्त की थी। उस कमिटी के अध्यक्ष सुप्रीम कोर्ट के एक अवकाश-प्राप्त न्यायाधीश श्री भगवती तथा उसके सदस्यों में श्री नम्बीयार जैसे संवैधानिक कानून के विशेषज्ञ थे। इस कमिटी की राय थी कि किसी भी मंत्रिमंडल को, चाहे उसे विधानसभा में बहुमत का समर्थन हो अपनी पूरी अवधि के लिए कायम रहने का कोई अपरिवर्तनीय अधिकार नहीं है। "दुराग्रह और स्वार्थ में लिप्त होने के कारण [illegible] लिए" विधान सभा विघटित की जा सकती है।

लोगों को इस प्रकार की सरकार को भंग करने और विधान सभा के विघटन की मांग करने का अधिकार है और राज्यपाल के लिए उसके अनुसार काम करना लाजिमी है।

यह कहना कि राज्यपाल या विरोधी पार्टियों की ऐसी कोई कार्यवाही जो यह परिणाम लाती है यह जनतन्त्र विरोधी है, यह गंभीरतापूर्वक विचार करने लायक बात नहीं है। जो लोग खुद अमन-चैन और कानून को भंग करने के दोषी है और कानून के खिलाफ काम करते हैं उन्हें जनतंत्र के प्रहरी होने का दावा करने का कोई अधिकार नहीं है। जिन्होंने स्वयं जनतन्त्रीय शासन के सब नियमों का उल्लंघन किया है वे इस बात के लिए संविधान की दुहाई नहीं दे सकते कि अपने कार्यकाल के पूरे समय तक बने रहें ताकि वे उस जनता पर, जिसका उनसे शासित होने का दुर्भाग्य है, दमन और अत्याचार करते रहें।

बिहार के कुछ मंत्रियों के विरुद्ध स्वयं राज्यपाल ने भ्रष्टाचार के जो आरोप लगाये हैं, और सरकार ने संकटकालीन अधिकारों का जो अत्यन्त दुरुपयोग किया है उसके कारण बिहार की सरकार केरल के उस मन्त्रिमण्डल के समकक्ष ठहरती है जिसको बर्खास्त करने की बात श्रीमती गांधी ने मान्य की थी और जिसे अब तक उन्होंने अपनी गलती नहीं बतायी है।

इस पर से हम उस बुनियादी प्रश्न की ओर आते हैं कि प्रधानमन्त्री ने जिसको "सड़कों से आनेवाली मांग" कहा है उस दलील में वास्तविक दम कितना है। इस बात को मानना कठिन है कि प्रधानमन्त्री इस प्रकार की मांग को सिर्फ इसलिए नामंजूर करती हैं कि वह विधान सभा के बाहर जनता द्वारा उठाई गयी आवाज है। श्रीमती गांधी की मान्यता के पीछे दो बातें हो सकती हैं। पहली बात तो यह है कि वे मानती हैं कि बिहार विधान सभा को अभी भी जनता का समर्थन प्राप्त है और दूसरा यह, जैसा कि उन्होंने आचार्य कृपलानी को लिखा था, कि प्रतिनिधिक जनतंत्र की भावना के साथ जनता की सीधी कार्यवाही के सिद्धान्त का मेल नहीं बैठता।

पहली दलील में तो जाहिर है कि कोई दम नहीं है। बिहार ने दो वर्ष में २५८ अध्यादेश जारी किये, उनमें भी सिर्फ एक मास में ३६, यह इस बात का सबूत है कि उस प्रदेश की विधान-सभा ने कानून बनाने के अपने कर्तव्य को छोड़ दिया है। संवैधानिक शासन के इतिहास में यह घटना अभूतपूर्व है। अब किसी के लिए भी यह कहना बहुत अर्थ नहीं रखता कि बिहार में जो जन-विद्रोह उमड़कर आया है वह "केवल सड़कों से आनेवाली मांग है"। बिहार सरकार की खुद की घबड़ाहट और अभूतपूर्व कार्यवाही इस बात को झुठलाती है।

(इंडियन एक्सप्रेस से साभार)

जे. पी. से बातचीत क्यों नहीं?

—डी. एन. सिंह

कांग्रेस के युवा-तुर्क कहलानेवाले जनतन्त्र समर्थक समाजवादियों ने कहा है कि सत्तारूढ़ दल को जयप्रकाशनारायण से बातचीत करनी चाहिए। ऐसा कहना निरर्थक नहीं है। यह एक ऐसी बात है जिसमें पहल करना सबके हित में है। जयप्रकाशजी ने देश में फैली हुई बुराइयों के विरोध में अपना आन्दोलन लगभग विवश होकर शुरू किया है। और उन्हीं मुद्दों पर शुरू किया है जिन पर काम करने के विषय में कांग्रेस ने अपने घोषणा-पत्र में वचन दिया था। सच कहें तो इन्हीं वचनों के आधार पर जनता श्रीमती गांधी की ओर मुड़ी और वे इन्हीं के कारण लोकप्रिय हुईं। मगर परिस्थिति ऐसी है कि कांग्रेस वास्तव में न तो भ्रष्टाचार दूर करना चाहती है और न चुनाव पद्धति में सुधार। क्योंकि उसका एकछत्र राज्य इन दोनों के बल पर ही प्रतिष्ठित हुआ है और इन्हीं के बल पर चल रहा है। इस तरह हम देखते हैं कि जे० पी० और सत्तारूढ़ दल के बीच की खाई भरने की बात उठाना अरण्य-रोदन करना है।

श्रीमती गांधी ने इस बात को अपनी सूक्ष्म राजनीतिक नजर के कारण बहुत पहले देख-समझ लिया था। अपने भुवनेश्वर के व्याख्यान में ही उन्होंने यह कह डाला था कि जे० पी० धनवान भ्रष्टाचारियों के चंगुल में फँसे हुए हैं। उनके इस कथन के बाद किसी के मन में कोई संदेह नहीं रह गया था कि वे जे० पी० और उनके आन्दोलन के पूरी तरह खिलाफ हैं। जे० पी० ने अपने स्वभाव के अनुसार उन्हें इस बात का एक शालीन किन्तु बेलाग उत्तर दिया था और उस उत्तर को सुनकर उन्होंने कुछ दिनों तक यह कहने की कृपा की थी कि वे जे० पी० के खिलाफ नहीं हैं और उन्होंने भुवनेश्वर में जो कुछ कहा था, उसका ठीक अर्थ नहीं लगाया गया।

जयप्रकाशजी और प्रधानमन्त्री में जो अन्तर है वह किसी बात के पहलू को लेकर नहीं है। जे० पी० पूरे प्राणपन से लोगों की भलाई के लिए चिन्तित हैं। श्रीमती गांधी का प्रधान उद्देश्य सत्ता के आधार को मजबूत बनाये रखना है। उनका जे० पी० के प्रति विरोध पूरा और पक्का है। किन्तु जब वे अपनी बात लोगों के सामने रखेंगी तो उनका पल्ला एक परिस्थिति के कारण भारी नहीं पड़ पाता। जे० पी० जो कुछ चाहते हैं वह लोगों के हित की बात है और इसलिए वे लोगों से यह नहीं कह सकतीं कि मैं आप लोगों की भलाई में उसी हद तक दिलचस्पी रखती हूं जिस हद तक आपकी भलाई और सत्ता को दृढ़ करने के बीच में कोई संघर्ष नहीं आता। वे लोगों से यह तो नहीं कह सकतीं कि भ्रष्टाचार है ही नहीं और उसे दूर करने की बात कहना गलत है और न वे यही कह सकती हैं कि चुनाव की पद्धति इस दृष्टि से नहीं सुधारी जा सकती कि उसके द्वारा लोगों की इच्छा पूरी तरह प्रतिबिम्बित हो जाये। इसलिए वे कुछ दूसरे ही तरीके काम में लाती हैं और ये तरीके चतुराई से भरे होने के कारण वे कितना ही ढांपें, जनता के सामने वे बार-बार उघड़ जाते हैं।

श्रीमती गांधी ने जो तरीका अपनाया है वह होने को बहुत मोटा है, तत्काल सबकी समझ में आने योग्य है, किन्तु फिर भी कुछ लोग जाने किसलिए उसे महत्त्व देने लगे हैं। वे उसकी वकालत करने में ऐसा महसूस करते हैं मानो किसी बड़े सत्य का प्रतिपादन कर रहे हैं। प्रधानमन्त्री ने जे० पी० के आन्दोलन को समाजवाद के विरोध में लड़ा जा रहा आन्दोलन कहा है। और उसमें

भी विशेष तौर से कांग्रेस के विरोध में। वे यह नहीं कहती कि यह भ्रष्टाचार आदि के विरोध में है- बल्कि वे यह कहती हैं कि यह प्रजातान्त्रिक मूल्यों के विरोध में है और इससे देश में प्रतिक्रियावाद और फासिज्म फैल रहा है। इसी आधार पर वे जे० पी० से किसी प्रकार के संवाद में पड़ने की बात को बेमतलब की बात कहकर छुट्टी पा जाती हैं। अभी उन्होंने कांग्रेस की संसदीय समिति के सामने इस सवाल के सिलसिले में प्रति प्रश्न किया था—बातचीत किसलिए ? किस बात के आधार पर ? इसका यह अर्थ हुआ कि जो लोग प्रजातन्त्र के विरोध में देश की भोली-भाली प्रजा को भड़का रहे हैं और जो मुझे सत्ता से हटाना चाहते हैं उनसे बातचीत करने का सवाल ही पैदा नहीं होता। ऐसे लोगों का तो सिर्फ मुकाबला ही किया जाना चाहिए और मुकाबला किया जाना चाहिए जे० पी० के इरादों को गलत रूप में दुनिया के सामने रख कर।

एक सच्ची माग के विरोध का निश्चय कर लेने के बाद सत्तारूढ़ दल को जे० पी० के आन्दोलन को उसके वैचारिक और नैतिक सम्बन्धों की भूमिका में देखने की कोई जरूरत ही नहीं बची। नरोरा में जिस जिहाद की रूपरेखा तय की गयी और सी०पी०आई० से गठबंधन करके जिस पर अमल शुरू हुआ उसे देख कर गायबल्स की याद आये बिना नहीं रहती। गोयबल्स जो भी नाजियों के खिलाफ खड़े थे उनके विरोध में एक के बाद एक झूठे आरोप लगाने की नीति पर चले। नरोरा में भी जे. पी. को फासिस्ट कहना तय किया गया और उन पर हिंसा फैलाने के जोर-शोर से आरोप लगाये जाने लगे। सारा देश देख रहा है कि जे. पी. का आन्दोलन हिंसा से कितना दूर है। आन्दोलन के पहले देश में हिंसा का जो वातावरण था वह इस आन्दोलन के बाद इतना ठंडा हुआ है, यह देखने की बात है। सबसे बड़ा आरोप जो जे. पी. के आन्दोलन पर लगाया गया वह समस्तीपुर बम कांड में श्री ललितनारायण मिश्र के निधन को लेकर लगाया गया। किन्तु आम जनता ने इस आरोप को सरासर झूठ माना और इसका अगर कुछ असर हुआ तो वह आरोप लगानेवालों के खिलाफ हुआ है। ऐसे मनमाने आरोप लगाने का नतीजा जनता के मन से और गिरते चले जाना है, इसे कांग्रेस और सी. पी. आई दोनों के कर्णधारों को समझना चाहिए।

इस आन्दोलन के खिलाफ जिहाद बोलने का जो एक और कुफल कांग्रेस को भोगना पड़ रहा है वह है उसके सी पी. आई के साथ गठबंधन के बारे में स्वयं कांग्रेसजनों का विरोध शुरू हो जाना। बोरड़ी शिविर में जगजीवनरामजी ने कांग्रेस में कम्युनिस्टों की घुसपैठ पर जोरदार शब्दों में अपनी नापसन्दगी जाहिर की, उसके बाद सतपाल कपूर ने जो सी पी.आई. के मित्र माने जाते हैं उस दल की गतिविधियों के प्रति नाराजगी जाहिर की। श्री भूपेश गुप्त ने जल्दी में घबराकर एक लंगड़ा-लूला-सा जवाब दिया। विजयवाड़ा में इसके बाद सी. पी आई का जो अधिवेशन हुआ और उसमें खुलेतौर पर सत्तारूढ़ दल के साथ केन्द्र में मिली-जुली सरकार बनाने के बारे में जो चर्चाएं हुईं, उसमें लोगों के मन में इस गठबंधन के प्रति और भी वितृष्णा उत्पन्न हो गयी।

इस तरह के साथ साथ पुराने कांग्रेसी स्पष्ट देख रहे हैं कि जे पी के विरोध में बोला गया जिहाद एक गलत चीज है। यह विफल होगा इतना ही नहीं, इससे कांग्रेस को नुकसान भी पहुंचेगा। जनता जिस तरह जे पी के पीछे चल रही है, उसे देखकर इन पुराने कांग्रेसजनों को वे दिन याद आते हैं जब गांधी के नेतृत्व में जनता नैतिक मूल्यों

विरोधी नेताओं से बात करते जे पी.

को अपनाकर संघर्ष के लिए कटिबद्ध थी। पुराने कांग्रेसी इस आन्दोलन में वैसा ही कुछ देख रहे हैं और उन्हें लगता है कि अगर कांग्रेस के सूत्र संचालन करनेवालों ने इस परिस्थिति को नहीं समझा तो परिस्थिति बहुत बिगड़ जायेगी। फिलहाल मध्यप्रदेश और हरियाणा में जो चुनाव हुए हैं उन्हें देखते हुए भी कई कांग्रेसजनों को आवश्यक लगने लगा है कि भ्रष्टाचार के विरोध में कदम उठाया जाना चाहिए और चुनाव पद्धति में सुधार की जो बात कही जा रही है, उस पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। सत्ता के कर्णधार भी परिस्थिति को समझ तो रहे हैं किन्तु उनके लिए यह भी मुश्किल है कि उन्होंने जो रुख जे. पी. के आन्दोलन की ओर एक बार अपना लिया है, अब उसके विरुद्ध जाकर कुछ करने लगें।

यह हरेक व्यक्ति को दिखाई दे रहा है कि सरकार ने चुनाव सुधारों के बारे में जो आधे अधूरे वचन दिये थे वह उन पर किसी भी रूप में अमल नहीं कर रही है। एक यह बात कही गयी थी कि आवश्यक चुनाव सुधारों के बारे में विरोधी पक्षों से बात की जायेगी। यह अभी-अभी नवम्बर की बात थी, किन्तु हाल ही में गृहमंत्री ने इसे भी बिना किसी झिझक के अविचारणीय घोषित कर दिया और कहा कि सुधार की कोई योजना एजेन्डा में है ही नहीं। उप-चुनावों में जो लोकमत प्रकट हुआ है, यह वक्तव्य शायद उससे उत्पन्न चिढ़ का परिणाम है। आजादी के बाद कांग्रेस इतनी अलोकप्रिय कभी नहीं रही। असम में भी अभी जो जीत हुई है वह एक तो पहले की जीत के मुकाबले में बहुत कम वोटों से हुई है और दूसरे विरोधी उम्मीदवार ४१ हजार वोटों से आगे होने पर बचे हुए पोलिंग बूथों पर उसकी हार का हद तक खिसकते चले जाना बहुत स्वाभाविक नहीं लग रहा है, इस विषय में सम्बंधी पक्षों ने शिकायतें पेश भी कर दी हैं।

भ्रष्टाचार दूर करना और चुनाव पद्धति में सुधार करना ऐसी चीजें हैं जो बहुत पहले हो जानी थी और इन पर ध्यान न दिये जाने के कारण देश को बहुत नुकसान पहुंचा है, किन्तु कांग्रेस को दल की चिन्ता है, देश की नहीं। वह तो जे. पी. के आन्दोलन का मुकाबला करने की रट लगाये है और इसलिए जे पी. जिन बातों को लेकर आन्दोलन चला रहे हैं वे उन्हें सुधारने-संवारने के लिए तैयार नहीं हैं। और उसका एक कारण यह है कि भारत में एकबार जो दल सत्ता हथिया लेता है उसे फिर सत्ता से हटाना बहुत कठिन होता है। जो परिस्थितियां बन गयी हैं उनमें कोई भी रूढ़ सत्ता अपने आपको स्थायी बनाने के तरीके आसानी से अपना लेती है।

कांग्रेस में कुछ लोग खासकर समाजवादी सदस्य सुझा रहे हैं कि सत्तारूढ़ दल चुनाव में सुधार और भ्रष्टाचार को दूर करने की जिन बातों को लेकर जयप्रकाश-नारायण अपना आन्दोलन चला रहे हैं, उन चीजों को दूर करने में किसलिए आगा-पीछा करता है यह बात समझ में नहीं आती, इसलिए इस काम को तत्काल हाथ में ले लेना चाहिए। मगर वे लोग यह नहीं समझते कि यह तो तभी सम्भव हो सकता था जब कांग्रेस दल के हितों पर राष्ट्र के हितों को तरजीह देती। कांग्रेस राष्ट्र में उन्हीं हितों को सहारा देती है और उस समय सहारा देती है जब वह दल के मजबूत होने में मदद पहुंचा पाये।

कांग्रेस अध्यक्ष श्री बरुआ ने साफ कह दिया है कि दल सरकार से ऊपर है। जब वे ऐसा कह रहे थे तब उनके मन में क्या जाने उस आदमी का कुछ ख्याल था या नहीं जो स्वच्छ प्रशासन चलाने के लिये एडी-चोटी का पसीना एक करके अपनी गाढ़ी कमाई में से पेट काटकर भी सरकार को कर चुकाता है। उनके इस कहने का मतलब तो यह हुआ कि राष्ट्र की जनता प्रशासन को चलाने के लिए नहीं, पार्टी के हितों को सुरक्षित रखने के लिए कर देती है। यही विचारधारा जे.पी. के आन्दोलन के विरोध का आधार है।

बावजूद इसके दल के सामने जो यक्ष प्रश्न खड़ा है वह समाप्त नहीं हो जाता। जिस आन्दोलन को जनता का बहुत बड़ी तादाद में समर्थन प्राप्त है, उस आन्दोलन का मुकाबला करने की बात आखिरकार जनता का मुकाबला करना ही है। अगर जनता सत्ता से सीधे संघर्ष में आना चाहे तो सारे संसार का इतिहास गवाही है कि उसके दिन गिने-चुने बच जाते हैं, हो सकता है कि प्रधान मंत्री के मन में जैसा बांगला देश में (और पाकिस्तान में भी) हुआ वैसा कुछ एक ही दल और एक ही व्यक्ति की छत्रछाया में सरकार बनाने का इरादा हो। अगर ऐसा हुआ तो आन्दोलन का मुकाबला करके जिस प्रजातंत्र को बचाने की बात चल रही है, उसका अंत हो जायेगा। ○

साथियों के नाम साथियों का खुलापत्र

बिहार-आन्दोलन का सन्दर्भ और सर्व सेवा संघ का संकट

साथियो,

पिछले करीब एक साल से सर्वोदय-जगत में काफी मन्थन चल रहा है। कभी-कभी यह मथन 'मतभेद' के उस बिन्दु तक भी पहुंच जा रहा है, जहां से आपसी टूट और अलगाव की सम्भावनाएं दिखाई पड़ने लगती हैं। पिछली जुलाई १९७४ के सर्वो-अधिवेशन में यही स्थिति बनी थी, लेकिन पूज्य विनोबा ने समाधान की सही दिशा देकर 'संगठन अहिंसा की कसौटी है' के प्रयोग का नया क्षेत्र खोल दिया था। उन्होंने कहा था "हमारा सबका हृदय एक है यह बात पक्की होनी चाहिए। हृदय एक है तो फिर जो अनेक सिर हैं, अनेक दिमाग हैं, उनको आजादी है। हमारे दिमागों में, बुद्धि में कितनी भी विविधता हो, विरोध नहीं होगा, अगर हृदय की एकता है।" हृदय एक कैसे रखें, यही सवाल होता है। उसका उत्तर एक ही है कि पूरी आजादी हो अपने अपने विचारों के अनुसार काम करने की। उसमें कुछ लक्ष्मण-रेखा हो यानी मर्यादाएं हों। 'उन मर्यादाओं में जिसको जो करना अच्छा मालूम होता हो, वह अवश्य किया जाये, क्योंकि सबका हृदय एक है। हृदय एक रखकर, जो तीन मर्यादाएं (अहिंसा, सत्य, संयम) बताया, उन मर्यादाओं के अन्दर रहकर अपनी-अपनी विचारधारा के अनुसार अगर व्यवहार करते हैं तो कुछ भी नुकसान नहीं होगा, क्योंकि अनुभव आयेगा।" पू० विनोबा द्वारा प्रस्तुत इस समाधान के बाद सबके दिल में एक नये उत्साह की लहर दौड़ी थी, और आशा बंधी थी कि अगली बार हम जब मिलेंगे तो कुछ नये अनुभवों का आदान-प्रदान कर सकेंगे। मतभेदों के बावजूद हमारी शक्ति परस्पर के विरोध में नहीं बल्कि पूर्वाग्रह मुक्त होकर एक-दूसरे के कामों को समझने और उसकी समीक्षा करके एक दूसरे को मदद पहुंचाने में लगेगी।

लेकिन यह दुख की बात है कि हम पुनः जब १२ से १४ मार्च तक मिल रहे हैं तो हमारी मनोभूमिका लगभग जुलाई ७४ के अधिवेशन के समय जैसी नहीं, उससे अधिक तीव्र मतभेद से भी आगे विरोध के रूप में दिखाई दे रही है। जुलाई १९७४ के बाद अब तक जो अखबारी बयान सामने आये हैं, और मतभेदों को जिस प्रकार आरोप का रूप दिया गया है, उससे खतरा यह दिखाई दे रहा है कि अगले अधिवेशन में वे मूल मुद्दे ही हमारी चर्चा में छूट न जायें, जिनके आधार पर हम अपने कामों की समीक्षा करके, पिछले अनुभवों के प्रकाश में अपने प्रयोग जारी रख सकते हैं।

पिछले साल भर में मतभेद के मुद्दे बिहार-आंदोलन कार्यक्रम, कार्य पद्धति और संगठन को लेकर रहे हैं। इसलिए क्या यह उचित नहीं होगा कि हम पवनार-अधिवेशन में इन्हीं मुद्दों पर चर्चाएं केन्द्रित करें, बजाय इस बात पर उलझने के कि हमारे बीच जो संकट पैदा हुआ है उसकी जिम्मेदारी किसकी कितनी है और संगठन में रहने की पात्रता किसकी कितनी है?

हमें यह बात बेहिचक स्वीकार करनी चाहिए कि सहरसा के राष्ट्रीय मोर्चे का आखिरी पर्व जब पिछले साल १९७४ के शुरू में ही पूरा हुआ, उसके तुरन्त बाद हमें अपने पिछले कामों की विस्तृत समीक्षा करनी चाहिए थी और वर्तमान राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय सन्दर्भ में अपने पिछले अनुभवों के आधार पर ग्रामस्वराज्य आंदोलन की अगली व्यूह-रचना करनी चाहिए थी। हम राष्ट्रीय स्तर पर वैसा नहीं कर सके। पिछले कुछ दिनों से बड़े पैमाने पर कार्यकर्त्ता साथियों को यह महसूस हो रहा था कि ग्राम-स्वराज्य की कार्यपद्धति में कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन करने की आवश्यकता है। जिस तरीके से हम काम कर रहे हैं, उससे ग्रामस्वराज्य की मंजिल तक नहीं पहुंच सकेंगे, समाज की स्थापित प्रभावशाली शक्तियों के सहयोग से (जो वास्तव में आधार और आश्रय का रूप ले चुका था) परिवर्तन की कोई शक्ति खड़ी नहीं कर पायेंगे, बल्कि यथास्थिति को ही सुदृढ़ करेंगे।

इस सिलसिले में इस बात का उल्लेख अप्रासंगिक नहीं होगा कि आंदोलन की समीक्षा और नयी प्रक्रिया की खोज के लिए पिछले दो तीन बरसों से कार्यकर्त्ता साथियों के साथ हमने यत्र-तत्र सहचिन्तन का दौर चलाया था और फरवरी-६४ में, जब हम सहरसा के आखिरी राष्ट्रीय अभियान में शामिल होकर राघोपुर प्रखंड में काम कर रहे थे, पिछले सहचिन्तन के सभी मुद्दों को क्रमबद्ध किया था। हम बिहार आंदोलन के सदर्भ में इस अधिवेशन के अवसर पर एक रूप में उसे राष्ट्रीय पैमाने पर समीक्षा और सहचिन्तन में योगदान की दृष्टि से प्रकाशित कर रहे हैं।

यह शायद सामान्य संयोग से अधिक इतिहास के विकास-क्रम में प्रस्तुत एक क्रान्तिकारी संकेत था जब गुजरात में छात्र-आंदोलन के द्वारा न केवल गुजरात की ही बल्कि पूरे देश की असह्य परिस्थिति का विस्फोट हुआ। उस समय बिहार अत्यन्त ज्वलनशील हो चुका था इसलिए उसने सबसे पहले उसे आंदोलित किया। इस विस्फोटक परिस्थिति का सही हल निकालने में असमर्थ वर्तमान व्यवस्था तन्त्र ने गुजरात और बिहार में दमनकारी नीति अपनायी और उसका दायरा मूल नागरिक अधिकारों पर प्रहार तक बढ़ गया। यों तो हमारा यह मानना है कि अंग्रेजों के वापस जाने के बाद से अब तक वर्तमान व्यवस्था का तन्त्र मूल नागरिक अधिकारों का अपहरण करके ही टिका हुआ है, लेकिन यह अपहरण की प्रक्रिया अब तक आमतौर पर अप्रत्यक्ष रही। इस व्यवस्था ने ऊपर के ही लोगों को थोड़ा बहुत समाधान दे सकने लायक, ऊपर-ऊपर अधिकार प्रदान किये थे। अब उन पर भी सीधा और प्रत्यक्ष प्रहार हुआ। इसकी अपनी विसंगतियों के कारण यह आज नहीं

तो भग होना ही था। इस नाजुक परिस्थिति में छात्रों-युवकों के आग्रह और जिसके साथ हृदय की एकात्मता थी उस सामान्यजन की घुटन को अपने अन्दर महसूस करके, जे. पी. ने ८ अप्रैल १९७४ को मौन-जुलूस का नेतृत्व किया और इस प्रकार देश के करोड़ों क्षुब्ध हृदय लेकिन मूक-जनों को एक बुलन्द आवाज दी। उन्होंने इस प्रकार अपने चारों तरफ व्याप्त जड़ता, नैराश्य और असहायता को तोड़कर आगे बढ़ने की शक्तिमत्ता दी, एक परिस्थितिजन्य उभार को 'सम्पूर्ण क्रांति' का आयाम दिया, उसमें अहिंसक क्रांति के तत्वों का समावेश किया, और इस प्रकार 'दण्ड-शक्ति से भिन्न, हिंसा शक्ति की विरोधी, तीसरी शक्ति' के निर्माण की सर्वोदय की जो घोषणा थी, जो लक्ष्य था, वहाँ तक, केवल सर्वोदय-कार्यकर्ताओं की साधना-प्रक्रिया ही नहीं, सामान्यजन के साथ कदम-दर-कदम आगे बढ़ने की पद्धति सुझायी। यह ठीक है कि ऐसा करने के लिए उन्होंने सर्व सेवा संघ की सर्वसम्मति प्राप्त नहीं की थी, इसलिए उन्होंने इसे अपनी जिम्मेदारी पर किया। *लेकिन जो बिहार सर्वोदय-आंदोलन का सबसे* बड़ा और सघन-प्रयोग-क्षेत्र रहा था, जिसकी जनता के साथ सर्वोदय आंदोलन का इतने लम्बे अरसे तक निकट संबंध रहा था, उसकी और यहाँ की जनता की उबलती स्थिति में सर्वोदय कार्यकर्ता और उनका संगठन अलग कैसे रह सकता था? इसलिए बिहार का पूरा सर्वोदय समाज इससे जुड़ गया और सहज विश्वासभाव से पूरे देश से सर्वोदय कार्यकर्ता इसमें सहयोग देने पहुंचने लगे।

अगर वर्तमान व्यवस्थातन्त्र बुनियादी तौर पर जन-विरोधी नहीं होता, सामान्य नागरिक-जीवन के मूल अधिकारों का अपहरण करके ही यह न टिका होता, और इसमें जन-जीवन को जर्जर कर रही समस्याओं से जूझने की जरा भी गुंजाइश होती, तो इस तन्त्र के संचालक नेताओं ने, स्वयं प्रधानमन्त्री ने, जे. पी. जैसे व्यक्तित्व और सर्वोदय कार्यकर्ताओं के इस आंदोलन से जुड़ने का सहर्ष स्वागत किया होता, और समस्याओं को हल करने *के लिए मिलजुल कर काम करने का प्रयत्न* किया होता, क्योंकि आंदोलन की भूमिका सत्ता के प्रतिद्वन्दियों जैसी नहीं थी। इस व्यवस्थातन्त्र को चलानेवाले अधिकारी नेता और इसे शक्ति प्रदान करने तथा इससे अपने हित साध पानेवाले सब समर्थ लोग शायद यह जानते हैं कि महगाई, भ्रष्टाचार, बेकारी और मुफलिसी, इनमें से किसी भी समस्या के बुनियादी हल का अर्थ होगा इस तन्त्र में सम्पूर्ण परिवर्तन, जिसका परिणाम यह होगा कि उनके निहित हितों और निरंकुश कार्यकलापों का अन्त हो जायेगा। इसलिए अब उनके द्वारा 'लोकतन्त्र बचाओ' के नाम पर इस व्यवस्था में निहित स्वार्थों की रक्षा के लिए प्रति-आंदोलन चलाया जा रहा है।

हमारा तो अब यह निश्चित मत बन गया है कि अगर अंग्रेजों के जाने के बाद गांधीजी की सलाह मानकर कांग्रेसी नेताओं, कार्यकर्ताओं ने अंग्रेजी राज्य के बनाये साम्राज्यवादी ढांचे को केवल ऊपर का पर्दा बदल कर चलाने की जगह भारत के गांव-गांव में जगी स्वराज्य की चेतना को संगठित करने एवं उस नये गांव को नये भारत के निर्माण की शक्ति बनाने का काम किया होता, तो *उस निर्माण की प्रक्रिया में से ग्रामस्वराज्य* और उसकी सुदृढ़ बुनियाद पर हिन्द स्वराज्य का ऐसा भवन खड़ा हुआ होता जो सारी दुनिया की प्रेरणा का केन्द्र बनता और जिस तीसरी शक्ति की कल्पना आज हम कर रहे हैं, वह तीसरी शक्ति भारत की एक हकीकत बन गयी होती। लेकिन ऐसा न करके उन्होंने पिछले 27 वर्षों में अंग्रेजी साम्राज्य द्वारा निर्मित साम्राज्यवादी ढांचे की शक्ति ही बढ़ायी है। अब तक उस ढांचे की जनविरोधी शक्ति इतनी शोषक और दमनकारी बन चुकी है, उसकी चपेट में भारत के गांव इस बुरी तरह आ चुके हैं, गांवों को तोड़ने की, निःसत्व बनाने की ऐसी प्रक्रिया शुरू हो चुकी है कि अब गांव को स्वराज्य के लिए सबसे पहले इस ढांचे से मुक्ति का संघर्ष करना पड़ेगा। इस मुक्ति संघर्ष के बिना अब ग्रामस्वराज्य अमूर्त और आदर्शवादी कल्पना मात्र बना रहेगा।

हम यह नहीं कहते कि बिहार आंदोलन *ग्राम-स्वराज्य की व्यूह-रचना में से पैदा हुआ।* यह तो एक सहज ऐतिहासिक स्थिति है जिसे अपने पिछले राजनीतिक और सर्वोदयी अध्ययन, प्रयोग, अनुभव, चिंतन और सबसे अधिक सामान्यजन से जुड़ी एक 'अनिश्चित संवेदनशीलता' के आधार पर जे. पी. ने सम्पूर्ण क्रांति का आयाम दिया है। जे. पी. के इस योगदान के कारण सामान्यजन सर्वोदय विचार मूल्य और ग्रामस्वराज्य की, तीसरी शक्ति की प्रासंगिकता को समझने-स्वीकार करने की विशिष्ट मनोभूमिका में आ गया है।

यह भी चिंतन का मुद्दा है कि भारत में यह परिस्थिति अचानक नहीं आ खड़ी हुई है, बल्कि इसका एक जागतिक संदर्भ है। आज सारी दुनिया की आर्थिक- राजनीतिक तथा अन्य पूरक व्यवस्थाएं एक भयंकर अन्तर-विरोध की शिकार हैं। विज्ञान और तकनीकी विकास के कारण व्यवस्थाओं की शक्ति और *उनका आकार-प्रकार इतना भीमकाय हो गया* है कि सामान्य मनुष्य उनका एक उपकरण मात्र बनकर रह गया है। ये मनुष्य को वैभव दे सकती हैं, लेकिन मुक्ति नहीं, अभाव दे सकती हैं, सामान्य आवश्यक पोषण नहीं। इसीलिए अगर गहराई से दुनिया में चल रहे *संघर्षों का अध्ययन किया जाये तो सभी* संघर्षों के मूल में मनुष्य की मुक्ति की आकांक्षा और गुलामी की व्यवस्था का अन्तरविरोध ही दिखाई देगा। अविकसित देशों से अति-विकसित देशों तक, अत्यन्त सामान्य आदमी से लेकर सर्वोच्च सत्ता पर अधिष्ठित आदमी तक, सबके ऊपर इन दानवी व्यवस्थाओं का ऐसा कब्जा दिखायी देता है कि इस स्थिति के कायम रहते सरकारों की सतही शांतिवार्ताएं मानवीय शांति की दृष्टि से बिलकुल निरर्थक लगती हैं, और अगर कहीं शांति की कोई क्षीण आशा भी दिखाई देती है तो मानव की जगी चेतना द्वारा इन व्यवस्थाओं की जकड़ से मुक्ति के मानवीय संघर्ष में। हमें ग्राम-स्वराज्य को, बिहार-आंदोलन को इस जागतिक संदर्भ में भी देखना चाहिए।

शोषण और दमनकारी मौजूदा दुनिया की सभी व्यवस्थाओं से मुक्ति के मानवीय संघर्ष का एक नाजुक पहलू यह है कि इन व्यवस्थाओं के दुश्चक्र में फंसा आदमी इन्हें अपने जीने-मरने का सवाल मानता है और इनका संचालन करनेवाले लोग संघर्ष करने-

बाबूराव चन्दावार

वालों की निगाहों में इन व्यवस्थाओं का प्रतीक बन जाते हैं। वैसी हालत में संघर्ष का रूप ऐसा दिखाई देने लगता है मानो वह किन्हीं व्यक्तियों के विरोध में हो। इसलिए सम्पूर्ण क्रान्ति और उसकी अहिंसक प्रक्रिया में विश्वास रखनेवालों की यह जिम्मेदारी होती है कि वे संघर्ष को व्यवस्था और जनता का ही बनाये रखें। वैसे यह एक अत्यन्त कठिन काम है, लेकिन फिर भी इसे अहिंसक क्रान्ति की अनिवार्य शर्त ही समझिये। इसके लिए जो लोग व्यवस्था को अपने जीवन-मरण का प्रश्न मान रहे होते हैं, उनकी संवेदना जगाने, विचार-परिवर्तन करने, उनको एक ओर सामान्य जनता के साथ जोड़ने और दूसरी ओर व्यवस्था जिनके कंधों पर टिकी हो, जिनके शोषण-दमन में पोषण और मजबूती पाती हो, उन्हें इन व्यवस्थाओं से पूर्ण असहयोग करने की दुहरी प्रक्रिया चलानी होती है। व्यवस्था जितनी मजबूत और बड़ी होगी उससे असहयोग की प्रक्रिया उतनी ही महत्वपूर्ण होगी, तभी उसके द्वारा व्यवस्था का टिकना असम्भव बनाया जा सकता है। तभी वह उसके संचालकों की चेतना और संवेदना की जकड़न को तोड़ने, सही अनुभूति और चिन्तन-प्रक्रिया शुरू करने में सहायक होगी। तब व्यवस्थाओं के साथ संवेदनात्मक लगाव, यथास्थिति को मजबूत करेगा और इसी तरह व्यवस्था के बदले व्यक्ति के विरुद्ध किया जानेवाला संघर्ष भी मजबूत होगा। बिहार-आन्दोलन में जे० पी० के कारण यह तत्व भी दाखिल हुआ है, इसीलिए व्यवस्था-संचालकों और उसके प्रेमियों द्वारा बार-बार इसे व्यक्तिगत संघर्ष का रूप दिये जाने की कोशिश के बावजूद इसका मूल चरित्र व्यवस्था के विरुद्ध जनसंघर्ष का ही दृढ़ होता आ रहा है।

बिहार आन्दोलन को लेकर सर्वोदय कार्यकर्ताओं में इस समय सबसे तीव्र टूटन या अलगाव के बिन्दु तक पहुंचता दीख रहा मतभेद का मुद्दा है, १८ नवम्बर १९७४ को पटना के गांधी मैदान की अभूतपूर्व जनसभा में जे० पी० द्वारा प्रधानमंत्री की चुनावी-चुनौती का स्वीकार किया जाना। माना यह जा रहा है कि इसके कारण सर्वोदय की निर्दलीय भूमिका खंडित हुई है।

शासनमुक्त समाज की कल्पना सर्वोदय दर्शन में आदर्शरूप रही है। इसके लिए सर्वोदय-आन्दोलन द्वारा एक ऐसी सामाजिक शक्ति खड़ी करनी है जो सत्ता-संचालन की प्रतिद्वन्द्विता से अलग रहकर सत्ता नियंत्रक की भूमिका निभाये और समाज में शासन निरपेक्षता बढ़ाये। इसी दिशा में आगे बढ़ने के लिए सर्वोदय कार्यकर्त्ता सर्वसम्मति से समय-समय पर मतदाता-शिक्षण का काम करते रहे हैं और उसे ग्रामस्वराज्य का संदर्भ देने के लिए विनोबा 'लोक उम्मीदवार' जनता के 'अपने आदमी' की बात सुझाते रहे हैं। जे० पी० ने इन्हीं बातों को, 'जनता सरकार' और 'जनता उम्मीदवार' के रूप में बिहार आन्दोलन में दाखिल किया है। हमें तो पूरा विश्वास है कि अगर १८ नवम्बर १९७४ के उस 'चुनौती स्वीकार' वाले जे० पी० के भाषण को पूर्वाग्रहों से मुक्त होकर 'टेप रेकार्डर' से सुना जाये (अगर उपलब्ध हो सके तो) या जो लिपिबद्ध हुआ है, उसे पढ़ा जाये, तो निर्दलीयता की भूमिका कहीं भी खंडित होती दिखायी नहीं देगी, बल्कि सार्थक होती दिखायी देगी। यह विशेष ध्यान देने की बात है कि जे० पी० सामान्य दल युक्त और जन से जुड़े हैं, और पार्टियां

रामचन्द्र राही

उसमें शामिल हुई है। पार्टियों का 'जोड़' यहां जन का पर्याय नहीं बना है। पार्टियों की भागीदारी है नियामक भूमिका नहीं।

लेकिन इस या इस तरह के जितने भी मतभेद के मुद्दे हैं उनका सबसे अधिक कठिन पहलू यह है कि सर्वोदय कार्यकर्ताओं का आपसी संचार संतुलित नहीं रह गया है। पूर्वाग्रहों के कारण 'मतवादों' के संघर्ष की-सी स्थिति पैदा हो गयी है, मतभेद के मुद्दों को आपसी समझदारी के आधार पर दूर करने या एक-दूसरे के संशोधन में मदद करने की गुंजाइश नहीं रह गयी दीखती है।

बिहार-आन्दोलन के साथ अपनी असहमति व्यक्त करनेवाले अधिकांश साथियों की बिहार की स्थिति, जनता, कार्यकर्ताओं आदि सबके साथ भूदान ग्रामदान-आन्दोलन के सिलसिले में वर्षों की भावपूर्ण निकटता रही है। लेकिन मौजूदा आन्दोलन छिड़ने के बाद से अपनी सहमति को तथ्यपरक और तर्कसंगत बनाये रखने की दृष्टि से भी वे बिहार नहीं गये। इसीलिए कभी-कभी ऐसा लगता है कि 'जनशक्ति', 'जन क्रान्ति' आदि शब्दों से सूचित होनेवाले 'जन-केन्द्रित चिन्तन' के बावजूद, आज जब 'जन' अपने वर्तमान के प्रति जागरूक होकर उसे बदलने की मुद्रा में आ रहा है तो उसको दिशा देने का अपना दायित्व निभाने की जगह उसके मूल स्वरूप को देखकर ये साथी यह सोचकर घबरा से रहे हैं कि हमारे मूल्य, निष्ठाओं आदि की रक्षा कैसे होगी? अपनी इस घबराहट में वे उस यथास्थिति को जिसे विनोबा ने अनेक बार असह्य कहा है, जाने अनजाने सर्वोदय-

मूल्यों, निष्ठाओं की रक्षा, पालन के अनुकूल घोषित करके मजबूत बना रहे हैं। शायद जन-चारित्र्य और साधन की विशिष्टता से युक्त गांधीजी का जीवन उनको इस मानसिकता से उबरने की प्रेरणा दे।

बिहार आन्दोलन के संदर्भ में विनोबा की भूमिका समझने, उस पर विचार करने से पूर्व हम एक बात का विशेष तौर पर उल्लेख करना चाहते हैं। राजगीर सर्वोदय-सम्मेलन में विनोबा ने क्षेत्र-संन्यास यानी प्रत्यक्ष स्थूल कार्यों से निवृत्ति और ब्रह्मविद्या मंदिर में रहकर अभिध्यान करते हुए आध्यात्मिक चिंतन और चर्चा तक अपने को केन्द्रित रखने की घोषणा की थी। सम्मेलन के तुरन्त बाद वे पवनार चले भी गये थे। आन्दोलन को कार्यकर्ताओं की सामूहिक जिम्मेदारी पर छोड़ने और पूछने पर सलाह देनेवाली अपनी भूमिका भी उसी सम्मेलन में उन्होंने स्पष्ट की थी। उसके बाद से मौन शुरू होने के पूर्व तक उन्होंने अपनी ओर से सहज जो भी कुछ व्यक्त किया है वह मुख्यतः आध्यात्मिक विषयों पर ही किया है। आर्थिक, राजनीतिक आदि अन्य मसलों पर वे सवालों के जवाब में ही—आमतौर पर कुछ बोले हैं, जिन्हें समय-समय पर प्रसारित किया जाता रहा है।

आन्दोलन को कार्यकर्ताओं की सामूहिक जिम्मेदारी पर छोड़ने और अपनी भूमिका सलाहकार की बना लेने के पीछे एक सामाजिक क्रान्ति को व्यक्ति वैशिष्ट्यवाद से मुक्त करके गणसेवकत्व के आधार पर चलाने की उनकी योजना थी। पिछली सभी क्रान्तियों के इतिहास का अनुभव ही न दुहराया जाय, निःसंदेह यह एक बहुत ही महत्त्व का निर्णय था। लेकिन क्या हम पर जो जिम्मेदारी उन्होंने डाली, उसे हम निभा पाये? क्या हमारी गणसेवकत्व की प्रक्रिया विकसित हो पायी, उस तरफ समुचित ध्यान दिया गया, तत्व को हमने अपनी निर्णय प्रक्रिया में सौरवारिकता से आगे 'स्पिरिट' के रूप में लाने का वातावरण बनाया? हमारा मानना है कि हमारे संगठन के वर्तमान संकट का एक बड़ा कारण इस दिशा की हमारी विफलता भी है। प्रबंध समिति समेत हम सबको इसकी जिम्मेदारी स्वीकार करनी चाहिए। शायद इस 'गणसेवकत्व' के विकसित होने का ही दुखद परिणाम है कि हम अपने आग्रहों को प्रभावकारी बनाने के लिए उनके साथ विनोबा—जे० पी० जैसी विभूतियों को जोड़कर नये 'वाद' खड़े करने का जाने-अनजाने खतरा पैदा कर रहे हैं। शायद हमारा यह कहना कुछ अधिक ही धृष्टता की बात है, फिर भी हम मन की पूरी श्रद्धा के साथ यह कहना चाहते हैं कि किसी सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक स्थूल स्वरूप वाले और आन्दोलनों के बारे में अभिप्राय व्यक्त करने के लिए अभिप्राय व्यक्त करनेवाले और परिस्थिति के बीच एक संतुलन संचार का होना आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है। और यह हमारे बीच सध नहीं पाया है। इसलिए हमारे मतभेद के जो बिन्दु हैं, उन बिन्दुओं पर आपस की समझदारी नहीं टूटन और अलगाव की स्थिति हमारे बीच पैदा होती दिखायी दे रही है।

यहाँ हम एक बात स्पष्ट कर देना आवश्यक मानते हैं कि टूटन या अलगाव की स्थिति पर हमारी चिन्ता को सर्व सेवा संघ नामक एक संस्था के संरक्षण की चिंता के रूप में न लिया जाये। हम तो यह मानते हैं कि किसी भी क्रान्तिकारी प्रक्रिया में नयी चुनौतियों के अनुसार नये संगठन बनते हैं, पुराने टूटते हैं, टूटने चाहिए। वरना संगठन का ही अपना एक निहित हित पैदा हो जाता है। उससे परिवर्तन के मार्ग में अवरोध भी पैदा हो जाता है। इस समय हमारी चिंता उस संदर्भ और उन बिन्दुओं को लेकर है, जिन पर टूटन या अलगाव की स्थिति दिखायी दे रही है।

हमने यह माना था कि संगठन अहिंसा की कसौटी है। अहिंसा को कसौटी माननेवाले संगठन का स्वरूप विचार प्रधान ही होगा। विचार-प्रधान संगठन में विचार-भेद का होना स्वाभाविक है। तो क्या विचार भेद के बावजूद ऐसा कोई संगठन हो सकता है जो अहिंसा की कसौटी बने? आज इसी बड़े सवाल के सामने हम खड़े हैं, शायद संगठन अहिंसा की कसौटीवाली हमारी मान्यता स्वयं इससे पहले कभी इस तरह कसौटी पर नहीं आयी थी। यह एक चुनौती है हमारे समक्ष, हमारी प्रतिबद्धता के समक्ष और हमारे सामने एक ही रास्ता है कि या तो हम इस चुनौती का जवाब प्रस्तुत करें या अपने को असमर्थ घोषित करके स्थिर जायें। यही चुनौती हमारे समक्ष जुलाई-'७४ के अधिवेशन में भी प्रस्तुत थी, जिसका जवाब हम नहीं ढूंढ सके थे, जवाब सुझाया था विनोबा ने जिसका जिक्र हमने इस लेख के शुरू में ही किया है।

आखिर विनोबा द्वारा सुझाया गया समाधान यही था न कि जिस बात पर सर्व सम्मति हो जाये, उसे सामूहिक निर्णय और कार्यक्रम के रूप में मान्य किया जाये, जिस बात पर ऐसा न हो सके उसे सर्वमान्य न मानते हुए भी कुछ मूल्यों की लक्ष्मण रेखा के साथ प्रयोग करने की छूट हो, परस्पर विश्वास और हार्दिकता बनाये रखकर एक दूसरे के प्रयोगों का अध्ययन करते रहें और दुबारा मिलने पर आपसी विचार-विनिमय हो, अनुभवों का आदान-प्रदान हो। इस प्रक्रिया में से सहज ही संशोधन भी हो सकेगा, यह सम्भव है कि किसी बिन्दु पर जाकर मतभेद दूर भी हो जायें। अहिंसक संगठन की कार्यपद्धति का यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रयोग हो सकता था। इसके लिए संगठन के स्वरूप को भी और अधिक लचीला बनाने की करीब-करीब एक सी सलाह विनोबा और जे० पी० दोनों ने दी थी, लेकिन खेद है कि हम अब तक इन प्रयोगों के अनुकूल वातावरण नहीं बना सके हैं, इस दिशा में कोई ठोस प्रयत्न नहीं कर सके हैं।

इसके विपरीत अहिंसा, गणसेवकत्व, सर्वसम्मति-आचार-मर्यादा आदि मूल्यों और मान्यताओं की अवहेलना के सवाल उठाये जा रहे हैं, जिनमें सवाल उठानेवालों के आग्रहों का भी जुड़ा होना स्वाभाविक है। इस प्रकार हम दूसरों की आस्था के आगे प्रश्नचिह्न लगाकर अहिंसक संगठन की भूमिका ही समाप्त किये दे रहे हैं। 'लोक सेवकत्व' समाप्त माना जाये, यह माँग किसी संगठन की अनुशासनात्मक कार्यवाही से ही एक भिन्न रूप में सम्बन्धित नहीं तो और क्या है?

लोकसेवक बननेवाला कुछ संकल्प करता है, कुछ निष्ठाओं के पालन का व्रत लेता है। संकल्प या व्रत निभाने की जिम्मेदारी हमेशा उसे लेनेवालों की होती है, इसमें कहीं बाध्यता नहीं होती। ऐसे संकल्पी, व्रती लोकसेवकों के संगठन में, जिसे हम अहिंसा की कसौटी मानते हैं, मित्रवत् सलाह हो सकती है। एक दूसरे की कमजोरी दूर करने में मदद हो सकती है, एक सीमा तक प्रेमाग्रह भी हो सकता है, लेकिन सौम्य शब्दों में ही सही संकल्पच्युति के आरोप और निष्कासन या, अलगाव की बात को अहिंसक प्रक्रिया कैसे माना जा सकता है ? गणसेवकत्व उसमें से कैसे विकसित हो सकता है और कैसे सबको अपनी सम्मति की अभिव्यक्ति का पूरा मौका मिल सकता है ? अगर हम ऐसा लगने लगा हो कि इस तरह तो संगठन का अपना कुछ विशिष्ट स्वरूप ही नहीं रह जायेगा, या कोई भी संकल्प-पत्र भरकर 'लोक-सेवकत्व' का नाजायज लाभ उठा सकता है, इसलिए संगठन की दृष्टि से कुछ निगरानी-जैसी चीज, अनुशासन की कार्यवाही तो नहीं, लेकिन उस तरह की कोई अहिंसक प्रक्रिया आवश्यक है, तो फिर हमें संकल्प-पत्र या निष्ठा-पत्र भर कर लोकसेवक बनने की प्रक्रिया रद्द करनी होगी और लोकसेवक भर्ती करने की कोई अन्य पद्धति विकसित करनी होगी और तब संगठन अहिंसा की कसौटी का प्रयोग छोड़ देना होगा।

असल में हमारे संगठनात्मक स्वरूप की कसौटी इसी बिन्दु पर हो रही है और इसके परिणामस्वरूप हमारे बीच एक संकट की स्थिति पैदा हो गयी है। इस स्थिति की माँग है कि या तो हम अपने संगठन की बुनियादी रूपरेखा, कार्य और निर्णय प्रक्रिया तथा इसके प्रति हमारा दृष्टिकोण अहिंसक मूल्यों के अनुकूल बनायें ताकि हम निष्कासन या अलगाव की मानसिकता से मुक्त होकर सलाह और संशोधन की आस्थापूर्ण प्रक्रिया का विकास कर सकें या फिर इसके लिए हम अपने को असमर्थ मानकर इस प्रयोग को विसर्जित कर दें। दो में से एक चुनौती हमें स्वीकार करनी चाहिए 'सम' या 'भय'। कहीं हमारे बीच के इस संकट का परिणाम यह न निकले कि हम निर्जीव संगठन के टुकड़े तो प्राप्त कर लें, लेकिन वे मूल्य, वे निष्ठाएं और तीसरी शक्ति के निर्माण का वह लक्ष्य ही हमसे छूट जाये, जिन्हें लेकर हम साथ साथ आगे बढ़ना चाहते थे।

—बाबूराव चंदावार —रामचन्द्र राही

खादी का परिधान

खादी आत्मनिर्भरता की प्रतीक है। खादी और ग्रामीण उद्योगों के कारीगरों को जीविका प्रदान करने और ग्राम अर्थव्यवस्था के आधार को सबल बनाने के लिए खादी और ग्रामोद्योगों को प्रोत्साहन दीजिए।

खादी गरीबों का इज्जतदार सहारा है।

खादी और ग्रामोद्योग कमीशन द्वारा प्रसारित

दिल्ली

विकास तथा चुनौतियों का नगर

प्रगति के पथ पर

विगत दो वर्षों के विकास की झाँकी

उद्योग

नरेला में नई विशाल औद्योगिक बस्ती का निर्माण हो रहा है। एक हजार बेरोजगार इंजीनियरों के लिए १८६ औद्योगिक शेडों का निर्माण।

५ लाख बेरोजगारों के लिए कारोबार

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत लगभग १६,००० शिक्षित बेरोजगारों को कारोबार देने के लिए ५६ नई योजनाएं प्रस्तावित और कार्यान्वित की गई हैं। ग्रामीण बेरोजगारों के लिए सघन कार्यक्रम चालू किये गये हैं। इस वर्ष १० लाख रुपये की लागत से विशेष रोजगार योजनाएं चालू की गई हैं।

शिक्षा

दिल्ली में शिक्षा को कार्य-अनुभव व विज्ञान सम्पन्न बनाने के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रारम्भ किये गये हैं।

हरिजन कल्याण

हरिजन तथा पिछड़ी जातियों के कल्याण की कई नई योजनाएं चलाई हैं जिन पर चौथी योजना के मूल परिव्यय से दुगुना धन खर्च किया जा रहा है।

चिकित्सा सुविधाएं

सन् १९७३-७४ के दौरान पिछड़े तथा झुग्गी-झोपड़ी क्षेत्रों में १० नये औषधालय खोले गये। इस प्रकार अब तक ५० औषधालय खुल चुके हैं। ५००-५०० बिस्तरों वाले दो अस्पताल निर्माणाधीन हैं।

किसानों को सुविधाएं

छोटे तथा भूमिहीन किसानों को अनुदान तथा सस्ती दर पर कर्ज देने के लिए 'मार्जिनल फार्म एग्रीकल्चरल लैंडलैस लेबरर्स एजेंसी' स्थापित की गई है।

पशु संवर्धन के लिए 'वीर्य बैंक' तथा बहुत दूध देने वाली आस्ट्रेलिया की गायों के फार्म की स्थापना की गई है।

दिल्ली की पांचवी पंचवर्षीय योजना में अधिकाधिक नागरिक सुविधाएं जुटाने, गृह-निर्माण तथा गन्दी बस्तियों की सफाई, बेरोजगारी को समाप्त करने तथा कमजोर वर्गों के कल्याण आदि कार्यक्रमों को प्राथमिकता दी गई है।

दिल्ली को आदर्श राजधानी बनाने में अपना भरसक योगदान करें ;

सूचना एवं प्रचार निदेशालय, दिल्ली प्रशासन, दिल्ली द्वारा प्रकाशित

बिहार आंदोलन में लगे लोग

—नागेश्वर प्रसाद

बिहार आंदोलन की आलोचना इस आधार पर की जाती है कि वह मुख्य रूप से शहरों तक सीमित है, उसने समाज के कमजोर वर्गों को आकर्षित नहीं किया है और यह कि उसमें राजनीतिक दलों का वर्चस्व है। इन सब आलोचनाओं में इस बात की ओर से आंख मूंद ली गयी दीख पड़ती है कि अपने केन्द्र बिन्दु से परिधि की ओर बढ़ते हुए आंदोलन ने समाज के सभी वर्गों का न केवल स्पर्श किया है वरन उन्हें सक्रिय भी बना दिया है।

इसमें शक नहीं कि आन्दोलन का आरम्भ पटना नगर में छात्रों के एक प्रदर्शन से हुआ। किन्तु वह न केवल बिहार के बड़े शहरों वरन कस्बों और गांवों तक में फैल गया। इसका कारण आंदोलन की बागडोर जयप्रकाशजी के द्वारा सम्भाल लिया जाना और छात्र समुदाय के सामने सम्पूर्ण क्रान्ति का कार्यक्रम रखा जाना था।

प्रस्तुत लेख उन ४०० सत्याग्रहियों से एकत्र आंकड़ों पर आधारित है जिन्हें ३ से ५ अक्टूबर, १९७४ तक के राज्यव्यापी बिहार बन्द के समय सारन जिले में गिरफ्तार किया गया था। इन सत्याग्रहियों को जिस जेल में रखा गया था। वहीं उनके एक साथी ने उन्हें एक प्रपत्र भरने को दिया। इस प्रपत्र के आधार पर जो जानकारी सामने आयी उसमें कुछ थोड़ी सी कमी रह गयी और वह इसलिए कि प्रपत्र में उस प्रकार की जानकारी के लिए स्थान नहीं रखा गया था। फिर भी जहां तक आंदोलन को समर्थन और राजनीतिक प्रणाली पर उसके प्रभाव का सवाल है, इन आंकड़ों का विश्लेषण मोटी तौर पर हवा का रुख बतला ही देता है।

सारन जिले में बन्दी बनाये गये इन सत्याग्रहियों में से भारी बहुमत ग्रामीण इलाकों का रहनेवाला था। स्मरणीय है कि राज्यव्यापी बन्द के दौरान जिले भर में गिरफ्तारियां की गयी थीं। सत्याग्रही बंदियों को विभिन्न जेलों में रखा गया था। वर्तमान विश्लेषण सिर्फ उन्हीं सत्याग्रहियों से सम्बन्धित है जिन्हें छपरा जेल में रखा गया था। ग्रामीण क्षेत्रों से आनेवाले सत्याग्रहियों का भारी बहुमत में होना यह दर्शाता है कि आंदोलन राज्य के भीतरी भागों में स्थित गांवों तक फैल गया है। वह अब मात्र शहरी आंदोलन नहीं रह गया है जैसा कुछ निहित स्वार्थ प्रचार कर रहे हैं।

आंदोलन में शामिल लोगों पर जाति की नजर से देखें तो पता चलता है कि आंदोलन ने इलाके के सामाजिक समूहों में से सर्वाधिक दूर तक की जातियों का स्पर्श किया है। छपरा जेल के ४०० बन्दियों में से लगभग ४० प्रतिशत अनुसूचित जातियों अथवा जनजातियों के थे। इनमें से करीब आधे अर्थात २१.७ प्रतिशत अनुसूचित जाति के थे जबकि बाकी बचे आधे लोग यादव, कुरमी, कोरी, बढ़ई, सुनार, लुहार आदि पिछड़ी जातियों के।

बन्दियों में से लगभग ६० प्रतिशत उच्चजातियों का रहा। तथापि यह सोचना गलत होगा कि चूंकि आंदोलन में उच्च-जातियों के लोगों की संख्या ज्यादा है, इसलिए उस पर समाज के सम्पन्न वर्ग का वर्चस्व है। इस हालत में यदि हम उच्च जातियों के आय और जमीन की मालिकी के ढांचे पर विचार करें तो निश्चित निष्कर्षों तक पहुंच सकना आसान होगा।

उच्च जातियों के ६० प्रतिशत सत्याग्रही बन्दियों में से २८ प्रतिशत ने ही अपनी मासिक आमदनी जाहिर की है, इनमें से तीन-चौथाई लोग निम्न अथवा मध्यम आय वर्ग के हैं अर्थात उनकी आमदनी तीन सौ रुपये तक और तीन से पांच सौ रुपये के बीच है। ऊंची जाति वालों की जमीन की मालिकी का दावा और भी अधिक खोखला हो जाता है। उच्च जाति के ६० प्रतिशत इन सत्याग्रहियों में से कोई १२ प्रतिशत तो ऐसे हैं जिनके पास या तो कोई जमीन नहीं है या यदि है तो एक एकड़ से कम, २९ प्रतिशत लोग ऐसे हैं जिनके पास २ से ४ एकड़ के बीच जमीन है और १३.२ प्रतिशत के पास ५ से ७ एकड़ तक है। इस प्रकार ६० में से ४० प्रतिशत तो ऐसे हैं जिनके पास या तो जमीन ही नहीं है या यदि है भी तो ४ एकड़ से कम ही है। अधिकांश लोग ऐसे हैं जिनके पास २ से ४ एकड़ के बीच जमीन है।

इस विश्लेषण से साफ हो जाता है कि ये उच्च जाति के लोग जिनकी आमदनी तथा जमीन की मालिकी से सम्बन्धित जानकारी सुलभ है, वास्तव में समाज के आर्थिक दृष्टि से कमजोर वर्ग के हैं।

बुनियादी छानबीन की दृष्टि से सत्याग्रहियों के धंधे की ओर नजर डालना भी जरूरी है। सत्याग्रहियों में से ५९ प्रतिशत ने बताया कि वे छात्र हैं, इसलिए उन्हें कोई व्यवसाय विशेष बताने की जरूरत नहीं पड़ी। इनको छोड़ दिया जाये तो जो गैर-छात्र बचते हैं उनमें से आधा हिस्सा किसान है। यह बात भी आंदोलन की जड़ें गांवों तक फैलने के पक्ष में जाती है। व्यापारी और अन्य व्यवसायवालों की संख्या थोड़ी सी ही है।

अगर हम भारत में रुपये की मौजूदा कीमत को देखते हुए ३ सौ रुपये मासिक तक की आमदनी निचले आय वर्ग में आती है तो समस्त सत्याग्रहियों की आय का विश्लेषण करने पर निचले आय वर्ग का पलड़ा ही भारी रहेगा। सत्याग्रहियों का लगभग १७ प्रतिशत इसी आय वर्ग का था और इनमें से भी ९ प्रतिशत ऐसे लोग हैं जिनकी आय १०० रुपये मासिक से भी कम है। ५ प्रतिशत लोग ऐसे हैं जिनकी आय १०० से २०० रुपये के बीच और ३ प्रतिशत ऐसे हैं जिनकी २०० से ३०० रुपये तक है। इसी प्रकार मध्यम आय वर्ग का विचार करते हुए जब हम ३०१ से ५०० रुपये मासिक तक की आयवालों को भी शामिल कर लेते हैं तो यही बात सामने आती है कि आन्दोलन का जोर मुख्य रूप से निचले और मध्यम आय वर्गों के लोगों में है। जिन ६७.५ प्रतिशत लोगों की आमदनी की जानकारी नहीं हो सकी उनमें या तो छात्र थे जिन्होंने अपनी आमदनी जाहिर नहीं की अथवा ऐसे किसान थे जिनकी आमदनी सर्वेक्षण के प्रपत्र में किसी कारण भरी न जाने से सामने नहीं आ पायी।

सत्याग्रही बन्दियों का जो १७ प्रतिशत निचले आय वर्ग में आता है अर्थात जिसकी आमदनी ३ सौ रुपये मासिक से कम है, उनमें से ३६ प्रतिशत ने बताया कि उनके परिवार में ज्यादा से ज्यादा ८ सदस्य हैं और ४६ प्रतिशत ने जानकारी दी कि उनका परिवार ९ से लेकर १५ सदस्यों तक का है। इस प्रकार निचले आय वर्ग के ८४ प्रतिशत व्यक्ति ऐसे परिवारों से है जिसमें अधिकतम १५ सदस्य हैं। मध्यम आय वर्ग में भी, जिसमें कुल सत्याग्रहियों का ६ प्रतिशत आता है, लगभग तीन-चौथाई ऐसे हैं जिनके परिवारों में अधिकतम १५ सदस्य हैं। इस विश्लेषण से भी बहुत साफ हो जाता है कि आन्दोलन में मुख्य रूप से जुटा वर्ग निचले और मध्यम आय वर्ग का है।

हमारी इस बात को कि आन्दोलन को समाज के कमजोर वर्ग को साथ लेने में सफलता मिली है, जमीन की मालिकी के आकड़ों से और बल मिलता है। प्रपत्र भरने वालों में से एक-चौथाई ने अपनी जमीनों का कोई ब्योरा नहीं दिया। लगभग इतने ही लोगों अर्थात २४ प्रतिशत के पास ज्यादा से ज्यादा १ एकड़ जमीन थी। लगभग ११ प्रतिशत लोगों के पास कोई जमीन नहीं थी जबकि १३ प्रतिशत से अधिक लोग ऐसे थे जिनके पास केवल २ से ४ एकड़ के बीच जमीन थी। यदि हम इन वर्गों को मिला दें जिनके पास कोई जमीन नहीं है, १ एकड़ तक जमीन है और २ से ४ एकड़ तक जमीन है तो इनमें समस्त सत्याग्रहियों का आधा ऐसा भाग आ जाता है जिनके पास ज्यादा से ज्यादा ४ एकड़ जमीन है।

इन परिवारों की जमीन की मालिकी और परिवार के सदस्यों की संख्या को एक साथ देखने पर स्पष्ट हो जाता है कि अधिकांश लोग आर्थिक और सामाजिक रूप से कमजोर वर्गों में से हैं। हम देख चुके हैं कि सत्याग्रहियों का ८४ प्रतिशत ऐसे परिवारों से है जिनमें १५ सदस्य तक हैं। इसका अर्थ यह है कि ज्यादातर लोग ऐसे हैं जिनके पास एक ओर जमीन तो ४ एकड़ से भी कम है और दूसरी ओर परिवार काफी बड़ा है। यह थोड़ी जमीन पर आश्रित बहुत अधिक मुखों का

सत्याग्रही : एक नजर में

जाति	प्रतिशत
उच्च जातियां	६०.५
बीच की जातियां	१७.८
हरिजन	२०.०
अन्य	१ ७
धंधे	
छात्र	५८.५
किसान	१६.५
व्यापारी	५ ५
सामाजिक कार्यकर्ता	४.५
मजदूर	३.०
उच्च व्यवसाय	२ २
निम्न व्यवसाय	२ २
नौकरीपेशा	०.८
बेरोजगार	३ ८
आय (मासिक)	
३०० रुपये तक	१७ २
३०१ से ५०० तक	६.२
५०० से ऊपर	५ ८
अन्य	६७.८
जमीन की मालिकी	
भूमिहीन या १ एकड़ तक	२४ ०
२ से ४ एकड	२६.५
५ से १० एकड	१४.०
११ से १५ एकड	४ ५
१५ एकड से ऊपर	५.७
अन्य	२५.३
शिक्षा	
हाई स्कूल के नीचे	३०.५
हाई स्कूल या स्नातक से कम	२६ ५
स्नातक और ऊपर	१.५
अन्य	४१.५
आयु	
१६ से कम	६ ८
१६ से १८	३८.२
१९ से २१	२५.०
२२ से २५	८.५
२५ से ऊपर	१८.५

एक अपने ही ढंग का मामला है। इस प्रकार जमीन की मालिकी की दृष्टि से भी अधिकांश लोग समाज के अपेक्षाकृत गरीब वर्ग के हैं।

सत्याग्रहियों की शिक्षा और वय को देखने पर यह बात सामने आती है कि आन्दोलन समाज के नये उम्र के वर्ग में फैला है। संयोगवश शिक्षा के मामले में हमें मिले आकड़े उन लोगों के ही सम्बन्ध में हैं जो छात्र हैं। ४१ प्रतिशत गैर-छात्र बन्दियों में से लगभग सभी ऐसे थे जो अपनी शिक्षा का विवरण नहीं दे पाये। जो ५६ प्रतिशत बन्दी छात्र थे उनमें से बड़ी संख्या ऐसे लोगों की थी जो या तो माध्यमिक स्तर अथवा इंटरमीजिएट तक शिक्षित थे। इन छात्रों का ६० प्रतिशत से अधिक इन दो वर्गों में आ जाता है।

सत्याग्रहियों के आयु-वर्गों पर नजर डालने पर यह बात सामने आती है कि नयी उम्र के लोगों का हिस्सा आन्दोलन में ज्यादा है। सत्याग्रहियों में से ज्यादातर १६ से २५ वर्ष के बीच के हैं। इनका अनुपात कुल सत्याग्रहियों का ८० प्रतिशत से अधिक है। आगे विश्लेषण करने पर सामने आता है कि इन लोगों का ६० प्रतिशत से ज्यादा १६ से २१ साल की आयु का है और बड़ी संख्या में अर्थात ३८ २ प्रतिशत ऐसे लोग हैं जो १६ से १८ साल की आयु के हैं। इस प्रकार आन्दोलन ने प्रमुख रूप से अपने आदर्शों के कारण जो कि जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व ग्रहण कर लेने से उसमें आ गये हैं, मुख्यतः नयी उम्र के लोगों को आकर्षित किया है।

आन्दोलन के खिलाफ बार-बार लगाया जानेवाला एक आरोप यह है कि उसमें राजनीतिक दलों का वर्चस्व है और ये दल ही आन्दोलन को सक्रिय रखनेवाली मुख्य शक्तियां हैं। जब बन्दियों से राजनीतिक दलों से अपने सम्बन्धों की जानकारी देने को कहा गया तो ९० प्रतिशत से अधिक ने बताया कि न तो वे किसी राजनीतिक दल के सदस्य हैं और न ही उनका किसी दल से कोई सम्बन्ध है। जो १० प्रतिशत लोग नहीं किसी तरह दलों से जुड़े हुए थे उनमें से ६ प्रतिशत सोशलिस्ट पार्टी, २ प्रतिशत जनसंघ और बाकी २ प्रतिशत भारतीय लोकदल तथा भूतपूर्व संयुक्त समाजवादी पार्टी के थे।

सत्याग्रहियों की दलों से सम्बद्धता के सवाल पर यह बात सामने आई कि ६२ प्रतिशत लोग ऐसे थे जिनके राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ अथवा समाजवादी युवजन सभा जैसे किसी हर्वेन्द्रिक, अर्द्ध-राजनीतिक या राजनीतिक दल से कोई सम्बन्ध नहीं थे। शेष ८ प्रतिशत श्रमिक संगठनों, शिक्षक संगठनों या सर्वोदय मण्डलों जैसे व्यावसायिक या स्वैच्छिक संगठनों के सदस्य थे।' जहाँ तक प्रत्यक्ष रूप से दलों की सदस्यता की बात आती है, कुल ३ प्रतिशत लोग ही ऐसे निकले जो जनसंघ या सोशलिस्ट पार्टी से किसी हद तक जुड़े हुए थे।

इन निष्कर्षों का सम्पूर्ण राजनीतिक प्रणाली पर क्या प्रभाव पड़ता है? इन आंकड़ों से मोटे तौर पर चार प्रमुख बातें सामने आती हैं। पहली बात तो यह है कि *आन्दोलन केवल शहरी है, यह भ्रम दूर हो* जाता है। दरअसल आन्दोलन का देहाती क्षेत्रों में पहुँचना बहुत जरूरी भी है क्योंकि राज्य की करीब ९६ प्रतिशत आबादी कमोबेश देहाती है। इसलिए जो भी आन्दोलन बड़ी संख्या में जनजन को अपने साथ लेना चाहे उसका काम भीतरी गाँवों में गये बगैर नहीं चलेगा।

दूसरी बात यह है कि आन्दोलन का क्षेत्र व्यापक हो जाने से समाज के सभी वर्गों को उसमें स्थान मिल सकना स्वाभाविक हो गया है। हम देख ही चुके हैं कि सत्याग्रही बन्दियों का ४० प्रतिशत मध्यम, पिछड़े और अनुसूचित जाति वर्गों से आता है। उच्च जाति वर्ग के ६० प्रतिशत लोगों की आमदनी और जमीन की मालियत देखने पर वे भी आर्थिक दृष्टि से पिछड़े लगते हैं।

तीसरी बात है कि मासिक आमदनी और सम्पत्ति को देखते हुए अधिकांश बन्दी समाज के कमजोर वर्ग के हैं और चौथी बात है कि आन्दोलन ने अपने भीतर से पैदा होनेवाली नेतृत्व-क्षमता प्रकट कर ली है जिससे लोग राजनीतिक दलों की विशेषता बनाये बिना ही उसमें शामिल होने के लिए आगे आते हैं।

इन चार पहलुओं से आंकड़ों से साफ है कि बिहार आन्दोलन ने बुनियादी तौर पर ग्रामीण समाज के दो बड़े वर्गों को शक्ति प्रदान की है। एक वह वर्ग है जो जड़ बना रहा है और किसी भी विकास का उसे कोई फायदा नहीं मिला। अब इस वर्ग में परिवर्तन की उम्मीद मजबूती से पनप आयी है। इस वर्ग में वे लोग आते हैं जिनके पास जमीन का ४ एकड़ से भी कम का टुकड़ा है और उससे पैदा होनेवाले ज्यादा से ज्यादा ३ सौ रुपये मासिक में उन्हें बड़ा परिवार चलाना पड़ता है। इसे हम महत्वाकांक्षा से विहीन वर्ग कह सकते हैं। दूसरे लोग वे हैं जिन्होंने अपनी जीवन पद्धति अस्थायी रूप से कुछ ऊँची होती अनुभव तो की है लेकिन बढ़ते हुए निर्वाह खर्चों के सामने लाचार होते जा रहे हैं। इस वर्ग में ५ से १५ एकड़ तक जमीनों वाले वे लोग हैं जो ५ सौ रुपया मासिक तक की आमदनी कर पाते हैं। इस वर्ग को प्रगति से विहीन वर्ग कह सकते हैं। इन दोनों वर्गों *की भागीदारी ही बिहार आन्दोलन के रूप में* उभरी है और ये दोनों वर्ग ग्रामीण समाज के बहुमत का निर्माण करते हैं।

आन्दोलन की सफलता इस बात में है कि लोगों की विहीनता की भावना को उसने अहिंसक सामूहिक कार्रवाई के जरिये पूरे परिवर्तन की आकांक्षा में बदल दिया है। अगर यह न होता तो लोगों की भड़ास छोटी-बड़ी हिंसक घटनाओं के रूप में ही बाहर आती। इनके भड़कने से भी यह व्यवस्था कच्चे धागे जैसी टूट जाती जिसने बिहार को भ्रष्ट राजनीतिक महन्तों, नौकरशाही, तेजी से बढ़ती कीमतों, बेरोजगारी और बेमतलब हो चुकी शिक्षा प्रणाली का मैदान बना दिया है। बिहार आन्दोलन ने जो किया है वह यह

बिहार का एक भूमिहीन किसान

है कि सामाजिक और नैतिक क्रान्ति की दृष्टि से उसने इन मामलों पर ध्यान केन्द्रित किया है और व्यवस्था को जारी रह सकने में मदद दी है। व्यवस्था का जारी रहना अब इसी बात पर निर्भर है कि आन्दोलन के दौरान उठाये गये सवालों को पूरा करने के लिए वह किसी तत्परता और तैयारी से आगे आती है। बाद में देर होने पर रक्षा की मौजूदा व्यवस्था उसने जनता को जो उसे महंगी कीमत चुकानी पड़ सकती है। O

महिलाओं की स्थिति

—प्रमिला कल्हन

राष्ट्रसंघ के आर्थिक और सामाजिक सूचना केन्द्र के द्वारा महिला वर्ष के सिलसिले में समाज में स्त्रियों की स्थिति से सम्बन्धित एक सर्वेक्षण दुनिया के अलग-अलग हिस्सों में किया गया। सर्वेक्षण के जो नतीजे निकले हैं, उनसे ऐसा मालूम होता है कि ज्यादातर स्त्रियां सामाजिक प्रगति और विकास से होनेवाले आर्थिक और अन्य क्षेत्रों में पूरी तरह भाग लेने के लिए आगे नहीं आती और इनसे होनेवाले लाभ भी उन्हें बहुत कम मात्रा में मिल पाते हैं। राष्ट्रीय आर्थिक क्षेत्र में गृहिणी के योगदान को अर्थशास्त्री या योजना बनानेवाले लोग ध्यान में नहीं लेते। फिर भी इस बात की ओर लोगों का ध्यान रोज-रोज अधिक जा रहा है कि समाज की प्रगति के लिए महिलाओं का सार्वजनिक क्षेत्र में आना बहुत जरूरी है। यदि महिलाओं को आर्थिक उत्पादन के क्षेत्र में पूरी तरह हाथ बटाना चाहिए, यह मान लिया जाये तो फिर इस बात की भी जरूरत हो जाती है कि उन्हें उसके लिए जरूरी प्रशिक्षण दिया जाये जिससे वे अवसर आने पर कुशलता के साथ काम करें और समूचे समाज को लाभ पहुंचाने के साथ साथ अपनी भी शक्ति बढ़ायें। राष्ट्रसंघ के अनुसार सारी दुनिया में ८० करोड़ लोग बिना पढ़े-लिखे हैं जिनमें ५० करोड़ संख्या स्त्रियों की है। देहातों में जो लड़कियां प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने के लिए जाती हैं, उनमें से ८० प्रतिशत बीच में से ही पढ़ना छोड़ देती हैं। वे काम करने जाने लगती हैं और उन्हें कम मजदूरी के सीधे-सादे काम दिये जाते हैं। औरतों की हालत उन हिस्सों में खासतौर से खराब है जो देश मुख्यरूप से जीवन-निर्वाह के लिए खेती पर निर्भर करते हैं और वहां औरतों को घर चलाने के सिवाय खेत वगैरह में भी दिन-दिन भर काम करना पड़ता है।

अगरचे बहुत-से देशों में प्रौढ़ शिक्षा चलाने का विशेष प्रयत्न किया गया है किन्तु वहां भी यह देखा गया है कि पुरुषों के मुकाबले में स्त्रियों का अनुपात बहुत कम है। औरतों के प्रौढ़ शिक्षा के लिए भरती न होने के अनेक कारण हैं जैसे घर से मदरसों की दूरी, रात को पढ़ने जाने से सम्बन्धित अव्यावहारिक परिस्थिति, घर-द्वार के काम, बाल-विवाह और इन सबसे बढ़कर पुरानी रूढ़ियां। इस बात की बहुत जरूरत महसूस की गयी है कि बचपन से ही शिशुओं के मन पर घर और बाहर इस बात की छाप डाली जानी चाहिए कि लड़की लड़के से किसी बात में कम नहीं है।

अफ्रीका में १९६० और ७० के बीच में माध्यमिक स्कूलों में स्त्री-शिक्षा ३१ प्रतिशत से बढ़कर ३२ प्रतिशत हुई। और यूरोप में यही प्रतिशत ४५ से ४७ हुआ। एशिया में ३५ प्रतिशत का ३५ प्रतिशत ही बना रहा। विकासशील देशों में माध्यमिक शालाओं में पढ़नेवाली लड़कियों की सबसे ज्यादा संख्या लैटिन अमरीका में देखी गयी जो ४८ प्रतिशत है। क्यूबा में केवल १९६१ में ही निरक्षरता में बहुत ही चौंकानेवाली कमी हुई। १९६० तक वहां ७२.२ प्रतिशत बिना पढ़े-लिखे लोग थे जो एक वर्ष के भीतर ही घटकर ३.९ रह गये। सारी दुनिया में उच्च शिक्षा प्राप्त करनेवाली महिलाएं पूरी जनसंख्या की ३८ प्रतिशत हैं। इनमें सबसे ज्यादा संख्या यूरोप और रूस में पायी जाती है। इसके बाद उत्तरी अमरीका, एशिया, अफ्रीका और अरब देशों का क्रम है।

दुनिया के सभी हिस्सों में नये-नये काम करने की रुचि की दृष्टि से स्त्रियां आगे आती हुई देखी जा रही हैं। यहां तक कि वैज्ञानिक और विद्युत यान्त्रिकी क्षेत्र में भी कुछ स्त्रियां काम करती हुई पायी गयी हैं। धार्मिक क्षेत्रों में व्यक्तिगत रूप से तो स्त्रियों ने सदा पुरुषों से अधिक दिलचस्पी रखी ही है, अब वे सार्वजनिक रूप से भी धर्मोपदेश करने में आगे बढ़ रही हैं।

नये-नये इन क्षेत्रों में स्त्रियों की उपस्थिति के बावजूद काम धन्धों में लगी हुई स्त्रियों की संख्या अभी तक बहुत सीमित है। अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिक संघ के एक अध्ययन ने बताया है कि बहुत से उद्योग-प्रधान देशों में स्त्रियों को पुरुषों से एक ही काम के लिए मिलनेवाला पारिश्रमिक सौ की जगह पचास और अस्सी के बीच में होता है।

सन् १९७१ में मताधिकार की हद तक १२४ देशों में स्त्रियों को चुनावों में खड़े होने और मत देने का समान अधिकार था। इनमें से पांच देशों में स्त्रियों पर कुछ प्रतिबन्ध हैं। और ये देश हैं कुवैत, साउदी अरेबिया, यमन, लाइसेंसटीन और नाइजीरिया। नीति निर्धारण, विधि निर्माण, न्याय, प्रशासनिक और राजकीय क्षेत्रों में स्त्रियों का अनुपात बहुत ही कम है। जहां कहीं स्त्रियों को राज्य संचालन में मंत्री आदि के पद दिये भी गये हैं, वहां भी उनके विभाग प्रायः स्त्रियों से सम्बन्धित विषयों तक सीमित हैं, जैसे समाज-कल्याण, शिशु-कल्याण आदि। आस्ट्रेलिया और फ्रांस ने अभी-अभी स्त्रियों के मामले में विशेष सलाह देने के लिए भी कुछ महिलाओं को नियुक्त किया है। केवल एशिया के दो देशों भारत और श्रीलंका में महिला प्रधानमंत्री हैं। इजरायल में भी श्रीमती गोल्डामायर प्रधानमंत्री थीं। मैक्सिको में जून २३ और जुलाई ४ के दरमियान महिला वर्ष से सम्बन्धित राष्ट्रसंघ का जो अधिवेशन होने जा रहा है, उसमें २३ देशों से प्रतिनिधि चुनकर एक समिति बनायी गयी है जो तय करेगी कि अन्तर्राष्ट्रीय पैमाने पर स्त्रियों की उन्नति के लिए क्या-क्या काम किये जाने चाहिये। राष्ट्रसंघ की समाज-विकास और मानव-कल्याण शाखा की सहायक सचिव श्रीमती हेल्वी शिपला इस अधिवेशन की प्रधान चुनी गयी हैं।

"परिषद का उद्देश्य यह है कि स्त्रियों के बीच में सुधार आदि के जो काम धीरे-धीरे चल रहे हैं, उन्हें किस तरह अधिक से अधिक गति देकर जल्दी से जल्दी सफल बनाया जा सकता है ताकि दुनिया की सामाजिक और आर्थिक प्रगति में उनका पूरा योगदान हो सके और हमारी आज की दुनिया बेहतर बने।

O

मध्य प्रदेश शासन तथा जनता
उज्ज्वल भविष्य के निर्माण में संलग्न

(१) मध्य प्रदेश राज्य ग्रामीण कृषि संपत्ति कराधान में देश में अग्रणी।

(२) प्रति वर्ष एक करोड़ टन चावल उत्पादन के लिए विपुल कार्यक्रम प्रारम्भ।

(३) सूखे का युद्ध स्तर पर मुकाबला :

शुष्क खेतों के लिए आपात कालीन सिंचाई व्यवस्था।

निराश्रितों के लिए कार्य तथा भोजन।

(४) राज्य के प्रत्येक जिले के लिये एक मध्यम अथवा बड़े उद्योग की व्यवस्था।

(५) भूमिहीनों के लिए अल्प समय में ६,२७,५०० आवास-स्थलों का वितरण।

(६) जमाखोरों, मुनाफाखोरों और तस्करों के विरुद्ध कठोर कार्यवाही।

(सूचना तथा प्रकाशन संचालनालय मध्य प्रदेश भोपाल द्वारा प्रसारित)

मु० प्र० सं० : ४२६/७५

हम भी साल-भर चुप रहें

—द्वारको सुन्दरानी

देश में आज जो हालत चल रही है वह बहुत ही दुखदायी है। अन्याय, दमन और शोषण के पाटों के बीच में जनता अपने को बिलकुल लाचार महसूस कर रही है। नीचे के तबके के लोगों को ठीक से खाना-कपड़ा नहीं मिलता। और तो और उनके जान-माल की भी खैर नजर नहीं आती। इज्जत के साथ जी सकना रोज-रोज मुश्किल होता चला जा रहा है।

जीवन-मूल्य रोज गिरते चले जा रहे हैं। १९४७ के पहले हम एक सपना देखते थे। लोगों की स्वतंत्रता का सपना, जिसके बारे में गांधीजी, रवीन्द्रनाथ और जवाहरलाल नेहरू ने बताया था। आजादी के बाद भी हम इनके बारे में विनोबा और जयप्रकाशजी से सुनते रहे। इन्होंने आम आदमी की आजादी के लिए जबर्दस्त कोशिशें भी कीं। और तकलीफें उठायीं। उन्होंने हमारे समाज को नये मूल्यों की बुनियाद देकर खड़ा करना चाहा। अब हम देख रहे हैं कि किसी क्रांति को सफल बनाये बिना हमारा सपना सच नहीं होनेवाला है। इस तरह की बातें करते हुए हम कुछ हवा में नहीं बोल रहे हैं। हमने कम से कम बीस बरस गांवों में रचनात्मक काम किया। गांधीजी के जाने के बाद लोगों में पहुंचकर ठीक विचारों का प्रचार किया। पूरे देश में सर्वोदय विचार को जिस तरह व्यापक बनाने की कोशिश की गयी उस तरह की किसी और विचार को फैलाने की कोशिशें नहीं हुईं। मगर शब्द शक्ति की एक सीमा होती है। जब यह सीमा आ गयी तो विनोबा ने सूक्ष्म में प्रवेश किया और मौन ले लिया। यह शब्दों से अधिक मुखर होता है। इस परिस्थिति में भी उनकी यह मान्यता है कि वे सौम्य से सौम्य-तर पद्धति को अपनाते हुए सूक्ष्मरूप में सत्याग्रह का प्रयोग कर रहे हैं। लगता है हम उनकी बात को ठीक तरह से नहीं समझ पा रहे हैं।

इस सबके बावजूद देश में हिंसा बढ़ रही है और उसके कारण लोगों की तकलीफें बढ़ी हैं। जयप्रकाशनारायण का ममता से भरा हुआ मन इस सारी परिस्थिति को चुप-चाप देखते रहने में समर्थ नहीं था। इसलिए उन्होंने लोगों के खिलाफ जो हिंसा चल रही है, उसके विरोध में अपनी आवाज उठायी। कहा जाता है कि यह आवाज अमुक-अमुक पर हमला है। मुझे लगता है कि हम लोगों में से ही ऐसे बहुत से लोग हैं जिन्होंने जय-प्रकाशजी के उद्देश्य को ठीक ढंग से नहीं समझा।

बहुत बरसों पहले की बात है मैंने उनसे उनके जीवन की प्रेरणा के बारे में पूछा था। मैंने प्रश्न किया था किस चीज ने उनको लोगों की तकलीफों से एकाकार किया। उन्होंने कहा, 'मैं जबसे भारत की स्वतंत्रता की लड़ाई में कूदा तब से अब तक एक ही बात मुझे प्रेरणा देती आयी है और वह है क्रान्ति के लिए मन में तीव्र अभिलाषा। क्रांति के बिना लोगों की तकलीफें दूर नहीं हो सकतीं। उन पर होनेवाले अन्याय और शोषण का अन्त नहीं हो सकता। मैं इन्हीं चीजों को बर्दाश्त नहीं कर पाता। और इसीलिए मैं सदा क्रान्ति के पक्ष में रहा हूं। फिर चाहे वह क्रान्ति मार्क्सवादी ढंग की हो, चाहे समाजवादी ढंग की, चाहे कांग्रेस की कल्पना के अनुसार।'

सत्ता के मूल में जो हिंसा जड़ें जमाये हुए है और जो लोगों की सारी तकलीफों का कारण है मेरे मन को हमेशा परेशान करती है। मैं उद्विग्न और विद्रोही हो उठता हूं। मैं आज सर्वोदय में हूं तो इसीलिए हूं कि मुझे इसमें से क्रान्ति की खोज लेने की उम्मीद है। यह एक नयी समाज व्यवस्था की कल्पना करता है, ऐसी समाज व्यवस्था की कल्पना जिसमें हिंसा को कोई स्थान न हो। जयप्रकाशजी इसीलिए आज सम्पूर्ण क्रान्ति के आन्दोलन को संचालित करने में लगे हुए हैं।

जयप्रकाशनारायण अगर प्रकट रूप से लोगों के दुख दूर करनेवाले सत्याग्रह में शामिल हुए हैं तो विनोबा सूक्ष्मरूप में उसी प्रकार का प्रयत्न कर रहे हैं और यह प्रयत्न क्रांति के आधार को मजबूत बनाने में और भी अधिक सक्षम है। दोनों ही लोगों की तकलीफों के प्रति ममता और करुणा से भरपूर हैं और उनके विचारों में कोई मूलभूत अन्तर नजर नहीं आता। दोनों ने बार-बार यही बात कही है। दोनों ने हमसे कहा है कि हम लोग इनमें पारस्परिक मतभेद न ढूंढें। मगर एक के तौरतरीके तीव्र हैं और दूसरे के सौम्य तो इसका अर्थ यह नहीं है कि हम आपस में किसी बात को लेकर लड़ें। यह हमें शोभा नहीं देता। एक तात्कालिक और दूसरा अन्तिम उद्देश्य को सामने रखे हुए है और इस तरह दोनों मिलकर हमारे सामने एक परि-पूर्ण तसवीर रखते हैं। विनोबा ने हम लोगों को सत्य, अहिंसा और संयम की मर्यादा में रहकर अपने अपने कार्यक्षेत्र चुनने के लिए स्वतंत्र छोड़ दिया है। हमें इससे ज्यादा और किन स्पष्ट संकेतों की जरूरत है। मगर हमने भी अपनी वाणी की शक्ति को समाप्त कर लिया हो और अगर हम अपने विचारों को आगे ले जाने में असमर्थ हो रहे हों तो हमारे सामने भी विनोबा की तरह चुप ही रहने के सिवाय क्या रास्ता बच रहता है? उन्होंने एक साल का मौन ले लिया है। उन्होंने यह

सौम्य, और सौम्यतम पद्धति के संदर्भ में किया है मगर हम भी एक साल के लिए मौन हो जायं तो इससे हमारा और हमारे आन्दोलन का बड़ा हित होगा। मौन के इस वर्ष में हम लोगों को आत्मनिरीक्षण के लिए पर्याप्त अवसर प्राप्त होगा। हम खुद अपने से सवाल कर सकेंगे कि लोगों के बीच में जाकर हम जो कुछ कहते रहे हैं उन सब बातों के प्रति हम खुद कितने सजग और निष्ठावान रहे। मेरा ख्याल है और मैं चाहता हूं कि एक साल का हमारा मौन हमें इस अग्नि-परीक्षा में से सही सलामत निकाले और हम शरीर और मन से अधिक खरे होकर सामने आयें।

o

आंदोलन के प्रति एलर्जी

—सं० ए० मेनन

देश के प्रश्नों को हल करने के लिए विनोबाजी जैसे तपे हुए कार्यकर्ता बहुत एलर्जी रखते हैं। आज उन जैसे जीवित सत्याग्रही के मानस के प्रति, जिसको गांधीजी ने सरकार के युद्ध प्रयासों के विरुद्ध आवाज उठाने के लिए प्रथम व्यक्तिगत सत्याग्रही चुनकर विश्व को आश्चर्य में डाल दिया था, उच्छृंखल आरोप लगाये जा रहे हैं और उनके उद्देश्यों पर संदेह प्रकट किया जा रहा है। व्यक्तिगत सत्याग्रह के बहुत पहले गांधीजी ने उनको केरल में चले वायकम मन्दिर सत्याग्रह के लिए चुना था। यह सत्याग्रह सवर्ण हिन्दुओं में पाये जानेवाले अस्पृश्यता के सामाजिक दोष के प्रति था। प्रसिद्धि प्राप्त करने की धूमधाम के बगैर विनोबाजी ने इन दोनों में ही अपने उत्तरदायित्व को भली प्रकार पूरा किया था। जिस संकोची ढंग से अपने कार्य को पूरा करके वे अपने आश्रम के रचनात्मक कार्य में आकर फिर लग गये थे, वह ठोस सत्याग्रह के लिए एक ऐसा पदार्थ पाठ था जिसने समाज के दोषों के प्रति मनुष्य की अन्तरात्मा पर एक अमिट छाप छोड़ी थी। अपने ऐसे स्वभाव तथा अहिंसा की सौम्यतम पद्धति में प्रशिक्षण के कारण, विनोबाजी, जो एक विद्वान भी हैं, स्वाभाविक रूप से हर प्रकार के अशान्तिमय आंदोलनों से बचते हैं यद्यपि वैसे आंदोलन जनता को पसन्द आते हैं और उनके द्वारा लुभावनी प्रसिद्धि मिलती है।

आलोचकों का आरोप है कि वे प्रश्नों को टालते हैं और जनता से बचते हैं। किन्तु यह उनके गम्भीर और सर्वोच्च आत्मसंयम का, जिसका उद्देश्य रचनात्मक कार्यकर्ता के सामने एक आदर्श उदाहरण रखना, सही नेतृत्व प्रदान करना तथा स्वतन्त्रता के लिए देश में
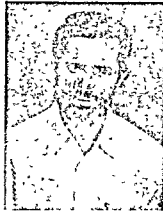
आवश्यक वातावरण निर्माण करना है, एक सुलभ और सरल विवरण जरूर है, किन्तु सही नहीं है। अट्ठारह वर्ष तक वे बिलकुल जनता के बीच कार्य करते रहे और पूरे देश में लगातार होनेवाली उनकी पदयात्रा ने विश्व का ध्यान खींचा था। वास्तव में पुरानी भ्रष्ट व्यवस्था के विरुद्ध सामाजिक और आर्थिक न्याय के लिए उनका यह सौम्यतम सत्याग्रह था। उन्होंने उसका प्रारम्भ अकेले ही किया था, किन्तु धीरे-धीरे उसका रूप उनके इर्दगिर्द जन-आंदोलन का बन गया और उसने अदृश्य रूप से समाज-परिवर्तन के साथ-साथ सब तरफ सद्भावना, मैत्री, पारिवारिक भावना तथा शांति का असीमित कोष भी निर्माण किया। इसका पूर्णतया मेल उस लोकतांत्रिक व्यवस्था के साथ है जिसके अन्तर्गत स्वतन्त्र भारत ने स्वेच्छा से काम करना पसन्द किया। विनोबाजी जब प्रदर्शनात्मक सत्याग्रह से बचे और उसको हतोत्साहित किया तब उनके सम्मुख प्रधान रूप से उस व्यवस्था की असीमित संभावनाएं और उनके निहितार्थ थे। फिर भी आवश्यकता पड़ने पर उन्होंने गलत धाराओं के प्रतिकार की जिम्मेवारी भी उठायी। इसका एक उदाहरण दक्षिण में चलनेवाला हिन्दी-विरोधी आंदोलन था। उनका एक दिन का सांकेतिक अनशन ही अत्यन्त प्रभावकारी सिद्ध हुआ था और सम्पूर्ण देश पर उनके बुद्धिमत्तापूर्ण परामर्श का असर पड़ा था। उनके द्वारा अपने पर लगाये प्रतिबन्ध पर बहुत कुछ लिखा जा सकता है। किन्तु इतना कहना पर्याप्त होगा कि आज के संदर्भ में वे केवल रचनात्मक कार्यकर्ताओं को ही नहीं, सम्पूर्ण देश को सही नेतृत्व प्रदान कर रहे हैं।

वर्तमान की अनेक महान समस्याओं और कठिनाइयों में रचनात्मक कार्यकर्ताओं को मां बाप जैसा रोल अदा करना है। घबराहट फैलाने की जगह उनको शांत चित्त से सलाह देनी चाहिए, हिम्मत तथा सामूहिक प्रयास से आग बुझानी चाहिए और पीड़ित लोगों की करुणापूर्वक सहायता करनी चाहिए। उनका काम समस्याओं के सम्मुख किंकर्तव्यविमूढ़ बने लोगों का भय मिटाना तथा उनको ढाढ़स और प्रेरणा देना है। यदि वे स्वयं दूसरों पर आरोप लगाते हैं, अधिकारों के लिए आंदोलन करते हैं और गड़बड़ी फैलाते हैं तो वे देश की कुसेवा ही करते हैं।

o

जनता अदालतें

बिहार में चालू जनआन्दोलन के दौरान लोगों की अपनी पहल पर जनअदालतें बन रही हैं। ऐसी ही एक जन-अदालत का यह किस्सा है। मोहीउद्दीनपुर खिसिमरिया पटना जिले के फतवा प्रखंड में है। इस जगह को 'नवरत्न शांतिनिकेतन ढीवर' के नाम से जाना जाता है।

मोहीउद्दीन खिसिमरिया के राशन डीलर श्रीकृष्ण साहू के बारे में आम जानकारी थी कि वे ज्यादा दर लेते हैं और कम तौलते हैं। राशन की चीनी वे १० पैसा प्रतिकिलो दाम बढ़ा कर लेते थे और कम वजन के बाँटों का इस्तेमाल करके एक किलो पर १०० ग्राम बचा लेते थे। इस बात कौशिकायत गांव के लोगों ने अधिकारियों से की थी। आखिर २१ अक्तूबर को नवरत्न शांति ढीवर पर इलाके के गांवों के लोगों की बैठक हुई। बैठक में करीब १०० लोग मौजूद थे। इस बैठक में २४ लोगों का एक पुलिस दल नरमा गांव के सभापति अशोककुमारसिंह के नेतृत्व में बनाया गया। दल बैठक के तुरत बाद कृष्णसाहू के कम वजनवाले बाटों को पकड़ने के लिए रवाना हुआ।

तब तक कृष्णसाहू को खबर लग चुकी थी। उसने बाटों को छिपा दिया। दल जब कृष्णसाहू की दुकान पर पहुंचा तो कम वजन वाले बाट नहीं थे। दल के लोगों ने कृष्ण साहू को धमकी दी कि अगर वह वे बाट प्रस्तुत नहीं करता और अपनी गलती स्वीकार नहीं करता तो दल के लोग कार्यवाही करने पर मजबूर होंगे। कृष्णसाहू ने बड़ी तादाद में लोगों को मौजूद देखा, आखिर बाट दिये और वायदा किया कि वह आगे यह नहीं करेगा। दल के लोगों ने उससे यह बात लिखित बयान की शक्ल में हासिल कर ली।

इसके बाद सिकंदरपुर गांव में फिर जनता अदालत बैठी। असल में इस गांव में सन् १६६१ से ही अपराधियों के खिलाफ जनता की अदालत क्रियाशील रही है। बाकायदा एक रजिस्टर में उसकी कार्यवाही दर्ज की जाती रही है। लेकिन इस आन्दोलन के दौरान लोगों में इकट्ठा होकर अपने फैसले लागू करवाने की ताकत भी आ गयी है। कृष्णसाहू से सम्बंधित पूरी घटना लोगों को बतायी गयी। साथ ही बाँट और कृष्णसाहू का बयान भी जन अदालत के सुपुर्द किया गया।

जब दल कृष्णसाहू के खिलाफ कार्यवाही करके लौट रहा था, उसे रास्ते में रासायनिक उर्वरक लेकर आ रहे किसान मिले। रासायनिक उर्वरक में नमक मिलाकर बेचा जाता रहा है। इस इलाके में जो दुकान उर्वरक बेचने के लिए अधिकृत है वह दरियावां स्टेशन पर है और कृष्णसाहू तथा गांव के मुखिया के भाई सूर्यदेवप्रसाद इसके मालिक हैं। किसानों के पास जो उर्वरक था उसमें भी नमक मिला था। दल के लोग तथा किसान दनियावां स्टेशन पर उर्वरक की दुकान पर पहुंचे। कृष्णसाहू को बुलाया गया। कृष्णसाहू का कहना था कि अशोक ट्रेडिंग कम्पनी फतुहा से जैसा उर्वरक हमें मिलता है, वे वे देते हैं। उर्वरक कंपनी के बारे में लोगों की जानकारी थी कि वहां तौल में तो कम दिया जाता है लेकिन माल ठीक रहता है। इसके बाद दूसरे साझीदार सूर्यदेवप्रसाद को बुलाया गया। सूर्यदेवप्रसाद का भी यही कहना था। दल के लोगों ने यहां भी उस धमकी को दोहराया। अगर कृष्णसाहू और सूर्यदेव अपने अपराध का इकबाल नहीं करते तो उन्हें पुलिस के हवाले कर दिया जायेगा। अलबत्ता अगर वे लिखित स्वरूप में गलती मानते हुए वायदा करें कि आगे ऐसा नहीं करेंगे तो वे लोग दुकान से हट जायेंगे और उनकी रिपोर्ट पुलिस को नहीं दी जायेगी। जनता अदालत उनके बारे में फैसला करेगी।

कृष्णसाहू और सूर्यदेव ने यह सब लिखकर दिया। इसके बाद मोहीउद्दीनपुर खिसिमरिया ग्राम पंचायत के पन्द्रहों गावों में दो-तीन आदमियों की टोली बनाकर इस घटना के बारे में जानकारी देते और २७ अक्तूबर को शाम चार बजे नवरत्न शांति निकेतन ढीवर पर जन सभा में पहुंचने का अनुरोध लेकर गये। तय कार्यक्रम के मुताबिक तेरह गावों से करीब डेढ़ सौ लोग इकट्ठा हुए। बैठक में कृष्णसाहू और सूर्यदेव भी बुलाये गये थे। वे मौजूद भी थे।

जनता अदालत बैठी। सर्वोदय कार्यकर्ता दुक्खनप्रसादसिंह को इसका संचालक बनाया गया था। मिलावटी उर्वरक और इकबाली बयान पेश हुआ। अदालत ने विचार करना शुरू किया। इस काले धंधे के खिलाफ लोगों ने कहा कि उन्हें कड़ी से कड़ी सजा दी जाये। कृष्णसाहू और सूर्यदेव ने अपना अपराध मानते हुए कहा कि इस बार उन्हें माफ कर दिया जाये। इसके बाद वे कभी इस तरह का नहीं करेंगे। जनता अदालत ने चेतावनी देकर उन्हें छोड़ दिया।

इस घटना का पूरा विवरण अखबारों में छपा। यह खबर छपते ही सरकार और पुलिस सक्रिय हो गयी। आखिर यह उनकी व्यवस्था में दखलदाजी थी। व्यवस्था चाहे न्याय की हो चाहे कालाबाजारी की, उसे बचाना और मजबूत करना सरकार का कर्तव्य है। मुखिया पर दबाव डाला गया कि वह अपना बयान वापस ले और रपट को झूठ बनाये। यह किया भी गया। कृष्णसाहू और सूर्यदेव ने भी अपने बयान बदले। लेकिन फिलहाल मिलावट और कालाबाजारी स्थगित है। वह कब तक रहती है, यह व्यवस्था के खिलाफ बन रही जनता अदालतों और जनसंघर्ष समितियों की ताकत पर निर्भर करता है। यह अहसास उन लोगों को भी है। इन सब घटनाओं के दौरान वहां छात्र एवं जन-संघर्ष समितियां गठित हुईं। नवम्बर में छः सौ लोगों का जुलूस सभी गावों में इस ताकत को सजोने और बढ़ाने के लिए घूमा।

जनता अदालत द्वारा की गयी कार्यवाही की ये दो घटनाएं मामूली और छोटी दिखती हैं। लेकिन लोगों को अन्याय के खिलाफ इकट्ठा करने में इनकी असाधारण भूमिका साबित हो रही है। न्याय के लिए इकट्ठा होकर लड़ने की कोशिशें इससे पहले भी बहुत बार हुई हैं। लेकिन वे छिटपुट और बिखरी थीं। इसी इलाके में सर्वोदय आन्दोलन पिछले २० सालों से कार्यरत है। और भी राजनीतिक समूहों ने साहूकारों और जमींदारों के खिलाफ लड़ाई लड़ी थी।

लेकिन इन लड़ाइयों में निरंतरता नहीं रह सकी। वर्तमान आन्दोलन लड़ाई को चालू रखने और फैलाने के लिए आवश्यक संगठन और निरंतरता दे पा रहा है। जनता अदालतें इसी की एक कड़ी हैं।

[गांधी विद्या संस्थान के डा० गौरीशंकर की एक रपट के आधार पर बनवारी द्वारा प्रस्तुत।]

राज्य-मुक्ति-का आधार आत्म-अनुशासन

—जैनेन्द्र कुमार

स्वराज्य और स्वतन्त्रता इन शब्दों पर जब मैं विचार करता हूं, खासकर गांधीजी के विचारों को सामने रखकर, तो मुझे लगता है कि वह स्वतन्त्रता उनकी व्यक्तिगत न होकर सामूहिक होगी। और स्वतन्त्रता अगर सबकी होगी तो आत्मा की स्वतन्त्रता के अर्थ में।

गांधीजी की जो स्वतन्त्रता थी, जिसके लिए वह प्रयत्न करते रहे, उसमें शरीर की अत्यधिक परतन्त्रता आती है। उनका यह आग्रह था कि शरीर को चलानेवाले जो भी आध्यात्मिक नियम हैं उनका परिपूर्ण पालन करना चाहिए। शरीर की परतन्त्रता में से आत्मा की स्वतन्त्रता निकलती है। अभी मेरे पुत्र का देहान्त हुआ। उसके पत्रों में पत्रकार की सुशीला बहन का एक पत्र प्राप्त हुआ जिसमें गांधीजी का एक वचन है जिसे मैं भुला नहीं पाता हूं, 'मेरी अहिंसा मुझे सतत् प्रेरणा देती रहती है मैं कर्म मात्र से उपराम पा जाऊं, लेकिन मेरी आत्मा यह कहती है कि जब तक तुझे संसार में दुःख और त्रास दिखाई देता है, तब तक तुझे यह सुख प्राप्त नहीं करना है। तुझे सुख प्राप्त करने का अधिकार नहीं है।' यह है एक तरह की स्वतन्त्रता।

आत्मा के बन्धन का कारण मूलतः कर्मों को माना जाता है। कर्म द्वन्द्व में से उत्पन्न होता है। लेकिन कर्म से भी उत्तीर्ण होना है। आत्मतत्त्व यदि पूर्णतया मुक्त न हो तो शरीर का यज्ञ सम्पादन करते रहें यानी कर्म द्वारा अपनी वासनाओं एवं स्वार्थों की आहुति देते रहें। इस प्रकार व्यष्टि से समष्टि का चिंतन और हित साधन के द्वारा हम कर्म में से उत्तीर्ण हो सकते हैं।

हम देख यह रहे हैं कि आज की स्वतन्त्रता में आदमी अपने को मुक्त नहीं समझता। महंगाई लगातार बढ़ रही है। बेरोजगारी भी जनसंख्या के अनुपात में वृद्धि पर है। और भी अनेक समस्याएं हैं जिनके कारण आदमी स्वयं को स्वतन्त्र अनुभव नहीं कर पाता।

हम आर्थिक समस्या दूर करना चाहते हैं और चाहते हैं कि उत्पादन बढ़े। और उत्पादन के लिए आदमी जितना कार्य कर सकता है मशीन उससे ज्यादा। छोटी मशीनों से भी बड़ी मशीनें और भी ज्यादा कार्य कर सकती हैं। बड़ी मशीनें विदेशों से मंगवानी पड़ेंगी, इसलिए विदेशी मुद्रा चाहिए और अपने देश की चीज बाहर बेचेंगे। अपने देश में चीनी का भाव चाहे ६ रुपये किलो भी हो जाये लेकिन उन्हें तो सस्ते दामों पर देंगे ही। क्योंकि हमारे राष्ट्र नेता चाहते हैं कि उत्पादन जल्दी से जल्दी बढ़े और उसके बाद उसका सही वितरण भी हो।

लेकिन गांधीजी उत्पादन को पैसे के साथ जोड़ने के विरुद्ध थे। पैसे के लिए चीनी विदेशों को दो और उससे जो पैसा आये उससे गेहूं खरीदो। ऐसा अर्थशास्त्र व्यक्ति और समाज दोनों को गुलाम बनायेगा।

हम मनमाना जियें, रहें, यह भी एक प्रकार की स्वतन्त्रता है। यह पशु जगत में चलती है। फिर वह स्वतन्त्रता कौन सी हो जो मनुष्य के लिए हो? मनुष्य के साथ जीवन जीने की स्वतन्त्रता स्वभावतः जुड़ जाती है। मैं समझता हूं कि मनमाना जीवन जीने की स्वतन्त्रता अगर हम रखेंगे तो राज्य नियन्त्रण बढ़ेगा। यदि हम उच्छृंखल होंगे, मनमाने और उचित अनुचित का विवेक त्याग कर जियेंगे, तो राज्य तरह-तरह के कानून बनाकर अपना नियन्त्रण बढ़ायेगा।। इसमें मनुष्य की सब तरह अभिलाषाएं मारी जाती हैं।

दूसरे प्रकार की स्वतन्त्रता है कि हम अपने स्वार्थ को कम-से-कम रखें। सद्भाव और स्नेह का प्रसार करें तो स्वाभाविक रूप से निर्भयता और स्वतन्त्रता का वातावरण निर्मित होगा। इसके लिए हम अपनी वासनाओं पर अंकुश रखना होगा और आध्यात्मिक एवं सामाजिक नियमों का स्वेच्छा से पालन करना पड़ेगा।

मुझे लगता है कि आज तो पैसा छा गया है। जीवन के केन्द्र में भी और मनुष्य के मन में भी। वैसे ही इन्सानियत दोनों जगह से हटती चली जाती है। राजनैतिक स्वतन्त्रता ही यदि गांधीजी का मुख्य ध्येय होता, तब तो हमारे-आपके लिए कुछ करने को रह नहीं जाता। लेकिन उनका ध्येय तो आत्मिक स्वतन्त्रता थी, जिसकी ओर पहुंचने का एक संकेत उनके रचनात्मक कार्यक्रमों में निहित है। हम उस विचार में से कितना लाभ ले रहे हैं और विचार के विकास और प्रसार में अपना योगदान कितना दे रहे हैं, यह चिंतन अवश्य करते रहना चाहिए। O

प्रगतिपथ पर अग्रसर हरियाणा

हरियाणा ने भारतीय संघ के अलग राज्य के रूप मे अस्तित्व मे आने के बाद विकास के विभिन्न क्षेत्रो मे भव्य प्रगति की है। निम्नलिखित आंकड़े इस अभूतपूर्व प्रगति के साक्षी हैं।

खाद्यान्न

आज हरियाणा अपनी जरूरत का अनाज पैदा करने मे न केवल आत्म-निर्भर है बल्कि अब वह अपनी जरूरत से भी अधिक अनाज पैदा करता है जबकि 1966 मे हरियाणा अनाज की कमी वाला राज्य था।

सिंचाई

1966-68 मे नहरो से सिंचित क्षेत्र 33.57 लाख एकड़ (13.59 लाख हैक्टयर) था। 1974 मे यह 40.88 एकड हो गया।

मई, 1968 मे 29000 नलकूपों की तुलना मे आज राज्य मे 1,33,000 नलकूप काम कर रहे हैं।

बिजली

मई, 1968 में राज्य के हर पाँच गांवो में से केवल एक गाव मे बिजली की सुविधा थी, लेकिन नवम्बर, 1970 से राज्य का हर गांव बिजली के प्रकाश से जगमगा रहा है। हरियाणा देश का पहला राज्य है जिसने शत-प्रतिशत ग्राम विद्युतिकरण का कीर्तिमान स्थापित किया है।

उद्योग

हरियाणा में छोटे पैमाने के पंजीकृत उद्योगों की संख्या 1973-74 के अन्त मे 14, 308 थी जबकि मई, 1968 मे राज्य मे केवल 4598 छोटे पैमाने के पंजीकृत उद्योग थे।

शुद्ध पेयजल का वितरण

छः वर्ष पूर्व राज्य के केवल 203 गांवो मे पीने के शुद्ध पानी की सुविधा उपलब्ध थी लेकिन आज राज्य के 745 गाव इस सुविधा से लाभ उठा रहे हैं। इस प्रकार पिछली स्थिति मे 267 प्रतिशत वृद्धि हुई है।

परिवहन

नवम्बर 1972 से राज्य मे यात्री परिवहन का पूर्ण राष्ट्रीयकरण हो चुका है। इस समय राज्य परिवहन की 1646 यात्री बसें हैं जबकि मई, 1968 में केवल 567 बसें ही थीं। हरियाणा परिवहन सेवा आज देश-भर में कार्य-कुशल मानी जाती है।

कमजोर वर्गों का कल्याण

राज्य में सामाजिक तथा सामाजिक रूप से अशक्त व्यक्तियों को सहायता देने के उद्देश्य से अनेक योजनाओं पर कार्य हो रहा है। वृद्ध तथा अशक्त व्यक्तियो को हर सम्भव सहायता दी जा रही है। अनुसूचित जातियों एव पिछड़े वर्गों के उत्थान के कार्य को उच्च प्राथमिकता दी गयी है।

सड़कें

राज्य के 64 प्रतिशत गांवों को पक्की सड़कों से जोड दिया गया है। पक्की सडको से मिलाये गये गावो की संख्या अब 4258 हो गयी है जबकि मई, 1968 में राज्य के केवल 1500 गांव ही पक्की सड़कों से मिले हुए थे।

निदेशक, लोक सम्पर्क विभाग, हरियाणा द्वारा प्रचारित

डी० पी० आर० हरियाणा (डी-340—1974)

जहाँ पंजाब नेतृत्व करता है

- देशभर मे वर्ष १९७२-७३ के अनुसार प्रति व्यक्ति की आय ६९८ रुपये के मुकाबले मे पजाब मे प्रति व्यक्ति की आय (११०५ रुपये) सबसे अधिक है।

- केन्द्रीय खाद्य सरक्षण मे पंजाब का योगदान देशभर मे सबसे अधिक है।

- पंजाब में गेहू (२२१६ कि०ग्राम), चावल (२२८७ कि० ग्राम), बाजरा (९८२ कि०ग्राम) और कपास (३७१ कि० ग्राम) की प्रति हैक्टेयर पैदावर १९७३-७४ में देश भर मे सबसे अधिक है।

- पजाब में प्रत्येक १०० वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में ४६ किलोमीटर सड़कें है। यह दर देशभर में सबसे अधिक है।

- पंजाब पहला राज्य है जिसने भूमिहीन लोगों को घर बनाने के लिए जगह दी है। १८६ लाख से अधिक प्लाट पहले ही दिये जा चुके हैं।

- पंजाब मैडिकल और नागरिक भवन प्रोग्रामों को आरम्भ करने वाला प्रथम राज्य है।

- पजाब ऐसा पहला राज्य है जिसने प्रथम और द्वितीय श्रेणी की नौकरियों में पदोन्नति के लिए अनुसूचित जातियों तथा पिछडी श्रेणियो के लिए आरक्षण रखा है।

- पजाब ने अपने सभी जिलों मे छोटे और सीमात किसान एजन्सिया स्थापित कर दी हैं।

जीवन को नये अर्थ देने के लिए पंजाब सरकार अधिक रोजगार अधिक सुख सुविधाएं देने के लिए अत्यंत प्रयत्नशील है ताकि अभाव, कठिनाइयों तथा भूख से राहत मिल सके। आओ हम राष्ट्र निर्माण के श्रेष्ठ कार्य के लिए स्वयं को पुनः समर्पित करें।

पी० आर० डी०/७१/१३१६

जीवन-भाष्य

जे० कृष्णमूर्ति

जे० कृष्णमूर्ति विश्व की महान विभूतियों में है। सहज अनुभूति, पूर्वचिंतन तथा जीवन की गहराइयो में प्रवेश करके सूक्ष्म मानव चेतना की ग्रंथियों का भेदन आपकी अद्भुत विशेषता है। सीधे सादे शब्दों में तलस्पर्शी चिंतन का अनुभव आपके प्रवचनों से निःसृत होता है। प्रस्तुत ग्रंथ में इनके ८८ प्रवचन हैं जिनमें जीवन की अनेक गहन-गंभीर अथवा धार्मिक, सामाजिक, पारिवारिक, मनोवैज्ञानिक समस्याओ का सवाद या प्रश्नोत्तर के रूप में विश्लेषण किया गया है। पृष्ठ ३८२ मूल्य ८/—

देश की तरुणाई को आह्वान

जयप्रकाश नारायण

देश में उत्तरोत्तर बढते हुए भ्रष्टाचार, घूसखोरी और सत्तालोलुपता से उत्पन्न लोकतंत्र के खतरो की ओर जनमानस का एवम् सत्तारूढ व्यक्तियों का ध्यान आकृष्ट करने हेतु गुजरात मे युवकों को सम्बोधित करके दिये गये तीन ऐतिहासिक भाषणो का हिन्दी रूपान्तरण। पृष्ठ सख्या ४८ मूल्य १ रु० मात्र।

ग्रामीण हिंसा

डा० अवध प्रसाद

ग्रामीण हिंसा की जड़ें समाज की रचना तथा सरकार की अकर्मण्यता मे हैं। बुद्ध ने कहा था कि हिंसा मनुष्य की तृष्णा मे है। सदियो बाद मार्क्स ने कहा कि हिंसा समाज की रचना मे है। उसकी जड मालिक द्वारा मजदूर के शोषण मे है। इतना कह कर मार्क्स ने मुक्ति के प्यासे मानवको पुरुषार्थ का रास्ता दिखलाया।

गांधीजी ने एक तीसरी बात कही—तृष्णा की हिंसा और समाज की हिंसा दोनों आज के राज्य की हिंसा मे मिल गयी हैं। अतः मनुष्य की वास्तविक मुक्ति इस त्रिविध हिंसा से मुक्ति पाने मे ही है। इस दिशा मे डा० अवध प्रसाद द्वारा की गयी शोध पर लिखा गया यह ग्रंथ ग्रामीण हिंसा के विविध पहलुओं का गहन अध्ययन प्रस्तुत करता है। मूल्य ८/- मात्र

मेरी विचार-यात्रा

जयप्रकाश नारायण

श्री जयप्रकाश नारायण की 'विचारयात्रा' विभूति सम्पन्न है। निरन्तर विकासशील है और दुनियाँ भर की राजनीति के तथा मतवादो की मृगमरीचिका में भटकनेवालो के लिए प्रेरक और उद्बोधक है, सम्यक मार्ग प्रशस्त करनेवाली है। साधारण हिन्दी जाननेवाला पाठक भी इस विचारयात्रा के कतिपय पड़ावो पर समाधान की शीतलता तथा सम्यक बोध की मधुरता का अनुभव करता हुआ जयप्रकाश के साथ-साथ समरस होकर आगे बढता जाता है। पृष्ठ २२४ मूल्य ६/- मात्र।

दादा के शब्दों में दादा

दादाधर्माधिकारी

यह कृति कु० विमला ठकार को अत्यन्त स्नेहयुक्त भावना से लिखे गये दादा के पत्रों की मजूषा है। आन्दोलन के जल में डूबे हुए फिर भी कमल के समान उससे परे स्नेहशील दादा के निराले व्यक्तित्व की झाँकी पुस्तक मे मिलती है। मूल्य रु० ६/ मात्र।

प्रभा स्मृति

सर्वोदय मे बडे ही आदर के साथ 'दीदी' शब्द से सबोधित प्रभावती बहन की पुण्य स्मृति मे प्रकाशित यह ग्रंथ दुर्लभ चित्रो के ३२ पृष्ठो से युक्त है जिसमे हमे अकालपुरुष गांधी की प्रेरणा, इतिहास पुरुष जे० पी० का जीवन सघर्ष और मौन साधिका प्रभावती बहन की पुण्य स्मृति मिलती है जो कभी भुलायी नही जा सकेगी।

पृष्ठ ३०८ मूल्य ३० रुपये।

सर्व सेवा संघ प्रकाशन

'भूदान-यज्ञ' का प्रकाशन वक्तव्य

[समाचार-पत्र पंजीकरण अधिनियम (फार्म न० ४, नियम ८) के अनुसार हर पत्रिका के प्रकाशक को निम्न जानकारी प्रस्तुत करने के साथ-साथ अपनी पत्रिका में भी प्रकाशित करना होता है। तदनुसार प्रतिलिपि यहाँ दी जा रही है।—स०]

(१) प्रकाशन स्थान	: नई दिल्ली
(२) प्रकाशन अवधि	सप्ताह में एक बार (सोमवार)
(३) मुद्रक	: प्रभाष जोशी
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	१६, राजघाट कालोनी, नई दिल्ली १
(४) प्रकाशक	: प्रभाष जोशी
राष्ट्रीयता	: भारतीय
पता	. १६, राजघाट कालोनी, नई दिल्ली-१
(५) संपादक	: राममूर्ति
राष्ट्रीयता	: भारतीय
पता	१६, राजघाट कालोनी, नई दिल्ली-१
(६) पत्रिका के संचालकों का पता	: सर्व सेवा संघ, गोपुरी, वर्धा (महाराष्ट्र) (सन् १८६० के सोसायटीज रजिस्ट्रेशन एक्ट २१ के अनुसार पंजीकृत सार्वजनिक संस्था) पंजीयन स० ५२

मैं, प्रभाष जोशी, यह स्वीकार करता हूं कि मेरी जानकारी के अनुसार उपर्युक्त विवरण सही है।

—प्रभाष जोशी,
प्रकाशक

नई दिल्ली, २८/२/७५

The helping hand of UCOBANK–

Your deposit can now earn more than 14% effective interest with us.

If you want to make your savings grow, UCOBANK offers you all the opportunity. You can now earn more than 14% effective interest—by linking your Fixed Deposit interest to Recurring Deposit Scheme. Or, you can increase your deposit by more than four times on completion of 15 years through our Cash Deposit Certificate Scheme, effective return being over 23%.

These apart there are Savings, Fixed Deposit and Recurring Deposit Schemes, in operation in every UCOBANK branch today, backed by speedy and personalised service.

For details, contact the nearest branch of UCOBANK.

R N 2091/57 BHOODAN YAGYA 10 MARCH, 1975 Regd. No. D· (C)

जीवन की वे सामान्य सुविधाएँ गरीबों को भी अवश्य मिलनी चाहिए जिनका उपभोग अमीर आदमी करता है। मुझे इस बात में बिलकुल भी सन्देह नहीं है कि हमारा स्वराज्य तब तक पूर्ण स्वराज्य नहीं होगा, जब तक वह गरीबों को ये सारी सुविधाएं देने की पूरी व्यवस्था नही कर देता।

—महात्मा गांधी

वार्षिक शुल्क—१५ रु० विदेश ३० रु० या ३५ शिलिंग या ५ डालर, इस अंक का मूल्य १ रुपया।
प्रभाष जोशी द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं ए० जे० प्रिंटर्स, नई दिल्ली-१ में मुद्रित।

सर्वोदय

सर्व सेवा संघ का साप्ताहिक मुखपत्र

नई दिल्ली, सोमवार १७ मार्च, ७५

जीवन यरवन शुकाये जाय

—विनोबा

गुरुदेव ने गाया है, जीवन जब सूख जाये, तब "करुणाधारा" चाहिए। और मन में जब अनेक विकार आयें, तब "रुद्र आलोक" चाहिए। करुणाधारा और रुद्र आलोक। आज भारत का जीवन सूख गया है और चित्त विकारमय बना है। जब आपत्ति आती है और मनुष्य को लगता है कि हमको बहुत तकलीफ हो रही है, तब भगवान की निगाहों में वह रुद्र आलोक होता है। जोरदार सूर्य किरणें आती हैं, तपाती हैं लेकिन उनसे हमारा जीवन बनता है, और निद्रा टूटती है। रवीन्द्र ने कहा है—करुणाधाराय एसो, रुद्र आलोके एसो। ओहे पवित्र ओहे अनिद्र रुद्र आलोके एसो।

आज भारत की यही दशा है। हमके चित्त में अनेक विकार वासनाएं भरी हुई हैं, इसलिए रुद्र आलोक चाहिए और जीवन सूख गया है इसलिए करुणाधारा की जरूरत है। स्वराज्य प्राप्ति के पच्चीस (अब २७) साल हो गये। विज्ञान के जमाने में यह कोई कम समय नहीं। फिर भी हम पाते हैं कि भारत का जीवन आज भी सूखा हुआ है। गुरुदेव ने इस गीत को गाया था, तब भी जीवन शुष्क था ही, लेकिन आज भी बहुत फरक नहीं पड़ा है। भगवान के अनंत गुण हैं। भक्त अपनी आवश्यकता के अनुसार एक-एक गुण का दर्शन करता है। जब हमें करुणा की आवश्यकता होती है, तब हम भगवान को करुणाधारा के रूप में देखते हैं।

→

बाबा ने तोड़ा मौन

बाबा ने तोड़ा मौन
उतर कर आई करुणा धारा
राग-द्वेष आग्रह-भ्रम का
बदल गया क्रम सारा
नाच देश गांधी के सुख से नाच
उजले भविष्य की सूर्य—पंक्तियाँ बाँच
सकल्प वर्ष भर का टूटा है
ना, प्रखर बाण यह
ज्ञान धनुष से होकर छूटा है
तिमिर जाल सब काटेगा यह बाण
अनहद शब्द सुनेंगे बहरे कान
सपूर्ण क्रांति का द्वार खुल गया रे
इन दो वचनों से द्वैत धुल गया रे
बाबा ने तोड़ा मौन
दुराग्रह के कपाट टूटे
लो, सुधासिक्त वचनों के
निर्झर अधरों से छूटे
फिर उतरी फैली बही
देश में करुणा की धारा
राग-द्वेष आग्रह-भ्रम का
बदला क्रम सारा !

—भवानी प्रसाद मिश्र
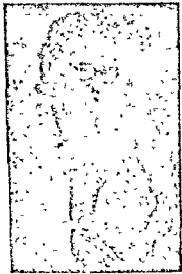
जीसस क्राइट का एक वचन है—यी हैव दि पुअर ग्रालवेज विथ यू (गरीब सदा तुम्हारे साथ हैं) दो हजार साल पहले से जीसस ने गरीबों की सेवा का ग्रादेश दे रखा है। लेकिन गरीबी 'इटर्नल' है—दरिद्रों की सगति हमारे लिए शाश्वत है। इस पर कम्युनिस्ट कहते हैं, क्या ग्राप गरीबी कायम रखना चाहते हैं, ताकि गरीबों की सेवा करने का पुण्य ग्रापको हमेशा मिलता रहे। गरीबी को हटाना कम्युनिज्म का भी विचार है। कम्युनिज्म का विचार कमजोर नहीं है। करुणा के आधार पर ही यह खड़ा है। पर वे जो साम्य लाना चाहते हैं, वह मत्सरमूलक साम्य है। ऊपर वाले का मत्सर करें ग्रौर साम्य लायें। हम कहते हैं साम्य की ग्रावश्यकता तो है ही। यह युग ही साम्यमूलक है। लेकिन उसे लाने का रास्ता करुणामूलक होना चाहिए। इसीलिए भगवान से करुणाधारा की माग की जाती है। कुरान की शुरुग्रात ही 'बिस्मिल्ला-हिर् रहमानिर्-रहीमि' से होती है। परमात्मा परम कृपालु, ग्रतीव करुणावान है। नबी ग्रौर गुरुदेव दोनों भगवान को करुणा के रूप में देखते हैं। यह तो हो नहीं सकता कि हम ग्रोपण का काम करें ग्रौर करुणावान का नाम लिया करें।

ग्रब तीसरा भक्त ग्रापके सामने खड़ा करता हूं, जिसने जीवनभर ग्रद्वैत मत्र की उपासना की—शकराचार्य। उन्होंने विष्णु को नारायण करुणामय कहकर प्रार्थना की, 'भूत दयां विस्तारय'। वे ग्रभेद ग्रौर ग्रद्वैत से छोटी चीज कभी बोलते नहीं थे। फिर यह द्वैत कैसे? यह द्वैत नहीं है। सब में भूतदया का विस्तार करता रहू, तो वह ग्रद्वैत ही होगा। तो शंकराचार्य का विचार भी करुणामूलक है। ग्रौर जिनके स्थान पर हम बैठे हैं (*नदिया, बंगाल*) और जिनके स्मरण मे बोल रहे है, वे चैतन्य महाप्रभु क्या कहते थे? वे कहते थे-प्रेम! प्रेम ग्रौर करुणा एक ही है। दूसरों को सुखी देखकर सुखी होना यानी प्रेम; दूसरों को दुखी देखकर दुखी होना है करुणा। लेकिन करुणा केवल इतने से सतुष्ट नहीं है। जो दूसरो के दुखो को देखकर, उन्हें दूर करने के लिए काम करती है, वह है करुणा। कह सकते हैं कि करुणा का ग्रर्थ है कर्मप्रेरणा, भला काम करने की प्रेरणा।

समाजशास्त्र का यह एक बहुत बडा सवाल है कि सदाचार, भलाई की प्रेरणा कहा से मिलेगी? इसका उत्तर कुछ लोगों ने दिया है कि भलाई की प्रेरणा के लिए हर *ग्रादमी का कुछ न कुछ स्वार्थ सधना चाहिए।* जब मनुष्य का हित सधता है, तब उसको ग्रच्छा काम करने की प्रेरणा मिलती है। ग्रच्छे काम की प्रेरणा है स्वार्थ। मनुष्य ग्रपने हित की कामना करता है। उत्पादन बढाया, तो 'पद्मश्री' उपाधि मिलेगी। ग्रच्छे ग्रन्थ को पुरस्कार मिलेगा। यानी पुरस्कार कर्मप्रेरणा हुई। मनुष्य का कुछ गौरव करो, धन दो, कुछ इनाम दो, तो कर्मप्रेरणा होगी। ग्राज का यह सिद्धात है।

करुणा इसमे बिलकुल विरुद्ध खडी है। करुणा कहा से ग्रायेगी? वह कहती है कि करुणा ग्रायेगी। माता-पिता अपना पेट काटकर बच्चों का पालन पोषण करते हैं। क्यो करतेहैं? करुणा है इसलिए करते हैं। करुणा की प्रेरणा से मनुष्य घर मे रह सकता है। मनुष्य को घर याद ग्राता है। क्यो ग्राता है? क्योकि घर मे करुणा का व्यवहार है। इस तरह करुणा काम कर रही है। लेकिन करुणा की धारा बहती नहीं है। वह घर मे ही सीमित हो गयी है। ग्राज करुणा घर मे बद्ध हो गयी है।

जैसे पानी किसी डबरे मे बद्ध हो गया, तो गदला हो जाता है; वह बहता नहीं, ग्रागे नहीं जाता है, वैसे करुणा की धारा अगर बहती नहीं रही, घर मे ही सकुचित हो गयी तो वह ग्रासक्ति का रूप लेती है। जब करुणा पुत्र, पत्नी, माता-पिता तक ही सीमित रहती है, तब वह ग्रासक्ति बन जाती है। इसलिए गुरुदेव ने कहा कि करुणा की धारा बहने दो। एक गाव से दूसरे गाव की ग्रोर, एक जाति से दूसरी जाति की ग्रोर, एक धर्म से दूसरे धर्म की ग्रोर, एक राष्ट्र से दूसरे राष्ट्र की ग्रोर, इस तरह सारे मानव समाज मे वह बहती रहे। ऐसी करुणा धारा के लिए गुरुदेव प्रार्थना कर रहे हैं।

इन्द्रियां रजोगुणी हैं। करुणा चित्त में रहती है ग्रौर हाथ, पांव, ग्रांख ग्रादि इन्द्रियों द्वारा प्रकट होती है। जड़ इन्द्रियां ठंडी पड़ेंगी। पानी स्वभाव से गरम नहीं है, मगर ग्रग्नि के सयोग से गरम बनता है। उसी तरह हाथ, पांव, ग्रांख ग्रादि ठंडे हैं, उनमे करुणा नहीं है। ग्रांख पर प्रहार हुग्रा, तो उसका दुःख ग्रांख को ही होगा। इन्द्रियां निज दुख से दुखी हैं। *किन्तु जब इनके दु:ख का प्रभाव* चित्त पर पडता है, तब अंदर के चित्त की, दुःख की प्रेरणा ग्रन्य इन्द्रियों को होती है। तब उनको दुःख होता है। इस तरह चित्त की प्रेरणा ठडी इन्द्रियो को गरमी देती है।

गाय दिनभर चरती रहती है। पशु है बेचारी, पर निःस्वार्थ है। उसके स्तनों में दूध भर जाता है, तो ग्रपने बछड़े को पिलाने के लिए दौड़ी-दौड़ी जाती है। बच्चे को ढूंढ़कर पिलाती है। क्योकि बच्चे के प्रति उसके हृदय मे प्रेम-करुणा भरी है। इस प्रेम-करुणा से तरबतर होकर वह जाती है। चैतन्य महाप्रभु ग्रत्यन्त प्रेममूर्ति थे। उनकी पत्नी थी विष्णुप्रिया। उनको छोड़कर वे चले गये। *कवियों ने विष्णुप्रिया-वियोग का वर्णन किया* है। कवियों को जिसकी प्रेरणा हुई, क्या वह चैतन्य महाप्रभु को नहीं हुई होगी? फिर भी वे विष्णुप्रिया को छोड़कर क्यो निकल पड़े—क्योंकि वे समझते थे कि इस ससार में दीन-हीन दुःखी लोग पड़े हैं। उनके पास जाकर ज्ञान देना होगा। उस जमाने मे परिपक्व, ज्ञान-सम्पन्न मनुष्य परिव्रज्या के लिए निकल पड़ते थे और गांव-गांव, घर-घर ज्ञान पहुंचाते थे। जिंदगीभर चरने का काम किया, तो चलो ग्रब बछड़ों को पिलाने के लिए जायें। ऐसे बुद्ध, महावीर, शंकराचार्य ग्रौर चैतन्य महाप्रभु, सब निकल पड़े।

बाबा का काम करुणाधारा का काम है। जीवन सूखता जा रहा है। लोग चीन और पाक के मुकाबले की बात करते हैं। चीन व पाक का क्या डर है? डर तो ग्रपने भीतर है। ग्रपनी दरिद्रता को ढांककर देश कब तक ग्राजाद रहेगा? कैसे मजबूत बनेगा? जिनके हृदय मे करुणा की धारा बहती है उन सबको इस काम मे लग जाना चाहिए।

('पूज्रागीत: एक चिन्तन' से)

सम्पादक
राममूर्ति : भवानी प्रसाद मिश्र
कार्यकारी सम्पादक : शारदा पाठक

वर्ष २१ | १७ मार्च, '७५ | अंक २४

१९ राजघाट, गांधी स्मारक निधि, नई दिल्ली-११०००१

सर्वसेवासंघ का संकट या मुक्ति

पवनार में सर्व सेवा संघ के छमाही अधिवेशन के पहले दिन इस बात पर सर्वानुमति नहीं हो सकी कि लोकसेवक बिना संघ को छोड़े अपनी-अपनी रुचि के अनुसार जयप्रकाशजी द्वारा चलाये जा रहे आंदोलन या अन्य रचनात्मक कामों में भाग ले सकते हैं। विनोबाजी का यह मत समझकर कि जो लोकसेवक चुनावों में भाग लेने का विचार करते हों, उन्हें संघ से छुट्टी ले लेनी चाहिए, जे०पी० ने सर्व-सेवा संघ के सभी पदों से त्यागपत्र दे दिया है और इसी प्रकार कार्यकारिणी के २४ सदस्यों में से २१ सदस्यों ने भी त्यागपत्र दे दिया है जिनमें संघ के अध्यक्ष और मंत्री भी शामिल हैं। ये साधारण लोकसेवक बने रहेंगे। इस अवसर पर जे.पी. ने स्पष्ट किया कि वे भ्रष्टाचार और बेरोजगारी आदि के खिलाफ अपना आंदोलन संघ से निकाले जाने का खतरा भी उठाते हुए चलाते रहेंगे। उन्होंने यह भी साफ किया कि आंदोलन चलाने के पहले उन्होंने संघ से इस विषय में कोई अनुमति नहीं ली थी, खुद अपने मन से बिहार में जो जन-आंदोलन शुरू हो गया था उसका नेतृत्व करना उन्होंने स्वीकार कर लिया था और जब संघ ने अपना समर्थन दिया तो वे प्रसन्न हुए थे। उन्होंने इस बात को भी बिलकुल ठीक माना कि सर्वानुमति हुए बिना संघ के नाम पर कोई हलचल नहीं की जानी चाहिए।

देश में इस समय जो आंदोलन चल रहा है वह संघ की ओर से नहीं चल रहा है, यह तो सभी जानते हैं। जनसंघर्ष समितियां और छात्र संघर्ष समितियां इसे चला रही हैं और उन्हें सर्व सेवा संघ के कुछ प्रमुख व्यक्तियों और अधिकांश लोकसेवकों के सिवाय जे. पी. का मार्गदर्शन प्राप्त है, इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि आंदोलन संघ की ओर से चलाया जा रहा है। यह अवश्य है कि संघ के बहुत छोटे अंश को छोड़कर ज्यादातर लोकसेवक या तो जनान्दोलन में भाग ले रहे हैं या उससे सहानुभूति रखते हैं। इस प्रकार का सुझाव है कि यदि इसे भी स्वीकार न किया जाये तो संघ को भंग कर दिया जाये, इसमें कोई हर्ज नहीं है। सन् १९३७ में भी गांधी सेवा संघ के लोग चुनावों में दिलचस्पी लें या न लें इस बात को लेकर बहस उठने पर गांधीजी ने गांधी सेवा संघ को भंग करके उसके सदस्यों को चुनावों में खड़े होने या उसमें भाग लेने के लिए मुक्त कर दिया था। यहां लोकसेवकों के बिहार या अन्य किसी स्थान पर चुनाव में उम्मीदवार की तरह खड़े होने की कोई बात नहीं है, मुख्यतः चुनावों से सम्बन्धित भ्रष्टाचार को रोकने की दृष्टि से लोक शिक्षण ही उनका मुख्य काम रहेगा और वे जनता को इस तरह शिक्षित करेंगे कि दलों के बजाय वे अपना उम्मीदवार खुद तय कर सकें। ठीक तरह से देखा जाये तो यह चुनाव में भाग लेना नहीं है। लोकतांत्रिक पद्धति के प्रति जनता की अपनी जिम्मेदारी ठीक ढंग से जाग्रत करने की व्याकुलता-भर है।

जहां तक सरकार से सहयोग या असहयोग का सवाल है सर्व सेवा संघ अभी-अभी तक ग्राम स्वराज्य से सम्बन्धित अपनी गतिविधियों में सरकार से सदा सहयोग मांगता रहा है। इस बीच में सहयोग कितना मिला, कितना नहीं मिला, यह प्रश्न गौण है प्रधान बात यह हो गयी कि प्रशासन में फैली हुई बुराइयों के कारण गांवों की हालत सुधरने के बजाय बिगड़ती ही चली गयी। गांवों में और शहरों में समान रूप से असन्तोष फैला और असन्तोष को दूर करने के बजाय अपने सारे वायदे भूल कर सत्ता अपने किसी काल्पनिक प्रगति के पथ पर दौड़ती रही, इसके फलस्वरूप एक बहुत निमित्त से गुजरात में असन्तोष ने जन-जाग्रति का रूप ले लिया और अब बिहार में सघन होकर देश भर में फैलता जा रहा है। लोगों ने गांधीजी के अनुयायियों से अगर ऐसी अवस्था में सहायता की आशा की तो वह सर्वथा ठीक थी। यदि इसके फलस्वरूप संघ का विघटन होता है तो उसे इसी प्रकार अच्छा मानने की कोशिश करनी चाहिए जिस प्रकार शरीर से आत्मा का छूटना आवश्यक माना जाता है क्योंकि वह तब व्यापक हो जाती है और उसकी शक्ति बढ़ जाती है।

अब 'अति नई कांग्रेस' तो नहीं बनेगी ?

पिछले कुछ दिनों से कांग्रेस दल के कुछ प्रमुख व्यक्ति यह कह रहे हैं कि प्रधानमन्त्री और जयप्रकाश नारायण के बीच बातचीत होनी चाहिए। श्री मोहन धारिया ने जो केन्द्रीय मंत्रिमण्डल में थे, इस बात को कुछ अधिक विस्तार से कहा और किसी कारण से उनका यह कहना दल की नीतियों के विरोध में माना गया और उन्होंने अपने पद से इस्तीफा दे दिया। माना जा रहा था कि उनके प्रति की गयी सख्त कार्यवाही से जे.पी. और प्रधानमन्त्री के बीच बातचीत होनी चाहिए, ऐसा कहनेवाले कांग्रेसी चुप हो जायेंगे, किन्तु वैसा नहीं हुआ। श्री चन्द्रशेखर और कृष्णकान्त पहले भी यही कह रहे थे और अब भी यही कह रहे हैं। इतना ही नहीं अभी-अभी तो कांग्रेस के अध्यक्ष बरुआ ने भी यह कहा है कि जे.पी. से विधानसभा को भंग करने की बात छोड़ कर चुनाव में सुधार आदि मुद्दों पर बात-चीत हो सकती है। लोग पूछ रहे हैं कि श्री बरुआ और श्री मोहनधारिया के कहने में क्या अन्तर है और यदि अन्तर नहीं है तो श्री बरुआ को पद-

(शेष पृष्ठ १२ पर)

समाचार

वाराणसी की साहित्यिक संस्था 'राष्ट्र-कवि परिषद' ने १५ फरवरी को अपनी रजत-जयन्ती गायघाट स्थित परिषद कार्यालय में आचार्य सीताराम चतुर्वेदी की अध्यक्षता में मनायी। परिषद के स्थायी अध्यक्ष श्री चतुर्वेदी ने इस अवसर पर हिन्दी-कविता की पिछले पचास वर्षों की यात्रा पर प्रकाश डाला। मुख्य अतिथि थे महाकवि जगन्नाथदास 'रत्नाकर' के पौत्र श्री रामकृष्ण। परिषद के उपाध्यक्ष श्री लक्ष्मीशंकर व्यास ने संस्था की स्थापना से अब तक के कार्यों का विवरण दिया। कार्यक्रम में एक कवि-गोष्ठी भी हुई जिसमें स्थानीय तथा बाहर से आये नये-पुराने कवियों ने कविता पाठ किया। आयोजन का समापन मंत्री श्री गौरीशंकर गुप्त के द्वारा आभार प्रदर्शन से हुआ।

ग्वालियर से प्राप्त जानकारी के अनुसार मध्यप्रदेश में चम्बल घाटी और बुन्देलखंड—क्षेत्र में जयप्रकाश नारायण की प्रेरणा से आत्मसमर्पण करने वाले डाकुओं में से ८६.७ प्रतिशत को विभिन्न सजाएं हुई हैं। चम्बल घाटी के ३१४ बागियों के मामले न्यायालय में चले जिनमें से ४८ बरी हो गये। २६५ को दोषी पाकर सजाएं दी गयीं। इनमें से ८५ को आजीवन कारावास मिला। बुन्देलखंड के १०५ समर्पणकारियों में से ७ को पूर्व में ही रिहा कर दिया गया। १ को उत्तरप्रदेश में भेजा गया तथा ९७ के विरुद्ध मुकदमे चले। ८८ को सजाएं दी गयीं। इनमें ३४ को आजीवन कारावास हुआ।

विरौल (दरभंगा) में जन-अदालत ने साम्प्रदायिक दंगे की नौबत ला देने वाले विवाद का सदा के लिए शांतिपूर्ण निपटारा हो गया। श्री अब्दुल सहीद और श्री बलदेव साहनी के बीच एक कुएं को लेकर आरम्भ झगड़े से पिछले दिन एक साम्प्रदायिक दंगा हुआ था और दोनों पक्षों के बीच विवाद चला आ रहा था। जन-संघर्ष समिति ने मामले में हस्तक्षेप कर पुरानी पंचायत-पद्धति से फैसला कराया। दोनों पक्षों ने इस प्रसंग में चल रहा मुकदमा सुलह करके उठा लेने के फैसले को सिर आंखों पर लिया।

धनबाद जिले के तीन प्रखंड-टुमरी, नावाडीह और दुसरी में सरकार को कर मिलना बंद हो गया है। जनता सरकार के निर्देशन पर करबंदी अभियान जिस सफलता के साथ इन प्रखंडों में चल रहा है, साथ ही अन्य प्रखंडों में जो तैयारी है, उससे आशा है कि मार्च के अंत तक पूरे छोटानागपुर प्रमंडल में पंचायत स्तरीय जनता सरकारों की स्थापना हो जायेगी।

गया जिले टेकारी अंचल स्थित २४ ग्राम पंचायतों में छात्र-जन संघर्ष समितियों का विधिवत गठन किया जा चुका है और रेवई ग्राम पंचायत में ग्राम संगठनों का गठन करके गत ८ फरवरी को जनता सरकार की स्थापना की गयी। जनता सरकार की उद्घोषणा का समारोह स्थानीय जोहर मैदान मंदिर में सैकड़ों ग्रामीणों की उपस्थिति में कराया गया।

हरसूद में स्थानीय जन संघर्ष समिति के तत्त्वावधान में जन संघर्ष दिवस मनाया गया। अनुविभागीय अधिकारी के कार्यालय में पहुंच कर संघर्ष समिति के १० कार्यकर्ताओं ने अपना मांग पत्र प्रस्तुत किया। रात्रि में एक आमसभा जयप्रकाश चौक पर आयोजित की गयी। अध्यक्षता डा० मैटवाणी (संयोजक जन संघर्ष समिति) ने की। वक्ताओं में उपाध्याय एडवोकेट, शर्मा एडवोकेट, रमेश पुरोहित, सोहनलाल जैन, डा० चालिस, सोनगोड़ी के श्री बनवारीलाल, खारवा के रामदयाल, गोविन्दप्रसाद तथा श्री मथुराप्रसाद तिवारी के विचार उल्लेखनीय थे। डा० रामकृष्ण चालिस ने आभार व्यक्त किया।

बिहार विधान सभा के सामने १८ मार्च के प्रदर्शन के बाद बिहार विधानसभा विघटन तथा मंत्रिमंडल भंग न करने के विरुद्ध १६ से २१ मार्च तक देश भर में 'विरोध सप्ताह' मनाया जायेगा जिसमें स्थान-स्थान पर प्रदर्शन और रैलियां आयोजित कर भ्रष्टाचार, महंगाई, बेरोजगारी और कुशासन रोकने में बिलकुल अक्षम साबित सरकार की भर्त्सना करते हुए बिहार विधान सभा विघटन तथा मंत्रिमंडल भंग की मांग बुलंद की जायेगी। पहले यह आयोजन बिहार भर के लिए था, लेकिन लोकनायक जयप्रकाश की ६ मार्च को दिल्ली में घोषणा के अनुसार 'विरोध सप्ताह' का देशव्यापी आयोजन हो रहा है। ●

जयपुर में गांधी शांति प्रतिष्ठान की ओर से मां कस्तूरबा की पुण्य-तिथि मातृदिवस के रूप में वीर बालिका विद्यालय में श्रीमती शारदा भार्गव की अध्यक्षता में आयोजित हुई।

श्रीमती ऊषी शर्मा ने स्त्री शक्ति जागरण की आवश्यकता पर बल दिया। राजस्थान हरिजन सेवक संघ के मन्त्री जवाहिरलाल जैन ने महिलाओं की प्रगति के लिए स्वयं महिलाओं में व्याप्त हीनता की भावना को दूर करने की आवश्यकता प्रतिपादित की। विद्यालय की प्रधानाचार्या श्रीमती उर्मिला श्रीवास्तव तथा इन्द्रजीत कौर ने कहा कि पिछड़ी बहनों के विकास के लिए शिक्षित बहनों पर विशेष उत्तरदायित्व है। गांधी-शांति प्रतिष्ठान के सचिव श्री रामेश्वर विद्यार्थी ने आगन्तुकों के प्रति आभार प्रकट किया।

गांधी शांति प्रतिष्ठान ने "बिहार का जन-आंदोलन मेरी नजर में" परिसंवाद आयोजित किया। श्री विष्णुदत्त शर्मा ने अध्यक्षता की। सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री सिद्धराज ढड्ढा ने कहा कि बिहार आंदोलन ने सोयी हुई जनता को वाणी दी है। श्री निरंजननाथ आचार्य ने इस आंदोलन की उपलब्धि लोकशक्ति जागरण को बताया, पत्रकार कपूरचन्द कुलिश ने कहा कि बिहार आंदोलन ने जनता को निराशा की भावना से उबारा है। प्रो० एस० पी० वर्मा ने मौजूदा संकट के लिए शासक दल की गलत आर्थिक नीतियों को जिम्मेदार बताया। श्री पूर्णचन्द्र जैन ने बिहार-आंदोलन को व्यापक समर्थन देने का अनुरोध किया। प्रो० आर० सी० गुप्ता ने कहा कि यह सर्वथा संवैधानिक तथा प्रजातांत्रिक मूल्यों की कसौटी पर खरा आंदोलन है। गांधी शांति प्रतिष्ठान के सचिव श्री रामेश्वर विद्यार्थी ने आगन्तुकों के प्रति आभार प्रकट किया। ○

शांतिमय उपायों पर विश्वास रखकर ही यह सब करें

(६ मार्च को दिल्ली में संसद के सामने प्रदर्शन के बाद बोट क्लब मैदान में जे. पी. का भाषण)

आज का यह दिवस स्वतंत्र भारत के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा जायेगा। यदि मेरी यह उक्ति कुछ लोगों को अतिशयोक्ति के रूप में लगे, परन्तु आगे आने वाले दिन, महीने और बरस इस बात को सिद्ध करेंगे कि जैसे दांडी मार्च ने भारत का इतिहास पलटा था, वैसे ही आज ६ मार्च भी भावी भारत का इतिहास पलटेगा। बहुत वर्षों की प्रतीक्षा के बाद भारत की जनता, युवकों, बहनों-इन सबने सब्र रखते हुए पिछले २७ वर्षों के अनुभवों से यह निर्णय किया है कि जो सत्ताधारी हैं उनसे अपने आदेश का पालन करने, अपनी समस्याओं के हल करने, वोट देने के अलावा और दूसरे ढंग से हमें काम करना पड़ेगा। आज यहां भारत के कोने-कोने से इकट्ठे हुए लोग ऐसा करेंगे। इतने बड़े समूह की संख्या का मैं अनुमान तो नहीं लगा सकता, लेकिन इतनी संख्या इस मैदान ने, इतना बड़ा जन-समूह पहले कभी नहीं देखा होगा। (कृपया मेरी बात सुनिये) अनेक प्रकार की बाधाएं उपस्थित हुई हैं। मुझसे कल विजयकुमार मलहोत्रा कह रहे थे कि पांच-सौ बसों के परमिट रद्द कर दिये गये हैं। बिहार से प्रदर्शनकारी आ रहे हैं, टूंडला में उनको रोक लिया गया, कानपुर में रोका गया है, हरियाणा में भी बसों की सर्विस बन्द, बहुगुणाजी ने (इन्हीं) चौधरी चरणसिंहजी से वायदा किया था कि दिल्ली मार्च के लिए उनके शासन के तरफ से कोई बाधा नहीं डाली जायेगी, किन्तु उत्तरप्रदेश के आस-पास के क्षेत्रों में भी ऐसा किया गया है, बसें बन्द हो गयीं, लोग सीमाओं पर रोक लिये गये, और भी तरह-तरह की कठिनाइयां हुई, जो लोग यहां बैठे हैं वे जानते हैं। सत्ताधारियों को आंखें खोलकर देख लेना चाहिए कि इतने सारे कारणों के बावजूद भी इसी दिल्ली के शहर में इतने सारे लोग इकट्ठे हुए हैं। लेफ्टिनेन्ट गवर्नर-साहब से लेकर नीचे-ऊपर के सभी अफसर इसमें लगे हुए थे कि दुकानें बन्द न हों। दुकानें खुलवाने के लिए डराया-धमकाया गया, जोर-जबर्दस्ती की गयी, दक्षिणपंथी सी.पी.आई. के लोग भी इसमें लगे हुए थे। पता नहीं कौन-सा उनका इसमें लाभ होनेवाला था। बावजूद इन सबके यह अपार भीड़ है। सत्ताधारी देख लें, ये लोग यहां आये हैं, क्योंकि यहां इतिहास का नया अध्याय शुरू हो रहा है, इसलिए कि जनता ने तय किया है कि सत्तावाले अगर हमारी बातों पर ध्यान नहीं देंगे तो उनको मजबूर करेंगे अपनी बात सुनने के लिए और यह काम हम शान्तिमय तरीकों से करेंगे और महात्मा गांधी ने जो मार्ग देश के सामने रखा था उस पर ही हम चलेंगे।

मैंने कुछ दिन पहले एक प्रसिद्ध अर्थशास्त्री मिन्हास से यह दरियाफ्त किया था कि आज जो देश की परिस्थिति है उसमें भारतीय गरीब की जो सीमारेखा है उसके नीचे कितने प्रतिशत भारत की गरीब जनता आती है, तो उन्होंने बताया था कि ६० से लेकर ६६ प्रतिशत तक लोग इसमें आते हैं, २७ वर्षों में कांग्रेस ने देश को ऐसी स्थिति में पहुंचा दिया है। अगर इस प्रकार की परिस्थितियां दुनिया के किसी और देश में पैदा हुई होतीं, इतने पढ़े-लिखे लोगों की बेकारी होती, इतनी भुखमरी होती, शासन में इतना भ्रष्टाचार होता, तो वहां विद्रोह की ज्वाला फूट पड़ती। हिंसा की आग समाज को लपक लेती। तंत्र के जिन मुट्ठी भर लोगों ने इस आंदोलन को समर्थन दिया है, उनमें से एक को तो भारी कीमत भी चुकानी पड़ी है। मोहनधारिया को प्रधानमंत्री ने मंत्रिपद से हटा कर यह सिद्ध कर दिया है कि वे प्रजातंत्र का कितना आदर करती हैं। बिहार के जो संसद सदस्य हैं क्या वे अपने इलाकों में नहीं जाते हैं, उन्हें क्या यह पता नहीं है कि जनता क्या चाहती है? क्या लोकतंत्र का यही मायने है कि पांच बरस के लिए विधानसभा या लोकसभा में चुनकर चले जाना और जनता की सेवा करने के बदले अपनी जेबें भरना तो क्या जनता चुपचाप बैठी रहेगी। नहीं यहां से इस बात की घोषणा है कि लोक जो कहेगा वह होगा। लोकतंत्र में 'लोक' ऊपर है, 'तंत्र' ऊपर नहीं है लोक के। अगर प्रधानमंत्री को कोई भी सन्देह हो कि बिहार की जनता मंत्रिमंडल का और विधानसभा का तत्काल भंग होना नहीं
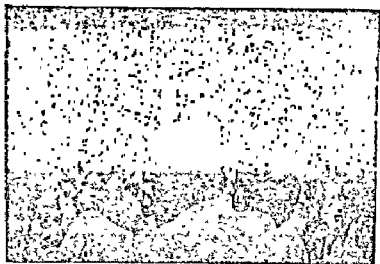
चाहती तो जनमत ले लें। दो बक्से रख दिये जायें। एक मे वे लोग वोट डालें जो चाहते हैं कि मन्त्रिमंडल और विधानसभा भंग हो और दूसरे मे वे लोग वोट डालें जो कुर्सियों को बनाये रहने देना चाहते हैं। हमारी चुनौती है कि पहले बक्से मे वोट डालकर ९०, ९५ प्रतिशत बिहार की जनता इस बात की ताईद करेगी कि पांच वर्ष तक नालायक विधायकों को वह अब चुपचाप सहन नहीं करेगी। लोकतंत्र के विरुद्ध हैं आप, जयप्रकाशनारायण नहीं है। क्या इस प्रकार *लोकतंत्र चलेगा? हम नहीं चलने देंगे। यह* सब अब नहीं चलने देंगे, इसकी कसमे खायी है। बिहार के इस प्रदर्शन के बाद यह आंदोलन सारे देश मे फैलनेवाला है। जो सत्ता मे *हैं उनके लिए चाहें रोटी-रोजी का सवाल हो* या कोई और सवाल हो, अब हम चुप बैठनेवाले नहीं हैं। या तो ये जनता का विश्वास प्राप्त करें, कुछ कदम बढ़ायें जिससे जनता को विश्वास हो कि इन्होंने जनता का आदेश मंजूर किया है, नहीं तो जनता की मांग है कि बिहार का मन्त्रिमंडल तत्काल हटे, नहीं तो जनता यहां आकर मांग करेगी कि आप तत्काल गद्दी छोड़ दो। ऐसी स्थिति मे तो दुनिया के दूसरे देशो मे हिंसा की आग फैली होती, चूंकि बिहार मे शान्तिमय आन्दोलन *करीब एक साल से चलता रहा, उस पर* सत्तावालो ने ध्यान नहीं दिया। दुर्भाग्य की बात है कि जवाहरलाल नेहरूजी के समय से ही ऐसे कामो में हिंसा का चलन हो गया था जबकि आन्ध्रप्रदेश *का निर्माण हुआ।* मित्रो, मैं आपसे यह निवेदन करना चाहता हूं कि हमारा सब्र न टूटे। आपके सामने जो *लक्ष्य है उसके लिए हिंसा के मार्ग को न* अपनायें। मैं समझता हूं कि इन्दिराजी यही चाहती हैं, शासन यही चाहता है कि देश में हिंसा हो। बिहार मे करीब डेढ़-सौ आदमी मारे गये हैं, हजारो के शरीर पर चोट के निशान हैं, सैकड़ो अपाहिज हो गये हैं, काम धन्धो के लायक नहीं बचे हैं, हजारो को जेलों मे रखा लेकिन उनकी तरफ ध्यान नहीं दिया जाता, झूठा प्रचार करके यह सिद्ध किया जाता है कि बिहार मे हिंसा हुई है और लम्बी फेहरिस्त पेश करते हैं। समाचार-पत्रो के मालिकों से, उनके सम्पादकों से मैं दरख्वास्त करता हूं कि वे अपनी एक कमेटी बनायें और वह कमेटी बिहार का दौरा करे और मन्त्रिमंडल के द्वारा जो हिंसा की बातें कही गयी हैं, मेरी मांग है यह कि कमेटी जांच करके सही जानकारी देकर इनका मुंह बन्द करे। व्यापक रूप से इतना शान्तिमय और दूसरा आंदोलन चला है? ये लोग क्यो यह सिद्ध करना चाहते हैं कि वहां हिंसा हो रही है। क्योंकि बात झूठ है, लोगो का विश्वास उन पर नहीं है, इसलिए उनसे कह रहे हैं जिनके दिलो मे भय है। ये लोग यही चाहते हैं कि देश मे हिंसा हो ताकि तानाशाही लायी जा सके।

कांग्रेसी संसद सदस्य शशिभूषण महाराज (जनता के द्वारा अशोभनीय नारे, मैं *यह सब नहीं कहता, आप लोगों ने ही ऐसे* लोगो को चुना है) ने ऐलान किया है कि देश मे सीमित तानाशाही के बगैर लोकतंत्र नहीं चलेगा। लिमिट मे कौन रखेगा, यह मर्यादा कौन डालेगा? परस्पर विरोधी बातें हैं। इन्दिराजी ने भी ऐसा कहा है। वे (शशिभूषण) कांग्रेस पार्टी के संसद-सदस्य हैं और मोहनधारिया को निकाला जाता है लोकतंत्र से लड़ाई लड़ने के लिए। लोकतंत्र मे तानाशाही का यह एक सबूत है जिससे देश को भारी खतरा है। बांगला देश की परिस्थिति पैदा करने की कोशिश इन लोगो की तरफ से होती है। आज तो भगवान की कृपा से, आपकी समझ-बूझ से यह शान्तिमय है। आप सबको बधाई और मुबारकबाद है।

इस संघर्ष का यह अर्थ है कि हम अपनी समस्याओं को हल करने, हल कराने के लिए कटिबद्ध हैं। जिसको गद्दी पर बैठा दिया, उसको गद्दी से उतारा भी जायेगा। संविधान में प्रतिनिधि को वापस बुलाने का अधिकार नहीं है, लेकिन जनता को यह जन्मसिद्ध अधिकार है और जिसका लोकतंत्र में रत्ती भर विश्वास है उनको यह चाहिए कि जब उनकी समझ मे यह बात आ जाये कि जनता तुम्हें नहीं चाहती, तुमने जनता का विश्वास खो दिया है तो तुम्हें राजी खुशी यह गद्दी छोड़ देनी चाहिए। और जनता को यह मौका देना चाहिए कि एक बार फिर अपने प्रतिनिधि का चुनाव करे।

मैं आशा करता हूँ कि यहां से लौटने के बाद जहां-जहां आप जायेंगे, इस सन्देश को लेकर जायेंगे कि हमे प्रतिबद्ध होना चाहिए, स्वयं को संगठित करना चाहिए। गांव गांव, नगर-नगर, कस्बो मे, स्कूल-कालेजो मे—सब जगह अपने संगठन बनाकर अपनी लड़ाई तेज कर देनी चाहिए। अपनी मांगों मे यह एक मांग भी हो कि लोकतंत्र का नारा लगानेवाले जो कुर्सी पर बैठे है उन्हें चाहिए कि गुजरात मे विधान सभा के चुनाव कराकर राष्ट्रपति शासन समाप्त करायें और हर राज्य को मिलनेवाले स्वायत्त शासन के अधिकार से गुजरात को वंचित न कराये रखें। इसलिए मित्रो, चुनाव की पद्धति मे सुधार होना चाहिए, उसमे ऐसा होना चाहिए कि लोक*सभा या विधान-सभा के रिक्त स्थानों का* ६ महीने के अन्दर चुनाव हो जाये, उससे ज्यादा समय तक टालने का किसी को अधिकार नहीं हो। आगामी १८ मार्च को बिहार के संघर्ष की वर्षगांठ होगी। उस दिन विधान सभा के सामने धरना दिया जायेगा। हम प्रस्ताव रखेंगे कि हमारी कुर्सी-गद्दी छोड़ दो। १९ मार्च से २६ मार्च तक पूरे एक सप्ताह तक बिहार के हर चुनाव क्षेत्र मे प्रदर्शन होंगे, सभाएं होंगी, प्रस्ताव पास होंगे कि हम इस क्षेत्र के विधायक पर हमारा विश्वास नहीं है। इसलिए वे इस्तीफा दें तथा मन्त्रिमंडल इस्तीफा दे। आज से लेकर ६ अप्रैल तक एक महीने की अवधि मे जो आपको तिथि अनुकूल हो, उस तिथि को इसी प्रकार का प्रदर्शन जैसा कि दिल्ली मे हुआ है, देश के हर राज्यों मे हो। प्रदेश की जनता, जैसे भारत की जनता यहां आयी है, वैसे ही प्रदेश की जनता अपने प्रदेश की राजधानी में इकट्ठी हो। लखनऊ, भोपाल, कलकत्ता, बम्बई आदि राजधानियो मे प्रदर्शन हो, लेकिन शान्तिमय उपायों पर विश्वास रखकर ही यह सब करें।

आप यहां आये और कई मांगें पेश कर रहे हैं अपने नेताओं के सामने। हम लोग अभी गये थे उन विरोधी दलो के नेताओं के साथ जो इस आंदोलन का समर्थन कर रहे हैं, इस आंदोलन के द्वारा समाज का परिवर्तन चाहते हैं, लोकसभा के स्पीकर साहब को मिलने

श्रौर राज्यसभा के अध्यक्ष महोदय से मिलने । उनके सामने भारत की जनता की दृष्टि से जो माग पत्र भेंट हुआ उसमे यह पहला है कि हम बिहार के आंदोलन का समर्थन करने आये हैं, हम लोग माग करने आये हैं कि कि बिहार की विधानसभा भग हो, मन्त्रि-मडल बर्खास्त किया जाये।

६ अप्रैल जो इस देश के इतिहास में एक बड़ा ही महत्व का दिन है, 'रौलेट एक्ट' के विरोध मे काला दिवस के रूप मे मनाया था। हमारे देश मे अभी भी इमरजेन्सी की घोषणा है, भारत मे आपतकालीन परिस्थिति है। ऐसी घोषणा तब होती है जबकि युद्ध की परिस्थिति हो, जब बाहर से आक्रमण होता हो या आन्तरिक विद्रोह हो, हिंसा पूरी तरह से समाज मे फैलती हो, तभी इसका औचित्य होता है। देशमे लड़ाई के समय आपतकालीन स्थिति की घोषणा की गयी थी, लेकिन यह अभी भी जारी है। तो ६ अप्रैल को सारे देश मे, भारत के कस्बे-कस्बे मे, गाव-गाव, नगर-नगर, शहर-शहरमे सभाए की जायेंगी—इमरजेंसी वापस लो—इसकी माग की जायेगी। क्योकि जब तक यह परिस्थिति है, यह जो लोकसभा आपके सामने है, भारत का विधान कहता है कि जब तक यह परिस्थिति है तब तक चुनाव के पाच वर्षो के बाद भी लोक-सभा का चुनाव नहीं किया जा सकता इस परिस्थिति मे जब तक चाहें प्रधानमन्त्री लोकसभा का चुनाव टाल सकती हैं, भारत की जनता का जन्मसिद्ध अधिकार, चुनने का अधिकार दे इस परिस्थिति में नहीं रह सकते। इसलिए इसको वापस लेने की माग उस दिन की जाये। यह बड़ी अजीब बात है कि विरोधी पक्ष को कांग्रेस के मुकाबले। ५६ प्रतिशत वोट (सी०पी०आई० को छोड़ दिया जाये तो भी ५० प्रतिशत) जनता से मिलने पर भी अपनी बात कहने का हक नहीं है। O

चुनाव प्रणाली में संशोधन वांछित

—युद्धवीरसिंह

लोकतन्त्र की बुनियाद है चुनाव और आज खुला आक्षेप यह है कि चुनाव निष्पक्ष नहीं रहे। चुनाव मे भ्रष्टाचार बहुत है। यहा तक कहा जाता है कि सत्तारूढ़ दल चुनाव अफसरो के माध्यम से गड़बड़ कर देते हैं। क्या यह ठीक है?

दूसरी तरफ यह कहा जाता है कि यदि चुनाव निष्पक्ष नहीं है तो विरोधी दल के लोग कैसे चुने जाते हैं? वे कहा से आ जाते हैं? दोनों पक्षों की बातो को सुन कर यदि हम छानबीन करें तो पता चलता है कि चुनाव मे भ्रष्टाचार है, मगर उसका प्रयोग सत्तारूढ़ दल और विरोधी दल सामान्य रूप से करते हैं, कोई किसी से पीछे नहीं रहता। सत्तारूढ़ दल को पैसा इकट्ठा करने आदि में थोड़ा सुभीता जरूर होता है।

अधिकार प्राप्ति की लालसा इतनी बढ़ी हुई होती है कि हम येन केन उसे प्राप्त करने की चेष्टा करते हैं और जा-बेजा का ख्याल भूल जाते हैं। आजादी से बहुत पहले सन् ३० से भी पहले की बात है कि दिल्ली कांग्रेस कमेटी के चुनाव के समय आल इण्डिया कांग्रेस कमेटी के पास शिकायत पहुंची कि चारआने बोगस मेम्बर बहुत बनाये गये हैं। श्री रफी अहमद किदवई साहब को तहकीकात के लिए भेजा गया तो दिल्ली और अलवर के बीच के गावो के हजारो ऐसे मेम्बरो के फार्म मिले जिनका उस गाव मे नाम निशान ही न था। उस समय तो कांग्रेस के पास कोई हुकूमत न थी। केवल कांग्रेस के प्रेसीडेन्ट, सेक्रेटरी का ही चुनाव होना था।

तलवार को त्याग कर चुनाव की पद्धति अहिंसा की ओर एक कदम था मगर अहिंसा के साथ सत्य न होने से वह भी इतना ही दूषित हो गया, जितनी हिंसक पद्धति थी। वहा जिसकी लाठी उसकी भैंस थी, यहा जिसकी वोट उसकी भैंस हो गयी। वोट के लिए शुद्ध साधन हों यह बात हम भूल गये।

अब क्या करें

इन सब दोषो के रहते हुए लोकतन्त्र मे वोट और चुनाव के अतिरिक्त कोई दूसरा रास्ता है नहीं, तो आज यही सोचा जा रहा है कि किस तरह चुनाव निष्पक्ष हो और शुद्ध हो। मगर अभी तक कोई पक्का फार्मूला निकला नहीं।

वर्तमान चुनाव प्रणाली के मुख्य दोष इस प्रकार हैं:

(१) चुनाव का अत्यधिक खर्च जिसके लिए पैसे वालो से रुपया लेना। बेमतलब कौन पैसा देता है? (२) बोगस वोट डलवाना। (३) वोट खरीदना।

खर्च कम कैसे किया जाये

खर्च निम्नलिखित मदों मे होता है

(१) चुनाव दफ्तर स्थापित करना, इसमे जितना बड़ा क्षेत्र होगा उतने अधिक कार्यकर्त्ता लगेंगे, जो वोटरो की फेहरिस्तें इलाकेवार तैयार करेंगे और उनकी पर्चियाँ बनायेंगे। बड़े क्षेत्र मे कई उप-कार्यालय भी बनाने पड़ते हैं। (२) पर्चियाँ वोटरो तक पहुचाना। (३) पोस्टरो, इश्तहारों और पुस्तिकाओ द्वारा अपना या पार्टी का प्रचार करना (४) प्रचार के लिए क्षेत्र मे सभाओं का आयोजन (५) सवारी खर्च, प्रचारार्थ और वोटरों को लाने का भी। आदर्श तो यह होना चाहिए कि उम्मीदवार गरीब से गरीब भी हो तो खड़ा हो सके और उसे कुछ खर्च न करना पड़े।

सुझाव है कि प्रथम मद में सारा खर्च सरकार को करना चाहिए, और वह बहुत नहीं होगा—चाहिए यह कि जब वोटरो की फेहरिस्तें तैयार हों उसी समय हर वोटर को एक कार्ड दे दिया जाये जिसमें उसका नाम पता आदि सब रहे। आगे चल कर इन कार्डों पर वोटर की तस्वीर भी हो सकती है।

मगर केवल कार्ड तो फौरन दिये जा सकते है। इससे वोटरो की पर्ची बनाने का काम उम्मीदवार को नहीं करना पड़ेगा। साथ ही जो फेहरिस्तें छपें वे इलाकेवार छपनी चाहिए तब उम्मीदवार के लिए केवल फेहरिस्तें खरीदना ही काफी होगा। मेरी राय मे हर उम्मीदवार को फेहरिस्तों की कुछ प्रतियां मुफ्त दी जानी चाहिए। इन उपायों से वोटरों तक पर्ची पहुचाने का काम समाप्त हो जावेगा क्योंकि उनके पास अपना कार्ड होगा।

पोस्टरो—इश्तहारो पर खर्च निस्सन्देह बहुत होता है। पिछले चुनाव मे कई पोस्टर ऐसे थे जिनमे से एक-एक लाखो की तादाद मे छपा और उन पर हुए बेतहाशा खर्च को लेकर संसद तक मे सवाल उठाये गये। पोस्टरो का उद्देश्य अपना प्रोग्राम बताना ही होता है। यही काम इश्तहारो का काम है। इस संबंध मे कानून से रोक लगा देनी चाहिए कि निम्न-लिखित प्रचार साहित्य ही प्रकाशित किया जाये :

(१) पार्टी का अपना मैनीफेस्टो या प्रतिवेदन (२) एक बड़ा पोस्टर (३) एक हैन्डबिल।

इससे अधिक छापना गैरकानूनी करार दिया जाये और यह भी व्यवस्था की जाये कि उम्मीदवार के खिलाफ व्यक्तिगत-आक्षेप, गंदे इलजाम न लगाये जायें। हां पार्टी या उम्मीदवार के कार्य अथवा उनकी नीतियों पर आक्षेप किया जा सकता है। साथ ही मैनीफेस्टो तथा हैन्डबिल आदि भेजने पर डाक खर्च न लिया जाये।

चौथा बड़ा खर्च उन सभाओ पर होता है जिनका आयोजन चुनाव क्षेत्र के भिन्न-भिन्न भागो मे किया जाता है। यह खर्च बहुत बड़ा होता है मगर दूसरे देशों में मालूम हुआ है कि ऐसी सभाओ की कोई प्रथा नहीं है। हा, रेडियो और टेलीवीजन पर सब उम्मीदवारो को समय दिया जाता है। इस संबंध मे मेरा यही सुझाव है कि चुनाव आयोग की तरफ से चुनाव क्षेत्र के मुख्य स्थानो पर तीन या चार सभाओ का प्रबन्ध करना चाहिए। उनमे सब पार्टियों और स्वतंत्र उम्मीदवारो को निमंत्रित किया जाये। वे सब अपनी-अपनी बात कह जायें। ऐसी तीन-चार या अधिक सभाओ के अलावा उम्मीदवारो या पार्टियो की तरफ से सभाओं पर रोक लगा देनी चाहिए। रेडियो और टेलीवीजन पर सबको निश्चित समय, निष्पक्ष भावना से दिया जाये जिससे वे अपनी-अपनी बात कह सकें। कितनी बार और कितना समय दिया जाय, ये सब दलो की मीटिंग मे चुनाव आयोग को निश्चय कर देना चाहिए।

इस प्रकार हजारों रुपयो का यह खर्चा सर्वथा बच जायेगा।

पांचवां बड़ा खर्च है सवारी का। सवारी का खर्च पर्ची बांटने में और घर घर जाने में होता है। जितना बड़ा क्षेत्र उतना ही खर्च ज्यादा। चुनाव क्षेत्र जितने छोटे हो सकें, उतने छोटे किये जायें। मगर चूंकि पर्ची बांटने की तो जरूरत नहीं रहेगी, सब वोटरो के पास अपने कार्ड होंगे और व्यक्तिगत प्रचार अथवा कनवेसिंग भी उतना जरूरी नही होगा क्योंकि रेडियो टेलीवीजन सभाओं आदि द्वारा काफी प्रचार हो जायेगा, इसलिए यह खर्च अनावश्यक हो जाता है।

मगर वोटरों को लाने के लिए सवारी की जरूरत फिर भी पड़ेगी। वर्तमान प्रणाली मे वोटरो के लिए सवारी देना अनियमित है मगर फिर भी इस नियम का उल्लंघन खुले आम होता है। इसलिए प्रथम तो पोलिंग बूथ नजदीक-नजदीक बनाये जायें और सवारी न देने के नियम की सख्ती से पाबन्दी की जाये। ऐसा करने से यह खर्च बिलकुल समाप्त हो जायेगा।

उपर्युक्त उपायों से खर्च बहुत कम रह जायेगा। एक बात और जरूरी होगी, वह है अनियमितता या गैरकानूनी कारवाई की रोकथाम। कई जगह किसी उम्मीदवार के कार्यकर्त्ता पोलिंग अफसर से शिकायत करते हैं कि अमुक स्थान पर वोटरों में पैसे बांटे जा रहे हैं, शराब पिलायी जा रही है या कपड़े कम्बल धोती आदि दी जा रही है तो पोलिंग अफसर न तो पोलिंग-बूथ को छोड़कर वहां से जा सकते हैं और न उनको कोई अधिकार उस सम्बन्ध में किसी प्रकार की कारवाई करने का है। इसलिए चुनाव के समय एक दो या तीन उड़नदस्ते चुनाव आयोग के उच्चतम अधिकारियों के रहने चाहिए जो ऐसी शिकायतें आने पर या स्वयं अपने मन से हस्तक्षेप कर सकें। वे न केवल ऐसी कारवाई को रोक सकें बल्कि जिस उम्मीदवार के यहां ऐसा हो रहा हो उसकी उम्मीदवारी रद्द कर सकें। ऐसे उड़नदस्ते चुनाव के दिन के अतिरिक्त, चुनाव के महीने मे भी उपलब्ध होने चाहिए।

बोगस वोटिंग

खर्च की समस्या के बाद दूसरी बड़ी समस्या बोगस वोटिंग की होती है। हम गांधीजी के साधन और साध्य दोनो की पवित्रता के सिद्धांत को भूल कर अपनी सीट जीतने के लिए बोगस वोट डलवा देते हैं। इसका एक आजमूदा इलाज यह है कि १००० वोटर का जो पोलिंग स्टेशन बनता है उसमें वोटरो के चार विभाग २५०-२५० के कर दिये जायें और वोटिंगवाले दिन जो समय भी वोटिंग का हो उसको भी चार हिस्सो में बांट दिया जाये। १ से २५० तक के वोटरों के लिए ८ बजे दरवाजे खोल दिये जायें और उनको हिदायत हो कि वे ६ बजे तक आ जायें—ये सब वोटर वहीं बैठेंगे और ६ बजे के बाद सबके सामने एक-एक वोटर का नाम ले कर पोलिंग अफसर उनको बैलट पेपर देते जायेंगे। चूंकि तमाम वोटर एक ही इलाके के होंगे, एक दूसरे को जानते होंगे इसलिए कोई भी अव्वल तो गलत वोट देने की हिम्मत ही न करेगा और अगर कोई बोगस आदमी आयेगा तो वोटर उस पर फौरन एतराज कर देंगे।

इस ही तरह १० से ११ बजे तक, १२ से १ बजे तक और ३ से ४ बजे तक २५०-२५० वोटरों को बुलाकर वोटिंग कराने से बोगस वोटिंग की समस्या हल हो जायेगी। यह तरीका मैं कांग्रेस के चुनावों में सफलता-पूर्वक आजमा चुका हूं।

वोट खरीदना

अब तीसरी बड़ी समस्या है वोट खरीदने की। खेद है कि न तो कांग्रेस ने, न दूसरी पार्टियों ने वोटर को शिक्षित करने का काम किया। बल्कि चुनाव जीतने की लालसा में स्वयं वोट खरीदने का काम करने लगे। वोटरो को कपड़े बांटना, शराब पिलाना, पैसे देना सब पार्टियों ने शुरू कर दिया। ऊपर

हम जो उड़न-दस्ते की बात लिख आये हैं उसका प्रयोग होने पर इसमें कमी आयेगी, मगर इस सम्बन्ध में जब चुनाव न हो तब वोटरों के प्रशिक्षण का कार्य जरूर चलना चाहिए। कुछ गरीब लोग तो १०-२० रुपये के मोह में आ जाते हैं। मगर जिन लोगों को पैसे की जरूरत नहीं वे भी ये समझते हैं कि किसी को वोट देकर वे उस पर एहसान कर रहे हैं और उस एहसान के बदले में उम्मीदवार से कहते हैं कि हमारे मुहल्ले में स्कूल में दो कमरे बनवा दो, या गाँव में कुआ खुदवा दो, हरिजनों के लिए अलग चौपाल बनवा दो आदि। इस विचारधारा को बदलने की जरूरत है, वह तभी बदली जा सकती है जब सामान्य दिनों में प्रचार किया जाये।

एक और तरकीब (आजादी के पहले के) एक चुनाव में की गयी। एक कांग्रेसी गरीब उम्मीदवार के खिलाफ धनी उम्मीदवार था, उसने पैसा बिखेर दिया। कांग्रेसी उम्मीदवार की तरफ से कुछ चौधरियों व कार्यकर्ताओं ने जब देखा कि लोग दबादब पैसा ले रहे हैं, लोभ को संवरण नहीं कर सके तो उन्होंने प्रचार किया कि पैसा लेना बुरा है मगर यदि आपने पैसा लिया ही है तो अब दूसरी बुराई न करो अर्थात वोट गलत आदमी को न दो। पैसा देनेवाला तो गलत है ही इसलिए वोट उसे न देकर कांग्रेसी उम्मीदवार को दो। यह तरकीब कारगर हुई और कांग्रेसी उम्मीदवार जीत गया।

खैर, यह व्यक्तिगत बात हुई पर वोट खरीदना लोकतन्त्र में भयंकर पाप-गुनाह-अपराध-गिना जाना चाहिए। जो वोट खरीदता है या जो वोट बेचता है दोनों गुनहगार हैं, सजा दोनों को मिलनी चाहिए और वह सजा जेल व जुर्माने के अतिरिक्त वोट तथा खड़ा होने के अधिकार से दस-पन्द्रह-बीस वर्ष के लिए वंचित किया जाना भी होनी चाहिए।

चुनाव आयोग

उपर्युक्त संशोधनों और युक्तियों की सफलता तभी हो सकेगी जब स्वतन्त्र चुनाव आयोग स्थापित होगा। चुनाव आयोग में कम से कम ३ सदस्य हों और उनका चयन सुप्रीम-कोर्ट की फुल बेंच करे। चुनाव आयोग पर सरकारी अंकुश बिलकुल न हो। चुनाव कब हो, कैसे हो, आदि सब निर्णय उसे स्वतन्त्रतापूर्वक लेने का अधिकार होना चाहिए। स्वीडन में संसद के चुनाव में लगभग ३०० सदस्य बहुमत के हिसाब से चुन लिए जाते हैं फिर देखा जाता है कि किस पार्टी को कुल कितने वोट मिले। मगर किसी पार्टी के वोटों के अनुपात से कम सदस्य चुने गये हैं तो वह पार्टी अनुपात पूरा करने के लिए उतने सदस्य नामजद कर देती है। जैसे एक पार्टी को कुल वोटों के ५० प्रतिशत वोट मिले मगर उनके सदस्य कुल ३०० में से १२० ही आये तो उस पार्टी को अधिकार होता है कि वह ३० अथवा अधिक सदस्य नामजद कर दे जिससे उनका अनुपात कुल सदस्यों में से ५० प्रतिशत हो जाये। यह एक अच्छी प्रथा है, इसमें अल्पमत वाली सरकार नहीं बनेगी। इस प्रणाली का अध्ययन करके इसे लागू करने से लाभ ही होगा।

दल बदलने पर पाबन्दी भी एक जरूरी चीज है। उसका कानून अविलम्ब बन जाना चाहिए। दल बदलना बड़ा भारी विश्वासघात है। किसी एक व्यक्ति के साथ नहीं हजारों और लाखों वोटरों के साथ विश्वासघात है; इसलिए इस संबंध में अविलम्ब कानून बन जाना चाहिए कि पार्टी छोड़ने के साथ सदस्यता भी छोड़नी अनिवार्य हो।

जो सुझाव यहाँ दिये गये हैं वे वर्तमान चुनाव प्रणाली के अन्तर्गत ही चुनावों को निष्पक्ष और शुद्ध बनाने में सहायक हो सकते हैं। O

हमारी सत्ता का स्वरूप

—अजित राय

लोकतन्त्र के नाम पर चलायी जानेवाली सत्ताएं अपना काम किस ढंग से करती हैं इसे बिना गहरा अध्ययन किये नहीं जाना जा सकता। उनकी मोटी-मोटी कमियां तो आम नागरिक भी देख पाता है, मगर वे कमियां क्यों और कहां से पैदा होती हैं, इसे जानने के लिए सत्ता-व्यवस्था का थोड़ी गहराई से अध्ययन आवश्यक है। हमारा लोकतंत्र स्वतन्त्रता, समानता और बंधुता के तिरंगे में लिपटा हुआ है। मगर ये तीनों रंग कितने फीके हैं, यह समाज की परिस्थिति पर नजर डालते ही दिखायी देने लगता है। समाज में जब किसी बात को लेकर तनाव पैदा हो जाता है या जब कोई आन्दोलन चलने लगता है और जगह-जगह स्थापित संस्थाओं के विघटन के चिह्न नजर आने लगते हैं तब सत्ता के तौर-तरीके उघड़ जाते हैं, वह विघटन को रोकने के लिए तनावों को समाप्त करने के लिए और आन्दोलन को दबाने के लिए खुले आम दमन प्रारम्भ कर देती है और साथ ही साथ कुछ ऐसे तत्वों को बढ़ावा देने लगती है जो लोकतन्त्र के विनाश के कारण बनते हैं। भारतीय गणतन्त्र के स्वरूप का ठीक-ठीक वर्णन करना दूसरे लोकतंत्रों के स्वरूप वर्णन से भी ज्यादा मुश्किल है क्योंकि हमारे संविधान के निर्माताओं ने दुनिया के तमाम संविधानों में से लूट खसोट कर एक अत्यन्त रमणीय संविधान तैयार किया है। उसमें मूलभूत अधिकार, सत्ता के निर्देशक सिद्धान्त, अल्पमतवालों के लिए सुरक्षा के उपाय, पिछड़ी हुई जातियों और आदिम जातियों के उत्थान के तरीके और फिर उसके बाद उद्देश्य की तरह समाजवादी दल की परिस्थितियों का निर्माण और अन्त में गरीबी हटाओ जैसे नारों को मिला-जुला कर जो नक्शा तैयार किया गया है, वह सचमुच सत्ता किस तरह काम कर रही है, इस पर बड़ी खूबी के साथ पर्दा डाल देता है। मगर सच एक अजीब चीज है। उसे चाहे जितने मोटे परदे में ढांकिये, उसका चेहरा चमक जाता है अन्धेरे में सितारे की तरह। आंख खोलकर देखनेवाले लोगों ने देख लिया है कि हमारे देश में जो व्यवस्था रूढ़ है वह सर्व-शक्ति सम्पन्न है और कुछ इने-गिने लोगों के हाथ है, उसे लोकतन्त्र कहना बहुत कठिन है।

उदाहरण के लिए भूतपूर्व केन्द्रीय मंत्री वी० के० आर० वी० राव ने कहा है कि हिन्दुस्तान में सत्ता मध्यम वर्ग और उच्च वर्ग

ने मिलजुलकर अपने हाथ में कर रखी है। समाजवादी सिद्धान्तों का नाम वे केवल जनता का समर्थन प्राप्त करने के लिए लेते हैं, मगर सारे काम तरकीबें भिड़ाकर ऐसे ही करते हैं जिनसे भारत के एक बहुत छोटे तबके का पूंजीवादी विकास हो और सुख-सुविधाएं भी ज्यादातर इन्हीं लोगों को मिलती रहें।

अन्य एक भारतीय विद्वान ने कहा है: 'क्षेत्र चाहे खेती का हो, चाहे उद्योग का, वैज्ञानिक अनुसंधान का हो, या समाज के उत्थान का लाभ, सत्ता से सम्बन्धित उन गिने-चुने लोगों तक ही पहुंच कर रह जाता है जो संसदीय लोकतन्त्र के हथकंडों के बल पर उठा-पटक करना जानते हैं।' निष्कर्ष उसने यह निकाला है कि आज सत्ता का जो ढांचा है, वह गरीब की गरीबी को हटाने के लिए किये जानेवाले छोटे-बड़े हर प्रयत्न की आड़ में आनेवाला जबरदस्त रोड़ा है। गुन्नार मिरडल के शब्दों में भारत ऊपर के तबके के कुछ चुने हुए लोगों के द्वारा शासित हो रहा है और ये लोग अपनी राजनीतिक सत्ता का उपयोग अपनी ही सुख सुविधापूर्ण स्थिति को बनाये रखने के लिए करते हैं। आगे चल-कर उसने यह भी कहा कि गिने-चुने लोगों की यह मंडली व्यापारी, बड़े सरकारी नौकरों और राजनीतिक नेताओं के निहित स्वार्थों की कड़ियों से जुड़ी हुई है।

आज के समाज में सत्ता आर्थिक, राज-नीतिक और सांस्कृतिक तत्वों से मिलजुल कर बननेवाली चीज है। और यह सत्ता अपने को जाहिर करती है राज्य संचालन करनेवाले तन्त्र के माध्यम से। मगर कोई सत्ता के स्वरूप का ठीक-ठीक विश्लेषण पेश करना चाहे तो उसे बहुत बड़े क्षेत्र की छानबीन कर तथ्य पेश करने पड़ेंगे। इसमें वे न्याय और आदर्श सम्बन्धी ढांचे में बैठनेवाली सारी संस्थाएं आ जायेंगी जो उसका आधार हैं। हम यहां उस सारी तफसील में नहीं जायेंगे। हम यहां केवल एक ही आधार पर भारत की लोकतन्त्रीय व्यवस्था का निरीक्षण करेंगे और वह है उसकी कार्यप्रणाली और उसमें देखेंगे यह कि इस कार्यप्रणाली से किसका लाभ होता है, किसका नुकसान होता है—जिन संस्थाओं आदि का उल्लेख किया जायेगा वह प्रसंगवश किया जायेगा, ऐसा समझिये।

सत्ता, शोषक दल का औजार

सामाजिक और आर्थिक विकास आम-तौर पर जिस तत्व के द्वारा एकदम समझा जा सकता है, भारत में वह तत्व है, गरीबी। गरीबी दूर करने की बहुत बातें की गयीं। सभी जानते हैं कि इसे वर्षों से जोर जोर से नारे लगाकर किस तरह काम में लाया जा रहा है और किस तरह इससे राजनीतिक सत्ता बढ़ायी जा रही है, मगर बावजूद इस सबके इसे केवल मुंह की बात मानना चाहिए-क्योंकि देश में आजादी के बाद गरीबी की जड़ें गहरी गयी हैं और व्यापक भी हुईं।

दाडेकर और रथ के गहरे अध्ययन ने यह बताया है कि गांवों में पचास प्रतिशत और शहरों में चालीस प्रतिशत नीचे के दरजे के लोगों का जीवन-स्तर १९६०-७१ के दशक में काफी नीचे गिर गया है। यों इस दशक में बहुत थोड़ी ही क्यों न हो, राष्ट्रीय आय बढ़ी है। कुछ शोधकर्ताओं की दृष्टि में इससे भी अधिक प्रतिशत लोगों का जीवन स्तर गिरा है। इस बात पर कहीं कोई मतभेद नहीं है कि उपभोक्ता वस्तुओं और अन्न की कमी के साथ साथ तेजी से हो रही मुद्रा-स्फीति के कारण आर्थिक आय का वितरण बड़ी तेजी से रूप बदल रहा है और ज्यादातर अब लाभ उन्हें होता है जो किसी न किसी बड़ी जायदाद के मालिक हैं। फिर वह जायदाद चाहे कारखाने के रूप हो, चाहे दूकानदारी के रूप में, चाहे जमीन और दूसरी अचल सम्पत्ति के रूप में।

यह कथन बिलकुल सच है, 'भारत की अर्थव्यवस्था का आधारभूत तथ्य तो आज यही है कि एक बहुत ही नगण्य किन्तु जबर्दस्त ताकतवर अल्पमत ऐसा है जो बड़ी कुशलता के साथ सारे साधनों को अपनी सुख-सुविधाओं को बढ़ाने की दशा में बहाकर ले जाता है जबकि इनका पर्याप्त अंश उन गरीब लोगों तक पहुंचाना चाहिए, जो इन सुख-सुविधाओं को अपना श्रम लगाकर पैदा करते और बढ़ाते हैं। आजादी को आये पच्चीस साल से भी ज्यादा हो गये, मगर आज भी ऐसे हजारों गांव हैं जिनमें पीने के पानी तक की सुविधा नहीं है और दूसरी ओर जम्बो-जैट और आधुनिक से आधुनिक हवाई अड्डे आदि बिलकुल निरर्थक विलास के कामों पर मनमाना पैसा खर्च किया जा रहा है। बाहर से आनेवाली मदद भी बराबर सम्पन्न अल्प-संख्यक लोगों के जीवन-स्तर को अधिकाधिक उठाने के काम में लग जाती है। कोई भी योजना शुरू की जाये, कोई भी कल-कारखाना शुरू हो, कोई भी बांध बने, उसका नतीजा आगे-पीछे यही निकलता है कि हमारी इस गरीब धरती पर कहीं न कहीं छोटा-मोटा न्यूयार्क खड़ा होने लगता है।

अब हम एक नजर उन सामाजिक शक्तियों पर भी डालें जो ग्रामीण और नागरिक क्षेत्रों में अलग-अलग काम कर रही हैं। केन्द्रीय सरकार के एक प्रशासकीय दस्ता-वेज के मुताबिक, पिछले दो दशकों में सिंचाई, गांवों में बिजली पहुंचाने, गांवों का उत्थान करने, सड़कें बनाने और खेती की उन्नति के लिए राज्य ने जो जबर्दस्त पूंजी लगायी है उसका लाभ धनी किसानों को मिला है। यह इसलिए हुआ कि इन सारे उपायों के कारण खेती की पैदावार बढ़ी और इसलिए जिनके पास खेती के लिए ज्यादा जमीन थी, लाभ का बहुत बड़ा हिस्सा उन्हीं के हाथों में गया और वे ही सम्पन्न और धनवान बने। संविधान ने राज्य के लिए जिन निर्देशक सिद्धान्तों की व्यवस्था की है, उनका इस तरह पूरी तरह उल्लंघन हुआ है और उन्नति के इन उपायों ने साधारण किसान को खुशहाल बनाने के बजाय उसे बेतिहर मजदूर बनाकर छोड़ दिया है और बड़े किसान छोटे-बड़े राजा या नवाब बन बैठे हैं।

हमने ऊपर जिस दस्तावेज का उद्धरण दिया है, उससे यह भी स्पष्ट होता है कि ४४ प्रतिशत जमीन की मालिकी इस तरह की है जिसमें प्रति किसान एक एक एकड़ जमीन है और यह सारी जमीन पूरी जमीन का १.५९ प्रतिशत हिस्सा है अर्थात् ४४ प्रतिशत लोगों में पूरी जमीन का १.५९ प्रतिशत हिस्सा बंटा हुआ है। २.८५ प्रतिशत लोगों के पास औसतन पच्चीस-पच्चीस एकड़ जमीन है और यह पूरी जमीन का २८.८४ प्रतिशत होता है। इस प्रकार

यह मतलब हुआ कि सोचने-समझने वाले लोग भारत की स्थिति को अत्यन्त विषमतापूर्ण मानते हैं और यह भी मानते हैं कि जब तक यह भयंकर विषमता बनी रहेगी, तब तक इस देश में लोकतांत्रिक संस्थाएं पनप नहीं सकतीं। इस विषमता का स्पष्ट परिणाम ग्राम पंचायतें, सहकारी संस्थाओं, सामुदायिक विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों के असफल होने के रूप में लोगों के सामने है। ग्राम पंचायतें गांव के ऊपरी तबके के लोगों के हाथ में हैं, इसलिए स्वाभाविक है कि नीचे के तबके के लोगों की ओर से उनके प्रति कोई उत्सुकता का भाव नहीं दिखाया गया क्योंकि उन्हें ऐसी परिस्थिति में अपना कोई लाभ तो नजर आता ही नहीं था। सरकारी संस्थाएं भी देश भर में ज्यादातर सम्पन्न किसानों के द्वारा चलायी जाती हैं और इसलिए वे जनता के गरीब वर्ग की जरूरतों को पूरा करने में बहुत कम हाथ बटाती हैं। सामुदायिक विकास योजनाओं का लाभ भी इसी तरह समाज के सम्पन्न वर्ग को मिलता है और गरीब वर्ग सूखा का सूखा रह जाता है।

इस तरह एक सरकारी रपट के बल पर ही हम कह सकते हैं कि लोकतांत्रिक ढांचे के बावजूद राजनीतिक संस्थाएं निहित स्वार्थवालों की सुख-सुविधा बढ़ाने का साधन बनी हुई हैं। एक और सरकारी अध्ययन हमारे सामने है, जिसमें देहाती जीवन की विषम परिस्थिति के आधार पर भारत में सत्ता के स्वरूप का चित्र खींचते हुए और भी सख्त निष्कर्ष निकाले हैं। उसके मुताबिक, आमतौर पर भूमि-सुधार के मामले पर नौकरशाही का रुख उपेक्षापूर्ण है और कई बार तो वह एकदम निर्मम है। ऐसा होना अनिवार्य ही है क्योंकि जिन लोगों के हाथ में राजनीतिक सत्ता है या जो बड़े बड़े सरकारी पदों पर प्रतिष्ठित हैं, वे खुद ढाबे अच्छे जमींदार हैं और बड़े किसानों से उनके घने सम्बन्ध हैं। गांवों में जिनके माध्यम से सरकारी सहायता आदि का काम लागू करने की कोशिश की जाती है वे पटवारी, कर्मचारी, तलाती वगैरा खुद छोटे-मोटे किसान होते हैं और उन्हें सम्बन्धित बड़े-बड़े किसानों का रुख देखकर काम करना पड़ता है। ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं है जहां कुछ प्रशासकों ने ईमानदारी के साथ भूमि-सुधार सम्बन्धी कानूनों को कुशलतापूर्वक लागू करने की कोशिश की और उनका आननफानन तबादला कर दिया गया। फलस्वरूप लगभग हरेक राज्य में प्रशासकीय ढांचा भूमिसुधारों को लागू करने की दिशा में नकारा सिद्ध हुआ है।

यही रपट आगे चलकर जो कुछ कहती है वह सिर्फ देहाती क्षेत्र में देश की सत्ता की कमियों की ओर उंगली नहीं उठाता बल्कि पूरे देश की प्रशासनिक व्यवस्था का पर्दाफाश करते हुए दिखायी पड़ता है। उसमें लिखा गया है, चूंकि पूरे समाज का ढांचा व्यक्तिगत सम्पत्ति पर खड़ा हुआ है अर्थात् हमारे समाज में सारा विधि-विधान, न्यायाधिकरण, फैसले और उसकी मिसालें, प्रशासकीय परम्परा और उसके तौर-तरीके व्यक्तिगत सम्पत्ति प्रधान समाज पर आधारित है तब फिर ऐसी हालत में अगर कोई इक्कादुक्का इस तरह का नियम बना भी दिया जाये जो देहाती अंचल की हालत को सुधारने की कोशिश करता हो, तो वह नाकामयाब हुए बिना कैसे रह सकता है। भूमि सुधार के जो नियम बने हैं, वे अपने-आपमें बहुत दोषपूर्ण हैं। कुछ कमियां तो जान-बूझकर रखी गयीं, और कुछ असावधानी के कारण रह गयीं। जबर्दस्त जमींदारों और बाल की खाल निकालने वाले वकीलों ने इन कानूनों का अपने हक में ऐसा उपयोग किया कि देहातों की उन्नति चाहनेवाले सच्चे प्रशासक भी कुछ कर-धर नहीं सकते।

एक छोटे-से कानून को लागू करने जाइये तो अपील और उन अपीलों पर अपीलों का ढेर लग जाता है। बात एक इंच आगे नहीं सरकती।...

रपट के अन्त में कहा गया है, 'आजादी के बाद से अबतक गांवों में सिंचाई, बिजली, सामुदायिक विकास, सड़कें बनाना, खेती की उन्नति करना आदि बातों पर खासा खर्च उठाया गया है। अकेली सिंचाई पर करीब दो हजार करोड़ की पूंजी लगायी गयी है और माना यह गया है कि एक करोड़ हेक्टीयर से अधिक जमीन को इस खर्च के बल पर हराभरा बनाया जा सकेगा। इस सार्वजनिक पैसे से ज्यादातर लाभ बड़े किसानों और जमींदारों को हुआ है और वे इस लाभ के बदले में कोई लेवी या सिंचाई शुल्क आदि देने पर बाध्य नहीं हैं। आधुनिक खेती के तौर-तरीकों के इस्तेमाल के बल पर खेती की पैदावार में जो बढ़ोतरी हुई है, उसका लाभ भी ज्यादातर सम्पन्न किसानों को ही मिला है। सरकारी खजाने से जबर्दस्त खर्च कृषि विभाग में किया गया है, इसमें कोई शक नहीं है। नये तौर-तरीके भी व्यापक रूप से अपनाये गये हैं, किन्तु इन सबके कारण देहाती क्षेत्रों में रहन-सहन और पैसे की विषमता ही बढ़ी है।

जिस घटना को हरित क्रांति के नाम से पुकारा जाता है उस पर भी सरकारी मद में से जबर्दस्त पैसा लगाया गया है। उसके बदले गरीब को कुछ नहीं मिलता और सभी लोग इस बात को मानते हैं कि इस तथाकथित क्रांति से भी छोटे और बड़े किसान के बीच में विषमता की दरार चौड़ी हुई है। इस पर विस्तार से कुछ कहना यहां मौजूं नहीं है, मगर दूसरी कोई बात कहने से पहले हम देहाती क्षेत्र में शक्ति के ढांचे पर एक निगाह डाल लें तो बेहतर होगा...'केन्द्रीय और राज्य की कांग्रेस सरकारों में सम्पन्न और आसूदा किसानों और जमींदारों का बोलबाला है। खासकर चुनावों के वक्त उनसे बड़ी मदद लेनी पड़ती है। जिन किसानों पर जमीन की हदबन्दी लागू है, होने को उनकी संख्या बहुत कम है लेकिन उनका प्रभाव व्यापक है और स्थानीय चुनाव क्षेत्रों में तथा वैसे भी उनकी ही बात चलती है।...कहा जाता है कि वे वोट बैंक हैं। सारे वोट उन्हीं के हाथ में हैं। उदाहरण के लिए पंजाब की राज्य सभा को लीजिए, उसमें ६४ में से ४५ विधान सभा के सदस्य बड़े-बड़े किसान हैं। हरियाणा में ५२ से ३१ और मध्यप्रदेश में २२० में से ८६ ऐसे किसान हैं जिनके पास उन्होंने जितनी जमीन बतायी है, उससे ज्यादा जमीन का रकबा है और ये सारे के सारे सदस्य कांग्रेस पार्टी के हैं। दूसरे राज्यों का जायजा लेने पर ऐसी ही कोई तसवीर

उभरेगी।

१९६५ में सामुदायिक विकास के राष्ट्रीय संघ ने देश भर में जो सर्वेक्षण किया था उससे इस मामले पर कुछ प्रकाश पड़ता है। १६ राज्यों में ३६५ गावों का सर्वेक्षण किया गया और ३५३ राजनीतिक नेताओं से बातचीत की गयी। मालूम यह हुआ कि गांवों में जो लोग राजनीति के क्षेत्र में काम करते हैं उनमें से ६४ प्रतिशत अर्थात दो तिहाई लोगों के पास दस या दस एकड़ से ज्यादा जमीन है और ३८.२ प्रतिशत लोगों के २५ एकड़ या उससे अधिक जमीन है। मोटे तौर पर कहा जा सकता है कि इन सबके पास कानून की रू से जितनी जमीन ये रख सकते हैं उससे ज्यादा यह जमीन है।

अब दिहाती क्षेत्र से हट कर शहरी क्षेत्र पर नजर डालें। शहरी क्षेत्र में भी हमें वही तसवीर उभरती नजर आती है जो हमने अभी अभी गांवों में देखी। रिजर्व बैंक आफ इंडिया ने हाल ही में अपने आंकड़ों के बल पर यह तथ्य प्रकाशित किया है कि १९६०-६१ में देश के उत्पादन को बढ़ानेवाली धनराशि ४६६२२ करोड़ से बढ़कर ७३१२० करोड़ हुई। १९६५-६६ की वर्तमान कीमतों को देखते हुए इसमें ४७ प्रतिशत का इजाफा हुआ। यानी निजी रूप से संगठित अर्थक्षेत्र में अनुपात के हिसाब से ३६३७ करोड़ बढ़ने के बजाय ६७९२ करोड़ की वृद्धि हुई, अर्थात सन् ६०-६१ में जहां ४७ प्रतिशत वृद्धि हुई थी वहां सन् १९६५-६६ में ७२ प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस तरह निजी रूप से संगठित अर्थक्षेत्र का समूचे उत्पादन में लगे हुए पैसे का प्रतिशत ८.५ से बढ़कर ६.३ हो गया। निजी क्षेत्र की सम्पत्ति में यह जो वृद्धि हुई है उसका कारण आज की सत्ता की नीतियां और उनके मुताबिक अमल किया जाना है। पहली नीति है कर-सम्बन्धी। करों से होनेवाली सारी केन्द्रीय आमदनी में प्रत्यक्ष करों का अंश १९५०-५१ में ३६.४ प्रतिशत था, १९७३-७४ में यह प्रतिशत घटकर २८.६ हो गया है। इस तरह जनता पर अप्रत्यक्ष करों का बोझ 63.7 प्रतिशत से बढ़कर 71.4 हो गया। इससे भी अधिक ध्यान देने योग्य बात यह है कि बड़ी-बड़ी कम्पनियों पर लगे हुए कर में जबर्दस्त कटौती की गयी। रिजर्व बैंक अपने अध्ययन के आधार पर लिखता है, 290 बड़ी-बड़ी कम्पनियों का 1965-66 में कर देने के पहले 47 4 प्रतिशत लाभ था। 1970-71 में यह अनुपात घटकर 42 8 प्रतिशत हो गया। इस दौरान संगठित निजी आर्थिक क्षेत्र ने करों में छूट की मांग की जिससे उत्पादन बढ़ाया जा सके और उद्योग क्षेत्र में आयी हुई मंदी का मुकाबला किया जा सके। इसीलिए १९६५-६६ के बजट में काफी दबाव पर विचित्र पद्धतियों से अलग-अलग आमदनीवाली कम्पनियों को करों में छूट देने का प्रबन्ध किया गया। पहले कम्पनियों पर लाभ के आधार पर 55 प्रतिशत कर था। अधिक आमदनी होने पर कर का अनुपात बढा दिया जाता था। वितरित लाभ पर इससे भी अधिक करों का विधान था और बोनस, शेयर आदि पर अलग से कर लगता था। १९६६-६७ के बजट में बढ़े हुए चालीस प्रतिशत कर घटाकर ३५ प्रतिशत कर दिये गये और इसी प्रकार आयकर और सुपर-कर में कटौती की गयी। सामान्यतया कम्पनियों पर ५५ प्रतिशत कर लगाया जाता था। किन्तु उत्पादन के विकास की दृष्टि से अनेक चीजों पर रिबेट देने का चलन हुआ। मशीन पर रिबेट, मूल उद्योगों पर रिबेट अतिरिक्त शिफ्ट चलाने पर अलाउन्स और इसी तरह नयी कम्पनियों पर कुछ वर्षों तक कर न लगाने का चलन, निर्यात से आनेवाली आमदनी पर रिबेट आदि बहुत सी बातें शुरू हुईं और इनके कारण निजी क्षेत्र पर लगनेवाले करों में काफी कमी हो गयी। हमने जिन २९० बड़ी-बड़ी लिमिटेड कम्पनियों का उल्लेख किया है उन पर सन् १९६५-६६ में ४७.४ प्रतिशत कर के बदले एक ही साल बाद वह ६६-६७ में ४४.५ हो गया। सन् १९६८-६९ तक यह प्रतिशत लगभग जैसा का तैसा बना रहा, किन्तु फिर बांटे हुए डिवीडेन्ड कर-मुक्त कर दिये गये। अधिक आमदनी पर सरचार्ज की दर भी.३५ से २५ प्रतिशत कर दी गयी और इसलिए बड़ी-बड़ी कंपनियों से प्राप्त होनेवाले कर ४४.६ से घट कर सन् ६०-७० में ३६.८ रह गये। —क्रमश.

(पृष्ठ ३ का शेष)

त्याग करने को क्यों नहीं कहा जा रहा है? लोगों ने शायद इस बात पर ध्यान नहीं दिया कि श्री मोहन धारिया और उनके साथी भारतीय कम्युनिस्ट दल की कांग्रेस में घुसपैठ को अवांछनीय कह रहे थे। बरुआ साहब ऐसा नहीं कह रहे हैं, बल्कि कांग्रेस की गुप्त बैठकों में भारतीय कम्युनिस्ट दल के लोगों को तो छोड़िये, रूसी राजनयिकों तक को सम्मिलित कर रहे हैं। यह बहुत बड़ा अन्तर है। रूस का भारत पर प्रभाव बढ़ता जा रहा है, यह जिन कांग्रेसी सज्जनों की राय है और जो इस राय के मुताबिक इस प्रभाव को कम देखना चाहते हैं, वे ही कांग्रेस दल की नीतियों के विरोधी माने जा रहे हैं। जो रूस के बढते हुए इस प्रभाव से खुश हैं या कम से कम उस पर चुप हैं उनकी स्थिति दल में सुरक्षित है। जनता के मन में सवाल उठ रहा है कि क्या किसी भी विदेशी शक्ति के हाथों में इतना अधिक खेलना हमारी घोषित तटस्थता की नीति से मेल खानेवाली बात है? अमरीका का पाकिस्तान को हथियार देना कहीं हमारी विदेश नीति का ही तो परिणाम नहीं है? लोगों के मन में जो प्रश्न उठ रहे हैं उनको देखते हुए तो कांग्रेस को चिन्ता जे० पी० से बातचीत करने की हो या न हो, आपस में ठीक बातचीत करने की तो होनी चाहिए। कहीं ऐसा न हो कि जैसे कुछ साल पहले कांग्रेस और नई कांग्रेस के दो टुकड़े हुए थे, इस बार 'नई कांग्रेस' और 'अति नई कांग्रेस' ऐसे दो टुकड़े हो जायें!

—भवानी प्रसाद मिश्र

अगले अंक में

सर्व सेवा संघ के पवनार अधिवेशन की रपट

वार्षिक शुल्क—१५ रु० विदेश ३० रु० या ३५ शिलिंग या ५ डालर, इस अंक का मूल्य १ रुपया।
प्रभाष जोशी द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं ए० जे० प्रिंटर्स, नई दिल्ली-१ में मुद्रित।

सर्व सेवा संघ का साप्ताहिक मुखपत्र
नई दिल्ली, सोमवार २४ मार्च, ७५

मुट्ठी भर लोग भी व्यक्ति हैं अंक नहीं

सर्वसेवा संघवालों के लिए मनुष्य से बड़ी संस्था और भगवान से बड़ा मंदिर हो गया है। जब तक यह स्थिति रहेगी, संघ सर्वोदय की दिशा में नहीं बढ़ सकता। अधिवेशन में मतभेद की बजाय कलह ज्यादा दिखाई दी। वाणी और कृति की अभिव्यक्ति में मतभेद के बजाय व्यक्तिगत कलह थी। हम लोग गुणदर्शन एक दूसरे के सिवाय सबका कर सकते हैं। हमारी छावनी में जो कलह है उसके कारण एक दूसरे के कार्यक्रमों में गुणदर्शन नहीं हो रहा है।

विचार जब संगठित होता है तो अविचार में परिणत हो जाता है। महत्व विचार का नहीं रहता चौहद्दी का रह जाता है। इसलिए हम लोगों के चित्त में यह भ्रम है कि संघ जिस-के हाथ में होगा उसके पास एक बड़ा औजार चला जायेगा। दुनिया के सभी त्यागी सन्यासियों के लिए मठ, आश्रम और संस्था का मोह संसार के मोह से भी अधिक दुस्तर हो जाता है। अबकी बार संघ अधिवेशन में ये सारे दोष उभर कर प्रकट हुए। सर्व सेवा संघ विश्व संस्था होती तो उसके लिए क्षितिज के सिवाय कोई सीमा नहीं होती। किला मठ या मंदिर का क्षितिज नहीं, वह क्षितिज जहां धरती आसमान को चूमती है।

अल्पमत में जो मुट्ठी भर लोग हैं वे भी व्यक्ति हैं अंक नहीं। इतने प्रबल बहुमत के विरोध में अपने मत के लिए खड़े रहने में उन्होंने जो नीति धैर्य दिखाया उसका मैं आदर करता हूं और उन्हें बधाई देता हूं।
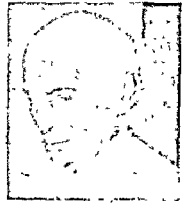
दे आर स्लेव्स हू डेयर नाट बी इन द राइट विथ टू आर थ्री।

स्वतंत्रता के वैतालिक लावेल ने यह गाया था। यह सत्य त्रिकालबाधित था।

—दादा धर्माधिकारी

सम्पादक

राममूर्ति : भवानी प्रसाद मिश्र
कार्यकारी सम्पादक : शारदा पाठक

वर्ष २१ २४ मार्च, '७५ अंक २५

१९ राजघाट, गांधी स्मारक निधि, नई दिल्ली-११०००१

संवाद बंद न हो

पवनार में १२ मार्च से १४ मार्च तक सघ का जो ऐतिहासिक अधिवेशन हुआ उससे सम्बन्धित बहुत-सी सामग्री इस अंक में जा रही है। प्रकाशित सामग्री में सर्व सेवा सघ के अध्यक्ष श्री सिद्धराज ढड्ढा का भाषण, बिहार आन्दोलन में काम करने को उचित माननेवाले लोकसेवकों की ओर से आचार्य राममूर्ति का वक्तव्य और अधिवेशन की प्रभाष जोशी द्वारा लिखित एक मुकम्मिल सी रपट इस अंक में जा रही है। मुखपृष्ठ पर हमने जो निर्णय हुआ, उस पर दादा धर्माधिकारी की प्रतिक्रिया को प्रकाशित किया है। आन्दोलन के विरोध में राय रखनेवाले लोकसेवकों की ओर से जो नरेन्द्र दुबे ने वक्तव्य पढ़ा था, उसकी प्रति हमें अभी तक प्राप्त नहीं हो सकी है। इस वक्तव्य के अलावा भी कुछ ऐसी सामग्री बच रहती है जिसे हम पाठकों को देना चाहेंगे जैसे श्रीमन्‌जी द्वारा प्रस्तुत समझौते का आधार बन सकनेवाला मसविदा या श्री पाटिलसाहब द्वारा प्रस्तुत किया गया प्रस्ताव। इस अंक में यह उपयोगी सामग्री नहीं दी जा सकी है। हमारा प्रयत्न होगा कि ३१ मार्च के अंक में हम सघ अधिवेशन से सम्बन्धित और भी जितनी सामग्री दे सकते हैं, उतनी सामग्री पाठकों के सामने रख दें।

पवनार के सघ अधिवेशन में बहुत उतार-चढ़ाव आये, बड़ी चहल पहल हुई। यहां तक कि बाबा ने भी कोई रास्ता निकाला जा सके, इस विचार से थोड़ी देर के लिए मौन तोड़कर जे. पी. से बातचीत की। किन्तु आखिरकार तय यह हुआ कि बाबा के मौन-काल यानी २५ दिसम्बर १९७५ तक सघ भी मौन रहे। इस अरसे में सघ की ओर से न कोई 'प्रवृत्ति' चलेगी और न 'अभिव्यक्ति' होगी। इसका यह अर्थ भी हुआ कि ३१ मार्च के बाद सघ के तत्वावधान में निकलनेवाले विभिन्न पत्रादि बन्द हो जायेंगे। जो कुछ भी प्रवृत्ति या अभिव्यक्ति होगी वह सघ की ओर से न होकर लोकसेवकों की अपनी व्यक्तिगत गतिविधि के अन्तर्गत आयेगी।

लोकतन्त्र की दृष्टि से अल्पमत को महत्वपूर्ण मानकर सर्वानुमति का आग्रह सघ के सविधान का अंग है। यह एक ऐसी बात है जिसका ध्यान रखा जाये तो पारस्परिक सम्बन्धों में और सस्थागत कामकाज के तरीके में एक अनोखा सामजस्य उत्पन्न हो सकता है। यों तो सघ ने आज तक जितने निर्णय लिये सभी सर्वानुमति से लिये किन्तु उसके सामने इसके पहले आनी-बानी का जैसा अवसर इस बार उपस्थित हुआ, उपस्थित नहीं हुआ था। इस कठिन अवसर पर भी अल्पमत और बहुमत दोनों ने सर्वानुमति न होने पर सघ के पदों से इस्तीफा दिया और अपने को साधारण लोकसेवक की हैसियत से अपने-अपने विचारों के अनुसार विभिन्न क्षेत्रों में काम करते रहने की प्रेरणा से ही विलग किया। यह सारे ससार के इतिहास में एक अनोखी बात कही जा सकती है। यह ठीक है कि इस पर दुनिया के लोग ध्यान नहीं देंगे, किन्तु गांधी-विचार में माननेवाले लोग इस घटना पर गहराई के साथ सोचेंगे और मतभेद के बावजूद एकाग्रचित से इस कल्पना को पूरा करने का छोटा-बड़ा प्रयत्न करते रहेंगे जिसे विनोबा ने स्वराज्य शास्त्र में और उसके पहले गांधी ने 'हिन्द स्वराज्य' में हमारे सामने रखा था।

स्वराज्य प्राप्ति के बाद देश को बनाने-सवारने की जो योजनाएं बनी वे भारत की समूची प्रकृति और सच कहें तो मानव की समूची प्रगति के विरोध में तैयार रूस आदि की योजनाओं की तरह सिद्ध हो रही हैं और देश की प्रतिभाएं बावजूद पश्चिम से आनेवाली चेतावनियों के इन्हीं योजनाओं को सफल बनाने में जुटी हुई हैं। इन योजनाओं से अलग ढंग के विकास को ध्यान में रखकर विनोबा ने भूदान-यज्ञ आन्दोलन शुरू किया था, वह पर्याप्त रूप से सफल भी हुआ, किन्तु राजतन्त्र का प्रवाह जिस गति से गांवों में पहुंचा उसमें हमारे गांव श्रीहीन हो गये, इतना ही नहीं उनकी सारी शक्ति शहरों में खोले गये मिल-कारखानों में लग गयी और पहली ही पचवर्षीय योजना के समाप्त होते न होते यह बात साफ होने लगी कि जो पहले से सम्पन्न थे उनकी माली हालत और सुधरती जा रही है और जो विपन्न थे उनकी हालत तेजी से गिरती चली जा रही है। माली हालत और नैतिक मूल्य—इनका तालमेल तो समूचे देश से गायब ही हो गया। आर्थिक सकट समान रूप से सब लोगों पर नहीं आया, मगर नैतिक सकट सब जगह बच्चे की तरह टूटा। एक ऐसी भयानक तस्वीर उभरने लगी कि शांत-भाव से गांवों में लगे हुए लोकसेवक विचलित होने लगे और सीढ़ी-दर-सीढ़ी वह परिस्थिति पैदा हुई जिसमें जे. पी. ने भ्रष्टाचार आदि के विरोध में आंदोलन करना कर्तव्य की तरह स्वीकार किया।

सर्व सेवा सघ कोई राजनीतिक संस्था नहीं है, इस आंदोलन का उद्देश्य भी अगर देखें यह सर्व सेवा सघ की ओर से शुरू नहीं किया गया था, राजनीतिक नहीं था, किन्तु कुछ लोकसेवकों को आंदोलन राजनीतिक रूप लेता दीखा और उन्होंने इसे अनुचित कहा। विनोबा की राय भी बहुत हद तक इससे मिलती-जुलती रही। पिछले अधिवेशन में बहस का मुद्दा भी यही था। और इसी को लेकर आंदोलन को सर्वानुमति प्राप्त नहीं हुई।

आंदोलन को सर्वानुमति न मिलने के

(शेष पृष्ठ १२ पर)

निर्णय का दूरगामी असर पड़ेगा

—सिद्धराज ढड्ढा

सर्व सेवा संघ का अधिवेशन और सर्वोदय सम्मेलन दोनों साथ-साथ इसी महीने कलकत्ते में होनेवाले थे, लेकिन आप जानते हैं कि इस बीच सर्वोदय जगत् में जो परिस्थिति बनी है उसके कारण सम्मेलन को फिलहाल स्थगित रखकर यह अधिवेशन हम यहां कर रहे हैं। पिछली बार, जुलाई में हम यहीं, वर्धा और पवनार में, मिले थे। इस बीच, पिछले दिसम्बर में पूज्य विनोबाजी ने अपने आध्यात्मिक आरोहण में एक और बड़ा कदम बढ़ाया और एक वर्ष का मौन ले लिया है, लेकिन हमें इस बात की खुशी है कि इस अधिवेशन में पूज्य बाबा का सान्निध्य हमें प्राप्त है और वे तथा जे० पी० दोनों यहां मौजूद हैं।

सर्वोदय जगत् के लिए यह एक ऐतिहासिक घड़ी है। हम एक मोड़ पर खड़े हैं और इस अधिवेशन में हम जो निर्णय करेंगे उसका सर्वोदय आंदोलन पर दूरगामी असर पड़ेगा। अतः प्रारम्भ में मैं आपको कुछ बुनियादी बातों की याद दिला देना चाहता हूं।

सन् १९४७ में हमारे देश की दासता के बंधन टूटे, लेकिन जैसा गांधीजी ने हमें उस समय याद दिलाया था, राजनीतिक आजादी हमारी क्रांति का केवल पहला चरण था। हमारा ध्येय तो देश के गरीब-से-गरीब और सबसे कमजोर व्यक्ति से प्रारंभ करके संपूर्ण समाज के आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक और नैतिक उत्थान की मंजिल तक पहुंचने का, यानी संपूर्ण समाज के परिवर्तन का था। शोषण, विषमता और गरीबी सारी दुनिया के सर्व-सामान्य प्रश्न रहे हैं, क्योंकि इनका संबंध प्राकृतिक कारणों से नहीं, मनुष्य की स्वार्थ-वृत्ति से है जो सदा, सब जगह वर्तमान है। पिछली एक-दो शताब्दियों में विज्ञान और तकनीकी विकास के दुरुपयोग ने, और इनकी मदद से किये गये केन्द्रीकरण ने, इन समस्याओं को और भी तीव्र तथा जटिल बना दिया है। अब तक सारी दुनिया इन समस्याओं से निपटने का एक ही मार्ग जानती रही है—हिंसा और पशुबल के द्वारा तत्कालीन सत्ता का, अर्थात् यथास्थिति का परिवर्तन और फिर उस परिवर्तित सत्ता के द्वारा समाज का नव-निर्माण। लेकिन दुनिया भर के अब तक के अनुभव से यह केवल भ्रम सिद्ध हुआ है। गांधीजी ने क्रांति की प्रक्रिया में ही क्रांति सुझायी और बताया कि समाज परिवर्तन और नये समाज का निर्माण हिंसक साधनों और राज्य-शक्ति से नहीं बल्कि सच्चाई, प्रेम और सहयोग की ताकत से स्वयं जनता के सक्रिय अभिक्रम से ही संभव है। इस प्रकार उन्होंने क्रांति की एक नयी राह खोल दी। हमारी यह क्रांति अब तक के क्रांति के प्रयत्नों से भिन्न है, क्योंकि सत्य और अहिंसा को हमने इस क्रांति का आधार माना है, और जनशक्ति को इसका माध्यम। इसी संपूर्ण क्रांति के लक्ष्य से प्रेरित होकर आप-हम, सब सर्वोदय-सेवक वर्षों से काम करते आ रहे हैं। हमारा सौभाग्य था कि बापू के चले जाने के बाद हमें इस कठिन लेकिन प्रेरणादायी यात्रा में पूज्य विनोबाजी का, और कुछ वर्ष बाद से ही, श्री जयप्रकाशजी का भी मार्गदर्शन मिला। इन दोनों के नेतृत्व में भूदान-ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य का एक अभूतपूर्व आंदोलन इस देश में खड़ा हुआ। भूदान ग्रामदान आंदोलन में हमें कई चमत्कारी उपलब्धियां मिलीं, लेकिन हममें से कई साथी यह कमी महसूस करते रहे कि, कुछ छिटपुट प्रयत्नों को छोड़कर, जनता द्वारा अन्याय के प्रतिकार की शक्ति को जाग्रत और विकसित करने की ओर हमने पूरा ध्यान नहीं दिया। पिछले कुछ समय से हममें से बहुत से साथी वर्षों तक किये गये प्रयत्नों के परीक्षण और विश्लेषण में लगे थे। देश की जनता भी अपनी आशाओं को निराशा में परिणत होते देखकर तथा गरीबी, अभाव, महंगाई, भ्रष्टाचार, बेकारी आदि समस्याओं के अत्यधिक बढ़ जाने के कारण धीरज खोती जा रही थी, देश में घोर निराशा का वातावरण फैल रहा था, जिसकी अभिव्यक्ति जगह-जगह हिंसा के विस्फोटों में होने लगी थी। ऐसी परिस्थिति में गत एक-सवा बरस में एक के बाद एक कुछ ऐसी घटनाएं घटीं जिन्होंने बढ़ते हुए अन्धकार में आशा और प्रकाश की एक किरण प्रस्तुत कर दी दिसम्बर १९७३ में इसी स्थान से प्रसारित "यूथ फार डेमोक्रेसी" वाला जयप्रकाशजी का आव्हान, गुजरात का छात्र-विद्रोह और फिर बिहार का संघर्ष, जिसका नेतृत्व विशेष परिस्थिति में और विशेष घटनाओं के कारण स्वयं जयप्रकाशजी ने संभाला। सत्य और अहिंसा के आधार पर तथा जनशक्ति के माध्यम से संपूर्ण क्रांति के लिए समर्पित देश के अधिकांश सर्वोदय सेवक भी देश की जनता के साथ इस नये प्रकाश की ओर मुड़े, जो स्वाभाविक था।

ऐसी परिस्थिति में गत जुलाई में हम लोग यहां मिले थे। हममें से कुछ साथियों का मत था कि बिहार के जन-आंदोलन में शामिल होकर हम हमारी अविरोधी और अहिंसक भूमिका छोड़ रहे हैं। सर्वोदय आंदोलन में हमने निर्णय करने की बहुमत अल्पमतवाली पद्धति को अमान्य करके सर्व सम्मति या सर्वानुमति की पद्धति को अपनाया है। थोड़े लोगों का विरोध होने पर भी हम निर्णय नहीं लेते हैं। यह बात कई लोगों की समझ में नहीं आती है और अमुक प्रश्न पर सर्वोदय आंदोलन की क्या राय है, इस बारे में गलतफहमी भी होती है। अधिकांश सर्वोदय-सेवकों की राय आंदोलन में भाग लेने के पक्ष में होते हुए भी सर्व-सम्मति के हमारे तत्व के कारण हम कोई निर्णय नहीं ले सके। उस समय ऐसा लगा कि वर्षों से मिलकर काम कर रहे साथियों के लिए इस नये दौर में एक साथ चलने का कोई मार्ग नहीं रह गया है। ऐसी

नाजुक स्थिति में विनोबाजी की प्रतिभा ने हमें प्रकाश दिया। हमने यह व्यवस्था मान्य की कि सत्य, अहिंसा और संयम की मर्यादा में रहकर हर व्यक्ति अपनी रुचि के अनुसार मत और अनुभव की दोनों समान पवित्र धाराओं में एक या दूसरी का चयन कर ले और अपने कर्तव्य का पालन करे। इस व्यवस्था के अन्तर्गत लोकसेवक की स्वतंत्रता तथा सर्व सेवा संघ की एकता, दोनों की रक्षा हुई। देश के सामने सर्वोदय विचार का एक उत्तम नमूना पेश हुआ। वास्तव में सर्वोदय प्रक्रिया में मतभेदों को इस प्रकार उदारता और सहिष्णुता से सहन करने के सिवा और मार्ग भी क्या हो सकता है?

स्वतंत्रता के बाद इतिहास ने यह सिद्ध कर दिया है कि जो चेतावनी बापू ने अपने अंतिम वसीयतनामे में दी थी, वह कितनी सही थी, आज देश में लोक-चेतना जिस तरह कुंठित दिखायी देती है, तथा बढ़ी-चढ़ी अनीति के मुकाबले भी प्रतिकार-शक्ति का जो सर्वथा अभाव है वह इस बात का प्रमाण है कि उस चेतावनी की उपेक्षा हमारे लोकतंत्र के लिए कितनी खतरनाक सिद्ध हुई है। बापू ने कहा था कि 'भारत में लोकतंत्र के विकास में, प्रभुत्व के लिए सैनिक शक्ति तथा नागरिक शक्ति में टक्कर अनिवार्य है।' बिहार की टक्कर बापू की चेतावनी को चरितार्थ कर रही है तथा सत्याग्रह के शान्ति-दर्शन का एक नया स्वरूप प्रस्तुत कर रही है। एक ओर सैनिक शक्ति से लैस राज्य शक्ति है जो अपनी जन-विरोधी रीति-नीतियों को लेकर नागरिक अधिकारों को कुचलने पर उतारू है, दूसरी ओर दुखी और क्षुब्ध जनता है जो अब सत्ता द्वारा अधिकारों के दुरुपयोग का प्रतिकार करने के लिए निकल पड़ी है। इस प्रकार इन दो शक्तियों की टक्कर लोकतंत्र की ऐतिहासिक स्थिति के रूप में प्रकट हुई है। इस स्थिति को न पहचानना परिस्थिति के संकेत से आँखें मूंदना है। एशिया और अफ्रीका के तमाम देशों के बीच अब अकेले भारत में यह अवसर बच गया है कि जनता संगठित होकर इस टक्कर में अग्रसर हो और 'लोक' को बढ़ते हुए दानवीय 'तंत्र' से बचा ले। नागरिक-शक्ति बनाम सैनिक-शक्ति या राज्य-शक्ति का प्रश्न प्रचलित अर्थ में सत्ता के लिए दलीय स्पर्धा का नहीं है; वास्तव में यह प्रश्न तो मूलभूत सामाजिक शक्तियों की प्रतिस्पर्धा का है। एक की विजय में लोकतंत्र का अस्तित्व सुरक्षित है, दूसरी की विजय में उसकी समाप्ति निश्चित है। इसलिए आज की परिस्थिति में मेरी यह मान्यता है कि लोकतंत्र में विश्वास रखनेवाले के लिए जनता के पक्ष में खड़ा होने के सिवाय दूसरा विकल्प नहीं रह जाता। बिहार-आंदोलन में विरोधी दलों का सहयोग एक आगन्तुक स्थिति है, उससे मूल संघर्ष का चरित्र प्रभावित नहीं होता। बल्कि परिस्थिति धीरे-धीरे दलों के ही चरित्र को प्रभावित कर रही है। दलों के सहयोग के भरोसे संघर्ष शुरू नहीं हुआ था, और न उनके सहयोग पर संघर्ष आज भी निर्भर है। संघर्ष व्यापक है, और विरोधी दलों के विरोध को भी एक क्रांतिकारी आयाम दे रहा है।

स्पष्ट है कि लोकतंत्र में नागरिक-शक्ति बनाम सैनिक-शक्ति की लड़ाई केवल बिहार तक सीमित नहीं रह सकती। देश की राज्य-शक्ति और बिहार की राज्य-शक्ति अलग-अलग या स्वतंत्र नहीं है, यह विवाद का विषय नहीं है। राज्य-शक्ति ही अब जन विरोधी हो गयी हो तो उस पर अंकुश अकेले बिहार में नहीं लगाया जा सकता। सत्ता का दुरुपयोग देश-व्यापी है, इसलिए प्रतिकार भी देश-व्यापी होगा। भ्रष्टाचार, महँगाई, बेरोजगारी, कुशिक्षा, आदि समस्याएं लगभग समान रूप से सार्वत्रिक हैं। उनका सीधा संबंध देश में चलनेवाली सरकारी रीति-नीति से है। इसलिए यह कहना कि इनसे मुक्ति के लिए चलनेवाले जन-आंदोलन किसी एक राज्य में सीमित रहें, कोई अर्थ नहीं रखता। अनीति और अन्याय के विरुद्ध उठनेवाली आवाज को हम-आप चाहें तो भी नहीं रोक सकेंगे? लेकिन बिहार की तरह हर राज्य में मंत्रि-परिषद् के इस्तीफे और विधानसभा को भंग करने की मांग की जाये, यह कभी किसी ने नहीं कहा। बल्कि यही कहा गया कि हर राज्य में आंदोलन का कार्यक्रम वहां की स्थानीय परिस्थिति में से विकसित होगा। लेकिन पद्धति चाहे जो हो, जागृत जनता जब प्रश्न पूछना शुरू करेगी तो उसके प्रतिनिधि उत्तर देने की जिम्मेदारी से मुक्त नहीं हो सकते। प्रश्न पूछना नागरिक का जन्म-सिद्ध अधिकार है और उत्तर देना प्रशासन और प्रतिनिधि का पहला कर्तव्य।

यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि बिहार की जनता मात्र सत्ता-परिवर्तन के लिए आंदोलन नहीं कर रही है। वह चाहती है कि एक ओर वर्तमान सत्ताधारी बदलें, सरकार की रीति-नीति बदले, और दूसरी ओर समाज बदले, संपूर्ण व्यवस्था बदले। "जनता सरकार" की कल्पना इसी संपूर्ण क्रान्ति के माध्यम के रूप में की गयी है। छात्र-युवा-संघर्ष वाहिनी संपूर्ण क्रांति के लिए संघर्ष करनेवाली संगठित छात्र-युवा-शक्ति का ही नाम है। जिस संपूर्ण क्रांति को जनता के सामने प्रस्तुत किया जा रहा है उसकी प्रेरणा, भूमिका, और दिशा गांधी के 'ग्राम गणराज्य' और विनोबा के 'ग्रामस्वराज्य' की ही है जिसकी ओर हम इतने वर्षों से खोजते चले आ रहे थे, जिसके लिए हमने आज तक विचार-परिवर्तन का प्रयत्न किया था उसी के लिए अब हम परिस्थिति परिवर्तन का प्रयत्न कर रहे हैं।

वास्तव में यह आंदोलन सत्ता और जनता के बीच की खाई को पाटने के लिए है, क्योंकि यदि यह खाई न पटी, और एक ओर क्षोभ बढ़ता गया और दूसरी ओर दमन, तो फासिस्टवाद या घोर अराजकता के सिवाय दूसरी किसी स्थिति की कल्पना नहीं की जा सकती। यह संकट काल्पनिक नहीं है इसके काले बादल क्षितिज पर उठते देखे जा सकते हैं। देखना ही न चाहें, या देखकर भी छिपाना चाहें, उनकी बात अलग है। इस संकट को टालने का एक ही उपाय है—वह यह कि देश भर में जनता अपने 'स्व' को पहचाने और अपने 'स्वत्व' को बचाने के लिए खड़ी हो जाये। खड़े होनेवालों की अगली कतार में छात्र और युवक होंगे। युवकों की शक्ति अणु-शक्ति से अधिक विस्फोटक है। अणुशक्ति का शांतिपूर्ण प्रयोग जब होगा तब होगा, लेकिन यह निर्विवाद है कि बिहार आंदोलन ने युवा-शक्ति को एक नया मोड़ दिया है, एक नया ध्येय, एक नयी

दृष्टि, एक नयी कार्य-पद्धति दी है। युवक समझने लगा है कि उसे अपने विद्रोह को व्यापक सामाजिक प्रयोजन के साथ जोड़ना है। हम मानते हैं कि नयी कल्पनाओं से प्रेरित यह युवक सामाजिक और सर्जनात्मक अहिंसा के विकास में देश और दुनिया के लिए एक श्रेष्ठ देन सिद्ध होगा। सत्य और अहिंसा में माननेवाले इस समय कसौटी पर हैं कि वे इस नयी सम्भावना को पहचानते हैं, या नहीं।

हमारा यह मानना है कि अहिंसा की रक्षा, तथा देश की एकता और अखण्डता की रक्षा जनता के हाथों में है, न कि उस नेतृत्व और व्यवस्था के हाथ में जो भ्रष्टाचार और अकर्मण्यता से जर्जर हो चुकी है, तथा देश की समस्याएं हल करने की जिसकी अक्षमता सिद्ध हो चुकी है। व्यवस्था का निकम्मापन संदेह से परे पहुंच चुका है। हमारे मन में यह शंका है, जो दिनों-दिन अधिक दृढ़ होती जा रही है, कि यदि राजनीति इसी तरह काले रुपये के हाथ बिकती रही, और प्रशासन जन-जीवन से हटता चला गया तो यह सरकार संविधान की दुहाई देकर और बंदूक का भय दिखाकर भी राष्ट्र की एकता और अखण्डता की रक्षा ज्यादा दिनों तक नहीं कर सकेगी। स्पष्ट है कि ऐसी सरकार देश के लिए खतरा सिद्ध होगी। इसलिए हम देश के प्रति अपना पुनीत कर्त्तव्य मानते हैं कि सत्ता को जनता के अंकुश के भीतर लाने के लिए अभियान में अपना "रोल" भरपूर अदा करें। हमारा यह निश्चित मत है कि राजनीति की जो गतिविधि है और सरकार अपनी जिस गलत रीति-नीति से मौजूदा सामाजिक ढांचे को संरक्षण दे रही है अगर वह कायम रह गयी तो एकता और अखण्डता का नारा एक भयंकर भ्रम से कुछ अधिक सिद्ध नहीं होगा। हम उस भ्रम में नहीं पड़ना चाहते। हमने सामान्यजन की शक्ति में श्रद्धा रखी है, जो सर्वोदय की मूल श्रद्धा है, और उसी श्रद्धा की डोरी पकड़कर हम आगे बढ़ रहे हैं। इससे अधिक हम क्या कहें?

हम अपने साथियों को, तथा मौनावस्था में पूज्य विनोबाजी को, इतना ही विश्वास दिला सकते हैं कि भले ही हमारा आचरण उन्हें आज सही न लगता हो किन्तु हम अपने प्रति और सर्वोदय के प्रति ईमानदार हैं। हर लोक-सेवक के लिए अपने अंतरात्मा के प्रकाश में चलने की व्यवस्था पिछले संघ-अधिवेशन में हुई थी, और हम उसी दिशा में चल रहे हैं जिसमें हमारी अन्तरात्मा का प्रकाश हमें ले जा रहा है।

(ता. १२ मार्च को सर्व सेवा संघ अधिवेशन में अध्यक्षीय भाषण)

हमें विदा दीजिए

—राममूर्ति

पिछले कुछ महीनों में बिहार-आन्दोलन को लेकर सर्व सेवा संघ में तीव्र मतभेद चल रहा है। १२ जुलाई, ७४ को पूज्य विनोबाजी ने इस मतभेद को मिटाने की दृष्टि से एक सूत्र दिया था, जिसमें उन्होंने *ग्रामस्वराज्य आन्दोलन तथा बिहार-आन्दोलन*, दोनों को संघ के काम के तौर पर स्वीकार किया था। उन्होंने दोनों को गंगा और ब्रह्मपुत्र जैसी पवित्र धाराएं बताया था तथा यह व्यवस्था दी थी कि जिसको जो काम करना पसंद हो वह उसे करें, जो लोग दोनों काम करना चाहते हैं वे दोनों करें।

दिसम्बर, ७४ में जब गाजीपुर में प्रबंध समिति की बैठक हुई तब फिर से कुछ मित्रों की ओर से यह कहकर आन्दोलन का विरोध किया गया कि जयप्रकाशजी ने १८ नवम्बर के भाषण में बिहार में अगले चुनाव में संघर्ष पक्ष का नेतृत्व करने की मांग का निश्चय घोषित करके लोकसेवा की पक्ष-मुक्ति की निष्ठा भंग की है। उन्होंने अन्य राज्यों में तथा दिल्ली में आन्दोलन का मोरचा ले जाने की बात करके आन्दोलन के दायरे को बढ़ाया है, जिसके कारण १२ जुलाई की स्थिति बदल गयी है। अतः यह आन्दोलन सर्व सेवा संघ की मूल नीतियों के विरुद्ध है और संघ के सेवकों को *इसमें भाग नहीं लेना* चाहिए। जो लेना ही चाहें उन्हें संघ से अलग हो जाना चाहिए।

गाजीपुर की बैठक के बाद ११, १२, १३ दिसम्बर, ७४ को संघ के अध्यक्ष तथा उनके साथ कुछ अन्य सदस्य विनोबाजी से मिले और उनके साथ चर्चा की। विनोबाजी ने अपना यह मत प्रकट किया कि चुनाव की बात आ जाने से बिहार के जन आन्दोलन के चरित्र में परिवर्तन हो गया है। उन्होंने यहां तक कह दिया कि यदि संघ चुनाव में पड़ेगा तो वह उससे सम्बन्ध तोड़ देंगे और अपना उपवास-दान बंद कर देंगे। हमारी ओर से उन्हें समझाया गया कि प्रधानमंत्री की चुनौती के कारण बिहार का चुनाव

भावनाएँ खबरें नहीं बनतीं

(सर्व सेवा संघ के पवनार अधिवेशन की रपट—प्रभाष जोशी द्वारा)

सर्व सेवा संघ विनोबा के साथ भी महीनों के लिए मौन हो गया है। बिहार आंदोलन को लेकर संघ में चले मतभेद का शायद इससे बेहतर कोई हल हो नहीं सकता था। संघ अगर राजनीतिक पार्टी या आम किस्म का संगठन होता तो यह विवाद कभी का खत्म हो गया होता। आंदोलन को सही मानने और उसमें काम करनेवालों की गिनती उसका विरोध करनेवालों से कई गुना ज्यादा थी। लेकिन संघ बहुमत—बहुमत के आधार पर फैसले नहीं करता। किसी भी प्रस्ताव का अगर कोई भी लोकसेवक विरोध करे और अपना एतराज वापस लेने को तैयार न हो तो वह प्रस्ताव मंजूर नहीं हो सकता। बिहार आंदोलन में लोकसेवकों के भाग लेने और उसे संघ का कार्यक्रम मानने पर सर्वानुमति न पिछले बरस जुलाई में हो सकी थी न इस बार हो सकी। आंदोलन के समर्थकों और विरोधियों ने इस्तीफे दे दिये। बाकी के प्रतिनिधि फिर भी बिहार आंदोलन के समर्थन का प्रस्ताव सर्वानुमति से पास कर सकते थे। लेकिन उन्होंने नहीं किया और संघ की गतिविधियां २५ दिसम्बर तक के लिए स्थगित कर दीं। संघ का कामकाज अब एक ट्रस्टी-मण्डल चलायेगा। लोकसेवक अपनी निजी हैसियत से अपनी-अपनी अन्तरात्मा की आवाज के मुताबिक काम करने के लिए आजाद होंगे। पिछले आठ महीनों में दूसरी बार संघ विभाजन और विसर्जन की कगार पर पहुंच कर लौटा है। पिछले साल जुलाई में विनोबा ने उसे बचाया था। इस बार खुद लोकसेवकों ने अपने मिलाजी संगठन के बुनियादी सिद्धान्तों की रक्षा की।

पवनार में १२ से १४ मार्च तक हुए संघ के इस छमाही और तूफानी अधिवेशन की यह बड़ी अहम समाप्ति थी। बाहर से देखनेवालों के लिए अधिवेशन एक अजीबोगरीब तमाशा था। खबरों के नाते इसमें बहुत कुछ था। पहले ही दिन के भाषण में जे. पी. का प्रबंध समिति और दूसरी समितियों से इस्तीफा देना और विनोबा के प्रचारित रवैये से असहमत होते हुए भी उनकी इच्छा के अनुसार संघ से छुट्टी लेना, दूसरे दिन गुजरात के भूतपूर्व राज्यपाल श्रीमन्नारायण के फार्मूले पर सबको सहमत होने के आसार नजर आना पर आखिर में उसका नामंजूर होना और प्रबंध समिति के २४ में से २१ सदस्यों का इस्तीफा देना, तीसरे दिन विनोबा का जे. पी. से मिलने आना और मौन तोड़ना, विसर्जन के बजाय संघ के मौन धारण करने की संभावना बढ़ना पर फिर आंदोलन विरोधियों का इस्तीफा देना और अधिवेशन से उठकर जाना, विसर्जन का अनिवार्य होना लेकिन फिर मौन का प्रस्ताव सर्वानुमति से पास होना—सब अखबारों की सुर्खियों के लायक थे। नागपुर और वर्धा से आनेवाले पत्रकारों के लिए काफी मसाला था पर वे किसी भी संभावना को मानकर नहीं चल सकते थे। 'कोई भरोसा नहीं तुम जानते हो एक भी आदमी खड़ा होकर ना कर देगा और खबर झूठी पड़ जायेगी' दिल्ली से आये एक अखबारवाले को जाने से रोकते हुए नागपुर के पत्रकार ने कहा। अखबारों ने सब छापा लेकिन इन सुर्खियों के अलावा बहुत कुछ था जो खबर नहीं बन सका। और शायद वही इस अधिवेशन की जान थी।

जे० पी० ने इस्तीफा दिया और छुट्टी ली लेकिन संघ से नाता तोड़ना उनके लिए बड़ी चीज थी और वे बेहद दुखी थे। प्रबंध समिति १२ मार्च की रात डेढ़ बजे तक चली। अनौपचारिक बैठक किसी संघ की बैठक के बजाय एक घरेलू संकट पर पारिवारिक मिलाप या विलाप की तरह थी। सब भावना से भरे हुए और दिल खोल कर बोलते हुए, रोते और हंसते। फिर भी अपनी बात से एक इंच भी टस से मस होने को तैयार नहीं। अधिवेशन में खुले आम एक दूसरे पर आरोप और एक दूसरे की मंशा पर शंका। इस्तीफा देना और रोना और रोते हुए को समझाने के लिए विरोधी का आना। जे० पी० का वर्धा की आमसभा में कहना कि मेरे अन्दर आंसुओं की बरसात हो रही है। पर आंदोलन को किसी भी तरह गैर-सर्वोदयी मानने से इन्कार करना। विनोबा का मौन तोड़ना, जे० पी० से सब सुनना फिर भी अपनी बात पर कायम रहना। जे. पी. के पवनार से जाते समय अपनी कुटिया से बाहर निकलना व नमस्कार करना और दूर तक उनके लिए ताली बजाना और दूसरों से बजवाना। मौन का प्रस्ताव पास होने के बाद सबका तनाव रहित होना, गले मिलना, रोना और अपने विवेक से काम करने के लिए चले जाना।

भावनाएं खबरें नहीं बनतीं। लेकिन भावना अगर निकाल दी जाय तो सर्वोदय समाज में ज्यादा कुछ बचेगा नहीं। सर्व सेवा संघ का यह पवनार अधिवेशन खबरों का नहीं कविता का विषय था। कई बार महाभारत के टुकड़े दोहराये गये। विनोबा ने मौन तोड़ा लेकिन कहा 'मेरा प्रण भीम का नहीं, कृष्ण का है।' सबके सब अपने-अपने पक्ष के लिए विनोबा के पास गये और उन्होंने सबको इशारों से अपनी बात पर अड़े रहने को कहा। राधाकृष्ण बजाज ने विनोबा से कहा—"यह लड़ाई आप ही करवा रहे हैं और मजा देख रहे हैं।" संघ के मन्त्री ठाकुरदास बंग ने कहा कि फूल-पत्ती पर हाथ लगाने से क्या होगा? जड़ तो विनोबा हैं और वे विरोध में हैं। फिर भी विनोबा ने तीन विकल्प सामने रखे—समर्थक इस्तीफा दें और छुट्टी लेकर हट जायें, विरोधी हट जायें या फिर संघ का विसर्जन कर दिया जाये। लेकिन किसी बात पर उन्होंने कोई आदेश नहीं दिया हालांकि सभी लोकसेवक उन्हें अपना सर्वोच्च सेनापति मानते हैं।

विनोबा सर्वोदय के इस महाभारत के कृष्ण भी थे भीम भी थे और धृतराष्ट्र भी। अपनी-अपनी पसंदगी और सुभाव के अनुसार विनोबा को दोष देना या उन्हें एकदम सही मानना आसान है। काले को सफेद से अलग करने में कोई दिक्कत नहीं होती। लेकिन दुनिया में सिर्फ दो ही रंग नहीं हैं। काले और धौले के बीच और भी कई रंग हैं। विनोबा ने सबको अपने स्वतन्त्र-बुद्धि विवेक

को भजमाने का न सिर्फ मौका दिया उन्हे प्रोत्साहित भी किया। अपनी राय भी रखी और अपनी हस्ती को अपने ही लोगो के द्वारा नकारा जाना भी अपने ही आश्रम में देखा। जिन लोगो ने विनोबा की राय को मानने से इन्कार किया उन्होने भी कहा कि यह शक्ति उन्हे 'बाबा' से मिली और जो लोग विनोबा की बात पर अड़े रहे वे तो मानते ही थे कि बहुमत और अपने मित्रो का सामना करने की ताकत उन्हे 'बाबा' से मिली है।

लेकिन 'बाबा' कोई अजूबा नही हैं। उनके विचारो मे सातत्य है और वे शुरू से मानते आये हैं कि सरकार के विरोध मे आदोलन करना ठीक नही है। वे मानते हैं कि सभी समस्याओ का हल सभी के सहयोग से हो सकता है। आपको अपने दुश्मन से भी मदद लेना चाहिए। संघर्ष नही सहयोग उनके दर्शन का आधार है। लेकिन अपने दर्शन से असहमत होने की छूट उन्होने सबको दी। सघ को विसर्जन से बचाने के लिए अपने विचारो से अलग भी गये।

जैसे पिछले बरस जुलाई में वर्धा के महिलाश्रम मे हुए संघ के अधिवेशन मे भी बिहार आदोलन के समर्थको और विरोधियो के बीच की फूट पूरी तरह जाहिर हो गयी थी इस बार की तरह तब भी प्रबंध समिति के सदस्यो ने इस्तीफा दे दिया था। मेल जोल के सब गली-दरवाजे बन्द हो गये थे। विनोबा का विरोध सबको मालूम था, फिर भी सब उनके पास गये और उन्होने सत्य, अहिंसा और सयम की मर्यादा रख कर लोकसेवको को आदोलन में भाग लेने की छूट दी। भूदान-ग्रामदान और बिहार आदोलन को गगा और ब्रह्मपुत्र की तरह पवित्र बताया। लेकिन अपनी राय कायम रखी। विनोबा का यह फार्मूला चलता रह सकता था। नहीं चला तो इसका कारण एक घटना का अलग-अलग मतलब निकालना है।

पवनार के अधिवेशन मे मतभेद का मुद्दा १८ नवम्बर को पटना की सभा में जे० पी० का प्रधानमन्त्री की चुनौती मन्जूर करना था पिछले बरस १ नवम्बर को दिल्ली में प्रधान मन्त्री और जे० पी० की बातचीत हुई थी जिसमे कोई समझौता नहीं हुआ। इस बातचीत के बाद लालकिले की एक सभा मे श्रीमती गांधी ने कहा कि वे बिहार विधानसभा के विसर्जन जैसी असवैधानिक और गैरप्रजातान्त्रिक माग को मानने की बजाय इस्तीफा देना पसन्द करेगी। आदोलनकारी अगर मानते हैं कि जनमत उनके साथ है तो उन्हें धीरज रखना चाहिए। ऐसी बातो का फैसला सडको पर नहीं चुनाव मे ही हो सकता है। १८ नवम्बर को जे० पी० ने पटना मे कहा कि बिहार के लोगों की तरफ से वे प्रधान मन्त्री की चुनौती मन्जूर करते हैं। अगले चुनाव मे सिर्फ दो पक्ष होगे—आदोलन का विरोध करनेवाली कांग्रेस और सी.पी. आई और आदोलन करनेवाले लोग छात्र और समर्थक पार्टियाँ। बिहार की जनता बतायेगी कि वह किस तरफ है। सर्वोदय के जो लोग शुरू से बिहार आदोलन के खिलाफ थे उन्होने माना कि जे० पी० अब चुनाव मे पड गये हैं, उन्होंने जे० पी० की घोषणा विनोबा तक पहुचायी और कहा कि इससे आदोलन के चरित्र में फर्क आया है और १२ जुलाई को विनोबा ने जो व्यवस्था दी वह भग हो गयी है। जे० पी० और लोकसेवक चुनाव में अगर पडेगे तो उन्हें कांग्रेस और सी पी आई का विरोध करना पडेगा। और वे खुद एक पार्टी हो जायेंगे। उन्होने यह भी कहा कि आदोलन को सारे देश मे फैलाया जा रहा है। देशव्यापी संघर्ष की हालत बनायी जा रही है। इस हालत पर फिर से विचार और फैसला करना अनिवार्य है।

जे० पी० और आदोलन मे लगे सर्वोदय कार्यकर्ताओ ने कहा कि प्रधानमन्त्री की चुनौती स्वीकार करने से आदोलन का चरित्र नहीं बदला है। उसका लक्ष्य अभी तो व्यवस्था मे शातिपूर्ण अहिंसक तरीको से परिवर्तन करना है। जे० पी० ने चुनाव लडने का नहीं—जनमतसग्रह— का ऐलान किया है। वे चुनाव नही लडेंगे न सत्ता मे जायेंगे। उम्मीदवार सघर्ष समितियाँ खडे करेंगी और वे किसी पार्टी के नहीं जनता के उम्मीदवार होगे।

दिसम्बर '७४ मे गाजीपुर (उत्तरप्रदेश) मे प्रबन्ध समिति की बैठक हुई। जे० पी० के १८ नवम्बर के ऐलान पर विवाद और मतभेद उभर कर आये। बैठक के बाद ११, १२ और १३ दिसम्बर को सघ के अध्यक्ष और कुछ सदस्यो की विनोबा से पवनार मे चर्चा हुई। विनोबा ने कहा कि चुनाव की बात आ जाने से बिहार आदोलन के चरित्र मे परिवर्तन आ गया है। सघ अगर चुनाव मे पडा तो उससे सम्बन्ध तोड़ देंगे और अपना उपवासदान बन्द कर देंगे। विनोबा ने अपने तीन विकल्प सामने रख दिये। लेकिन संघ की एकता बनाये रखने के लिए उन्होने कहा कि बिहार आदोलन मे भाग लेनेवाले सघ से छुट्टी लेकर व्यक्तिगत हैसियत से काम करें। २५ दिसम्बर को विनोबा ने मौन लिया लेकिन इसके पहले बिहार आदोलन सम्बन्धी अपने विचार प्रकाशित करने की इजाजत सघ के सहमत्री नरेन्द्र दुबे को दे दी। नरेन्द्र दुबे ने एक पुस्तिका प्रकाशित की। उसके बारे मे आदोलन के समर्थको का कहना था कि बहुत सी बातें सन्दर्भ से हटाकर छापी गयी हैं। विरोधियो ने सघ के अधिवेशन की माग और अध्यक्ष सिद्धराज ढड्ढा ने सुझाव दिया कि विनोबा की तरह सघ भी मौन ले ले। विनोबा के छुट्टी के सुझाव पर वाराणसी मे आदोलन समर्थको ने विचार किया और दादा धर्माधिकारी से कहा, कि वे विरोधियो से बातचीत करके उन्हे समझायें कि हम लोग छुट्टी लेने को तैयार हैं। विरोधी सर्व सेवा सघ को चलायें। दादा धर्माधिकारी ने लखनऊ मे विरोधियो से बातचीत की। सघ सभालने का सुझाव उन्हे मजूर नहीं हुआ क्यो कि दयानिधि पटनायक के अनुसार इसका मतलब यह होता कि "हम सघ पर कब्जा करना चाहते हैं। हमे नैतिक दृष्टि से यह सुझाव गलत लगा। हम सघ छोड़ने को तैयार थे।"

पवनार मे अधिवेशन के पहले प्रबन्ध समिति की बैठक मे आदोलन समर्थको ने छुट्टी लेने की बात कही लेकिन विरोधियों ने छुट्टी की परिभाषा करते हुए कहा कि उन्हें त्यागपत्र देना होगा और जब वे वापस सघ मे आना चाहेंगे तो उनकी कथनी-करनी की समीक्षा के बाद ही उन्हे लिया जायेगा। समर्थकों को लगा कि यह बात 'सघ से निकल

मे मैंने लगाये कि शहर मे कितनी जगह कौन-से कार्यक्रम हो रहे हैं। वडोदा मे उस वक्त २७५ जगहो पर धरना, अनशन और जुलूस आदि के कार्यक्रम हो रहे थे पर मुहल्ले के एक कोने मे होनेवाले कार्यक्रम का पता उसी मुहल्ले के दूसरे कार्यक्रमवालो को न था। मोजलपुर रोड पर एक धरना चल रहा था। लडके आराम से कोकाकोला पी रहे थे। बगल मे रेकार्ड प्लेयर पर फिल्म के गाने बज रहे थे। गरमी के दिन थे इसलिए एक बडा पखा भी लगाया गया था। जासूसी उपन्यास की किताबें लेकर लडके आराम से धरने पर बैठे थे। एक महीने से ऐसा ही चल रहा था। किसी ने महगाई क्या चीज है, भ्रष्टाचार क्या है, देश का विकास कैसे होगा, विषमता कैसे दूर होगी, इस पर न बहस की, न शिविर चलाये। आन्दोलन के प्रारम्भ से जासूसी उपन्यासो और गानों ने पटेल सरकार के पतन तक लडको का साथ नहीं छोडा। यही हालत थी अहमदाबाद मे।

बिहार मे ऐसा नही है क्योंकि जय-प्रकाशजी ने आन्दोलन का नेतृत्व ग्रहण करते ही छात्रों को कुछ बातें बतायीं। उन्हे सोचने-करने की खुराक दी। दूसरे बिहार और गुजरात का फरक भी है। गुजरात ज्यादा खुशहाल है और वहा लड़के शहरी हैं। बिहार मे शहर के लडके भी पूरे शहरी नही।

संगठन क्या होता है ? किसी एक घटना को जानने के बाद जिन लोगो की प्रतिक्रिया एक होगी, उन लोगो का बनता है सगठन। किसी गरीब की हत्या हुई, किसी पिछडे आदमी पर या औरत पर अत्याचार हुआ—यह गलत बात है इसका मुकाबला करना होगा, देश की जाति प्रथा और योनि कटघरे को तोडना होगा, ऐसी प्रतिक्रिया करने वाले जितने लोग होगे उनका एक सगठन बनेगा। तरह तरह के लोग होगे जो अलग-अलग राय देगें। कोई कहेगा यह तो कोई अन्याय नही, कोई कहेगा ऐसा तो सदियो से चलता आया है, इस पर बिगडने की जरूरत नहीं। कोई खोज लेगा अन्याय करनेवाले की जाति और उस पर ही हल्ला बोल देगा। इसका मुकाबला करना होगा जाति और योनि के कठघरो को तोडना होगा, ऐसी प्रतिक्रिया करनेवालों को छोडकर बाकी के लोग 'सगठन' नही हैं, उन्हें सगठन के दायरे मे लाना होगा।

इसलिए आन्दोलन के समग्र विचार को लोगो तक ले जाना होगा—शिविर बहसो, सभाओ, पुस्तिकाओ के माध्यम से। विचार से सहमत होनेवाले लोगो का संगठन फैलता ही जायेगा।

बिहार मे घूमते समय 'आन्दोलन किस नतीजे पर पहुँचेगा, कब तक चलेगा' इस बारे में हर गांव में अलग-अलग राय थी। छात्रो की यह समझना है कि आन्दोलन कई वर्षों तक चलाना पडेगा। चुनाव कितने भी हों, आन्दोलन के नेताओ का कुछ भी हो, इसे चलाना ही होगा। सदियो से चलती आयी बुराइयों को दूर करना आसान नही। यह बात सारे छात्रो तक पहुची नही है। इसीलिए कोई छात्र अपनी परीक्षा का त्याग काफी समझता है, कोई अगले चुनाव के बाद आराम करना चाहता है, कोई एक दो बार जेल जाना ही पर्याप्त समझता है।

आन्दोलन के सगठन और क्रान्ति के सगठन मे काफी फर्क होगा। आन्दोलन किसी एक बिन्दु पर खतम होगा लेकिन क्रान्ति चलती ही रहेगी। क्रान्ति के सगठन की आदतें जिन्दगी की आदतें बन जायेंगी। जो काम ५ रुपये मे हो सकता है उस पर २५ रुपये खर्च करना गलत बात होगी। पैसा बचाना सिर्फ आज के परिवेश मे ही जरूरी नही है बल्कि सदा जरूरी और अनि-वार्य रहेगा। जो काम १५ पैसे के पोस्ट कार्ड से हो सकता है वह समय पर न करने पर २० गुना ज्यादा खर्च कर तार से करना पडता है। पटना के केन्द्रीय सघर्ष कार्यालय से परचा या पोस्टर लाने के लिए ४ लडके निकल पडते हैं जबकि एक ही लडके के जाने से यह काम पूरा हो सकता है। ऐसी बहुत सारी छोटी-छोटी चीजों पर बहुत पैसा खर्च होता है। हममें से हरेक को गरीब गृहिणी की तरह हर चीज की नाप-तोल रखनी होगी।

आन्दोलन की बात लोगो तक पहुंचाने या संगठन बनाने के लिए हम शिविरो का आयोजन करते हैं। ५० व्यक्तियों तक का ही शिविर ज्यादा अच्छा होता है। ऐसे शिविरो का आयोजन करने मे खर्च बचाने के लिए ही नही प्रचार और कुशलता के लिए भी यह जरूरी है कि जितने दिनो शिविर चले (२ या ३ दिन बस) उसमे भाग लेनेवाले बाहरी लोगो को गाव के परिवारो के बीच बाट दिया जाये। शिविर चलने तक वह व्यक्ति हर दिन परिवार के साथ ही सुबह-शाम का खाना खाये। ऊची जाति का व्यक्ति पिछडी जाति या आदिवासी परिवार मे भेज दिया जाये और पिछडी जाति का व्यक्ति ऊची जाति के परिवार मे। जाति तोडनेवाली बात इससे ज्यादा ठीक से समझ मे आयेगी।

११ अक्टूबर के सत्याग्रह मे भबुआ-चांद से ३८५ लोग गिरफ्तार हो भागलपुर जेल मे पहुचे। इनमें से १५३ हरिजन और ८ मुसल-मान थे, बाकी ऊची जाति के। पहले १-२ दिन जब हरिजन लडके ने खाना परसा तो हो हल्ला हुआ। कई लोगो ने खाने से इनकार किया। इस बात पर जेल मे शिविर चला। 'उनको' समझाया गया। आखिरी दिनो मे एक मुसहर लडके के हाथ से सब लोग खाने लगे। गये २७ वर्षो म जो नहीं हुआ वही साथ रहने से हो गया। आरा मे भी छात्रो ने मुझे कहा कि जेल मे हिन्दू-मुसलमान वाली आपस की गलतफहमी साथ रहने से खतम हो गयी, एक लडके ने तो यहा तक कहा कि 'अब हिंदू और मुसलमान वाली दीवार कम से कम आरा शहर मे गिर गयी है।'

शिविर आयोजन करनेवालो के लिए एक चुनौती बन जाता है। गाव के आम आदमी को उन्हें आदोलन का सही मतलब समझाना पडेगा और तब वह आदमी अपने घर तीन दिन किसी और जाति के व्यक्ति को खाना देने के लिए तैयार होगा। आंदोलन के बारे मे समझाते-समझाते आयोजक कार्यकर्ता जब लोगो से सही सम्पर्क करने का काम करता है तब देश के सारे सवाल वह धीरे-धीरे समझ जाता है। इससे और अच्छी शिक्षा कोई हो ही नहीं सकती। विश्वविद्यालय में कोई अध्यापक राज्यशास्त्र, समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र जितना जानता है उससे कई

गुना ज्यादा कार्यकर्ता जानने लगता है। परिवारों में लोगों को बाँट देने से खाने-पीने के इन्तजाम में आयोजक कार्यकर्ता अटके पड़े नहीं रहेंगे और अपना पूरा समय शिविर में दे पायेंगे। समय की पाबन्दी पर गांधीजी ने बहुत जोर दिया है। सुबह शाम का खाना किसी और के घर होने के कारण शिविर में पहुंचना, ठीक समय पर उसे खत्म करना, समय की पाबंदी जान कर लम्बे-चौड़े भाषण की आदत (औरों की मुसीबत) छोड़ना, आसानी से हो सकेगा। हम अनुशासन की आदतें डालनी ही होंगी।

हिसाब-किताब ठीक तरह से रखने की आदत बहुत जरूरी है। संगठन के पैसे का हिसाब रखने का मतलब यह नहीं कि संगठन को अच्छे एकाउण्टेंट (हिसाब किताब रखने वाले) पैदा करने हैं। आंदोलन वाणिज्यशास्त्र की शिक्षा देने के लिए नहीं है। दस रुपये का हिसाब भी क्यों न हो, वह जिम्मेवारी का प्रतीक है। लोग एक रोटी कम खाकर संगठन को पैसा देते हैं, किसी अच्छे सार्वजनिक काम के लिए, नेता की शादी के लिए नहीं। इसलिए इस पैसे का पूरा ब्यौरा जनता को देना ही होगा ताकि उसका हम पर भरोसा हो। खर्च लिखने की आदत से लापरवाही से उत्पन्न होनेवाली भूलें नहीं होंगी।

राजनीतिक दलों को चुनाव और प्रदर्शन के वक्त पैसे देकर गुण्डों को साथ रखने की आदत पड़ गयी है। कोई भी राजनीतिक दल इन पैसों का हिसाब नहीं देता। शराब पर खर्च किया गया है। अगर हर खर्च का हिसाब देना हो तो इसको छिपाना मुश्किल होगा। संघर्ष समितियों को सही हिसाब रखने और समय-समय पर उसे जनता के सामने रखना होगा। आन्दोलन में पैसा हाथ में आने के बाद अपना घर ठीक करने का काम इक्के-दुक्के लोगों ने किया है। यदि संगठन यह ध्यान में रखे कि आंदोलन किसी व्यक्ति के लिए या किसी व्यक्ति के खिलाफ नहीं है, सम्पूर्ण क्रांति के लिए है तो ऐसे आदमियों को, उनके कितने भी अच्छे निजी रिश्ते क्यों न हों, ठीक रास्ते पर लाया जा सकता है। ऐसे लोगों को अनदेखा करना गलत होगा। हमें पिछले २७ वर्ष के अनुभवों से सबक लेना होगा।

नेतागिरी संगठन को चौपट कर डालती है। जो कार्यकर्ता ठीक तरह बोल सकता है, अच्छा लिख सकता है या लोगों को इकट्ठा करने की क्षमता रखता है वह जल्दी नेता बन जाता है। यह व्यक्ति धीरे-धीरे भाषणबाजी और बयानबाजी को छोड़ कर किसी चीज को महत्व नहीं देता। सुबह उठकर अखबार में अपना नाम ढूंढता है। हमें यह जानना चाहिए कि प्रतिद्विन्दी दल में अखबारों की साजिश रहती है। किस नेता को उछालना या किसको गिराना यह अखबारवाले उसूलों पर तय नहीं करते। इसलिए काम करना ही बचने का रास्ता है। फोटो या भाषण छपने से कुछ नहीं होनेवाला है, यह चीज हर कार्यकर्ता को समझनी होगी।

क्रांति सिर्फ भाषण से नहीं होती, उसके लिए अच्छा दफ्तर, सम्पर्क कार्यालय, घूमने वाले कार्यकर्ता, पत्रिका निकालनेवाले कार्यकर्ता, पैसा इकट्ठा करनेवाले लोग, सैकड़ों किस्म के काम करनेवाले लोगों की जरूरत रहती है। भाषण करनेवाले नेता का भाषण तभी हो पायेगा जब कोई साधारण कार्यकर्ता थोड़ा सा चन्दा जुटा पायेगा, दूसरा साधारण कार्यकर्ता रिक्शे में बैठ कर भाषण का प्रचार करते दिन भर धूप में घूमेगा, तीसरा कार्यकर्ता लाउड स्पीकर लगायेगा, चौथा दरी फैलायेगा, पांचवां साहित्य बिक्री करेगा आदि इसलिए भाषण देनेवाले नेता और दरी फैलानेवाले कार्यकर्ता का महत्व संगठन के लिए एक है। केवल काम का फरक रहेगा। यह ध्यान में रखना होगा कि सभी लोग अलग-अलग काम के जरिये क्रांति के लक्ष्य की तरफ जा रहे हैं।

यदि देश की समस्याएं ध्यान में रख कर संगठन का हर आदमी यह सोचे कि लाखों लोगों में मैं एक साधारण लेकिन महत्वपूर्ण आदमी हूं तो संगठन बनाने में आसानी होगी, आज तक इस बात को ठीक तरह से नहीं समझा गया। अब इस कमी को दूर करना ही होगा—शिविर करनेवाला, अपनी जगह पर लगान न देनेवाला, खुद भ्रष्टाचार से बचानेवाला, जेल जानेवाला, रचनात्मक काम करनेवाला, चन्दा इकट्ठा करनेवाला आदि सभी का एक समान महत्व है।

बिहार आंदोलन में अब जनता सरकारों के गठन के साथ रचनात्मक कार्यों पर भी जोर देना होगा। आदिवासियों की समस्या को लें। गोरे वायसराय से लेकर अधगोरे नेहरू तक सभी लोगों ने उनको आदमी से कम समझ कर उनका शोषण किया है। इस शोषण-अन्याय की परम्परा को तोड़ना है। कालेज में पढ़ते हुए भी आदिवासी छात्र को यह विश्वास नहीं होता कि उसके साथ न्याय होगा। साधन उपलब्ध होने पर भी वह अपना पिछड़ापन दूर नहीं कर पाता।

समाज में सभी लोग एक तरह के नहीं हैं। परिवर्तन में आस्था और विश्वास रखनेवाले बहुत सारे लोग ऐसे हैं, जो जेल नहीं जा सकते। खुलेआम सक्रिय संघर्ष में शामिल नहीं हो सकते। कुछ लोग ऐसे होते हैं जिन्हें एक जगह बैठकर रचनात्मक काम करने में अच्छा लगता है। ऐसे लोगों को जबरदस्ती रास्ते पर लाकर भाषण देने और जेल जाने के लिए मजबूर करना बेमतलब होता है। गुजराती में एक कहावत है 'जेनु काम तेनू थाय, बिजा करे तो गोता खाय।'—मतलब जिसका काम वही जाने, और करे तो चौपट हो जाये। इस तथ्य को ध्यान में रखकर संगठन को ऐसे आदमियों को भी बटोरना होगा।

दफ्तर से क्रांति नहीं होती, यह बात सही है। लेकिन अच्छे दफ्तर के बिना क्रांति नहीं हो पायेगी, यह बात भी सही है। किसी कार्यकर्ता को किसी जिले में वहाँ के आंदोलन का पता लगाने, संगठन की गड़बड़ी दूर करने के लिए जाना है। यदि इस कार्यकर्ता को यह न मालूम हो कि उसे किससे मिलना है, संघर्ष कार्यालय कहाँ है तो उसका कितना वक्त बरबाद होगा, कितनी ज्यादा परेशानी होगी।

कोई पत्रकार या आंदोलन की पत्रिका चलानेवाला आदमी दफ्तर में आता है। कितने कार्यकर्ता गिरफ्तार हैं, आंदोलन में आदिवासी पिछड़े और मजदूर कितने हैं, जानना चाहता है। गलत सरकारी आंकड़ों के मुकाबले में लोगों के पास सही जानकारी पहुंचाने के प्रयास में वह आंदोलन का अभिभावक है। लेकिन उसे निराश होना पड़ता है। सारे केन्द्रों में लगातार सम्पर्क रखकर,

अखबारों की कतरनें इकट्ठा रखकर यह काम आसानी से हो सकता है।

किसी काम के लिए जल्दी पैसा चाहिए। कहाँ से आयेगा पैसा ? जहा संगठन तगडा है वहीं से। संगठन कहां अच्छा है, यह मालूम होना चाहिए। पैसा बटोरने वाला अनिश्चित स्थिति में ऐसी जगह पहुंच जाता है जहा उस के जाने-आने में जितना पैसा खर्च हुआ उससे कम पैसा मिलता है। जहा पैसा इकट्ठा हो सकता था, वहा वह गया नहीं। यदि सारे केन्द्रों की जानकारी, कितने कार्यकर्ता हैं—उनमे वकील कितने हैं, डाक्टर कितने हैं, कितने ऐसे लोग सक्रिय हैं, यह सब दफ्तर में दर्ज हों तो काम आसानी से और ठीक से होगा।

हर प्रखंड स्तर पर, जिला स्तर पर दफ्तर जरूरी है और इन सबसे पटना के दफ्तर का पूरा सम्पर्क रहना चाहिए। हर सगठन में पत्रिकाओं का स्थान महत्वपूर्ण और अनिवार्य है।

आदोलन की पत्रिकाओं में हर जिले के सगठन और कार्यक्रम की जानकारी रहनी चाहिए। उनका वितरण [illegible] होना चाहिए। आदोलन का सही नक्शा, उसकी गति-प्रगति सक्रिय छात्र-युवकों को [illegible] क्षेत्र में ही मिल जानी चाहिए। O

(पृष्ठ २ का शेष)

बाद सब लोकसेवक अपने-अपने ढग से काम करेंगे। सब मौन हो गया है, किन्तु लोक-सेवक तो आपस में मिलते ही रह सकते हैं और विरोधी विचार रखते हुए भी विचार-विमर्श चलता रह सकता है। मुख्य बात यह है कि पारस्परिक सवाद नहीं टूटना चाहिए, मिलते-जुलते रहकर साफ मन से विचार-विमर्श होता रहे तो आगे-पीछे बहुत-सी गलतफहमिया साफ हो सकती हैं और विनोबा के मौन टूटने-टूटते तक हम लोगो के टूटे हुए मन फिर से जुड सकते हैं। दादा के शब्दों में 'यदि संसार भर में गुण-दर्शन का आग्रह रखनेवाले लोग' अपने बीच के गुणदर्शन भी न करने पायें तो क्या यह एक विचित्र बात नहीं कहलायेगी ? O

हमारी सत्ता का स्वरूप

(पिछले अंक से शेषांश)

इसके सिवाय १९५१-५२ और १९७१-७२ के बीच शासन की ओर से निजी सेक्टर को १९१५.६ और १३३३ करोड रुपये की प्रत्यक्ष मदद भी की गयी।

तीसरी बात यह हुई कि आय नीति में औचित्य नहीं बरता गया। १९४९ में मजदूरो को वस्तुओ के मूल्य का लगभग ५३.३ पारिश्रमिक मिलता था। १९६६ में यह घटकर ३४.७ हो गया। राष्ट्रीय श्रम आयोग ने कहा है, 'स्वतत्रता के बाद कल-कारखानो में लगे हुए मजदूरो का वेतन सचमुच में मिल सकने वाले वेतन के अनुपात में नही बढा है। उत्पादन की दृष्टि से भी देखा जाय तो वेतन में वृद्धि नही हुई। इतना ही नहीं, समूचे उत्पादन पर जो खर्च पडता है, उसके अनुपात में चुकायी गयी समूची मजदूरी पहले से कम हो गयी है और इसलिए उत्पादन से होने वाले लाभ में मजदूरो का हिस्सा बढने के बजाय कम हुआ है। उत्पादन के लिए लगातार श्रम लेना आवश्यक है किन्तु श्रमिकों को उसी के अनुपात में अधिक मजदूरी न मिलने के कारण वे अपने स्वास्थ्य का नहीं टिका पाये और इसलिए हमने देखा कि इन वर्षों में कल-कारखानो में दुर्घटनाएं अधिक हुई। १९६१ में इस प्रकार की दुर्घटनाएं १५६,६६६ हुई और उनकी दर प्रति हजार मजदूरो पीछे ५४.६७ थी जबकि १९७० में दुर्घटनाओं की सख्या २,३८,१४३ और प्रति हजार मजदूरो पीछे दर बढकर ७०.११ हो गई।

हमने ऊपर जो लेखा-जोखा प्रस्तुत किया है वह तो मुझे आम चलनेवाले कल-कारखाने आदि से सम्बन्धित है। दबे-छुपे जो उद्योग चलते हैं और कालाधन कमाने के लिए जिस प्रकार से काम किये जाते हैं, उनके विषय में हमने यहा कुछ नहीं कहा है। वाचू समिति ने कहा है कि १९६८-६९ में दबे-छिपे ढग से १४०० करोड रुपया पैदा किया गया। काले-धन की यह जबर्दस्त रकम सत्ता के ढांचे की नीति और अनीति का परिणाम है। काले-धन को कमाने की पूरी-पूरी सुविधाएं लोगों को प्राप्त है और यह आमतौर पर माना जाने लगा है कि सत्तारूढ दल को अलग-अलग मौकों पर भरपूर पैसा देकर कालाधन कमानेवाले लोग सरकार की नीतियो पर अपना प्रभाव डालते रहते हैं और इस तरह देश का शासन भी शोषण करनेवाले वर्ग में शामिल हो गया है।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि देश की आर्थिक गतिविधियों की बाग-डोर उस ऊचे तबके के हाथ में है जिसमें बड़े-बड़े पदो पर बैठे अफसरान, जिनमें सेना के अफसर भी शामिल हैं तथा उद्योगधन्धो में लगे हुए प्रबन्धकर्ता टैक्नोक्रैट और कालाबाजार तथा सट्टा आदि चलानेवाले लोग शामिल हैं। ये सब लोग आजादी के पहले के ऊचे तबके में से आते हैं और अब इनमें से अधिकांश ने अग्रेजी माध्यमों के स्कूलों से शिक्षा पाकर अपने को आम लोगों से और भी अलग-थलग कर लिया है। ये लोग देश और देश के बाहर जाकर उद्योग-धन्धो सम्बन्धी तथा तकनीकी जानकारी प्राप्त करते हैं और अगरचे इनके पास कोई प्रत्यक्ष राजनैतिक सत्ता नहीं होती, किन्तु फिर भी ये ऐसी जगहें हथिया लेने में सफल हो जाते हैं जहां से सामाजिक और आर्थिक विचार और सूत्र सचालन पर इनका असर पडता रहता है।

कहने के लिए भारत में सस्थाओ का रूप लोकतात्रिक है और सबको लिखने-पढने, धन्धा आदि चुनने का समान अधिकार है, किन्तु कुल मिलाकर सत्ता ने जो शक्ल अख्तियार कर ली है वह आत्यन्तिक रूप से लोक-तत्र की भावना विहीन और विषमतापूर्ण है। आर्थिक और राजनैतिक शक्ति उन्ही के हाथ में है जिनके पास अपार धन और अथाह सम्पत्ति है। ऊचे से ऊची शिक्षा और संस्कृति आदि के क्षेत्र में इन्ही का बोलबाला है। समाज के साधारण तबके के लोग जो सख्या में इनसे कई गुना ज्यादा हैं आजादी के लाभो से नितान्त वंचित हैं। कहा जा सकता है कि परिस्थिति कुछ ऐसी बन गयी है कि जन-साधारण का दरजा रोज-रोज गिरता ही चला जा रहा है। O

वार्षिक शुल्क—१५ रु० विदेश ३० रु० या ३५ शिलिंग या ५ डालर, एक अंक का मूल्य ३० पैसे।
प्रभाकर जोशी द्वारा सर्व सेवा सघ के लिए प्रकाशित एवं ए० जे० प्रिन्टर्स, नई दिल्ली-१ में मुद्रित।

सर्व सेवा संघ का साप्ताहिक मुखपत्र
नई दिल्ली, सोमवार ३१ मार्च, ७५

हम समाज से अलग न पड़ें

जिस गुण को सामाजिक मूल्य नही मिलता, आखिर मे वह दोष बन जाता है। भारत मे यह बहुत अधिक हुआ है। हमारे देश मे अनेक साधु पुरुषो ने ध्यान, तप किया, लेकिन समाज का खाकर भी उन्होने समाज की सेवा नही की। समाज से अलग पड गये। कही जंगल मे जाकर ध्यान किया। यदि वे समाज मे जाते, लोगो को ध्यान सिखाते, प्रार्थना किस तरह की जाये, चित्त किस तरह एकाग्र किया जाये, इसकी युक्ति बताते, प्रात काल का समय न बिगाडते, रात को सिनेमा न देखते और रात में गाढ नि स्वप्न निद्रा लेने का महत्व समझाते तो समग्र समाज का स्तर कितना ऊंचा उठता ? ये ध्यानयोगी समाज मे जाकर ये बातें समझाते तो ध्यान को सामाजिक मूल्य मिलता।

भारत मे ध्यान की जो साधना हुई, उससे वह ध्यानयोगी समाज से अलग पड गया। दुनिया को अलग करके वह परमेश्वर का दर्शन करना चाहता था। लेकिन परमेश्वर कहता है कि जिस दुनिया को मैंने पैदा किया, उसे छोडकर एकात मे तुझे दर्शन कैसे दू ? दुनिया के रूप मे ईश्वर को देखना चाहिए। जल को अलग करके नदी को देखना चाहो या प्रकाश को अलग करके सूरज को देखना चाहो तो वह कैसे होगा ? इसी तरह विश्व को अलग कर ईश्वर को कैसे देखा जा सकता है ? अगर वह समझता है कि विश्व ही परमात्मा का रूप है, तो कितना आनन्द आता ! भगवान नारद से कहते है 'नाह वसामि वैकुण्ठे-- '—मैं कभी वैकुण्ठ मे गैरहाजिर रहता हूं और योगी के हृदय मे तो बसना ही नही। लेकिन मेरे भक्त जहां इकट्ठा होकर गाते हैं, वहां बसता हूं। योगी ने समाज का बहिष्कार कर दिया तो परमेश्वर ने भी योगी का बहिष्कार कर दिया।

१ गुरुदेव ने गाया है, रूप-सागर मे डूबता हू, अरूप रतन को खोजने के लिए। रूप-सागर को एक ओर रखकर अरूप कैसे खोजा जायेगा ? इसीलिए ध्यान योगी के ध्यान को सामाजिक मूल्य नही आया। विरक्त पुरुषो के वैराग्य को सामाजिक मूल्य नही आया और भक्तों की भक्ति को भी सामाजिक मूल्य नही आया।

सम्पादक

राममूर्ति : भवानी प्रसाद मिश्र

कार्यकारी सम्पादक : शारदा पाठक

वर्ष २१ | ३१ मार्च, '७५ | अंक २६

१६ राजघाट, गांधी स्मारक निधि, नई दिल्ली-११०००१

हमारा यह अलीक होना

जो किसी चीज को अंतिम और आखरी नहीं मानते, मेरा मन उनकी बात सुनने-समझने का होता है। इसीलिए दिनों-दिन संस्थाओं और संगठनों से मुक्त होने की बढ़ती हुई आकांक्षा अच्छी लगती है। इस अर्थ में मैं जब मंदिर के बजाय खुले आकाश के नीचे होता हूं, या जमीन के जिस टुकड़े पर खड़ा होता हूं केवल शरीर से ही उतने पर अपने को खड़ा महसूस करता हू और प्राण विनोबा के शब्दों में 'जय जगत' कहते होते हैं तो मुझे अपने होने की सार्थकता कुछ बढ़ी हुई सी जान पड़ती है। इसका अर्थ मैं यह नहीं मानता, न मानना चाहता हू कि संस्था और संगठन अनावश्यक, बिलकुल गैरजरूरी हैं। उनका उपयोग है। वे व्यक्ति को व्यवस्थित बनाते हैं और 'स्व' से 'सब' की ओर बढ़ने की सुविधा देते हैं। मगर ध्यान इस बात का रखना है कि परिस्थितियां ऐसी भी आनी हैं जब वे हमें व्यवस्थित बनाने के बजाय बांधने लगती हैं और अधिक जीवन देने के बजाय रुद्ध कर देती हैं। इसलिए जरूरी हो जाता है कि संगठन खूब ढीले-ढाले बनाये जायें और जब उनमें कोई कसाव या तनाव-सा आता दीखे उसके सदस्यों को खुला छोड़ दिया जाये। संस्था या संगठन से खुलकर आदमी बाहरी नियम या रूढ़ि या परम्परा के बजाय अपने भीतर देखने पर विवश तक हो जाता है और कई बार इस विवशता में से वह आन्तरिक हो नहीं आत्मिक और तात्कालिक नहीं, शाश्वत मूल्यों को देखना सीख जाता है। अवश्य ही हम संस्थाओं को समाप्त करने के लिए कटिबद्ध न हो उठें। वे तो समय आने पर अपने आप शून्य में विलीन होने लगती हैं। साधारण-तया संस्थाओं के बल पर हम यह जान पाते हैं कि आदमी ने परस्पर पास आकर क्या कुछ किया, वह उनके कारण कितना बड़ा और उन्हीं के कारण हम यह भी जानते हैं कि आदमी ने क्या-कुछ गलतियां कीं। युद्ध, दारिद्र्य, और इनसे मिलती-जुलती चीजें भी उसी प्रकार संगठनों के परिणाम हैं जिस प्रकार धर्म, ऐश्वर्य या प्रेम।

पुरानी संस्थाएं बदलती हैं, टूटती हैं और नयी संस्थाएं मानो जमीन तोड़कर अंकुर की तरह फूटती हैं। अगर हम अभी पंक्ति बांधकर खड़े हैं तो सोचें कि पंक्ति किसी स्वतंत्रता प्रेम या जीवन के तत्व के विरोध में तो नहीं है और अगर पंक्ति तोड़ कर अलीक हो रहे हैं तो देखें कि हमारा यह अलीक होना किसी न किसी रूप में सबके हित में जा रहा है या नहीं।

सर्व सेवा संघ एक दिन पंक्तिबद्ध लोक-सेवकों की संस्था थी, आज वह व्यक्ति-व्यक्ति लोकसेवकों में बदल गयी है। अपना यह प्रयोगकाल उसने विनोबा के मौन टूटने की अवधि २५ दिसम्बर १९७५ तक माना है, उसके बाद वह फिर एक बार एक जगह इकट्ठा होकर अपने कामों का जायजा लेगा और अपनी आगे की गतिविधियां निश्चित करेगा। तब तक उसकी 'प्रवृत्ति' और 'अभिव्यक्ति' संस्थागत नहीं व्यक्तिगत मानी जायेंगी।

'भूदान-यज्ञ' भी उसकी प्रवृत्तियों में से एक था। यह साप्ताहिक १४ अप्रैल को अपना 'भूदान-यज्ञ' रजत-जयन्ती अंक निकालने के बाद बंद हो जायेगा और सन् १९७६ में निधि तय हो जाने के बाद फिर पाठकों के पास पहुंचेगा। संभव है तब तक देश और दुनिया की बदली हुई परिस्थितियां इसे आज से अलग किसी बदले रूप में प्रकाशित होने की प्रेरणा दें। पाठकों का शुल्क हमारे पास सुरक्षित रहेगा। हम इस आशा को सजोये हैं कि रजत-जयन्ती विशेषांक के बाद फिर जब पाठकों के पास पहुंचेंगे, उनको अधिक संतोष देने लायक होकर पहुंचेंगे।

—भवानी प्रसाद मिश्र

सहयोगी पत्रिकाएँ

साप्ताहिक

ग्रामराज्य वार्षिक मूल्य १० रुपये।
किशोर निवास, त्रिपोलिया, जयपुर (राज०)

तरुण क्रान्ति . सहयोग राशि २५ पैसा प्रति
विहार तरुण शान्ति सेना समिति
रोड नं० १२, राजेन्द्र नगर, पटना-१६

पाक्षिक

नगर स्वराज्य वार्षिक मूल्य पांच रुपये
२१ बी, मोतीलाल नेहरू मार्ग
इलाहाबाद-२

मासिक

तरुण मन : वार्षिक मूल्य पांच रुपये
अखिल भारतीय शांति सेना मंडल
राजघाट, वाराणसी-१

नयी तालीम वार्षिक मूल्य १२ रुपये
अखिल भारतीय नयी तालीम समिति
सेवाग्राम वर्धा (महाराष्ट्र)

पंजाब सर्वोदय पत्रिका वार्षिक
मूल्य ३ रुपये, खादी आश्रम, पानीपत

त्रैमासिक

गांधी मार्ग · वार्षिक मूल्य ५ रुपये
१६, राजघाट कालोनी, नयी दिल्ली-१।

सूचना

हमारा अगला अंक भूदान-यज्ञ रजत-जयन्ती विशेषांक होगा और १४ अप्रेल, १९७५ को प्रकाशित होगा। ७ अप्रेल, १९७५ का अंक भी इसी में शामिल रहेगा। सम्पादक

स्त्री शक्ति जागरण की अग्रदूत सरला बहन

—सुन्दरलाल बहुगुणा

गांधी के मार्ग पर चलकर देश के पिछड़े इलाकों की सेवा में जीवन खपा देनेवाली सरला बहन (कैथरिन हिलमैन) के अमृत महोत्सव वर्ष का प्रारंभ अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष के दौरान ५ अप्रैल को होना एक सुखद संयोग है। इस अवसर पर प्रकाशित किया जा रहा यह लेख उनके व्यक्तित्व की झलक प्रस्तुत करता है। सं०

सन १९६२ में उत्तरी सीमा पर चीनी आक्रमण के पश्चात देशवासियों का ध्यान हिमालय की चोटियों और घाटियों में बसे हुए दुनिया की आंखों से ओझल गिरिजनों और उनकी समस्याओं की ओर गया। कश्मीर से लेकर असम की पटकोई पर्वत शृंखला तक बसे हुए इस क्षेत्र में गंगोत्री-यमुनोत्री, बद्रीनाथ-केदारनाथ के तीर्थ और कैलाश-मानसरोवर का मार्ग होने के कारण देश के साथ सर्वाधिक जुड़ा हुआ क्षेत्र मध्य-हिमालय का उत्तराखण्ड (उत्तरप्रदेश का पर्वतीय क्षेत्र) है। संत विनोबा ने चीनी आक्रमण से पूर्व ही कहा था, 'चीन शेर नहीं है जो बंदूक से उसका मुकाबला किया जा सके। उसके पास हिंसा से समाज परिवर्तन करने का एक विचार है। परंतु भारत के पास उससे भी एक उत्तम विचार है—सर्वोदय का विचार। अतः सीमा सुरक्षा का मुख्य कार्यक्रम होना चाहिए सीमा क्षेत्र में इस विचार का प्रचार और इसके आधार पर जनता की शक्ति बढ़ाना।' उत्तराखंड पिछले १० वर्षों से दो जन-आंदोलनों के कारण समाचारों की सुर्खियों पर रहा है। यहां पर सन १९६५ में घनसाली (टिहरी-गढ़वाल) में जनता शांतिमय पिकेटिंग के द्वारा शराब की दुकान न खुलने देने में सफल हुई। इस प्रयोग को अगले वर्षों में अन्य स्थानों में दुहराया गया और अप्रैल, १९७२ से उत्तराखण्ड के पांच जिलों में पूर्ण नशाबंदी है। पिछले २ वर्षों से यहां पर वनों की सुरक्षा के लिए एक अद्भुत आंदोलन का जन्म हुआ है, जिसमें लोगों ने घोषणा की कि हम वनों की अंधाधुंध कटाई नहीं होने देंगे, पेड़ों पर चिपक जायेंगे। 'चिपको' आंदोलन इन पेड़ों की रक्षा सारी मानव जाति के संरक्षण के के लिए करना चाहता है। पेड़ के साथ मनुष्य हृदय की धड़कनों को जोड़कर इस आर्थिक आंदोलन को आध्यात्मिक बुनियाद मिल गयी है।

इन आंदोलनों की मुख्य शक्ति यहां की महिलाएं रही हैं। आज से ३२ वर्ष पहले जब गांधीजी की एक अंग्रेज शिष्या स्वराज्य आंदोलन के दौरान ब्रिटिश शासन के दमन चक्र से संतप्त स्वतन्त्रता-संग्राम के सेनानियों के परिवारों को दिलासा देने के लिए अल्मोड़ा जिले के गांवों में घूमती थी, तो ये ही महिलाएं कहती थीं, 'बहनजी, हम क्या जानें इन बातों को हम तो पशु हैं।' यह महिला सरला बहन थीं, जो ५ अप्रैल, १९०१ को इंगलैण्ड में बसे हुए जर्मन पिता के घर जन्मी थीं। माता-पिता ने उन्हें कैथरिन हिलमैन नाम दिया। गांधी के विचारों से प्रभावित होकर वे सन् १९३२ में भारत आयी। गांधीजी के आश्रम में नयी तालीम का काम करने लगी। बापू ने उनके सरल स्वभाव के अनुरूप उनका सरला बहन नामकरण किया। वर्धा की गर्मी न सह सकने के कारण गांधीजी ने उन्हें अल्मोड़ा जिले के चनौदा आश्रम में विश्राम के लिए भेज दिया। इसी बीच सन १९४२ का आंदोलन आया और सरला बहन को उसके सिलसिले में उत्तराखण्ड के बारदोली, सल्ट, बोरारो, सालम आदि इलाके के गांव-गांव का दौरा करने का अवसर मिला। इन यात्राओं के दौरान उन्होंने अनुभव किया कि उत्तराखण्ड की वास्तविक शक्ति है वहां की स्त्रियों की शक्ति। पुरुष रोजगार की खोज में बाहर चले जाते हैं। स्त्रियां पहाड़ों के चट्टान जैसे कठोर जीवन के साथ संघर्ष करती हैं।

सन १९४२ के आंदोलन में सरला बहन को पहाड़ों में सबसे खतरनाक व्यक्ति मानकर जेल में बन्द कर दिया गया। रिहाई के पश्चात उन्होंने कौसानी में पहाड़ों की स्त्री शक्ति को जगाने के लिए जनवरी, १९४६ में लक्ष्मी आश्रम की स्थापना की। इस आश्रम में शिक्षा प्राप्त करनेवाली पर्वतीय बालिकाओं की वे मां, शिक्षिका, परिचारिका और नौकरानी सब कुछ थीं। वे स्वयं उनके साथ जंगल से लकड़ी का गट्ठर उठाकर लातीं, चनौदा में कोसी पर लगी पनचक्की से आटा पीसकर लातीं, रसोई बनातीं, गाय चुगातीं, सब्जी उगातीं, तकुवा कातती, स्वेटर बुनतीं, कपड़े सीतीं और कहानियों व चित्रों के द्वारा देश-विदेश का ज्ञान देतीं। बापूजी ने इस आश्रम के लिए आशीर्वाद देते समय कहा था कि इस काम में वे शीघ्र परिणाम की अपेक्षा न रखें। बीस वर्षों तक जमकर काम करें। बुनियादी शिक्षा के इस आश्रम का संदेश धीरे-धीरे सभी पर्वतीय जिलों में फैलने लगा। यहां पर पढ़नेवाली लड़कियां छुट्टियों में अपने घर लौटतीं तो गांव में रहनेवाली अपनी सहेलियों के साथ शरीर-श्रम करने में किसी तरह पीछे न रहतीं, परन्तु उनके जीवन में एक नयी ज्योति आ गयी थी—आत्मविश्वास और निर्भीकता की। बहनजी स्वयं इन लड़कियों को साथ लेकर गांव-गांव में सर्वोदय का संदेश सुनातीं। इस प्रकार पूरे उत्तराखण्ड में सर्वोदय-विचार फैला। वे दूर-दूर बिखरे हुए कार्यकर्ताओं की प्रेरणा की स्रोत बनीं और सीमाओं की अहिंसक सुरक्षा की सन्त विनोबाजी की योजना मूर्तिमान हो उठी। सरला बहन से २४ वर्ष पहले कत्यूर की जिन स्त्रियों ने कहा था, 'बहनजी, हम क्या जानें हम तो पशु हैं,' उसी कत्यूर में १ अप्रैल, १९६७ को जब शराब की दूकान पर पिकेटिंग करने-

खराब है। जम्हूरियत का नाम नहीं है। एक ही आदमी अपना निजाम चलाता है।''' वहां शान्ति का नाम नहीं है। खासकर जहां मैं आया था। यों तो इस देश के किसी भी हिस्से में न शान्ति है न सुरक्षा। ख्वाजा रफीक और मौलवी नजीर की सुलेआम हत्या कर दी गयी और दिनदहाड़े वली के ऊपर गोली चलायी गयी। बलूचिस्तान में कितने लोग मारे गये, इसकी तो कोई गिनती ही नहीं है।"

इसके बाद उन्होंने लोदी से कहा कि "अगर तुम्हारे साथ कुछ हो गया तो मुझे बहुत अफसोस होगा। जल्दी करो और रातो-रात यहां से चले जाओ।"

साल भर के बाद खान अब्दुल समदखान आचकजाई के घर में बम फटा और उनकी मौत हो गयी। हमारी लोकसभा में इस स्वतन्त्रता-सेनानी के लिए एक शोक-प्रस्ताव रखा गया और दो मिनट का मौन भी। पाकिस्तान में इस वक्त सन्देह और हिंसा का जो वातावरण बना हो उठा है उसमें अगर ऐसा ही कुछ बादशाहखान के साथ हो जाये तो क्या हम इसके लिए तैयार हैं? हिन्दुस्तान ने हमेशा बिना किसी भय के दमन और अत्याचार के खिलाफ अपनी आवाज उठायी है। क्या इस मामले में हम वक्त रहते सिवाय चुप रहने के कुछ नहीं कर सकते?

नवम्बर १५, १९६९ में बादशाहखान विश्व मैत्री भावना पर नेहरू-पुरस्कार स्वीकार करने के लिए भारत में आमंत्रित किये गये थे। अक्टूबर १, १९६९ से फरवरी ७, १९७० तक वे हमारे देश के प्रमुख और प्यारे अतिथि रहे। अस्सी साल की उम्र और भारी लागर तन्दुरुस्ती के बावजूद उन्होंने पूरे हिन्दोस्तां का दौरा किया और पूरे देश भर में हर छोटे-बड़े से मिले। वे आपसी मेल-मिलाप और भाईचारे का सन्देश देते हुए सब जगह गये और उन्होंने तकलीफजदा लोगों को धीरज बंधाया, प्यार और बिरादरी का सन्देश दिया। हिन्दू और मुसलमान लाखों की तादाद में उनका सन्देश सुनने को जाते रहे। अपनी खुद की जिन्दगी की शानदार मिसाल से उन्होंने लोगों के मन में गांधीजी के रास्ते पर चलते रहने की बात जमाने की पूरी कोशिश की। आम जनता के कष्ट को देखकर दिल रोता था। उन्हें यह देखकर बड़ा दुख होता था कि भारत भी नैतिक मूल्यों की दृष्टि से ढीला पड़ रहा है और २२ साल की आजादी के बाद भी हम लोगों के मन में एक-दूसरे की तरफ सफाई नहीं है, भेदभाव के खयाल भरे हैं। उन्होंने इन सब बातों को लेकर हम लोगों से सख्त बातें भी कहीं।

जवाहरलाल नेहरू पुरस्कार देते समय हमारे तत्कालीन राष्ट्रपति वराहगिरि वेंकट-गिरि ने कहा कि बादशाहखान सचमुच खुदाई-खिदमतगार हैं। भगवान की ओर उनकी भक्ति, मानवता और खासकर गरीबों की सेवा के जरिये जाहिर होती है। वे एक सच्चे मुसलमान हैं। उनका मन उदार है और वे सभी धर्मों को समान रूप से आदर की दृष्टि से देखते हैं। गफ्फारखान हमारे सामने सादगी, त्याग और पवित्रता की साकार मूर्ति हैं। हमारा सिर उनके सामने झुक जाता है।

हम लोग अखबारों में यह पढ़कर स्तब्ध रह गये हैं कि आदरणीय बादशाह खां इस वक्त कहां हैं, इसकी किसी को खबर नहीं है और न कोई यही बता पा सका है कि वे सुरक्षित हैं और कुशलता में हैं। भारत के लोगों आदमियों के लिए बहुत ही हिला देनेवाली खबर है, क्योंकि भारत की जनता सीमान्त गांधी को अपने मन में जबर्दस्त आदर देती है और आजादी के लिए लड़नेवाले सेनानियों में उनका बहुत बड़ा स्थान मानती है।

मैं भारत के सभी गांधीवादी रचनात्मक कार्यकर्ताओं की ओर से भारत सरकार से हार्दिक अपील करता हूं कि वह पाकिस्तान सरकार के साथ तत्काल सम्पर्क स्थापित करे और जल्दी से जल्दी उनकी कुशलता जानकर भारत के लोगों को निश्चिन्त करे।

केवल गांधी विचार के लोग ही नहीं, भारत की सारी जनता इस महत्वपूर्ण मसले को लेकर चिन्तित है और उम्मीद करती है कि पाकिस्तान की सरकार बिना देरी किये इस मामले में जरूरी वक्तव्य प्रकाशित करेगी।

—श्रीमन्नारायण

२१ मार्च, १९७५
केन्द्रीय गांधी स्मारक निधि
राजघाट, नई दिल्ली-१

नवम्बर २४ को संसद के दोनों सदनों के सभी सदस्यों की प्रार्थना पर बादशाहखान ने संसद में उपस्थित होना स्वीकार किया। इस प्रकार का आमंत्रण अभी तक केवल किसी राष्ट्र के प्रमुख को ही दिया जाता रहा है। किन्तु १९६९ की २४ नवम्बर को बादशाहखान ने जो किसी राष्ट्र के प्रमुख नहीं हैं, बल्कि सच्चे अर्थों में एक फकीर हैं, संसद के दोनों सदनों के सदस्यों को गांधीजी के गंभीर वचनों की याद दिलायी। इसके पहले राष्ट्र के किसी प्रमुख को छोड़कर किसी दूसरे को संसद के दोनों सदनों के सामने बोलने या वक्तव्य देने का समादर कभी दिया नहीं गया था। इसी से मालूम होता है कि भारत की दृष्टि में बादशाहखान की जगह कहां है। उन्होंने अपने ऐतिहासिक भाषण में जनता के प्रतिनिधियों को गांधीजी के उन वचनों की याद दिलायी जो हमने देश के विभाजन के समय सच्चे हृदय से स्वीकार किये थे। उन्होंने यह भी कहा कि "उन्होंने मुझसे यह कहा था कि अगर आप लोगों पर अत्याचार होता है या गलत व्यवहार आपके साथ किया जाता है तो भारत आपके लिए लड़ेगा।" उन्होंने यह भी कहा "कि उन वचनों के कारण और सदा से मैंने इस देश को अपना ही एक हिस्सा माना है। न यह मुझ से जुदा है और न मैं इससे। इसलिए आज की हालत देखकर मुझे बहुत तकलीफ होती है और मेरा दिल भर आता है। मैं खुदाई खिदमतगार हूं। और भगवान का बनाया हुआ कोई भी आदमी, फिर वह दुनिया के किसी भी हिस्से का क्यों न हो, मेरे ऊपर हक रखता है। मेरा काम है कि मैं सबको एक जैसा देखूं और सबकी सेवा करूं। दोस्तो! इत्मीनान रखिये कि जब कभी भी आप मेरी जरूरत महसूस करेंगे, मुझे अपने साथ खड़ा पायेंगे।"

जून १९६७ में श्रीमती इन्दिरा गांधी ने कहा था, "तेंदुलकर की किताब 'अब्दुल गफ्फारखां-फेथ इज ए बैटिल' पढ़ते हुए हमारा मन लज्जा से भर जाता था।" श्रीमती गांधी का यह कहना आज हमेशा से ज्यादा सच्चा है क्योंकि आज उनकी, उनके बेटे की और उनके साथियों की जिन्दगी को खतरा है, उनके पुत्र और साथी तो जेल के सींकचों में बन्द हो हैं।

इस मसले पर सरकार और जननायकों

का यह विचार हो सकता है कि अगर हम मामले को उठायें तो पाकिस्तान इसे शिमला समझौता के विरुद्ध कहकर दुनिया मे हमारे खिलाफ प्रचार करने का बहाना बना सकता है। मगर हम अगर इस मामले पर अपनी आवाज नहीं उठाते हैं और चुप रहते हैं और बुद्दो साहब को उस देश के ही नहीं दुनिया के बड़े से बड़े आदमी में से एक को इस तरह कुचलने देते हैं तो यह शिमला समझौते की आत्मा के खिलाफ होगा। क्योंकि हर सच्चे आदमी का यही ख्याल है कि इस समझौते का दोनो तरफ से शब्दश: ही नहीं अर्थों मे पालन होना चाहिए। दुनिया में बादशाहखा से इस बात को लेकर और किस आदमी को बेचैनी हो सकती है कि हिन्दुस्तान और पाकिस्तान मे शस्त्रो की होड़ के कारण लड़ाई भड़क उठने की सम्भावनाए पैदा होती चली जा रही हैं। उन्हे मुक्त होकर बोलने देना उपमहाद्वीप मे आम आदमी के हित की बात होगी, क्योंकि वे दोनो देशों के भाईचारे को बढाने मे मदद करनेवाले व्यक्ति हैं। हमारे सामने इस वक्त बादशाहखा जैसे सच्चे और पुराने दोस्त और मार्गदर्शक की जिन्दगी के बारे मे जो खतरा नजर आ रहा है वह सहज ही टाल देने की चीज नहीं है। दुनिया मे ऐसी महान आत्माए कभी-कभी पैदा होती हैं जिन्हे सारी दुनिया का माना जा सकता है। वे सारी मानवता की थाती होते हैं। देशों की संकीर्ण सीमा से परे ऐसे विश्व नागरिक सारी दुनिया की चिन्ता होना चाहिए। और भारत मे तो भाईचारे, प्रेम और करुणा की जो सहज परम्परा है उसे देखते हुए उसका यह कर्तव्य हो जाता है कि वह सारे राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय मचों से आवाज उठाये कि भगवान के ऐसे सच्चे सेवक की प्यार से भरी हुई आवाज दबायी न जा सके और उनकी जिन्दगी पर किसी तरह की कोई आच न आये।

यह वक्त बादशाह खा के जीवन के सध्याकाल का है। उन्होंने एक लम्बी जिन्दगी खुद दुख उठाते हुए दूसरो के दुख दूर करने मे बितायी है। आज भी वे इस उपमहाद्वीप मे शान्ति की शक्तियो को समर्थ बनाने मे व्याकुल हैं। हमारा काम है कि हम उनकी इस इच्छा को पूरी करने में ज्यादा से ज्यादा आगे बढकर हाथ बँटायें। ○

(इस बीच आकाशवाणी से २६ मार्च ७५ को प्रसारित एक समाचार के अनुसार बादशाहखां ने पेशावर मे बोलते हुए पाकिस्तान की वर्तमान हालत में वहां न रहने की इच्छा व्यक्त की है। स)

आत्मदीपो भव

—निर्मलचन्द्र

वर्धा से वापस आकर आचार्य राममूर्ति ने बताया कि सघ अधिवेशन मे दो 'हां' का अन्तर्विरोध था। इस कारण एक-दूसरे को समझ पाना कठिन था। उनको जहां तक समझ पाया, उनके अनुसार सर्वोदय-समाज जिन विचारो के लिए समर्पित रहा है उन विचारो की मौलिक और तात्त्विक मान्यताओं मे कोई भेद नहीं है। अन्तर इनके कार्यान्वय की पद्धति मे है। सर्वसामान्य कार्यकर्ता मित्र अपने आग्रह और तीव्रता के कारण अधीर और आकुल हो जाते हैं, पर इस समाज को जिन दो विभूतियों का नेतृत्व मिला है, वह इस समाज के लिए अद्भुत, लासानी सम्पदा है। हम जितना आग्रहरहित मुक्तचित्त से इनसे प्रकाश ग्रहण कर सकेंगे उतना ही हमारा सम्बन्ध मधुमय होगा। स्वतन्त्र चिन्तन मानव का वरदान है। चिन्तन की स्वतन्त्रता के साथ-साथ जिस समाज मे जितना ही दूसरे के लिए आदरभाव होगा उतना ही वह समाज पल्लवित और पुष्पित होगा।

'प्रबल प्रेम के पाले पर कर,
प्रभू को नियम बदलते देखा'

विनोबा, जे० पी० से मिलने जाते हैं। सहमा मौन भग होता है। बेमिसाल प्रेम। एक दूसरे के प्रति अपार श्रद्धा। लेकिन भावना के इस प्रवाह के बावजूद अपने-अपने विचार पर अडिग रहते हैं। दानवो के अनेक सिर एक धड़ के साथ जुड़े होते हैं। पर प्रत्येक मानव का सिर स्वतन्त्र होता है, और हृदय एक दूसरे के समीप जाने के लिए उद्वेलित रहता है। आत्मा अहम् और त्वम् के दो किनारो के बीच प्रवाहित होना चाहती है। सर्वोदय कार्यकर्ता जितना अधिक इस आदर्श को अपने चरित्र मे उतार सकेंगे उतना अधिक उनका स्वयं विकास होगा और उतना ही समाज को योगदान दे सकेंगे। विश्व के बौद्धिक और वैज्ञानिक विकास की शक्ति एक-दूसरे को काटने मे लगती है तो जितना खतरा होता है उससे कम खतरनाक नहीं होगा, यदि स्वतन्त्र चिन्तन और प्रयोग का अवसर ही लुप्त हो जाये। स्नेह की सरिता मे विचारो की लहरें बनती मिटती हुई सागर मे मिलने की उत्कठा से आगे बढती जानी चाहिए। यही गति है, यही जीवन है।

प्रकाश से अन्धकार कभी मुकाबला नहीं कर सकता। जहां प्रकाश आयेगा, अन्धकार भाग ही जायेगा। पर आखें चौंधिया जाती हैं, दो प्रकाशों के बीच। वह भी तब, जब एक प्रकाश दूसरे पर प्रतिबिंबित (प्रोजेक्टेड) होता है। अन्धकार मे दूर खड़े दो व्यक्ति अपने अपने टार्च का फोकस जब एक-दूसरे की आख पर देंगे तो दोनो अन्धरा जायेंगे।

अन्धकार को बर्दाश्त करना कठिन नहीं है, पर प्रकाश का प्रवाह आखो को तिलमिला देता है। पांव डगमगाने लगते हैं। दो 'हां' का विरोध, दो प्रकाश का टकराव है। एक घर मे एक दीपक और बिजली बल्ब लगा हो तो कोई विरोध नहीं। बल्ब का तेज प्रकाश दीपक के आसपास भी अधिक उजाला करेगा, उसकी लालिमा भी धुमिमान होगी और देखनेवाले के लिए भी कोई व्यवधान नहीं होगा। इसी प्रकार विचारों का प्रत्येक दीप अपनी जगह जलता रहे, दूसरे के ऊपर फोकस करने की तीव्रता और उत्कटता नहीं हो तो एक दूसरे से आलोकित होंगे। इस अन्धकार-पूर्ण ससार को दीप-मालाओं मे सजा सकेंगे। सर्वोदय समाज को वर्धा का निर्णय यही बोध देता है। ○

सर्व सेवा संघ का पवनार अधिवेशन

—उमाशंकर फड़नीस

क्या सर्व सेवा संघ टूट गया है? जो लोग बिहार आंदोलन के खिलाफ थे उनके संघ से हट जाने का क्या यह अर्थ होता है कि संघ अब उनके हाथ में चला गया जो आंदोलन के पक्ष में हैं?

जो लोग आंदोलन में भाग लेनेवाली राजनीतिक पार्टियों के आदर्शों के भेद को जानते हैं उन लोगों के मन में इस तरह का सवाल उठना कि संघ के टूटने से स्वयं संघ के लोगों के ऊपर क्या असर होगा, बहुत स्वाभाविक है। संघ टूट गया यह बात ठीक है मगर उसके टूटने से, खासकर उस वक्त, जबकि लोकसेवकों का भारी बहुमत आंदोलन के पक्ष में था, यह कहना बहुत कठिन है कि संघ ने अपने को पूरी तरह बिहार आंदोलन के साथ जोड़ लिया है या वे उस वक्त तक केवल चुप हो गये हैं जिस वक्त तक लोकसेवकों के बीच इस बात को लेकर सर्वानुमति नहीं हो जाती।

कई लोगों को ऐसा लग सकता है कि बहुमत का अपने ऊपर इस प्रकार का अंकुश लगाना गैरवाजिब था और इसका तो यह मतलब होता है कि उन्होंने परिस्थिति से लड़ने के बजाय उससे मुंह मोड़ लेने में ज्यादा सुरक्षा समझी। यह बात खास तौर पर विरोधियों के द्वारा स्तीफा दे देने के बाद और भी विचित्र मालूम होती है। उन लोगों के स्तीफा देने के बाद जो लोग बच गये थे उन सब की राय पूरी तरह आंदोलन के पक्ष में थी।

संघ के बहुमत ने जो निर्णय लिया उसमें हमें एक विरोधाभास नजर आता है। लेकिन यह केवल विरोध का आभास है। इसमें वास्तविक विरोध की कोई बात नहीं है। यह *अपने आदर्शों के बिलकुल अनुकूल लिया* गया निर्णय है। संघ की बनावट और संघ की परम्पराएं अपने जन्म काल १९४८ से ही इसी निर्णय के अनुकूल रही हैं।

गांधीजी की मृत्यु के तुरन्त बाद संघ की स्थापना हुई। और उसकी मनोभूमिका लगभग वही थी जो आजादी प्राप्त करने के बाद गांधीजी कांग्रेस के लिए चाहते थे। गांधीजी का ख्याल था कि आजादी मिल जाने के बाद कांग्रेस को सत्ता में नहीं जाना चाहिए बल्कि लोकसेवक संघ का निर्माण करके देश में ठीक जनतन्त्र की स्थापना की दृष्टि से लोकसेवक संघ के रूप में लोकशिक्षण का काम शुरू करना चाहिए। अगर कांग्रेस इस बात को स्वीकार कर लेती तो वह सत्ता के पीछे दौड़ने के बजाय लोकशक्ति के जागरण का काम करती और इस तरह रचनात्मक कार्यों को बढ़ाकर देश में सच्चे जनतन्त्र की स्थापना हो सकती थी। इसी दृष्टि को सामने रखकर संघ का गठन हुआ। संघ में वे सब लोग शामिल हुए जो गांधीजी के रचनात्मक कामों में सम्बन्धित विभिन्न संस्थाओं के साथ जुड़े हुए थे। यह सोचा गया कि कहीं संघ भी संस्थागत अधिकार के झमेले में न पड़ जाये और जिस तरह राजनीतिक दल अपने विधान में जोड़-तोड़ के सहारे शक्ति-सम्पन्न होने की कोशिश करते हैं वैसा न करने लगे इसलिए संघ के विधान में दो बातें रखी गयीं। एक तो यह कि उसमें पदों की कोई सीढ़ियां नहीं होंगी और न कोई बड़ा होगा न कोई छोटा। दूसरी सावधानी यह रखी गयी कि जो भी निर्णय होंगे वे अल्पमत या बहुमत के आधार पर न होकर सर्वसम्मति के आधार पर होंगे और यदि किसी बात में सर्वसम्मति संभव न हुई तो सर्वानुमति के आधार पर होंगे।

लोकसेवकों पर कोई संस्थागत अनुशासन भी नहीं लादा गया। उनसे इतनी ही अपेक्षा रखी गयी कि जातिगत भेद-भाव आदि के मामले में गांधीजी के विचारों के अनुसार चलेंगे। अहिंसा के सिद्धान्तों पर दृढ़ रहेंगे और उन्हें किसी पद पर निर्विरोध चुने जाने की बात हो तो भी वे किसी प्रकार के चुनाव में भाग नहीं लेंगे।

लोकसेवक आपस में इकट्ठा होकर प्रान्त और जिलों के स्तर पर सर्वोदय मंडलों की स्थापना कर सकेंगे किन्तु संघ की तरह ही यह भी केवल विचार विमर्श के मंच होंगे ताकि लोकसेवक मिलजुलकर अपना काम चलायें और लोकसेवकों अथवा संस्थाओं के ऊपर किसी प्रकार का दबाव या दावा न डालें।

इस तरह राजनीतिक दलों से अलग संघ के पास कोई केन्द्रीय सत्ता नहीं थी। ऐसी केन्द्रीय सत्ता जो अपने से छोटे स्तर के मंडलों के कामकाज में हस्तक्षेप कर सके या उस पर अंकुश लगा सके। संघ का एक अध्यक्ष अवश्य चुना जाता था। इसे लोकसेवक सर्वसम्मति से चुनते थे। और अध्यक्ष अपनी मदद के लिए एक कार्यकारिणी समिति नामजद कर लेता था। संघ के वार्षिक अधिवेशन में समस्याओं पर बहस तो खुलकर होती थी किन्तु निर्णय सर्वसम्मति या सर्वानुमति से ही लिये जाते थे। सर्वानुमति का अर्थ यह माना जाता था कि विरोधी मत रखनेवाले लोग अपने मत का आग्रह न करें और जो निर्णय लिया जा रहा है उससे मतभेद रखते हुए भी उस काम में हाथ बटायें।

अगर हम संघ के इस स्वरूप को याद रखें तो पवनार में जो निर्णय लिया गया वह समझ में आ जायेगा और यह भी समझ में आ जायेगा कि बिहार आंदोलन के प्रति पिछले बार जुलाई में लोकसेवकों ने जो रुख किया था उसे ही स्वीकार करने की कोशिश किसलिए की। जुलाई के अधिवेशन में भी बिहार आंदोलन को सर्वसम्मति प्राप्त नहीं थी किन्तु लोकसेवकों ने मान लिया था कि सत्य, संयम और अहिंसा का पालन करके जो लोकसेवक उसमें भाग लेना चाहें वे उसमें भाग ले सकते हैं। सबसे पहले आंदोलन को लेकर यह प्रश्न जुलाई में ही उपस्थित हुआ था।

इस अवसर पर विनोबाजी ने यह सूत्र सामने रखा था और इस सूत्र को मान लिया गया था। यह भी कहा गया था कि जो परम्परागत ग्राम-स्वराज्य के काम में लगे रहना चाहते हैं वे उसी काम में लगे रहें। *इस सूत्र के अनुसार यह स्वीकार किया गया* था कि दोनों ही उद्देश्य सर्वोदय के ध्येय के अनुसार हैं। इसलिए अब यह सवाल उठता है कि इस बार वह पुराना निर्णय क्योंकर नहीं माना गया और संघ के टूटने की नौबत क्योंकर आयी।

इस बार पवनार अधिवेशन में बिहार

आंदोलन से मतभेद रखनेवाले लोगों का यह कहना था कि पिछली बार जुलाई में जो निर्णय लिया गया उससे अब तक परिस्थिति में 'गुणात्मक परिवर्तन' आ गया है। पहले आंदोलन विधान-सभा को भंग करने तक सीमित था, अब उसमें चुनाव सम्बन्धी बात भी *शामिल हो गयी है। सर्वोदय कार्यकर्ताओं* का चुनाव में भाग लेना चुनाव और उससे संबंधित राजनीति में हाथ बंटाना है।

जवाब में यह कहा गया कि श्रीमती इन्दिरा गांधी ने आंदोलन को यह कहकर कि बिहार विधान-सभा जनता की सच्ची प्रतिनिधि है या नहीं, यह बात अगले चुनावों में ही साबित हो सकती है, चुनाव के क्षेत्र में घसीटा है। इसलिए लोकसेवकों का चुनाव सम्बन्धी लोकशिक्षण कार्यक्रम सत्ता हथियाने का कोई सामाजिक या धार्मिक कार्यक्रम न होकर केवल इसी हद तक सीमित रहेगा कि जिन लोगों ने चुने जाने के बाद अपने प्रतिनिधित्व को झुठलाया है, उनके बारे में लोक शिक्षण का काम किया जायेगा। इस तरह से यह रोजमर्रा के अर्थों में चुनाव न होकर जनमतसंग्रह का काम होगा। इसके सिवा लोकसेवक चुनाव में प्रत्याशियों की तरह खड़े नहीं हो रहे हैं। वे केवल आम जनता को सत्ता की भूखी राजनीतिक पार्टियों के शिकंजे से बचाने की कोशिश करेंगे। इसलिए लोकसेवक संघर्षवाहिनी के नाम से दलविहीन तत्वों को संगठित करेंगे और मतदाताओं को अपने मन का उम्मीदवार चुनने में मदद पहुंचायेंगे।

इसके सिवाय अब तक संघ चुनावों के मामले में एकदम तटस्थ तो कभी नहीं रहा। यह हमेशा कहा गया और किया भी गया कि सर्वोदय कार्यकर्ताओं को मतदान करने के सिलसिले में लोकशिक्षण का काम करना चाहिए और लोगों को बताना चाहिए कि वे केवल ऐसे ही लोगों को अपना मत दें जो सर्वोदय के सिद्धांतों में पूरी तरह विश्वास करते हों। आंदोलन में आज जो नयी भूमिका अपनायी गयी है वह इस दृष्टि से हमारी पुरानी परम्परा से अलग भी नहीं है।

जब इस तर्क को भी आंदोलन विरोधी *लोकसेवकों ने स्वीकार नहीं किया तो सम*र्थकों की ओर से उस सूत्र को स्वीकार करने की तैयारी दिखायी गयी जो श्री श्रीमन्नारायण ने तैयार किया था। उस सूत्र में यह कहा गया था कि जिस कार्यक्रम को संघ सर्वसम्मति से स्वीकार करे उसे संघ का नाम लेकर किया जा सकता है और जो कार्यक्रम सर्वसम्मति से स्वीकार नहीं किया जाये, उस पर अमल करने के लिए लोकसेवकों को *अपनी व्यक्तिगत हैसियत में स्वतंत्र छोड़* दिया जाये अर्थात् उसे वे संघ के नाम में न करें। इसके सिवा जो पदाधिकारी इस तरह के कार्यक्रम में भाग लेना चाहें वे अपने-अपने पदों से इस्तीफा दे दें।

ऐसा लगा कि यह सूत्र स्वीकार हो जायेगा किन्तु प्रश्न उठा कि सर्वोदय मण्डल जो स्वतन्त्र माने जाते हैं यदि वे आंदोलनों के पक्ष में सर्वसम्मति रखते हों तो क्या उन्हें संघ के नाम से उसमें भाग लेने दिया जायेगा, मंडल स्वायत्त संस्थाएं मानी जाती हैं और संघ का उन पर कोई सीधा नियंत्रण नहीं होता इसलिए यदि उस सूत्र को स्वीकार किया जाता है तो मंडल संघ के कहलाते हुए भी आंदोलनों में भाग लेंगे। जो लोग आंदोलन का विरोध कर रहे थे उन्हें यह परिस्थिति ठीक नहीं लगी। उन्होंने आग्रह किया कि यह बात साफ कर दी जानी चाहिए कि संघ आंदोलन में भाग लेने के विरोध में है और इसी प्रकार चुनावों में किसी तरह का हिस्सा बंटाने के भी विरोध में है। आंदोलन मुख्य रूप से अभिमुक्त हो गया है और चुनाव का किसी भी तरह सर्वोदय के उद्देश्यों के साथ सामंजस्य नहीं है। यह भी कहा गया कि अगर लोकसेवक चुनाव से सम्बन्धित किसी हलचल में भाग लेना चाहते हैं तो उन्हें संघ से 'छुट्टी' ले लेनी चाहिए।

इस बात का विरोध किया गया। क्योंकि इसमें दो बातें मानी गयीं। एक तो यह *कि लोकसेवक आंदोलन में भाग लेना है वह* सर्वोदय के उद्देश्यों के खिलाफ काम करता है। इससे भी अधिक आधारभूत आपत्ति यह थी कि छुट्टी किससे ली जाये। अगर छुट्टी संघ की कार्यकारिणी से लेनी है तो उसका यह अर्थ हो जायेगा कि उसे संविधान में ऐसा कोई अधिकार प्राप्त है, जबकि वास्तव में संघ के संविधान के अनुसार उसे ऐसा कोई अधिकार नहीं है इसके सिवा अगर यह नयी बात स्वीकार कर ली जाये तो संघ का वह संविधान ही टूट जाता है जो इसका आधार माना गया था।

इस परिस्थिति में श्री श्रीमन्नारायण के सूत्र में एक संशोधन किया गया और कहा गया कि संघ में दो दृष्टिकोण रखनेवाले हैं। एक की राय है कि आंदोलन में चुनाव संबंधी कामों में भाग लेनेवाले लोग उसे सर्वोदय के *उद्देश्यों के खिलाफ नहीं मानते* और दूसरे कुछ लोग उसे खिलाफ मानते हैं। जो लोग आंदोलन में भाग लेना चाहें वे अपनी-अपनी जिम्मेदारी पर भाग लें। और आंदोलन में भाग लेनेवाले व्यक्ति यदि पदाधिकारी हैं तो वे अपने-अपने पदों से इस्तीफा दे दें। आंदोलन विरोधी कुछ लोगों ने इस सुधार के बाद सूत्र को पूरी तरह स्वीकार माना किन्तु विरोध में कुछ लोगों ने आग्रह किया कि यह भी उन्हें स्वीकार नहीं है और इस पर सर्वानुमति के अभाव में दो विभिन्न रायों के रहते हुए कोई निर्णय नहीं लिया जा सका। तब दोनों विकल्प विनोबाजी के सामने रखे गये। विकल्प ये थे कि विनोबाजी के मौन काल की अवधि तक संघ अपने को समाप्त माने और अपने सब कार्य-कलाप बन्द कर दे। विनोबाजी का मौन टूटने पर फिर से इन बातों पर विस्तार से विचार किया जाये।

विनोबाजी और जयप्रकाशजी दोनों इस बात पर एकमत हो गये कि इस समय जो परिस्थिति है उसमें जिन बातों पर मतैक्य नहीं है उन्हें अभी जैसा का तैसा छोड़ दिया जाये और एक समिति का निर्माण कर दिया जाये जो यह तय करे 'कि मौन की अवधि में संघ का क्या काम रहेगा'।

जब यह बात संघ के सामने पेश की गयी तो ऐसा जान पड़ा कि सभी लोग इसको मान लेंगे किन्तु जो अपनी बात का आग्रह किये हुए थे उन्होंने कहा कि यह भी तभी तय किया जा सकता है जब समिति बन जाये और वह मौन का अर्थ निश्चित कर दे। आंदोलन के विरोध का आग्रह रखनेवाले लोगों ने बैठक में फिर से कोई भी हल निकलने में बाधा डाली और कहा कि सारी अवधि में लोकसेवकों को भी मौन रहना चाहिए जिसका अर्थ यह होता था कि उन्हें व्यक्तिगत हैसियत से भी आंदोलन में भाग नहीं लेना है।

जो आंदोलन के पक्ष में थे उन्हें यह बात इसीलिए मंजूर नहीं हुई कि इससे लोकसेवक

को अपने विवेक के अनुसार चलने की संघ के विधान के अनुसार जो व्यक्तिगत छूट थी, वह भी समाप्त हो जाती। इस जगह आकर आग्रहशील अल्पमत ने संघ में हट जाने का निश्चय किया और उन्होंने विनोबाजी से जाकर इस बात की इजाजत भी ली।

पवनार में बहस का मुख्य मुद्दा इस बात को माना जाना चाहिए कि लोकसेवकों को उस ग्राम-स्वराज्य के लिए काम करना है जो आत्मनिर्भर और आत्मशासित होगा पर जबकि यह काम लगभग असफल हो चुका है और सारे देश में निराशा फैल गयी है लोकसेवकों को लोक-शिक्षण के द्वारा जनता को जागृत करके उनके अधिकारों की ओर अग्रसर करना है।

जो लोग आंदोलन के पक्ष में थे उनका यह कहना था कि हम सरकार के खिलाफ नहीं हैं बल्कि वर्तमान राजनीतिक पद्धति के विरोध में हैं। उनका यह भी कहना था कि हम अभी तक ग्रामदान के सिलसिले में काम करते रहे किंतु लोगों के बीच उसके कारण जागृति नहीं आयी, इसलिए अब हमें अपनी शक्ति राजनीतिक और आर्थिक उन शक्तियों के विरोध में लगानी चाहिए जिनके निहित स्वार्थ हैं और जो केन्द्र में सत्ता बढ़ाते चले जा रहे हैं, जिन्होंने उत्पादन और वितरण का सारा काम शोषण की नींव पर खड़ा कर दिया है, फिर चाहे वह समाजवाद के नाम पर औद्योगीकरण के क्षेत्र में हो या खेती के क्षेत्र में। उन लोगों ने यह भी कहा कि जनता में जो बेचैनी जाग रही है, वह स्वयंस्फूर्त और अलग-अलग ढंगों से देश के अलग-अलग भागों में अपनी इस बेचैनी को जाहिर कर रही है। अगर हम उनकी इस बेचैनी को कोई ठीक दिशा देने में असमर्थ रहे तो देश में हिंसा फूट पड़ेगी जिसके बड़े दूरगामी असर होंगे। संघ के अध्यक्ष ने सर्वोदय कार्यकर्ताओं से राजशक्ति के साथ सहयोग करने के नतीजों पर ध्यान देने के लिए कहा। और उन्होंने कहा कि हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि आज जो लोग सत्तारूढ़ हैं वे जन विरोधी कामों में लगे हुए हैं। अगर हमने शासन को इसी तरह गुजरकर रोकने दिया तो क्या इसका यह अर्थ नहीं होगा कि हम उन शक्तियों के सामने झुक गये हैं जो हिंसा के बल पर समाज पर हावी रहना चाहते हैं। उन्होंने कहा कि

इन सबको देखते हुए यह सवाल जरूरी हो जाता है कि सर्वोदयी कार्यकर्ता अपने आप को जन-आंदोलन में एकरूप बनायें उसे दिशा दें और सही-सही नेतृत्व करें विरोधी पक्ष-वालों का कहना यह था कि ऐसी परिस्थिति में हमें सर्वोदय के सिद्धांतों को पूरी तरह से शुद्ध रखना चाहिए, उनकी पवित्रता की रक्षा करना चाहिए। वे यह मानते थे कि सत्ता जिन उद्देश्यों को घोषित कर रही है उनमें सत्य का तत्व है। और उसके खिलाफ जो चीजें सिर उठा रही हैं उसमें भी सत्य का तत्व है इसलिए जरूरी यह है कि सर्वोदयी कार्यकर्ता संघर्ष से पूरी तरह दूर रहें और एक ऐसी तीसरी शक्ति का निर्माण करें जो इन दोनों विरोधी तत्वों में समन्वय और समझौता पैदा कर सके।

तर्क के इस ढर्रे ने लोकसेवकों में विभिन्न प्रतिक्रियाएं पैदा कीं। कुछ लोग अपने मन की पहले जैसी उदारता कायम नहीं रख सके। उन्हें ऐसा लगा कि श्रीमती गांधी और सत्ता को किसी प्रकार का वचन दे दिया गया है और अब उनके पक्ष में युक्तियां जुटायी जा रही हैं। कुछ लोगों का यह विचार बना कि जन-आंदोलन से अलग खड़े रहकर पवित्र बने रहने की महत्वाकांक्षा सर्वोदय को उस आत्मशक्ति से बिलकुल वंचित कर देगी जो उसकी पूंजी है और उसका नाम किसी भी बड़े उद्देश्य के लिए खड़े रहनेवाले लोगों की पांक्ति में से काट दिया जायेगा। उनके मन में सवाल पैदा होने लगे कि क्या यही वह आदर्श है जिसके लिए गांधीजी ने सर्वोदय विचार को बोया और फैलाया था और जब सर्व सेवा संघ का गठन हुआ था तब इसके निर्माण करनेवालों ने संघ के निर्माण की फलश्रुति इसी अर्थ में सोची थी।

इसलिए उन लोकसेवकों की ओर से जो बिहार आंदोलन के पक्ष में थे, एक वक्तव्य तैयार किया गया जिसमें इस बात की प्रार्थना की गयी कि हमें पिछले काम पर नजर डालनी चाहिए और देखना चाहिए कि ग्राम-स्वराज्य का काम करते हुए हमें क्या कुछ अनुभव हुए और फिर उन अनुभवों को देश की ताजी परिस्थिति से भी जोड़कर देखना चाहिए। वक्तव्य में कहा गया कि यदि हम ऐसा नहीं करते तो हमारा ग्राम स्वराज्य आंदोलन भी अधूरा का अधूरा पड़ा रह जायेगा।

इसी संदर्भ में वक्तव्य ने लोकसेवकों को गुजरात में जो छात्र-आंदोलन हुआ था उसकी याद दिलायी और कहा कि बिहार में जो आंदोलन हुआ वह वास्तव में गुजरात आंदोलन का ही परिणाम है। उन्होंने कहा कि यह आंदोलन छेड़ा नहीं गया है, छिड़ गया है और अगर जयप्रकाशनारायण और संघ कार्यकर्ताओं ने इसका मार्गदर्शन नहीं किया होता तो इसमें भटकाव आ जाता और यह समाप्त हो जाता। आंदोलन की व्याख्या और बिहार प्रांत ने उसे जो समर्थन दिया है उसकी बात करते हुए वक्तव्य में कहा गया कि यद्यपि ब्रिटिश राज्य में भी लोगों ने निहित स्वार्थों के साथ संघर्ष किया था किन्तु वे तत्व आजादी के बाद भी बने रहे और उन्होंने इस बीच कई तरह से और कई ढंगों से अपने को शक्तिशाली बनाया। अभी तक इन निहित स्वार्थियों का ठीक रूप लोगों के सामने नहीं था। बिहार के जन आंदोलन ने लोगों के सामने इनका पर्दाफाश कर दिया है।

आज जो परिस्थिति है वह परिस्थिति इसलिए है कि कांग्रेस ने गांधीजी की सलाह नहीं मानी और राज्य की बागडोर सम्हालने की बजाय वह उनकी इच्छानुसार गांव में नहीं फैली। आजादी के बाद जो नया उत्साह उमड़ा था, अगर कांग्रेस ने लोकसेवा का ध्येय सामने रखकर उस उत्साह को एक निश्चित धारा में प्रवाहित किया होता तो ग्रामस्वराज्य की स्थापना हो जाती। ऐसा करने के बजाय कांग्रेस ने एक शोषण करने-वाली पद्धति का सहारा लिया जो अंग्रेजों से उसे विरासत में मिली थी

इन सर्वोदय कार्यकर्ताओं ने अपना यह विचार भी अधिवेशन में रखा कि आज की हालत में उन शक्तियों से संघर्ष हमारा पहला कर्तव्य है जो गांव में समाज को तोड़ रही हैं और उनके ऊपर एक ऐसा दमन भरा लाद रही हैं जो उनके खून में लगी है। अगर हम इस प्रवृत्ति का सामना नहीं करते तो ग्राम-स्वराज्य एक सपना बनकर रह जायेगा। यद्यपि यह बात सही है कि आज बिहार या दूसरे स्थानों में जो आंदोलन चल रहा है उसका ध्येय ग्राम स्वराज्य के आदर्श नहीं हैं तो भी वक्तव्य में सर्वोदय कार्यकर्ताओं से

प्रार्थना की गयी कि वे अपने को जन-आदोलन के साथ जोड़ें और ग्राम-स्वराज्य के तत्वों को दाखिल करें।

वैसे यह पहला ही मौका नही था जब संघ को इस तरह की चुनौती का सामना करना पड़ा हो। सघ के प्रारंभिक वर्षो मे उसे डा. जे. सी कुमारप्पा और श्री किशोरलाल मशरूवाला जैसे आदर्शनिष्ठ गाधीवादियो का मार्गदर्शन प्राप्त था। उन लोगो ने कुछ दिनो तक सरकार के सामने गाधी विचारो को अमल के विचार से पूरी शक्ति के साथ पेश किया था। जवाहरलाल नेहरू ने डा० कुमारप्पा को योजना आयोग के साथ भी सलाहकार के रूप मे जोडने की इच्छा व्यक्त की और डा० कुमारप्पा ने कुछ दिनो तक सच्चे मन से इस बात की कोशिश की कि हमारी पचवर्षीय योजनाओ में गाधी विचार को भी स्थान मिले किन्तु उन्हे निराशा ही हाथ लगी। गाधी के अर्थशास्त्र सबंधी विचार सहानुभूति के साथ देखे समझे जायेंगे, इसकी कोई आशा न रहने पर उन्होने आयोग से अपना सम्बन्ध तोड लिया। इसके बाद भी सघ ने सरकार के साथ सहयोग की प्रवृत्ति को छोडा नहीं और बहुतसी समस्याओ पर उसने अपना दृष्टिकोण प्रकट करते रहना जरूरी माना। अवश्य ही सघ अपने विचार आदोलन के द्वारा प्रकट नही करता था बल्कि रचनात्मक कामो के माध्यम से उन्हे पेश करने की कोशिश करता था। कई लोग पूछते हैं कि अगर गाधीजी जीवित रहते या उनके समकालीनो ने आज की परिस्थिति को ठीक से समझ लिया होता तो वे क्या करते? इसका दो टूक जवाब देना मुश्किल है फिर भी यह तो कहा ही जा सकता है कि आज जो परिस्थिति हो गयी है अगर इस परिस्थिति को सर्वोदय कार्यकर्ताओ ने प्रारंभ मे ही ठीक ठीक समझ लिया होता तो वे हाथ पर हाथ रखकर बैठे नही रहते, क्योकि वैसा करना तो सर्वोदय के आदर्शों पर पानी फेरने जैसा हो जाता।

कुछ भी हो अब यह-बात बिलकुल साफ हो गयी है कि लोकसेवक अपने आपको जनता के दुख दर्द से अलग नहीं रख सकते। सर्वोदय के प्रतीकों का उपयोग करते हुए विनोबाजी ने एक बार प्रश्न किया था कि राजनीति और सरकार मे हमारा स्थान अब कहां बच रहा है जबकि उन्होंने बैलों को गाडी मे जोत दिया है। हमारा काम तो अब इतना ही बच गया कि हम उस गाड़ी के चलने के लिए पक्का रास्ता बनायें ताकि वह गाडी सरकार के मन के माफिक सड़क पर अच्छी तरह दौड़ सके। सर्वोदय कार्यकर्ताओ का कहना है कि सरकार ने गाधीजी का रास्ता छोड दिया है और एक नया ही रास्ता पकड लिया है और हमारे सामने जो उद्देश्य है वह यह है कि हम लोगों को बतायें कि सर्वोदय का रास्ता कौनसा है और वे उस पर चल सकें।

सर्वोदय के रास्ते पर चलने के दो ही तरीके हो सकते हैं, या तो सत्याग्रह किया जाये या लोगो को प्रतिनिधियो का चुनाव करना सिखाया जाये। दोनो ही हालतो मे अब तक सर्व सेवा सघ जिस ढग से चल रहा था उस ढग को बदलना जरूरी है। प्रश्न यह है कि जो परिस्थिति सामने आ रही है, सघ उसका किस तरह मुकाबला करता है। क्या उसे इस परिस्थिति से निबटने के लिए कोई नया ढाचा खडा करना पड़ेगा। लोकसेवको के मन मे यही प्रश्न बार-बार उठ रहा है। और इसीलिए सघ के टूटने की बात से हवा मे एक गर्माहट आ गयी है। O

अनाज में लगान-वसूली : कुछ विचार

—बनवारीलाल चौधरी

'अनाज में लगान लिया जाये और कर्मचारियो को उनके वेतन का एक हिस्सा अनाज में दिया जाये', इस विचार से मैं पूर्णत सहमत हू।

लेवी-वसूली की असफलता:—लेवी-वसूली की असफलता मे नेतागण, राजकारण मे प्रभावशाली किसान और सम्बधित शासकीय अधिकारियो की मिली-जुली साजिश है। लेवी बडे और या राजकारण में प्रभावशाली किसानो ने ही नहीं दी। अन्य सामान्य ने या तो स्वय ही पटा दी है या उससे जबरन वसूल कर ली गयी है। हम उसके भुक्तभोगी हैं।

इस साजिश के तीन पैतरे हैं और ये ही इस कार्य में पनप रहे भ्रष्टाचार के जनक हैं। ये हैं :

(१) क—पटवारी द्वारा झूठा बढा-चढ़ाकर रकबा लिखना।

ख—असिंचित रकबे को सिंचित बता देना।

ग—बडे प्रभावशाली किसानो के रकबे मे रियायत बरतना, उनका रकबा कम दर्शाना।

(२) लेवी के प्रमाण का ठीक रीति से हिसाब नही लगाना। उदाहरणार्थ, एक हैक्टेयर पर लेवी यदि माफ है और किसी का रकबा डेढ़ हैक्टेयर है, तो इस माफी के रकबे को नहीं छोड़ना। जान-बूझकर गलती के रूप मे अधिक प्रमाण लिखना।

किसान को इसका सशोधन कराने का अधिकार है, पर यह एक बहुत झंझट भरा कार्य है। आफीसर लोग लेवी वसूल करने में अपने को इतना व्यस्त बताते हैं कि वे इस पर ध्यान ही नही देते। इस सब मे मुट्ठी गरम करने का प्रश्न हर समय खडा रहता है। किसान का बिना वजन का आवेदन-पत्र बिजली के पखे की हवा में उड़कर कहा चला जाता है, पता नही लगता।

(३) लेवी-अभिग्रहण-केन्द्र : इन केन्द्रों पर

क—अनाज की गुणवत्ता (क्वालिटी) तय करने मे धाधली होती है। एक ही तरह का अनाज दो व्यक्तियो द्वारा ले जाया गया और उन्हे अलग-अलग भाव मिलते हैं।

ख—तौल मे गडबडी की जाती है। घर से तोलकर ले जाइये, अक्सर अभिग्रहण-केन्द्र पर कम निकलेगा।

किसान को देखकर अलग-अलग प्रकार का व्यवहार होता है। अनाज मे कचरा, मिट्टी आदि है इसका बहाना लेकर मिट्टी-कचरे को बाद मानने के नाम पर हर क्विटल पर एक या दो किलो अधिक अनाज वसूल किया जाता है। अभिग्रहण-केन्द्र के कार्यकर्ता को यदि मिला लिया जाये, तो इन सबसे लाभदायक रूप मे निकला जा सकता है।

लेवी-वसूल करनेवाले कर्मचारी लोग अपने साथ कभी-कभी पुलिस के सिपाहियों को लेकर जाते हैं। इससे ग्रामों मे आतंक

का वातावरण छाया रहता है। विवाह आदि उत्सव के समय की ये लोग ताक में रहते हैं और पहुँच कर किसान को तंग करते हैं। गेहूं की फसल आने के बाद से जुलाई तक और फिर अक्टूबर-नवम्बर में ये लोग कब किस किसान के यहां पहुँच जायेंगे, कोई कह नहीं सकता। किसान अपनी इज्जत बचाने, झंझट मिटाने के लिए रिश्वत का सहारा लेता है। हर ग्राम पर एक तरह से यह सामूहिक जुर्माना सा हो जाता है।

लेवी की ये खामियां यदि मिटा दी जायें, तो सहज ही शासन जो लक्ष्यांक (कोटा) तय करता है, वह खुशी-खुशी पूरा हो जायेगा।

सुझाव

(१) जिस फसल पर लेवी लगी है, उसका शासन द्वारा मान्य हरएक किसान का रकबा फसल के खेत में रहते ही घोषित कर दिया जाये। मतदाता-सूची के समान यह सूची भी ग्राम पंचायत के दफ्तर में उपलब्ध हो।

(२) रकबा का आकलन पटवारी नहीं, परन्तु ग्राम-पंचायत सम्बन्धित किसान की उपस्थिति में करे और किसान के हस्ताक्षर ले।

(३) लेवी-वसूली का प्रमाण तय करते समय निम्नलिखित का विचार किया जाये :

क—परिवार में सदस्यों की संख्या।

ख—किसान मजदूरी अनाज में देता है (होशंगाबाद क्षेत्र के आधार पर) उसके कार्यकर्ताओं के लिए कितना अनाज लगेगा, इसका ध्यान रखा जाये।

ग—जैसे आयकर में मुक्त आमदनी की हद है, उसी प्रकार मुक्त रकबा भी माना जाये और पूर्ण रकबा पर लेवी लगाते समय वह बाद किया जाये

घ—१२ एकड़ से अधिक क्षेत्र में लेवी-वाला अनाज हो तो १२ एकड़ से ऊपर के रकबे पर दुगुने प्रमाण से लेवी ली जा सकती है।

यह तो वर्तमान व्यवस्था की खामी और सुधार हुआ। अनाज के रूप में लगान वसूली के सम्बन्ध में भी अपने सुझाव दे रहा हूँ।

(१) उत्पादन का छठवां भाग लगान के रूप में लेना बहुत अधिक है। शुद्ध बचत (लाभ) का छठवां भाग लेना दूसरी बात है। हमारे क्षेत्र में प्रसिंचित गेहूं एक मन लगाने पर औसतन पांच मन होता है। भारत का औसतन उत्पादन भी इतना ही है। सुझाव है कि लगान उत्पादन पर नहीं बीज बोने के प्रमाण को ध्यान में रखके निश्चित किया जाये। प्रसिंचित गेहूं की बोने की दर प्रति एकड़ एक मन मानें तो लगान एक मन के अनुपात के आधार पर हो।

लगान कितना हो यह लागत और उत्पादन को आधार मानकर सोचें। होशंगाबाद क्षेत्र में गेहूं का लागत-खर्च सामान्यतः निम्न प्रकार है :

१. बीज—एक गुना

२. खाद—एक गुना

३. बैल की मजदूरी—एक गुना

४. किसान और अन्य मजदूर—एक गुना

इसलिए ५ गुनी उपज पर एक भाग बचा। इसमें सरकारी वर्षा, बीज पर ब्याज, बैल और किसानी साधन पर घिसारा आदि लगभग पौन गुना मानना चाहिए। अब किसान के पास केवल १८ सेर गेहूं बचता है। इस बचत में भी उसे कुछ हिस्सा मिलना चाहिए तथा किसी भी हालत में लगान १० सेर प्रति एकड़ से अधिक नहीं होना चाहिए। यह उपज का लगभग ५ प्रतिशत होगा।

उपज के आधार पर यदि लगान लिया गया, तो उसमें भ्रष्टाचार होगा, कितनी उपज हुई यह तय करने में।

अनाज में लगान-वसूली

लगान वसूली की वर्तमान व्यवस्था ही अनाज में लगान की वसूली करे। ग्राम-पंचायत या शासन द्वारा नामजद ग्राम-पटेल (एजेन्ट) यह कार्य करे। किसान अनाज पटेल, ग्राम-पंचायत को देंगे। यह निर्धारित प्रकार—गुणवत्ता का अनाज होगा। ग्राम-स्तर पर कार्य होने से (लेवी में वर्तमान व्याप्त) भ्रष्टाचार नहीं होगा। किस फसल का किस किसान ने कितना रकबा बोया है, यह ग्राम-पंचायत घोषित करेगी।

सार-संक्षेप

१—अनाज में लगान लेना अच्छा होगा। नगरों में खाद्य-पूर्ति और वितरण की समस्या हल करने में यह सहायक होगा।

२—लगान रकबा के आधार पर उसमें पड़नेवाले बीज को ध्यान में रखकर लिया जाये। लगान-बीज का अनुपात होगा।

३—उपज के आधार पर लगान लेना भ्रष्टाचार को पनपाना होगा।

४—ग्राम-पंचायत अनाज में वसूली करे।

—लगान प्रसिंचित गेहूँ की फसल पर लगभग १० सेर या किलो प्रति एकड़ हो, इससे अधिक नहीं। गेहूं की प्रसिंचित फसल की उपज का यह लगभग ५ प्रतिशत होगा। ○

सेवाग्राम आश्रम

सूचना

सेवाग्राम आश्रम वर्धा से प्राप्त एक सूचना के अनुसार कई वर्षों से पूज्य महात्मा गांधी के सेवाग्राम आश्रम की व्यवस्था सेवाग्राम प्रतिष्ठान की ओर से की जा रही है। प्रतिवर्ष देश के विभिन्न भागों से और विदेशों से हजारों यात्री बापू कुटी के दर्शन करने आते हैं।

प्रतिष्ठान के पास देश और विदेश के कई भाइयों और बहनों के पत्र आये हैं कि वे कुछ समय के लिए सेवाग्राम आश्रम के शान्त वातावरण में रहकर गांधीजी की विचारधारा का अध्ययन करना और साधना के रूप में आश्रम के दैनिक जीवन में हिस्सा लेना चाहते हैं।

इस दृष्टि से प्रतिष्ठान ने तय किया है कि कुछ चुने हुए व्यक्तियों को समय-समय पर आश्रम में रहने की अनुमति दी जाये ताकि वे दैनिक प्रार्थना, सामूहिक कताई, शरीर-श्रम व स्वाध्याय के कार्यक्रमों में भाग ले सकें। नियमों के अनुसार इस प्रकार के भाई व बहन आश्रम में कुछ सप्ताह, किन्तु तीन महीने से अधिक नहीं, रह सकेंगे। व्यक्तियों के निवास की व्यवस्था तो आश्रम की ओर से की जायेगी, किन्तु भोजन आदि का खर्च व्यक्तियों को स्वयं करना होगा।

इस व्यवस्था के अनुसार जो भाई या बहन सेवाग्राम आश्रम में रहना चाहें वे मंत्री, सेवाग्राम आश्रम प्रतिष्ठान, सेवाग्राम (वर्धा) से पत्र व्यवहार कर सकते हैं। लिखित अनुमति प्राप्त होने के बाद ही आश्रम में रहने का प्रबन्ध किया जा सकेगा।

प्रधान मंत्री न्यायालय में उपस्थित

रायबरेली लोक सभा क्षेत्र से १९७१ के मध्यावधि चुनाव में अपने निर्वाचन के खिलाफ विचाराधीन चुनाव याचिका के मामले में भारत की प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने १८ और १९ मार्च को व्यक्तिगत रूप से इलाहाबाद उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति श्री जगमोहनलाल सिन्हा के समक्ष उपस्थित होकर गवाही दी। याचिका समोवा के श्री राज नारायण ने २४ अप्रैल १९७१ को दायर की थी जिन्हें इन्दिराजी को मिले १८३३०९ मतों के मुकाबले ७१४९९ मत मिले थे।

देश के किसी भी प्रधान मंत्री का अदालत के सामने हाजिर होने का यह पहला मौका था। इसके पहले राष्ट्रपति वराह गिरि वेंकट गिरि १९७० में सर्वोच्च न्यायालय के सामने एक चुनाव याचिका के मामले में उपस्थित हुए थे।

श्रीमती इन्दिरा गांधी की गवाही दो दिन में साढ़े छः घण्टे तक चली और वह टाइप किये गये ५५ पृष्ठों में आयी। उसमें १५ हजार शब्द थे। उनके प्रमुख वकील सतीशचन्द्र खरे ने सिर्फ ४० मिनट में उनका मामला पेश किया और बाकी ५ घंटे ५५ मिनट तक राजनारायण के वकील शान्ति-भूषण ने उनसे जिरह की।

न्यायालय के कक्ष में श्रीमती गांधी को बैठने के लिए कुर्सी दी गयी थी जो न्यायाधीश के चबूतरे के दायें ओर एक चबूतरे पर रखी थी। इस कुर्सी की ऊंचाई न्यायाधीश की कुर्सी से कुछ कम थी।

इस मामले में राजनारायण की ओर से ६० गवाह पेश किये गये और इन्दिराजी की ओर से ३७ जिनमें स्वयं इन्दिराजी अन्तिम थीं।

याचिका में राजनारायण ने जो प्रमुख आरोप लगाये थे, वे और उनके इन्दिराजी की ओर से दिये गये उत्तर इस प्रकार हैं

१ आरोप—श्रीमती गांधी ने अपने चुनाव के संगठन के लिए यशपाल कपूर की सेवाएं उस समय अर्जित की जबकि वे प्रधान मंत्री सचिवालय में विशेष कर्तव्य अधिकारी के रूप में कार्यरत थे।

उत्तर : श्री कपूर का इस्तीफा राष्ट्रपति ने १४ जनवरी १९७१ को मंजूर कर लिया था और उन्हें श्रीमती गांधी का चुनाव एजेंट ४ फरवरी १९७१ को बनाया गया।

२. आरोप—श्रीमती गांधी और उनके चुनाव एजेन्ट ने कानून के तहत मंजूर ३५ हजार रुपये की सीमा से कहीं ज्यादा चुनाव खर्च किया या उसके लिए अनुमति दी।

उत्तर आरोप से इंकार

३ आरोप श्रीमती गांधी ने अपने चुनाव के लिए 'गाय और बछड़े' के धार्मिक चिन्ह का उपयोग किया।

उत्तर गाय और बछड़े को हिंदू समाज में धार्मिक चिन्ह नहीं माना जाता है और कांग्रेस ने उसे देश की प्रगति, स्वास्थ्य, सम्पन्नता तथा देश के नागरिकों के लिए दया की फिक्र के प्रतीक रूप में अपनाया है।

४. आरोप श्रीमती गांधी ने अपनी चुनाव सभाओं के प्रबन्ध के लिये जिला मजिस्ट्रेट, पुलिस अधीक्षक, लोक कर्म विभाग के यंत्रियों जैसे उत्तरप्रदेश सरकार के अधिकारियों की मदद ली है।

उत्तर प्रबन्ध का ज्यादातर हिस्सा कानून और व्यवस्था बनाये रखने के लिए था क्योंकि प्रधान मंत्री को देखने या सुनने के लिए लोग बड़ी संख्या में एकत्र होते थे। सभा के लिए निजी ठेकेदारों ने जो मंच बनाये, उनकी कीमत प्रदेश कांग्रेस कमेटी ने चुका दी।

५. आरोप श्रीमती गांधी ने अपने चुनावी दौरों के समय उड़ानें भरने के लिए भारतीय वायुसेना के लोगों की सेवाएं प्राप्त कीं।

उत्तर सरकारी नियमों में इसका प्रावधान है कि प्रधान मंत्री अपने गैर सरकारी दौरों के लिए वायुसेना के विमान किराये पर ले सकते हैं। इनके बीजकों का भुगतान अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के द्वारा कर दिया गया। वायुसेना के चालकों के उपयोग की तुलना उन सरकारी रेलगाड़ियों, बसों और टैक्सियों के चालकों से की जा सकती है जिन्हें किराये पर आम जनता को दिया जाता है।

वार्षिक शुल्क—१५ रु० विदेश ३० रु० या ३५ शिलिंग या ५ डालर, एक अंक का मूल्य ३० पैसे।
प्रभाष जोशी द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं ए० जे० प्रिन्टर्स, नई दिल्ली-१ में मुद्रित।

सर्व सेवा संघ का साप्ताहिक मुखप

भूदान रजत जयन्ती विशेषांक

आदर्श ग्राम ट्रस्ट फण्ड सिरोही

केसर विलास, सिरोही (राजस्थान)

सिरोही जिले में—गाधी विचारधारा को आगे बढाने के लिए
भूतपूर्व सिरोही राज्य के लिए यह ट्रस्ट कायम हुआ है जिसके ट्रस्टी हैं:—

श्री राजमाता श्रीकृष्ण कवर बा साहिबा
सिरोही दरबार हिजहाईनेस महाराजाधिराज श्री अभयसिहजी सा० बहादुर,
श्री गोकुल भाई दौ० भट्ट
महाराजकुमार श्री रघुवीरसिहजी

ट्रस्ट की प्रवृत्तिया —

(1) बाल म्युजियम को प्रोत्साहन
(2) गाधी विचार निबंध प्रतियोगिता
(3) सत्साहित्य प्रचार, "ग्रामराज" साप्ताहिक पत्र को सहायता
(4) गाधी अध्ययन केन्द्र (शिवकुटी आबू) मे गाधी भवन का निर्माण
(5) विधवाओ को, विद्यार्थियों को, हरिजन-आदिवासियो को चरखा द्वारा सहायता
(6) चरखा-खादी तथा ग्रामोद्योगों के कार्य मे सहायता
(7) सर्वोदय कार्यक्रम को प्रोत्साहन देना
(8) चलती-फिरती गाधी प्रदर्शनी योजना भी विचाराधीन है
(9) ग्रामदानी गांवों को आदर्श बनाने मे सहायता
(10) राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा की गांधी विचार प्रचार योजना में योगदान
(11) गाधी विचार के सब कार्यों मे यथायोग्य सहायता
(12) शराबबन्दी कार्य मे सहायता वगैरा
(13) कृषि उत्पादन कार्य मे सहायक होनेवाली गैस प्लान्ट योजना मे सहयोग।
(14) मिल कोठी का पूरा कब्जा मिलने पर औद्योगिक बालिक विद्यालय (छात्रावास सहित) स्थापित करने की योजना।
(15) और अन्य कार्यक्रम गाधी विनोबा के विचारानुसार।

आबू मे शिव कुटी मे गाधी भवन बन गया है जिसमे गाधी विचार के अध्ययन के लिए सब सुविधाए उपलब्ध होगी। बाहर से आनेवालों के लिए एक सप्ताह तक ठहरने की भी व्यवस्था है।

गाधी भवन मे बाल मन्दिर चल रहा है। मध्यम स्थिति के करीब 5 शिशु लाभ उठा रहे हैं। बहिन उमा मुंछाला उसके चार्ज मे हैं।—

इस तरह ट्रस्ट की प्रवृतियां दिन व दिन आगे बढ़ती जा रही हैं। ट्रस्ट का ट्रस्ट डीड रजिस्टर्ड हो गया है। उसमें ट्रस्ट के चौथे ट्रस्टी महाराजकुमार श्री रघुवीरसिंहजी नियुक्त किये गये हैं।

सिरोही जिले—मे चरखा, खादी का कार्य "नया समाज मण्डल" द्वारा करवाया जाता है। ग्रामदान सर्वोदय का कार्य 'जिला सर्वोदय मण्डल' द्वारा करवाया जाता है।

भूदान-यज्ञ

सम्पादक
राममूर्ति : भवानी प्रसाद मिश्र
कार्यकारी सम्पादक : शारदा पाठक

वर्ष २१ १४-२१ अप्रैल, '७५ अंक २७-२८-२९

१९ राजघाट, गांधी स्मारक निधि, नई दिल्ली-११०००१

विषय सूची पृष्ठ ३१ पर

भूदान रजत-जयन्ती वर्ष

मालकियत की भावना मानव सभ्यता से भी पहले शुरू हुई और उसके विकास के साथ पनपती गयी। उसकी संतुष्टि के लिए होनेवाले शोषण से वह आर्थिक और सामाजिक विषमता बढ़ती गयी जो दुनिया में फैली अशान्ति तथा उथल-पुथल का मूल कारण है।

शोषण से मुक्ति और समता लाने की कोशिशें गांधी से पहले भी हुईं, लेकिन वे हिंसा पर आधारित थीं, उनमें प्रतिहिंसा की गुंजाइश थी और इसलिए नतीजे स्थायी नहीं हो सके। गांधीजी ने शोषक के मानस परिवर्तन पर जोर दिया जिससे वह स्वेच्छा से शोषण बन्द कर दे। यह अहिंसक तरीका था और इसका आधार प्रेम तथा करुणा की भावना इतनी जाग्रत करना था कि मालकियत की भावना शिथिल पड़ जाये। गांधीजी के इस विचार का प्रायोगिक रूप विनोबा के भूदान आन्दोलन में सामने आया।

आन्ध्र के पोचमपल्ली गांव से १८ अप्रैल १९५१ को आरम्भ भूदान की प्रगति, बदलते स्वरूप और उपलब्धियों की एक झांकी हम इस अंक में पेश कर रहे हैं। इस विशेषांक में ७, १४ और २१ अप्रैल के अंक शामिल हैं। इसके साथ ही 'भूदान-यज्ञ' का प्रकाशन सर्व सेवा संघ के निर्णय के अनुसार पूज्य विनोबा के 'मौन' की शेष अवधि तक के लिए स्थगित किया जा रहा है। इस अवधि में सर्व सेवा संघ का भी मौन चल रहा है। इस मौन के दौरान जरूरी कामों के निपटारे के लिए किये गये प्रबन्ध की जानकारी इसी अंक के अन्त में प्रकाशित की जा रही है। १८ अप्रैल १९७५ से भूदान का रजत जयन्ती वर्ष मनाया जा रहा है। प्रान्तीय से लेकर स्थानीय स्तर तक की देश भर में फैली सभी भूदान समितियों और सर्वोदय मंडलों से अनुरोध है कि वे इस वर्ष अपने यहां ऐसे आयोजन करें जिससे सर्वोदय के विचार की गति और प्रतिष्ठा बढ़े।

मदर टेरेसा

कलकत्ता में एक अरसे से समाज सेवा में जुटी मदर टेरेसा को इस वर्ष शान्ति के लिए नोबल पुरस्कार दिये जाने की घोषणा हुई है। अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष में मदर टेरेसा को यह पुरस्कार देकर पुरस्कार समिति ने अपना गौरव बढ़ाया है।

सरला बहन

गांधीजी की अनन्य शिष्या सरला बहन (मिस कैथरीन हिलमैन) का ७५ वां जन्मदिवस लक्ष्मी आश्रम, कौसानी में ५ अप्रैल को सादगी से मनाया गया। आयोजन में सरला बहन भी उपस्थित थीं। इस अवसर पर हिमालय सेवा संघ के पश्चिम क्षेत्र के कार्यकर्ताओं का सम्मेलन भी हुआ जिसमें ७० कार्यकर्ताओं ने भाग लिया और पर्वतीय क्षेत्र की समस्याओं पर विचार कर अगले वर्ष का कार्यक्रम तय किया। ○

Short Tender Notice PR—1105|75

1. Sealed tender on approved bill of quantity to be eventually drawn in P. W. D. Form F-2 will be received from the registered contractors of Irrigation department by the undersigned on Monday the 21st. April, 1975 upto 3 P.M. for the following work and will be opened on the same date in presence of the tenderer or their authorised agents

Name of Work.	Amount
1. Ladhup M.I Scheme (Remaining work) P S Chandwa.	Rs. 46,500/-
2. Carriage of materials including loading, unloading and stacking.	Rs. 38,000/-

2. Tenderers are required to deposit earnest money at the rate of Rs 100/- for every Rs. 5,000/- or part thereof on their tendered amount in shape of Post Office Saving Bank account, Post Office Time Deposit account and National Saving Certificate (IInd & IIIrd issue) duly pledged in favour of the undersigned

3. The bill of quantity and other information can be had from the office of the undersigned on payment of Rs. 50/- each (non-refundable) on any working day during office hours. No bill of quantity will be issued on the date of receiving tender.

4. Tenderers are required to furnish Income tax and sales tax clearance certificate alongwith the tender.

5. The undersigned reserves the right to reject any or all the tenders or to distribute the work among the tenderers without assigning any reason *thereof.*

(K. P. SINHA)
EXECUTIVE ENGINEER
MINOR IRRIGATION DIVISION
DALTONGANJ.
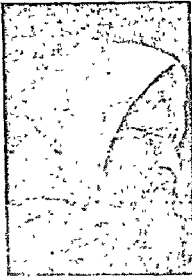
हमारा विश्वास है कि आखिर में विजय सज्जनता की ही होती है। इस दुनिया में सज्जनता की ही कीमत की जाती है, लेकिन जरा लम्बी नजर से देखा जाये तो मालूम होगा कि इस दुनिया में भी सज्जनता की ही विजय होती है। अब बापू की ही मिसाल लीजिये। उनके जैसी उत्तम मृत्यु प्राप्त होना दुर्लभ ही कहा जायेगा। उनका दिन भर का सारा काम समाप्त हो चुका था। प्रतिदिन के नियमानुसार सूत कातना भी हो चुका था। प्रार्थना के लिए जा रहे थे और तिस पर भी थोड़ी देर हो जाने के कारण मन में भगवान् के सिवा दूसरा विचार भी न था। ऐसे समय दो गोलियाँ लग जाती हैं, मुख से राम-नाम निकलता है और कुछ क्षणों में मृत्यु हो जाती है। कितना बड़ा भाग्य है यह! मरते समय मुख में राम-नाम आये, इसके लिए कितनों को कितनी तपस्या करनी पड़ती है! ...... एक दफा मेरी उनसे बातचीत चल रही थी। तब उन्होंने कहा—"ज्ञानी सर्वथा अहंकारशून्य होता है यह कहना गलत है। जब तक देह है तब तक कुछ-न-कुछ अहंकार तो रहेगा ही, बिलकुल खतम नहीं होगा। हां, धीरे-धीरे खतम होता जायेगा। लेकिन जिस क्षण अहंकार बिलकुल नष्ट हो जायगा, उसी क्षण यह देह एक ढेर के समान गिर जायेगी।"

सत्यमेव जयते

—विनोबा

"कुछ लोग कहते हैं कि 'बापू का काम पूरा होने के पहले उन्हें चला जाना पड़ा, इसलिए उनके जीवन को असमाप्त कहना होगा।' लेकिन यह कहना ठीक नहीं है। क्या दुनिया की सारी समस्याओं को हल करने का उन्होंने ठेका लिया था?" "परमेश्वर की दुनिया तो चलती ही रहती है। उसकी समस्याएँ भी अगणित होती है और उन्हें हल करने की जिम्मेदारी भी परमेश्वर की ही होती है। बीच बीच में वह किसी-किसी को अपना आयुध बनाकर भेजता रहता है। यदि बापू के व्यक्तिगत जीवन की कोई समस्या होती और उसे हल किये बगैर वे चले जाते, तो फिर हम कह सकते थे कि वे असफल रहे। लेकिन समस्याएँ तो उनकी अपनी नहीं थी, दुनिया की ही थीं।

"बापू की मृत्यु के बारे में भिन्न-भिन्न विचार हो सकते हैं, लेकिन उनका अपना निजी जीवन नहीं था। वे तो सारी दुनिया के साथ एकरूप हो गये थे। हम सभी के पुण्य से वे पुण्यवान बन जाते थे और हम सभी के पाप से पापी। हम सबके पापों का बोझ उन्हीं के सिर पर था, उसी पाप का प्रायश्चित है—वह मृत्यु।"

"समत्व एक अत्यन्त दुर्लभ चीज है। लेकिन मुझे तो दुर्लभ वस्तु की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करने में ही आनन्द महसूस होता है। वैसे देखा जाये तो परिपूर्ण ज्ञानी, समत्वयुक्त व्यक्ति इस दुनिया में मिलना अशक्य ही है। किसी भी महापुरुष के जीवन में बिलकुल पूर्णता नजर नहीं आती, कुछ-न कुछ अपूर्णता तो रहती ही है। पूर्ण समता तो अव्यक्त ही रहेगी। व्यक्त होने का मतलब ही है कि उसमें कुछ-न-कुछ अपूर्णता जरूर है। पूर्णता तो अव्यक्त परमेश्वर में ही पायी जा सकती है। लेकिन महापुरुषों के जीवन से हमें प्रेरणा मिलती है। उनमें हम अपनी ही आत्मा के परिशुद्ध स्वरूप को देखते हैं। उसी तरह उनमें जो अपूर्णता होती है, उनके दर्शन से भी लाभ होता है।" "मेरा ऐसा मत है कि 'ज्ञानेश्वर' ही एक ऐसा व्यक्ति है, जो समता के आदर्श के काफी निकट पहुंचा था। उसके सारे लेखन में कहीं एक भी कटु शब्द नहीं मिलता।" वैसे उसकी जिन्दगी भी छोटी-सी ही थी।

"मुझसे कितने ही लोग कहा करते थे—'विश्वामित्र भी जो नहीं कर सका, वह तुम कैसे कर सकोगे?' इस पर मैं जवाब देता था मैं तो विश्वामित्र के कन्धों पर खड़ा हूं। बाप के कन्धों पर खड़ा बालक अधिक दूर का देख सकता है। आज तक के सभी ऋषियों के अनुभवों का लाभ मुझे मिल रहा है। 'मुझे सफल बनाने के लिए ही विश्वामित्र असफल हुआ।'

'ऐसा सवाल न उठाइये कि भूदान का काम आज तक इतिहास में कभी भी नहीं हुआ है। बल्कि यह कहिये कि हम इसे करके ही रहेंगे। इतिहास में आज तक जो काम नहीं हुआ, वह करने के लिए ही तो भगवान ने हमें पैदा किया है। यदि करने के सारे काम हमारे पूर्वजों ने ही कर डाले होते, तो भगवान हमें यह जन्म ही किसलिए देता? अतएव याद रखिये कि हमें एक ऐसी अहिंसक क्रांति कर दिखानी है, जो इतिहास में कभी नहीं हुई थी।'

'सरकार अपना काम करेगी, मैं अपना काम करूंगा। मेरा जनशक्ति पर ही भरोसा है, इसलिए मैं जनशक्ति को ही जागृत करने का काम कर रहा हूं। लेकिन सरकार को गरीबों के हित में कानून बनाने से कौन रोकता है? कानून बनाना तो उसका काम ही है। लेकिन मेरा कानून पर विश्वास नहीं जनशक्ति पर है। मैं मानता हूं कि कानून से कुछ ही मसले हल हो सकते हैं।

'मैं प्रेम के मार्ग से दुनिया को एक विचार देकर अपना काम कर रहा हूं। अगर मेरा विचार थोड़े लोगों को जच गया तो थोड़ा काम होगा, सबको जच गया तो पूरा काम होगा। और किसी को भी नहीं जचा तो कुछ भी काम नहीं होगा। लेकिन मैं तो केवल विचार ही देना चाहूंगा, जबरदस्ती विचार लादूंगा नहीं। मैं मानता हूं कि हर किसी को अपने विचार का प्रचार करने का अधिकार होना चाहिए। मैं इस बात को

बिलकुल गलत मानता हूं कि अपने विचार को छोड़कर बाकी के सारे विचारों का प्रचार बन्द किया जाये। कम्युनिस्ट अपना विचार जनता के सामने रखेंगे, मैं अपना विचार रखूंगा। दूसरे भी लोग अपना-अपना विचार रखेंगे। फिर जनता को जो विचार पसन्द आयेगा उसे वह स्वीकार कर लेगी। चुनाव करने का काम तो जनता का ही है।···मेरे मन में कोई भी उलझन नहीं है, मेरा दिमाग बिलकुल साफ है। मैं जनता को एक विचार बता रहा हूं। मैं मानता हूं कि वह राह सबसे बेहतर है। फिर भी उस राह को पकड़ना या न पकड़ना, इसका फैसला तो जनता ही करेगी।'

(निर्मला देशपांडे · 'विनोबा के साथ' से)

विश्व-मानव का उदय

—दादा धर्माधिकारी

भारत की आजादी की लड़ाई में गांधीजी का स्थान अनोखा है। बीसवीं शताब्दी में विश्व के क्षितिज पर जिन महामानवों का उदय हुआ उनमें गांधीजी को सर्वप्रथम स्थान देना होगा। क्रांति की प्रक्रिया में गांधीजी ने दो नये आयाम जोड़ दिये। एक हृदयपरिवर्तन का और दूसरा सत्याग्रह का। व्यक्तियों का सफाया करने से संपूर्ण क्रांति सम्पन्न नहीं होती सिर्फ परिस्थिति-परिवर्तन मात्र होता है। इसीलिए सशस्त्र क्रांति या हिंसक क्रांति अधूरी ही रह जाती है। क्रांति की पूर्ति करने के लिए सामाजिक क्रांति की आवश्यकता अवश्यंभावी होती है। क्रांतिकारक के खुद के जीवन में क्रांति का आरम्भ होना चाहिए यानी मनुष्य को कायम रखकर परिस्थिति में आमूलाग्र परिवर्तन लाने की कला सधनी चाहिए। क्रांतिकारक के अपने जीवन में क्रांति के मूल्य प्रकट होने लगेंगे, तभी यह संभव होगा। कहने का मतलब यह कि हृदयपरिवर्तन का प्रारम्भ भी स्वयं से शुरू होना चाहिए। अर्थात् क्रांति की प्रक्रिया की शुरूआत स्वयं के आचरण से होनी चाहिए, यह हृदयपरिवर्तन का आशय है।

क्या प्रतीकार भी सहयोगात्मक हो सकता है? क्या प्रतीकार की प्रक्रिया में तथा प्रतीकार की अन्तिम अवस्था में उसकी परि-समाप्ति मैत्री में होना सम्भव है? या सौहार्द और प्रतीकार में प्रकाश और अंधेरे जितना ही विरोध है? इस प्रश्न का उत्तर गांधीजी के सत्याग्रह में है। सत्याग्रह के आविष्कार के कारण समाज परिवर्तन की प्रक्रिया को कला का सौंदर्य प्राप्त हुआ। इस माने में दुनिया के सांस्कृतिक विकास के इतिहास में गांधीजी ने अनमोल योगदान दिया है। उनके इस योगदान के कारण उनके विभूतिमत्व को अद्भुत रम्य महत्त्व प्राप्त हुआ है।

गांधीजी के बाद आजादी के दरमियान विश्व के क्षितिज पर दूसरे एक विश्वमानव का उदय हुआ। क्रांति की प्रक्रिया में उसने ललितकला की मधुरता भर दी। उस विश्व-मानव का नाम है विनोबा। गांधी और विनोबा इन दो विश्वमानवों के विभूतिमत्व में भिन्नता जरूर है, लेकिन विरोध नहीं है। इसलिए वह भिन्नता अधिक मनोज्ञ हो गयी है। जिस सांस्कृतिक विकास की प्रक्रिया का प्रारम्भ गांधीजी ने किया उसका परिपाक विनोबा के साम्ययोग में तथा भूदान की प्रक्रिया में हुआ। मानवीय इतिहास में विनोबा का भूदान एक अद्वितीय, उदात्त एवं अद्भुत पर्व है। प्रतीकारात्मक सहयोग के बिना भी समाज परिवर्तन कराना सम्भव है, यह विनोबा ने निःसंदेह सिद्ध कर दिया है। उनके भूदान का विकास ग्रामदान में हुआ। भूदान-ग्रामदान आन्दोलन यद्यपि सम्पन्न नहीं हुआ, तथापि वह समाप्त भी नहीं हुआ है। लोक-मान्य स्वराज्य के मंत्र के द्रष्टा तथा अनुष्ठाता थे, तो गांधी क्रांति की अभिनव प्रक्रिया के प्रणेता तथा प्रयोगी थे। विनोबा 'जयजगत' के मंत्र के द्रष्टा तथा ग्रामदान की प्रक्रिया के मार्गप्रवर्तक हैं। ग्रामदान और ग्रामजीवन परस्पर पर्यायवाची शब्द हैं। मांगने से जमीन मिल सकती है और विचार समझा देने से सामान्य व्यक्ति भी मालिकी और मिलकियत छोड़ने को तैयार हो सकते हैं, यह विनोबा ने एक वैज्ञानिक प्रयोग की तरह सिद्ध करके दिखाया है। भूदान में जमीन मांगने के लिए विनोबा के बिलकुल अदना साथी भी गये। उनको जितनी जमीन प्राप्त हुई तथा उस कुल जमीन में जितनी अच्छी जमीन प्राप्त हुई उतनी अब तक किसी भी अन्य व्यक्ति को जोर जबरदस्ती से या सत्ता के बल पर प्राप्त होने की एक भी मिसाल इतिहास में नहीं मिलती। इस दृष्टि से विनोबा का विभूति-मत्व अलौकिक है। उनकी भूदान ग्रामदान की प्रक्रिया का इतिहास में न दृष्टान्त है न उपमा। भूदान-ग्रामदान के आन्दोलन में सत्ता, सम्पत्ति और संघर्ष इनमें से किसी एक का भी आकर्षण नहीं था। फिर भी जो किसी भी समाज को ललामभूत हो सकते हैं ऐसे जयप्रकाश या धीरेन्द्र मजूमदार जैसे पुरुष और उनसे तुल्यबल और तुल्यतेज रखनेवाली और अनेक पराक्रमी बहनें, भूदान-ग्रामदान के पुनीत आन्दोलन में शामिल हुईं। इतना ही नहीं, बल्कि हजारों की संख्या में ऐसे युवक और युवतियां भी शामिल हुईं जो अविख्यात और अनामिक रहने के साथ-साथ तेजस्वी और पराक्रमी भी हैं। किसी भी प्रकार का प्रलोभन और आकर्षण न रहते हुए भी इतनी बड़ी संख्या में लोकक्रांति के आन्दोलन में स्वयंस्फूर्ति के साथ लोगों के शामिल होने की यह मिसाल इतिहास में पहली ही बार देखने में आती है। विशेष बात यह है कि संघर्ष की चुनौती भी इस प्रक्रिया में नहीं है। विनोबा की क्रांति की प्रक्रिया समवादी, विधायक तथा मातृरूप है। उसके समवादित्व के कारण वह जितनी उदात्त है, उतनी ही ललितकलामय भी है। उसकी मधुरता अजोड़ है। समाज-परिवर्तन की प्रक्रिया में भी मनुष्य एक-दूसरे के नजदीक आ जायें और बान्धुसार काम में उनमें निर-

पाथिक सौहार्द का संबंध प्रस्थापित हो यह विनोबा की योजना है, इस योजना की दिशा में ही उन्होंने कदम बढ़ाये जो उनकी पदयात्रा के समान सयत तथा तालबद्ध रहे हैं इसलिए रसिकों को उनकी यह प्रक्रिया संगीत की तरह हृद्य प्रतीत हुई। यह कुशलता विलक्षण है। विनोबा के विभूतिमत्व की विशिष्टता इसी में संचित है।

विनोबा की क्रांति सम्पन्न नहीं हुई, लेकिन वह असफल भी नहीं हुई। बल्कि यह कहना होगा कि दूसरों की संकल्पित इष्टसिद्धि की अपेक्षा विनोबा की अल्पसिद्धि अधिक उज्ज्वल तथा प्रगतिशील है। गांधीजी की तरह विनोबाजी ने भी गुण और पुरुषार्थ में दिग्गज साथी जुटाये। यह यश कोई छोटा नहीं है। इसका मूल्यांकन करने के लिए अन्य सभी नाप छोटे पड़ेंगे। मनुष्य का मानदंड मनुष्य ही है।

"संसद, विधानसभा, विद्यापीठ, न्यायालय, उद्योग, व्यापार, राजनीति इन सबमें जिनको कहीं भी स्थान नहीं मिला, ऐसे ही निकम्मे लोग विनोबा के इर्दगिर्द जमा हुए। बुद्धि, कला, कर्तृत्व, सत्ता, सम्पत्ति, शास्त्र-प्रवीणता, इनमें से कोई एक वैभव भी जिनके पास था ऐसा एक भी व्यक्ति विनोबा के पास नहीं फटका।" इस तरह का एक बनावनाया आक्षेप सतत किया जाता है। जो स्त्री पुरुष विनोबा के आंदोलन में निष्ठापूर्वक शामिल हुए, उनका जिक्र ऊपर आ चुका है। लेकिन क्षणभर के लिए विनयवृत्ति से यह आक्षेप कबूल कर लें तो भी विनोबा के इन सामान्य खिलाड़ियों ने अपने जीवन का खाद देकर भारतभूमि की उर्वरता बढ़ायी है, इसे स्वीकार करना होगा। भूदान से पूर्व के लोकोत्तर नेता जयप्रकाश, और विनोबा का भूदान अपने अनमोल जीवनदान से समृद्ध करनेवाले जयप्रकाश, इन दोनों भूमिकाओं में गुणात्मक अन्तर है। भूदान, ग्रामदान में से जयप्रकाशजी के जिस पक्षनिरपेक्ष नेतृत्व का और निरूपाधिक मानवीय विभूतिमत्व का उदय हुआ, उसकी जय-जयकार से चारों दिशाएं गूंज उठी हैं। विनोबा के आंदोलन में से ही जयप्रकाश के नेतृत्व का यह सुरभित तथा आकर्षक अष्टदल उन्मीलित हुआ है।

इसलिए भूदान की इस रजत जयन्ती की मंगल बेला में हम सब लोग विनोबा का भक्तिपूर्वक वंदन करें और उनके द्वारा शुरू की गयी प्रक्रिया पल्लवित, पुष्पित, तथा सुफलित हो, यह प्रार्थना उस अन्तर्यामी प्रभु के चरणों में करें।○

भूदान-ग्रामदान आन्दोलन : संक्षिप्त इतिहास

—विश्वनाथ टण्डन

भूदान-ग्रामदान आन्दोलन ने सम्पूर्ण विश्व का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया और बहुत से विदेशी व्यक्ति तथा संस्थाओं ने भी इसमें सक्रिय रुचि दिखलायी। यह ऐसा आन्दोलन है जिसे उदारवादियों और साम्यवादियों, दोनों की ही सहानुभूति प्राप्त हुई। उदारवादी भूमि-समस्या के हल की इस शांतिपूर्ण पद्धति से प्रभावित हुए और वे भी यह मानते हैं कि भूमि पर स्वामित्व उसी का होना चाहिए जो उसको जोतता है। साम्यवादियों की इसके साथ इस अर्थ में सहानुभूति रही है कि वे इस आन्दोलन के ध्येय से सहमत रहे थे और समस्या के शान्तिपूर्ण हल से उनका विरोध नहीं है। यह आन्दोलन विनोबाजी की मौलिक प्रतिभा, उनकी सूझबूझ और उनके अनोखे प्रयत्न-सातत्य का फल रहा है। युद्धोत्तर विश्व में भ्रातृत्व और समता पर आधारित अहिंसक समाज-रचना की स्थापना का यह सबसे महत्वपूर्ण प्रयास रहा है और शान्ति तथा क्रान्ति दोनों की प्यासी दुनिया के लिए एक पदार्थ-पाठ है। इसकी सफलताओं और विफलताओं दोनों से ही शिक्षा लेकर समाज शान्तिपूर्ण ढंग से प्रगति कर सकता है। अतः उस आन्दोलन की इस २५वीं वर्षगांठ के अवसर पर यह उचित है कि इस आन्दोलन का सिंहावलोकन किया जाये।

आन्दोलन की पृष्ठभूमि
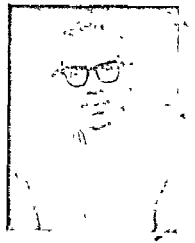
गांधीजी का ध्येय केवल देश को दासता से मुक्त करने का ही नहीं, एक नया समाज-निर्माण करना भी था। वास्तव में दूसरा ध्येय साध्य था और पहला साधन। इन दोनों के लिए यह आवश्यक था कि विध्वंसात्मक और रचनात्मक दोनों प्रकार के कार्यक्रम हों और जनशक्ति को जाग्रत किया जाये। अतः उनके प्रतिकारात्मक सत्याग्रह और रचनात्मक कार्यक्रम एक-दूसरे के पूरक थे। सत्याग्रह

कोई स्थायी कार्यक्रम नहीं था। उसका उपयोग विशिष्ट परिस्थितियों में कुछ समय के लिए किया जा सकता था। इसके विपरीत, रचनात्मक कार्यक्रम एक स्थायी कार्यक्रम था जो यथाशक्ति सत्याग्रह के काल में भी चलता रहता था। किन्तु जनता का ध्यान उसके रचनात्मक कार्यक्रमों की ओर कम गया और उसने सत्याग्रह में अधिक रुचि दिखलायी। उसने रचनात्मक कार्यक्रम को केवल दासता से मुक्ति दिलानेवाला एक साधन माना। उसके मूल विचार को, शोषणमुक्त, विकेन्द्रित आर्थिक राजनैतिक व्यवस्था को समझने में वह असमर्थ रही। उदाहरण के रूप में, उसने खादी को या तो अंग्रेजों को हानि पहुँचानेवाला अथवा उन पर दबाव डालनेवाला एक कार्यक्रम समझा था या फिर आजादी के सैनिकों की वर्दी। इसीलिए तो स्वतन्त्रता पाने के बाद गांधीजी से यह बार-बार पूछा जाता था कि क्या अब उसका कोई महत्व रह गया है। ऐसी स्थिति में १९४७ में यह प्रश्न उत्पन्न हुआ था कि अब आगे रचनात्मक कार्य का क्या रूप हो और उसको कैसे गति प्रदान की जाये। इसी के लिए गांधीजी की सलाह पर फरवरी १९४८ में रचनात्मक कार्यकर्ताओं का एक सम्मेलन वर्धा में आयोजित किया गया था और वे उसके लिए ३१ जनवरी को दिल्ली से वर्धा जानेवाले भी थे। किन्तु ३० जनवरी को उनकी हत्या हो गयी और इसके परिणामस्वरूप यह सम्मेलन फरवरी में न होकर मार्च में हुआ। तब रचनात्मक कार्यकर्ताओं के मार्गदर्शन का उत्तरदायित्व विनोबाजी पर पड़ा। उन्होंने गांधीजी का अधूरा काम अपने हाथ में लिया।

प्रारम्भ में विनोबाजी को शरणार्थियों से कटुता और अविश्वास दूर करने में तथा दिल्ली के निकट मेवों की समस्याओं का समाधान करने में लगी। १९४६ में देश की हालत से अवगत होने के लिए वे उत्तर तथा दक्षिण के कई प्रदेशों में घूमे और सर्वोदय विचार तथा सर्वोदय-समाज पर प्रकाश डालते रहे। उसके पश्चात् बीमार हो जाने के कारण वे पवनार आश्रम लौटे और वहाँ उन्होंने 'कांचनमुक्ति' का प्रयोग आरम्भ किया। इसका उद्देश्य जीवन में पैसे की दासता से मुक्त होने तथा बुद्धिपूर्वक किये गये उत्पादक श्रम की सामाजिक, आर्थिक और नैतिक सक्षमता की खोज करना था। १९५१ में वे शिवरामपल्ली (हैदराबाद) में होनेवाले तृतीय सर्वोदय सम्मेलन में भाग लेने के लिए वहाँ पैदल गये। यह वह समय था जब तेलंगाना में अशान्ति थी। इसके थोड़ा पहले मुसलिम अर्द्धसैनिक दल रजाकार, जो हैदराबाद राज्य को स्वतन्त्र रखना और अल्पसंख्यक मुसलमानों का अधिपत्य बनाये रखना चाहता था, की गतिविधियों के फलस्वरूप हैदराबाद राज्य में अराजकता की स्थिति उत्पन्न हो चुकी थी। साम्यवादी, जिन्होंने तेलंगाना के किसानों पर अच्छा प्रभाव स्थापित कर लिया था, इस अवसर से लाभ उठा रहे थे। उन्होंने धनवान भूमिपतियों के विरुद्ध निर्धन श्रमिकों को उकसाया और भूमिपतियों को प्रदेश छोड़ने के लिए विवश किया। भूमिहीनों ने उनकी भूमि पर कब्जा कर लिया। किन्तु जब भारत सरकार की पुलिस कार्यवाही के बाद राज्य में पुनः शान्ति स्थापित हुई तब भूमिपतियों ने फिर अपनी भूमि पर कब्जा करने का प्रयास किया। भूमिहीनों ने इसका विरोध किया किन्तु कानून और शस्त्र उनके विरुद्ध था। इसी से उस प्रदेश में अशान्ति फैलती ही चली आ रही थी। दिन में पुलिस के तथा रात्रि में साम्यवादियों के अत्याचारों से जनता पीड़ित थी।

भूदान गंगा का उद्गम

वर्धा में सम्मेलन के सम्मुख मुख्य प्रश्न आर्थिक समानता का था। किन्तु दो एक अपवादों को छोड़कर किसी का ध्यान भू-समस्या की ओर नहीं गया। इनमें एक भाई बिहार के हृदयनारायण चौधरी थे जिनका कहना था, 'सम्पत्ति का मूल केन्द्र जमीन है। जब तक जमीन की मालिकी की विषमता नष्ट नहीं हो जाती तब तक आर्थिक समानता आ नहीं सकती। अतः गरीबों और अमीरों के बीच की खाई पाटने का एकमात्र मार्ग यही है कि जिनके पास ज्यादा जमीन हो वे उसे ऐसे लोगों को दे दें जिनके पास जमीन नहीं है और जहाँ जमीन खाली पड़ी हो वहाँ बिना जमीनवाले लोगों को भेज दिया जाना चाहिए। अगर जमींदार अपनी जमीन दूसरों को देने को तैयार न हों तो हम उनका हृदय परिवर्तन करने की कोशिश करें और अगर इससे भी काम नहीं चलता तो हमें सत्याग्रह करने की तैयारी करनी चाहिए।' वसन्त नारगोलकर का यह कहना था कि भूमिहीनों की स्थिति साम्यवाद को बढ़ावा देनेवाली है। इन दो के अतिरिक्त और किसी का ध्यान भूमि-समस्या की ओर रहा हो, ऐसा प्रतीत नहीं होता। विनोबाजी ने सम्मेलन में तीसरे दिन अपना यह विचार प्रकट किया कि वे तेलगाना के अशान्त क्षेत्र में पैदल यात्रा करने जा रहे हैं। उनका ध्येय वहाँ की समस्या का अध्ययन करने और वहाँ शान्ति-स्थापना का था। इस ध्येय से यात्रा का निर्णय उन्होंने वर्धा से चलते समय ही ले लिया था और उसका एक संकेत भी दिया था, किन्तु उस समय इसका अनुमान दूसरों को नहीं हुआ।

तेलंगाना की भू-समस्या कोई उस अंचल की ही विशिष्ट समस्या नहीं थी। सम्पूर्ण देश में भूमि के अन्यायपूर्ण वितरण और स्वामित्व की समस्या तथा भूमिहीनों की दयनीय स्थिति का प्रश्न उपस्थित था। परन्तु साम्यवादी गतिविधियों के कारण उस प्रदेश में उस समस्या की गम्भीरता बढ़ गयी थी। विनोबाजी शिवरामपल्ली से इस प्रदेश के लिए १५ अप्रैल को निकले थे और भूमि का प्रथम दान उनको १८ अप्रैल को मिला। उस दिन वे नलगुण्डा जिले के पोचमपल्ली गाँव में थे—वहाँ के हरिजनों ने अपनी दशा का वर्णन करते हुए उनसे थोड़ी-सी जमीन दिला देने की प्रार्थना की। विनोबाजी ने उनसे पूछा कि कितनी जमीन से काम चलेगा। इस पर उन्होंने ४० एकड़ तरी की और ४० एकड़ खुश्की की जमीन की माँग की। विनोबाजी ने सर्वप्रथम उनसे सरकार को प्रार्थनापत्र देने के लिए कहा और फिर उपस्थित गाँववालों से पूछा, 'यदि सरकार की ओर से जमीन न मिल सके या उसमें देर लगे तो उस हालत में क्या गाँववालों की ओर से कुछ किया जा सकता है?' इस पर एक भाई, रामचन्द्र रेड्डी ने अपने स्वर्गीय पिता की इच्छा का उल्लेख करते हुए अपनी ओर से और अपने पाँच भाइयों की ओर से १०० एकड़ जमीन जिसमें ५० तरी और ५० खुश्की की थी दा

लोगों को भेंट करने की बात कही। यह घटना भूदान-गंगा का उद्गम सिद्ध हुई और विनोबाजी को लगा कि यदि सब गांवों में ऐसे दाता मिलते हैं तो भू-समस्या हल हो सकती है। अब यात्रा में भूमिहीनों के लिए भूमि मांगने का कार्यक्रम चलने लगा। उनको लगभग दो माह की यात्रा में २०० गांवों में १२,००० एकड़ से अधिक भूमि प्राप्त हुई। तेलंगाना की इस यात्रा के बाद विनोबाजी पवनार-आश्रम लौट आये और पुनः कांचन-मुक्ति के प्रयोग में व्यस्त हो गये।

आन्दोलन के रूप में

लोगों का अनुमान था कि साम्यवादियों से त्रस्त होकर ही तेलंगाना के भूमिपतियों दान में भूमि दी है और साम्यवादी संकट के अभाव में वे ऐसी उदारता नहीं दिखलायेंगे। अतः अन्य प्रदेशों में ऐसी सफलता नहीं मिलेगी। किन्तु यह अनुमान शीघ्र ही गलत सिद्ध हुआ। पंडित जवाहरलाल नेहरू के निमन्त्रण पर उनसे तथा योजना आयोग के अन्य सदस्यों के साथ विचार-विनिमय हेतु विनोबाजी को सितम्बर में दिल्ली जाना पड़ा। वे दिल्ली पैदल ही गये और मार्ग में भूमि का दान मांगना भी जारी रखा। विनोबाजी का कहना था कि भूमिपति उनको अपने पुत्रों में गिनें और उनका भाग उनको दे दें। इस बार प्राप्त भूमि का दैनिक औसत तेलंगाना से अधिक अच्छा रहा और भूदान की प्रक्रिया साम्यवादी संकट से रहित वातावरण में भी सफल सिद्ध हुई। इससे विनोबाजी और उनके सहयोगियों का विश्वास बढ़ गया तथा देश में नवजीवन का संचार हुआ। २ अक्तूबर के दिन उनका पड़ाव मध्यप्रदेश के सागर नगर में था। वहां उन्होंने देश से १९५७ तक सम्पूर्ण कृषि भूमि का एक छठा अंश दान में पाने की आशा व्यक्त की। यह अंश ५ करोड़ एकड़ आंका गया। फिर झांसी के मार्ग से दीपावली पर वे मथुरा पहुंचे। यहां उत्तरप्रदेश के रचनात्मक कार्यकर्ता तथा सर्वोदय में रुचि रखनेवाले अन्य व्यक्ति एकत्र थे। उन्होंने अपने प्रदेश में एक वर्ष में ५ लाख एकड़ भूमि दान में प्राप्त करने का संकल्प किया। दिल्ली से लौटकर विनोबाजी ने उत्तरप्रदेश की यात्रा की। यद्यपि इन दिनों पहला आमचुनाव हो रहा था और राष्ट्र की अधिक शक्ति इसी में लगी हुई थी फिर भी अप्रैल १९५२ में वाराणसी पहुंचने तक उनको उत्तरप्रदेश में एक लाख एकड़ भूमि प्राप्त हो चुकी थी।

भूदान में मिली जमीन का हिसाब

इसी समय वाराणसी जिले में सेवापुरी में चौथा सर्वोदय सम्मेलन हुआ जहाँ देश-भर के कार्यकर्ताओं ने दो वर्ष में २५ लाख एकड़ भूमि प्राप्त करने का व्रत लिया। इस प्रकार भूदान-आन्दोलन के रूप की व्याप्ति विनोबाजी के व्यक्तिगत प्रयत्नों के बदले देशव्यापी हो गयी।

वाराणसी के बाद विनोबाजी ने उत्तर-प्रदेश के शेष जिलों की यात्रा की और अब प्रतिदिन औसतन दो हजार एकड़ भूमि मिलने लगी। इसका एक कारण प्रादेशिक सरकार का जमींदारी उन्मूलन का वह कानून भी कहा जा सकता है, जिसके अन्तर्गत गाँव की खेती से बची भूमि पर ग्राम-सभा का स्वामित्व हो जाता था। विनोबाजी भूमिपतियों से भूमि दान में ले रहे थे। कानून में जमींदारी उन्मूलन से प्राप्त अतिरिक्त भूमि के वितरण में भूमिहीनों को प्राथमिकता नहीं दी गयी थी। विनोबाजी का कहना था कि वे सरकार से विशेष कानून द्वारा ऐसे दान को कानून-संगत करवा लेंगे।

उत्तरप्रदेश के बाद उन्होंने सितम्बर १९५२ में बिहार में प्रवेश किया और उस प्रदेश से ५० लाख एकड़ भूमि की मांग की। बाद में वह लक्ष्य घटाकर ३२ लाख कर दिया गया। उनका विचार बिहार में भूदान-यज्ञ को पूर्णतया व्यावहारिक सिद्ध करना तथा उसके द्वारा सामाजिक क्रान्ति लाने का था। इसमें सफलता प्राप्त करने के लिए देश-भर के कार्यकर्ताओं का आह्वान किया गया और बहुत से कार्यकर्ता वहाँ जुट भी गये। विनोबाजी स्वयं २७ महीने उस प्रदेश में रहे और एक-एक जिले का अनेक बार दौरा करके कार्यकर्ताओं को प्रेरणा दी। इन सबके फलस्वरूप बिहार में उनको २१ लाख एकड़ भूमि प्राप्त हुई। इसी समय विनोबाजी ने सम्पत्तिदान, श्रमदान और जीवनदान का विचार विकसित किया। साधनदान का विचार तो वे उत्तर-प्रदेश में व्यक्त कर ही चुके थे। उन्होंने कानपुर के नागरिकों से निर्धन भूमिहीनों के लिए कुएँ, बैल तथा खेती के अन्य साधनों की मांग की थी। सम्पत्तिदान, श्रमदान, तथा जीवनदान का विचार भी भूदान के सन्दर्भ में विकसित हुआ था—किन्तु उनका स्वतंत्र मूल्य भी है। सम्पत्तिदान भूदान की तरह गांधीजी के ट्रस्टीशिप सिद्धान्त का एक व्यावहारिक और विकसित रूप है। उससे संपत्ति का मोह कम होता है और समाज अपरिग्रह की दिशा में प्रगति करता है। श्रमदान का विचार शरीर-श्रम के व्रत से सम्बन्धित है तथा बुद्धिजीवी और श्रमजीवी के बीच की खाई को पाटनेवाला है। जीवन-दान का उद्देश्य ऐसे लोगों की खोज था जो सर्वोदय की स्थापना के लिए भूदान-यज्ञ-मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रांति के लिए अपना पूरा समय और शक्ति लगाने के लिए तत्पर थे। इन सबके परिणामस्वरूप बिहार में भूदान-आन्दोलन अपनी पराकाष्ठा पर पहुंचा। वहाँ भूमि का मूल्य बहुत घट गया और ऐसा प्रतीत होने लगा था कि भूमि क्रय-विक्रय की वस्तु ही नहीं रह गयी है।

ग्रामदान आन्दोलन का जन्म

उत्तरप्रदेश यात्रा की एक महत्वपूर्ण घटना थी, हमीरपुर जिले के मगरौठ गाव में गाँव की कुल भूमि का दान। यह देश में पहला ग्रामदान था। यों तो ग्रामदान का विचार भूदान के विचार में ही उपलक्षित था, क्योंकि भूदान के पीछे मुख्य विचार 'सबै भूमि गोपाल की' है। किन्तु इस ग्रामदान के पीछे वहाँ के जमींदार की यह प्रेरणा काम कर रही थी कि वे अपनी सम्पूर्ण भूमि सन्त विनोबा को दान में दे रहे हैं। उनके उदाहरण का अनुकरण दूसरे गाववालों ने भी किया। अतः पहला ग्रामदान कोई भूदान का सहज विकसित रूप नहीं था, वह तो एक सन्त के प्रति उत्पन्न श्रद्धा का एकाकी उदाहरण था। फिर भी, उससे ग्रामदान के विचार को जन्म मिला।

इस विचार को आन्दोलन का रूप विनोबाजी की बिहार यात्रा के समय प्राप्त हुआ। उस समय उड़ीसा में सर्वप्रथम मानपुर और फिर अकिली ग्राम का ग्रामदान प्राप्त हुआ। इसके पश्चात् तो कोरापुट जिले में ग्रामदान की झड़ी ही लग गयी। परिणाम यह हुआ कि जब २६ जनवरी १९५५ को विनोबाजी ने उड़ीसा में प्रवेश किया तब तक ८३ ग्रामदान प्राप्त हो चुके थे और उनके उड़ीसा छोड़ने की तिथि तक अर्थात् १ अक्टूबर १९५५ तक उनकी संख्या ६०० से अधिक पहुंच चुकी थी। इस चमत्कार के दो कारण थे। प्रथम इन ग्रामों के निवासी आदिवासी थे जिनमें सामुदायिक जीवन की परम्पराएँ अभी तक पर्याप्त मात्रा में जीवित थी। दूसरे, इनके बीच में एक ४० वर्षीय श्री विश्वनाथ पटनायक पिछले २० बरसों से सतत् सेवा कर रहे थे। श्री पटनायक का वहा के निवासियों पर बड़ा प्रभाव था। अतः ऐसा लगता था कि ग्रामदान पाने के लिए विशेष वातावरण की आवश्यकता है, कोरापुट एक अपवाद है और वैसी सफलता अन्यत्र नहीं मिलेगी। किन्तु यह धारणा भी एक भ्रान्ति सिद्ध हुई। उड़ीसा से विनोबाजी आन्ध्र गये। यहाँ उनको अवश्य भूमिदान ही प्राप्त हुए किन्तु तमिलनाड में जहा की जनता शिक्षित और विचारवान मानी जाती है, उनको २१६ ग्राम मिले और पुराने बम्बई प्रदेश में, जहा जनता उतनी शिक्षित नहीं है, इनकी संख्या २३७ रही। अन्य राज्यों में भी ग्रामदान का विचार शक्ति पकड़ रहा था। इस प्रकार धीरे-धीरे भूदान-आन्दोलन का रूप ग्रामदान-आन्दोलन में बदलता चला गया। भूदान की मांग अवश्य बन्द नहीं की गयी थी किन्तु कार्यकर्ताओं की अधिक शक्ति ग्रामदान प्राप्ति में ही लगने लगी। २५ अगस्त १९५७ को विनोबाजी ने, जब वे केरल में थे, यह घोषणा की कि वे यों तो अब ग्रामदान-पत्रों को स्वीकार करेंगे या भूमि के प्राप्ति पत्रों को। भूमिदान-पत्रों को स्वीकार नहीं करेंगे। अगले माह मैसूर प्रदेश के यलवाल स्थान पर एक सम्मेलन हुआ जिसमें देश में प्रमुख राजनैतिक नेताओं, अर्थशास्त्रियों और समाजशास्त्रियों ने भाग लिया और अपने संयुक्त वक्तव्य में उन्होंने ग्रामदान-आन्दोलन का समर्थन किया।

यहाँ यह समझ लेना उचित होगा कि विनोबाजी ने यह क्यों कहा कि वे अब प्राप्ति-पत्र स्वीकार करेंगे, भूमिदान-पत्र नहीं। भूदान में अब तक यह था कि भूमिपति विनोबाजी को भूदानपत्र भरकर देते थे और फिर कार्यकर्ता भूमि का वितरण भूमिहीनों में करते थे। हैदराबाद छोड़ते समय विनोबाजी ने तेलगाना में प्राप्त भूमि के वितरण के लिए एक समिति नियुक्त की थी और उत्तरप्रदेश तथा बिहार में भी वितरण की व्यवस्था कर

। थी। इन अन्तिम दो प्रदेशों में वितरण के लिए नियम भी बना दिये थे। उनमें पूरा प्रयास इसका था कि वितरण में पक्षपात न हो सके। *जिस गाँव में वितरण किया जाना* होता, वहाँ के लोगों को उसकी सार्वजनिक सूचना एक सप्ताह पूर्व और फिर वितरण की तिथि से एक दिन पूर्व दी जाती थी। वितरण कार्यक्रम की सूचना अधिकारियों को भेजनी पड़ती थी जिससे सम्बद्ध अधिकारी उस अवसर पर उपस्थित रह सकें। वितरणकर्ता को भूमि के सम्बन्ध में पूरी जानकारी प्राप्त कर लेनी होती थी और गाँव की सभा में भूमिहीनों का पता लगाना तथा यथासंभव सर्वानुमति से भूमि का वितरण करना होता था। वितरण में उन भूमिहीनों को प्राथमिकता देनी होती थी जिनके पास जीवन निर्वाह के अन्य कोई साधन न हों। एक-तिहाई भूमि *यथासंभव हरिजनों में बाँटना* अनिवार्य था। वितरण के सम्बन्ध में मतभेद होने पर निर्णय भूमिहीनों पर ही छोड़ना होता था। यदि उनमें भी मतभेद हो तो चिट्ठी उठाकर फैसला करने का नियम रखा गया था।

अधूरे दानपत्र, *झगड़े की भूमि*, सरकारी कर्मचारियों का स्थल पर न पहुँचना इत्यादि कठिनाइयों के कारण वितरण की गति बहुत धीमी रही। आँकड़ों के अनुसार १९५७ तक केवल १३.३ प्रतिशत भूमि वितरित हो पायी थी और लगभग इतनी ही भूमि वितरण के अयोग्य पायी गयी थी। इसका *अर्थ था कि* केवल २७ फीसदी भूमि के बारे में निर्णय लिया जा सका था। इस धीमी गति के कारण तथा उपर्युक्त पद्धति में दाता के प्रति अविश्वास की गन्ध आने के कारण ही सम्भवतः विनोबाजी ने दानपत्रों के स्थान पर वितरण-पत्र माँगना प्रारम्भ किया था। इसका अर्थ यह था कि दाता स्वयं भूमिहीनों को भूमि दे दें और उसका प्राप्तिपत्र विनोबाजी को भेज दें।

ऐसी स्थिति १९५७ में थी। उस समय तक सम्पूर्ण देश में ५ करोड़ एकड़ भूमि प्राप्त करने का लक्ष्य था। आँकड़ों के अनुसार १९५६ तक ४१,८४,६३४ एकड़ भूमि प्राप्त हो चुकी थी जिसमें से ३,६७,५०२

ग्रामदान गाँव में ग्राम-सभा की बैठक
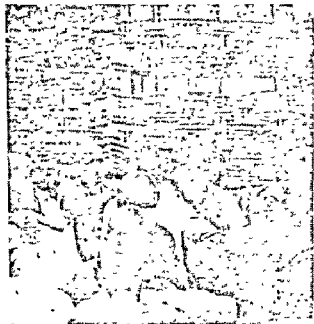
एकड़ भूमि का वितरण किया जा चुका था। जहाँ तक ग्रामदान का सम्बन्ध है, १९५७ तक सम्पूर्ण देश में ३५२१ ग्रामदान प्राप्त हो चुके थे। इस प्रकार १९५७ में आन्दोलन अपने *लक्ष्य से बहुत दूर था।*

बीघा-कट्ठा आन्दोलन

विनोबाजी ने मैसूर के बाद बम्बई, गुजरात राजस्थान, पंजाब और जम्मू-कश्मीर की यात्रा की। जम्मू-कश्मीर से लौटने पर वे पंजाब तथा उत्तरप्रदेश होते हुए इन्दौर गये। वहाँ ६ सप्ताह ठहरने के बाद वे असम के दौरे पर चले गये। *मार्ग में दिसम्बर,* १९६० में उन्होंने बिहार में प्रवेश किया। उस समय तक सम्पूर्ण देश में ४७८५ ग्रामदान प्राप्त हो चुके थे और ९,१४,२१६ एकड़ भूमि का वितरण भी हो चुका था। लेकिन आन्दोलन की स्थिति उत्साहवर्धक नहीं थी। वह निस्तेज हो चला था। जनता में उसके *प्रति उत्साह नहीं रहा था।* उसको जागृत करने के लिए किसी नये कार्यक्रम की आवश्यकता लगती थी, किन्तु इस पर सर्वोदय नेता एकमत नहीं थे। विनोबाजी स्वयं निरुत्साहित हुए बिना भूमिदान तथा ग्रामदान पर बल देते रहे। फिर भी आन्दोलन की परिस्थिति का उन्हें पूरा-पूरा अन्दाज था और उसे नया जीवन प्रदान करने के लिए उन्होंने बिहार में बीघा-कट्ठा आन्दोलन चलाया। इसका अर्थ यह था कि प्रत्येक किसान से उसकी जोत की भूमि का बीसवाँ *भाग भूमिहीनों के लिए प्राप्त किया जाये।* कार्यकर्ताओं से उनका कहना था कि इस प्रकार वे बिहार में ३२ करोड़ एकड़ भूमि के लक्ष्य को पूरा करें। यह आन्दोलन १९६१-६२ में कुछ महीनों सघन रूप से चला और इतने समय में लगभग डेढ़ लाख कट्ठा-भूमि प्राप्त की गयी। यह लक्ष्य से तो बहुत कम था किन्तु *इसका ८० प्रतिशत तत्काल वितरित हो गया।* अन्त में बिहार सरकार की नीति में कुछ परिवर्तन के कारण यह आन्दोलन शिथिल होकर समाप्त हो गया।

सुलभ ग्रामदान

बीघा-कट्ठा आन्दोलन भूदान ग्रामदान आन्दोलन के विकास में एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। इसमें 'अभिनव ग्रामदान' बाद में 'सुलभ ग्रामदान' के नाम से विख्यात हुआ और अब तो इसी को ग्रामदान कहा जाता है। इसका विचार असम से लौटने पर विनोबाजी ने बंगाल के सम्मुख रखा था किन्तु मुख्य रूप से इसका विकसित रूप बिहार में देखने को मिलता है। १९६५ से

१९६८ तक विनोबाजी ने स्वयं बिहार में रह कर इसका आन्दोलन चलाया, जिसके फलस्वरूप २ अक्तूबर १९६९ तक बिहार में ६०,०६० ग्रामदान, ५७५ प्रखंड दान और १५ जिलादान प्राप्त हुए थे। और नवम्बर में सर्वोदय सम्मेलन तक बिहार दान करीब-करीब पूरा हो गया था।

सुलभ ग्रामदान का विचार भूदान और पुराने ग्रामदान के बीच का विचार रहा था। पुराने ग्रामदान में गाव की सम्पूर्ण भूमि गाव की हो जानी थी और उसका वितरण ग्राम-परिवारों में उसकी आवश्यकता को देखते हुए किया जाता था। कालान्तर में नवीन आवश्यकताओं की दृष्टि से इस वितरण में परिवर्तन किया जा सकता था। इस दृष्टि से यह ग्रामदान आदर्श ग्रामदान था। किन्तु उसमें व्यावहारिक दोष यह था कि इसको छोटे किसानों ने ही स्वीकार किया था। बड़े और मध्यम दर्जे के किसान इससे कतराते थे। अतः इसका कोई विशेष परिणाम भूमि-वितरण पर नहीं हो पाया। साथ ही कुछ अन्य कारणों से वे सामाजिक परिवर्तन भी होते नहीं दिखाई दिये, जिनकी आशा ग्रामदान से की गयी थी। ऐसी परिस्थिति में विनोबाजी को यह सोचना पड़ा कि ग्रामदान के विचार को किस प्रकार ऊंचे तथा मध्यम दर्जे के भूमिपतियों के लिए आकर्षक बनाया जाये और उसको यह क्षमता प्रदान की जाये कि उससे व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में सर्वोदय के मूल्य स्थापित हो सकें। सुलभ ग्रामदान का विचार इसी चिन्तन का फल था।

इसमें तथा ग्रामदान के पुराने विचार में तीन अन्तर थे। प्रथम, पुराने ग्रामदानों में दाता की सम्पूर्ण भूमि गाव को अर्पित हो हो जाती थी और उसके वितरण का अधिकार गाव को प्राप्त हो जाता था। सुलभ ग्रामदान में सारी भूमि पर स्वामित्व तो गाव का हो जाता है किन्तु भूमिदान को अपनी भूमि का केवल २० वां भाग भूमिहीनों के लिए देना पड़ता था और शेष उसी के पास रहता था। इस ग्रामदान में उसको यह आश्वासन भी मिलता था कि यह शेष भूमि उसकी तथा उसकी सन्तति की इच्छा के विरुद्ध उनसे नहीं ली जायेगी। दूसरे, पुराने ग्रामदान में ऐसी कोई शर्त नहीं थी कि लोगों को अपनी उपज तथा आय का एक निश्चित भाग ग्रामसभा को देना होगा जिसका उपयोग वह गांव के निराश्रितों तथा अनाथों के जीवन निर्वाह की व्यवस्था, शिक्षा का प्रबन्ध, गांव की आर्थिक उन्नति के लिए करेगी। नये ग्रामदान में यह नियम था कि प्रत्येक किसान अपनी भूमि की उपज का ४० वां भाग या जो भाग ग्रामसभा निश्चित करे—ग्रामसभा को उपर्युक्त कार्यों के लिए देगा। जो भूमिहीन थे या जिनकी नकद आय होती थी उनको अपनी मासिक आय का ३०वां भाग अथवा जो भी ग्रामसभा निश्चित करे नकद अथवा श्रम के रूप में ग्रामसभा को देना होता था। व्यापारियों को अपने खर्च के लिए निकाली गयी रकम का भाग देना था। तीसरे, सुलभ ग्रामदान की एक शर्त यह भी थी कि गाव के प्रत्येक परिवार के एक-एक व्यक्ति या गाव के प्रत्येक वयस्क को शामिल करके ग्रामसभा बनेगी जो गांव के सब लोगों की देखभाल करेगी और जिसका कार्य सर्वसम्मति या सर्वानुमति से होगा। पुराने ग्रामदान में ग्रामसभा को इतना महत्त्व प्राप्त नहीं था।

'सुलभ ग्रामदान' के विचार में पुराने ग्रामदान के मूल विचार को कायम रखते हुए उसकी शर्तों को अधिक आसान तथा जन-मानस के अधिक अनुकूल बना दिया गया था और उसकी सतत दानधारा वाली शर्त से यह आशा की गयी थी कि उससे सर्वोदय के मूल्यों की स्थापना में सहायता मिलेगी, स्वार्थ की भावना धीरे-धीरे कम हो जायेगी और सामुदायिक भावना का विकास होगा। इसमें दीर्घकालीन दृष्टि के साथ तत्कालीन दृष्टि भी थी। १९६५ के बाद इसका रूप देश भर में सुलभ ग्रामदान आंदोलन का ही रहा।

यह सुलभ ग्रामदान आंदोलन १९६५ से १९६९ तक चलता रहा। इसका सबसे वेगवान रूप बिहार में रहा जहां स्वयं विनोबाजी ने लगातार रहकर उसको तीव्रता प्रदान की और उसका मार्गदर्शन किया। इसके फलस्वरूप अक्टूबर, १९६९ में हुए राजगीर सम्मेलन तक ग्रामदान में पूरे बिहार प्रदेश का दान प्राप्त कर लिया गया था। किन्तु यह सब केवल घोषणामात्र था, केवल इस बात का ऐलान था कि ग्रामदान के लिए ग्रामीण जनता तैयार है। घोषणा को मूर्तरूप अथवा वास्तविकता प्रदान करने के लिए उसकी पुष्टि का काम शेष था। इसका अर्थ यह था कि ग्रामदान में सम्मिलित होनेवालों से उनकी जोत की भूमि का २० वा भाग भूमिहीनों के लिए प्राप्त किया जाये, ग्राम सभाओं को संगठित किया जाये और ग्रामकोष की स्थापना हो। राजगीर सम्मेलन के बाद कार्यकर्ताओं की शक्ति इसी काम में लगी। उनकी संख्या और शक्ति को देखते हुए विनोबाजी ने उनको यह सलाह दी थी कि वे सहरसा के जिले में सघन रूप से काम करें और वहां यह काम अप्रैल १९७४ तक चला और इसमें देश के अन्य भाग के कुछ प्रमुख कार्यकर्ताओं ने तथा श्री धीरेन्द्र मजूमदार जैसे तेजस्वी नेता ने हाथ बटाया। परिस्थितिवश श्री जयप्रकाश नारायण ने भी मुजफ्फरनगर जिले के मुसहरी प्रखंड में काम प्रारम्भ किया। इन दोनों स्थानों पर बहुत कुछ काम हुआ किन्तु गति अत्यन्त धीमी रही और अप्रैल १९७४ से काम बिलकुल बदला है।

इस प्रकार भूदान-ग्रामदान आंदोलन जिसका जन्म १९५१ में हुआ था अब एक ऐसी मंजिल पर पहुंच गया है कि स्थूल-दृष्टिवालों को वह भले मृतप्रायः लग रहा है किन्तु उसमें लगे लोगों को आज की स्थिति एक स्वाभाविक स्थिति ही लगती है और भविष्य में उसके फलित होने की उनको आशा है। इस सम्बन्ध में श्री जयप्रकाश नारायण तथा धीरेन्द्र मजूमदार के विचार उद्धृत करने योग्य हैं।

अपने अनुभवों के आधार पर श्री जयप्रकाश नारायण ने १९७१ में लिखा था, यदि पहले ग्रामदान के संकल्प प्राप्त करने का काम समुचित रीति से पूरा किया गया होता तो हमारी प्रगति ज्यादा तेज हुई होती। अभी तक हमें एक भी ऐसा गाव नहीं मिला है जहां ७५ प्रतिशत आबादी और ५१ प्रतिशत भूमि की दोनों शर्तें पूरी हो गयी हों। इसलिए हमें संकल्पों की प्राप्ति और उनकी कार्यान्विति दोनों कार्यक्रमों को एक ही चरण में फिट करना पड़ता है। इसमें स्वाभाविक समय लगता है। और फिर वैयक्तिक नैतिकता का

सहरसा मे राष्ट्रीय मोर्चे का सघन अभियान एक सभा

ऐसा पतन हुआ है कि जिन्होंने पहले संकल्प पत्र पर हस्ताक्षर किये थे, वे भी अपनी वचन-बद्धता से निकल भागने की पूरी कोशिश करते हैं।'' फिर भी थोड़े समय का हमारा अनुभव बताता है, जैसा पहले भी देख चुके हैं सुदृढ़ मैत्री-भावना तथा हर व्यक्ति के हित के लिए प्रकट चिन्ता के साथ-साथ लोगों को धैर्यपूर्वक समझाने और शिक्षित करने का प्रयास अन्ततः सफल ही होना है।', जयप्रकाशजी के ये वाक्य कार्यकर्ताओं की दुर्बलता किन्तु इस प्रक्रिया के सही होने की ओर इशारा करते हैं।

श्री धीरेन्द्र मजूमदार ने सहरसा के बारे में एक वर्ष पूर्व लिखा था, "लोग पूछेंगे कि सह-रसा में क्या मिला और क्या हुआ? जो लोग ऐसा पूछते हैं या कुछ देखना चाहते हैं उनको कहने के लिए या दिखाने के लिए ऐसा कुछ नहीं हुआ। इस प्रकार की बुनियादी क्रान्ति जिसे हम टोटल (समग्र) क्रान्ति कहते हैं और जिसके परिणाम से संपूर्ण नयी क्रान्ति के आविर्भाव की अपेक्षा रखते हैं वह इस तरह थोड़े समय में सिद्ध नहीं हो सकती है। लेकिन जो हुआ है और जितना हुआ है, उसे पूर्ण सफलता की संज्ञा दी जा सकती है। आज आवश्यकता इस बात की है कि बीज के अंकु-रण के लिए उस क्षेत्र को छोड़ दिया जाये, ताकि स्वाभाविक नियम के अनुसार वह अंकु-रित हो और आगे बढ़े।' और बाद में वे लिखते हैं, "कोई भी किसान बीज के बोने के बाद की जुताई और हेंगाई जारी नहीं रखता है। जब विनोबाजी ने देखा कि बीज की बोआई अब समाप्त हो चुकी है और आव-श्यकता यह है कि अब खेत में जुताई और हेंगाई का काम बन्द किया जावे तो एक कुशल नेता के नाते उन्होंने स्पष्ट रूप से यह संकेत किया है कि सहरसा में अभियानमूलक कार्य-क्रम बंद किया जावे।'

कुछ भी हो इस आंदोलन की अपनी उपलब्धियाँ हैं जिनकी ओर से पूर्वाग्रहों से घोर व्यथित व्यक्ति ही आँखें मूंद सकता है। सबसे महत्त्व की बात यह है कि इतिहास में अहिंसक क्रान्ति का यह अनूठा आंदोलन अपनी सफलताओं और असफलताओं दोनों के द्वारा पाठ देनेवाला तथा भविष्य में मार्गदर्शन करनेवाला सिद्ध होगा। विनोबाजी तथा आंदो-लन के प्रथम पंक्ति के नेताओं के स्वास्थ्य को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि अब आंदोलन का लगभग अन्त हो गया है, किन्तु सामाजिक न्याय जमाने की माँग है और यह आशा की जा सकती है कि आंदोलन का फिर जीवित होना अवश्यम्भावी है। O

एक सौ बीस साल पुराना एक पत्र

वाशिंगटन के बड़े मुखिया के नाम

वॉशिंगटन के बड़े मुखिया ने खबर भेजी है कि वे हमारी जमीनें खरीदना चाहते हैं। उन्होंने दोस्ती और सद्भावना का संदेशा भी भेजा है। यह उनकी उदारता है। क्योंकि हम जानते हैं कि उन्हें हमारी दोस्ती की कोई खास जरूरत नहीं है। फिर भी हम आपके भेजे संदेशे पर विचार करेंगे क्योंकि हम जानते हैं कि अगर ऐसा नहीं करेंगे तो गोरे लोग बन्दूकें लेकर आ जायेंगे और जमीन पर कब्जा कर लेंगे। सीयल के मुखिया का कहना है कि वाशिंगटन के बड़े मुखिया हमारी बात को उसी प्रकार पक्की मान सकते हैं जैसे हमारे गोरे भाई ऋतुओं के आने-जाने को पक्का मानते हैं। हम जो कह रहे हैं उसे कभी न डूबने वाले तारों की तरह समझें।

आसमान को, जमीन के भीतर रहनेवाली गरमी को कैसे खरीद या बेच सकते हैं? यह ख्याल हमारे लिए अजीब है। हम हवा की ताजगी या पानी की चमक के मालिक तो नहीं हैं! तब आप उन्हें हमसे कैसे खरीद सकते हैं? फैसला करने में हमें कुछ समय लगेगा। इस धरती का चप्पा-चप्पा हमारी जाति के लोगों के लिए पवित्र है। हर पेड़ की चमकती फुनगी, रेत से भरे-पूरे सारे किनारे, घने जंगलों में फैला कुहासा और गुनगुन करता प्रत्येक भौंरा मेरी जाति के लोगों के लेखे पवित्र है।

हम जानते हैं कि गोरा आदमी हमारे तरीके नहीं समझता। उसके लिए तो जैसा जमीन का एक टुकड़ा वैसा ही दूसरा। क्योंकि वह परदेसी है जो रातोंरात आता है और जमीन से वह सब ऐंठ लेता है जो उसे चाहिए : धरती से उसका लगाव नहीं है, दुश्मनी है और जब वह उसे जीत लेता है तो आगे बढ़ जाता है। पिता की कब्र को वह पीठ दे देता है, उस तरफ मुड़कर भी नहीं देखता। धरतीमाता को उसके पुत्रों से अलग कर देता है। वह किसी बात की परवाह नहीं करता। पिता की कब्र और उसके बच्चों के पैदायशी हकों को पलभर के लिए नहीं सोचता। उसकी भूख समूची धरती को निगल जायेगी और बाकी रह जायेगा एक रेगिस्तान। आपके इन नगरों को देखकर आदिवासियों की आँखें दुखती हैं। किन्तु यह शायद इसलिए है कि आदिवासी असभ्य हैं और उनमें समझ नहीं है...

गोरे आदमी के नगरों में कोई शान्त कोना भी नहीं है। कोई ऐसी जगह नहीं जहां बसन्त की पत्तियों के खुलने की आवाज या तितलियों की सरसराहट सुनी जा सके। लेकिन मैं शायद असभ्य हूं, समझता नहीं हूं कि वे आवाजें आपके कानों को बुरी मालूम पड़ती हैं। अगर हम [illegible] की चहक या किसी डबरे के किनारे रात में मेंढकों का टर्राना नहीं सुन पाते तो जिन्दगी में क्या बच रहता है? आदिवासी तो तालाब पर से बहती हवा की हल्की-सी धुन, दोपहर की बारिश के बाद हवा में मिट्टी का सोंधापन और पाइन के वृक्षों की सुगन्ध से भरे झोंके पसन्द करता है। हम आदिवासियों के लिए हवा बड़ी कीमती चीज है। इसलिए कि उसे जानवर, वृक्ष और आदमी-सभी चीजें अपनी सांस में खींचती हैं। लगता है गोरे आदमी को उस हवा का भान ही नहीं है जिसे वह भीतर खींच रहा है। जो धीरे-धीरे मौत के पास सरक रहा है, उस बीमार आदमी को अपनी ही दुर्गंध का पता नहीं चलता—गोरे आदमी के बारे में भी ऐसा ही कुछ हो रहा है।

अगर मैं आपकी बात मानता तब एक तो उसकी एक शर्त है। गोरे आदमी इस जमीन के जानवरों को भी अपना भाई मानें। मैं तो असभ्य हूं, कुछ समझता-बूझता नहीं हूं, मगर मैंने वन भैंसे सड़ते देखे हैं, उन्हें रेलगाड़ियों में से गुजरते हुए गोरे लोगों ने मारा है। मैं असभ्य हूं शायद इसीलिए समझ नहीं पाता कि धुआं उगलता हुआ लोहे का यह घोड़ा जानदार वन भैंसों से किस अर्थ में बड़ा है? गोरा आदमी अपनी जान बचाने की फिक्र में उन्हें मार डालता है। क्या आदमी की हस्ती या जानवरों के खत्म हो जाने पर कोई मतलब बच रहेगा? सभी जानवर अगर खत्म हो गये तो आदमी अपने भीतर

आसमान को, जमीन के भीतर रहनेवाली गरमी को कैसे खरीद या बेच सकते हैं...

के अकेलेपन को महसूस करके मर जायेगा। क्योंकि जो कुछ जानवरों के साथ होता है वही आदमी के साथ भी होगा। सभी चीजें आपस में जुड़ी हैं। जानवर धरती मां के बेटे हैं और हम भी।

हमारे बच्चों ने अपने बुजुर्गों को गोरे आदमी के हाथों हार खाकर सिर झुकाये देखा है। हमारे बहादुरों ने शर्म महसूस की है और हारने के बाद वे अपने दिन काहिली में गुजारने लगे हैं और अपने शरीर को मीठे पकवानों और तीखी शराब से खराब कर रहे हैं। इस बात में बहुत सार नहीं है कि हम अपने बाकी दिन कहां काटेंगे? दिन बहुत नहीं बचे हैं, चन्द घन्टे, कुछ और थोड़े से सर्द मौसम, फिर इन महान् आदिमजातियों का कोई नामलेवा भी नहीं रह जायेगा। कोई कब्र पर आंसू नहीं बहायेगा। तो भी यह तो सच है कि ये जातियां भी कभी इस धरती पर थी, छोटे-छोटे समूहों में जंगलों में सुख से विचरती थी और जिस तरह आप बड़ी-बड़ी उम्मीदों से भरे हुए हैं, उसी तरह अपने ढंग की उम्मीदों से भरी हुई थी।

हमें पूरा भरोसा है कि गोरा आदमी भी एक दिन महसूस करेगा कि हमारा ईश्वर भी वही है। आप चाहे तो सोच सकते हैं कि ईश्वर भी उसी तरह आपकी मुट्ठी में है जिस तरह आप हमारी जमीनों को अपनी मुट्ठी में करते जा रहे हैं। लेकिन यह सच नहीं है। आप उसे अपनी मुट्ठी में नहीं बांध सकते। वह सारी मनुष्य जाति का ईश्वर है। आदिवासी और गोरा आदमी, उसकी कृपा दोनों के लिए एक जैसी है। धरती उसके लेखे बड़ी कीमती चीज है। धरती को नुकसान पहुंचाना उसे बनानेवाले का अपमान करना है।

गोरे भी किसी न किसी दिन खत्म हो जायेंगे। क्या जाने वह दिन दूसरी जातियों से भी जल्दी आ जाये। आप अपने बिस्तरे को गन्दगी से भरते चले जाइये, किसी दिन आपके बिस्तरे की गन्दगी आपका दम घोंट देगी। जब सब वन भैंसे मार डाले जायेंगे, जंगली घोड़ों को पालतू बना लिया जायेगा, वनों के अनजाने कोने ठट्ठ के ठट्ठ आदमियों की गंध से भर जायेंगे और बूढ़ी पहाड़ियों का सन्नाटा औरतों की बकवास से टूट जायेगा तो कहां बचेंगे झुरमुट, कहां मिलेगा गरुड़? इन जानवरों और चिड़ियों को खत्म कर देना सच्चे जीवन के अन्त और जीते चले जाने की मजबूरी की शुरुआत के सिवाय और क्या है? हमारी समझ में नहीं आता कि गोरा आदमी किस बात का सपना देखता है, सर्दियों की लम्बी रातों में वह अपने बच्चों को किस चीज की उम्मीदें बंधाता है, उनकी आंखों में ऐसा कौन-सा सपना जगाता है जिसके लिए वे आनेवाले दिनों का इंतजार करते हैं। अगर हम इस बात को समझ जाते तो शायद उसके कारनामों को भी समझ पाते। लेकिन क्या करें हम असभ्य हैं। गोरे आदमी के सपने हमारी आंखों से ओझल हैं, और चूंकि वे हमारी आंखों से ओझल हैं, हम अपने ही रास्ते पर चलते रहेंगे।

अगर हम आपकी बात मान लेते हैं तो हमें आपकी वह महरबानी हासिल हो जायेगी जिसका आपने वचन दिया है। शायद उस हालत में हम अपने बचे-खुचे दिन अपने मन के मुताबिक गुजार सकें। फिर जब आखिरी आदिवासी इस धरती से उठ जायेगा और उसकी याद इन घास के मैदानों के पार एक बादल की छांह के रूप में ही रह जायेगी तब भी मेरी जाति के लोगों की आत्मा इन जंगलों में जीवित रहेगी क्योंकि वे धरती को उसी तरह प्यार करते हैं जैसे अभी का जनमा हुआ शिशु अपनी मां की छाती की धड़कनों को करता है।

अगर हम आप को अपनी जमीन बेच दें तो मेहरबानी करके उसे उसी तरह प्यार करें जैसा हमने किया है। उसकी वैसी ही फिक्र करें जैसी हमने की है। अपने दिमाग में जमीन की वही तस्वीर ताजा रखें जो उसे लेते समय आपके सामने है। अपनी सारी क्षमता, सारी शक्ति और पूरे मन से उसे अपने बच्चों के लिए सुरक्षित रखें। और उसे उसी तरह प्यार करें जैसे ईश्वर हम सबको करता है। इस बात में कोई शक नहीं है कि हमारा और आपका ईश्वर एक ही है। यह धरती उसे बहुत प्यारी है। याद रखिये कि गोरे आदमी की किस्मत दूसरी जातियों की किस्मत से अलग नहीं होती। —मुखिया सीयल

(यह पत्र वाशिंगटन राज्य की दुवामिश जाति के मुखिया सीयल ने १८५५ में अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति को लिखा था। राष्ट्रपति ने इस जाति की जमीन खरीदने की पेशकश की थी।)

भूदान : समता की क्रांति करुणा के मार्ग

—सुरेशराम

१८ अप्रैल, १९५१। आंध्रप्रदेश के तेलंगाना क्षेत्र की पदयात्रा करते हुए उस रोज सबेरे विनोबा पोचमपल्ली गांव (जिला नालगुण्डा) पहुंचे। करीब ६ बजे उस गांव में घूमने निकले। हरिजन बस्ती की तरफ बढ़ते चले गये। एक झोंपड़ी पर रुके। थोड़ी ही देर में बहुत से लोग वहां इकट्ठे हो गये। उन हरिजन भाइयों ने अपनी दुःखभरी कहानी उनको सुनायी। बाबा ने पूछा, 'आप क्या चाहते हैं, आपके लिए क्या किया जा सकता है?' जवाब में अधेड़ उम्र के एक भाई ने कहा, 'अगर हमको खेती के लिए कुछ जमीन मिल जाये, तो हमारी मुसीबत बहुत हद तक दूर हो जायेगी।'

बात करते-करते बाबा उन सबके साथ अपने निवास स्थान पर पहुंच गये। गांव में लगभग ढाई हजार एकड़ जमीन है और आबादी होगी तीन हजार। हरिजन लोग मजदूरी में कुछ फसल पा जाते हैं, लेकिन उससे काम नहीं चलता।

बाबा ने सवाल किया—कितनी जमीन चाहिए?

आपस में सलाह-मशविरा करने के बाद मुखिया ने बताया अगर ८० एकड़ हो—४० सूखी और ४० तरी, तो काफी है।

बाबा ने गांव भर की उस मडली से पूछा—आप गांव के लोग अपने भूमिहीन भाइयों के लिए कुछ जमीन दे सकते हैं?

एकदम सन्नाटा! सब एक दूसरे की तरफ देखते थे और हरिजन बंधुओं की निगाह बाबा पर लगी थी। इतनी ही देर में एक नवयुवक खड़ा हो गया और विश्वास-भरी,

पर नम्र वाणी में कहा—मेरे स्वर्गीय पिताजी की इच्छा थी कि कुछ जमीन इन भाइयों को दी जाये। लिहाजा मैं अपनी और अपने पाच भाइयों की तरफ से १०० एकड़ जमीन — जिसमें ५० खुश्की और ५० तरी है—आपके मार्फत इन लोगों को भेंट करता हूं।

सब लोग यह सुनकर बहुत चकित रह गये। दान देनेवाले भाई श्री रामचन्द्र रेड्डी को एक कागज दिया गया कि वह अपना संकल्प उस पर लिख दें। उन्होंने उत्साह के साथ उस पर दान का ब्योरा लिख दिया।

उन दिनों तेलगाना के इलाके में जमीन के सवाल को लेकर बड़ी अशांति मची हुई थी। भूमिहीनों की तकलीफों का कोई ठिकाना नहीं था। उनको जमीन दिलाने के लिए साम्यवादी लोगों के नेतृत्व में हिंसात्मक कार्रवाई और मारकाट भी हुई थी। बड़ा आतंक छाया हुआ था, और भूमिवान लोग गाव छोड़-छोड़ कर शहरों में जाकर बस रहे थे। इस सारे दुखद प्रसंग की ओर संकेत करते हुए बाबा ने कहा, 'अगर ऐसे सज्जन लोग हर गाव में मिलते हैं, तो कम्युनिस्टों का मसला हल हो गया, ऐसा समझें। आप यह जरूर समझ लें कि हिन्दुस्तान में श्रीमान लोग अपने हाथ में ज्यादा जमीन रख सकनेवाले नहीं हैं। कोई भी श्रीमान सिवा गरीबों की मदद से अपनी भूमि अपने हाथ में रख नहीं सकता।'

उस रात को बाबा बहुत देर तक नहीं सोये। वे सोचते रहे : 'अस्सी एकड़ की माग की गयी और सौ एकड़ जमीन मिली'—यह चमत्कार है या कोई आकस्मिक घटना है या इसके पीछे ईश्वर का कोई इशारा है ? उनको लगा कि विश्व-व्यापक शक्ति कुछ नया काम करना चाहती है, और उसके लिए यह घटना एक निमित्त है!

अगले दिन सवेरे पोचमपल्ली से बाबा दूसरे पड़ाव के लिए निकले। एक जगह स्वागत के लिए फूल की माला लेकर लोग खड़े थे। नाश्ता कराने की भी तैयारी थी। बाबा ने कहा, 'ये फूल तो पूजा के काम के लिए हैं, और नाश्ते के लिए आप जो लाये हैं, उसके लिए धन्यवाद है। लेकिन मेरा नाश्ता तो ऐसा होना चाहिए कि उससे भूमिहीनों का भी पेट भरे। इसलिए मेरी माग जमीन की है।' इसके लिए लोगों की तैयारी तो नहीं थी। लेकिन आपस में बातचीत करने के बाद उन्होंने १५ एकड़ दान करने की घोषणा की।

विनोबा आगे बढ़े। लेकिन इस दान ने उनका विचार पक्का कर दिया। कल के १०० एकड़ और आज के २५ एकड़—युक्लिड के दो बिन्दु हो गये और आगे बढ़ने के लिए एक लाइन बन गयी। इस तरह भूदान-यज्ञ शुरू हुआ। जनता के अपने अभिक्रम से, अहिंसा की शक्ति से एक नया प्रयोग दुनिया के सामने आया, जिसने भूमि-समस्या के निराकरण का एक निराला मार्ग प्रस्तुत किया। तेलगाना की यह यात्रा ६ जून, १९५१ को समाप्त हुई। इसमें बाबा को १२,२०१ एकड़ जमीन भूमिहीनों के लिए मिली। इस यात्रा में ग्रामवासियों के लगभग पाच सौ आपसी झगड़े भी

भूदान यात्रा के समय एक सभा

उन्होंने निपटाये। सारे देश में मानो एक नयी ज्योति फैल गयी। अहिंसा के चमत्कार का दर्शन हुआ, और भूमि-क्रांति का एक अनोखा रूप सामने आया।

अपने आश्रम पवनार में वापस पहुंच कर बाबा खेती और कांचनमुक्ति के कार्यक्रम में लग गये। वहां उन्हें पं० जवाहरलाल नेहरू का तार मिला कि पंचवर्षीय योजना पर विचार-विनिमय करने के लिए वे दिल्ली आयें। विनोबा ने रेल की बजाय पैदल ही जाना ठीक समझा। १२ सितम्बर को सवेरे वे आश्रम से निकले और ७९२ मील की यात्रा करते हुए १३ नवम्बर, १९५१ को राजघाट (दिल्ली) पहुंचे। इस यात्रा में उनको कुल १८,४१६ एकड़ जमीन मिली। इस अरसे में कार्यकर्ताओं के कार्यक्रम से तेलगाना में लगभग तीन हजार एकड़ जमीन और मिल गयी। इस तरह बाबा के दिल्ली पहुंचते पहुंचते पैंतीस हजार एकड़ से ज्यादा जमीन भूदान में मिल चुकी थी। भारत क्या दुनिया के इतिहास में यह अभूतपूर्व घटना थी। जमीन के मसले का ऐसा हल कहीं नहीं हुआ था, इसलिए भूदान-यज्ञ पर सारे देश और दुनिया की निगाह टिक गयी। दिल्ली में ११ दिन रहने के बाद विनोबा ने उत्तर प्रदेश की यात्रा शुरू की। १३-१४-१५-१६ अप्रैल, १९५२ को सेवापुरी (जिला बनारस में चौथा सर्वोदय सम्मेलन स्वर्गीय श्री श्रीकृष्णदास जाजू की अध्यक्षता में सपन्न हुआ। उस समय तक देश भर में १,०२,३६१ एकड़ जमीन ४,९३६ दाताओं से मिल चुकी थी। यहां दो साल के अन्दर पचीस लाख एकड़ जमीन प्राप्त करने का संकल्प किया गया। विभिन्न प्रदेशों के मित्रों ने अपने यहां का कोटा बना लिया।

सेवापुरी से बाबा २० अप्रैल १९५२ को आगे चले। बुद्ध पूर्णिमा के दिन, ९ मई १९५२ को, उनका पड़ाव लखनऊ में था। शाम की प्रार्थना-सभा में अपने प्रवचन में उन्होंने कहा, 'अब यह सोचने का समय आया है कि हमें किस प्रकार अपनी समाज-रचना करनी चाहिए। यानी यह संध्या का समय है। हमारे सामने आज पचासों रास्ते खुले हैं। लेकिन कौन सा रास्ता लें, यह हमें तय करना है। हम सबके सामने यह बड़ा भारी

सवाल है कि अपनी आर्थिक और सामाजिक रचना करने के लिए कौन सा तरीका स्वीकार करें। मैं मानता हूं कि यह धर्म-चक्र-प्रवर्तन का कार्य है। जमीन तो मेरे पास कब की पहुंच चुकी है। आज जिस तरीके से चाहें उस तरीके से यह समस्या हल कर सकते हैं। आपको तय करना है कि घी के डिब्बे मे आग लगानी है या वेद-मंत्रो के साथ यज्ञ मे उसकी आहुति देनी है। आप यह मत समझिये कि बाहर से हमारे इस देश मे केवल मानसून ही आते हैं, बल्कि क्रांतिकारी विचार भी आते हैं।'''इसलिए हमे तय करना चाहिए कि भूमि की समस्या हमे क्रान्ति से हल करनी है या हिंसा से। मेरे मन में इस बारे मे संदेह नहीं है कि यह समस्या शांति से हल हो सकती है। इस संबंध में इतना स्पष्ट दर्शन मेरे मन में है, इसलिए मैं निःसन्देह होकर बोल रहा हू और कहता हू कि 'भाइयो वन मे पंछी बोल रहे हैं, इसलिए अब जाग जाओ। जिस तरह तुलसीदासजी भगवान को समझा रहे थे, उसी तरह मैं अपने भगवान से, आपसे कहता हूं कि जाग जाओ। यदि आप सब दान देंगे तो आपकी इज्जत होगी।'''यदि हम भूमि का मसला शांति से हल करेंगे तो दुनिया को एक रास्ता दिखा सकेंगे।'

उत्तरप्रदेश की यात्रा में २,६५,०२८ एकड भूदान मिला। लगभग एक लाख एकड अन्य प्रदेशो में तब तक भूदान की पूरी शक्ति प्रकट नहीं हो पायी थी, उसकी खोज बाबा ने बिहार में शुरू की। १४ सितम्बर १९५२ को उन्होंने बिहार मे प्रवेश किया। चालीस दिन बाद वह पटना पहुचे। वहा की एक ग्राम सभा मे उन्होने कहा, 'पिछले सर्वोदय सम्मेलन में बिहारवाले आये थे और उन्होंने चार लाख एकड का संकल्प लिया था। मैं इस समय इस नतीजे पर आया कि बिहार का मसला ही हल करना चाहिए। अब तो बात फैल गयी, जाने सब कोई। न सिर्फ हिन्दुस्तान में, लेकिन बाहर के देशो मे भी आशा निर्माण हुई है कि जमीन का सवाल हल करने का एक नया रास्ता खुल गया है।'

उस दिन पटना मे विनोबा ने भूदान के साथ-साथ संपत्तिदान का भी विचार सामने रखा और लोगो से संपत्तिदान की मांग भी की। बिहार मे यह आदोलन जनजीवन मे प्रवेश करता चला गया। यहा दो सर्वोदय सम्मेलन भी हुए। एक हुआ चांडिल में ७, ८ मार्च, १९५३ को श्री धीरेन्द्र मजूमदार की अध्यक्षता मे। इसमें देश के सुप्रसिद्ध समाजवादी विचारक और नेता श्री जयप्रकाश नारायण ने भूदान-यज्ञ मे अपना समय लगाने का विचार प्रकट किया। दूसरा सम्मेलन १८, १९, २०, अप्रैल, १९५४ को स्वर्गीय श्रीमती आशा देवी आर्यनायकम् की अध्यक्षता मे बोधगया मे हुआ। वहाँ श्री जयप्रकाशजी ने भूमि-क्रांति के इस महान कार्यक्रम के लिए अपना जीवन समर्पण करने की घोषणा की और देश भर के लोगो का आवाहन किया कि वे इस काम के लिए अपना जीवन समर्पण करें। अगले दिन सम्मेलन मे बाबा की एक चिट्ठी पढकर सुनायी गयी जो उन्होने जयप्रकाशजी को भेजी थी। उसमें बाबा ने लिखा था—

'भूदान-यज्ञ मूलक, ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसक क्रांति के लिए मेरा जीवन समर्पित है।'

इस घोषणा से सारे सम्मेलन मे बिजली जैसी लहर दौड गयी। एक-एक कर लगभग छः सौ स्त्री-पुरुषो ने, उसी समय अपने जीवनदान की घोषणा की। सेवापुरी सर्वोदय सम्मेलन का २५ लाख एकड का संकल्प भी पूरा हो चुका था। २५ मार्च, १९५४ तक देश भर से २७,६३,४६५ एकड भूमि मिल चुकी थी। अब इस आदोलन ने व्यापक रूप लिया। बिहार में तो बडी तेजी से यह बढ रहा था। जनमानस पर उसके प्रभाव का अंदाज एक घटना से आसानी से मिल जाता है। नवम्बर १९५४ मे बाबा पूर्णिया जिले मे घूम रहे थे। नवाबगंज पडाव पर जा रहे थे और रास्ते भर लोग गा रहे थे;

सीता सीता राम बोलो।
सब कोई भूमि दान दे दो॥
राधे राधे श्याम बोलो।
सब कोई संपत्ति दान दे दो॥

क्या छोटे क्या बडे, सभी तरह के भूमिवानो के दिल पर इसका असर था। छोटे काश्तकारो के दान ने वह शक्ति पैदा की जिसने बड़े-बडो को हिला दिया। २३ मई, १९५३ को एक अद्भुत घटना हुई। बिहार के पलामू जिले के रंका गांव में बाबा का पडाव था। रंका के राजा गिरिवर-नारायणसिंह उनसे मिलने आये। बाबा ने कहा, 'आप जानते हैं कि हम भूदान के लिए घूम रहे हैं, आपको भी भूदान देना चाहिए।'

महाराज ने सहज भाव से जवाब दिया, 'आपकी बात मेरे लिए आज्ञा के समान है। जितना भूदान आप कहें, मैं दे दूं।'

"आपके पास कितनी जमीन है?"

"एक लाख एकड तो परती जमीन है और १२ हजार एकड खुदकाश्त है।"

"तो एक लाख एकड परती जमीन जो है वह सबकी सब हमे दे दीजिये और खुदकाश्त जमीन में से हम छठा हिस्सा मागते हैं।"

"मुझे बडी खुशी से यह मजूर है। एक लाख एकड परती और दो हजार एक एकड खुदकाश्त जमीन आपकी हो गयी। दानपत्र लेकर किसी को मेरे पास भेज दीजियेगा तो मैं दस्तखत कर दूंगा।" दानपत्र भेजा गया, उस पर दस्तखत कर दिये गये और शाम को ग्राम-सभा मे एक लाख दो हजार एक एकड जमीन के दान की घोषणा हो गयी। इसी तरह दरभंगा के महाराजाधिराज श्री कामेश्वरसिंह ने १८ नवम्बर, १९५४ को कुरसेला पडाव पर १,१७,७५५ एकड का दान दिया।

बिहार की मानो हवा ही बदल गयी थी। संथाल-परगना जिले का एक प्रसंग है। बोरियो नामक गाव में बाबा ठहरे हुए थे। शाम की प्रार्थना-सभा के बाद वे अपने डेरे पर लौट रहे थे। रास्ते में संथाली भाइयो ने उनका अभिनन्दन करते हुए बड़े उत्साह से कहा, "बाबा जमीन लो, जमीन लो, हम जमीन देंगे।" बाबा ने हाथ जोडकर नमस्कार किया और आगे बढ़े। जरा देर बाद एक लम्बा तगड़ा संथाली भाई उनके सामने आकर खड़ा हो गया और नम्र भाव से बोला—"जमीन लो बाबा, जमीन लो।"

बाबा ठहर गये और कहा, "जाओ, सारी जमीन बाँट डालो और पूरे गाँव का परिवार बनाकर रहो।"

जमीन मांगते हुए बाबा ने बिहार में
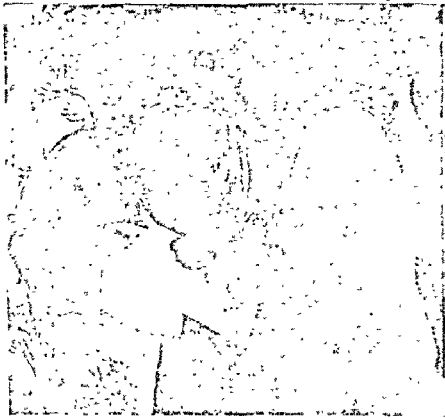
'आखिरी' आदमी को भूदान की जमीन

प्रवेश किया। साढ़े सत्ताइस महीने वहां रहने के बाद बिहार के आकाश में एक ही गूंज सुनायी पड़ती थी—"जमीन लो, जमीन लो।" बिहार की इस यात्रा के दौरान, जिसे बाबा ने 'आनन्द-यात्रा' की संज्ञा दी थी, २,८६,४२० दाताओं ने २२,३२,४७४ एकड़ जमीन का दान दिया।

बिहार के बाद बाबा ने २५ दिन बंगाल में बिताये और इसके बाद २६ जनवरी, १९५५ को उड़ीसा में प्रवेश किया। वहां उन्होंने भूमि-क्रांति का सिंहनाद किया। उन्होंने कहा : "भूमिहीनों को भूमि दे देना काफी नहीं है। जमीन की निजी मालकियत भी खत्म होनी चाहिए। जमीन तो गोपाल की या समाज की ही हो सकती है। इसलिए मैं उड़ीसा में इस क्रांति का परिपूर्ण दर्शन चाहता हूं।" उन्होंने आगे कहा—"हमें करना तो यह है कि भारत में कोई भी मालकियत का दावा नहीं करे। हमें भूमि की, संपत्ति की, कारखानों की मालकियत मिटानी है। सारे समाज की संपत्ति समाज की हो और सबको समान रूप से उसका लाभ मिले, यह हमें करना है। इतना सारा काम बिना अहिंसक क्रांति के नहीं हो सकेगा, इसलिए हमने अहिंसक क्रांति का उद्घोष किया है। पहले कदम के तौर पर आज हम छठा हिस्सा मांगते हैं। लेकिन आखिर हमें गांव की कुल जमीन गांव की बनानी है।"

इस प्रकार ग्रामदान के विचार ने जोर पकड़ा और उड़ीसा में पहले ही दिन वहां के अनन्य सेवक और लोकनायक स्वर्गीय गोपबन्धु चौधरी ने ९१ गांव ग्रामदान में भेंट किये। लगभग एक महीने के बाद उनका पड़ाव मानपुर (जिला कटक) गांव में हुआ जो उड़ीसा का पहला ग्रामदान था। ३० जनवरी, १९५३ को इस गांव का ग्रामदान दिया गया था और बुद्ध-जयन्ती के दिन २७ मई, १९५४ को गांव की कुल जमीन, ५७५ एकड़, सर्वसम्मति से गांव के लोगों में सभना के आधार पर बांटी गयी थी।

उड़ीसा के कोरापुट जिले में बाबा बरसात के दिनों में भी सतत घूमते ही रहे। वहां ग्रामदान का तांता लग गया। इस प्रदेश में बाबा की यात्रा २६ जनवरी १९५५ से ३० सितम्बर, १९५५ तक चली। बिहार की यात्रा को बाबा ने 'आनन्द-यात्रा' कहा था, उड़ीसा की यात्रा को उन्होंने 'शक्ति-यात्रा' की संज्ञा दी। इस 'शक्ति-यात्रा' में ९५,७५७ दाताओं से २,५७,२७७ एकड़ भूदान मिला और ८१२ ग्रामदान हुए। इनमें से ६०५ ग्रामदान तो अकेले कोरापुट जिले के ही थे।

उड़ीसा के बाद बाबा की यात्रा आंध्र में हुई और फिर तमिलनाड में। वहां उन्होंने ग्रामदान से आगे बढ़कर ग्राम-स्वराज्य का विचार रखा। १४ अप्रैल, १९५७ को जब वह कन्याकुमारी में थे तो सागर के बीच विवेकानन्द-शिला पर उन्होंने शपथ ली कि

"जब तक देश के हर गांव में ग्राम-स्वराज्य की स्थापना नहीं हो जाती, मैं अपनी यात्रा जारी रखूंगा और उसके लिए प्रयत्न करूंगा।"

१८ अप्रैल, १९५७ को बाबा ने केरल प्रदेश की यात्रा शुरू की। केरल के मुख्यमंत्री और सुप्रसिद्ध साम्यवादी नेता श्री शंकरन नम्बूदरीपाद ने बाबा का स्वागत करते हुए कहा कि आपका हमारे प्रदेश में आगमन बहुत महत्वपूर्ण घटना है। हमारे मंत्रिमंडल ने भूमि समस्या को पहले हल करने का निश्चय किया है। हमारा उद्देश्य और लक्ष्य यह है कि समस्या का एक व्यापक हल निकालें। मुझे विश्वास है कि ऐसी परिस्थिति में आपकी यात्रा लोगों का दृष्टिकोण बदलने में बहुत सहायक सिद्ध होगी। स्वागत के लिए धन्यवाद देते हुए बाबा ने कहा, "आज हम एक प्रेम-राज्य से दूसरे प्रेम-राज्य में प्रवेश कर रहे हैं। जिस प्रदेश को हमने छोड़ा, वहां माणिक्यवाचक, नम्मलवार और रामानुज का राज्य चलता है। अब हम जिस राज्य में प्रवेश कर रहे हैं, वहां के राजा हैं ईसा मसीह और शंकराचार्य। हम इसमें कोई फर्क नहीं देख रहे हैं। ईसा मसीह ने सिखाया कि पड़ोसी से वैसा ही प्यार करो, जैसा हम अपने आपसे करते हैं। इसलिए जब हमने सुना कि यहां के ईसाई धर्मावलम्बियों ने इस कार्य को माना है, तो हमें आश्चर्य नहीं हुआ। अगर वे इसे न मानते, तभी आश्चर्य की बात होती। क्योंकि इस कार्य को न मानने का अर्थ है, ईसामसीह को न मानना। शंकराचार्य ने एक कदम आगे बढ़कर अभेद की बात बतायी थी। जहां अभेद शब्द आया, वहां सब प्रकार की मालकियत टूट जाती है। शंकराचार्य ने इस पर स्पष्ट भाष्य लिख रखा है "कस्यचिद् धन"—धन किसका है, मालकियत किसकी है? किसी की नहीं। हम समझते हैं कि मालकियत मिटाने का इससे स्वच्छ, स्पष्ट आदेश शायद ही कहीं मिल सकता। ऐसे महान पुरुष के राज्य में हम आज प्रवेश कर रहे हैं।

केरल यात्रा के आखिरी दिन, २३ अगस्त, १९५७ को मंजेश्वरम् में बाबा ने शांति सेना की एक टोली बनाने की घोषणा की। उसके नायक केरल के सुप्रसिद्ध और वयोवृद्ध नेता श्री केलप्पनजी थे। इसके बाद से शांति सेना का संगठन बढ़ता चला गया।

बाबा की करनाटक प्रदेश की यात्रा के दौरान, २१-२२ सितम्बर १९५७ को यलवाल (जिला मैसूर) में एक ऐतिहासिक ग्रामदान परिषद् हुई। इसमें तत्कालीन राष्ट्रपति स्वर्गीय राजेन्द्र बाबू, प्रधानमंत्री नेहरूजी, जयप्रकाशजी, कांग्रेस अध्यक्ष ढेबर भाई, प्रजा सोशलिस्ट पार्टी के अध्यक्ष श्री गंगाशरणसिंह, केरल के मुख्यमंत्री श्री नम्बूदरीपाद एवं अन्य नेताओं ने भाग लिया था। उस परिषद् में ग्रामदान पर अपने विचार प्रकट करते हुए विनोबाजी ने कहा, "भूमि की मालकियत का ख्याल धर्म-विरुद्ध, विचार-विरुद्ध है। मैंने पूर्ण प्रेम से मांगना शुरू किया तो लोगों ने देना भी शुरू कर दिया। इससे भूमि-समस्या हल होती है, यह तो बिलकुल छोटी सी चीज है। पर यह एक तरीका आजमाया जा रहा है जो गांधीजी का सिखाया हुआ है। शुरू से ही अगर मैं ग्रामदान की बात करता तो वह बननेवाली नहीं थी। भूदान के परिणाम-स्वरूप ही ग्रामदान आ सकता है। भूदान में करुणा थी और ग्रामदान में सहयोग एवं समता की कल्पना है। कारुण्यपूर्वक ही समता आनी चाहिए। अगर दूसरी कृत्रिम रीति से समता आ जाये तो वह कल्याण-कारिणी होगी, इसमें मेरा विश्वास नहीं है।"

दो दिन की चर्चा के बाद इस परिषद् की ओर से एक सर्वसम्मत वक्तव्य प्रकाशित किया गया। उसमें बताया गया कि ग्रामदान आंदोलन की मुख्य विशेषता है—अहिंसात्मक पद्धति और इसका ऐच्छिक स्वरूप। ऐसा आंदोलन सब तरह की सहायता और प्रोत्साहन की अपेक्षा रखता है। राष्ट्र ने इसके समर्थन की अपील करते हुए उस वक्तव्य में कहा गया—

इस परिषद में उपस्थित केन्द्रीय और राज्य सरकारों के सदस्यों ने ग्रामदान आंदोलन की प्रशंसा करते हुए तथा सहायता करने की इच्छा रखते हुए बताया कि सम्बद्ध सरकारों की अपनी भूमिसुधार सम्बन्धी योजनाएं, यथा भूमि-सम्बन्धी सभी मध्यवर्तीय स्वार्थों के उन्मूलन, जोत की सीमा के निर्धारण तथा जनता की सहमति से सहकारी आंदोलन की सभी अवस्थाओं में प्रगति-कार्य को आगे बढ़ाना होगा। सरकार की ये योजनाएं ग्रामदान-आंदोलन के विरोध में नहीं है, बल्कि ग्रामदान-आंदोलन से उनको समर्थन मिलता है।

यलवाल की इस महत्वपूर्ण परिषद् के बाद मैसूर नगर में बोलते हुए पंडित जवाहरलाल नेहरू ने कहा, "मुझे खुशी है कि मैं ग्रामदान सम्मेलन में भाग ले सका। हम सब इस बात पर सहमत हैं कि ग्रामदान का बहुत महत्व है, केवल अपने विशेष क्षेत्र में ही नहीं, बल्कि अर्थ-नीति के व्यापक संदर्भ में भी ग्रामदान अब एक काल्पनिक चीज नहीं रह गया है। यह स्थायी चीज है और हिन्दुस्तान की चित्र-भूमि पर एक बहुत ठोस चीज है।" कम्यूनिस्ट नेता श्री शंकरन नम्बूदरीपाद (जो उस समय केरल के मुख्य मंत्री थे) ने कहा कि भारत की भूमि-समस्या और ग्रामीण संगठन का जो प्रश्न है, उसके बारे में हमारी पार्टी की एक नीति है, और हम कबूल करते हैं कि ग्रामदान आंदोलन ने इस नीति का एक विकल्प पेश किया है। अन्य नेताओं ने भी इस परिषद् पर बहुत संतोष व्यक्त किया। यलवाल परिषद् के अलावा मैसूर प्रदेश में विनोबा की यात्रा ने देश को 'जय जगत' का मंत्र भी दिया।

दक्षिण भारत के चार प्रदेशों में लगभग ढाई वर्ष बिताने के बाद बाबा उत्तर की ओर बढ़े। महाराष्ट्र के पूरबी खानदेश जिले में पहगांव नामक स्थान में १५ अगस्त, १९५८ को उनका पड़ाव था। उस दिन इस जिले का पूरा अक्राणी तालुका जिसमें १५३ गांव हैं, ग्रामदान में दिया गया। उसके पड़ोस में अक्कलकुआ तालुका है जिसमें २०३ गांव हैं। इसके ९१ गावों का ग्रामदान तो पहले हो चुका था, ९४ ग्रामदान बाबा को ६४ वीं वर्षगांठ के दिन दिये गये। इस क्षेत्र में ग्राम निर्माण कार्य का उत्तरदायित्व सर्वोदय जगत के परिचित सेवक और बाबा के मंत्री-सचिव निजी सचिव श्री दामोदरदास मूंदड़ा के सुपुर्द किया गया।

महाराष्ट्र के बाद गुजरात की यात्रा चली। साबरमती आश्रम में जब बाबा पहुंचे तो मार्मिक और प्रेरक दृश्य दीख पड़ा।

मुंगेर जिले में भूदानपुरी

बापू और बाबा दोनों की यह साधना-भूमि रही है। बाबा ने कहा कि "इस स्थान पर जो साधना की गयी है, उसी का परिणाम यह भूदान-ग्रामदान यात्रा है। यहीं पर मुझे पहले अहिंसा का दर्शन हुआ था। मैं इस स्थान का बहुत ऋणी हूं। यह मेरा मातृस्थान है।"

गुजरात के बाद राजस्थान। जिन दिनों राजस्थान में बाबा की यात्रा चल रही थी, उन दिनों वहां एक अभूतपूर्व कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। २ मार्च १९५९ को सवेरे शांति सैनिकों का एक जुलूस अजमेर नगर से चला और साढ़े नौ मील की पदयात्रा करके पौने नौ बजे गगवाना पहुंचा। वहां एक रैली हुई और विनोबाजी से संदेश देने की विनती की गयी। पांच मिनट तक बाबा मौन खड़े रहे, मानो समाधि में हों। फिर उन्होंने आंखें खोलीं और दो शब्द कहे—*"सबको प्रणाम!"*

इस यात्रा में कुछ अरसे तक विश्व-विख्यात शांतिवादी नेता डा० मार्टिन लूथर किंग भी साथ रहे। बाबा राजस्थान से पंजाब गये। वहां से कश्मीर चले गये। २२ मई, १९५९ से २० सितम्बर, १९५९ तक कश्मीर में उनकी यात्रा चली। कश्मीर की सीमा में प्रवेश करते हुए उन्होंने कहा "मैं यहां पर तीन बातें करना चाहता हूं—(१) मैं देखना चाहता हूं, (२) मैं सुनना चाहता हूं, और (३) मैं प्यार करना चाहता हूं। जितना प्यार करने की ताकत भगवान ने मुझे दी है वह सब मैं यहां इस्तेमाल करना चाहता हूं।"

पहलगाम पड़ाव पर बोलते हुए उन्होंने कहा, "कुरान शरीफ ने एक बात दिखलायी है। "अल्लाहु वहद"—यानी अल्लाह एक है। अब इसी तरह नयी तालीम देनी होगी कि इन्सान एक है—"इन्सानु वहद"। पुरानी तौहीद है कि अल्लाह एक है, नयी तौहीद है कि इन्सान एक है। उसके लिए लाज़ कुरान-शरीफ में मिलेगा। हिन्दू, बौद्ध, ईसाई, वगैरह सब मजहबों की किताबों में मिलेगा।"

कश्मीर की स्थिति पर दुःख प्रकट करते हुए उन्होंने कहा, "मैंने देखा कि कश्मीर में कुदरत खूबसूरत है, लोग खूबसूरत हैं और उनका दिल भी खूबसूरत है। लेकिन बदसूरत है यहां की सियासत। इसीलिए मेरी अपील है कि अब आप आगे आइये, सियासत से *काम नहीं बनेगा, आपको अपनी ताकत बनानी* चाहिए।"

इसी यात्रा के दौरान उन्होंने एक बहुत क्रान्तिकारी संदेश दिया : "अब सियासत और मजहब के दिन लद गये और अध्यात्म का जमाना आया है। विज्ञान के इस युग में हमको अपने मसले रूहानियत या अध्यात्म के तरीके से हल करने चाहिए।

आज सियासतदां लोगों का बड़ा जोर है। लेकिन आप देखेंगे कि एक वक्त ऐसा आयेगा, जब जिन हाथों ने एटम बम बनाया, वे ही हाथ इन बमों को तोड़ेंगे और लोगों की खिदमत में लगेंगे। यह समझ लेना चाहिए कि जो लोग सियासत से अलग रहकर रूहानियत का आसरा लेंगे, पनाह लेंगे, वे ही साइन्स के जमाने में टिकेंगे। साइन्स के जमाने में रूहानियत मार्गदर्शन देगी और रफ्तार बढ़ायेगी। मैं आपके सामने सामने एक समीकरण रखता हूं

सियासत + विज्ञान = सर्वनाश

रूहानियत + विज्ञान = बहिश्त

रूहानियत और विज्ञान एक हो जायें तो दुनिया में बहिश्त (स्वर्ग) आयेगा, यह आप खूब समझ लीजिये। साइन्स का फायदा उठाना है, उससे काम है, उससे काम लेना है, तो उसके साथ रूहानियत को जोड़ना होगा और अगर उसका फायदा न उठाना हो, उसकी बदौलत मर मिटना हो, तो बीच में सियासत ले आइये।"

कश्मीर के बाद पंजाब और हिमाचल। फिर उत्तरप्रदेश के पश्चिमी जिलों से होते हुए बाबा ने ९ मई १९६० को मध्यप्रदेश के चंबल घाटी वाले इलाके में प्रवेश किया। वहीं पर १९ और २० मई को एक अद्वितीय घटना हुई—१९ बागियों ने बाबा के सामने अपने हथियार डाल दिये और शांतिमय जीवन बिताने का संकल्प किया। चंबल घाटी में इन भाइयों का समर्पण अहिंसा की शक्ति का एक अद्भुत दर्शन था।

वहां से बाबा इन्दौर गये। इन्दौर में चार सप्ताह रहकर कस्तूरबा ग्राम आये। वहां सात दिन उनका पड़ाव रहा। बाबा के साथ कस्तूरबा गांधी स्मारक ट्रस्ट की सभी बहनों ने सलाह-मशविरा करके कुछ महत्वपूर्ण निर्णय लिये, जिनमें एक 'शांति सेना' का काम उठाने का निर्णय है। ट्रस्ट को बधाई देते हुए २९ अगस्त, १९६० की प्रार्थना सभा में कस्तूरबाग्राम में बाबा ने कहा "यहां पर चर्चा अच्छी हुई, बहुत अच्छे ढंग से हुई और कस्तूरबा ट्रस्ट ने बहुत ही अच्छे फैसले किये। उन्होंने 'शांति सेना' का काम उठाने का जो प्रस्ताव किया, वह महत्वपूर्ण और अत्यन्त उचित प्रस्ताव है, क्योंकि अहिंसा के काम में स्त्री-शक्ति को ही आगे आना चाहिए। एक बड़ी चीज यह हुई कि उन्होंने सारे फैसले सर्वसम्मति से किये।"

इस अरसे में असम में भाषा के प्रश्न को लेकर कुछ हिंसक और अशोभनीय कार्य हो गये। वहा के मित्रों ने चाहा कि बाबा असम आयें। साथ ही, पंडित जवाहरलाल नेहरू का भी एक पत्र उनके पास पहुंचा जिसमें उन्होंने लिखा था कि "असम के घाव को आपही भर सकते हैं।" २६ सितम्बर, १६६० को बाबा इन्दौर निकले और मध्यप्रदेश तथा उत्तर-प्रदेश के मिर्जापुर और बनारस जिलों से होते हुए २५ दिसम्बर, १६६६ को बिहार की पावन भूमि पर कदम रखा। पहले ही दिन उन्होंने बिहार को एक नया मंत्र दिया: "बीघे में कट्ठा, दान दो इकट्ठा।"

बिहार की जनता के नाम एक अपील में बाबा ने कहा, मेरा तो विश्वास है कि इस प्रयत्न से ही अहिंसा की कुंजी हमारे हाथ में आयेगी, जिससे बहुत सारे दूसरे मसले भी हल होने की राह खुलेगी। मैंने देखा कि इस बार की यात्रा में हजारों लोग सुनने आते हैं, और उनके सामने जब मैं "बीघे में कट्ठा" यह एक छोटा सा मंत्र रखता हूं, तो लोगों के चेहरे पर बहुत आशा और उत्साह की झलक दीख पड़ती है। मुझे आशा है, सब कार्यकर्ता चाहे वे किसी राजनीतिक दल के हों, या रचनात्मक कार्य करनेवाले हों, इस काम में सम्मिलित शक्ति लगायेंगे और अपना मूल संकल्प सिद्ध करके ही रहेंगे।"

उत्तरी बंगाल के चार जिलों—पश्चिम के बाद दीनाजपुर, दार्जिलिंग जलपाईगुड़ी और कूचबिहार—की यात्रा करते हुए ५ मार्च, १६६१ को असम के गोलपाड़ा जिले से उन्होंने असम की यात्रा शुरू की। वहां उन्होंने श्रद्धा और प्रेम का संदेश दिया और कहा, "प्रेम तो बिजली है और श्रद्धा बटन है। प्रेम सारी दुनिया में फैला हुआ है। कमी श्रद्धा की है। अगर हम श्रद्धा का बटन दबायेंगे तो आनन्द की ज्योति प्रगट होगी।" असम में वह डेढ साल रहे।

इसके बाद बाबा ने १५ दिन पूर्वी पाकिस्तान में यात्रा की। ५ सितम्बर से २६ सितम्बर, १६६२ तक इस पदयात्रा में उन्हें पाकिस्तान में १७५ बीघा जमीन मिली जो वहीं बांट दी गयी।

पूर्वी पाकिस्तान के बाद २२ सितम्बर १६६२ से ६ अगस्त १६६३ तक बाबा ने पश्चिम बंगाल की यात्रा की। इसमें उन्हें ३११ ग्रामदान मिले। बंगाल यात्रा के बाद १०, ११, १२ अगस्त—ये तीन दिन बाबा ने बिहार में बिताये। इन्हीं दिनों उन्होंने बिहार सर्वोदय मंडल के विघटन का क्रांतिकारी निश्चय प्रकट किया।

१३ अगस्त से ११ दिसम्बर, १६६३ तक उत्कल में पदयात्रा करते हुए बाबा १२ दिसम्बर, १६६३ को मध्यप्रदेश के रायपुर जिले में आये। २२ से २६ दिसम्बर तक रायपुर में रहे, जहां पन्द्रहवां सर्वोदय सम्मेलन हुआ। उस सम्मेलन में बाबा ने त्रिविध कार्यक्रम देश के आगे रखा।

जैसा सर्वविदित है, अक्टूबर १६६२ में चीन का आक्रमण भारत पर हुआ। पंडित जवाहरलाल के शब्दों में यह आक्रमण केवल कुछ एकड़ जमीन के लिए नहीं था, बल्कि मुख्यतः वैचारिक था। देश की गरीबी, भुखमरी और विषमता अगर दूर नहीं होती है तो गांव-गांव में चीन अपने आप घुस आयेगा, इसी पर चिन्तन करते हुए बाबा ने ग्रामदान को एक अभिनव शक्ल दी। पहले तो ग्रामदान में केवल भूमिवानों से उनकी भूमि की मांग जाती थी और अन्य किसी को इसमें कुछ करना-धरना नहीं होता था। लेकिन अगर यह सर्वांगीण क्रांति है तो इसमें सभी को कुछ न कुछ हाथ बटाना चाहिए, इस दृष्टि से उन्होंने ग्रामदान का संशोधन किया और इसके लिए चार शर्तें रखीं।

हर भूमिवान अपनी कुल भूमि की मालकियत गांव के नाम कर दे, हर भूमिवान अपनी भूमि का बीसवां हिस्सा भूमिहीन के लिए दान में दे, गांव की एक ग्रामसभा बने जिसमें गांव का हर बालिग निवासी, स्त्री हो या पुरुष शरीक हो और यह ग्रामसभा सर्वसम्मति या सर्वानुमति से अपना काम करे; एक ग्रामकोष स्थापित किया जाये जिसमें गांव के भूमिवान अपनी फसल का चालीसवां हिस्सा दें और मजदूरी या नौकरी पेशा करनेवाले आमदनी का तीसवां हिस्सा दें। फसल या आमदनी का हिस्सा हर साल लगातार देना होगा।

ग्रामदान का यह विचार देश के अर्थशास्त्रियों और विशेषज्ञों को भी बहुत जंचा है। सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री और गोखले संस्थान के संचालक डा० धनंजयराव गाडगिल ने अपने एक लेख में ग्रामदान के बारे में विचार प्रकट करते हुए कहा, 'ग्रामदान अभूतपूर्व आंदोलन है जिसके बहुत पेचीदा पहलू हैं और इसके अन्दर बहुत बड़ी संभावना भरी है। जहां ग्रामदान का प्रयोग व्यवस्थित ढंग से किया जायेगा, वहां इसके साथ न्याय करने के लिए विशेष कानूनी और प्रशासनिक सुविधाओं की जरूरत होगी—एक बार जहां ग्रामदान का तथ्य जम गया वहां अनुकूल स्थिति होने पर वह किसी विशेष प्रचार या बाहरी कोशिश के बिना ही बढ़ेगा और फैलेगा।'

मई १६६५ में जब बिहार के कार्यकर्ता विनोबा से मिले तो उन्होंने कहा, 'अगर आप लोग बिहार में ग्रामदान का तूफान लाने को तैयार हों, तो हम बिहार आ सकते हैं।" कुछ सोच-विचार के बाद वे राजी हो गये और विनोबा को निमंत्रण दिया। ११ सितम्बर १६६५ को विनोबा ट्रेन से पटना आ गये जहां उनको ७७६ ग्रामदान भेंट किये गये। फिर विनोबा ने मोटर से बिहार के हर जिले का दौरा किया। इस यात्रा में बिहार में ४०७८ ग्रामदान हो गये।

जमशेदपुर में १६ दिसम्बर १६६५ को दोपहर प्रधानमंत्री लालबहादुर शास्त्री विनोबा से मिलने आये। डेढ़ घंटे तक दोनों की एकांत में बातचीत होती रही। शाम की आम-सभा में विनोबा ने शास्त्रीजी का अभिनन्दन करते हुए कहा कि उन्होंने शांति और शक्ति का जो संयोग दिखाया, उससे देश की इज्जत दुनिया में बढ़ी है। उस अवसर पर शास्त्रीजी ने जमशेदपुर में बहुत सारगर्भित और उत्साहवर्धक भाषण दिया। उसमें उन्होंने कहा, "मैं आज जमशेदपुर में श्रद्धेय विनोबाजी के दर्शन के निमित्त आया हूं। मैं समय-समय पर इस बात की कोशिश करता हूं कि मैं उनसे मिलूं, उनके विचारों को जानूं और उनसे प्रेरणा प्राप्त करूं।"‥विनोबाजी देश का एक जबर्दस्त मार्ग-दर्शन कर रहे हैं।‥‥ गांधीजी और विनोबाजी, यह जो कड़ी है, वह राजकार्य में पवित्रता लाना चाहती है। सच्ची राजनीति का आदर्श हमारे सामने रख

सीधी में ग्रामदान अभियान की एक सभा

रही है।'''मैं आपसे निवेदन करना चाहता हूं कि विनोबाजी का जो सदेश है, कार्यक्रम है, उसमें जितना सहयोग दे सकें, जरूर दें।''

ग्रामदान के बाद विनोबा ने प्रखण्डदान और जिलादान की माग की। फरवरी १९६७ में दरभगा जिले का दान हुआ। अक्तूबर १९६९ तक बिहार के सभी जिले ग्रामदान में आ गये और बिहार-दान सम्पन्न हुआ। तमिलनाड में श्री जगन्नाथन् और उनके साथियों ने मिलकर तमिलनाड दान कराया। अन्य प्रदेशों में जिलादान हुए।

सीमान्त गाधी बादशाह खां जब सेवाग्राम पधारे तो उनसे मिलने विनोबा वहां गये। जाते समय बिहार से विदा लेते हुए उन्होंने कार्यकर्ताओं को 'मनि-तूफान' शब्द दिया। बिहार के सहरसा जिले में ग्रामस्वराज्य की दृष्टि से सघन कार्य हुआ। कई शानदार अभियान चले जिनमें देश के भिन्न-भिन्न भागों से कार्यकर्ताओं ने शिरकत की। मुजफ्फरपुर जिले के मुसहरी ब्लाक में जयप्रकाश बाबू कई महीने तक स्वय रहे और जन-जन को ग्राम स्वराज्य का मत्र दिया। अब भी वहां काम हो रहा है।

विनोबा ने १९७१ में क्षेत्र-सन्यास की घोषणा की। यानी ब्रह्म विद्या मन्दिर आश्रम के बाहर नहीं जायेंगे और वहीं से मार्गदर्शन करेंगे। २५ दिसम्बर १९७४ को उन्होंने एक साल के लिए मौन धारण कर लिया।

आज अपने देश में समाजवाद का बोलबाला है। इसी ढग के साम्यवाद के काफी निकट यह बनाया जाता है। वैसे तो समाजवाद के मत्र का उच्चारण पंडित नेहरू ने १९३६ में लखनऊ कांग्रेस में अध्यक्षपद से दिये अपने भाषण में किया था। स्वतत्रता के बाद सन् १९५५ में अवाडी कांग्रेस में समाजवादी ढाचे के समाज का प्रस्ताव कांग्रेस ने मजूर किया और फिर उसे भारत सरकार ने भी अपना लिया। उसकी दिशा में कई कदम श्रीमती इन्दिरा गांधी ने भी उठाये—जैसे बैंकों का राष्ट्रीयकरण, नरेशों के प्रिवी पर्स व विशेषाधिकार की समाप्ति और विधान-सशोधन। इतना सब होने पर भी देश में पूंजीवाद पनप रहा है, केवल उद्योगों नहीं बल्कि खेती में भी। जमीन के दाम ऊंचे चढ़ते जा रहे हैं जिसके कारण भूमिहीनता और विकराल रूप ले रही है, महगाई बढ रही है जिसका सबसे घातक असर गरीब दीन-हीन जनता पर पड़ता है, नौकरशाही मजबूत होती जा रही है जिसकी वजह से दमन-चक्र का चलना जारी है, पारस्परिक सम्बन्धों में तनाव व कलह की वृद्धि हो रही है जिससे जन-जीवन अस्त-व्यस्त होता जा रहा है और शब्दशक्ति भी कुठित हो रही है जिससे हिंसा शक्ति दिन-दिन मजबूत पड़ रही है।

यह सब केवल दुःखदायी नहीं, चुनौतीपूर्ण भी है और उज्ज्वल कर्तव्य के लिए आवाहन है। कहने की जरूरत नहीं कि अगर हमारा पराक्रम साम्ययोग की दिशा में होगा तभी वह सार्थक होगा। हमको इस भ्रम में नहीं रहना चाहिए कि साम्यवाद और साम्ययोग के बीच का कोई रास्ता हम पकड लेंगे। सवाल विचार का है। दुनिया के मसलों को हल करने के लिए कोई एक विश्व व्यापक विचारधारा न इगलैंड की लोकशाही में है, न अमरीका के राज्यतत्र में। उनके पास बल कितना भी हो विचार का तत्व नहीं है। उसी का अभाव भारत की आधुनिक व्यवस्था और नियोजन में है। विचार-बल या तो साम्यवाद में है या साम्ययोग में। इन दोनों के मिश्रण की गुजायश नहीं है। हां, आगे चलकर साम्यवाद की नदी साम्ययोग के सागर में विलीन हो जायेगी।

लेकिन यह तभी होगा जब साम्ययोगी समाज की स्थापना शक्तिपूर्वक की जाये और उसके प्रतीक, ग्रामस्वराज्य आन्दोलन को सफल बनाया जाये। विनोबा का इसके लिए खुला निमत्रण है—

सत्तर साल के ऊपर मेरी उमर हो चुकी है। गृहस्थी में मैं कभी नहीं पड़ा। न शादी की, न बालबच्चे हैं मेरे पीछे रोनेवाले। न कोई मेरी अपनी जायदाद या मिलकियत है। फिर मुझे किसी बात की परवाह क्यों होनी चाहिए? लेकिन मैं आपको समझाना चाहता हूं कि भारत खतरे में है। आपको सावधान करना चाहता हूं, डराना नहीं। चीन और पाकिस्तान के हमले का डर नहीं है, डर है अन्दर के हमले का। बाहर का तो निमित्त हो जाता है। बाहर के हमले का सामना करना आसान होता है, लेकिन अन्दर के हमले का सामना करना उतना आसान नहीं। अगर अन्दर ही अन्दर देश में असन्तोष बना रहता है तो वह बहुत खतरनाक साबित होगा। इसलिए अब नींद से जाग जाइये और तीव्रता के साथ इस काम में लग जाइये। ग्रामदान और ग्रामस्वराज्य में देरी करना अत्यन्त घातक सिद्ध होगा। O

भूदान : एक विदेशी की नजर में

—हैलम टेनीसन

एक निचले से मकान के बाहर तीन आदमी बातचीत कर रहे थे। उनमें से सबसे लम्बे कद के रामचन्द्र रेड्डी थे। उन्होंने ही विनोबा को भूमि का पहले-पहल दान किया था और भारत में भूदान आन्दोलन की शुरूआत की थी। रामचन्द्र ने अपने मित्र के कंधे से अपने हाथ हटाये, भावविभोर होकर आंखें मूंदी और बोले, "मैं तो हमेशा बागी रहा हूं। मेरा घराना ही बागियों का है।"

"उस समय मैं अपना रोज का काम करते हुए सोच रहा था कि मुझे क्या करना चाहिए, तभी विनोबा आये।"

"उनके पीछे मनुष्यों का बड़ा लम्बा सैलाब था। सभी मौन थे—यहाँ तक कि जो बच्चे अपनी माताओं की गोद में थे उनकी आँखें भी आशा से चमक रही थीं। लेकिन आशा किस चीज की, कोई नहीं जान रहा था। मानव-मेदिनी की संख्या १०, १५ या २० हजार हो सकती है। बहुत बड़ा समूह था।"

"विनोबा वहाँ बैठे हैं—मंच के नीचे। प्रार्थना-सभा के पहले का समय है और लोगों का समूह वृक्षों की छाया में बैठा हुआ उनकी ओर देख रहा है। विनोबा बताते हैं कि दोपहर के बाद हरिजनों के चालीस परिवार उन्हें यह बताने आये कि वे लोग कम्युनिस्टों के साथ क्यों हैं। जब कम्युनिस्ट ही ऐसे एक-मात्र लोग हों जो उन्हें जमीन देने को तैयार हैं तो फिर वे इसके सिवा और कर ही क्या सकते हैं? इन लोगों की मदद के लिए विनोबा क्या सरकार से नहीं कह सकते थे? और विनोबा का उत्तर है कि, "जब तक हम अपनी मदद आप नहीं करते, सरकारी मदद का मतलब ही क्या निकलेगा?" इसके बावजूद वे जानते हैं कि यह उत्तर काफी नहीं है। उन्हें शर्म महसूस हो रही है और वे कह रहे हैं कि इसके सिवा कहने के लिए उनके पास और कुछ नहीं है। इसलिए वे अब यह समस्या, इन चालीस गरीब परिवारों की समस्या गाँववालों के सामने रखेंगे और देखेंगे कि गाँववाले क्या कर सकते हैं।"

रामचन्द्र उनके पास ही बैठे थे। वे रोमांच से कांपने लगे। वे खड़े हो गये लेकिन यह नहीं सोच पाये कि उन्हें कहना क्या है। सब तरफ सन्नाटा खिंच गया। अब उन्हें याद नहीं है कि वे इस हालत में कितनी देर खड़े रहे, शायद एक सेकंड से ज्यादा नहीं। उन्हें याद है कि सामने की ओर भीड़ थी—शाम के डूबते सूरज की किरणों से पिघले पीतल की तरह पीली, और वे कह रहे थे, "मैं तैयार हूं देने के लिए।"

"लेकिन कितनी?" विनोबा ने शान्ति से पूछा। "उतनी, जितनी आपको चाहिए।"

"मैं इस पर भरोसा नहीं करता," विनोबा ने इस प्रकार कहा जैसे अपने आपसे बातें कर रहे हों। तब रामचन्द्र ने एक मैला सा कागज का टुकड़ा उठाया और एक सौ एकड़ लिखकर उस पर दस्तखत कर दिये। विनोबा ने कागज उनके हाथ से करीब-करीब छीन लिया और कूदकर उस तख्त पर बैठ गये जिस पर उन्हें बैठना था। उनके आनन पर हमेशा विराजनेवाली विख्यात शान्ति गायब हो चुकी थी। उनका हाथ हिल रहा था, कपोल फूल और पिचक रहे थे और सिर पर सफेद थान ओढ़े हुए वे अलौकिक लग रहे थे, एक ऐसे बच्चे के समान जिसे प्रेत जैसा बाना पहिना दिया गया हो। पूरा माहौल खुशी का बन गया था। इसके पहले कि लोग समझ सकें कि हुआ क्या है, लोग प्रसन्नता से झूमने लगे। विनोबा ने चालीस हरिजन परिवारों से यह तय कर लेने को कहा कि वे जमीन अपने बीच किस प्रकार बांटना चाहेंगे और वे खेती अलग-अलग या सामूहिक रूप से करना चाहेंगे।

हरिजनों ने उन्हें बाद में बताया कि वे जमीन पर खेती सामूहिक रूप से करेंगे। उनके बीच के नीची जाति के समूह जैसे धोबी, मोची जुलाहे आदि आठ-आठ परिवारों के एक समूह के रूप में एक साथ रह ही रहे थे। प्रत्येक समूह के मकान की दीवाल एक थी और सामने का बरामदा आम था। अब इस तरीके को खेती के मामले में भी लागू कर देने भर की जरूरत थी जिसके अनुसार प्रत्येक समूह अपने-अपने हिस्से के लिए समूचे हरिजन समुदाय के प्रति जिम्मेदार रहे। उन लोगों ने यह भी कहा कि शुरू में तो उन्हें ८० एकड़ याने हर परिवार पीछे २ एकड़ से ज्यादा की जरूरत भी नहीं है। बाकी के २० एकड़ का उपयोग और कहीं किया जा सकता है।

"भगवान की कृपा है कि मैं हर आदमी के हृदय में आ सकता हूं। यदि मैं अमीर गरीब दोनों के ही काम आ सकूं तो मुझे खुशी होगी। गरीबों को उनके अधिकार दिलाने के लिए मैं कोशिश करता रहा। अमीरों का नैतिक विकास मेरा ध्येय रहा। अगर एक की सांसारिक और दूसरे की आध्यात्मिक तरक्की होती है तो नुकसान किसका है? इसके सिवा जमीन है क्या? ये कैसे मुमकिन है कि कोई भी अपने आपको उसका मालिक मान ले? हवा और पानी के समान ही जमीन भी भगवान की है। उसको अपनी बताना या उस पर कोई दावा करना तो भगवान की इच्छा के खिलाफ जाना है। और उसकी इच्छा के खिलाफ जाकर कौन सुखी रह सकता है?"

उन्होंने भूमि के मालिकों से कहा "अगर आपके पाँच पुत्र हैं तो आप अपनी सम्पत्ति उनके बीच बराबर-बराबर बांटेंगे। मुझे अपना छठवां पुत्र मान लें और दरिद्रनारायण के लिए अपनी जमीन का एक हिस्सा दे दें। इन गरीबों में ही भगवान निवास करता है।"

भूदान को भ्रमवश किसी प्रकार का प्रेरित उपकार समझा जाना विनोबा को सख्त नापसन्द है। उनके लिये तो यह आन्दोलन या तो समाज की सम्पूर्ण क्रान्ति, प्रेम के माध्यम से क्रान्ति का पहला कदम है या यह कुछ भी नहीं है। ऐसी कोई प्रार्थना सभा मुश्किल से होती होगी जिसमें वे इस बात को साफ न करते हों। उनका कहना है कि "हमारा लक्ष्य दयालुता के काम करना भर नहीं वरन दयालुता के साम्राज्य की स्थापना करना है।"

इस दयालुता के साम्राज्य की विनोबा की धारणा क्या है? वह एक ऐसे राज्य के रूप में दीख पड़ती है जिसमें नौकरशाही नहीं वरन किसान बेताज का बादशाह है। "जमीन

और उसकी पूर्णता भगवान की है' और यद्यपि किसान के पास व्यक्तिगत रूप से जोतने को जमीन हो सकती है किन्तु उसका असली मालिक तो गांव ही होता है और वही यह तय कर सकता है कि किसको कितने एकड़ रखा जाए जाये। विनोबा चाहते हैं कि प्रत्येक गांव भोजन और कपड़े के मामले में जहां तक मुमकिन हो आत्मनिर्भर हो जाये और इन प्राथमिक जरूरतों की चीजें तब तक बाहर न भेजी जायें जब तक कि उसकी स्वयं की जरूरतें पूरी न हो जायें। वे नगद फसलें उपजाने का विरोध करते हैं। सिर्फ इसलिए नहीं कि अमरीकी देश तेलों और अंग्रेजी साबुनों के लिए नारियल और दूरदराज के कारखानों में बननेवाले बोरों, चटाइयों और रस्सों के लिए जूट उपजाने से किसान को उस भारी भरकम मुनाफे में से नाममात्र को कुछ मिल पाता है जो उद्योगपति कमाता है (इसको तो किसी न किसी प्रकार की क्रान्ति से बदला जा सकता है)। वे मानते हैं कि आमदनी के प्रमुख जरिये के रूप में नगद फसल पर निर्भर रहने से लालच बढ़ता है, किसान की सामुदायिक भावना नष्ट हो जाती है और बदले में किसी प्रकार का सामाजिक मूल्य नहीं मिलता। विनोबा के अनुसार "पैसा झूठ बोलता है और किसी के पास ठहरता नहीं।" वे चाहते हैं कि उन कस्बों में से कम से कम कुछ तो ढीले हो जायें जिनसे पैसे ने मनुष्य की आत्मा को बांध रखा है। "जिन्दगी की किताब में पैसे की हैसियत एक परिशिष्ट से ज्यादा नहीं होना चाहिए लेकिन आज तो हर अध्याय की कथा वही एक बन गया है।"

मुनाफा नहीं, शोषण नहीं, जरूरतों और सम्पत्ति की असीमित वृद्धि नहीं, बस 'मनुष्य की सेवा'। सुनने में बड़ा आसान लगता है, बहुत मामूली बात, लेकिन व्यवहार में इसका मतलब क्या है? संगठन के सम्बन्ध में इसका अर्थ है कि छोटे-छोटे कारखाने गांवों के समूहों के द्वारा चलाये जायें और कृषि के औजार, घरेलू सामान तथा मकान बनाने के सामान जैसी चीजों की स्थानीय जरूरतें पूरा करें। इसका मतलब है कि बिजली, खनिज, यातायात, संचार, जैसे बड़े पैमाने पर उत्पादन या अधिक केन्द्रीकरण के उद्योग देश के आराम और सुविधा के लिए जितने कम से कम में चल सकें उतने कम हों। इन उद्योगों के साथ सहकारी फार्म जुड़े रहें कि जिससे कामगारों को अपने काम के दिन में से आधे समय तो स्वास्थ्यवर्धक और खुली हवा का काम मिल सके। O

देवनागरी—सामान्य लिपि के रूप में

—श्रीमन्नारायण

भारत भर की भाषाओं की एक सामान्य लिपि स्वीकार कराने के पहले के प्रयत्नों में और अब पूज्य विनोबाजी की प्रेरणा से किये जा रहे प्रयत्न में यह अन्तर है कि विनोबाजी देवनागरी लिपि को एक अतिरिक्त लिपि, जोड़लिपि के रूप में प्रसार करने की बात करते हैं जबकि पहले के प्रयत्न वर्तमान लिपियों के स्थान पर नयी लिपि स्वीकृत कराने के रहे। इसलिए हमारे इस प्रयास में गलतफहमी के लिए स्थान नहीं है कि हम देवनागरी लिपि को किसी भी भाषा पर लादना चाहते हैं।

कुछ लोग सहलिपि के रूप में भी रोमन को पसन्द करते हैं, परन्तु रोमन से ज्यादा आसान और सहज तो नागरी लिपि है। नागरी में तथा वर्तमान लिपियों में काफी समानता है और बहुत आसानी से नागरी सीखी जा सकती है। नागरी लिपि ध्वनि-अनुसारी होने के कारण अन्य भाषाओं के भी उच्चारण के लिए अधिक अनुकूल हो सकती है। जो भी आवश्यक सुधार वर्तमान लिपि में करना होगा, वह अन्यत्र है, पांच-छह अक्षरों और मात्राओं के जुड़ने से नागरी सर्वोपयोगी हो सकती है।

भारतीय भाषाएँ प्रायः संस्कृतप्रचुर हैं, इसलिए अल्प प्रयास से एक दूसरे की भाषाएँ समझी जा सकती हैं। आज लिपि भिन्न होने के कारण उन भाषाओं के उत्कृष्ट साहित्य का ज्ञान पड़ोसी राज्य के लोगों को भी नहीं है। असम के सुप्रसिद्ध संत शंकरदेव का प्रवेश असम के घर-घर में है, असम से बाहर उनका नाम भी किसी को मालूम नहीं। विनोबाजी ने नामघोषा का सार नागरी में प्रकाशित कराया तब सभी उसे देख सके, समझ सके और उसका काफी अच्छा स्वागत हुआ।

अक्सर नागरीलिपि की बात को हिन्दी के प्रचार के साथ जोड़ दिया जाता है। उसे हिन्दी लिपि कहनेवाले भी हैं। लेकिन यह गलत धारणा है। हिन्दी के समान संस्कृत, मराठी, नेपाली, अर्धमागधी आदि भाषाएँ देवनागरी का ही उपयोग करती हैं, इसलिए नागरी को हिन्दी से अलग करके देखना चाहिए। देश की जोड़ भाषा के रूप में हिन्दी सीखना जरूरी हो सकता है, परन्तु हमारा आज का यह प्रयास अपनी-अपनी भाषा के लिए अपनी-अपनी वर्तमान लिपि के साथ एक सहलिपि के रूप में देवनागरी को अपनाने का ही है ताकि अन्य भाषाई लोग आसानी से उन भाषाओं का साहित्य पढ़ सकें।

विनोबाजी केवल भारत के लिए नहीं, दक्षिण-पूर्वी राष्ट्रों की भाषाओं के लिए भी देवनागरी का सुझाव देते हैं। उन भाषाओं की अधिकांश वर्णमाला, उनकी बारहखड़ी और वाक्य—रचना की शैली भारतीय भाषाओं के समान है, इसलिए देवनागरी का

उपयोग उनके लिए विशेष अनुकूल हो सकता है। खासकर चीनी, जापानी, कोरियाई आदि की चित्रलिपियों के स्थान पर नागरी लिपि एक वरदान ही सिद्ध हो सकती है। चित्रलिपि सीखने के लिए लगभग २५०० संकेत सीखने होते हैं जबकि नागरी में केवल ५०-५५ अक्षर ही सीखने से काम चल जाता है। विनोबाजी ने हिसाब लगाकर बताया है कि चित्रलिपि में लिखने पर जितना स्थान घिरता है उससे तिहाई स्थान में ही नागरी में लिखा जा सकता है। इस प्रकार कागज, टाइप, समय, खर्च आदि अनेक दृष्टियों से नागरी लिपि का उपयोग लाभदायी हो सकता है।

देवनागरी के स्वीकार का, विनोबाजी का यह सुझाव सांस्कृतिक और भावात्मक एकता का और स्नेहमूलक भाईचारे का सुझाव है। बाहर के देशों को सुझाव देने से पहले हमें अपने देश में उस दिशा में प्रयोग करना चाहिए। दक्षिणवालों से पहले कुछ विरोध और कुछ शंका दिखाई दी। पर जब उन्हें समझाया गया कि आपको अपनी लिपि छोड़ने की बात नहीं है, नागरी में भी अपना साहित्य छापने की बात है, तो उनका विरोध दूर हो गया। उत्तर में लिपि की उतनी कठिनाई नहीं होती जितनी दक्षिण में जाने पर उत्तरवालों को होती है। यदि वहां के साइनबोर्ड, सड़क के नाम, दुकानों के नाम, कार्यालयों के नाम—सब नागरी में भी लिखे जायें तो सारी दिक्कत दूर हो जायेगी। यही प्रयास इधर पूर्वी भारत के प्रदेशों में भी करना है।

अन्तिम बात, जो लोग रोमन लिपि को इस रूप में उपयोगी मानते हैं, वे अपना प्रयास अवश्य करें, हमें उनका विरोध नहीं करना है, हमें किसी का भी विरोध नहीं करना है। लोग स्वयं देख लेंगे और जिस लिपि को सरल पायेंगे, अनुकूल देखेंगे उसे अपनायेंगे और वह चल पड़ेगी। हमें शान्ति से, धीरज के साथ, अविरोधवृत्ति से अपना काम करते जाना है।

वर्धा में विश्व-हिन्दी विद्यापीठ स्थापित हो रहा है और उसमें लिपि सम्बन्धी काम भी जहां रहेगा अन्यान्य भाषाओं का उत्कृष्ट साहित्य नागरी लिपि में भी उपलब्ध कराने का प्रयास किया जायेगा।

पूर्वी क्षेत्रों में

बोडो आदि भाषाओं की लिपि के प्रश्न पर झगड़े हुए हैं। पर हम ऐसा प्रयत्न करें कि उनकी भाषा की छोटी-छोटी पुस्तकें नागरी लिपि में छापकर उनके बीच प्रसार करें। उन लोगों की निगाह से नागरी की पुस्तकें गुजरें और पसन्द आयेंगी तो वे स्वयं उसे चुन लेंगे। हमें किसी राजनीतिक झगड़े में नहीं पड़ना है। उससे दूर रहना है।

लखनऊ के मुनव्वाली ट्रस्ट के श्री नन्दकुमार अवस्थीजी ने पहले-पहल कुरान शरीफ को नागरी में छापा तो उन्हें झिझक थी कि कहीं विरोध न हो, परन्तु देखते-देखते उस संस्करण की सारी प्रतियां मुसलमान लोगों ने ही खुशी-खुशी खरीद लीं। यह देखकर स्वयं उन्हें भी आश्चर्य हुआ। इस प्रकार किसी की भावना को ठेस न पहुँचाते हुए अविरोध भाव से काम करते जायें तो धीरे-धीरे काम में तेजी आ सकती है। O

तीन सीढ़ियां

—देवेन्द्र कुमार

मानव मुक्ति की दिशा में सतत् प्रयासशील है। उसका यह प्रयास कभी एक दिशा में सफल होता दिखायी देता है तो दूसरी ओर से उतनी ही कठिनाइयां खड़ी कर देता है। विज्ञान और मनोविज्ञान दोनों इस तथ्य की की पुष्टि करते हैं। हमारे देश में गांधीजी के नेतृत्व में जो मुक्ति संग्राम चला उसके पूर्व किसी देश को अपने आपको बलवान राष्ट्र की गुलामी से मुक्ति का ऐसा रास्ता नहीं मिला था कि बाहरी बल की मदद के बिना वह आजाद हुआ हो। भारत की आजादी साम्राज्यवाद समाप्त करने का ऐसा रास्ता दिखा गयी जिसमें अहिंसा से साम्राज्यवाद समाप्त किया गया। इसमें जागतिक परिस्थिति सहायक हुई परन्तु इस परिस्थिति के परिवर्तन ने भारत की आजादी के आंदोलन में मदद भी की। गांधीजी का जीवन दुनिया में मनुष्य के लिए बहुत से नये आयाम खोल गया, परन्तु आम आदमी उन्हें याद रखता है एक मुक्तिदाता के रूप में। मानव को मुक्ति की ओर ले जानेवाली भारत के द्वारा प्रस्तुत यह पहली सीढ़ी थी।

दूसरी सीढ़ी

आजाद हिन्दुस्तान में बाहरी देशों का सीधा राज्य तो नहीं रहा, परन्तु आम आदमी की जिन्दगी का शोषण समाप्त नहीं हुआ। उससे मुक्ति कैसे हो इसकी कोशिश जारी रही आयी। यह परिवर्तन लाने के लिए जो क्रान्तिकारी विचार पश्चिम को सबसे अधिक प्रभावित कर पाया वह है 'कार्ल मार्क्स' का। मनुष्य के शोषण के सम्बन्ध में उसके विचार मन्थन से जो सूत्र निकला वह यह था कि मानव मुक्ति के लिए सम्पत्तिवाद की समाप्ति और राज्यवाद की समाप्ति आवश्यक है। शोषण-मुक्त और शासन मुक्त समाज बने, इसके लिए दुनिया के आदर्शवासियों की निगाहें लगी रहीं। लेकिन इस ओर बढ़ने में भी जो संघर्ष और हिंसा का तरीका अपनाया गया उसका नतीजा निकला यह कि जहां संघर्ष की सहायता से सम्पत्तिवाद समाप्त किया जा सका वहां उतना ही अधिक राज्यवाद बढ़ गया। इस प्रकार एक रोग को दूर करने के लिए दूसरे रोग को बढ़ावा देना पड़ा। रूस और चीन में सम्पत्तिवाद जितना समाप्त है उतना ही दूसरों की अपेक्षा राज्यवाद मजबूत है। यह कल्पना थी कि प्रारम्भ में सम्पत्तिवाद को राज्यवाद के द्वारा क्षीण किया जा सकेगा। परन्तु शोषण-मुक्ति भी शासन-

मुक्ति की ओर बढ़ने में सहायक सिद्ध नहीं हो सकी। शासन की शक्ति इतनी अधिक बलवान हो गयी कि बाद में उसे क्षीण करना कठिन हो गया। अतएव जो पद्धतियां समाजवाद लाने के लिए शासन-शक्ति का अधिकाधिक उपयोग करने की कल्पना रखती हैं वे राज्य-वाद बढ़ाती हैं। व्यापार, व्यवसाय आदि में सरकारीकरण द्वारा व्यक्तिगत सम्पत्तिवाद समाप्त करने के लिए जो प्रयोग होते जा रहे हैं, उनका यही नतीजा होता है।

ऐसे में गांधीजी की मृत्यु के बाद उन्हीं के ट्रस्टीशिप सिद्धान्त को लागू करते हुए विनोबाजी ने एक ऐसा रास्ता निकाला जिसमें सम्पत्तिवाद की समाप्ति राज्यवाद को बढ़ाये बिना की जा सकेगी और वह रास्ता था भूदान, सम्पत्तिदान और ग्रामदान का। पच्चीस वर्ष के इस प्रयोग से एक ऐसी झलक और दिशा मिली है जो सम्पत्तिवाद और राज्यवाद की जकड़न को कम करनेवाली सिद्ध हो सकती है। जिस पद्धति से मनुष्य की व्यक्तिगत सम्पत्ति का आधार भूमि पर से हटाने का रास्ता निकाला गया कि भूमि व्यक्ति की न रहकर समाज की बन जाये और उस पर शासनतंत्र का भी जोर दबाव न रहे, यह एक नया रास्ता था। यह उतना ही महत्व का रास्ता है जितना कि देश की गुलामी समाप्त करने की अहिंसक खोज थी। जैसे पहलेवाले रास्ते का उपयोग और लाभ सारी दुनिया के सामने एक मिसाल और प्रेरणा बन गया उसी तरह सम्पत्तिवाद की समाप्ति का ऐसा तरीका जिसमें राज्यवाद को बढ़ावा न मिले उतना ही महत्वपूर्ण और विश्व को आकर्षित करनेवाला प्रयोग बना। उसका उपयोग और व्यापक प्रयोग अभी अपने देश में भी पूरी तरह होना बाकी है। फिर भी बाहर के सभी देशों ने उसमें गहरी दिलचस्पी बतायी है। जो भूमिदान की रजत-जयंती इस वर्ष हम मना रहे हैं वह इसलिए बहुत महत्व की है क्योंकि उसमें नये जमाने को बनाने में सम्पत्तिवाद की समाप्ति की शासन निरपेक्ष अहिंसक पद्धति सबके सामने आयी है। शोषण मुक्ति का करुणामूलक अभियान हमें यह रास्ता दिखा सका है।

तीसरी सीढ़ी

लेकिन तकनीकी और भौतिक केन्द्रीकरण के बढ़ते हुए दौर में राज्य-शासन की सत्ता का बढ़ना और केन्द्रित होना एक ऐसी प्रक्रिया जिसे विश्व भर में कहीं रोका नहीं जा सका। ऐसे में मनुष्य राज्य शासन पर अधिकाधिक आधारित होता गया और उसकी स्वायत्तता शासन के हाथों समाप्तप्राय होती चली गयी। मनुष्य को इस स्थिति से मुक्ति कैसे मिले यह अभी भी एक प्रश्न-चिन्ह बना हुआ है। शासन-मुक्ति की दिशा में जो भी प्रयोग अभी तक हुए हैं उनमें कोई सफलता न प्रजातांत्रिक देशों में मिल पायी है और न एकतांत्रिक देशों में। बीसवीं सदी का सत्तर का यह दशक इस बात को विशेष रूप से उजागर कर रहा है कि राज्यसत्ता इतनी निरंकुश बनती जा रही है कि अमरीका, जापान आदि देशों में शासकों के हाल में हुए परिवर्तन और सभी देशों में आम आदमियों की मजबूरी इस तथ्य को सिद्ध करते हैं। इसमें से उबरने के लिए एक ही रास्ता नजर आता है और वह यह है कि हमारा जीवन अधिकाधिक स्वावलम्बी लोकशक्ति पर आधारित हो और सत्ता और शासन का उपयोग हमें कम से कम क्षेत्रों में करना पड़े। इसी की कोशिश ग्राम स्वराज्य की जो कल्पना रखी गयी है, शान्ति सेना का जो विचार प्रकट हुआ है और सामाजिक तथा तात्कालिक समस्याओं के लिए अहिंसक हल खोजने की जो कोशिश है, उसमें की गयी है। जैसे साम्राज्यवाद की सीढ़ी की समाप्ति का श्रेय गांधी को है राज्यवाद को बिना बढ़ाये सम्पत्तिवाद को समाप्त करने की दिशा दिखाने का श्रेय आचार्य विनोबा को है, वैसे ही लोकशक्ति के द्वारा राज्य शक्ति को स्थानान्तरित करने की कोशिश में जिनकी तड़पन सबसे अधिक प्रकट हुई है उनका नाम जे० पी० है। इस विचार के लिए जयप्रकाशजी का जीवन समर्पित है और इस तीसरी सीढ़ी को पार करने का रास्ता मालूम करने के लिए वे सतत् प्रयत्नशील हैं। यह बिलकुल स्पष्ट हो गया है कि यह मार्ग हमें आसानी से नहीं मिल पायेगा। इसके लिए काफी प्रयास और प्रयोग करने होंगे। इसमें सभी शक्तियों के सहयोग का रास्ता भी ढूंढ़ना होगा और जहां तहां अहिंसक संघर्ष की भूमिका भी लेनी होगी। इन दोनों ऊपर से विरोधी दीखनेवाली सहयोगात्मक और संघर्षात्मक भूमिकाओं में भी परस्परपूरकता हासिल करनी होगी। आज की परिस्थिति में जो कुछ प्रयोग हो रहे हैं, उनमें कई खतरे और गलतियां झलकती हैं। लेकिन इसमें कोई शंका नहीं है कि यह प्रयास उस तीसरी सीढ़ी पर चढ़ने का है कि शासन की बढ़ी हुई संचित शक्ति को अहिंसक पद्धति द्वारा कैसे कम किया जाये और उत्तरोत्तर समाप्त किया जाये। गांधीजी के सिद्धान्तों को 'सौम्य अराजकवाद' की संज्ञा दी गयी है। यही गूढ़ यक्ष प्रश्न है आज के जमाने का कि राज्यवाद सौम्य उपायों से कैसे समाप्त हो और इसकी सुलझाहट में आज के विश्व मानव की मुक्ति का रास्ता है। बिहार आंदोलन के द्वारा वह रास्ता मिलेगा या नहीं, इसमें शंका की जा सकती है पर इस आंदोलन के पीछे जिस सत्य के प्रयोग की व्यग्रता है उसकी सद्भावना में शंका नहीं होनी चाहिए। सत्य का मार्ग प्रयोगों द्वारा ही हासिल होता है। गांधीजी की आत्मकथा सत्य के प्रयोगों की कहानी है। सत्य किसी बने-बनाये सिद्धान्त के रूप में नहीं बल्कि नित्य नये रूप में प्रकट होता है। इस नित-नूतन चिरंतन सत्य का हमें दर्शन हो इसके लिए प्रयोग एकमात्र मार्ग है। प्रयोग जोखिम के बिना सम्भव नहीं। हां जो भी जोखिम उठायी जाये वह समझ-बूझकर और हिसाब लगाकर हो। इसके लिए अलग-अलग लोग अहिंसा के क्षेत्र में भिन्न भिन्न प्रयोग करेंगे। उसमें सब लोगों को सबकी बात ठीक लगे यह जरूरी नहीं। परन्तु अपने विवेक के अनुसार अपना काम करते हुए दूसरे के प्रति सद्भावना रखना अत्यन्त आवश्यक है। आरोहण की इस मुहिम में जब चढ़ाई कठिन हो जाती है तो आरोहणकर्ता भिन्न-भिन्न मार्ग चोटी पर पहुंचने के लिए ढूंढ़ते हैं। आज जब गांधी का कारवां तीसरी मंजिल की तरफ बढ़ रहा है हमें अपनी पिछली मंजिल के अनुभवों का आधार लेके आगे बढ़ना। इसमें किसी भी कारण से आपसी कटुता निर्माण नहीं होनी देनी चाहिए।

अलग-अलग रास्तों से मंजिल पर पहुंचने की राह हम ढूंढ रहे हैं। पूज्य विनोबा के मौन ने हमें मजबूर किया है कि आरोहणकर्ताओं की टोली में हममें से हरेक चोटी की ओर बढ़ने की अपनी-अपनी राह ढूंढे। जिसके रास्ते से उद्दिष्ट निकट आयेगा, बाकी साथी भी उसी की राह हो लेंगे। O

जीवन मूल्यों की सही दृष्टि

—भवानी प्रसाद मिश्र

विज्ञान और नयी-नयी तकनीकी जानकारी ने हमारे रहन-सहन, वातावरण और पूरी जीवन-पद्धति को देखते ही देखते कहीं से कहीं ले जाकर खड़ा कर दिया है। जीवन में अनेक सुविधाएं दाखिल हो गयी हैं, लेकिन साथ ही आत्मनिर्भरता लगभग समाप्त हो गयी है। समाज-स्वायत्त नहीं रहे, छोटी-छोटी बातों के लिए वे दूर-दूर के देशों पर अवलम्बित हो गये और इस प्रकार जीवन में विकेन्द्रीकरण के एक बहुत बड़े लाभ सन्तोषपूर्वक रहने की जगह हमें केन्द्रीकरण के नुकसान स्वीकार करने पड़े। उसके कारण सामाजिक उलझनें बढ़ गयी हैं और जीवन गांवों के बजाय शहरों में सिमटता जा रहा है।

आप किसी भी बड़े शहर को ले लीजिये, वहां बावजूद सारी वैज्ञानिक और तकनीकी सुविधाओं के एक प्रकार की हाय हाय मची रहती है। विज्ञान ने वचन दिया था कि जीवन सुख और सुविधाओं से भरपूर हो जायेगा। वह वचन एक तरह से झूठा सिद्ध हुआ है। क्योंकि शहरों में रहनेवाले सुख और सुविधाओं को प्राप्त करने के लिए जितने व्यस्त रहते हैं, उतनी व्यस्तता बर्दाश्त करने के बाद सुख और सुविधाओं का कोई अर्थ नहीं बचता। हमें बताया गया था कि बैलगाड़ी, घोड़ागाड़ी, तांगे आदि के बाद जब मोटरगाड़ी निकल आयेगी तो यातायात बहुत सरल हो जायेगा और घण्टों की जगह काम मिनटों में हो जायेगा। किन्तु हम देखते हैं कि कहीं पहुंचने के लिए, पहुंचने की इच्छा रखनेवाले को बस आदि का घण्टों इन्तजार करना पड़ता है। जितनी देर में पुरानी सवारियां उसे उसके गतव्य स्थान तक पहुंचा देती थीं, कभी-कभी तो उससे ज्यादा देर तक यात्री को बस-स्टैण्ड पर खड़ा रहना पड़ता है। आकाश-मार्ग से यात्रा करने की जरूरत ज्यादातर उन लोगों को होती है जो किसी प्रकार का शारीरिक श्रम नहीं करते, बल्कि दूसरों के शारीरिक श्रम का शोषण करते हैं। यह स्पष्ट है कि शोषण-कर्त्ता कम और शोषित होनेवाले संख्या में बहुत ज्यादा हैं इसलिए आकाशमार्ग ने भी ज्यादातर लोगों के कष्ट ही बढ़ाये हैं। गति के हिसाब से भी जितने लोग इस काम में लगे हुए हैं उन सबके श्रम और श्रम-समय का हिसाब लगायें तो यह सिद्ध हो जाता है कि समय आदि की दृष्टि से भी कोई बचत नहीं हुई है। जिस धातु से हवाई-जहाज बनते हैं उस धातु को खोद कर निकालने से लेकर हवाई-जहाज बनाने तक के समय और श्रम का अनुमान लगाइये। इसी प्रकार हवाई-अड्डों के निर्माण और हवाई अड्डों पर काम करनेवाले उन लोगों के श्रम और समय को भी गिनिये, जिन्हें कहीं जाना नहीं है, जानेवालों की चाकरी करते हैं। फिर उस समय को भी इसके साथ जोड़ें जो स्वयं जानेवाले को घर से हवाई-अड्डे और हवाई-अड्डे से दूसरे हवाई अड्डे और फिर वहां से गतव्य स्थान तक जाने में लगता है। इस सिलसिले में आंकड़े निकाले गये हैं। और पुस्तकें लिखकर यह स्पष्ट किया गया है कि यदि पूरे समय और श्रम का हिसाब लगाया जाये तो हवाई-जहाजों की औसत गति, रेलगाड़ी और मोटरगाड़ी को तो छोड़िये, पैदल आने-जाने से भी कम पड़ती है।

इसी प्रकार कहा गया था कि शिक्षा का फैलाव आसानी से होने लगेगा और निरक्षरता नाम की चीज दुनिया से उठ जायेगी। साक्षरता कितनी फैली है, अगर इसका हिसाब न भी लगायें तो कोई हर्ज नहीं है, क्योंकि पुराने लोग सामकर भारत के सयाने 'साक्षर' और 'निरक्षर' में कभी बड़ा भेद नहीं करते थे। विनोबा के शब्दों में साक्षर होना एक बात है और सार्थक होना दूसरी बात। हम देख रहे हैं कि साक्षरता जिस अनुपात में फैली है, निरर्थकता उससे कई गुने अनुपात में फैली है। अपने पढ़े-लिखेपन का ज्ञान और विज्ञान की जानकारी का जो उपयोग तथाकथित सभ्य सस्कृत और प्रगतिशील देश कर रहे हैं, वह मानवता के लिए लज्जा का विषय बन गया है। आपने अगर कुछ ऐसा सीख लिया है जो किसी सभ्य सरकार को पसन्द नहीं है, तो इस बात के उपाय निकाले गये हैं कि सीखा हुआ किस तरह भुलाया जाये। इसके लिए 'ब्रेनवाशिंग' शब्द चला है। निश्चित राजनीतिक विचारवाले देश अपने नागरिकों को सोचने ही नहीं देना चाहते। एक ढर्रे में ढालकर उनका उपयोग भर करना चाहते हैं। जो ढर्रे से अलग सोचता है उसे प्रतिक्रियावादी, फासिस्टवादी आदि कहा जाता है और उसके लिए 'ब्रेनवाशिंग' जैसे अनेक भयानक तरीकों का इस्तेमाल किया जाता है।

व्यक्ति और व्यक्ति की दूरी बढ़ती चली जा रही है। लाखों की तादाद में एक साथ रहने के बाद भी हमारा वास्तविक संवाद बिलकुल शून्य ही होता है। हम सब मशीन के पुर्जों की तरह काम करते रहते हैं, यह भी नहीं जानते कि हमें कौन चला रहा है और उसमें आखिरकार क्या चीज तैयार होकर निकलनेवाली है। इन सब बातों पर थोड़ा भी विचार करें तो भविष्य अन्धकारमय नजर आने लगता है। विज्ञान के बढ़ते हुए चरण हर बार किसी न किसी बड़े मूल्य का मरण साथ लाते हैं। लोगों में असंतोष, कुण्ठा और जीवन के प्रति उपेक्षा की भावना घर कर जाती है। विज्ञान और तकनीक ने जो झूठी सम्पन्नता हमारे पांव पर लाकर रख दी है, उसके कारण हम सब उन जिद्दी और हठी बच्चों की तरह बरतने लगे हैं जो एक क्षण में इस चीज की मांग करते हैं और उसे पाते ही उसे फेंककर दूसरे क्षण में दूसरी चीज की मांग करने लगते हैं। परिस्थिति जिस तरह की बनती जा रही है, आम आदमी उसकी

भयावहता को उतना नहीं समझ पा रहा है जितना स्वयं विज्ञान और तकनीक के माहिर समझ रहे हैं। वे देख रहे हैं कि आदमी को भौतिक रूप से जितने ऊपर ले जाने की कोशिशें हो रही हैं वह नैतिक आत्मिक और दार्शनिक दृष्टि से उतना ही नीचे गिरता चला जा रहा है। वे खुद इस बात को अच्छी तरह नहीं समझ पा रहे हैं कि भौतिक समृद्धि के लिए आयोजित इस अन्धी दौड़ में आदमी कहां पहुंचेगा। इन सब प्रश्नों पर विचार करना उन लोगों के लिए बहुत महत्वपूर्ण हो गया है जो सोचते हैं या जिनकी मान्यता के आगे कोई सपना है।

इन प्रश्नों पर गम्भीरता से सोचनेवालों को समाधान-कारक उत्तर वर्तमान परिस्थिति में से नहीं मिलते। इनके उत्तर उन्हें आदमी की प्रगति के इतिहास में से मिलते हैं, अर्थात भूतकाल में से मिलते हैं। विज्ञान और तकनीक ने जो कुछ दिया है उसका उपयोग अवश्य किया जाना चाहिए किन्तु सारे विज्ञान और सारी तकनीक का उपयोग इस ढंग से किया जाना चाहिए कि वह हमारे जीवन को उलट-पलट न कर दे। वह क्रमशः और जब जितना आवश्यक है, उससे अधिक सुधार न करे। विज्ञान और तकनीक को हमने हर जगह इतना ज्यादा समाविष्ट कर रखा है कि वह मनुष्य के समूचे स्वभाव को बदल कर उसे मशीन की तरह जड़ बनाने की अवस्था में पहुंच गया है। यह एक सामान्य सिद्धान्त है कि हम जिन औजारों से काम लेते हैं वे औजार यदि हमारे हाथ में नहीं खेलते, हम उनके हाथों में खेलने लगते हैं तो फिर हमारी मनुष्यता का ह्रास होता चला जाता है, हम जड़ता की तरफ बढ़ते जाते हैं। मनुष्य अपनी संवेदनशीलता खो देता है। संवेदनशीलता खोने के बाद सहानुभूति, भाईचारा, परस्पर प्रेम आदि गुण जो उसे आदमी बनाते हैं विलीन हो जाते हैं। इसलिए हमें जोर जीवन-स्तर पर उतना नहीं देना चाहिए जितना जीवन मूल्यों पर देना चाहिए। हमने अधिक वस्तुओं के उपयोग की क्षमता को ऊंचे-जीवन स्तर का पर्याय मान लिया है। किन्तु याद रखना चाहिए कि हम जैसे-जैसे वस्तु बाहुल्य की तरफ बढ़ते हैं, हमारे रहन सहन में ऐसी चीजें अनिवार्य हो जाती हैं जो हमारे लिए वास्तव में किसी भी तरह से जरूरी नहीं हैं। हम बिना इस बात का विचार किये कि विकास की दिशा क्या होनी चाहिए अधिक से अधिक आराम से रहने का प्रयत्न करने लगते हैं और अधिक आराम से रहने के प्रयत्न में अधिक चीजों का उत्पादन हमारा ध्येय हो जाता है। फाजिल चीजों के उत्पादन में सुख का आभास भर मिलता है, सुख नहीं मिलता।

आज की दुनिया में इस बात की जरूरत है कि सादगी और सुन्दरता के साथ रहने की सम्भावना को हम अपने जीवन का लक्ष्य बनायें। हमने जिसे अच्छे जीवन का पर्याय मान लिया है, वह असल में बिना सोचे-समझे सुविधाओं के मोह से उत्पन्न जीवन का नमूना है। हम एक ऐसे जीवन-स्तर तक पहुंचने के प्रयत्न में जुट गये हैं जो ऊपर-ऊपर से समृद्ध दिखाई पड़ता हुआ भी हमें वास्तविक रूप में दीन, दरिद्र और हीन तक बना देता है। इसलिए हमें विकेन्द्रित जीवन को समृद्ध बनाने में आज तक की वैज्ञानिक जानकारी और तकनीक का प्रयोग करके देखना चाहिए। इस प्रकार हम भूतकाल के विकेन्द्रित जीवन पर विज्ञान की प्रगति की एक नयी कलम लगा सकेंगे। यह कलम भौतिक बाहुल्य की न होकर नैतिक मूल्यों की होगी। वह हमें भौतिक और मानसिक दोनों प्रकार के आनन्द दे सकेगी।

कठिनाई यह है कि संसार बहुत से आविष्कार कर चुका है। उसे लग सकता है कि जिन बातों को जानने में हमने इतना श्रम और समय दिया और जिनके बल पर हमने अब तक के असम्भव कामों को सहज बनाया, उन्हें छोड़ने की बात कैसे उठ सकती है। यह बेशक ऐसी सलाह नहीं है जिसे आप दें और दुनिया मान जाये। विज्ञान और तकनीक के खतरे युद्ध और वातावरण के संदूषण के रूप में आज सारे संसार के सामने स्पष्ट हैं। आज के पहले वे इतने स्पष्ट कभी नहीं हुए थे। इसीलिए ऐसी सलाह देने की हिम्मत पड़ती है। गांधी ने यह सलाह लगभग आधी शताब्दी पहले दुनिया को दी थी। किन्तु उस समय किसी ने उस पर कान नहीं दिया। अब प्रगतिशील और वैज्ञानिक संसार प्रगति और विज्ञान की हानियों को रोज रोज न जाने कितने रूपों में सिर उठाते देख रहा है। पश्चिम के वैज्ञानिक और अर्थशास्त्री जहां-तहां सभाएं और सेमिनार करके इस बात की घोषणाएं कर रहे हैं कि हमने बिना सोचे-समझे विज्ञान का उपयोग करके संसार को मृत्यु के किनारे लाकर खड़ा कर दिया है। अब हमें नये ढंग से इस ज्ञान का उपयोग करना है। हमने सौंदर्यहीन विद्रूप और विनाशकारी स्पर्धा का जो बाजार खड़ा कर दिया है उसकी जगह पारस्परिकता, नीति और सौंदर्य की प्रतिष्ठा स्थापित करनी है। जो देश अभी तक विकासशील माने जाते हैं, यह प्रयत्न वहीं से प्रारम्भ होना चाहिए। अगर वे विज्ञान का विकेन्द्रीकृत उपयोग करके अपने जैसे दूसरे देशों के सामने शांतिपूर्ण, सौंदर्यपूर्ण और नीतिपूर्ण किसी समाज का नमूना रख सकें तो यह बहुत सम्भव है कि जिस तरह अविकसित देशों ने अब तक उनके समाज को आदर्श मानकर उसकी नकल की है, वे अपनी विकेन्द्रीकृत जीवन-पद्धति को शर्म का सबब न मानकर उसके गौरव को समझें और नये विज्ञान का उपयोग पुराने जीवन-मूल्यों को समृद्ध बनाने में करें। O

राधोपुर की जनता सरकार

—रघुपति

सहरसा जिले के राधोपुर प्रखंड में जनता सरकार अपना काम किये जा रही है। हम चार साथियों ने (अशोककुमार सिंह, जगदीश शर्मा, अख्तर हुसैन और मैंने राधोपुर के गांवों में घूमकर जनता सरकार के काम को देखा। हम सरकारी पदाधिकारियों, किसान, मजदूरों और छात्र-जनसंघर्ष समितियों के सदस्यों से भी मिले।

राधोपुर प्रखण्ड का इलाका उपेक्षित रहा है। नेपाल की सीमा से सटा होने के कारण वहां का भी कुछ प्रभाव इस पर है। प्रखंड में २७ ग्राम-पंचायतें और एक अधिसूचित क्षेत्र (नोटीफाइड एरिया) है। सभी पंचायतों और अधिसूचित क्षेत्रों में जनसंघर्ष समितियां बन गयी हैं। प्रखंड में ६ उच्च विद्यालय हैं। इन सभी में और १४ ग्राम-पंचायतों में छात्र-संघर्ष समितियां भी बन गयी हैं।

प्रखंड जन-संघर्ष समिति के संयोजक सरयुग मण्डल ने बताया कि जन-संघर्ष समितियों ने जून-जुलाई से ही काम करना शुरू कर दिया था और इनके गठन में पिछड़ों की ज्यादा हिस्सेदारी रही है। धर्मपट्टी ग्राम पंचायत की संघर्ष-समिति की बैठक हम चार साथियों के सामने ही हुई। ग्राम-पंचायत के मुखिया ऊंची जाति के (मैथिल ब्राह्मण) हैं लेकिन ग्राम-पंचायत जन-संघर्ष समिति के १५ सदस्यों में ४ हरिजन, १ मुसलमान, १ ऊँची जाति और बाकी ८ पिछड़ी जाति के हैं।

जनता सरकार ने जिन कामों को अपने हाथ में तत्काल लिया है उनमें मुख्य रूप से न्याय दिलाने का काम है अर्थात् थाना, कोरट, कचहरी आदि का बहिष्कार किया जा रहा है। गांव और पंचायत स्तर की कमेटियां अपने स्तर पर झगड़ों को निपटाने का काम कर रही हैं और प्रखंड स्तर की कमेटी उन मामलों में हस्तक्षेप करती है जो इस प्रखण्ड (राधोपुर) के लोगों द्वारा अन्य प्रखण्डों के लोगों पर जुल्म और ज्यादती से सम्बन्धित होते हैं। गांव और पंचायत स्तर की कमेटियां जिन झगड़ों का निपटारा नहीं कर पातीं, उनका भी फैसला प्रखण्ड समिति करती है। पुलिस के यहां कोई केस चले जाने पर और पुलिस द्वारा दमन व घूस का सहारा लेने पर समिति उसमें हस्तक्षेप करती है और उसका निपटारा करती है। समिति के सदस्य और सर्वोदय ग्राम लोगों के समक्ष दोनों पक्षों की बात सुनते हैं और सबके सामने फैसला करते हैं। अब तक एक भी ऐसा मामला नहीं हुआ है, जिसके दोनों पक्षों ने समितिका फैसला न माना हो।

प्रखण्ड समिति की जनता सरकार अब तक लिखित और मौखिक रूप में १५० मुकदमों का फैसला कर चुकी है और उन पर कार्रवाई भी हो गयी है। एक दिन में जनता सरकार के पास कम से कम एक और ज्यादा से ज्यादा सात मुकदमे फैसले के लिए आये हैं।

अभी रतनपुरा ग्राम में एक बूढ़ी औरत को मोटर साइकिल से टक्कर लगी जिससे वह बाद में मर गयी। मोटर-साईकिलवाला भाग गया। जनता सरकार ने उसे दूसरे दिन पकड़ा और ग्राम जनता के सामने पेश किया। दोनों पक्षों (बुढ़िया के परिवार+मोटर साइकिलवाला) की सहमति से फैसला हुआ, जिसमें मोटर साइकिलवाले को बुढ़िया के बेटे को २१०० रुपये हरजाना देना पड़ा।

गढ़िया ग्राम में जमीन को लेकर दो पक्षों के बीच मार-पीट हुई। थाने में केस दर्ज हो गया लेकिन जनता सरकार ने अमीन को बुलवाया, जमीन की पैमाइश करवायी और फिर झगड़े का फैसला किया। मार-पीट में कई लोगों को बहुत चोट आयी थी। उनकी दवा-दारू और उन्हें अस्पताल पहुंचाने का काम भी किया। दोनों पक्षों ने जनता सरकार का फैसला मान लिया।

झगड़ों का निपटारा करने के अलावा राधोपुर की जनता सरकार और कई काम कर रही है। सूदखोरी रोकने का काम भी किया जा रहा है। गढ़िया के रामचन्द्र शाह छात्र-संघर्ष समिति के लोगों के पास आये, बोले हमें खबर लगी है कि आप लोग इन्साफ करते हैं। सिमराही के रामनारायण चौधरी से मैंने २२५ रुपये कर्ज लिये थे और गहने बन्धक में रखे थे। अब वह मुझसे तीन वर्षों के सिर्फ सूद का ही ८१६ रुपये मांग रहे हैं। मैं उचित सूद देने को तैयार हूं। जनता सरकार ने गहने लौटाने और उचित सूद के साथ रकम लौटाने का फैसला किया।

इलाके के लोग अब थाने नहीं जाना चाहते। कहते हैं, 'वहां घूस भी देनी पड़ती है और इन्साफ भी नहीं मिलता।' इलाके के सभी गरीब न्याय के लिए जनता सरकार का दरवाजा ही खटखटाते हैं। जनता सरकार के सारे फैसलों पर अमल भी होता है।

जनता सरकार द्वारा रात को पहरा देने की व्यवस्था है। गढ़िया में जनता सरकार के 'प्रहरियों' ने चार-पांच डकैतों को देख कर हल्ला किया तो वे सब भाग गये। उनमें से एक की बन्दूक छूट गयी। बन्दूक पुलिस के यहां जमा करायी गयी।

जनता सरकार बीमार लोगों को अस्पताल में भरती करवाने का काम भी कर रही है और जिन्हें अस्पताल भेजने की जरूरत नहीं, उनकी दवा की व्यवस्था करती है। चंदे द्वारा दवाइयां खरीदी जाती हैं।

गल्ले की हर सस्ती दूकान के सामने अनाज का वितरण जनता सरकार की निगरानी में हो रहा है। उसके दो कार्यकर्त्ता वितरण के समय दूकान पर तैनात रहते हैं। राधोपुर के बी डी. ओ श्री पी. एन. झा ने यह कबूल किया कि जनता सरकार के कार्यकर्ताओं की वजह से अनाज के वितरण में गड़बड़ बहुत कम हो गयी है। उन्होंने कहा, "जनता सरकार के माध्यम से चीनी, खाद और तेल के वितरण में बिलकुल ही गड़बड़ी नहीं होती इसलिए हम उसका सहयोग लेते हैं। जनता सरकार द्वारा करबन्दी के ऐलान से हमें कर वसूलने में कड़ा विरोध सहना पड़ रहा है। अब केवल मुखियों और धनी किसानों से ही हम कर वसूल कर पा रहे हैं।"

जनता सरकार ने सारी चीजों के दाम

बांध (तय कर) दिये हैं जिससे दुकानदार मन-मानी कर करने में असमर्थ हैं।

जनता सरकार रचनात्मक काम भी कर रही है। मिसराही से निर्मली तक जानेवाली रोड को उसने श्रमदान द्वारा दोनाराम टोले पर बांधा है। छुआछूत मिटाने के लिए वह सामूहिक भोज का भी आयोजन कर रही है। हाल में मधवापुर के तेजनारायणपासवान के यहां भोज हुआ जिसमें सब लोगों को साथ बिठाकर खिलाया गया। शिक्षा के मामले में भी अपने सीमित दायरे में वह प्रयत्न कर रही है। शिक्षक समय से आयें और सभी बच्चे स्कूल जायें, इसके लिए वह सचेष्ट है। इस काम के लिए ग्राम में कार्यकर्ता तैनात किये गये हैं, जो शिक्षक और बच्चों के साथ 'सख्ती' भी बरत सकते हैं। जनता सरकार के कार्यकर्ता बच्चों को स्कूल भेजने में आवश्यकतानुसार मदद करते हैं। शिक्षक अगर देर से आते हैं तो उन्हें स्कूल जाने नहीं दिया जाता। हाजिरी काट दी जाती है। उस दिन पढ़ाने का काम छात्र संघर्ष के कार्यकर्ता ही करते हैं।

गांव में भूख से मौत न हो, इसके लिए भी 'सरकार' ने कदम उठाये हैं। आश्विन-कार्तिक के समय एक-एक ग्राम पंचायत में दस-दस मन तक अनाज बांटा गया है। यह अनाज कार्यकर्ताओं ने अमीर किसानों से इकट्ठा किया जो फसल कटने पर उन्हें बिना किसी सूद के वापस दे दिया जायेगा।

महावीर प्रसाद भगत और सिधेश्वर पासी ने हमें बताया कि उन्होंने जनता सरकार के माध्यम से ताड़ के नम्बर देने में घूसखोरी रोकने का काम किया है और एक्साइज टैक्स की बन्दी की है।

छोटे पैमाने पर ही सही लेकिन गैर मज-रुआ और सरकारी जमीन पर भूमिहीनों को बसाने का काम भी हुआ है। यह काम तेजी से बढ़ रहा है। राघोपुर प्रखंड में जनता 'जनता सरकार' के साथ है। प्रखंड के २८ मुखिया जनता सरकार के विरोधी हैं लेकिन उनकी कुछ भी चल नहीं पा रही है। प्रखंड जनमत के चलते वे सक्रिय विरोध करने की भी स्थिति में नहीं हैं। जनता ने उनका बहिष्कार कर दिया है। गांव के गरीब आदमी का मन अब यह बन गया है कि वह सारा काम जनता सरकार के माध्यम से ही करेगा और इन्दिरा सरकार का पूर्ण बहिष्कार करेगा। प्रखंड और ग्रामस्तर के कई छात्रों ने घर से विद्रोह कर तिलक-दहेज लेकर शादी करना अस्वीकार कर दिया है।

प्रत्येक रविवार को ग्राम-पंचायत स्तर पर जनता-सरकार अर्थात छात्र-जन-संघर्ष समिति की बैठक होती है। समितियों की सबसे बड़ी कमी यह है कि अभी तक उनमें महिलाएँ नहीं आयी हैं। छात्र इस कमी को बहुत महसूस करते हैं।

राघोपुर प्रखंड की जनता सरकार के आगे के कार्यक्रम क्या होंगे? वह अनुभवों और प्रयोगों के आधार पर आगे बढ़ेगी। O

सर्व सेवा संघ का 'मौन'

सर्व सेवा संघ का अधिवेशन १२, १३ मार्च, १९७५ को पवनार (वर्धा) में सम्पन्न हुआ। देशभर से करीब चार-पाँच सौ लोक-सेवक इस अधिवेशन में उपस्थित थे। पिछले एक-सवा वर्ष में देश में, खासतौर से बिहार में, वर्तमान परिस्थिति के खिलाफ जो जन-आक्रोश प्रगट हुआ है उसमें सर्वोदय कार्य-कर्ताओं, लोकसेवकों का क्या रोल रहे इस संबंध में सर्वोदय जगत में मतभिन्नता रही है। इस प्रश्न पर पिछले एक वर्ष में पूज्य विनोबाजी के साथ भी एक से अधिक बार चर्चाएं हुईं। उनका संकलन सर्व सेवा संघ की ओर से 'जन-आंदोलन और सर्व सेवा संघ' नाम से प्रकाशित कर दिया गया है। मतभेद के क्या मुद्दे थे, और उन पर क्या-क्या विभिन्न रायें थीं, यह तफसील से उस पुस्तक में संग्रहीत है।

जुलाई, १९७४ में तथा फिर मार्च, १९७५ के हाल के संघ अधिवेशन में भी इन प्रश्नों की काफी चर्चा हुई, लेकिन हम सब लोग किसी एक राय पर नहीं पहुंच सके। अन्य संस्थाओं में जिस प्रकार बहुमत से निर्णय होते हैं उस परिपाटी को हमने सर्व सेवा संघ में अमान्य किया है और सर्वसम्मति या सर्वानुमति से ही हम निर्णय करते हैं। किसी प्रश्न पर कितने लोग पक्ष में हैं या कितने विपक्ष में यह हमारे लिए महत्व की बात नहीं है। किसी बुनियादी मामले में अगर हमारे एक भी साथी का मतभेद हो तो हम निर्णय नहीं लेते। ऐसा सर्व सेवा संघ के इतिहास में पहले भी हो चुका है। बिहार के जन आंदोलन को लेकर हमारे आपस में जो मतभेद थे वे, बावजूद हम सबके और कई सदस्य मित्रों के प्रयत्न के हल नहीं हो सके।

संघ अधिवेशन के दूसरे दिन, अर्थात १३ मार्च को शाम को प्रबंध समिति के अधिकांश सदस्यों ने तथा कुछ अन्य साथियों ने जो आंदोलन के समर्थक रहे हैं सर्व सेवा संघ की सदस्यता से अपना त्यागपत्र संघ अधिवेशन में प्रस्तुत कर दिया। इनमें से अधिकांश व्यक्ति बिहार के आंदोलन में सक्रिय भाग भी लेते रहे हैं। संघ अधिवेशन में उपस्थित व्यक्तियों का प्रबल बहुमत भी आंदोलन में भाग लेने के पक्ष में था। १४ मार्च को सबेरे हमने सारी परिस्थिति की जानकारी पूज्य विनोबाजी के सामने प्रस्तुत की। विनोबाजी ने सलाह दी कि चूंकि संघ में एक राय नहीं है इसलिए संघ को विसर्जित कर दिया जाये। हम लोगों ने पूज्य बाबा से निवेदन किया कि उनके मौन की अवधि में ऐसा निर्णय लेना हममें से कइयों को उचित नहीं लगता, क्योंकि बाबा अगर बोलते होते तो शायद अब भी समाधान का कोई मार्ग सुझाते। इसलिए संघ को विसर्जित करने के बजाय बाबा के मौन की अवधि तक संघ भी 'मौन' रहे, अर्थात संघ के नाम से या संघ की ओर से कोई प्रवृत्ति तब तक न की जाये, यह ज्यादा अच्छा होगा। बाबा के मौन की समाप्ति के बाद फिर उस समय जैसी परि-स्थिति होगी उसके अनुसार तथा बाबा का मार्गदर्शन प्राप्त करके आगे के लिए उचित निर्णय किया जा सकेगा। पूज्य बाबा ने इस बात के लिए सम्मति दी कि संघ का विस-र्जन, उनके मौन की अवधि तक का भी मौन, यह दोनों विकल्प संघ अधिवेशन में रख

दिये जायें और सब लोकसेवकों की जैसी राय हो उसके अनुसार निर्णय किया जाये।

तदनुसार १४ मार्च को संघ अधिवेशन में बाबा से हुई उपर्युक्त बातचीत तफसील से बता दी गयी तथा दोनों विकल्प सदन के सामने रख दिये गये। आमतौर पर लोकसेवकों ने मौन के विकल्प का ही समर्थन किया, लेकिन हमारे जो मित्र आंदोलन में भाग लेने के पक्ष में नहीं रहे हैं उन्हें यह भी मान्य नहीं हुआ। उन लोगों ने सर्व सेवा संघ छोड़ने का अपना सामूहिक निर्णय व्यक्त कर दिया तथा अधिवेशन से उठकर चले गये।

इस प्रकार अधिवेशन में वे ही लोकसेवक रह गये जो आंदोलन में भाग लेना उचित मानते थे। वे अगर चाहते तो इस परिस्थिति में सर्व सेवा संघ को चालू रखने, संघ की ओर से आंदोलन का समर्थन करने और संघ की ओर से उसमें भाग लेने का प्रस्ताव कर सकते थे। लेकिन इस प्रकार की कोई गलतफहमी न हो कि इस सारे विवाद में उनका यही हेतु था कि वे संघ के नाम और उसकी प्रतिष्ठा का उपयोग आंदोलन के काम में करना चाहते थे, इसलिए उपस्थित लोकसेवकों ने नैतिक दृष्टि से यही उचित समझा कि कम-से-कम बाबा के मौन की अवधि समाप्त होने तक संघ के नाम से कोई काम न किया जाये। बाबा के मौन की अवधि तक सर्व सेवा संघ भी 'मौन' रहे, यह प्रस्ताव संघ अधिवेशन में सर्वसम्मति से स्वीकार किया गया।

सर्व सेवा संघ के इस प्रकार 'मौन' हो जाने का जो निर्णय हुआ उसका मतलब यह है कि पूज्य बाबा के मौन की अवधि तक, अर्थात २५ दिसम्बर, १९७५ तक, अब सर्व सेवा संघ के नाम से कोई प्रवृत्ति या अभिव्यक्ति नहीं होगी। पिछले पदाधिकारियों का कार्यकाल तो इस अधिवेशन में ही समाप्त हो गया था, लेकिन मौन की अवधि तक नये पदाधिकारी या प्रबंध समिति आदि कोई नहीं रहेंगे। संघ की चल-अचल संपत्ति की व्यवस्था तथा अन्य आवश्यक औपचारिक या कानूनी काम इस बीच सर्व सेवा संघ का ट्रस्टी मण्डल करता रहेगा। मौन की अवधि की समाप्ति के बाद संघ के मैनेजिंग ट्रस्टी संघ का अधिवेशन बुलायेंगे ताकि आगे क्या करना इसका निर्णय उस समय किया जा सके।

इस निर्णय के अनुसार सर्व सेवा संघ की नीचे लिखी पांचों पत्रिकाओं का प्रकाशन दिसंबर, १९७५ तक के लिए बन्द किया जा रहा है :

भूदान-यज्ञ : सर्वोदय- हिन्दी साप्ताहिक दिल्ली

पीपुल्स एक्शन - अंग्रेजी मासिक, दिल्ली

तरुण-मन - हिन्दी मासिक, वाराणसी

सर्वोदय - अंग्रेजी मासिक, त्रिचूर (केरल)

भूदान तहरीक - उर्दू पाक्षिक, पटना

सर्व सेवा संघ की विभिन्न उप-समितियाँ भी इस अवधि में काम नहीं करेंगी। केवल ऐसे काम जो पहले से स्वायत्त चले आ रहे हैं, चलते रहेंगे। सर्व सेवा संघ प्रकाशन भी मौन की अवधि में नये प्रकाशन नहीं करेगा। जो पुस्तकें छपाई में हैं, या जिन्हें प्रकाशित करने का फैसला पहले से किया जा चुका था, या पहले प्रकाशित जिन पुस्तकों का पुनर्मुद्रण आवश्यक होगा, केवल वे ही प्रकाशित की जायेंगी। बिक्री का काम जारी रहेगा।

चूंकि प्रदेश तथा जिला सर्वोदय मण्डल सर्व सेवा संघ की शाखाएं नहीं हैं, बल्कि उस उस क्षेत्र के लोकसेवकों द्वारा कार्य संचालन के लिए निर्मित इकाइयां हैं, अतः सर्व सेवा संघ का निर्णय अपने यहाँ लागू करना उनके लिए अनिवार्य नहीं होगा। वे अपने-अपने निर्णय में स्वतंत्र हैं।

—सिद्धराज ढड्ढा

ट्रस्टी मंडल की बोधगया बैठक के निर्णय

सर्व सेवा संघ ने पवनार अधिवेशन में पारित एक प्रस्ताव के द्वारा ट्रस्टी-मण्डल को ये अधिकार दिये हैं :

(१) संघ के विधान के अनुसार ट्रस्टी-मण्डल के जिम्मे के काम ट्रस्टी-मण्डल करता रहेगा।

(२) विधान के अनुसार प्रबन्ध-समिति को दिये गये अधिकार 'मौन' की अवधि में ट्रस्टी-मण्डल को रहेंगे। इन अधिकारों का उपयोग केवल सामान्य तथा कानूनी व वैधानिक कामों के लिए किया जायेगा।

(३) मौन की अवधि में संघ के निवर्तमान अध्यक्ष श्री सिद्धराज ढड्ढा और निवर्तमान मंत्री श्री ठाकुरदास बंग अन्तरिम (केयरटेकर) अध्यक्ष तथा मंत्री के नाते कानूनी और अन्य औपचारिक कामों के लिए कार्यरत रहेंगे तथा ट्रस्टी-मण्डल के सदस्य भी रहेंगे।

(४) 'मौन' की अवधि समाप्त हो जाने पर प्रबन्धक-ट्रस्टी संघ का अधिवेशन बुलायेंगे जिसमें संघ अपने आगे के काम के बारे में यथोचित निर्णय लेगा।

ट्रस्टी मण्डल ने २७-२८ मार्च १९७५ को अपनी बोधगया बैठक में ये निर्णय लिये :

प्रकाशन विभाग प्रकाशन विभाग द्वारा इसके आगे कोई भी नया प्रकाशन नहीं किया जायगा। जो किताबें प्रेस में चल रही हैं उन्हींको पूरा किया जायगा। पुरानी किताबें बेचने का प्रयास जारी रहेगा तथा मांग के अनुसार १२ मार्च १९७५ से पहले प्रकाशित हो चुकी पुस्तकों का पुनर्मुद्रण किया जा सकेगा।

संघ के मुखपत्र . १८ मार्च १९७५ को भूदान-ग्रामदान आंदोलन को पचीस वर्ष पूरे हो रहे हैं, इसलिए भूदानयज्ञ की रजत-जयन्ती के उपलक्ष्य में पत्रिकाओं के विशेषांक १८ अप्रैल १९७५ को प्रकाशित करने के बाद पत्रिकाओं का प्रकाशन संघ के मौन की अवधि तक स्थगित रखा जायेगा।

शांति सेना मंडल अ० भा० शांति सेना मंडल न तो सर्व सेवा संघ के नाम पर इसके आगे कोई प्रवृत्ति चलायेगा, न सर्व सेवा संघ की ओर से उसकी प्रवृत्तियों के लिए कोई बजट स्वीकृत किया जायेगा।

अरुणाचल प्रदेश का कार्य शांति-सेना मंडल के तहत चल रहा है, फिर भी उसकी आर्थिक या अन्य किसी प्रकार की जिम्मेवारी सर्व सेवा संघ पर नहीं है। इसलिए अरुणाचल में शांतिकार्य स्वतन्त्र रूप से जारी रह सकता है।

प्रान्तीय शान्ति-सेना समितियाँ स्वायत्त संस्थाएं होने के कारण उनके सम्बन्ध में संघ कोई निर्णय नहीं ले रहा है।

खादी ग्रामोद्योग ग्रामस्वराज्य समिति : संघके अध्यक्षके त्यागपत्र के बाद वैसे भी संघ की सभी उपसमितियाँ स्थगित हो जाती हैं। इसलिए खादी समिति भी सर्व सेवा संघ के नाम पर या उसकी ओर से कोई निर्णय या प्रस्ताव नहीं करेगी।

लेकिन चूंकि देश भर की खादी-संस्थाओं को सरकारी नियमों आदि के कारण समय-समय पर सरकार के साथ जिन कानूनी समस्याओं आदि को लेकर कार्रवाई करनी पड़ती है और जो कानूनी कार्रवाई फिलहाल चल रही है उसको पूरा करने के लिए मैनेजिंग ट्रस्टी श्री वी० रामचद्रन अपने खादी समिति के मंत्रीपद के नाते भी लिखा-पढ़ी कर सकते हैं।

खादी संस्थाओं ने अन्य कई मसलों के लिए एक मध्यवर्ती संस्था की आवश्यकता सदा महसूस करती हैं। चूंकि सर्व सेवा संघ की खादी समिति भी अब मौन रहेगी इसलिए देश की सभी संस्थाओं की ओर से एक मध्यवर्ती स्वतन्त्र खादी समिति बनाने के सुझाव का ट्रस्टी मंडल ने स्वागत किया।

ग्रामदान विकास संघ : यह संघ स्वायत्त होने के कारण और स्वतन्त्र रजिस्टर्ड संस्था होने के कारण मौन के निर्णय से अप्रभावित रहेगा।

श्रमभारती खादीग्राम : खादीग्राम की यह प्रवृत्ति संघ के अन्तर्गत और संघ के नाम पर चल रही है, फिर भी उसकी कोई भी आर्थिक जिम्मेवारी संघ पर नहीं है, न वह संघ के नाम पर कोई अभिव्यक्ति करती है। कृषि कार्य जैसी स्थानिक प्रवृत्तियां वह चलाती है। इसलिए यह कार्य पूर्ववत् चलता रहेगा।

आचार्यकुल : यह समिति भी एक तरह से स्वायत्त ही है। सर्व सेवा संघ वार्षिक अनुदान के अलावा इस समिति के कार्यों में कोई दखल नहीं देता है। इसलिए आचार्यकुल मौन के प्रस्ताव से अप्रभावित रहेगा। वार्षिक अनुदान के सम्बन्ध में ट्रस्टी मंडल अपनी स्थिति देखकर निर्णय करेगा।

ट्रस्टीशिप समिति : यह समिति ट्रस्टीशिप फाउंडेशन के अन्तर्गत स्वतन्त्र रूप से काम कर सकेगी। सर्व सेवा संघ के नाम पर इस समिति की सभी प्रवृत्तियां मौन रहेंगी।

वैतनिक या मानद कार्यकर्ता और सदस्य. सर्व सेवा संघ की प्रवृत्तियां यद्यपि मौन काल में स्थगित की जा रही हैं फिर भी सर्व सेवा संघ के स्थायी कार्यकर्ताओं का वेतन पूर्ववत् जारी रहेगा। अस्थायी कार्यकर्ताओं की जिम्मेवारी संघ नहीं उठायेगा। ट्रस्टी मंडल की यह कोशिश रहेगी कि अन्यान्य रचनात्मक संस्थाओं में संघ के कार्यकर्ताओं की व्यवस्था मौनकाल तक वह करेगा। जिनकी ऐसी अलग व्यवस्था नहीं हो सकेगी उनका वेतन ट्रस्टी मंडल वहन करेगा और उन कार्यकर्ताओं को उचित कार्य में लगायेगा। मुक्त सेवकों के सम्बन्ध में भी यही नीति रहेगी।

उपवासदान सर्व सेवा संघ की प्रवृत्तियां मौनकाल में स्थगित रहनेवाली हैं, इसलिए सर्व सेवा संघ को जो उपवासदान प्राप्त होता है उसके सम्बन्ध में क्या निर्णय किया जाये इसकी कुछ चर्चा पूज्य विनोबाजी के सामने हुई। विनोबाजी ने संघ को आश्वस्त किया है कि उनका संघ के लिए उपवासदान आगे भी जारी रहेगा। विनोबाजी के इस निर्णय के प्रकाश में तय किया गया कि संघ के लिए जिनका उपवासदान प्राप्त होता आया है, उनको इस निर्णय की जानकारी दी जाये तथा उपवासदान के नवीनीकरण के लिए स्मरणपत्र भी भेजे जायें। लेकिन नये उपवासदान प्राप्त करने का कोई अभियान संघ के मार्फत नहीं चलेगा।

मैनेजिंग ट्रस्टी हर तीन माह के बाद बजट बनाकर कार्य करेंगे।

दफ्तर का संपर्क गोपुरी (वर्धा) का संघ का दफ्तर सूक्ष्म रूप में चालू रहेगा। पत्रों के जवाब, कानूनी कार्रवाई, कार्यकर्ताओं के वेतन की व्यवस्था, हिसाब रखना तथा ऑडिट करवाना जैसे कामों तक ही दफ्तर सीमित रहेगा। दफ्तर की ओर से कोई परिपत्र, अभियान या अभिव्यक्ति नहीं होगी। वह सिर्फ संघ के सम्पर्क-केन्द्र तक ही सीमित रहेगा। दफ्तर की पूरी जिम्मेदारी संघ के मैनेजिंग ट्रस्टी वी० रामचन्द्रन की रहेगी तथा उनकी ओर से संघ के ट्रस्टी दत्तोबा दास्ताने स्थानीय देखभाल का काम संभालेंगे।

मौन समाप्ति पर संघ अधिवेशन बुलाना. विनोबाजी का मौन जब तक चल रहा है तब तक संघ का भी मौन चलता रहेगा। विनोबाजी के मौन की समाप्ति पर सर्व सेवा संघ का अधिवेशन बुलाने का कार्य संघ के मैनेजिंग ट्रस्टी वी० रामचन्द्रन करेंगे। ○

इस अंक में

दिल्ली
विकास तथा चुनौतियों का नगर
प्रगति के पथ पर
विगत तीन वर्षों के विकास की झाँकी

उद्योग

नरेला में नई विशाल औद्योगिक बस्ती का निर्माण हो रहा है। एक हजार बेरोजगार इंजीनियरों के लिए १८६ औद्योगिक शेडों का निर्माण।

५ लाख बेरोज़गारों के लिए कारोबार

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत लगभग १६,००० शिक्षित बेरोजगारों को कारोबार देने के लिए ५६ नई योजनाएँ प्रस्तावित और कार्यान्वित की गई है। ग्रामीण बेरोजगारों के लिए सघन कार्यक्रम चालू किये गये हैं। इस वर्ष १० लाख रुपये की लागत से विशेष रोजगार योजनाएं चालू की गई है।

शिक्षा

दिल्ली में शिक्षा को कार्य-अनुभव व विज्ञान सम्पन्न बनाने के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रारम्भ किये गये हैं।

हरिजन कल्याण

हरिजन तथा पिछड़ी जातियों के कल्याण की कई नई योजनाएं चलाई हैं जिन पर चौथी योजना के मूल परिव्यय से दुगुना धन खर्च किया जा रहा है।

चिकित्सा सुविधाएं

सन् १९७३-७४ के दौरान पिछड़े तथा झुग्गी-झोपड़ी क्षेत्रों में १० नये औषधालय खोले गये। इस प्रकार अब तक ५० औषधालय खुल चुके हैं। ५००-५०० बिस्तरों वाले दो अस्पताल निर्माणाधीन हैं।

किसानों को सुविधाएं

छोटे तथा भूमिहीन किसानों को अनुदान तथा सस्ती दर पर कर्ज देने के लिए 'मार्जिनल फार्म एग्रीकल्चरल लेंडलैस लेबरर्स एजेंसी' स्थापित की गई है।

पशु संवर्धन के लिए 'वीर्य बैंक' तथा बहुत दूध देने वाली आस्ट्रेलिया की गायों के फार्म की स्थापना की गई है।

दिल्ली की पांचवी पंचवर्षीय योजना में अधिकाधिक नागरिक सुविधाएं जुटाने, गृह-निर्माण तथा गन्दी बस्तियों की सफाई, बेरोजगारी को समाप्त करने तथा कमजोर वर्गों के कल्याण आदि कार्यक्रमों को प्राथमिकता दी गई है।

दिल्ली को आदर्श राजधानी बनाने में
अपना भरसक योगदान करें;

सूचना एवं प्रचार निदेशालय, दिल्ली प्रशासन, दिल्ली द्वारा प्रकाशित

चूहों, कीड़ों और सीलन से अपने अनाज की रक्षा कीजिये

* चूहों को मारने के लिये खेतों के बिलों में फासफीन का धुआं दीजिये और गोदामों मे एन्टी-कोआगुलैन्ट जहर का प्रयोग कीजिये।
* अनाज हड़पने वाले पक्षियों को भगाइये।
* कीड़ों से बचाने के लिये दीवारों तथा बोरियों की सतह पर मैलाथियान छिड़किये। कीड़े मारने के लिये ई डी बी एम्पूल, धुमारी दवा इस्तेमाल कीजिये।
* सीलन से रक्षा के लिये अनाज को धूप में सुखा कर साफ करके बोरियों में भरिये, तथा
* बोरियों को लकड़ी की चौकियों पर अथवा पोलीथीन की चादरों पर दीवार से हटाकर रखिये।

धातु की बनी नये ढंग की कोठियों में अनाज पूरी तरह सुरक्षित रहेगा
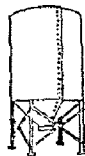
मुफ्त प्रशिक्षण और सलाह के लिये नीचे लिखे किसी पते पर सम्पर्क कीजिये :

पोस्ट बाक्स न 509 पटना
पोस्ट बाक्स नं 10 हापुड़ (उत्तर प्रदेश)
पोस्ट बाक्स न 66 गाजियाबाद (उत्तर प्रदेश)
पोस्ट बैग न 2 भोपाल

पोस्ट बाक्स न. 158 लुधियाना
पोस्ट बाक्स न. 5213 बम्बई
पोस्ट बाक्स नं 22 बापटला (आन्ध्र प्रदेश)
पोस्ट बाक्स न 44 हैदराबाद
पोस्ट बाक्स न 4519 मद्रास

अन्न सुरक्षा अभियान, खाद्य विभाग, कृषि भवन, नई दिल्ली

davp 74/401

बिहार प्रदेश छात्र
संघर्ष समिति
की
बुलेटिन
तरुण क्रांति
वार्षिकांक

दीपक जी नहीं रहे

बड़े सर्द और सख्त होते हैं मौत के हाथ—दीपक जी की अचानक मृत्यु ने इसका जितना भान कराया, उतना कम मौके कराते हैं. २४ मार्च को रात में दिल के दौरे से ४८ वर्षीय दीपक जी की मृत्यु हो गयी. समाजवादी दिमाग के दीपक जी आचार्य नरेंद्रदेव के साप्ताहिकों 'संघर्ष' तथा 'जनता', लोहिया जी के 'जन' और 'मैनकाइंड' से सक्रिय रूप से संबद्ध थे. सम्प्रति वे 'एवरीमैंस' से संबंधित थे, और संबंधित थे बिहार संघर्ष से। ओमप्रकाश दीपक इस आंदोलन के उन सिपाहियों में थे जिन्हें केंद्र में रखकर संघर्ष की रणनीति तय की जाती है. बिहार आंदोलन ने आज एक प्यारे मित्र को खोया है जिसकी अनुपस्थिति ने इसे बहुत-बहुत कमजोर किया है.

इस आंदोलन के निर्दलीय चरित्र को पूरी तरह समझकर चलनेवालों में दीपक जी सबसे आगे थे. पत्रकार और लेखक दीपक जी में विचारों की समझ, कार्यक्रमों की साफ पहचान का विलक्षण गुण था. राजनीतिक दलों से संबद्ध होते हुए भी [illegible] दलों के घेरे से ऊपर रहा और अंतत उस घेरे से बाहर निकल गया, उनमें दीपक जी सर्वाधिक अनाग्रही और साहसी थे. एक सिपाही की तरह आंदोलन के [illegible] ने उन्हें जब बुलाया वे वहां गये और अपना सर्वोत्तम [illegible] की. लेखन की एक सीमा ऐसी थी जिस पर दीपक जी प्रायः अकेले योद्धा थे. वह सीमा आज जितना [illegible] दिखायी देता है उतना ही दुःसाध्य था.

दीपक जी विचारक, लेखक, पत्रकार आदि तो थे ही पर सबसे ऊपर वे एक इंसान थे—कैसा तो, किस [illegible] इंसान! एक मित्र कहते हैं दीपक जी को [illegible] जीवन [illegible] होगा, वे कहते कि इतना पारदर्शी हृदय [illegible] है. दीपक जी की यह सरल [illegible], युवकों के [illegible] और [illegible] थी. युवकों में [illegible] प्यार और इज्जत [illegible] दीपक जी के पास था.

'तरुण क्रांति' ने अपना एक भाई खोया है जिसने इसके जन्म से ही इसमें रुचि ली थी.

बिहार आंदोलन इस मृत्यु से स्तब्ध और शोकाकुल है. दीपक जी का परिवार आज हम सबका परिवार है. इस विपदा को सह सकें यही ईश्वर से प्रार्थना है.

—संपादक

तरुण क्रांति

वार्षिकांक

१९७४-७५

विषयक्रम

जयप्रकाश नारायण से 'तरुण क्रांति' को विशेष बातचीत

(पृष्ठ ३६-३७)

संपादक : कुमार प्रशांत
सहयोगी : अरुण, अशोक कुमार.

आशा का सूरज भारत के क्षितिज पर उगा है...

१८ मार्च '१९७४ से १८ मार्च' १९७५—पूरा एक वर्ष ! इस एक वर्ष मे कितना बदला है बिहार, कितनी बदली है यहा की सरकार और कितने बदले हैं यहा के लोग !

शहीद स्मारक के सामने आज भी हजारों की संख्या में लोग खड़े हैं—बच्चे, बूढ़, नौजवान, महिलाएं . शहीदो की मूर्ति शहादत को की आतुर इस जमात को देखकर जैसे जीवन हो उठी है . सामने वह विधान सभा है जिसका कोई मूल्य बिहार की जनता की नजर में नहीं है . शहीद स्मारक से थोड़ा ही आगे बास-बल्लम से घेराबंदी की गयी है और घेरे के उस पार बंदूकधारी जवान खड़े हैं . घेरे के दोनो तरफ जवान खड़े हैं, पर कितना अन्तर है ! बंदूक पकड़कर खड़े उन जवानों के चेहरो पर न तेज है, न गर्व. उनका चेहरा एक कायर विवशता से भरा हुआ है . इस ओर खड़े निहत्थे जवानों के जोश का जैसे कोई बांध नहीं है . बिहार आंदोलन ने जनता के मन से पुलिस और डंडे का डर मिटा दिया है .

एक वर्ष पहले इसी प्रकार जवानो की भीड़ विधानसभा के सामने आयी थी . तब लाठी, गोली, आग से मुकाबला हुआ था . आज कहीं कोई भय नहीं, आतंक नहीं .

शहीद स्मारक का पूरा घेरा लोगो से खचाखच भरा है . बीच में एक छोटे से मंच से जानकी बहन और महिला चर्खा समिति की बहनें गा रही हैं—'त्याग और प्रेम के पथ पर चलकर मूल न कोई हारा, हिम्मत से पतवार सम्हालो फिर क्या दूर किनारा ओ मांझी, फिर क्या दूर किनारा !'

गीत की यही मूल निष्ठा है जो इस आंदोलन को यहा तक खींचकर लायी है . कई लोग कहते हैं कि लड़कों की हिम्मत टूट रही है, लड़के ऊब रहे हैं, आंदोलन धीमा पड़ रहा है . इन लोगों को जवाब तो आंदोलन ही देगा, पर आज भी बिहार के कितने ही गांव ऐसे हैं जहां कोई बाहर का व्यक्ति नहीं गया है आंदोलन के कार्यक्रम समझाने, लड़ते लोगो का उत्साह बढ़ाने . बहुत सारी जगहें आज भी ऐसी हैं . पुलिस, समाज सबकी मार खाकर एक वर्ष से वे लड़के डटे हैं जिनके जीवन मे आज तक न कोई आंदोलन था, न कोई सामाजिक समस्या थी . यह क्या कोई छोटी उपलब्धि है ? साल भर मे ही इस आंदोलन ने हर जगह कुछ ऐसे मित्र खड़े कर लिये हैं जो कष्ट और बलिदान को कर्त्तव्य समझकर स्वीकार कर रहे हैं

आज के ही प्रदर्शन में देख लीजिये किस जिले का झंडा नहीं है ! पूछकर देख लीजिये, किस प्रखंड का प्रतिनिधित्व नहीं है !

एक चेहरा दूर से पहचाना लगता है . नजदीक जाकर देखता हूं वही मुहम्मद कलीमुद्दीन हैं. कुछ दुबले हो गये हैं . कंधे पर हाथ रख देता हूं, 'कैसे दुबले हुए ?'

गर्मजोशी से हाथ पकड़कर कलीमुद्दीन कहते हैं, 'बीमार था, काफी परेशान रहा . कुछ दिन पहले स्वस्थ हुआ हूं तो आ गया हूं हमलोग तो अब आंदोलन के लिए ही बचे हैं . जब जहां पुकार होगी वहां हाजिर होंगे !'

एक वर्ष के संघर्ष के बाद बोलनेवाला कलीमुद्दीन पूरे बिहार की युवा शक्ति का प्रतिनिधि है . यह कलीमुद्दीन भागलपुर का है, पर ऐसे कलीमुद्दीन हर जगह हैं .

शहीद स्मारक से अचानक गीन खत्म हो चुके हैं और मिथिलेश कुमार सिंह जनता का आरोप पत्र पढ़कर सुना रहे हैं . इस भ्रष्ट मंत्रिमंडल और कायर विधान सभा से जनता कुछ मांगती नहीं है, आरोप लगाती है और फिर सारे लोग बोल पड़ते हैं. वही आवाज, वही नारे—भ्रष्टाचार मिटाना है, नया बिहार बनाना है; नया बिहार तभी बनेगा, जब बिहार का राज बदलेगा . सन् ७५ की हुंकार, गांव-गांव जनता सरकार,

एक और सिकंदर। कांग्रेस अध्यक्ष बरुआ साहब की कार से कुचलकर सिकंदर यादव की मृत्यु पटना हवाई अड्डे पर हो गयी . उन्हीं की गाड़ी से कुचला गया यह कोई पहला 'सिकंदर' नहीं था . [illegible]

संध्या ५ बजे गांधी मैदान में आमसभा. मंच से अशोक 'मोर्ता' और चर्खा समिति की बहनें गीत गाती हैं—सम्पूर्ण क्रांति अब नारा है. फिर तीन छात्र नेता सर्वश्री जगन्नाथ यादव, शाहबुद्दीन तथा रघुनाथ गुप्ता भाषण देते हैं तीनों भिन्न-भिन्न तरह से एक ही बात पर जोर देते हैं—सम्पूर्ण क्रांति की लड़ाई लंबी है और वहां तक हमें जाना ही है त्रिपुरारिशरण जनता का अभियोग पत्र पढ़कर सुनाते हैं और शांति पुरोधा, क्रांति पाठ करता है. आज जयप्रकाश जी का स्वर आत्मावलोकन का है.

शहीदों की चिताओं पर १८ मार्च '७५ को विधान सभा के सामने स्थापित शहीद स्मारक के निकट इकट्ठा जुलूस नीचे जयप्रकाश नारायण दिखायी दे रहे हैं.

आंदोलन की समीक्षा करते हुए जयप्रकाशजी ने कहा—

कई बार मैंने आपको समझाया है कि सेना लड़ाई लड़ती है, भीड़ तो नहीं लड़ती है. भीड़ दस लाख की भी हो और सेना दस हजार की हो तो उसके सामने दस लाख की भीड़ तो नहीं ठहर सकती है क्योंकि वह भीड़ है, संगठित नहीं है. उसमें कौन कमान सब से ऊंचा है कौन नीचा है, किस का हुक्म मानेंगे. मैं देखता हूं, जब निकलता हूं नेता लोग महराते रहते हैं मेरे निवास पर बाबा, यहां सभास्थल पर आना चाहिए, यहां का कुछ प्रबन्ध करना चाहिए. यह सबक सीखिए और कुछ न कीजिएगा अनुशासन आपके अन्दर नहीं होगा, संगठित आप नहीं चाहियें हैं. उनके नेताओं को निमंत्रित किया है इन्दिराजी को भी, कांग्रेस की लीडर को हैसियत से आमंत्रित किया है, राज्यसभा में उमाशंकर जी दीक्षित उनके नेता हैं उनको भी निमंत्रित किया है और कहा है कि कहो साथ आप दो-तीन और

(शेष पृष्ठ ३१ पर)

जनता का आरोप पत्र

बिहार विधान सभा के तथाकथित सदस्यगण,

इस पत्र के द्वारा बिहार की जनता अपने तथाकथित विधायकों पर पूरी गंभीरता से यह आरोप लगाती है कि आप सब हमारा विश्वास पूर्णतः खो चुके हैं, इसलिए किसी प्रकार हमारा प्रतिनिधित्व करने के योग्य नहीं रह गये हैं. जनतंत्र के हर मूल्यांकन के अनुसार आप अयोग्य सिद्ध हुए हैं और जनता एक क्षण के लिए भी आपको प्रतिनिधि के नाते मान्य नहीं करती

आज से ठीक एक वर्ष पहले १८ मार्च, १९७४ के दिन, सारे प्रदेश से एकत्रित कई हजार छात्रों ने इसी स्थान पर एक प्रदर्शन कर आपके सामने अपनी बारह मांगें पेश की थीं इनमें से आठ मांगें छात्रों की अपनी समस्याओं से संबंधित थीं और शेष चार मांगें भ्रष्टाचार मिटाने, महंगाई घटाने, बेरोजगारी मिटाने तथा शिक्षा में आमूल परिवर्तन के लिए थीं जो आम जनता की मांगें थीं.

लेकिन, आप से मांगा गया सहयोग और आपने दिया संघर्ष. छात्रों के शांत प्रदर्शन के जवाब में आपके पास मौजूद थे केवल दमन और अत्याचार! संघर्ष की वह चुनौती पहले छात्रों ने और बाद में बिहार की सारी जनता ने स्वीकार कर ली और इस एक वर्ष में उन्होंने अपनी मांगों को बार-बार दोहराया. शहीदों के खून और वीरों की त्याग-तपस्या से ये मांगें इस एक वर्ष में वज्र-सी मजबूत बन गयी हैं. अब ये मांगें नहीं रह गयीं, बल्कि ये जनता की ओर से उसके तथाकथित प्रतिनिधियों पर लगे आरोपों के रूप में परिणत हो गयी हैं.

बिहार के तथाकथित विधायको! आप पर हमारा आरोप है कि यद्यपि आप जनता के प्रतिनिधि कहलाते हैं, लेकिन जनता की आवाज सुनने के लिए आप के कान बहरे तथा जनता का दुःख देखने के लिये आपकी आंखें अंधी हो गई हैं.

(शेष पृष्ठ १८ पर)

धीरेंद्र मजूमदार से बातचीत

जयप्रकाश ठीक दिशा में हैं !

धीरेंद्र मजूमदार...
गलत नेतृत्व का फल—

भारतीय जनतंत्र को अधिक सुदृढ़ तथा सार्थक बनाने में जयप्रकाश जी के आंदोलन का योगदान कहां तक मिलेगा ?

मैं हमेशा कहता हूं कि आज देश पर जो संकट है वह अपने आप में कोई समस्या नहीं है, बल्कि सत्ताइस सालों से देश का नेतृत्व, जो गलत रास्ते पर लोकतंत्र को अधिष्ठित करने का प्रयास करता रहा, उसका परिणाम है. लोकतंत्र का मुख्य तत्व 'लोक' होता है. इसलिए लोकतंत्र को सुदृढ़ करने के लिए 'तंत्र' को 'लोक' के हाथ का औजार बनना ही पड़ेगा. यह तभी हो सकता है, जब लोकतंत्र की चाह से प्रेरित होकर लोक अपनी ही पहल से तंत्र का निर्माण करे. लेकिन ऐसा नहीं हुआ. देश के श्रेष्ठ नेताओं ने, जिनकी ईमानदारी और नीयत पर किसी प्रकार की शंका की गुंजाइश नहीं थी, गांधीजी के आखिरी संकेत के अनुसार लोक द्वारा तंत्र-निर्माण की योजना न बनाकर, परंपरा के अनुसार तंत्र द्वारा लोक को संचालित करने की योजना बनायी. वास्तविक लोकतंत्र यानी लोक के पहल से निर्मित लोकतंत्र के अधिष्ठान की उद्देश्य-पूर्ति के लिए गांधीजी ने नेताओं से स्पष्ट कहा था कि वे अंग्रेजों के छोड़े हुए पावर (सत्ता) में न जाकर देश के सात लाख गांवों में फैल जायें और जनता को वास्तविक लोकतंत्र-निर्माण के लिए प्रशिक्षित करें, भले ही 'पैंथम' को सम्हालने के लिए अपने दोयम दर्जे के नेताओं पर पुराने तंत्र को चलाने की जिम्मेदारी छोड़े और ऊपर से उनका मार्गदर्शन करते रहें. ऐसे न करते हुए उन्होंने जिस योजना को चालू किया, उसके विकास का अर्थ है कि संचालन-तंत्र अधिक मजबूत हो और उसके लिए संचालन का अनुशासन अधिक कड़ा हो, अर्थात् केंद्र-शासन अधिक-से-अधिक कठोर हो. इसलिए उसके अंतिम चरण में उत्कट तानाशाही के दर्शन हो रहे हैं. यह कोई इंदिराजी का व्यक्तिगत प्रश्न नहीं है, यह तो पद्धति का अनिवार्य परिणाम है. अतएव देश के लोकतंत्र की रक्षा के लिए नये तरीके से आगे बढ़ना होगा, यानी लोक को अपनी पहल से तंत्र को निर्मित करने की प्रेरणा और मार्ग दर्शन देना होगा

आंदोलन का मूल उद्देश्य भ्रष्टाचार उन्मूलन, बेकारी-निवारण, भावों में गिरावट और शिक्षा में क्रांति लाना आदि है. लेकिन समानांतर विधान-सभा की रचना जैसे कार्यक्रम क्या इन उद्देश्यों को भुलानेवाली तथा आंदोलन को पथभ्रष्ट करनेवाली सिद्ध नहीं होगी ?

आंदोलन का नया मोड़ आंदोलन को अवश्य पथभ्रष्ट कर सकता है. ऐसे ही मुकाम पर नेतृत्व की परीक्षा होती है. अगर नेता के हाथों में लगाम रहता है और जिधर से गली मिले, मुड़ने रहने की शक्ति और हिम्मत वह रखता है, तो इस प्रकार के मोड़ की बाधा उसे पथभ्रष्ट नहीं कर सकती. हर क्रांति निर्दिष्ट दिशा में नया मार्ग खोजने की होती है. उसके यात्री को कोलंबस जैसे 'अनचार्टेड ओशन' में निश्चित दिशा में यात्रा करनी होती है. वस्तुतः हर क्रांति मार्ग-खोजन की प्रक्रिया ही होती है. उस प्रक्रिया में रास्ते में अनेक दिशा में भटकने के बाद ही लक्ष्य की ओर पहुंचने की आशा रहती है. वस्तुतः योग्य और शक्तिशाली नेतृत्व के लिए ऐसा करना लाजिमी हो जाता है. नहीं तो क्रांति का आरोहण स्थिर नहीं रह सकता है. गांधीजी भी ऐसा ही किया करते थे. उनमें मुड़कर फिर सही मार्ग पर आने की शक्ति भी थी.

ऐसी ही घड़ी में, जे० पी० के नेतृत्व की सफलता, वे क्या कर सकते हैं इस पर निर्भर करती है. मुझे विश्वास है कि गांधी, विनोबा की ट्रेनिंग के साथ अपना अनुभव और चिंतन जोड़कर उनके पास यह शक्ति अवश्य है और वे नाव को ऐसे समय में ठीक दिशा में खींचकर ले जा सकेंगे.

भारत के गांवों का आज जो चित्र है, वह जाति और सामंतवादी वर्गों का मिला हुआ परस्पर पोषक और वर्धक समाज का है. जबतक इस पर प्रहार नहीं किया जाता है तबतक भारत में, खासकर बिहार में सामाजिक क्रांति नहीं हो सकती. क्या आपको लगता है कि जे० पी० के आंदोलन से बिहार में इस प्रकार का सामाजिक परिवर्तन आयेगा ?

बिहार आंदोलन की बुनियाद ही जातिवाद और सामंतवाद की परम्परा पर आघात करने के लिए है. यह आंदोलन शुद्ध बुनियादी विचार लेकर चल रहा है, जिसमें समाज के किसी प्रकार के वर्गीकरण की गुंजाइश नहीं है. लोकतंत्र का सिद्धांत पूरे समाज को एक इकाई मानने का है. यही कारण है कि विनोबाजी इस लोकतांत्रिक समाजवाद को विज्ञान और आध्यात्मिकता का समन्वय कहते हैं क्योंकि आध्यात्मिक विकास के सिवा पूरा समाज एक इकाई के रूप में टिक नहीं सकता. इस तरह लोकतंत्र और समाजवाद कोई शुद्ध राजनैतिक तत्व नहीं है, बल्कि उसका मूल तत्व आध्यात्मिक है. विज्ञान और आध्यात्मिकता में वर्गवाद की गुंजाइश नहीं है. इसी कारण विनोबाजी कहते हैं कि विज्ञान के युग में राजनीति और सम्प्रदायवाद का स्थान नहीं है.

आप कह सकते हैं कि कम्युनिज्म भी जातिवाद, सम्प्रदायवाद और सामंतवाद की पुरानी परंपरा पर प्रहार था. यह बात सही है कि कम्युनिज्म पुरानी परंपरा पर आघात करता है, लेकिन उसकी फिलासफी की बुनियाद ही वर्गवाद थी. वर्गवाद, अन्ततोगत्वा जातिवाद में परिणत हो जाता है. उसमें दूसरे वर्गों के प्रति विद्वेष रहता है तथा वह अपने मार्ग को ही एकमात्र सही मार्ग मानता है. इसलिए कम्युनिज्म एक चीज है और लोकतांत्रिक समाजवाद बिल्कुल दूसरी चीज. ☐ (सर्वोदय से साभार).

O दिल्ली का जनता मार्च : लाल किले की ऐतिहासिक प्राचीर के साये में इकट्ठे हुए लोग, झण्डा की एक झाकी, नेतृत्व करते तथा बोट क्लब के मंच से जनता को निर्देश देते जयप्रकाश जी.

१९७५ में जन प्रदर्शन

कश्मीर से कन्याकुमारी तक !

"...आज का यह दिवस स्वतंत्र भारत के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा जायेगा. संभव है मेरी यह उक्ति कुछ लोगों को अतिशयोक्ति सी लगे, परन्तु आगे आने वाले दिन, महीने और बरस इस बात को सिद्ध करेंगे कि जैसे दांडी मार्च ने भारत का इतिहास पलटा था वैसे ही आज ६ मार्च भी भावी भारत का इतिहास पलटेगा

"...आज यहां भारत के कोने-कोने से इकट्ठे हुए लोग ऐसा करेंगे इतने बड़े समूह की संख्या का मैं अनुमान तो नहीं लगा सकता, लेकिन इतनी संख्या इस मैदान ने, इतना बड़ा जन समूह पहले कभी नहीं देखा होगा अनेक प्रकार की बाधा उपस्थित हुई है.

'सत्ताधारियों को आंख खोलकर देख लेना चाहिये कि इतने सारे कारणों के बावजूद भी इसी दिल्ली शहर में इतने सारे लोग इकट्ठे हुए हैं लेफ्टिनेंट-गवर्नर साहब से लेकर नीचे-ऊपर के सभी अफसर इसमें लगे हुए थे कि दूकानें बंद न हों. दूकानें खुलवाने के लिये डराया धमकाया गया, जोर-जबर्दस्ती की गयी, दक्षिणपंथी सी. पी. आई. के लोग भी इसमें लगे हुए थे. पता नहीं कौन-सा उनका इसमें लाभ होनेवाला था बावजूद इन सबके यह अपार भीड़ है सत्ताधारी देख लें, ये लोग यहां आये हैं, क्योंकि यहां इतिहास का नया अध्याय शुरू होनेवाला है, इसलिये कि जनता ने *तय किया है कि सत्तावाले अगर हमारी* बातों पर ध्यान नहीं देंगे तो उनको मजबूर करेंगे अपनी बात सुनाने के लिये और यह काम हम शांतिमय तरीकों से करेंगे और महात्मा गांधी ने जो मार्ग देश के सामने रखा था उस पर ही हम चलेंगे...

"...मैंने कुछ दिन पहले एक प्रसिद्ध अर्थशास्त्री मिन्हास से यह दरियाफ्त किया था कि आज जो देश की परिस्थिति है उसमें गरीबी की जो सीमारेखा है

(शेष पृष्ठ १९ पर)

जनता का

हम भारत के नागरिक बिहार की जनता के संघर्ष के प्रति, जो पूरे देश की भावनाओं का प्रतीक बन गया है, एकात्मता जाहिर करने के लिए यहां इकट्ठे हुए हैं. ऐसे समय में जब सार्वजनिक जीवन और सुशासन के बुनियादी सिद्धान्त कुचले जा रहे हैं, नागरिकों का कर्तव्य है कि वे अपना विरोध जाहिर करें. हमारा आज का यह प्रदर्शन न्याय की प्राप्ति और लोकतन्त्र की रक्षा के लिए है.

हम समाज में सम्पूर्ण क्रांति लाने के लिए कृतसंकल्प हैं जो गांधीवादी ढांचे के अन्तर्गत सामाजिक-आर्थिक समानता, वास्तविक लोकतन्त्र और नैतिक मूल्यों पर आधारित एक नयी व्यवस्था का निर्माण करेगी.

अपने संजोये गये इन उद्देश्यों की प्राप्ति की दिशा में आगे बढ़ने के लिए हम निम्नलिखित अत्यावश्यक मांगों की ओर ध्यान दिलाना चाहते हैं—

बिहार और गुजरात में चुनाव

बिहार विधान सभा ने राज्य के लोगों का विश्वास खो दिया है विधान सभा जनता के सामने आने से भय खाती है. उसने अपने-आपको घेरों और संगीनों की छाया में बंद कर लिया है वह एक लंबे अरसे से जनता की धड़कनों का प्रतिनिधित्व नहीं करती. वह एक ऐसी सरकार का समर्थन करती है जिसने राज्य में कुशासन कायम कर रखा है और जनता के चिर-आकांक्षित अधिकारों को पैरों तले रौंद डाला है.

कुशासन और सरकार में व्याप्त भ्रष्टाचार समाप्त करने के बजाय बिहार विधान सभा उसमें भागीदार ही बन गयी है. राजनीतिक सम्प्रभु—जनता—लंबे अरसे से उस कानूनी सम्प्रभु की बर्खास्तगी की मांग कर रही है जिसने अनुचित रूप से सत्ता अधिकृत कर रखी है.

गुजरात में, एक साल पहले जन-आंदोलन द्वारा राज्य सरकार को पदच्युत कर विधान सभा भंग करायी गयी, पर वहां अभी तक स्वतंत्र चुनाव कराने का आदेश नहीं हुआ है. इसलिए, हमारी पहली मांग यह है कि बिहार सरकार तुरन्त बर्खास्त की जाए, और विधान सभा भंग की जाए तथा शीघ्र बिहार और गुजरात में चुनाव कराने के आदेश जारी किये जायें.

‘… यदि इस बार नहीं सुना तो एक बार फिर आयेंगे….’

जनता के सामाजिक-आर्थिक अधिकार.

सरकार की विनाशकारी नीतियों का परिणाम यह हुआ है कि एक तरफ तो आर्थिक गतिरोध पैदा हो गया है दूसरी तरफ गरीबी बढ़ी है, कीमतें आसमान छूने लगी हैं और बेरोजगारी में वृद्धि हुई है. आवश्यक वस्तुओं का अभाव कमजोर तबके के लोगों की जिन्दगी का एक स्थायी अंग बन गया है लगभग ६० फीसदी लोग आधा पेट खाकर अपनी जिंदगी बसर कर रहे हैं और ऐसे लोगों की संख्या में भयानक गति से वृद्धि हो रही है सामाजिक विषमताएं बढ़ती जा रही हैं

लोगों के महत्वपूर्ण सामाजिक-आर्थिक अधिकारों की सुरक्षा का अविलम्ब प्रबंध आवश्यक है और इसके लिए निम्नलिखित कदम उठाये जाएं

१ समाज के कमजोर तबके, खासकर आबादी के ६० प्रतिशत सबसे गरीब लोगों को जीवन की बुनियादी आवश्यकताओं की चीजें उस दाम पर उपलब्ध करायी जाएं, जो उनकी सामर्थ्य के भीतर हो.

२. आवश्यक वस्तुओं के मूल्य उनकी लागत से सम्बन्धित हों. साथ ही, कृषि और औद्योगिक वस्तुओं के मूल्यों के बीच समुचित सन्तुलन हो. मूल्यों में स्थिरता लायी जाये और मूल्य-वृद्धि राष्ट्रीय आय में होनेवाली वृद्धि की रफ्तार से अधिक नहीं हो.

३. सबको आवश्यकता-आधारित न्यूनतम मजदूरी और आमदनी की गारंटी मिले

४ आर्थिक विषमताएं इतनी कम कर दी जायें कि वे एक और दस के अनुपात की समुचित मर्यादा के अंदर आ जायें.

५ ऐसे कारगर भूमि सुधार किये जायें जिनके परिणामस्वरूप भूमि का समतामूलक पुनर्वितरण सुनिश्चित हो, ‘जो जोते, जमीन उसकी’ के सिद्धान्त के आधार पर स्वामित्व हो, भूमिहीनों को ग्रामसभा की जमीन मिले तथा खेतिहर मजदूरों को समुचित मजदूरी निश्चित रूप से प्राप्त हो जिसका हिस्सा उन्हें अनाज के रूप में दिया जाये.

६ सब लोगों को पूर्ण रोजगार का आश्वासन मिले इसके लिए उपयुक्त तकनीक के प्रयोग द्वारा कृषि और ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था के विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जाये. इसी प्रकार औद्योगीकरण के कार्यक्रम ऐसी तकनीक और योजनाओं पर आधारित किये जायें जिनमें मानवशक्ति का अधिकतम व्यापक पैमाने पर हो सके.

७ राष्ट्रीय स्वावलंबिता पर आधारित अर्थतन्त्र का निर्माण इस सबके में दिशा-निर्धारण के तौर पर किया जाये. इसमें विलास की वस्तुओं के आयात, तथा देश में उनके निर्माण पर रोक लगायी जाये.

लोकतांत्रिक अधिकार और नागरिक स्वतंत्रता

संविधान की भावना के विरुद्ध सरकार ने राष्ट्रीय आपातकालीन स्थिति कायम कर रखी है. विधि के शासन का स्थान आंतरिक सुरक्षा कानून (मीसा), भारत रक्षा कानून (डी० आई० आर०) तथा अध्यादेशों के शासन ने ले लिया है. बहुसंख्यक लोगों को लोकतांत्रिक अधिकारों से वंचित किया जा रहा है, जनता के वैध एवं शान्तिपूर्ण संघर्ष को केंद्रीय एवं राज्य पुलिस द्वारा

मांग पत्र

दबाया जा रहा है . लोकतंत्र के तत्व की पुनर्स्थापना, सुरक्षा एवं विस्तार के लिए हम मांग करते हैं कि—

- आपातकालीन स्थिति तथा मीसा, डी० आई० आर० और नागरिक स्वतंत्रताओं के विरोध में काम करनेवाले अन्य कानूनों को अविलंब वापस लिया जाये .
- स्कूलों, कॉलेजों और विश्वविद्यालयों के सभी शिक्षक और गैर शिक्षक कर्मचारियों को सारे राजनीतिक और ट्रेड यूनियन संबंधी अधिकार दिये जायें .
- सार्वजनिक क्षेत्र के व्यावसायिक और औद्योगिक प्रतिष्ठानों के मजदूरों और कर्मचारियों को सारे राजनीतिक और ट्रेड यूनियन संबंधी अधिकार प्रदान किये जायें .

स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव :

यह अत्यंत आवश्यक है कि संसद और विधान सभाएं जन आकांक्षाओं के अधिक अनुकूल बनें . चुनाव को सरकारी मशीनरी, धन-शक्ति और बल प्रयोग से प्रभावित न होने दिया जाये अतः हमारा आग्रह है कि

१. संयुक्त चुनाव सुधार संसदीय समिति की, जिसमें शासक दल के सदस्य भी शामिल थे, सर्वसम्मत सिफारिशें अविलंब कार्यान्वित की जायें .

२. चुनाव की तिथियां घोषित होने के बाद सरकार को महत्वपूर्ण नीति-वक्तव्य देने, परियोजनाओं को मंजूरी देने, शिलान्यास करने और मतदाताओं को लुभा सकनेवाले अन्य ऐसे कार्यक्रमों की घोषणा करने की इजाजत नहीं हो .

३. चुनाव आयोग एक बहुसदस्यीय निकाय बने जिसमें असंदिग्ध चरित्रवाले व्यक्ति, जैसे सर्वोच्च न्यायालय एवं उच्च न्यायालय के जज रहें . उनका चयन एक बोर्ड के जरिये किया जाय, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश, प्रधानमंत्री और विरोधी दल के नेता (या विरोधी दल के ऐसे प्रतिनिधि जो सर्वमान्य हों) रहें .

४. राजनीतिक दलों के लिए चुनाव खर्च का विवरण देना अनिवार्य हो . विवरण में वे सारे खर्च शामिल किये जायें जो दलों द्वारा अलग-अलग उम्मीदवारों और सामान्य दलीय कार्यक्रमों पर किये गये हों .

५. शासक दल के लिए रेडियो, टेलीविजन, सरकारी वाहनों, हवाई जहाज तथा सरकारी साधनों का दलीय उद्देश्यों के के लिए इस्तेमाल निषिद्ध होना चाहिए. विरोधी दलों के साथ बराबरी की शर्तों पर उनका इस्तेमाल किया जा सकता है .

६. मतदान से एक सप्ताह पहले से पूरे चुनाव तक शराबबंदी लागू की जाये

७. मतदान के दिन अनिवार्य सेवाओं के लिए इस्तेमाल में जा रही गाड़ियों को छोड़कर निजी मोटर गाड़ियों सहित तमाम सवारी गाड़ियों का चलना रोक दिया जाये .

८. मतगणना हर मतदान केंद्र पर हो मतदान के तुरत बाद हर चुनाव केंद्र के मतपत्रों का हिसाब जाहिर कर दिया जाये और तीन या चार मतपेटियों की जगह सिर्फ एक ही मतपेटी हर मतदान केंद्र को उपलब्ध रहे परंतु, आकस्मिक स्थिति के लिए अतिरिक्त प्रबंध रखा जाये .

९. हर मतदान केंद्र पर कुल मिलाकर जितने मतपत्र डाले गये हों, या जिनका किसी दूसरी तरह से इस्तेमाल किया गया हो, उनका हिसाब चुनाव लड़नेवाले सभी दलों के उम्मीदवारों के एजेंटों को अवश्य उपलब्ध कराया जाये, जिसमें प्रथम और अंतिम मतपत्रों की संख्या भी शामिल रहें .

१०. मतदान करने की उम्र घटाकर १८ वर्ष की जाये .

११. प्रतिनिधियों को वापस बुलाने के अधिकार का समावेश संविधान में किया जाये .

"......हमारी पहली मांग यह है कि बिहार सरकार तुरंत बर्खास्त की जाये और विधान सभा भंग की जाये ..."

राजनीतिक सत्ता का विकेंद्रीकरण

सत्ता के बढ़ते हुए केंद्रीकरण तथा सरकार द्वारा लोकतंत्र को समूल नष्ट करने की कोशिश को ध्यान में रखते हुए, वास्तविक स्वशासन के लिए सत्ता के विकेंद्रीकरण और ग्रामपंचायतों, जिला परिषदों, राज्यों और केंद्र के बीच उसके प्रभावी रूप से वितरण की संवैधानिक गारंटी आवश्यक है

शिक्षा-सुधार

१. शिक्षा इस मांग-पत्र में निहित आदर्शों के अनुकूल समाज के निर्माण का माध्यम बने और वह पश्चिमीकरण के बदले आधुनिकीकरण का साधन हो .

२. राष्ट्रीय आवश्यकताओं के अनुकूल शिक्षा के गुण एवं तत्व के विकास के के लिए कारगर कदम उठाये जाय . मौजूदा ढांचे में प्रत्येक स्तर पर सुधार किया जाये

३. माध्यमिक स्तर में शिक्षा को जीविकोन्मुख बनाया जाये, जिसके साथ आर्थिक योजना की एक ऐसी प्रणाली हो, जो रोजगार की गारंटी करे शिक्षण संबंधी नौकरियों को छोड़ अन्य नौकरियों के लिए विश्वविद्यालय की डिग्री आवश्यक न रहे .

४. पांच वर्षों के अंदर प्राथमिक शिक्षा और वयस्क शिक्षा के सार्वत्रिक प्रसार को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जाये .

५. शिक्षण संस्थाओं में सरकार के हस्तक्षेप पर रोक लगायी जाये . इन संस्थाओं का प्रबंध साधारणतः उनके शिक्षकों को सौंपा जाये और उनमें लोकतांत्रिक ढंग से छात्रों की भागीदारी हो .

(शेष पृष्ठ ३८ पर)

संपादकीय

एक बार फिर गांधी कसौटी पर

इतिहास में ऐसे लोग कम हैं जो पिछले कई दशकों से संसार के किसी-न-किसी कोने में न्याय, स्वतन्त्रता, समानता की लड़ाई लड़ रहे हैं—एक अटूट और अनोखी लड़ाई. मोहनदास करमचंद गांधी इतिहास के उन विलक्षण महापुरुषों में एक है जो हर वक्त कहीं-न-कहीं समय कसौटी की पर चढ़ा है, परखा जा रहा है. **नाम बदल जाते हैं, देश-काल बदल जाता है पर हर लड़ाई के बाद दुनिया पहचानती है कि इसके पीछे भी वही घुटनों तक नंगा, पोपले मुंहवाला बूढ़ा लड़ रहा था.** अमेरिका के मार्टीन लूथर किंग हों या स्पेन के पादर जिरोनाश हों, सबने गांधी को अपनी-अपनी तरह से कसौटी पर रखा है, और यही गांधी के व्यक्तित्व और कर्तृत्व की विलक्षणता थी. **विक्षुब्ध, प्रताड़ित व्यक्ति के संघर्ष के लिये गांधी के तरकश में असंख्य तीर थे जो आज भी अचूक और अमोघ हैं.**

बिहार में गांधी कसौटी पर है. एक बार इतिहास फिर से उस बूढ़े का दमखम मापना चाहता है. स्थिति एक ऐसे मोड़ पर आ पहुंची है कि गांधी जियेगा तो बिहार में और मरेगा तो बिहार में और गांधी को जिंदा रखने की लड़ाई गांधी के हथियारों से ही लड़ी जा सकती है, यह बात बिहार आंदोलन के सिपाही जितनी अच्छी तरह समझ लेंगे गांधी की जीत उतनी ही निश्चित होगी.

एक मित्र जो आंदोलन में काफी तन्मयता से लगे हैं कहने लगे, 'जहां बहुसंख्यक लोग आंदोलन के साथ हों, वहां आंदोलनविरोधी, आतंक फैलानेवाले अल्पसंख्यक लोगों की वक्त-बेवक्त पिटाई भी बुरी नहीं है. मार के निबट लेना कई जगहों पर जरूरी है'. एक दूसरे मित्र ने कहा,' कलकत्ता में जयप्रकाश जी के साथ जो हुआ उसे हमने चुपचाप सुन लिया, यह कायरता है. कायरता से हिंसा अच्छी है ऐसा गांधी ने कहा था. बिहार के लोगों को तैयार होना चाहिए कि देश के किसी भी हिस्से में जयप्रकाश पर हाथ उठा तो बिहार लाल हो उठेगा.'

इन दो प्रतिक्रियाओं में आंदोलन की मूल निष्ठा को नहीं समझने का भोलापन है. **गांधी की लड़ाई में ऐसे कमजोर सिपाही नहीं चलेंगे और यदि चलेंगे तो गांधी की लड़ाई लड़ी नहीं जा सकेगी.**

यदि बहुसंख्यक आंदोलनसमर्थक, अल्पसंख्यक आतंक फैलानेवालों से दबन है तो नयी क्रांति की क्या संभावना है? आज उस समाज में, जिसे हम बदलना चाहते हैं यही तमाशा तो चल रहा है कि अल्पसंख्यकों ने समाज में स्थापित शक्तियों —डंडा, पैसा, कुर्सी—के सहारे बहुसंख्यकों को दबा रखा है. यदि क्रांति की चाह रखनेवाले लोग भी इन शक्तियों से भय खाते हों या इन शक्तियों को पा कर राज फेरना चाहते हों तो क्रांति क्या होगी? बहुसंख्यक लोग यदि आंदोलन के प्रति समर्पित हैं तो आतंक कैसे फैलेगा? दरअसल वहां आतंक फैलानेवाले मित्र अपना प्रभुत्व बचाये रखने को दृढ़ प्रतिज्ञ हैं जबकि आंदोलन के समर्थक उनसे कम दृढ़ता से काम कर रहे हैं. **शांति की प्रक्रिया में जान लेने की क्रूरता नहीं, जान देने की वीरता चाहिए.** 'सत्याग्रही भय की भावना को अलविदा कहकर ही अजय हो सकता है'—गांधी ने यह कहकर हमारे लिये शक की कोई गुंजाइश छोड़ी नहीं.

कलकत्ता में जयप्रकाश के साथ जो हुआ उसका सबसे सही उत्तर जयप्रकाश स्वयं दिया है. जयप्रकाश के साथ हुई इस घटना को जहां-जहां दुहराया जायेगा वहां-वहां आंदोलन फूट निकलेगा. यथास्थिति के रक्षक सर्वप्रथम किसी भी क्रांतिकारी आंदोलनों की उपेक्षा करते हैं, आंदोलन की शक्ति बढ़ती है तो वे उसका प्रबल विरोध करते हैं और जब आंदोलन का ज्वार उनके सर से गुजरने लगता है वे उसमें शामिल हो जाते हैं. हमारा आंदोलन दूसरे दौर से गुजर रहा है. तब क्या उतावली में हम अपना रास्ता बदल लें? **'घोर विपदा के समय भी व्यक्तित्व का सहज सौंदर्य अक्षुण्ण रहे यही साहस है'**—अर्नेस्ट हेमिंग्वे ने कहा था. हजारों उग्र लोगों की भीड़ में घिरे जयप्रकाश ने जब अपना सहज स्वभाव नहीं छोड़ा तो क्या हम उनका बताया रास्ता छोड़ देना चाहिए? क्या इस मित्र की भावना में कहीं यह भाव नहीं छिपा है कि शांति से 'लाल रास्ता' ज्यादा प्रभावी होता है? **सैनिक को यदि अपने हथियार पर ही पूरा भरोसा न हो तो वह क्या लड़ेगा?**

गांधी का 'रामराज्य' १५ अगस्त १९४७ को नहीं आया और इसलिए उसने एक नयी लड़ाई की योजना बनानी शुरू कर दी थी, और सात लाख जिंदा शहीदों की मांग की थी. **गांधी को सात लाख जिंदा शहीद नहीं मिले और गांधी स्वयं शहीद हो गया.** गांधी की वह मांग आज भी बनी है और जयप्रकाश ने उसे संघर्ष वाहिनी के रूप में फिर से हमारे सामने रखा है.

गांधी को इस बार जयप्रकाश ने कसौटी पर रखा है. 'शांतिमय एवं शुद्ध साधनों से संपूर्ण क्रांति' की बात गांधी की उस ऐतिहासिक देन में निहित है जिसमें उसने 'उत्तम साध्य के लिये उत्तम साधन' की

बात यही थी. हमारा संघर्ष व्यवस्था बदलना चाहता है, सरकार नहीं. व्यवस्था बदलते-बदलते सरकार बदल जाये तो हमे कोई दुख नहीं. पर, सरकार से द्वेष नहीं, सरकारी लोगों से घृणा नहीं. संघर्ष और सहयोग की दुहरी ताकत से संपूर्ण क्रांति की मंजिल तक पहुंचा जा सकता है. संघर्ष खोज-खोजकर नहीं बल्कि 'जनता सरकार' के काम की सहज प्रक्रिया में से पैदा होगा तभी जनता को अपनी शक्ति का भान होगा.

संपूर्ण क्रांति के संकेत गांधी ने दिये थे, जयप्रकाश उसे परिभाषित कर रहे हैं. क्या हम उस पर चल रहे हैं ?

कलकत्ते की एक सभा से जयप्रकाश बगैर बोले लौट तो आये पर आंदोलन चुपके से बंगाल में प्रवेश कर गया . यही शास्त्र है क्रांति का . वह कब और किधर से प्रवेश कर जाती है यह तो रेल के डब्बे से गांधी को उतारते वक्त उस गोरे दक्षिण अफ्रीकी अफसर को भी पता नहीं चला होगा .

बिहार आंदोलन ने प्रचलित राजनीति के समीकरणों के बदलाव की संभावना पैदा कर दी है . यह कितना टिकाऊ और दूरगामी होता है, यह तो इस पर निर्भर करता है कि आंदोलन के सिपाही इसे कितनी गहराई से समझते हैं और इसकी सफलता के लिये कितनी दूर तक जाने को तैयार होते हैं .

सफलता के अपने अभियान में आंदोलन एक वर्ष की दूरी तय कर चुका है, और बिहार की सीमा लांघ चुका है. पिछले पच्चीस वर्षों मे शनै-शनै देश ऐसी जड़ता को प्राप्त करता जा रहा था कि कोई घटना नहीं होती थी जो एक चोट से देश की संवेदना के तार झंकृत कर दे । देश कहने को एक था, पर संवेदना के एकदम अलग-अलग स्तरों पर जीता था . बिहार आंदोलन ने फिर से इस देश को एकात्मता का बोध कराया है कश्मीर से कन्याकुमारी तक आज इसकी आवाज पहुंचती है और प्रतिध्वनि लौट कर आती है . यह अपने आप मे एक इतनी बड़ी उपलब्धि है जिसे राष्ट्रीय एकता का कोई भी प्रेमी नजरंदाज नहीं कर सकता है .
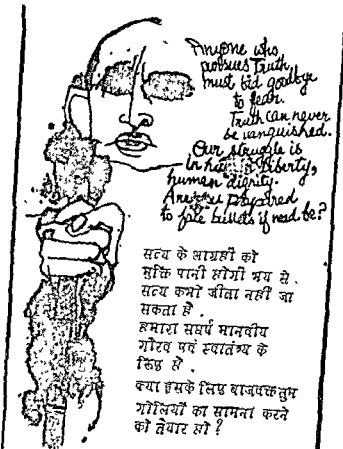
बंगाल के साम्यवादी (दक्षिणपंथी) और कांग्रेसी (सत्तारूढ़ी) यह सोचकर खुश हो रहे होंगे कि वे पहले निकले जिन्होंने जयप्रकाश को बोलने नहीं दिया । पर इस घटना ने उन्हें एक अजीब हास्यास्पद स्थिति मे डाल दिया है . कभी कहा जाता था कि आज जो बंगाल बोल रहा है कल वही सारा हिंदुस्तान बोलेगा यदि जयप्रकाश वहां चुप रहे तो कल इतिहास लिखेगा कि जब पूरा देश सच कहने कि हिम्मत से खड़ा हो रहा था, बंगाल बस गूंगा बना रहा था . बंगाल की तरुणाई के लिये मुखरता मे गूंगेपन की यह यात्रा, जययात्रा नहीं, शवयात्रा होगी .

बंगाल के युवकों के लिये जयप्रकाश ने एक चुनौती उछाल दी है , कैसे बंगाल बना रहता है ? □

बिहार आंदोलन

तिथियां और घटनाएं

४ नवंबर '७४ सत्ता की गर्द – अश्रुगैस मे बैचेन प्रदर्शनकारी .

पूर्वाभास

. दिसंबर' १९७३– जयप्रकाश जी द्वारा पवनार आश्रम से युवकों के नाम 'यूथ फार डिमोक्रेसी' नामक अपील जारी

१२ जनवरी' ७४–पटना के व्हीलर सीनेट हाल मे जयप्रकाश जी द्वारा युवकों के बीच उक्त अपील के अंतर्गत भाषण .

१ फरवरी '७४–पटना कालेज के प्रांगण मे पुन: जयप्रकाश जी का भाषण लोकतंत्र की रक्षा के हेतु युवकों को जाग्रत होना चाहिए .

८ फरवरी '७४–मुजफ्फरपुर मे छात्र नेता सम्मेलन .

९ फरवरी '७४–मुजफ्फरपुर मे छात्रो द्वारा जमाखोरी और मुनाफाखोरी के विरुद्ध अभियान शुरू .

१७-१८ फरवरी '७४–पटना मे बिहार के छात्र तथा युवा संगठन के नेताओ का सम्मेलन . बिहार प्रदेश छात्र संघर्ष समिति का गठन : महगाई, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार, शिक्षा मे आमूल परिवर्तन आदि विषयों को लेकर आठ सूत्री मांग .

२६ फरवरी '७४–छात्र संघर्ष समिति के लगभग २०० छात्रों द्वारा अपनी मांगो के समर्थन में २४ घंटे का अनशन. मुख्य मंत्री के निवास स्थान पर, प्रदेश के अन्य स्थानों पर भी छात्रों ने जिलाधिकारी और अनुमंडलाधिकारी के समक्ष अनशन किया .
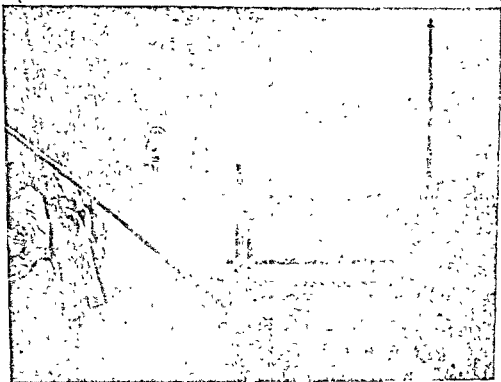
२ मार्च '७४–बि० प्र० छा० सं० स० के ११ सदस्यीय संचालन समिति का गठन .

४ मार्च '७४– छा० सं० स० द्वारा शिक्षा मंत्री के निवास स्थान पर प्रदर्शन तथा ज्ञापन .

प्रारंभ

१८ मार्च '७४–बिहार विधान सभा के सामने छात्रों द्वारा १२ सूत्री मांगो के समर्थन मे प्रदर्शन. राज्यपाल को विधान सभा मे अभिभाषण करने से रोकने के लिए छात्रों द्वारा राज्यपाल के मार्ग पर घेरा . तनावपूर्ण स्थिति मे गोली बारी, शहर मे व्यापक लूटपाट, हिंसा और आगजनी . होटल, 'सर्चलाईट' तथा 'प्रदीप' अखबारो के कार्यालय तथा प्रेस जले, कर्फ्यु लागू . भागलपुर में भी तनावपूर्ण स्थिति .

१९ मार्च' ७४–संचालन समिति के कुछ सदस्यों द्वारा जयप्रकाश जी से आंदोलन को नेतृत्व प्रदान करने आग्रह . जमुई मे भी पुलिस द्वारा छात्रो पर गोली .

२० मार्च' ७४–जयप्रकाश जी द्वारा गफूर साहब से अपनी 'अंतरात्मा की आवाज' पर इस्तीफा देने की मांग . लखीसराय तथा बैरगनिया मे भी पुलिस द्वारा गोली कांड .

२१ मार्च' ७४–छात्रो द्वारा पटना में मौन, जुलूस . सफल पटना बंद .

२३ मार्च' ७४–छात्र संघर्ष समिति के आह्वान पर सफल बिहार बंद .

२५ मार्च '७४–संचालन समिति के सदस्यो द्वारा पुन: जयप्रकाश जी से बातचीत तथा आंदोलन का नेतृत्व करने का अनुरोध . जयप्रकाश जी के उनके सामने अपनी दो शर्तें रखीं– (१) आंदोलन का स्वरूप निर्दलीय हो तथा (२) शांतिमय हो . छात्रों द्वारा दोनों शर्तों को मानने की घोषणा .

५ ७४–पटना गांधी मैदान में दफा–१४४ के बावजूद छात्रों ने सभा की. छात्रों की गिरफ्तारियां भी हुईं.

३० मार्च '७४–जयप्रकाश जी ने महत्वपूर्ण बयान दिये-उन्होंने प्रशासन की दमन नीति का कड़ा विरोध किया तथा घोषणा की—

"मैंने भ्रष्टाचार और कुशासन, कालाबाजारी, मुनाफाखोरी और जमाखोरी के खिलाफ लड़ना तय किया है शिक्षा-व्यवस्था में पूर्ण परिवर्तन और लोगों के सच्चे लोकतन्त्र के लिए संघर्ष करना तय किया है"

घोषित कार्यक्रम के अनुसार प्रदेश भर में छात्रों द्वारा १२ घंटे के अनशन का कार्यक्रम प्रारंभ हुआ. इस कार्यक्रम में हर तबके के लोगों ने भाग लिया और यह काफी दिनों तक चलता रहा

५ अप्रैल '७४–काला दिवस मनाया गया. पटना में महिलाओं ने एक प्रभावकारी जुलूस निकाला

८ अप्रैल '७४–पटना में जे० पी० ने ऐतिहासिक मौन जुलूस का नेतृत्व किया. इस जुलूस ने आंदोलन के चरित्र में महान अंतर ला दिया.

९ अप्रैल '७४–पटना के गांधी मैदान में एक विशाल आम सभा को संबोधित करते हुए जयप्रकाश जी ने कहा कि अब वे चुपचाप देखते नहीं रहेंगे. उन्होंने नैतिक क्रांति का आह्वान किया. छात्रों ने जयप्रकाश जी को लोकनायक की उपाधि दी.

सरकार ठप का कार्यक्रम शुरू हुआ. सचिवालय पर धरना देने को जाते हुए छात्र शहीद पार्क के पास गिरफ्तार.

१० अप्रैल '७४–चार विरोधी दलों द्वारा आंदोलन के समर्थन की घोषणा.

१२ अप्रैल '७४–सरकार ठप अभियान के दौरान गया में पुलिस ने जुलूस पर गोली चलायी इसके बाद गया में क्रूर दमन का दौर चला.

१६ अप्रैल '७४–गया की आम सभा में जयप्रकाश जी ने विधान सभा के विघटन की मांग का समर्थन किया

१९ अप्रैल '७४—जयप्रकाश जी ने बयान देते हुए जोर देकर कहा कि मंत्रिमंडल को इस्तीफा देना चाहिए तथा विधान सभा का विघटन होना चाहिए

२० अप्रैल '७४–जयप्रकाश जी ने विपक्षी दलों से अपील की कि वे इस आंदोलन में निर्दलीय भूमिका के साथ ही काम करें.

२३ अप्रैल '७४–जयप्रकाश जी ने पांच सप्ताह के कार्यक्रमों की घोषणा की तथा अपनी पीत्त ग्रंथि का आपरेशन करवाने वेलूर रवाना हुए.

३० अप्रैल '७४–बिहार की जनता ने १२ घंटे का उपवास रखा तथा विभिन्न स्थानों पर सभाओं में आंदोलन का समर्थन देने का संकल्प लिया

८ मई '७४–स० सो० पा० के छ विधायकों ने आंदोलन के समर्थन में विधान सभा से त्यागपत्र दिया

९ मई '७४–जनसंघ के ९ विधायकों ने विधान सभा से त्यागपत्र दिया.

(शेष पृष्ठ २० पर)

क्रांति की सजा : ४ नवंबर '७४ को लाठी की चोट से गिरे जयप्रकाश जी. (दायें) उठने के बाद एक खाट पर बैठकर पत्रकारों से बातचीत.

हरित क्रांति और सूखे खेत

उस दिन ५ फरवरी '७५ को सिघप कैला धरही पोखर (डाकलदनिया, जि० मधुबनी) पर शोरगुल हो रहा था. मैं भी उसी रास्ते से जा रहा था. सुबह का समय था. कुछ क्षण मैं वहा रुका. देखा कुछ किसान भय से थर-थर कांप रहे थे. उनके दोनों हाथ जुड़े हुए थे. वे विनम्र स्वर से नायक जी की लाल आंखों और फटकारों का जवाब दे रहे थे, 'बाबू साहब, इसी थोड़ी-सी जमीन से सारे परिवार का जीवन-बसर करता हू. हमारे बाप-दादे भी इसी पोखर से सिचाई करते आ रहे हैं. मैं भी गत पांच वर्षों से इसी पोखर के कारण काफी फसल लेता आ रहा हू. किसी ने तो कभी पूछ नहीं की! सोचिये बाबू साहब, जब भूख और प्यास से मेरे बच्चे दाने-दाने के लिए तड़पेंगे तो क्या इन आंखों से आपको देखा जायेगा? कितनी परेशानी के बाद, पत्नी के गहने बन्धक रखकर बीज खरीद सका हू. दस दिन तक दौड़ते-दौड़ते पैर म छाले पड़ गये तब कहीं प्रखड विकास पदाधिकारी के कार्यालय से ऋण मे खाद लिया. यदि फसल मारी गयी तो यह सब कहां से अदा करूगा'.

'मैं यह सब कुछ सुनना नहीं चाहता'. नायक जी के स्वर और तेज हो उठे, 'तुमलोगों को यह मालूम नहीं कि इसी साल यह पोखर मैंने बदोबस्त करवाया है.... 'कहा गया जी' उनका इशारा अपने नौकर की ओर था, 'गिरा दो करीन को.'

आज्ञा मिलने भर की देर थी - किसानों के करीन गिर गये. किसान अवाक दृष्टि से देखते रह गये. जाते समय नायक जी ने पुनः डांटा,' खबरदार, अगर फिर करीन खड़ा करने की कोशिश की तो.' मेरी आखें फसल की ओर गयी जो पोखर के चारो तरफ लगभग पचीस एकड़ जमीन मे लगी थी. पौधे पुष्ट और घने थे जो अधिकाश गाव के छोटे किसानों के थे. दाने गर्भ में भर आये थे. फूटने भर की देर थी. सिर्फ पानी का आस था.

उन किसानों को देखकर मेरी आत्मा मे भी चोट लगी. अब पानी कैसे मिलेगा? सोचता हुआ मैं जन संघर्ष समिति के सयोजक के घर पहुंचा और निर्णय किया कि इसी क्षण प्रखड विकास पदाधिकारी से आग्रह करूं. शायद कुछ सफलता मिल जाये. हजारा साहब से निवेदन भी किया. उन्होंने स्पष्ट उत्तर दिया कि बंदोबस्ती तो मैंने सरकारी आज्ञानुसार की है. मैंने कहा' ऐसा नही है कि पोखर में जो मखाना है उसके लिये कुछ पानी छोड़ कर शेष पानी से सिचाई कर लें?'. उन्होंने कहा,' 'यह मुझे मालूम नहीं. फिर कार्यालय मे इससे सबधित कोई कानूनी किताब भी नही जिसमे मैं कोई राय दे सकू'.

मुझे घोर आश्चर्य हुआ कि सरकार की हरित क्रांति अखबार के पन्नों या रेडियो के गीत में ही सीमित है अथवा धरती पर भी. जब सरकार के कृषि पदाधिकारी से लेकर जन सेवक तक जानते थे कि धरही पोखर के चारो तरफ पचीस एकड़ जमीन में प्रति वर्ष गेहूं की फसल लगाई जाती है तो फिर इस साल बंन्दोवस्त क्यो.

क्या हरित क्रान्ति सरकार की कोई पहेली या मजाक अथवा किसानों को परेशान करने के लिये कोई नयी साजिश है! कारण कुछ भी हो. जब हर तरफ से निराशा ही हाथ लगी, तब हमलोगों ने निर्णय किया कि अनिश्चित अनशन किया जाय. १४ फरवरी को छात्र और जन संघर्ष समिति के सदस्य सिघप कला गाव में अनशन पर बैठे. जैसे कोई चमत्कार हो हुआ. नायक जी स्वय आकर कहने लगे, 'किसानों को पानी देने में अब मुझे किसी प्रकार का एतराज नहीं है. आपलोग अनशन क्यों करते हैं!' उपवास टूटा. एक गमक से सारा कस्बा महक उठा.

—वैद्यनाथ भगत

गुलाब का फूल

गुलाब का फूल है
हमारा पढ़ा-लिखा
मैंने उसे काफी
उलट-पुलट कर देखा है
मुझे तो वह ऐसा ही दिखा
सबसे बड़ा सबूत
उसके गुलाब होने का यह है
कि वह गाव मे जाकर
बसने के लिए
तैयार नहीं है

गाव मे उसकी
प्रदर्शनी कौन करायेगा?
वहां वह अपनी शोभा की
प्रशसा किससे करायेगा?

वह फूलने के बाद
किसी फसल मे थोड़े ही
बदल जाता है!
मूरख किसान को फूलने के बाद
फसल देनेवाला ही भाता है.

गाव मे इसलिए ठीक हैं
अलसी और सरसों और
तिली के फूल
जा नहीं सकते वहां कदापि
गुलाब और लिली के फूल.

बुरा नहीं मानना चाहिए
इस गुलाब-वृत्ति का
गाववालों को.
क्योंकि वहां रहना चाहिए
सिर्फ ऐसे हाथ-पांववालों को
जो बो सकते हैं,
और काट सकते हैं
कुए खोद सकते हैं
खाई पाट सकते हैं
और फिर भी चुपचाप
समाजवाद पर भाषण सुनकर
वोट दे सकते हैं
गुलाब के फूल को
और फिर अपना सकते हैं
पूरे जोश के साथ अपनी उसी भूल को,
याने जुट जा सकते हैं जो
उगाने मे अलसी और
सरसों और तिली के फूल.
गुलाब और लिली के फूल
तो भाई यहीं शातिवन मे रहेंगे.
बुरा मानने की इसमें
कोई बात नहीं है
बीच-बीच मे यह प्रस्ताव
कि गुलाब वहां जाकर
चिकित्सा करे या पढ़ाये
पेश करते रहने मे हर्ज नहीं है
मगर साफ समझ लेना चाहिए
गुलाब का यह फर्ज नहीं है
कि गावों मे जाकर खिले
अलसी और सरसों वगैरा से हिले-मिले
और खोये अपना आपा
ढंक जाये वहां धूम से
सरापा,
और वक्त-बेवक्त
अपनी प्रदर्शनी न कराये.
मामीन, गुलाब पर ऐसा वक्त कभी न आये.

—भवानी प्रसाद मिश्र

जनता सरकार शुरू की सलाह

□ आचार्य राममूर्ति

मेरे एक मित्र मिलने आये . अपने आंदोलन के एक समर्थ और कर्मठ साथी हैं . इस वक्त पूरी शक्ति के साथ गांवों में जनता सरकार बनाने के काम में जुटे हुए हैं . उनके क्षेत्र में किस तरह काम चल रहा है यह बताते हुए उन्होंने कहा कि इस आंदोलन से एक खास बात यह हुई है कि युवकों की सामाजिक मान्यताएं तेजी के के साथ बदल रही हैं . मैंने उनसे पूछा तिलक-दहेज, पर्दा और – छुआछूत–ये तीन सबसे कठोर सामाजिक मान्यताएं हैं आपके ख्याल से इनमें से किस मान्यता को सबसे अधिक धक्का लगा है ?' वह बोले, "हमारे क्षेत्र के युवकों ने एक मजेदार काम शुरू किया है . गांव में घर-घर से वे खाने का सामान इकट्ठा करते हैं खाना हरिजन बनाते हैं, और गांव भर के लोग मिलकर खाते हैं इस तरह भोजभात द्वारा सवर्ण-अवर्ण के बीच की दीवाल ढहाई जा रही है ."

सम्मिलित भोजभात के कार्यक्रम की घोषणा लोकनायक श्री जयप्रकाश जी के द्वारा अभी तक नहीं हुई है, लेकिन एक क्षेत्र की जनता सरकार के लोगों ने अपने निर्णय से यह कार्यक्रम शुरू किया है . अच्छा कार्यक्रम है . जिसे समाज अछूत मानता है उसके हाथ का बनाया हुआ भोजन करना एक घोषणा जैसी है इस बात कि किसी को अछूत मानना एक ऐसा सामाजिक अन्याय है जिसका सम्पूर्ण क्रांति के आन्दोलनों में कोई स्थान नहीं है और जिसे जल्द-से जल्द मिट जाना चाहिए . ऐसे भोजभात से सामाजिक समता और सद्भावना बनाने में मदद मिलती है, यद्यपि समता लाने और विषमता मिटाने के लिए दूसरे कई काम भी करने पड़ेंगे . कोई कह सकता है कि खान-पान की छुआछूत मिटाने का काम तो होटल भी कर रहे हैं, फिर जनता सरकार ने विशेष क्या किया ? किसी काम को आन्दोलन के संदर्भ में निश्चय पूर्वक करने का जो असर होता है, वह होटल के प्रभाव से अधिक गहरा होता है .

इस वक्त बिहार के बीस-पचीस टोलों में जनता सरकार का काम सघन और पर हो रहा है . उनमें कोशिश हो रही है कि संगठन की जड़ें गांव तक पहुंचे और हर स्तर पर जनता सरकार जन-जीवन की समस्याओं का अपने ढंग से मुकाबिला करे जनता सरकार का अर्थ ही यह है कि वह जनता के संकल्प और जनता की बुद्धि से चले वह सरकार के कानून की मुहताज न रहे, बल्कि अपने दैनंदिन जीवन में सरकार का हस्तक्षेप न होने दे

जनता की शक्ति संगठन से ही प्रकट हो सकती है संगठन जल्द से-जल्द बने यह जरूरी है, लेकिन संगठन सही ढंग से बने यह उससे भी ज्यादा जरूरी है पद्धति 'जनता सरकार' नाम की पुस्तिका में बतायी गयी है कई जगहों में उस पद्धति के अनुसार काम हो रहा है, लेकिन कुछ जगहों में पद्धति पर ध्यान नहीं है . जहां सही ढंग से काम हो रहा है वहां अनुभव अच्छे आ रहे हैं, और यह साफ दिखायी दे रहा है जिस संगठन की जड़ गांव-गांव, टोले-टोले में नहीं पहुंचेगी वह शक्तिशाली नहीं होगा . हमें जनता के संगठन को इतना शक्तिशाली बनाना है कि एक ओर सरकार के दमन का मुकाबला कर सके और दूसरी ओर समाज की व्यवस्था बदल सके . हमें सरकार और समाज दोनों को बदलना है सम्पूर्ण क्रांति के लिए समाज और सरकार दोनों की शक्ति चाहिए संगठन के बारे में कुछ बातें, जिन पर बराबर ध्यान रखना चाहिए वे ये हैं

> ,"'अहिंसक समाज किसी अच्छे मुहूर्त में अचानक आसमान से नहीं टपक पड़ेगा, बल्कि जब हम सब मिलकर एक साथ अपनी मेहनत से एक-एक ईंट चुनते चलेंगे, तभी स्वराज्य की इमारत खड़ी हो सकेगी .'"
>
> —गांधी जी

(१) जनसंघर्ष समितियां हर टोले में बनायी जायें छोटे-से-छोटे टोला भी नहीं छूटना चाहिए .

(२) *यह जरूरी है कि टोलों की आम* सभा बुलाकर ही जनसंघर्ष समिति बनायी जाय. केवल दो चार लोगों को बुलाकर समिति बना लेने की जल्दी न की जाये समिति में सक्रिय लोग होंगे लेकिन उन्हें समर्थन सबका मिलना चाहिए

(३) एक पचायत के टोलों की जनसंघर्ष समितियां बन जाने पर ही पचायत की समिति बनायी जाये और पचायत समितियां बन जाने पर ही प्रखंड की इन सब समितियों में जैसा पुस्तिका में बताया गया है, हरिजन, बैकवर्ड मुसलमान, आदिवासी, महिला को प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए कोई यह न कहे कि जनता सरकार में भी उसे स्थान नहीं मिला

(४) जो महत्व जन संघर्ष समिति का है वही महत्व छात्र संघर्ष समिति का है प्रौढ साथी छात्रों के संगठन को कोई महत्व नहीं देते मन में यह गांठ नहीं रखना चाहिए हर पचायत, हर स्कूल, महाविद्यालय और विश्वविद्यालय में छात्र संघर्ष समिति बननी ही चाहिए . क्रांति की रेल में इंजन का काम छात्र और युवक कर रहे हैं . जन उसके डिब्बे हैं .

(५) जो छात्र पूरा समय देकर काम कर रहे हैं उनके पाकेट खर्च की व्यवस्था होनी चाहिए इसकी जिम्मेदारी स्थानीय जनता और छात्रों की है विद्यालय में पढ़नेवाले छात्र एक रुपया महिवार दें तथा गृहस्थ कुछ अन्न दें. इन दोनों को मिलाकर इतना धन इकट्ठा हो सकता है कि हर प्रखंड में कई पूरे समय के कार्यकर्ताओं का काम चल जाये . पचास छात्र अपने एक-एक रुपये से एक साथी को पचास रुपये महिवार दे सकते हैं . अपनी क्रांति के लिए उन्हें इतना तो करना ही चाहिए .

(६) जनता सरकार को चाहिए कि बनते ही जन-जीवन के सवालों को हाथ में ले . वह कोई भी सवाल हाथ में ले सकती

(शेष पृष्ठ १८ पर)

आँखों देखी

चंडी की जनता सरकार

□ अशोक कुमार

२८ पंचायतों तथा लगभग ३६५ गावों का प्रशासनिक तथा राजनैतिक केंद्रबिंदु है एक कस्बा चंडी, जहा प्रखंड तथा अंचल के कार्यालय हैं. पटना से करीब ५० किलोमीटर पूर्व स्थित इस कस्बे के डाकघर के ठीक सामने सड़क के किनारे वाला बोर्ड है जिसका नाम 'भ्रष्टाचार निरोध पट्ट' है इस ओर चट ध्यान आकर्षित होता है और यहीं पर छात्र संघर्ष समिति का कार्यालय है जो आजकल चहल-पहल का केंद्रबिंदु बन गया है. भ्रष्टाचार निरोधपट्ट के ऊपर 'जनता सरकार, चंडी' लिखा है जो यह बताने के लिए पर्याप्त है कि यहा जनता सरकार बन चुकी है.

जनता सरकार कैसे बनी

संघर्ष समितियो के गठन की शुरुआत पंचायतों से की गयी. २८ में से १८ पंचायतों में जब छात्र एवं जन संघर्ष समितियों का गठन हो गया तो १० फरवरी '७५ को इन पंचायतों के प्रतिनिधियों तथा सदस्यों की, जिनकी संख्या बैठक में लगभग डेढ़ सौ थी, बैठक हुई तथा सबने चंडी प्रखंड में जनता सरकार की घोषणा करने का निर्णय लिया. इसी बैठक में सर्वसम्मति से संयोजक तथा कोषाध्यक्ष का चुनाव हुआ. संयोजक चुने गये हरिजन युवक छात्र श्री अरुण कुमार चौधरी तथा कोषाध्यक्ष चुने गये जन संघर्ष समिति के एक सक्रिय कार्यकर्ता श्री उमेंद्र प्रसाद. धन संग्रह के लिए तीन सदस्यों की एक कमिटी बनी. इस संबंध में उल्लेखनीय बात यह है कि आंदोलन की शुरुआत से यहा कूपन का उपयोग नहीं किया गया बल्कि स्थानीय रसीदों से ही चंदा एकत्रित किया जाता रहा. बैठकों में आय-व्यय का ब्योरा सुना दिया जाता था उक्त बैठक में सोलह सदस्यों की एक सलाहकार समिति भी बनी कार्यक्रमों के संबंध में निर्णय लेने का अधिकार इस समिति को सौंपा गया बैठक में यह भी तय किया गया कि २१ फरवरी को जनता सरकार की विधिवत् घोषणा कर दी जायेगी.

२१ फरवरी '७५ को चंडी में एक आमसभा का आयोजन किया गया. लगभग १२,००० लोगों के बीच चंडी प्रखंड में जनता सरकार के गठन की विधिवत् घोषणा की गयी.

२४ फरवरी '७५ को जनता सरकार की ओर से भ्रष्टाचार निरोध पट्ट लगाया गया

जनता सरकार की बैठकें

२१ फरवरी से अब तक जनता सरकार के संबंध में कार्यकर्ताओं की दो तीन बैठकें हो चुकी हैं.

२७ फरवरी की बैठक में संयोजक ने भाग लिया था तथा निम्नलिखित समस्याओं पर विचार किया गया

- प्रखंड के अंतर्गत लगभग नब्बे प्रतिशत चापाकल बेकार पड़े हैं गर्मी के मौसम में पानी की समस्या विकट हो जायेगी. जन. सरकार पर इन चापाकलों की मरम्मत के लिए दबाव डाला जाये.
- बरसात के पहले मिट्टी की योजनाएँ सरकार ले तथा इसमें शिक्षित बेरोजगारों को प्राथमिकता दी जाये.
- अधिकारियों को जनता सरकार तथा जनता की समस्याओं के संबंध में ज्ञापन दिया जाये

जनता अदालत की घोषणा नहीं की गयी है पर निकट भविष्य में कुछ पंचायतों में इसकी घोषणा की जायेगी

कार्यकर्ताओं ने संगठन के लिए चार टोलिया बनायी हैं जिनमें कुल बत्तीस सक्रिय कार्यकर्ता हैं ये लोग शेष पंचायतों में संगठन के काम में लगे हैं प्रतिदिन शाम को ये लोग अपने क्षेत्रों से लौटते हैं. चंडी की छात्र संघर्ष समिति के कार्यालय में मिलते हैं तथा अपने अनुभवों एवं कार्यों के संबंध में बातचीत करते हैं.

छोटा कार्यालय

कार्यालय है यहा के एक सक्रिय तथा योग्य कार्यकर्ता वीरेंद्र कुमार सिंह के कमरे में. एक छोटा-सा कमरा, जमीन पर बिछी दरी, कोने में पुरानी अलमारी जिसमें एक-दो कापियां तथा रजिस्टर, एक ओर बेंच, एक-दो कुर्सियां, एक टेबुल—ये सब मिलाकर जनता सरकार के कार्यालय का चित्र पूरा करते हैं. विभिन्न गांवों से आये फरियादी यहीं आते हैं और अक्सर शाम को कार्यकर्तागण यहा पर बैठकर विचार-विमर्श किया करते हैं. इस कार्यालय में गोकुल जी, जो मैट्रिक पास करके अब टाइपिंग सीख रहे हैं, सुबह से शाम तक रहते हैं तथा लोगों के काम में मदद किया करते हैं.

जनता सरकार के कार्य

प्रतिदिन औसतन तीन चार गावों से लोग प्रखंड या अंचल कार्यालय में अपना काम करवाने आते हैं किसी को दाखिल-खारिज का काम है, किसी को आय प्रमाण-पत्र, जाति-प्रमाण पत्र लेना है, किसी को परमिट बनवाना

जनता सरकार के सघन क्षेत्र

जनता सरकार कई जगहों चल रही है और अधिकांश जगहों पर बन रही रही है. हमारे पास जो जानकारी आयी है उसके अनुसार निम्न क्षेत्रों में जनता सरकार की दृष्टि से सघन काम चल रहा है :

पूर्णियां-रुपौली, भवानीपुर. सहरसा-राघोपुर. समस्तीपुर-वारिसनगर. मुजफ्फरपुर—मुसहरी, मुरौल, कुढ़नी. मधुबनी-घोघरडीहा. दरभंगा. हायाघाट. सारण- कुमना. वैशाली-वैशाली. रोहतास-चांद, नवादा-कौआकोल, पकरीबरावां. नालंदा-चंडी, परवलपुर, नूरसराय. गया-मोहनपुर, बोधगया, बाराचट्टी, जहानाबाद. मुंगेर-शाखा, चकई. सूर्यगढ़ा. भागलपुर-बेहपुर.

जनता का आरोप पत्र

(पृष्ठ ५ से आगे)

हमारा आरोप है कि जब हम लोग आपके पास अपना निर्णय सुनाने के लिए आना चाहते थे, तब आपकी सरकार ने उसमें नानाविधि विघ्न डाले. रेलगाड़ियाँ रद्द की गईं, जहाज बंद किये गये; बसें और ट्रकें रोक दी गईं, आपकी रक्षा करने के बहाने राजधानी के इर्दगिर्द मीलों दूर तक बांस, बल्ले और तारों के घेरे लगाये गये तथा हजारों स्थानों पर सशस्त्र सेना तैनात की गयी. शांतिपूर्वक आनेवाले लोगों पर अश्रुगैस के गोले फेंके गये और लाठियों की झड़ी बरसायी गयी. आप जिस जनता के प्रतिनिधि बनने का दावा करते थे, उसी के साथ आपने दुश्मन-सा व्यवहार किया. हमें रोकने के लिए आपने स्थल, जल और नभ से सशस्त्र सैनिकों का उपयोग किया.

हमारा आरोप है कि आपने हमारे और अपने-आपके बीच दमन और अत्याचारों की दीवार खड़ी कर दी. २९ स्थानों पर आपकी सरकार ने गोली कांड कराये जिनके फलस्वरूप एक सौ से अधिक मा के लाल शहीद हुए. कितने ही मासूम बच्चे, किशोर और तरुण लाठी, संगीन और गोली के शिकार बन कर सदा के लिये विकलांग हो गये, हजारों लोगों पर आपके शासन तथा न्यायालयों ने, जो आम तौर पर शासन के ही इशारों पर चलते थे, झूठे और बेतुके इल्जाम लगाये, हजारों हजार लोगों ने आपके कारण कारावास का कष्ट सहन किया और आज भी कर रहे हैं, जेलों में उन्हें राजनीतिक कैदियों की मान्यता देना तो दूर रहा, जगह-जगह उन पर बर्बरतापूर्ण अत्याचार किये गये, अनेक स्थानों पर आंदोलन के समर्थकों तथा उनके परिवारों पर अग्निकांड और कुक्रिया की गयीं.

हमारा आरोप है कि आप लोकतंत्र की दुहाई देते हुए भी खुद 'तंत्र' में चिपके रहे हैं और 'लोक' को भूल गये हैं. जिस तंत्र में आप चिपके हुए हैं, उन पर भी आप का विश्वास नहीं रह गया है. जनता के आंदोलन को कुचलने के लिये आपको सेना बाहर से बुलानी पड़ती है, हकीकत यह है कि यदि आप अपने प्रादेशिक तंत्र की ताकत पर खड़े होते तो आपकी यह विधान सभा विघटित हो चुकी होती. किंतु आप केंद्रीय शासन की प्राणवायु से अपनी सांस बचाए हुए हैं. बिहार के बाहर की जनता इस बात से अनजान नहीं है. आज से बारह दिन पहले देश की राजधानी दिल्ली में जो विराट प्रदर्शन हुआ वह इसी बात का साक्षी है.

हमारा आरोप है कि इस प्रकार के दमनशील, किन्तु अक्षम और लचर तंत्र से आप जनता की गाढ़ी कमाई के बल पर चिपके हुए हैं. महंगाई, भ्रष्टाचार, बेरोजगारी आदि रोगों का निवारण तो दूर रहा, अपने रहने के लिये आपने जो आडंबर रचा है और उस पर जो करोड़ों रुपये खर्च किये हैं, उससे समाज-जीवन में व्याप्त ये बीमारियाँ उत्तरोत्तर बढ़ ही रही हैं.

जनता की आवाज को सुनकर बिहार विधान सभा के ४२ सदस्यों ने त्याग पत्र दे दिया है. उनके इस त्याग का धन्यवादपूर्वक आदर करते हैं. किंतु अन्य सदस्य जो अभी तक विधान सभा से चिपके हुए हैं, यह सिद्ध कर रहे हैं कि उनकी नजरों में जनता की सेवा की अपेक्षा उनका अपना स्वार्थ, वेतन और भत्ते अधिक महत्वपूर्ण हैं.

हम बिहार के नागरिक यह घोषणा करना चाहते हैं कि भारत के संविधान के अनुसार राष्ट्र की सर्वोपरि सत्ता लोक में निहित है. विधायक और मंत्री लोक के नुमाइंदे और नौकर हैं. मालिक जब चाहे नौकर को हटा सकता है. उसी प्रकार लोक जब चाहे अपने नुमाइंदों और नौकरों को तत्काल हटाने का उसको जन्मसिद्ध अधिकार है. इसी अधिकार के बल पर हम यह घोषणा करते हैं कि बिहार की विधान सभा अब जनता द्वारा मान्य नहीं रह गई, उसे विघटित माना जाय और जल्द से जल्द नये चुनाव द्वारा नयी विधान सभा स्थापित की जाय.

तुम प्रतिनिधि नहीं रहे हमारे कुर्सी-गद्दी छोड़ दो
विधायको, इस्तीफा दो, मंत्रियो, इस्तीफा दो.

पटना
१८ मार्च १९७५

जनता सरकार....

(पृष्ठ १५ से आगे)

है, लेकिन दो सवाल उसे जल्द से-जल्द हल करने की कोशिश करनी चाहिए. पहला सवाल यह है कि गांव का कोई झगड़ा पुलिस अदालत में न जाने पाये. झगड़ा आपसी तौर पर हल कर लिया जाये. जो मामले पहिले से अदालत में जा चुके हैं उन्हें वहां से वापस लेकर पंच-फैसले द्वारा तय कर लिया जाये. इस काम से, चारों ओर सद्भावना फैलेगी और जनता सरकार में लोगों की श्रद्धा बढ़ेगी. दूसरा सवाल है कि भूमिहीनों के लिए वासगीत की भूमिका. जनता सरकार की जिम्मेदारी है कि उसके क्षेत्र में कोई भी भूमिहीन न रह जाये जिसे वासगीत का पर्चा न मिल जाये, और पर्चा मिल जाने के बाद रसीद न कट जाये. इस काम के लिए कर्मचारी और दूसरे अधिकारियों पर शांतिपूर्ण दबाव भर डाला जा सकता है. संघर्ष समितियां यह भी कर सकती हैं कि गांव की राय से, आम सभा बुलाकर, वासगीत का पर्चा अपनी ओर से बांट दें. और अंचल अधिकारी को सूचना दे दें.

७. ये दो काम हफ्ता-दस दिन के भीतर करने का है. उसके बाद गांव-गांव में पानी, रोजगार, मजदूरी और बंटाई आदि के सवाल उठाये जा सकते हैं. और मालिक मजदूर आपस में चर्चा करके समाधान का रास्ता निकाल सकते हैं.

८. सरकारी अधिकारियों की ओर से होनेवाले अन्याय का प्रतिकार अवश्य होना चाहिए. संघर्ष और प्रतिकार का कार्यक्रम जनता सरकार का पहला उत्तर-दायित्व है.

९. जनता सरकार में सत्याग्रह की बात तभी सोचनी चाहिए जब आपसी चर्चा और मेल का उपाय व्यर्थ हो जाये. गांव के जीवन में आग्रह से कहीं अधिक धैर्य और सद्भावना से काम लेने की जरूरत है. न्याय को न छोड़ते हुए भी गांव में सद्भावना और एकता बनाये रखने की पूरी कोशिश करनी चाहिए.

१०. जहां जनता सरकार गठित हो जाये वहां छात्र युवा संघर्ष वाहिनी बनाने में देर नहीं करनी चाहिए. जनता सर-कार के लिए एक ओर युवक का पुरुषार्थ चाहिए, दूसरी ओर वृद्ध का आशीर्वाद. दोनों प्राप्त करने का प्रयत्न हो.

अगर हम इन बातों का ध्यान रखेंगे तो जनता सरकार की बुनियाद सही पड़ेगी. □

'....सत्य जो है वो रुकनेवाला तो नहीं है !' —जयप्रकाश नारायण

चाहे सी० आर० पी० हो चाहे और कोई हो आप सबके सामने ये प्रश्न है, जिन प्रश्नों के खिलाफ बिहार के छात्रों ने और उनके पीछे-पीछे बिहार की जनता ने ये लड़ाई छेड़ी है . ये बिहार का प्रश्न नहीं है, सारे देश का प्रश्न है . आज बिहार मे हो रहा है, कल उत्तर प्रदेश मे होगा, परसो बंगाल मे होगा, महाराष्ट्र मे होगा सब तरफ चिंगारियां उड़ रही हैं, फैल रही हैं, इसलिये आपसे निवेदन है कि हुक्म तो मानिये, लेकिन किसी ने ये हुक्म दिया है किसी कानून की किताब मे ये लिखा हुआ है कि जिनको आपने कैद करके जेल मे डाल दिया है वो अगर कानून भी कोई तोड़ते हैं तो उनकी हड्डी तोड़ देने का कोई नियम कानून बना हुआ है ? किस जेल मैनुअल मे है, किस पुलिस मैनुअल म है ? तो बर्बर सरकार है और बर्बर आप लोग हैं जो ऐसा करते हैं ! इसान नहीं, आदमी नहीं, शर्म नहीं आती है आपलोगो को ! वर्दी लेकर हिंदुस्तान को घूम रहे हैं . कौन देता है पैसा आपको ? किसका दाना खाते हो ? अमेरिका से मगाते हो कि इंदिरा जी के घर म पैदा होता है, कि कपूर साहब के घर में पैदा होता है ? जनता के पसीनों की कमाई है जिस पर, आप पल रहे हो, और उसी जनता पर, उसी जनता के बच्चो पर ये बर्बरता करोगे ?

● सीवान टाउन थाना मे पीटे गये चार युवको मे से एक अरुण कुमार की पीठ, जो पिटाई के काले दागों से भरी है

आपके पास गोली है तो मार दीजिये जयप्रकाश नारायण का सर फोड़ दीजिये, लेकिन सत्य जो है वो रुकनेवाला तो नही है . शरम आनी चाहिये आपको ! आखिर क्या गुनाह है बताइये तो ? ये आन्दोलन शुरू हुआ भ्रष्टाचार मिटाओ महगाई, बेरोजगारी खत्म करो, शिक्षा में आमूल परिवर्तन करो. भ्रष्टाचार खत्म हो जायेगा महगाई खत्म हो जायगी, भ्रष्टाचार खत्म हो जायेगा तो आपका नुकसान हो जायेगा ? मैं उन अफसरो से पूछता हू, उन पुलिस के एस० पी० लोगो से पूछता हू जिन्होंने खुद लाठियां चलायी हैं, डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट और एस० पी० लोगों से पूछता हू पेट काटकर आपने बेटे को पढ़ा दिया पढ़ाई ऐसी निकम्मी है कि दर दर नौकरी के लिये ठोकरें खानी पड़ती है फिर भी नौकरी नही मिलती है . बेरोजगारी को फौज मे भर्ती होना पड़ता है इसलिये ये आपका भी आन्दोलन है आपकी भी सहानुभूति होनी चाहिये आपकी हमदर्दी होना चाहिये

आप मानिये हुक्म लेकिन जैसा गांधी जी ने कहा था वही हुक्म आप मानिये जो आपकी आत्मा कहती है कि ये ठीक है . अनुचित आपको आदेश मिलता है, वो आदेश हर्गिज न मानिये आप अनुचित काम मत कीजिये ।

कश्मीर से... (पृष्ठ ७ से आगे)

उसके नीचे कितने प्रतिशत भारत की गरीब जनता आती है, तो उन्होंने बताया था कि ६० से ६६ प्रतिशत तक लोग इसमे आते हैं. २७ वर्षो मे कांग्रेस ने देश को ऐसी स्थिति मे पहुचा दिया है . अगर इस प्रकार की परिस्थितियां दुनिया के किसी और देश मे पैदा हुई होती, इतने पढ़े लिखे लोगों को बेकारी होती, इतनी भुखमरी होती, शासन मे इतना भ्रष्टाचार होता, तो वहां विद्रोह की ज्वाला फूट पड़ती हिंसा की आग समाज को लपक लेती .

६ अप्रैल, जो इस देश के इतिहास मे एक बड़ा ही महत्व का दिन है, रोलैट ऐक्ट के विरोध म राष्ट्रीय दिवस के रूप में मनाया गया था . हमारे देश मे अभी भी इमर्जेंसी की घोषणा है, भारत मे आपातकालीन परिस्थिति है . ऐसी घोषणा तब होती है जबकि युद्ध की परिस्थिति हो, जब बाहर से आक्रमण होता हो या आंतरिक विद्रोह हो हिंसा पूरी तरह से समाज मे फैलती हो तभी इसका औचित्य होता है देश मे लड़ाई के समय आपातकालीन स्थिति की घोषणा की गयी थी लेकिन वह अभी भी जारी है . तो ६ अप्रैल को सारे देश मे, भारत के कस्बे-कस्बे मे, गाव-गाव, नगर-नगर, शहर शहर मे सभायें की जायेंगी —इमरजेंसी वापस लो—इसकी माग की जायेगी . क्योंकि जब तक यह परिस्थिति है, यह डर लोकसभा आपके सामने है, भारत का विधान कहता है कि जबतक यह परिस्थिति है तबतक चुनाव के पांच वर्षों के बाद भी लोकसभा का चुनाव नहीं किया जा सकता . इस परिस्थिति मे जब तक चाहें, प्रधानमंत्री लोकसभा का चुनाव टाल सकती हैं . भारत की जनता का जन्मसिद्ध अधिकार—चुनने का अधिकार—वे इस परिस्थिति मे नही रख सकता इसलिये इसको वापस लेने की माग की जाये .

बोट क्लब के मैदान मे गूजती जय प्रकाश नारायण की आवाज के माध्यम मे वहां उपस्थित लाखों-लाख लोग बोल रहे थे इस प्रदर्शन मे सब शामिल थे—हर धर्म, जाति, आयु भाषा के लोग थे . विभिन्न मतवादो वाले राजनीतिक दलो के लोग थे पर सब एक साथ चल रहे थे कश्मीर से कन्याकुमारी तक वहां मौजूद था और अलग-अलग भाषा मे एक ही नारा लग रहा था—बिहार विधान सभा भग करो, भग करो आजाद भारत मे पहली-पहली बार एक माग लेकर सारा देश इकट्ठा हुआ था मध्यप्रदेश कह रहा था 'इंदिरा की सरकार जालिम नहीं चाहिए' तो तमिलनाडु कह रहा था 'बिहार वदिल्ल प्रसल्नै कर्नैनादकम (बिहार का रास्ता ही समस्याओं का हल है)'

दिल्ली-प्रदर्शन सत्याग्रह के विरुद्ध बगावत का शखनाद था . दूसरे प्रांतों में टकराकर प्रतिध्वनि आ रही है . ❑

तिथियां और घटनाएं

(पृष्ठ १३ से आगे)

११ मई '७४–पटना की महिलाओं ने आकाशवाणी के सामने प्रदर्शन किया।

१ जून'७४- जे० पी० वेलूर से पटना वापस.

३ जून '७४–सी० पी० आई० की ओर से विधान सभा के विघटन के विरोध में जुलूस निकाला गया।

५ जून '७४—प्रशासन की ओर से तमाम अवरोधों के बावजूद लोग पूरे बिहार से विधान सभा विघटन के पक्ष में अपने-अपने क्षेत्र के हस्ताक्षरों के साथ पटना पहुंचे, अपनी मांगों के समर्थन में जुलूस में भाग लेने। लगभग ३ बजे शाम को निकाले गये अभूतपूर्व जुलूस का नेतृत्व किया जे० पी० ने। राज्यपाल को हस्ताक्षरों के बंडल देने के बाद जुलूस समाप्त हुआ।

शाम को करीब ४ लाख लोगों के बीच गांधी मैदान में जे० पी० ने संपूर्ण क्रांति का आह्वान किया, आगे के कार्यक्रम भी उन्होंने दिये। छात्रों से एक साल के लिए कालेज का बहिष्कार कर देश सेवा में लगने की अपील की।

७ जून '७४—विधान सभा के दरवाजों पर धरना आरंभ हुआ। पहले दिन ५२ सत्याग्रहियों ने गिरफ्तारी दी।

२२-२३ जून '७४–इलाहाबाद में अखिल भारतीय युवा सम्मेलन हुआ जिसमें देश में बिहार आंदोलन की तरह आंदोलन की आवश्यकता पर चर्चा हुई।

२ जुलाई '७४–पटना के फुलवारीशरीफ जेल में गिरफ्तार सत्याग्रहियों की बर्बर पिटाई की गई।

६ जुलाई '७४–पटना में उक्त हिंसा के विरोध में एक जुलूस निकाला गया। मुजफ्फरपुर में छात्रों ने इंटर की परीक्षाएं स्थगित रखने के पक्ष में प्रदर्शन किया। पुलिस द्वारा लाठी चार्ज किया गया। कुछ आंदोलन-विरोधी तत्वों द्वारा लंगट सिंह कालेज में आग लगायी गयी।

१२ जुलाई '७४–विधान सभा के सामने धरना का कार्यक्रम समाप्त हुआ। २६ दिनों के इस कार्यक्रम में ३४०७ सत्याग्रहियों ने गिरफ्तारी दी। अगले कार्यक्रमों की घोषणा की गयी।

१८ जुलाई '७४–बिहार के विभिन्न विश्व विद्यालयों में परीक्षाएं आरंभ हुई। प्रशासन की ओर से तमाम कोशिशों के बाद भी परीक्षाओं में उपस्थिति बहुत ही कम रही।

जमशेदपुर तथा बेगूसराय में पुलिस ने छात्रों पर गोलियां चलाईं।

२५ जुलाई '७४–पटना मेडिकल कालेज के छात्र भी आंदोलन में शरीक हुए।

२८ जुलाई '७४–जमशेदपुर की आम सभा में जे० पी० ने असहयोगी छात्रों के लिए खुले विश्वविद्यालय की स्थापना का विचार रखा।

३० जुलाई '७४–मेडिकल के छात्रों ने चेचक के टीके लगाने का काम प्रारंभ किया। १३ अगस्त तक इन लोगों ने लगभग ३६ हजार लोगों को टीका लगाया।

१ अगस्त '७४–पूरे प्रांत में १२ घंटे का सामूहिक उपवास एवं संकल्प दिवस। पटना में बरसात में भीगते हुए हजारों लोगों ने जे० पी० का भाषण सुना तथा संपूर्ण क्रांति को आगे बढ़ाते रहने का संकल्प लिया।

४ अगस्त '७४–भागलपुर जेल में सत्याग्रहियों की पुलिस द्वारा बेरहमी से पिटाई। छात्रों ने जेल में भ्रष्टाचार के विरुद्ध आंदोलन छेड़ा था।

९ अगस्त '७४–फारबिसगंज में सरकार ठप अभियान के दौरान जुलूस का नेतृत्व करते हुए प्रसिद्ध साहित्यकार फणीश्वरनाथ 'रेणु' गिरफ्तार किये गये। 'क्रांति दिवस' के रूप में यह दिन मनाया गया।

१५ अगस्त '७४–प्रदेश भर में समानांतर स्वतंत्रता दिवस जनता ने मनाया तथा सरकारी आयोजनों का बहिष्कार किया। जगह जगह सरकार की ओर से लाठियां चलाई गईं।

१६ अगस्त '७४–बेगूसराय के मझौल गांव में पुलिस ने परीक्षा बहिष्कार कर रहे छात्रों पर गोलियां चलाईं। १४ वर्षीय छात्र शहीद हुआ।

२३ अगस्त '७४–काला दिवस, बारह घंटे का सामूहिक उपवास। पटना के गांधी मैदान में विशाल सभा को संबोधित करते हुए जे० पी० ने लोगों से आतंक को हृदय से मिटा देने की अपील की।

२९, ३० अगस्त '७४–पटना में राजनैतिक दलों के कार्यकर्ताओं के बीच जे० पी० का भाषण—"अगर आंतरिक प्रेरणा हुई तो अनिश्चितकालीन अनशन भी करूंगा।"

३१ अगस्त '७४–संचालन समिति तथा समन्वय समिति की बैठक में २ अक्तूबर से आंदोलन को तीव्रतर बनाने का निर्णय।

५ सितंबर '७४–सरकार ठप करो अभियान के अंतर्गत जहानाबाद के कुर्था प्रखंड कार्यालय पर धरना के क्रम में शोषित दल के नेता श्री जगदेव प्रसाद की मृत्यु पुलिस की गोली से हुई। बारह वर्षीय लक्ष्मण चौधरी भी गोली लगने के फलस्वरूप ६ दिनों बाद शहीद हो गया।

८ सितंबर '७४–पटना सिटी में जे० पी० ने एक विशाल जन सभा को संबोधित किया।

२१ सितंबर '७४–पूरे प्रांत में अनुमंडलों में मुख्यालयों पर प्रदर्शन के कार्यक्रम हुए।

सितंबर माह अक्तूबर के तीव्रतर संघर्ष की तैयारी में बीता।

२ अक्तूबर '७४—संकल्प दिवस' । पूरे प्रांत में जगह-जगह छोटी सभाएं की गयी जिनमें लोगों ने अधूरी आजादी को पूरा करने का संकल्प लिया.

३ अक्तूबर '७४—तीन दिन के संपूर्ण बिहार बंद का शुभारंभ. पहले दिन पूरा बिहार बंद रहा. दूकान, दफ्तर यातायात सभी बंद. पटना में जय-प्रकाश जी ने सचिवालय पर हजारों छात्रों, युवकों, पुरुषों, महिलाओं, बच्चों के साथ धरना दिया.

पूरे प्रांत में लगभग शांतिपूर्ण बंद रहा. सैकड़ों लोगों की गिरफ्तारियां हुईं. एकमा, मसरक, त्रिवेणीगंज आदि में पुलिस द्वारा गोली चलाई गई.

४ अक्तूबर '७४—दूसरे दिन भी संपूर्ण बिहार बंद. दूकान, दफ्तर, अदालत, यातायात, रेल सब ठप. रिक्शे शाम से चले.

पटना में सचिवालय पर धरना का नेतृत्व किया श्री मृत्युंजय प्रसाद ने.

५ अक्तूबर '७४—बंदी का अंतिम दिन. दोपहर में पटना सिटी में रेलवे लाइन पर धरना देते सत्याग्रहियों पर पुलिस ने लाठी चार्ज किया तथा गोली चलाई.

तीसरे दिन भी सचिवालय पर धरना तथा गिरफ्तारियां. पूरे प्रांत में तीसरे दिन की बंदी भी सफल.

६ अक्तूबर '७४—पटना के गांधी मैदान में ऐतिहासिक जन सभा को जे० पी० ने संबोधित किया.

दिल्ली में बिहार आंदोलन के समर्थन में एक विशाल जुलूस का नेतृत्व किया आचार्य कृपलानी ने.

७ अक्तूबर '७४—पटना में पटना सिटी गोली कांड के विरोध में रैली हुई.

सचिवालय के पूर्वी द्वार पर २४ घंटों के क्रमिक उपवास का प्रारंभ. सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष सिद्धराज ढड्ढा एवं १८ सत्याग्रही अनशन पर.

८ अक्तूबर' ७४—सचिवालय के सामने ८६ अनशनकारियों के साथ जे० पी० अनशन पर.

१० अक्तूबर '७४—पटना सिटी में जन-सभा को संबोधित करते हुए जे० पी० ने कहा कि अगर विधान सभा भंग नहीं की गई तो जनता सरकार और जन प्रतिनिधि सभा बनेगी.

११ अक्तूबर' ७४—जे० पी० ने विधान सभा के विघटन की अंतिम तिथि ३ नवंबर घोषित की.

१६ अक्तूबर '७४—जे० पी० ने लोगों से दशहरे के अवसर पर सादगी बरतने का आग्रह किया.

१८ अक्तूबर' ७४—सचिवालय के सामने क्रमिक उपवास की समाप्ति. कुल ३६६ पुरुषों, १३८ महिलाओं तथा लगभग १०० बच्चों ने इस कार्यक्रम में भाग लिया.

२६ अक्तूबर '७४—सर्वोदय नेता आचार्य राममूर्ति तथा ठाकुरदास बंग का बिहार से निष्कासन.

२८ अक्तूबर '७४—कांग्रेस अध्यक्ष को काला झंडा दिखाने के क्रम में उनकी गाड़ी से मासूम लड़का सिकंदर यादव कुचला गया.

२९ अक्तूबर '७४—हरियाणा में जयप्रकाश जी ने विशाल जुलूस का नेतृत्व किया.

१ नवंबर '७४—प्रधानमंत्री और जे० पी० के बीच दिल्ली में आंदोलन के संदर्भ में बातचीत. विधान सभा विघटन के सवाल पर असहमति.

२ नवंबर' ७४—पटना में सिकंदर यादव की मृत्यु पर काला दिवस मनाया गया. ४ नवंबर के प्रदर्शन के सिलसिले में प्रशासन की कारवाई तेज. मद्रासराय बाजू तथा बिहार में कुल मिलाकर लगभग २०० छात्र गिरफ्तार. पटना के क्रांतिकारी मैदान में तम्बुओं के नीचे विभिन्न जगहों से आकर ठहरे प्रदर्शनकारियों को पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया तथा तंबू आदि उखाड़ लिया.

३ नवंबर '७४—जे०पी० ने पूरे पटना शहर का दौरा किया तथा लोगों से ४ नवंबर के प्रदर्शन में भाग लेने की अपील की. प्रांतभर में गिरफ्तारियां हुईं. पटना आते हुए प्रदर्शनकारियों को रोका गया. बसें, रेलगाड़ियां बंद.

४ नवंबर '७४—तमाम अवरोधों के बावजूद लोग १० बजे पटना गांधी मैदान में इकट्ठे हुए. पुलिस ने लाठियां चलायीं पर जुलूस निकला जिसका जे० पी० ने नेतृत्व किया. रेडक्रॉस बिल्डिंग के पास जानकर लाठी चार्ज हुआ तथा अश्रु गैस के गोले गिराये गये. जे० पी० पर भी लाठी प्रहार. हजारों की गिरफ्तारी. प्रदर्शन पूर्णत: शांतिपूर्ण.

५ नवंबर '७४—जे० पी० के आह्वान पर पटना पूर्णत: बंद.

६ नवंबर' ७४—जे० पी० के आह्वान पर बिहार बंद.

८ नवंबर '७४—मरौढ़ा गोली कांड.

११ नवंबर' ७४—पटना में सी० पी० आई० द्वारा सशस्त्र जुलूस निकाला गया. सी० पी० आई० के लोगों ने कई छात्रों तथा लोगों को घायल कर दिया.

१६ नवंबर '७४—पटना में सत्ता कांग्रेस की ओर से जुलूस तथा सभा.

१८ नवंबर '७४—पटना के गांधी मैदान में अभूतपूर्व विशाल जन सभा. जे० पी० ने प्रधान मंत्री के चुनाव की चुनौती को स्वीकार किया है. उन्होंने कहा कि कांग्रेस किसी भी कीमत पर बिहार में सत्ता में नहीं आयेगी. संघर्ष पक्ष विजयी होगा.

प्रसिद्ध साहित्यकार फणीश्वरनाथ रेणु ने ४ नवंबर के प्रशासनिक बबरता के विरोध में सरकार को अपना 'पद्म श्री' अलंकरण तथा मासिक वृत्ति लौटायी. कवि नागार्जुन ने भी मासिक वृत्ति लौटाने की घोषणा की.

२३ नवंबर '७४—दिल्ली में अखिल भारतीय युवा सम्मेलन. उद्घाटन किया जे० पी० ने.

१ दिसंबर '७४—सोशलिस्ट नेता एस० एम० जोशी तथा सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष सिद्धराज ढड्ढा बिहार से निष्कासित किये गये. मुंगेर में जे० पी० द्वारा जनेऊ तोड़ो का आह्वान.

३ दिसंबर '७४—मैरवा (सिवान) में विधान सभा अध्यक्ष हरिनाथ मिश्र को काला झंडा दिखाने के क्रम में पुलिस तथा छात्रों के बीच संघर्ष में एक सिपाही मारा गया.

(शेष पृष्ठ ३९ पर)

परवलपुर की लोक – अदालत

आज सबसे कम न्याय जहां मिलता है उसे न्यायालय कहते हैं. वारदात कहीं होती है, वादी-प्रतिवादी कहीं होते हैं, वकील, और न्यायालय कहीं और. घटनाएं देखने-समझने न्यायालय नहीं आता है घटनाएं स्वयं चलकर न्यायालय आती हैं. आज की व्यवस्था में प्यासा कुएं के पास नहीं, कुंआ ही प्यासे के पास जा रहा है और दो मित्रों वाली उस कहानी की तरह पेड़ ही चलकर गवाही देने कोर्ट जाता है.

न्याय की अंतिम कुर्सी इतनी दूर है कि उस तक पहुंचने में ही वादी, प्रतिवादी की मुसीबत हो जाती है. एक नहीं अनेक उदाहरण है जिसमें हजारों एकड़ जमीन मुकदमे के कारण शनै-शनै बिक गयी और न्याय चाहनेवाले भिखमंगे की तरह भटकने लगे.

जबतक न्यायपालिका वहां नहीं जाती है जहां घटनाएं होती हैं, जब तक न्याय की भावना सार्वजनिक आकांक्षा का विषय नहीं बनती है तबतक न सही न्याय मिल सकता है और न गरीबों की पहुंच न्याय के दरवाजे तक हो सकती है.

इन सवालों का जवाब जनता अदालत की कल्पना में है. गांव-गांव, मुहल्ले-मुहल्ले में जनता अदालत बने. अपने झगड़ों का जनता अपने बीच फैसला करे तभी सही और सुलभ न्याय की कल्पना की जा सकती है.

इसी प्रकार की एक जन-अदालत नालंदा जिले के परवलपुर में चल रही है.

गांव परवलपुर

नवंबर '१९७४ में छात्र-जन-न्यायपालिका बनी और परवलपुर का कार्यालय क्षेत्रीय संघर्ष कार्यालय के रूप में मान्य हुआ.

परवलपुर से पांच प्रखंडों की सीमा आकर मिलती है. क्षेत्रीय संघर्ष कार्यालय में छात्र और जन दोनों हैं और आपस में खूब समझदारी है. नवंबर माह में तय हुआ कि पुलिस-अदालत मुक्ति में काम प्रारंभ किया जाये. गांवों में संघर्ष समितियों के निर्माण का काम प्रायः पूरा हो चुका है.

क्षेत्रीय कार्यालय ने अपने क्षेत्र की सभी समितियों को सूचित किया कि खून के मामले को छोड़कर अन्य सभी मामलों की संघर्ष समितियां स्वयं जांच करें और फैसला दें. कोई मामला यदि इतना पेचीदा सिद्ध हो कि संघर्ष समितियां उसे न निपटा सकें तो मामला क्षेत्रीय संघर्ष कार्यालय की न्यायपालिका के सामने पेश किया जाये. हर संघर्ष समिति के वरिष्ठ सदस्यों को मिलाकर न्यायपालिका बनी.

न्याय कैसे होता है

संघर्ष समिति के पास लिखित आवेदन के साथ मामला पेश होता है. न्यायपालिका आवेदन पर विचार करती है और फिर एक निश्चित दिन संघर्ष समिति के सब सदस्य लोग सार्वजनिक जगह पर इकट्ठे होते हैं. सबके सामने वादी प्रतिवादी का पक्ष रखा जाता है. दोनों घोषित करते हैं कि न्यायालय का फैसला अंतिम और मान्य होगा.

अब न्यायपालिका अलग-अलग लोगों को तहकीकात की जिम्मेवारी देती है. गांव में जाकर पूछताछ जांच पड़ताल करते हैं. फिर निश्चित दिन न्यायपालिका सार्वजनिक रूप से फैसले की घोषणा करती है.

अबतक संघर्ष समितियों ने [illegible] फैसले दिये हैं और क्षेत्रीय न्यायपालिका ने भी कई मामलों का निपटारा किया. गांव से कोई भी मुकदमा थाना में नहीं गया है.

व्यवस्थित कार्यालय

न्यायपालिका की बही में मुकदमे व्यवस्थित रूप से दर्ज हैं. सब मुकदमों पर पेशी की तारीख, न्यायपालिका की मुहर, गवाहों के हस्ताक्षर, न्यायाधीश का फैसला अंकित है. स्वशासन की शिक्षा कब, कितने दी इन गांववालों को? क्योंकि जिन्हें प्रशिक्षित ही किया गया है इस दिशा में कि वे अयोग्य, काहिल हैं उन में जगाएं आत्मसम्मान और जिम्मेवारी का यह एहसास बहुत असमंजस में डाल देता है.

मैंने पूछा मान लीजिये आपकी न्यायपालिका का फैसला मानने से कोई पक्ष इनकार कर दे तब?'

राज नारायण ने सोचकर कहा, 'दंड की कोई व्यवस्था तो हम सोचेंगे ही, पर ऐसी परिस्थिति क्यों आयेगी? अबतक हमने जितने फैसले दिये हैं उनसे पूरा गांव संतुष्ट हुआ है. गांव में बात होती है तो छिपी नहीं रहती है. दोषी तुरंत सामने आ जाता. थाना कचहरी की भाग-दौड़ से दोनों पक्ष बच जाते हैं. पुलिस आदि का सवाल नहीं है. फिर जो न्यायपालिका का फैसला नहीं मानेगा उसका गांव में रहना है या नहीं? फैसला मानने पर उसे हम बाध्य कर देंगे.'

लोक-अदालत का फैसला

पत्र नं० ४

बलिया बिगहा (भादुरा बिगहा) निवासी श्री कुंवर दास ने दिनांक २९.१.७५ को उसी गांव निवासी श्री कार्तिकमुन दास के विरुद्ध यह आरोप लगाया कि उन्हें श्री कार्तिकमुन दास ने दिनांक २८.१.७५ को पीटा. दोनों पक्षों एवं गवाहों के बयान संघर्ष समिति की न्यायपालिका ने ३०.१.७५ को लिए. बयानों को सुनने के बाद यह बात स्पष्ट हुई कि कुंवर दास ने [illegible] एवं छेड़छाड़ नहीं की. कार्तिकमुन दास ने पीटने का अपराध स्वयं कबूल किया. इस प्रकार उसने विधान को अपने हाथ में लेकर न्यायपालिका का अपमान किया और उसका यह अपराध समाज की व्यवस्था में अशांति उत्पन्न करनेवाला था.

अतः न्यायपालिका के सदस्यों ने सर्वसम्मति से श्री कुंवर दास एवं श्री कार्तिकमुन दास को क्रमशः तीन और पांच दिन सार्वजनिक काम के बदले श्रम करने का दंड दिया. या श्री कुंवर दास एवं श्री कार्तिकमुन दास को क्रमशः १२ रुपये (बारह रुपये) एवं २० रुपये (बीस रुपये) का आर्थिक दंड न्यायपालिका ने दिया.

और यह भी तय किया गया कि आगे से [illegible] पर ध्यान रखा गया है. श्री कार्तिकमुन दास जी [illegible] लिखकर गांव को सूचित करें. संघर्ष समिति को आदेश दिया गया कि श्री कुंवर दास का इलाज करावे.

ह०/दशरथ सिंह
छात्र एवं जन संघर्ष समिति,
क्षेत्रीय कार्यालय, परवलपुर ([illegible]).

फतुहा में आंदोलन

२३ मार्च' ७४ की शाम छात्रों द्वारा शोक सभा का आयोजन, १८ मार्च को पटना में जिस क्रूरता और बर्बरता का परिचय बिहार सरकार ने दिया था, उसके विरुद्ध किया गया.

मौन जुलूस

फिर दो अप्रैल आया. आतंक की स्थिति में ही छात्रों की एक बैठक सम्पन्न हुई। शहीदों के प्रति सम्मान प्रकट करने के लिए छात्रों ने दो मिनट का मौन रखा. इसी बैठक में छात्र-संघर्ष समिति का गठन किया गया. छात्रों ने ५ अप्रैल को अपनी मांगों के समर्थन में एक विशाल मौन जुलूस निकालने का निर्णय किया. ५ अप्रैल को फतुहा तथा खुसरूपुर छात्र संघर्ष समिति के संयुक्त तत्वाधान में एक विशाल मौन जुलूस निकाला गया. यह जुलूस प्रखंड कार्यालय तक गया तथा वहां ज्ञापन भी पेश किया गया. इस क्षेत्र के छात्रों का यह प्रथम सफल कार्यक्रम था.

अनशन का दूसरा दौर : अभूतपूर्व समर्थन

आंदोलन का दूसरा दौर प्रारंभ हुआ अध्येवार अनशन के कार्यक्रम से. शहर के मुख्य स्थलों तथा प्रखंड कार्यालय के समक्ष ३ अप्रैल' ७४ से ये कार्यक्रम चलाये गये, जो लगातार बीस दिनों तक चलते रहे और पूर्ण सफल रहे. इसमें स्थानीय लोगों का अभूतपूर्व समर्थन मिला.

प्राथमिक विद्यालय के छात्रों से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक के छात्र अनशन पर बैठे. ग्रामीण वातावरण के बावजूद महिलाएं एवं छात्राएं संग्राम में आगे आयीं और आंदोलन के समर्थन में अनशन पर बैठीं. छोटे-छोटे बच्चे भी अपने को अलग नहीं रख सके.

इस कार्यक्रम में लगभग २०० छात्रों ने भाग लिया तथा ५००० लोगों ने स्वेच्छा से आंदोलन के समर्थन में अपना हस्ताक्षर प्रदान किया.

आम जनता की राहत के लिए छात्रों ने रचनात्मक काम भी किये. छात्रों द्वारा सस्ते दर पर आटे की बिक्री प्रारंभ की गयी.

सरकार ठप करो एवं गिरफ्तारी

सरकारी काम ठप्प करो अभियान का प्रारंभ छात्रों ने अध्येवार धरना देकर किया.

इस क्रम में १८ अप्रैल को प्रखंड कार्यालय के समक्ष धरना देते हुए सारे छात्र गिरफ्तार कर के बांकीपुर केंद्रीय कारा भेज दिये गये. गिरफ्तार छात्रों में छात्र नेता अनिल कुमार वर्मा, सुरेन्द्र प्रसाद एवं देवव्रत प्रसाद भी सम्मिलित थे.

सत्याग्रहियों की गिरफ्तारी : विधायक का इस्तीफा

९, ११, १३, २७ जून तथा ३ एवं १२ जुलाई को विधान-सभा के विभिन्न गेटों पर भिन्न-भिन्न जत्थों का नेतृत्व करते हुये स्थानीय छात्र नेता तथा सक्रिय कार्यकर्ता सर्वश्री शशिकांत कुमार, देव कुमार सिंह, विद्यानंद प्रसाद, अरविंद कुमार आदि गिरफ्तार करके केंद्रीय जेल बक्सर, हजारीबाग एवं भागलपुर भेज दिये गये.

एक ओर सत्याग्रहियों की गिरफ्तारी चल रही थी तो दूसरी ओर तरुण शांति सेना के सदस्य कृष्णा प्रसाद एवं शशि भूषण जी के नेतृत्व में ग्रामीण क्षेत्र के उत्साही क्षेत्रों में तथा युवकों का जत्था प्रखंड के सुदूर देहाती क्षेत्रों में पद-भ्रमण करके 'कर न दो' की अपील को गाँव-गाँव में पहुंचा रहा था.

इस बीच स्थानीय विधायक कामेश्वर पासवान ने विधान सभा की सदस्यता से इस्तीफा दे दिया.

जमशेदपुर तथा बेगूसराय गोलीकांड के विरोध में २० जुलाई को प्रखंड भर के छात्रों की रैली तथा आम सभा आयोजित की गयी. इसमें हजारों की संख्या में विभिन्न उच्च विद्यालयों के छात्रों ने हिस्सा लिया.

२२ जुलाई को दमन विरोधी दिवस, फतुहा बंद का आयोजन करके मनाया गया जो पूर्ण सफल रहा.

अगस्त के तीन सफल कार्यक्रम

१,९ तथा १५ अगस्त को क्रमशः क्रांति दिवस, शहीद दिवस तथा स्वतंत्रता दिवस सफलतापूर्वक मनाया गया. १ अगस्त को काम ठप करो अभियान पुनः प्रारंभ किया गया तथा शराब की दुकानों को धरना देकर बंद करा दिया गया. ९ अगस्त को छात्रों द्वारा शहीद दिवस के अवसर पर शहीद स्तंभ स्थापित किया गया तथा स्कूली छात्रों ने कक्षा का बहिष्कार करके जुलूस निकाला. १५ अगस्त को सरकारी समारोहों का बहिष्कार किया गया तथा सरकारी कार्यालय के समक्ष प्रदर्शन कर के सरकार विरोधी नारे लगाये गये.

तीन दिन का अभूतपूर्व बंद

तीन दिन (३,४,५ अक्तूबर) के संपूर्ण बिहार बंद के कार्यक्रम में तीन दिनों तक दुकानें तथा निजी प्रतिष्ठान बंद रहे एवं सरकारी तथा गैर सरकारी कार्यालयों में दफ्तरों के ताले झूलते नजर आये. यातायात के सभी साधन ठप थे.

तीन दिन का अभूतपूर्व बंद स्थानीय पुलिस अधिकारियों को न भाया और इसका आक्रोश निकाला रायपुरा के अस्सी वर्ष के बूढ़े दुकानदार द्वारका साव को निःशब्द रात्रि में बेंत से पीट कर.

विशाल आम सभा

२० अक्तूबर को जे० पी० ने यहाँ एक विशाल आम सभा को संबोधित किया. जे० पी० को सुनने के लिए ४४ किलोमीटर की दूरी तय करके भी लोग इस्लामपुर वगैरह से आये. गाँव के मजदूरों, किसानों ने सभा में हाथ उठाकर आंदोलन को तीव्रतर करने का संकल्प लिया.

गोलीकांड में घायल तथा अपंग क्रांतिकारी मित्रों के सहायतार्थ १५५१/- रुपये की थैली जे० पी० को भेंट की गयी.

४ एवं ६ नवंबर की घटना

४ नवंबर को पटना चलने की तैयारी शुरू भी नहीं की गयी थी कि दमन का दौर पुनः चलने लगा. भूतपूर्व विधायक सहित

(शेष पृष्ठ ३८ पर)

वर्षगांठ का संदेश

गत १८ मार्च को बिहार आंदोलन के १२ महीने पूरे हुए. बिहार के छात्र और युवक इस आंदोलन मे अग्रणी रहे और वे किसी प्रकार के त्याग और बलिदान से पीछे नहीं हटे. मै इस पर उन सबको हृदय से बधाई देता हूं.

इस अवधि मे बिहार आंदोलन की क्या सफलताएं हुईं और वह आज किन समस्याओं का सामना कर रहा है इसका जिक्र विगत १८ मार्च के अपने भाषण मे मैं कर चुका हूं.

मुझे हर्ष है कि बिहार के युवकों और जनता ने इस बात को समझा और स्वीकार कर लिया है कि यह आंदोलन कतिपय समस्याओं के हल के लिए ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण क्रांति के लिए है. 'संपूर्ण क्रांति अब नारा है, भावी इतिहास हमारा है'—इस नारे से बिहार का आकाश आज गूंज रहा है. जैसा कि मैं बारबार कह चुका हूं, यह लड़ाई लम्बी है और हमें बहुत दूर जाना है. हमारा यह लम्बा मार्ग सुगम नहीं बल्कि कंटकाकीर्ण होनेवाला है. मैं आशा करता हूं कि भविष्य मे भी बिहार के छात्र और युवक पूरे साहस और संकल्प के साथ आगे बढ़ते जायेंगे. भगवान से मेरी प्रार्थना है कि उन्हें वह शक्ति दें. मेरी हार्दिक शुभकामनाएं उनके साथ हैं.
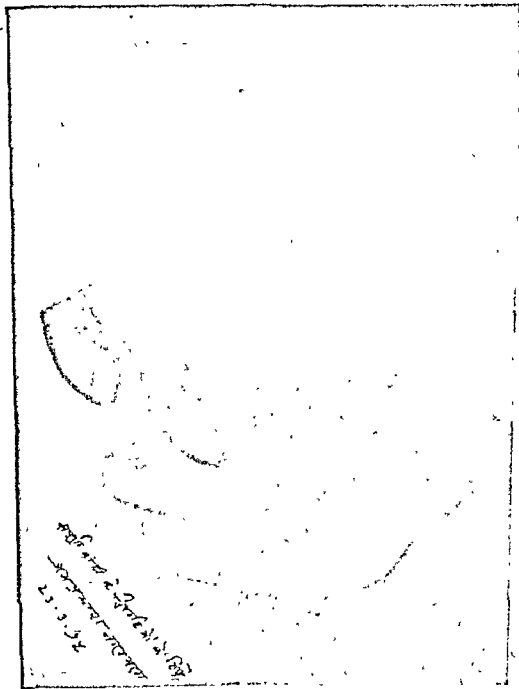
जयप्रकाश नारायण

बिहार आंदोलन में महिलाएं

□ रवींद्र

वर्तमान बिहार आदोलन मे महिलाओ की भूमिका के बारे में प्रारभ मे विवादास्पद मत थे . जहा नयनतारा सहगल का विचार था कि आदोलन मे महिलाएं लगभग निष्क्रिय रही हैं, वहीं पटना महाविद्यालय के समाजशास्त्र विभाग के प्राध्यापक के० गोपाल ऐय्यर महिलाओ की सक्रियता एव कार्य क्षमता मे इतने प्रभावित हुए कि वे इसी विषय पर रिसर्च कर रहे है .

विभिन्न आदोलनो मे महिलाए महत्त्वपूर्ण भूमिका अभिनीत करती रही हैं पर बिहार की रूढिवादी परम्पराए है एव बिहार सामाजिक दृष्टिकोण से काफी पिछड़ा हुआ राज्य है . बिहार में ग्रामीण क्षेत्रो की तो बात और है शहरी क्षेत्रो मे भी लड़कियो का सामाजिक कार्यों मे भाग लेना या स्कूल-कालेज के अतिरिक्त जरा भी इधर-उधर जाना मुहल्ले के लोगो मे कानाफूसी का कारण बन जाता है .

मार्च मे आदोलन प्रारंभ होने के बाद पटना मे सबसे पहले तरुण सघर्ष सघ के सदस्यो की सक्रियता के फलस्वरूप चार-पाच लड़कियां दक्षिणी पटना (कदमकुआं इत्यादि) से आदोलन मे आईं . आदोलन के दौरान भाषण करनेवाली लड़कियो मे पटना मे पहली लड़की थी नवड़बाग की शोभा सिंहा .

जयप्रकाश जी ने दलविहीन महिलाओ एव युवतियो को महिला सघर्ष समिति बनाने की सलाह दी और इसकी सयोजिका बनी कुमारी नूतन . महिला सघर्ष समिति के गठन के साथ पूरे प्रान्त मे निर्दलीय महिलाओ की सक्रियता बढी . पटना मे १५ सितम्बर, १९७४ को तरुण सघर्ष सघ द्वारा निकाले जुलूस मे लगभग ३०० महिलाओ एव लड़कियो ने भाग लिया . इस जुलूस ने महिला सघर्ष समिति को कई सक्रिय सदस्याए दी . इसी महीने गर्दनीबाग मे सिर्फ महिलाओ का एक जुलूस निकला . लगभग ५०० महिलाओं ने इसमे भाग लिया . इस प्रकार सितबर माह के अंत तक लगभग ४० युवतियां एव महिलाएं सक्रिय रूप से मैदान मे आयीं . कॉलेज के आधार पर विश्लेषण करने पर सबसे अधिक सक्रियता पटना मे मगध महिला कालेज की लड़कियो मे कही जा सकती है .

महिला चर्खा समिति

महिला चर्खा समिति वह स्थान है जहा श्री जयप्रकाश नारायण रहते हैं . इस विद्यालय की स्थापना सन् १९४० मे की गयी थी, महिलाओ मे राष्ट्रीयता की भावना भरने के उद्देश्य से . सघर्ष-वाहिनी के सचिव श्यामनन्दन जी के शब्दों में

बिहार सरकार, नहीं दरकार

अपने दिल की बात कहेंगे,
बिना कहे अब नहीं रहेंगे,
नहीं रहेंगे, नही रहेंगे, नही रहेंगे .

विधानसभा का लौह-द्वार
आये हैं हम करके पार,
तथाकथित ये प्रतिनिधि अब
नही रहे हमको स्वीकार
और यह सत्ता का अधिकार,
लाठी, दमन व गोलीबार,
नही सहेंगे, नही सहेंगे, नही सहेंगे

जनता से तुम दूर हुए हो
सत्ता मे मगरूर हुए हो,
युवको को जेलो में ठूसे
जालिम, बहुत क्रूर हुए हो
बंदीजन पर भी प्रहार
शासन का यह अत्याचार
नही सहेंगे, नही सहेंगे, नही सहेंगे .

महगाई की बात बताए
अपने जलते घाव दिखाए
गाव-नगर की हर बस्ती मे
तुमको कितने नाम गिनाये
होकर जो कहते लाचार
तेरे जुर्मों को सरकार
नही सहेंगे, नही सहेंगे, नही सहेंगे .

भूखे, नगे सारे लोग
आज लगाते यह अभियोग,
सत्ता मे जो भ्रष्टाचार
वही देश का असली रोग
काला धन, झूठा प्रचार
हर चुनाव मे बारबार,
नहीं सहेंगे, नही सहेंगे, नही सहेंगे .

सारी जनता है दुख पाती
शर्म नहीं तुमको है आती,
दुखो, निर्धन का दिन भोजन
बच्चो को हर रात सुलाती
पर कुर्सी से तुमको प्यार
जब यह दर्शा दुर्व्यवहार
नही सहेंगे, नही सहेंगे, नही सहेंगे

इन्दिरा गाधी हो या गफूर
बहुगुणा या उसं हजूर,
सेठी, वसी जेलसिंह यह
सब-के सब सत्ता मे चूर
सुने इनके जो इसरार
कोटि-कोटि कहते नर-नार
नही सहेंगे, नही सहेंगे, नही सहेंगे .

जयप्रकाश की यह पुकार
जन द्रोह का हो सहार
दाम घटाने, काम दिलाने
का सिद्धान्त अब करो स्वीकार
सत्ता-सपत्ति का श्रृगार,
सत्य-अहिंसा का प्रतिकार
नही सहेंगे, नही सहेंगे, नही सहेंगे

वाणी जिनकी बेलगाम
जो पी को देते इलजाम,
लोकतन्त्र के शत्रु है जो
उनके लिए अन्तिम पैगाम,
सब की मजिल हो गयी पार
जनता पर अब कोई भी वार
नही सहेंगे, नहीं सहेंगे, नहीं सहेंगे .

अपने दिल की बात कहेंगे,
बिना कहे अब नही रहेंगे,
नहीं रहेंगे, नही रहेंगे, नही रहेंगे .

—मदनगोपाल चड्ढा

'यहां की लड़कियां जे० पी० को भगवान से बढ़कर मानती हैं'. अतः आंदोलन के कार्य में उनकी अभिरुचि स्वाभाविक है, फिर भी इनका कार्यक्षेत्र मुख्यतः जुलूसों एवं प्रदर्शनों में भाग लेने तक ही सीमित रहा है.

ऐतिहासिक मोड़

अक्तूबर माह में तीन दिनों के बिहार बंद के दौरान महिलाओं की भूमिका में एक ऐतिहासिक मोड़ आया. इस दौरान बाहर की ओर यहां की बहुत सी बहनों ने सचिवालय का घेराव करते हुए गिरफ्तारी दी. कई बहनें 'मीसा' के अन्तर्गत विभिन्न जेलों में बंद रहीं.

गया में तो आंदोलन के प्रारंभ से ही बहनों ने बढ़कर हिस्सा लिया था. पुलिस की लाठी खायी थी. गया गोलीकांड में एक बहन के शहीद होने के प्रमाण भी हैं.

समस्या अनुमति एवं स्वीकृति की

महिलाओं के काम करने में समस्या आती है उनकी पारिवारिक जिम्मेवारियों की. उनका अपना परिवार है जिसकी पूरे तौर पर देखभाल उन्हें करनी होती है. अतः वे अपना अधिक समय आंदोलन के कार्यों के लिये नहीं दे सकती हैं. इस प्रकार अच्छे कार्य के लिये आवश्यक है कि लड़कियां, जो पारिवारिक जिम्मेवारियों से मुक्त हैं, बाहर आयें.

पारिवारिक पृष्ठभूमि

आंदोलन में लगी लड़कियों के पारिवारिक अध्ययन से यह पता चलता है कि लगभग सभी लड़कियां मध्यमवर्गीय परिवारों की हैं. निम्नवर्गीय परिवारों की लड़कियों के आंदोलन में भाग नहीं लेने का मुख्य कारण है अशिक्षा. शिक्षा के अभाव में संपूर्ण क्रांति जैसे कठिन विषय के संबंध में लोगों को बताना एक असंभव-सा कार्य है. इसके अलावा रूढ़िवादिता भी उनमें बहुत अधिक है और वे परंपरागत बंधनों को तोड़कर बाहर नहीं आ सकती हैं. जहां तक उच्चवर्गीय परिवार की लड़कियों का संबंध है, उन्होंने रूढ़ियों को तो तोड़ दिया है पर उनमें इस प्रकार के कार्य की क्षमता नहीं है. वे क्लबों में जाती हैं, बारों में बैठकर शराब पीती हैं, पर घर-घर जाने का काम उनमें नहीं हो सकता है. हालांकि वे, एक ऐसी ही लड़की के शब्दों में, "नैतिक समर्थन देती हैं."

● बिहार विधान सभा के सामने सत्याग्रह के लिए खड़ी महिलाओं की एक टुकड़ी

मनोवैज्ञानिक आधार

सामान्यतः बहनें यह चाहती हैं कि पहले उनके घर के आस-पास से कोई लड़की बाहर निकले तो वे भी उसका अनुसरण करेंगी. यह 'पहले आप' वाली समस्या अत्यंत विकट हो जाती है. फिर भी लड़कियों में काम करने की गहन इच्छा है. जब ४ एवं ५ अक्तूबर के सचिवालय घेराव कार्यक्रम में गिरफ्तार होकर क्रमशः लगभग २५ और ६० लड़कियां हजारीबाग जेल में गयी तो इसका अत्यंत गहरा प्रभाव पड़ा और ८ अक्टूबर को वहां एक जुलूस में हुई २८० गिरफ्तारियों में से १०७ लड़कियां और महिलायें थीं.

ऐतिहासिक जेल

अक्तूबर में हजारीबाग विशेष केंद्रीय कारा एक ऐतिहासिक स्थान बन गया था. इस समय वहां अन्य सत्याग्रही कैदियों के अतिरिक्त लगभग २०० महिलाएं एवं लड़कियां थीं. वहां की महिला कैदियों में दो वर्ष की एक बच्ची से लेकर, जो अपनी मां की गोद में थी, ७० वर्ष तक की औरतें थीं. इन कैदियों में लगभग २० लड़कियां १२ वर्ष नीचे की थीं, १३ से २० वर्ष के बीच की लगभग १२५ लड़कियां थीं और बाकी अधिक उम्र की महिलाएं थीं.

सक्रियता का विस्तार

बिहार आंदोलन में लड़कियों की सक्रियता संगठित तौर पर पटना के अतिरिक्त हजारीबाग में काफी अच्छी रही है. आंदोलन प्रारंभ होने के बाद वहां मुख्य रूप से चार लड़कियां सामने आयीं, गीता, रमा, रंजना और रीता. जुलूस में पहली बार महिलाएं २१ जुलाई को आईं जिसमें लगभग ३० महिलाओं एवं लड़कियों ने भाग लिया. उपलब्ध आंकड़ों के आधार पर रांची विश्वविद्यालय छात्र संघ के अध्यक्ष अशोक चौरसिया का यह कथन कि हजारीबाग में लड़कियों की आनुपातिक सक्रियता पटने से अधिक है गलत नहीं लगता है. इनके अतिरिक्त आरा की दुर्गा देवी पहली महिला थीं जो 'मीसा' में गिरफ्तार हुईं. वहां और भी कुछ बहनें सक्रिय रहीं.

भागलपुर में भी बहनों का अच्छा संगठन विकसित हुआ है और वहां कई बहनें हैं जो पूरा समय देकर काम कर रही हैं.

(शेष पृष्ठ ३९ पर)

◉ घूमती बातचीत ◉ घूमती बातचीत ◉ घूमती बातचीत ◉

घू म ती बा त ची त

□ चंचल सिन्हा

□ अशोक मोती

◉ बातचीत ◉ घूमती बातचीत ◉ घूमती ◉
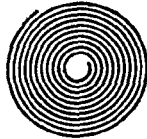
रिक्शे में सिकुड़ा अली हुसन हमारी ओर देख रहा है. उसके पास पहुंचते हैं तो वह खड़ा हो जाता है, 'आइये !' उसकी आंखें हमारे चेहरे पर टंग जाती हैं.

—जानते हो न कि यहां एक आंदोलन चल रहा है ?

—हां-हां, भला कौन नहीं जानता है.

—तुम्हारी क्या राय है ? क्या हमें सफलता मिलेगी ?

—जरूर. किसी काम में दिल से लग जाया जाये तो सफलता क्यों नहीं मिलेगी !

—किसी राजनीतिक दल पर भरोसा है तुम्हें ?

—पोलिटिकल पार्टी ?' वह हंसता है — बाबू, वो लोग तो वोट मांगने के लिये हैं. यहां आकर तो सभी अपने दल को देखते हैं, हमें कौन देखता है ? अब तो जे० पी० ही कुछ कर सकते हैं.

—जे० पी० पर विश्वास है तुम्हें ?

—क्यों नहीं ? जे० पी० अच्छे हैं. वैसे हम गरीब हैं तो भी विश्वास है कि यह सब हमारे लिये भी तो हो रहा है. बस एक ही निराशा है कि हम पिछले पांच वर्षों से रिक्शा चला रहे हैं और आगे भी रिक्शा ही चलाना पड़ेगा'.

●

रिक्शा चलाने की बात पर हाफ पैंट पहने ऊंघता हुआ सांवला सा रिक्शा चालक उपेन्द्र राय लगभग उछल कर खड़ा होता है '...अमेरिका, रूस में रिक्शा नहीं चलता, यहां चलाना पड़ता है. नेहरू जी ने कहा था कि वे रिक्शा हटाकर दूसरी व्यवस्था करेंगे, कुछ नहीं कर सके. धर्मतल्ला में इंदिरा जी ने भी यही कहा लेकिन हुआ क्या ? जिस मजदूरी में हम खा-पी लेते थे अब उसमें कुछ नहीं होता.

उपेन्द्र मुंगेर का है और नवीं कक्षा तक पढ़ चुका है. पूंजीपति और अमीर लोग सबसे खराब हैं—नक्सली कलकत्ता में अच्छा करते थे—अमीरों को लूट कर गरीबों में बांट दिया.'

—अर्थात् तुम यही चाहते हो कि जिस ढंग से आंदोलन चल रहा है उस ढंग से नहीं चले और हमारी ओर से भी कुछ हिंसा हो—है न ?

—हां, घुट-घुट कर मर जाने से तो अच्छा है, एक बार गोली खाकर मर जाएं लेकिन एक बात है—हम उसका आक्रोशित चेहरा देखते हैं—अगर हम मरें तो यह ध्यान रहे कि कुछ को मार कर ही मरें. अब आप ही बताइए ? हम लोग जो रिक्शा चलाते हैं—इसमें उपजा कितना कम हो गया. गांव में होते और इतना परिश्रम करते तो कितना अच्छा होता. लेकिन पेट के लिए जो न करना पड़े.'

—तुमलोगों की क्या राय है—हमने एक प्रश्न फेंका—क्या जे० पी० ही कुछ कर सकते हैं या और कोई नेता भी ? —

—सिर्फ जे० पी०. और लोग तो अपने लिये ही करते हैं. जब भी चुनाव होगा, हम तो जे० पी० के ही आदमी को वोट देंगे.

मीठी आवाज पीछे से पुकारती है, 'भैया अठारह मार्च को क्या होगा ?' हम घूमते हैं. एक छोटा सा, प्यारा बच्चा कुछ सोचती आंखों से हमारी ओर देख रहा है —'प्रदर्शन होगा, जुलूस निकलेगा और शाम को जे० पी० का भाषण होगा. जे० पी० को जानते हो न ?'

—हां, क्यों नहीं ? यहां अनशन में भी बैठा था मैं'. —अच्छा क्या नाम है तुम्हारा, कहां पढ़ते हो ?—'नाम है पूर्णाशीष घोष, १२ वर्ष का हूं और एस० टी० सेवेरियस में चौथे स्टैन्डर्ड में पढ़ता हूं.' उसने एक ही बार में अपना परिचय दे दिया.

—जुलूस में जाते हो ?

—'नहीं-नहीं, डर लगता है. हम बच्चे शांतिवाले आंदोलन में ही भाग ले सकते हैं.

—शांति से ही तो जाओगे ? पापा क्या करते हैं ?

—बंगाल केमिकेल्स के ब्रांच मैनेजर हैं.

—तब तो काफी पैसे पाते होंगे. तुम्हारे यहां महंगाई का तो असर नहीं होगा. फिर भी अनशन में थे, क्यों ? —और बहुत से गरीब हैं न ? उनके लिए.

●

छोटी सी दूकान के बाहर बना बोनते हुए एक बुजुर्ग दाखते हैं.

—क्या है ? एक क्षण के लिये आंखों में आयी बाबा की घबराहट दूर हो गयी है.

—आपका नाम क्या है, कहां के हैं, कितने बड़े हैं ? और तीनों प्रश्नों का

जवाब भी हमें उसी ढंग में मिलता है 'हमार नाम तो बड़ा खराब हुउवे, वे बनारसी भोजपुरी पर उतर आते हैं, 'शेखचिल्ली आजमगढ़ में हुई बाउर ६० बर्ष उमिर बा'.

—बताइए, आजकल जो आंदोलन चल रहा है वह क्यों है ?

—महंगाई, बेरोजगारी को हटाने के लिए', उसने हमारी ही तरह जवाब दिया, 'सभी महंगाई से परेशान हैं अत यह आंदोलन ठीक है इस सरकार को तो बदलना जरूरी ही है नये लोग गद्दी पर आवें'.

—आप कैसी सरकार चाहते हैं ?

—हम क्या बतायें ? पंचायती राज ठीक होता. लड़ाई-झगड़ा से क्या होगा ? गांधी जी का सबने साथ दिया था, हिंदू, मुसलमान सबने. आज भी सबको संगठित होना पड़ेगा' बीच-बीच में वह अपनी भोजपुरी को जोड़ देता था

—पार्टी पर, किसी भी, विश्वास है ?

—नहीं कोई फायदे की पार्टी नहीं है. अब विश्वास नहीं है'.

—क्या आपलोग बंद, हड़ताल के समय भय से बंद करते है ?'

—भाई, चाहते तो हम दिल से ही बंद करना हैं लेकिन पेट के चलते खोलना पड़ता है. लेकिन नुकसान होने के डर से भी बंद कर देते हैं. इच्छा तो होती है कि बंद करके साथ दें लेकिन दिक्कत जब खाने की हो जाती है, परिस्थिति मजबूर करती है खोलने को, तब भय से ही बंद करना पड़ता है.

—आंदोलन से कोई फायदा अबतक ?

—जरूर.' वे तड़ से बोलते हैं, 'कंट्रोल में कम से कम शहर में जहां एक यूनिट पर चार सौ ग्राम गेहूं मिलता था वहां अब चार हजार ग्राम मिलता है. कुछ बाजार में भी कीमत घटी ही है, यह फायदा तो है !'

●

चौक-पान की २० वर्षों से दुकान किये बैठे हैं बसंत लाल. फायदे की बात चली तो बोले, 'निजी तो कोई →

बिहार आकर मैंने पाया...

यथार्थ से साक्षात्कार होने से पूर्व आदमी किसी भी विषय पर अपनी राय पढ़कर, सोचकर बनाता है. कुछ समाचार-पत्रों से, कुछ बिहार से ही आये मित्रों के अनुभव सुनकर एवं आकार मेरे मन में भी उभर रहा था. गुजरात से अलग एवं कुछ श्रेष्ठ बिहार में हो रहा है ऐसा विचार किया करता था. अप्रैल '७४ में निकले उस मौन जुलूस का अमिट प्रभाव मन पर था. लाठियों और गोलियों के बावजूद युवकों ने इतना धीरज रखा, यह अपने आप में एक महान सफलता थी और युवा-मानस की बदलती तबियत का अहसास कराती थी. लोकनायक जयप्रकाश ने जब नेतृत्व करने का संकल्प लिया तब तो और भी श्रद्धा बढ़ गई और विश्वास हो गया कि बिहार अब राष्ट्र एवं विश्व के सम्मुख नये उदाहरण रखेगा. तब यह अनुभूति भी हुई कि अब नवयुवक गुजरात के तरुणों की तरह विधानसभा के विघटन के बाद रुक नहीं जायेगा अपितु उस समय तक संघर्षरत रहेगा जब तक सम्पूर्ण क्रांति सफल नहीं होती. एक और कल्पना थी, जो खरी उतरी कि आंदोलन करने के तरीके अद्भुत होंगे. चार नम्बर के कार्यक्रम में जनता के पटना पहुंचने के लिए क्या यत्न-प्रयत्न किये यह जब जाना तो एक निष्ठा हो गयी और टकटकी साधे दृष्टि गड़ा कर देख रहा था कि बिहार क्या कुछ कर दिखाता है.

जिस मार्ग में विश्वास न हो तो उससे सिर्फ ड्राप-आउट हट जाने भर से अच्छा दूसरी सच्ची राह पर चलना है. बिहार आने पर वाकई ये लग रहा है कि अब मैं मात्र सपाड़ा नहीं हूं अधिकतर जो सोचा था, जो आकार बन थे या प्रत्यक्ष देख भी. आंदोलन के एक साल में जो जागृति यहां पैदा हो गई है वो काबिले-तारीफ है. जिन तरुणों को चाय की दुकान पर, बीड़ी, चाय की चुस्कियों पर, पान की पिचक में, सिगरेट के धुएं के बोझिल वातावरण में, सिनेमा लड़की की बातें करते हुए देखता था उन्हीं को आज देश को सम्पूर्ण बदलने का संकल्प करते देख रहा हूं और उन पर चलते देख रहा हूं इधर मानस परिवर्तन का कार्य बढ़िया व बड़े पैमाने पर हुआ है एक और मुद्दा काबिले-गौर है, और वह है गांव-गांव तक फैली क्रांति की चिनगारी को अभूतपूर्व उत्साह जो आज गांववासियों में झलक रहा है वो शायद अपने इतिहास का स्वर्णिम पृष्ठ है सारे लोग भ दनादन रूप से आंदोलन में जुड़े हैं गुजरात से मैं यह अनुमान नहीं लगा पाया था यहां एक और बात महत्व की लगी कि यहां के तरुणों में जो करना है उसकी समझ है, जिसका श्रेय लोकनायक जयप्रकाश को जाता है इन सब का साक्षात्कार बिहार में आने पर ही हुआ इस दृष्टि से यह कहना कि विश्वयुवा आंदोलनों से ये एक कदम आगे है अतिशयोक्ति नहीं होगी

इन सब के बावजूद 'ग्रुप पालिटिक्स या दलीय राजनीति ने अभी अपनी पकड़ ढीली नहीं की है वरन कसी है. यह आगे चलकर घातक साबित हो सकती है बिहार के गांव जाग्रत अवश्य हैं परंतु वहां मार्ग दर्शन के लिए उचित लोग नहीं पहुंच पा[ये] हैं अब तक रचनात्मक कार्य ठोस रूप से जड़ पकड़ नहीं पाये हैं एक वर्ष की अल्पावधि में इसकी संभावना क्षीण तो थी चूंकि मार्ग लंबा है, परंतु साधन जु[टाये] सकते थे जो पूर्णरूपेण नहीं हुआ एक न[ई] बात और दिखाई दी, जो मैं गुजरात में नहीं देख पाया था, वह यह है कि आंदोलन शहरों के जीवन-यापन से बौद्धिक लोगों को अपील नहीं कर पाया है. ऐसे जो लोग थे वे आंदोलन से छूटते जा रहे हैं. गुजरात में ग्रुप राजनीति के कटु अनुभव के बाद सोचता था कि बिहार इससे परे होगा परंतु ये सिर्फ लोकनायक की ताकत देखी कि वे हैं और सिर्फ वे ही सबको एक सूत्र में बांधकर चल रहे हैं और उनके बाद ऐसा कोई भी नहीं जो सबको एक साथ ले चले. ये बातें जरूर भविष्य के लिए खतरनाक है.

इतना सब होने के बावजूद एक श्रद्धा थी और है. चूंकि पहले ही कह चुका हूं कि बिहार के पास क्रांतिदृष्टि है और यही आंदोलन को लक्ष्य तक पहुंचायेगी.

—सुदर्शन आयंगार

फायदा नही हुआ . बाजार का भाव कुछ गिरा है . कट्रोल मे चीजे मिल रही हैं . आज देश मे सरकार जो कर रही है उसके विरुद्ध जरूर होना चाहिए आदोलन. यह अच्छा लगता है . आजतक जितना भी बद का आयोजन आपने किया, हमने दिल मे बद किया क्योकि यह आदोलन हमारा भी तो है . लुटने का कोई डर नही मुझे. सभी विद्यार्थी तो मेरे बेटे ही हैं लेकिन एक कमी है ."

—क्या ? हम चौंकते है .'

— जो जोश-खरोश आजादी की लडाई मे हम देखते थे, वैसा आज नही लगता है. हो सकता है इसका कारण यह हो कि तब हमारे शत्रु विदेशी थे, आज अपने ही देश के हैं !

—तो क्या आप चाहते हैं कि हम हिंसा पर उतरें ? ऐसे सफलता नहीं मिलेगी ?

—मिलेगी क्यों नही ? किसी पार्टी पर अब भरोसा नही है, फिर भी जे० पी० अनुभवी हैं, सफलता तो मिलेगी ही लेकिन''' आप हिंसा मत करें . कोशिश करें सहने की .' लेकिन उनकी इस बात को उन्ही के पुत्र **सुरेन्द्र कुमार** ने काट दी, 'कुछ नही होगा इससे, ऐसे लोगो की दवा यह नही है .' अट्ठारह-बीस बरस का युवक गुस्से मे था .

—तब तुम कौन सा तरीका चाहते हो ?

—तरीका क्या बतायें ! हम तो एक ही बात कहेंगे, कोई हमारे परिवार को खिलाने और सभालने का जिम्मा ले, उनका भविष्य देखे तो हम तो अकेले, एकदम अकेले इस सरकार को उलट देंगे . समाज के सारे दुश्मनो को हटा देंगे जान दे देंगे . खून तो देना ही पड़ेगा' हमारे कुछ और पूछने के पहले ही वह तेजी से चला गया .

●

आर्यकुमार रोड मे बनिया की एक बडी दुकान है . दुकान बद थी और उसकी बाहरी सीढियो पर बैठा एक बूढा कुछ गा रहा था. पोपला, झुर्रीदार चेहरा, हम उसकी ओर बढते हैं '''

—बाबा, हम आप से कुछ बात करना चाहते हैं :

—हमसे ? आइए !' वह अपनी मैल और धूल से भरी धोती से सीढियो की धूल हटाता हुआ कहता है .

—आपका नाम ?

—**सीताराम** मोकामा घर है .

—उम्र ? और क्या करते हैं ?

—उमर ? उस समय एक बार जोर से भूकम्प हुआ था . उसके छ बरस पूर्व हमारा जनम हुआ था . हम मजदूरी करते हैं' . आश्चर्य लगा हमे ? वह साठ-सत्तर वर्षों का लगता है . भारत की आज क्या हालत है ? ४८- ४९ बरस का व्यक्ति ६०-७० का लगता है ?

—जे० पी० को जानते हैं ?

—जयप्रकाश बाबू को ? स्वाधीनता आदोलन मे उनका नाम सुना था गाधी जी को देखा था इस आदोलन म इन्हे देखा अच्छा ढग है इनका शातिपूर्ण !' उसने टूटी-फूटी हिन्दी मे अपना दुख बताया ' देखिये बाबू, बिना तय किये ठीकेदार ने मजूरी कराई १५ दिन, और ४ रु० रोज दिया बताइए, गरीब काम भी थक-मर कर करता है और पेट भी नही भरता—आपलोग ठीक कर रहे हैं

—अभी तक मे कोई फायदा लग रहा है ? एक साल मे ?

—अभी कपडा वगैरह तो नही खरीदा लेकिन 'अनाज का हालत उस वखत से जरूर अच्छा है अत कुछ सफल हुआ है आदोलन

सीताराम की राय है कि किसी भी पार्टी पर विश्वास नही किया जा सकता . पेट की समस्या हल होनी चाहिए एकता की कमी है बदूक के डर से सब भाग जाते हैं. आजादी के समय लोग सीना ताने चलते थे जान से ज्यादा देश को चाहना चाहिए लेकिन एक बात है ?

—क्या ?

—अग्रेज लोग इतना गोली नही चलवाते थे इतना दमन नहीं करते थे कि किसी को बेदर्दी से मार दिया, एक पत्थर चला तो भी जवाब गोली मे ही मिलेगा . फिर भी हमे 'जवाब देकर' बात बढाना नही चाहिए .

D

पेट्रोल पंप का टीपूदास इन सबसे भिन्न है . उसी आदोलन का विरोध किया ' 'यह सब नहीं होना चाहिए . इससे अच्छा होता कि मिलकर सब ठीक किया जाता एक समझौता होना चाहिए .'

लेकिन पेट्रोल भरकर आया नही था एक और श्रमिक **राम चरन राय** आदोलन को ठीक कहता है . वह किसी भी समय बद का दिल से साथ देता है, डरकर नही . उसका कहना है कि 'आप देश को ठीक रास्ते पर ले जाने के लिये ही कर रहे हैं न. हिंसा के बारे मे वह गोल-मोल बात कहता है 'एक ही बार मे फैसला हो जाये तो अच्छा है, वैसे अपनी ओर से शाति ही रहे' . उसकी एक बहुत ही सही शिकायत है— 'स्टूडेंट' के नाम पर जाने कौन-कौन आते हैं, कभी चदा ले जाते थे उधर कभी पेट्रोल भरवाकर गये तो पैसा नही दिया, कभी कुछ इसे रोकना ही होगा . एक बार छात्र सघर्ष समिति के एक गोरे सदस्य से कहा तब जाकर आजकल ठीक है

●

सब्जी बेचते हुए एक स्वस्थ बदन वाले बुजुर्ग मिले छोटी सी इस दुकान के पीछे एक टूटी खाट पर उनकी बूढी पत्नी और अधेरे कमरे मे फटी चादरो का एक बिस्तरा

—बाबा, यहा बैठे हम ?

—क्यो नही, आइए वे सडक के किनारे की जमीन झाडने लगते हैं .

—आप कहा से आये है, क्या नाम है?' सपाट प्रश्न का उन्होंने सीधे जवाब दिया, '४१ वर्षों से यही, इसी जगह इसी पटने मे सब्जी बेचते आ रहे हैं वही सामने पहले मेरी दूकान लगती थी—वह ऊँगली उधर दिखाता हुआ पुरानी स्मृतियो मे खो जाता है— अग्रेज शासन ही अच्छा था. खाना, कपडा सब मिलता था . कारपोरेशन वाले ४० पैसा टैक्स लेते थे और नही दे सके तो तीन महीने के बाद मात्र डेढ रुपया जुर्माना. आज तो मनमाना है . जितना मन मे आया, बटोरकर लूट लिया . यह सरकार कुछ नही दे पा रही . ट्रैफिक और सिविल सिपाही १० पैसे, कारपोरेशन वाले २५ पैसे रोज ले जाते हैं . न दो तो मुकदमा और मनमाना जुर्माना !' अपना 'आज के आदोलन को देखकर निराशा ही होती है लेकिन मैं आस लगाये बैठा हूँ कि कब सफलता मिलती है . लडके बहुत अच्छा कर रहे हैं ' बीच-बीच मे उनकी पत्नी सिर हिलाती जा रही है . ☐

आशा का सूरज भारत के क्षितिज पर उगा है...

(पृष्ठ ५ से आगे)
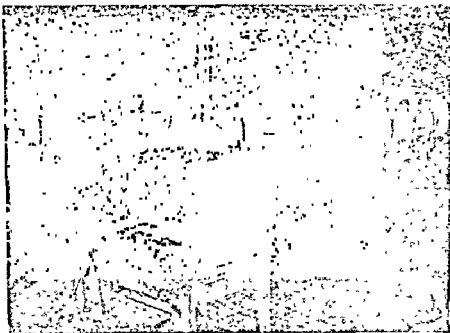
○ हमारे आचरण शुद्ध एवं प्रतिमान होंगे .. आम सभा में जयप्रकाश जी '

होइएगा, तो नहीं लड़ सकिएगा, जितनी जल्दी यह बात समझ लें उतना ही जल्दी आपका फायदा होगा .

बिहार आंदोलन में एक बहुत बड़ा फल जो मुझे लगता है निकला है वह यह है कि पच्चीस वर्षों से जिस प्रकार से शासन हुआ, जैसा स्वराज्य यहां कायम हुआ, उससे सारे देश में एक निराशा, मायूसी छायी थी मायूसी का, निराशा का वातावरण था . इस आंदोलन ने इस वातावरण को छिन्न-भिन्न किया और फिर एक उत्साह लोगों में आया. केवल बिहार की ही जनता में नहीं, सारे देश की जनता में आया है. जहां मैं जाता हूं, देखता हूं, जन-जागृति अपूर्व हुई है. पिछले २७ वर्षों में ऐसी कभी दिखी नहीं थी. अपूर्व जन-जागृति हुई है . जनता की अपेक्षाएं बढ़ी हैं, जनता सामने आकर, कटिबद्ध होकर कुछ करना चाहती है. उसका सबूत मिलता है जहां नेतृत्व कुछ जनता को मिलता है वहां जनता कुछ कर लेती है। काले बादल छंट गये हैं और आशा की किरण, आशा का सूरज भारत के क्षितिज पर उगा है ऐसा लगता है इस बिहार के आंदोलन द्वारा . स्वराज की लड़ाई में गांधी जी के नेतृत्व में जिस तरह से भारत के नारी समाज में एक जागृति हुई थी, उसी प्रकार से इस आंदोलन के द्वारा महिलाओं में, नारियों में एक अपूर्व जागृति हुई है जिसका सबूत हर जगह मिलता है देहातों में भी सभाएं होती हैं, बहिनें सभाओं में भाग लेने जाती हैं केवल बिहार में नहीं, सारे भारत में मैं देखता हूं ऐसा एक परिवर्तन हुआ है बहुत-सी कार्यकर्त्रियां निकल कर आयी हैं इसके अंदर से . एक यह भी मुझे लगता है कि फल हुआ है जो कि बहुत ही महत्व का है कि जो इस आंदोलन में लगे हुए लोग हैं उनके चारित्र्य में एक सुधार देखता हूं, उनके चारित्र्य में एक उत्थान देखता हूं . उनके चारित्र्य का निर्माण हो रहा है, ऐसा देखता हूं .

संघर्ष के गर्भ से एक संभावना प्रकट हुई है कि विरोधी दल जो अनेक हैं आपस में मिल जायें. अगर यह संभव नहीं होता है तो इतना अवश्य ही होगा कि जब चुनाव आयेगा तो ये विरोधी दलों के लोग आपस में बैठ कर हर चुनाव क्षेत्र में एक ही उम्मीदवार खड़ा करेंगे . आपस में तालमेल बैठेगा, उनमें 'एडजस्टमेंट' होगा, कम-से-कम इतना, अधिक से अधिक यह कि ये सब मिलकर एक हो जायें . वामपंथी दलों का तो दुर्भाग्य है इस देश में उसका तमाशा तो, उसका नजारा तो बंगाल में देखते हैं हम अनगिनत हैं पता नहीं कितने हैं, शायद २७ हैं कि कितने हैं टुकड़े-टुकड़े होते जाते हैं, टूटते ही जाते हैं पता नहीं वामपंथ को भगवान ने यह क्या अभिशाप दिया है कि आपस में मिल नहीं पाते . बाल की खाल उधाड़ते रहते हैं, 'आइडियालाजी' का झगड़ा करते रहते हैं. शायद वे भी इकट्ठा हों . जैसे लोहा को लोहा से जोड़ने के लिए बहुत गर्म आग चाहिए, बहुत तापमान चाहिए, तब वह लोहा जोड़ा जा सकता है लोहे से, उसी तरह से पार्टियों का मिलान के लिए पार्टी नेता आपस में बैठेंगे तो नहीं होगा, इस संघर्ष की आग में जो शक्ति है उसमें एक हो सकते हैं तो हो सकते हैं आंदोलन के चलते, इस आंदोलन ने जो प्रश्न उठाये उनके चलते भारतीय स्तर पर जनतंत्र के बारे में एक राष्ट्रीय चर्चा हुई . हमारे संविधान में क्या दोष हैं, चुनाव की पद्धति में क्या दोष हैं, जो मैंने कमिटी स्थापित की थी, जनतंत्र समाज की तरफ से, तारकुंडे समिति, उसकी रिपोर्ट आ गयी है और उस रिपोर्ट पर विचार करने के लिए १२-१३ अप्रैल को मैंने संसद में जितनी→

पार्टियां हैं, उनके नेताओं को निमंत्रित किया है. इन्दिराजी को भी, कांग्रेस की लीडर की हैसियत से आमंत्रित किया है, राज्यसभा में उमाशंकर जी दीक्षित उनके नेता हैं उनको भी निमंत्रित किया है और कहा है कि अपने साथ साथ दो-तीन और सदस्यों को ला सकते हैं. बिहार के आंदोलन का असर सारे भारत पर पड़ा है, जिसका प्रमाण ६ मार्च को दिल्ली का प्रदर्शन था और मैं समझता हूं कि निकट भविष्य में और भी प्रदेशों में संघर्ष इसी प्रकार का शुरू होगा पहला प्रदेश शायद उत्तरप्रदेश हो फिर मुझे आशा है कि मध्यप्रदेश का नंबर होगा. उत्कल प्रदेश में भी काफी तैयारी है. यह भी मैं देखता हूं कि अपने प्रदेश में जातिवाद का गहरा असर है राजनीति पर. वह असर कुछ ढीला हुआ है अपने इस आंदोलन के कारण से. और भी उसमें बहुत कुछ करना बाकी है. एक कमी रही है जिस की तरफ आपका ध्यान खींचना चाहता हूं. जिन जिन उपायों से हमने काम लिया है, वे शांतिमय उपाय रहे हैं लेकिन नहीं कह सकते कि हमारे उपाय शुद्ध रहे हैं. अशुद्ध उपाय भी हमने अख्तियार किये हैं उसके उदाहरण मैं नहीं दूंगा. लेकिन आज एक वर्ष हुआ. अगले वर्ष के लिए शांतिमय उपायों के साथ-साथ शुद्ध उपायों का भी हम प्रयोग करेंगे यह आप सब को, छात्र बन्धुओं को, भाई-बहनों को, नागरिकों को, बिहार की जनता का जो इस सभा में आयी है, यह प्रण करना होगा कि हमारे उपाय शांतिमय भी हों. यह मानते हैं आप ? शांतिमय और शुद्ध उपाय. हाथ उठाइए... (तालियों की गड़गड़ाहट). अच्छी बात है. प्रतिज्ञा का ध्यान रखियेगा. फिर कभी कहीं कोई संघर्ष समिति का चुनाव हो, फिर कभी कोई कूपन का बंटवारा हो, कूपन का पैसा इकट्ठा किया गया हो और कोई कार्यक्रम हो उसमें अशुद्धता नहीं आनी चाहिए. हम कैसा समाज बनाना चाहते हैं ? वह अशुद्ध समाज होगा ? उस समाज में भ्रष्टाचार रहेगा ? भ्रष्टाचार को मिटाना चाहते हो मित्रो, तो अपने अंदर का भ्रष्टाचार मिटाना पड़ेगा. □

संपूर्ण क्रांति की वाहक

छात्र-युवा संघर्ष वाहिनी

संपूर्ण क्रांति के आंदोलन को उसकी मंजिल तक पहुंचानेवाली दो शक्तियां हैं—जनता सरकार और छात्र युवा संघर्ष वाहिनी. ये दोनों कल्पनाएं आंदोलन के गर्भ से, परिस्थिति की मांग में से पैदा हुई हैं, इसलिए आंदोलन के साथ इनका स्वाभाविक संबंध है.

आम जनता के लिये चल रहे इस संघर्ष को आम जनता के हाथ में सौंपने का इसके अलावा और इससे अच्छा दूसरा कौन सा रास्ता हो सकता है कि क्रांति का नेतृत्व आम युवकों के हाथ में रहे ? आंदोलन में नब्बे प्रतिशत युवक बिल्कुल असंगठित हैं और इस कारण संख्या में कहीं ज्यादा होते हुये भी, कष्ट, त्याग और बलिदान में दो कदम आगे रहते हुये भी आंदोलन

बिना श्रम खाये पाप कहाये....
श्रम, सेवा व देश का निष्ठा है.

का नेतृत्व इनके हाथ में नहीं रह पाता है, और यदि आम युवकों के हाथ में आंदोलन का नेतृत्व नहीं रहेगा तो यह आंदोलन आम लोगों का कैसे बन पायेगा ? इसका एक ही उपाय है कि बिना संगठन के ऐसे छात्रों की जो शक्ति प्रकट नहीं हो पा रही है उसे संगठित किया जाये. आंदोलन के हित में भी यह आवश्यक है कि जयप्रकाश जी का कोई ऐसा अपना संगठन हो जो उनके इशारे पर अंतिम हद तक जाने के लिये तैयार हो. इस आवश्यकता की भी पूर्ति करती है—छात्र-युवा संघर्ष वाहिनी.

छात्र-युवा संघर्ष वाहिनी निर्दलीय युवकों का एक ऐसा संगठन है जो शांतिमय सामाजिक क्रांति को अपनी जीवन-निष्ठा मानता है और उसकी सफलता के लिए समर्पित है. इसके सदस्य क्रांति के सिपाही होंगे, फौज के नहीं. वाहिनी या सेना सी संगठित, अनुशासित और शांतिमय एवं शुद्ध उपायों से मानवोचित न्याय के लिये संघर्ष करनेवाले युवकों, छात्रों की यह जमात सत्ताकांक्षा से दूर पर सत्ता को नियंत्रित करनेवाली ताकत के साथ रहेगी और उस ताकत को संगठित भी करेगी. निष्कर्षत: छात्र-युवा संघर्ष वाहिनी लोकतंत्र की वह आंतरिक शक्ति होगी जो लोक को बलवान बनायेगी और तंत्र को नियंत्रित करने में लोक के साथ रहेगी.

३० वर्ष की आयु तक का कोई भी भाई-बहन इसमें शरीक हो सकता है जो इसकी निष्ठाएं पाले इसके सदस्य एक स्वयंसेवी जमात के रूप में उन कार्यक्रमों पर अमल करेंगे जो इसके सर्वोच्च नायक के नाते जयप्रकाश जी देंगे सामान्यत संघर्ष वाहिनी और संघर्ष समिति के कामों में एकरूपता रहेगी पर ऐसे अवसर आ सकते हैं जब संघर्ष वाहिनी को कुछ अलग निर्देश दिये जायें.

संघर्ष वाहिनी के सेवकों का चरित्र श्रम, सेवा और स्वाध्याय का संतुलित योग होगा. संघर्ष वाहिनी में ऐसे युवक भी आयेंगे जो निरक्षर होंगे. ऐसे युवकों को तीन माह में साक्षर बनाना वाहिनी का काम होगा. नारा होगा—'एक को एक पढ़ाये'—(इच वन, टीच वन).

संघर्ष वाहिनी में भर्ती का काम चल रहा है. संघर्ष वाहिनी के प्रांतीय दफ्तर में जिलावार पहुंचे फार्मों की संख्या निम्न है. भागलपुर—३५, भोजपुर—२९८, नालंदा—६५, सहरसा—१२, कटिहार—५, दरभंगा—२, वैशाली—२, मुंगेर—७, संथाल परगना—१, सीतामढ़ी—४, बेगूसराय—१, रोहतास—२२, गया—११, सीवान—१, गोपालगंज—२, मुजफ्फरपुर—२, समस्तीपुर—२, पटना—५, सारण—१० तथा औरंगाबाद—१. कुल—५०९ □

सवाल जयप्रकाश की गिरफ्तारी का !

□ कुलदीप नैयर

श्री अब्दुल गफूर की जयप्रकाश नारायण को गिरफ्तार करने की धमकी के प्रति केंद्र की जाहिर प्रतिक्रिया गोलमोल है। स्पष्ट इंकार तो नहीं ही किया गया, एक मामूली-सी सफाई दी गयी जिन्हें कुछ स्पष्ट कहना चाहिए वे कहने से झिझक रहे हैं एक अफवाह कि श्रीमती गांधी ने गफूर साहब को झिड़की दी है, अभी भी व्याप्त है कांग्रेस के केंद्रीय नेतृत्व के निकटस्थ श्रोतों के अनुसार बिहार के मुख्यमंत्री इस वक्तव्य को देने के अधिकारी नहीं माने गये थे, अतः केंद्र की प्रतिक्रिया ऐसी हुई जैसे कोई आदमी अपनी बारी से पहले ही बोल पड़ा हो तो उसे डांटा जाये वास्तव में इस सदर्भ में, केंद्र की प्रतिक्रिया ने संदेह को और गहरा बनाया है शायद श्री नारायण को गिरफ्तार करने की योजना है और श्री गफूर का वक्तव्य जन-प्रतिक्रिया को मापने का यत्न था। यह 'पाजामे से बाहर' वाला वक्तव्य नहीं भी हो सकता है, जैसा केंद्रीय गृह-मंत्री श्री ब्रह्मानंद रेड्डी ने इसे बताने की कोशिश की है। दिल्ली में एक संवाददाता सम्मेलन बुलाया गया था और पत्रकारों को यह कहा गया कि बिहार पर मुख्यमंत्री एक महत्वपूर्ण वक्तव्य देना चाहते हैं। धमकी के बाद भी श्री गफूर के पास इसे वापस लेने या यह कहने का, कि जो उन पर थोपा जा रहा है वह उनके कहने का अर्थ नहीं था, काफी समय था।

शतरंज के मोहरे

'मैं कुछ भी कर सकता हूं, किसी भी सीमा तक जा सकता हूं', यह कहने के पहले श्री गफूर केंद्रीय, विशेषकर प्रधानमंत्री के करीबी नेताओं के संपर्क में थे। श्रीमती पूर्वी मुखर्जी ने कहा है, 'यह श्री गफूर की व्यक्तिगत मान्यता है, न कि कांग्रेस हाई-कमांड या पार्टी की', लेकिन यह बाद में सोचा गया कथन लगता है श्री गफूर ने धमकी की व्याख्या या उसके प्रभाव को कम करने के विषय में कुछ नहीं कहा है, पर दिल्ली में कुछ लोग, जो सामने नहीं आना चाहते, यह कहते हैं कि श्री गफूर ने अपने अधिकार से बाहर की बात नहीं है। एक मुख्यमंत्री होने के नाते उन्हें किसका अधिकार-पत्र चाहिये ?

कानून और व्यवस्था राज्य का विषय है और एक मुख्यमंत्री इसके लिए पूर्ण उत्तरदायी है अतः इस संदर्भ में श्री गफूर के उचित अधिकारी नहीं होने का कोई प्रश्न नहीं होता है अगर उन्होंने केंद्रीय नेताओं को अपने अधिकारों का प्रयोग करने की सलाह दी है तो यह केंद्र तथा पटना के बीच का अपनी मामला है। जनता के लिए श्री गफूर ही मान्य हैं तथा जो वे करते हैं या कहते हैं वही व्यावहारिक है केंद्र ने यह जता दिया है कि श्री गफूर की चेतावनी अनाधिकारिक थी। हर बार जब श्री गफूर कुछ महत्वपूर्ण कहेंगे, एक प्रश्नवाचक चिह्न खड़ा हो जायेगा। लोगों को यह संदेह होगा कि क्या वे जो कहते हैं उसके बारे में कर सकते हैं या नहीं, या क्या उनका कोई वक्तव्य उनलोगों ... प्रमाणित है जो तथाकथित ...हैं। पहले से ही श्री गफूर एक मोहरे के रूप में जाने जाते हैं तथा भविष्य में उनकी स्थिति और भी बदतर हो सकती है

गिरफ्तारी पक्की थी

केंद्र की प्रतिक्रिया की किस प्रकार व्याख्या की जाये ? एक व्याख्या यह है कि श्री नारायण की गिरफ्तारी विचारणीय थी पर श्री गफूर को इसे जाहिर नहीं करना चाहिए था दूसरी व्याख्या यह है कि जनता के सामने अभी यह खबर नहीं रखनी चाहिए थी शायद दूसरी बात ही सच है हाई कमांड के निकट के कुछ व्यक्तियों के वक्तव्य से इस बात की पुष्टि होती है कि केंद्र ने श्री गफूर की धमकी पसंद नहीं की है क्योंकि इससे खुला विवाद पैदा हो गया है। दूसरे शब्दों में, श्री गफूर को इसलिए चुप रहना चाहिए था चूंकि इस समाचार से, कि श्री नारायण गिरफ्तार किये जा सकते हैं, दल के अंदरूनी मतभेदों को बढ़ावा मिला है। वास्तव में, इस बात के पर्याप्त तर्क हैं कि श्री नारायण की गिरफ्तारी का विचार था लेकिन उनके विरुद्ध किसी भी कारवाई की थोड़ी सी भी भनक भर से उत्पन्न तीव्र प्रतिक्रिया को देखते हुए इस विचार को छोड़ दिया गया।

यह संदेह कि केंद्र ने श्री... गिरफ्तार करने ...

संपूर्ण क्रांति के सिपाही

तीन तरुण मित्र

[यही तीन नही कई मित्र हैं जो अपनी-अपनी जगह निष्ठापूर्वक काम में लगे हैं। हम कोशिश करेंगे कि समय-समय पर ऐसे मित्रों से पाठकों का परिचय करवाते रहें। ये तीन मित्र अलग-अलग व्यक्ति नहीं संघर्ष के चरित्र के प्रतीक हैं, और इसी नाते इनका परिचय यहां प्रस्तुत है। —संपादक]

नूतन

बिहार आदोलन के मथन से जो कुछ निकला है उनमें एक है नूतन ! नूतन अर्थात् बेहिसाब मेहनत, समर्पण और सादगी। नूतन अर्थात् कट्टरता, जिद और आग्रह. ऐसे सर्वथा विपरीत गुणों से मिलकर नूतन बनी है जो अपने एक मित्र के शब्दो मे साध्वी दीखती है और हमेशा मोह, माया, आध्यात्म की बात करती है.

बचपन से ही नूतन की प्रकृति सामान्य से अलग रही है. सादे कपडे पहनना, लोभ और लाभ दोनों पर काबू रखना और समाज मे जिन्हें कोई न देखना हो उन्हें देखने जाना, ये सब नूतन की प्रकृति के सहज अग है. इसलिए आदोलन मे आकर उसका जीवन कुछ बहुत बदल गया हो ऐसा नही हुआ खामोशी से काम करने की वृत्ति के कारण आदोलन मे उसका प्रवेश भी बहुत चुप-चुप हुआ.

घर मे शुरू मे काफी विरोध हुआ। इसमें कुछ दोष घर का और नूतन का अपना भी था. घर की सख्ती इतनी हुई कि बाहर निकलना बद कर दिया गया और फिर नूतन ही कमरे मे बद कर दी गयी यह अस्त्र भी बेकार गया तो कुछ और कड़े कदम उठाये गये. पटना में महिला सघर्ष समिति बनी तो नूतन उसकी सयोजक बनी और इस प्रकार घर के इकार और नूतन की स्वीकृति का तनाव बढा. आखिर आदोलन जीता और घर की रोक हटी.

नूतन ने मुहल्लों मे, कालेजो मे घूमना शुरू किया. भटकना नूतन का प्रिय काम है, और इस घूमने-भटकने के असमसाध्य काम ने पटना मे महिला सघर्ष समिति खडी कर दी. ३, ४ और ५ अक्तूबर की बदी मे पटना की बहुत सारी महिलाओं, लडकियों ने सचिवालय, दफ्तरों आदि पर धरना दिया था और गिरफ्तार होकर जेल गयी थी. नूतन भी उनमे थी और हजारीबाग जेल मे लबे समय तक बद रही.

जुलूस, प्रदर्शन, धरना आदि नूतन की रुचि के विषय नही रहे है, रचनात्मक कार्यों मे उसकी विशेष रुचि रही है. दवा, भोजन आदि की सार्थकता पर विश्वास नही करनेवाली नूतन इन दिनो बीमार है. प्राकृतिक चिकित्सालय में भर्ती है. यहा भी वह परेशान है कि बिहार मे किस प्रकार महिला सगठन खडा हो और किस प्रकार उनका प्रशिक्षण हो. थकने तक काम करते जाना नूतन का शौक है.

—कु० प्र०

गिरफ्तारी का सवाल....

झूठ पर आधारित नहीं है क्योंकि हाल ही मे पटना मे काफी खुसर-फुसर हुई थी कि उन्हें कहा और किस प्रकार रखा जाये. यह कदम इतनी गंभीरतापूर्वक उठाया गया था कि उसके लिये कई गुप्तचर सस्थाओ की मदद ली गयी थी. जब यह समझा गया कि इसके परिणाम खतरनाक हो सकते हैं तो उस प्रस्ताव को गृह मत्रालय ने अस्वीकार कर दिया. चूंकि सब शुरुआत श्री गफूर की तरफ से हुई थी, यह सभव है कि इस बार भी सभावनाओ पर विचार हुआ हो पर उसे अमल मे लाना असभव जान कर छोड दिया गया हो.

ये भूल जाते हैं

लेकिन जो लोग श्री नारायण की गिरफ्तारी पर विचार कर रहे है वे इस ओर ध्यान नही देते कि उनकी अनुपस्थिति के बाद आदोलन की दिशा क्या होगी. तब आदोलन का हिंसक हो जाना अवश्यम्भावी है और उनकी गिरफ्तारी अव्यवस्था को खुला निमत्रण हो सकती है. अधिकारियो को कम-से-कम एक बार का अनुभव तो है ही. यदि जयप्रकाश नारायण न होते, पटना के शांतिमय जुलूस की परिणति एक दगे मे हो जाती जब इदिरा ब्रिगेड के एक सदस्य ने जुलूस पर गोली चलाई थी. उस समय स्थानीय अधिकारियो ने जयप्रकाश नारायण को धन्यवाद दिया था और पुलिस के एक डी० आई० जी० तत्कालीन गृहमत्री श्री दीक्षित को यह सूचित करने दिल्ली गये थे कि वे जयप्रकाश नारायण ही थे जिन्होने शहर को बचा लिया

दूसरा कौन है ?

सरकार जो पहचानने मे भूल कर रही है वह यह है कि उनका आदोलन लोगो को अपने असतोष जाहिर करने का एक सही मौका दे रहा है. यह शांतिमय तथा अहिंसक है और जयप्रकाश हमेशा उन शक्तियो से लड रहे है जो इसे बदसूरत रूप देने की कोशिश मे है. बिहार मे श्री नारायण ने आदोलन को शांतिमय बनाये रखा ही है, दूसरे भागो मे भी उनकी उपस्थिति का गभीर एव शालीन प्रभाव होता है. उनकी अनुपस्थिति मे किसी दूसरे का ऐसा व्यक्तित्व या प्रभाव नही है कि लोगो को काबू मे रख सके.

उनकी गिरफ्तारी उन लोगो को भी हतप्रभ कर देगी जो उनका पूरी तरह समर्थन नहीं करते है. जयप्रकाश उन पुराने शूरमाओ मे गिने जाते हैं जिन्होने राष्ट्रीय आदोलन के दौरान बहुत कुछ त्याग किया है उनकी ईमानदारी सदेह से परे है और वे एक सरकार के विरुद्ध, जो भ्रष्ट तथा क्रूर मानी जाती है, न्याय और पवित्रता की लडाई के प्रतीक बन गये हैं □

वीरेन्द्र कुमार

पटना से लगभग ५० किलोमीटर दूर पूर्व एक कस्बा चंडी है जो चंडी प्रखंड का मुख्यालय कहा जा सकता है. इस शहरनुमा गाव मे आदोलन की शुरुआत १६ मई '७४ से मानी जाती है जब स्थानीय विधायक के रास्ते मे धरना देते हुए वहा के युवक तथा बिहार मत्रिमडल के एक वरिष्ठ सदस्य के रिश्तेदार वीरेन्द्र कुमार सिन्हा की बुरी तरह पिटाई हुई थी .

अपनी उम्र से कुछ ज्यादा दीखनेवाले वीरेंद्र का बचपन से ही आदर्शों के प्रति झुकाव रहा है . जब वे छठे वर्ग मे थे तब अपनी कक्षा के लड़को के साथ उन्होंने भारत सुधारक युवक समाज की स्थापना की थी , इस समाज मे युवको के व्यक्तिगत-चरित्र पर ज्यादा जोर दिया जाता था . कोई लड़का चाय,पान, बीडी, सिगरेट का व्यवहार नहीं करेगा . स्कूल के दिनो मे उन्होंने वहा के विधायक के चुनाव प्रचार मे भी भाग लिया . बाद मे दूसरे चुनाव मे ये निष्पक्ष एव निष्क्रिय हो गये थे. सन ६९ के मध्यावधि चुनाव तक उनका मोहभग हो चुका था भीषण अकाल के दिनो मे भी जब चडी अकाल क्षेत्र घोषित न हो सका, दस वर्षों मे भी जब वहा के विधायक चडी के विकास मे असफल रहे तो वीरेंद्र जी को व्यवस्था,का असली चेहरा समझ मे आया और सन ६९ के चुनाव मे इन्होंने उक्त विधायक के खिलाफ काम किया फिर भी लाठी-पैसे के जोर पर विधायक चुन लिये गये .

इस बीच वीरेंद्र जी मैट्रिक पास करके रांची कालेज मे चले गये थे . आंदोलन शुरू हुआ तब वे द्वितीय वर्ष विज्ञान के परीक्षार्थी थे . दिसबर '७४ मे चडी के नागरिको तथा किसानो ने अपने विधायक से ऊब कर विरोध के लिए किसान मोर्चा बनाया था, जिसकी सविधान समिति के सदस्य के रूप मे वीरेंद्र जी भी चुने गये थे . इधर १८ मार्च '७४ को आदोलन शुरू हुआ और २२ मार्च को चडी का एक स्कूली छात्र बिहारशरीफ मे पुलिस की गोली से शहीद हो गया, चडी मे स्थिति काफी तनावपूर्ण थी .

वीरेंद्र जी ने बताया कि "मैं भी तब बड़े पैशोपेश में था लेकिन २६ मार्च को जब जे० पी० ने आदोलन छेड़ दिया तो मैं कूद पड़ा ." और तबसे अबतक उनके सामने आदोलन ही आदोलन है घर से प्रारंभिक विरोध के बावजूद वे डटे रहे . १६ मई को जब कांग्रेसी गुडो ने ऊपर के इशारे पर उन्हे पीटा तो पूरे चंडी का विश्वास और उसकी सहानुभूति इन्हें प्राप्त हो गई . ३१ अक्तूबर को वीरेंद्र जी मीसा मे गिरफ्तार किये गये

चडी मे जनता सरकार के गठन मे पहले गाव-गाव पैदल घूमकर स्कूलो के लड़को की, नागरिको की सभा बुलाना छा० स० स० तथा ज० स० स० के गठन का काम काफी तेजी से किया और आज भी जब शेष 'गावो मे सगठन करने के लिए टोलिया बनी हैं वे अपनी टोली के साथ गाव-गाव घूम रहे हैं

आदोलन के उद्देश्यो की पूरी समझदारी उनके इसी बात से झलकती है, 'सम्पूर्ण क्रांति तो कोई एक दो साल मे होगी नही जीवन लगाने तथा घोर त्याग एव तपस्या की जरूरत है ."

व्यक्तिगत चरित्र पर विशेष जोर देनेवाले वीरेंद्र जी का राजनैतिक दल, सत्ता की राजनीति पर विश्वास नही है उन्होने कहा, 'मैंने जब जे० पी० की लोक स्वराज्य पुस्तक पढ़ी तो कुछ भी स्वाभाविक नही लगा . हा ! काम करने की बड़ी जरूरत है उस दिशा मे. जब यह पूछा कि आपका दैनिक कार्यक्रम क्या है. उन्होंने बताया सुबह नाश्ता करके कस्बे के हरेक घर मे जाता हूँ, हाल चाल पूछता हू लोगों के साथ गप-शप करता हू . फिर दोपहर मे खाना खाकर गावो की ओर निकल जाता हू देर शाम तक लौटता हू . खाना खाकर थोड़ी देर पढ़ता हू और फिर थकावट के कारण नींद आ जाती है .'

अपने व्यक्तिगत आचरण, स्पष्टवादिता के कारण पूरे इलाके मे काफी लोकप्रियता मिली है उन्हें. हरेक घर की महिला उन्हें अपने बेटे के समान ही मानती है और बिना कुछ खिलाये घर मे जाने नहीं देती .

बिहारशरीफ मे कार्यकर्ताओ की बैठक मे वीरेंद्र जी ने सहज ही ध्यान खींच लिया था . तब उनसे पूछा था, 'भविष्य की क्या योजना है ?'

'आज जो कर रहा हू उससे अलग कुछ नहीं;' वीरेंद्र जी का उत्तर था .

—अ० कु०

मंजू कुमारी

पहली नजर मे मंजू कुमारी अन्य साधारण लड़कियों सी ही दीखती है . सांवला रग, औसत कद, स्वस्थ शरीर शुरू-शुरू मे वह जोश और हिम्मत पकड़ मे नही आती जो १४ वर्ष की इस छोटी लड़की मे है यही वजह है कि अपरिचित व्यक्ति के लिये निहायत ही साधारण सी मजू सघर्ष के अपने साथियो के बीच बहुत प्रशसित है .

● मंजू कुमारी

मां-बाप अविवाहित लड़की को "घर के बाहर, जाने की छूट नही देते हैं और शादी के बाद पति की पाबंदियां उसे बाँध देती हैं यो भी घर का सारा काम-काज माथे पर होता है सम्पूर्ण समाज की समझ उनमे पैदा हो नहीं पाती 'यहाँ दूसरों के आगे बढ़ने की राह नही देखनी चाहिये'—कुछ इसी तरह उसने अपने को व्यक्त किया .

पुलिस की लाठियों ने उसे कभी डराया नही चाहे वह समस्तीपुर हो या पटना, उसने आगे बढ़कर लाठिया खाईं, भले दर्द ने बाद तक परेशान किया हो विरोध प्रदर्शनो मे भाग लेने के लिये समस्तीपुर मे ४ घटे हिरासत मे रही और विधान सभा पर धरना देने के लिये हजारीबाग जेल मे १० दिनों तक . विधान सभा के द्वार पर गिरफ्तार किये जाने के बाद बस पर चढ़ने से इन्कार किया . आखिर महिला पुलिस बुलानी पड़ी . अक्तूबर बद के दौरान दुकानें बद करवाना रिश्वत वालों को धमकाना, शराब की

(शेष पृष्ठ ३८ पर)

महिलाओं की भूमिका

(पृष्ठ २७ से आगे)

दूर-दराज गांवों में भी क्रांति की चेतना फैलती जा रही है, जिसका जीता-जागता उदाहरण हैं बक्सर की सुंदरी देवी, जिन्हें रेलवे लाइन पर धरना देते हुए गिरफ्तार कर लिया गया था और हजारीबाग कारा में वे भी लगभग डेढ़ महीने तक थीं. पटना के आस-पास के गांवों में बहनों की कार्य-प्रणाली सामान्यतः ऐसी होती है कि दो लड़के और दो लड़कियां टोली बनाकर किसी ओर निकल जाते हैं और प्रतिदिन दो-तीन गांवों में संगठन बनाते हुए चार-पांच दिनों में वापस चले आते हैं.

लड़कियां, हथियार के रूप में

इस आंदोलन में महिलाओं एवं लड़कियों की सक्रियता से लड़कों को इतना लाभ तो अवश्य हुआ है कि वे आवश्यकता पड़ने पर लड़कों के ढाल के रूप में आ जाती हैं. मगध महिला कालेज की रेखा सिंह ने ५ अक्टूबर, १९७४ को दो घटना बतायीं. ५ अक्टूबर को सुबह अनिल जी को, जिनपर 'मीसा' लगा हुआ था, एक इंस्पेक्टर ने पीछा करने के बाद राजेंद्र ब्लाक के पास पकड़ा. संयोगवश तभी रेखा जी भी रिक्शे से पहुंचीं. उन्होंने गिरफ्तारी का विरोध किया और फिर परिस्थिति यह थी कि अनिल जी के बायें हाथ को पुलिस इंस्पेक्टर और दायें हाथ को रेखा जी खींच रही थीं. अतः इन्स्पेक्टर को हाथ छोड़ना पड़ा. फिर अनिल जी जो भागे तो इंस्पेक्टर कुछ भी नहीं कर सका सिवाय रेखा जी की गिरफ्तारी का वारंट निकलवाने के. इसी प्रकार उसी दिन दोपहर में नूतन जी को गिरफ्तारी से बचाने के लिये रेखा जी उन्हें साइकिल पर बैठा कर ढाई मील भागी थीं.

प्रशिक्षण शिविर

आन्दोलन के लिये महिला कार्यकर्ताओं को तैयार करने के उद्देश्य से विभिन्न स्थानों पर शिविर का आयोजन किया जाता है. जमुई (मुंगेर) में एक महिला प्रशिक्षण शिविर का आयोजन दस दिनों के लिये किया गया था. छात्र-युवा संघर्ष वाहिनी के एक सप्ताह के शिविर में भी कुछ लड़कियों को प्रशिक्षण दिया गया. प्रांतीय स्तर का प्रशिक्षण शिविर खादीग्राम (जमुई) में अप्रैल में लगाया गया था. □

जयप्रकाश जी से

आंदोलन के प्रारंभ से अबतक कई कार्यक्रम आपने दिये—प्रांतीय प्रदर्शन, घेराव, सत्याग्रह, बंद आदि—फिर भी एक उपेक्षा का भाव सरकार का लगता है. न आंदोलन के बुनियादी सवालों की तरफ उसका ध्यान है और न तात्कालिक मांगों की तरफ. इतने प्रयासों के बाद भी सरकार का यह रुख क्या शांतिमय उपायों की मर्यादा का सूचक नहीं है ?

शांतिमय - और उसके साथ मैं जोड़ना चाहूंगा शुद्ध—उपायों की मर्यादा असीम है. हिंसक उपायों की मर्यादा तो हिंसा के साधनों तक सीमित रहती है, परन्तु शान्तिमय और शुद्ध उपायों की मर्यादा की कोई सीमा नहीं हो सकती क्योंकि उनका आधार तो मनुष्य का अतुलित आत्मिक बल ही है! सरकार ने अबतक आंदोलन की उपेक्षा की है इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं. सत्ता से मदांध होकर इतिहास में कई बार ऐसी घटना घट चुकी है. मेरा तो इस पर केवल इतना ही कहना है कि 'विनाशकाले विपरीत बुद्धि'.

राजनैतिक दलों की जनशक्ति के संगठन में रुचि नहीं है. कई जगहों पर स्वतंत्र जनशक्ति की संभावना का ये विरोध भी कर रहे हैं. एक ऐसी स्थिति भी संभव दीखती है जब 'जनता बनाम राजनैतिक दल' की परिस्थिति पैदा हो जाये. आप इस विषय में क्या सोचते हैं ?

यह ठीक है कि राजनैतिक दलों के लिए दल-शक्ति, जन-शक्ति से कहीं अधिक मूल्यवान है. परन्तु यदि स्वतंत्र जन-शक्ति का पूरा-पूरा विकास हो पाता है तो किसी दल का साहस नहीं होगा कि उसका वह विरोध करे. लोकतन्त्र में कोई भी दल, चाहे वह कितना भी बलवान हो, जन-शक्ति का सामना नहीं कर सकता है. आज जो चल रहा है वह जन-शक्ति का दलों द्वारा विरोध नहीं है, बल्कि उस शक्ति पर हावी होने की उन की कुचेष्टा है. परन्तु उनकी यह चेष्टा, विफल होनेवाली है, यद्यपि जन संघर्ष समितियों पर दल कुछ समय के लिए हावी हो भी सकते हैं. यदि आंदोलन आगे बढ़ता गया और जन-जागृति तथा जन-

● जनशक्ति ही एकमात्र हल है....

'तरुण क्रांति' की विशेष बातचीत

शक्ति साथ-साथ बढ़ती गयी जैसा कि अनिवार्य है, तो जन संघर्ष समितियों पर राजनैतिक दलों का प्रभाव अल्पकालीन ही साबित होगा.

जनता सरकार बनेगी तो वह सामाजिक जीवन के उन प्रश्नों को भी हाथ में लेगी जो परस्पर हित विरोध के प्रश्न हैं, जैसे—भूमि का प्रश्न. भूमि का प्रश्न हित-विरोध का प्रश्न है. ऐसे सवालों को लेने पर संगठित जनशक्ति को दुहरे मोर्चे पर लड़ना होगा—समाज से और सरकार से क्या तब जनशक्ति टिक सकेगी या संगठित हो सकेगी? सर्वविरोधी हितों को शांतिपूर्ण ढंग से सुलझाने के क्या उपाय होंगे?

आपके इस प्रश्न में जो संकेत है वह मैं समझता हूं और वह समाध्य भी है. इस संकट का हल एक ही रीति से हो सकता है और वह यह है कि जैसे ग्राम-पंचायतें आदि गांवों के मुट्ठी भर निहित स्वार्थवालों के हाथों में चली गयी हैं वैसे जनता सरकारें न जाने पायें. इसके लिए मैं यह आवश्यक समझता हूं कि हर गांव, पंचायत और प्रखंड में खेतिहर मजदूरों का संगठन किया जाये. साथ ही यह प्रयत्न किया जाये कि भूमिहीनों तथा अल्प भूमिवालों, जिनकी संख्या मिल करके ग्रामीण समाज का ९० प्रतिशत होगी, के हाथ में जनता सरकारों का संचालन हो. इस कार्य में क्रांतिकारी छात्र और युवक नेतृत्व कर सकते हैं. समाज के अन्तर्विरोधी हितों को शांतिपूर्ण ढंग से सुलझाने के लिए सत्याग्रह, असहयोग आदि उपायों का भी आवश्यकता पड़ने पर प्रयोग किया जायेगा.

ग्रामस्वराज्य के आंदोलन में भी ग्राम सभाएं बनी थीं और कई बनी भी

○ ……और उसी एक बात की कोशिश मैं कर रहा हूं.

थीं. पर, एक बिंदु पर आकर—स्वप्रेरणा से गतिशीलता—वे ठिठक गयी थीं. संघर्ष समितियां वहां नहीं ठिठकेंगी ऐसा मानने के क्या कारण हैं?

ग्राम स्वराज्य आंदोलन के काल और वर्तमान काल में एक बहुत बड़ा अन्तर यह है कि वर्तमान में एक जन-आंदोलन और संघर्ष चल रहा है. यह संघर्ष यदि चलता रहा, जैसा कि निरंतर क्रांति की मेरी कल्पना में सन्निहित है, तो संघर्ष समितियां ठिठक नहीं जायेंगी. ग्रामस्वराज आंदोलन के समय कोई संघर्ष नहीं था और मजदूरों तथा भूमिहीनों का कोई अलग संगठन नहीं था जो अपने हितों के लिए हर गांव में संघर्ष करे. ग्रामदानी गांवों में हितों के समन्वय का प्रयत्न हम करते थे और संघर्ष से बचते थे. मैं समझता हूं कि जब बिहार के गांवों में ९० फीसदी गरीब हैं तो उन गरीबों के संगठन और उनके संघर्ष को वर्ग-संघर्ष कहकर सर्वोदय विचार के अनुसार टाला या अमान्य नहीं किया जा सकता. यह मैं मानता हूं कि अभी तक इस प्रकार का संघर्ष वर्तमान संघर्ष के दरम्यान गांवों में छिड़ा नहीं है लेकिन उसका छिड़ना अनिवार्य है, यदि यह संघर्ष जन-संघर्ष है और अपने उद्दिष्ट स्थान पर पहुंचने की आशा रखता है. □

जनता का मांग पत्र... (पृष्ठ ९ से आगे)

राजनीतिक भ्रष्टाचार का उन्मूलन

भ्रष्टाचार हमारे राजनीतिक जीवन के प्राण तत्वों को खाये जा रहा है. इससे विकास की प्रक्रिया छिन्न-भिन्न हो रही है. प्रशासन कमजोर बन रहा है तथा नियम-कानून का मखौल हो रहा है. साथ ही इससे जनता का विश्वास नष्ट हो रहा है और उसका लोकप्रसिद्ध धैर्य समाप्त हुआ जा रहा है. जन जीवन को भ्रष्टाचार के कैंसर से मुक्त करने के लिए हमारी मांग है कि :

१. उच्चाधिकारयुक्त न्यायाधिकरणों की स्थापना हो और उन्हें प्रधानमंत्री एवं मुख्यमंत्रियों सहित उच्च पदस्थ व्यक्तियों पर लगाये गये आरोप की जांच करने का अधिकार हो. ऐसे मामलों में जहाँ भ्रष्टाचार के आरोपों की पुष्टि हो चुकी हो, दोषी पाये गये व्यक्तियों पर अनिवार्य रूप से मुकदमा चलाया जाये. सभी मामलों में जांच रपट अवश्य प्रकाशित करायी जाय.

२. संथानम कमिटी की भ्रष्टाचार के आरोप संबंधी सिफारिशें लागू की जाएं. यह संदेह होने पर कि मामला प्रत्यक्ष रूप से जांच के योग्य है या नहीं, निर्णय सर्वोच्च न्यायालय या उच्च न्यायालय के द्वारा अथवा कार्यपालिका से स्वतन्त्र और पर्याप्त अधिकारों से युक्त न्यायाधिकरण हो वहां ऐसे न्यायाधिकरणों द्वारा किया जाये.

३. एक ऐसा कानून बनाया जाये जिसके अनुसार सभी सार्वजनिक पदाधिकारियों के लिए पद-ग्रहण करने के तुरंत बाद और तत्पश्चात समय-समय पर अपनी संपत्ति की घोषणा करना अनिवार्य हो. ☐

फतुहा में आंदोलन (पृष्ठ २३ से आगे)

कई सक्रिय कार्यकर्ताओं को हिरासत में ले लिया गया. ट्रेन तथा बस बंद कर दिये जाने के कारण ३ नवंबर की अर्द्धरात्रि में हजारों लोगों का जत्था पैदल ही पटना के लिए चला. सैकड़ों लोग विभिन्न चेक-पोस्टों पर बंदी बना लिये गये.

३ तारीख की सुबह संघर्ष समिति के लोगों ने कानून की विभिन्न धाराओं का उल्लंघन करके एक जुलूस निकाला.

संघर्ष की वर्तमान स्थिति काफी सुदृढ़ और विस्तृत है. आंदोलन का कार्यक्षेत्र गांव गांव तथा घर-घर फैल रहा है. संगठन के तथा रचनात्मक कार्य जारी हैं. जनता सरकार स्थापित करने की सारी संभावनाओं पर विचार कर लिया गया है. यथाशीघ्र इसकी घोषणा भी होने वाली है.

महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ

- विधान सभा के विघटन के पक्ष में १५५६८ हस्ताक्षरों का संकलन
- स्थानीय विधायक का विधान सभा की सदस्यता से इस्तीफा.
- आंदोलन के क्रम में १५५ छात्रों तथा नागरिकों की गिरफ्तारी.
- प्रखंड के २२ में से १८ पंचायतों में संघर्ष समिति का गठन.
- अबतक १५ विशाल प्रदर्शनों का आयोजन.
- एक सौ से अधिक छोटी-बड़ी सभाओं का आयोजन.

—अनिल कुमार वर्मा

बिहार आंदोलन : तिथियां एवं घटनाएं (पृष्ठ २१ से आगे)

४ दिसंबर '७४–विधान सभा तथा विधायक के निवास स्थानों पर धरना देने का कार्यक्रम शुरू हुआ. लगभग २५० सत्याग्रही गिरफ्तार हुए.

६ दिसंबर '७४–बरौनी में जे० पी० के सामने कई ब्राह्मण युवकों ने जनेऊ तोड़ा.

८ दिसंबर '७४–पटना सिटी में छात्रों ने कांग्रेसी विधायक जमील अहमद का घेराव किया. विधायक ने गोली चलायी जिसके फलस्वरूप कई छात्र घायल हो गये.

९ दिसंबर '७४–उक्त गोली कांड के विरोध में पटना सिटी पूर्णतः बंद रहा.

१२ दिसंबर '७४–मैरवा गोली कांड के विरोध में पटना में विशाल जुलूस निकाला गया.

२४ दिसंबर '७४–जे० पी० के आदेश पर संचालन समिति के सभी सदस्यों ने त्याग पत्र दे दिया.

जे० पी० ने छात्र युवा संघर्ष वाहिनी के संगठन का विचार रखा.

२५ दिसंबर '७४–वाराणसी में जे० पी० ने कहा कि कूपन के हिसाब में गड़बड़ी हुई है.

३१ दिसंबर '७४–विधान सभा के सामने धरना का कार्यक्रम समाप्त हुआ. हजारों सत्याग्रहियों ने गिरफ्तारी दी.

दिसंबर माह में मुख्यतः संगठन तथा प्रशिक्षण, शिविरों के आयोजन का कार्यक्रम चला.

३ जनवरी '७५–श्री ललित नारायण मिश्र की समस्तीपुर बम कांड में मृत्यु और प्रधान मंत्री का बिहार आंदोलन पर प्रहार. जे० पी० ने हिंसा और आतंक की नीति की भर्त्सना की.

२६ जनवरी '७५–पूरे प्रांत में लोक-गणतंत्र दिवस की धूम. इस अवसर पर बख्तियारपुर/बिहार में छात्रों पर लाठी प्रहार.

२६ जनवरी '७५–मुख्यमंत्री गफूर की जे० पी० को गिरफ्तार करने की धमकी और देशभर में तीव्र प्रतिक्रिया.

१९ फरवरी '७५–आकाशवाणी के पक्षपातपूर्ण रवैये का विरोध करते हुए छात्र संघर्ष समिति द्वारा आकाशवाणी के सामने प्रदर्शन और ज्ञापन अर्पित.

६ मार्च '७५–बिहार आंदोलन के समर्थन तथा अन्य मांगों के साथ नयी दिल्ली में अखिल भारतीय प्रदर्शन.

१८ मार्च '७५–बिहार आंदोलन की वर्षगांठ पटना में विशाल प्रदर्शन और आम सभा.

(संकलन : अशोक कुमार)

मंजू (पृष्ठ ३५ से आगे)

दुकान पर धरना देना दैनिक कार्यक्रम थे. पोस्टआफिस पर पुलिस का घेरा था. मंजू ने लड़कों को पीछे छोड़कर चहारदीवारी पार की और पुलिस का घेरा अर्थहीन साबित हुआ.

मंजू को भी अप्रजातांत्रिक सरकार और रूढ़िग्रस्त परिवार से साथ-साथ ही संघर्ष करना पड़ा. पड़ोसियों ने बदचलन तक कहा पर वह कैसे इन सिवानों से टटी नहीं बल्कि और पुख्ता हुई यह सोचने की बात है. उसने बताया "इच्छा के विरुद्ध दबाव देने का अंजाम बुरा होता है–मैं घर छोड़ देती." मंजू अपने भविष्य को भी इस संघर्ष से अलग नहीं देख पाती है.

शादी के बाद यदि इसकी अनुमति न मिली तो?"— "मैं अपना रास्ता चुनूंगी, वह अपना". उसने जवाब दिया. मंजू को दलों के प्रति आकर्षण नहीं क्योंकि उनमें स्वार्थ होता है.

विचारों की समझ और रूढ़ियों से न बंधने का हौसला उसे अन्य लड़के-लड़कियों से अलग करता है. अब सब उसे हिम्मत बंधाते हैं. पर समस्तीपुर की 'पुरस्कार-प्राप्त' पुलिस ने ललित नारायण मिश्र की हत्या के सिलसिले में मंजू पर वारंट जारी किया था.

—कु० मं०

बिहार आंदोलन : उपलब्धियां और संभावनाएं

□ गणेश मंत्री

क्रांतिकारी आंदोलन चलता है योद्धाओं के कर्म से. निरे योद्धा नहीं, विचारवान, लक्ष्यबद्ध और प्रस्तुत परिस्थिति को अपने क्रांतिकारी कर्म से मोड़ने में समर्थ योद्धा ही उसे शक्ति और दिशा देते हैं. साहिल पर बैठ कर तूफान का नजारा लेने वालों को क्या अधिकार कि वे तूफान से जूझ रहे लोगों को सलाह-मशविरा दें? पर अब तूफान बीच समुन्दर तक कहां सीमित रहा है? पूरे सागर को मथने के सिलसिले में वह साहिल पर बैठे लोगों को भी थपेड़ रहा है. साल भर पहले शुरू हुआ बिहार जन संघर्ष कभी का प्रदेश की भौगोलिक सीमाओं को लांघ कर देशव्यापी बन चुका है. लोकनायक और उनके नेतृत्व में काम कर रही बिहार प्रदेश छात्र संघर्ष समिति के इस अनूठे प्रयोग के साथ हम सब की आशाएं-आकांक्षाएं जुड़ गयी हैं.

ज्यों-ज्यों दमन बढ़ा है, त्यों-त्यों ही संघर्ष समिति के कार्यकर्ताओं और बिहार की जनता का क्रांतिकारी संकल्प भी दृढ़ हुआ है. आज स्थिति यह है कि एक ओर दमनचक्र पर टिकी हुई, अपनी मनमानी को ही लोकतन्त्र कहने वाली स्थापित सत्ता तथा उसके बगलगीर हैं और दूसरी ओर है लोकतांत्रिक मूल्यों से प्रतिबद्ध लोकशक्ति. निश्चय ही स्थापित सत्ता और उसके बगलगीरों के तरकश में तीरों की कमी नहीं, पर जाग्रत, संगठित लोकशक्ति को परास्त करने में समर्थ अमोघास्त्र अभी बना नहीं. बिहार आंदोलन की यदि दूसरी सारी उपलब्धियों को मुल्तवी किया जाये, तो भी, लोकशक्ति को जगाने, देश के एक सिरे से दूसरे सिरे तक राजनीति की परिधि पर बैठे सामान्य-जन को प्रेरित कर, बीच मंच पर ला खड़ा करने का कार्य ही अपने आप में एक बड़ी उपलब्धि है.

नये संसार का नजारा

इसके साथ ही जुड़ी हुई है एक और बड़ी उपलब्धि—नयी पीढ़ी के राजनीतिकरण की. यह इसके पहले विभिन्न दलों द्वारा अपने सीमित स्वार्थ के लिए छात्रों को राजनीति में घसीटने की पुरानी परंपरा से अलग है. बिहार आंदोलन ने न सिर्फ शहरी युवा के साथ कस्बाई-देहाती युवा का राजनीतिकरण किया है, बल्कि संघर्ष की आंच में पिघला कर रचनात्मक कार्यों के सांचे में उसे नया व्यक्तित्व दिया है. हाल के महीनों में यह युवाशक्ति प्रदर्शनात्मक आंदोलनात्मक कार्यवाहियों के बजाय 'जनता सरकार' के माध्यम से रचनात्मक, नव-निर्माणात्मक कार्यों में जुटी है. यद्यपि इससे समाचार-पत्रों के लिए सुर्खियां तैयार नहीं हो रही हैं, पर एक ऐसा बुनियादी कार्य हो रहा है, जिसके अभाव में आजादी के बाद के सभी छिटपुट क्रांतिकारी प्रयास मुर्झा कर रह गये हैं.

क्रांति मात्र ध्वंस या विनाश ही नहीं है. वह सृजन और निर्माण भी है. भाड़े या किराये के लोगों के बूते पर नहीं, बल्कि वह सफल होती है क्रांतिनिष्ठ लोगों की स्वयंसेवकी से. देश की सामाजिक आर्थिक वस्तुस्थिति से अनभिज्ञ रहकर विदेशी मुहावरों की रटन से अपनी क्रांतिकारिता का सबूत देनेवाले कितने ही लोगों को यह स्वयंसेवकी 'सुधारवादी भटकन' लग सकती है, परन्तु हमारे संदर्भ में इसके दूरगामी क्रांतिकारी परिणामों की उपेक्षा नहीं की जा सकती.

तीसरी बड़ी उपलब्धि

बिहार आंदोलन की तीसरी बड़ी उपलब्धि देश के मृतप्राय विरोधी दलों में नयी चेतना का संचार है. सत्तारूढ़ दल के राक्षसी बहुमत, स्वयं अपने अवसरवादी चरित्र और शासक दल एवं वर्ग के असंतुष्ट तत्वों की सराय होने के कारण पिछले कुछ वर्षों से विरोधी दल ठठ्ठर मात्र बन कर रह गये थे.

एक सत्याग्रही को गिरफ्तार करते पुलिस जन.

बिहार आंदोलन ने इन दलों को देश की राजनीति में फिर से सशक्त बनाया है, पर ठठरों में प्राण फूंक कर नहीं. बिहार आंदोलन ने इन दलों के सड़े गले अंगों को किसी हद तक तराशा है. संघर्ष और आंदोलन के मैदान में खड़ा कर उनमें नयी जीवनी शक्ति जगायी है. ऐसी शक्ति, जो बरसों से चली आ रही वैचारिक जड़ता को हिला रही है और देश की समस्याओं के संदर्भ में नये परिवर्तन-अभिमुख सोच को प्रेरित कर रही है. यह सोच का सिलसिला बढ़ता गया तो मुमकिन है दलों के पुराने ठट्ठर खड़खड़ाकर गिर जायें और सोच की नयी प्रक्रिया को असली रूप देने में समर्थ नयी संगठनात्मक शक्ति का वह विकल्प भी उभर आये, जिसके अभाव में देश का लोकतंत्र सत्तारूढ़ दल और प्रधान मंत्री के हाथों में जमे हुए पासों का निरर्थक खेल बन कर रह गया है.

बिहार आंदोलन की एक अन्य महत्वपूर्ण उपलब्धि गांधी-विचार का नवसंस्कार है. चाहे जो भी कारण रहे हों, वर्षों से पारंपरिक गांधीवाद स्थापित समाज व्यवस्था का निरीह गवाह बन कर रह गया था, कम से कम, चुनौती के रूप में वह तेजहीन हो चला था और देश के शासक गांधीवादियों की मौन सहमति को मानकर चलते थे. बिहार आंदोलन में सर्वोदयकर्मियों की साझेदारी और नेतृत्व से न सिर्फ मौन का मकड़जाल कटा है, बल्कि सौम्य, सौम्यतर, सौम्यतम सत्याग्रह की शास्त्रीय भूलभुलैया से निकलकर सर्वोदय आंदोलन शांतिपूर्ण जन संघर्ष के ठोस और समतल धरातल पर आ गया है. इससे स्वाभाविक ही सत्ता कुपित हुई है, उसने अपने 'अपशब्दकोष' के गंदे से गंदे और निरंकुशतंत्र के घातक से घातक अस्त्र आंदोलनकारियों के विरुद्ध इस्तेमाल किये हैं. पर इस सारे प्रचार अभियान के बावजूद आंदोलन की शक्ति बढ़ती गयी है और उसके साथ ही बढ़ती गयी है नये बिहार, नये देश के निर्माण में गांधी-विचार की सार्थकता.

क्रांति की संभावनाएं

बिहार आंदोलन के क्रांति में बदलने की संभावना कहां है? आंदोलन-पूर्व और आंदोलन-पश्चात् की स्थितियों के अन्तर में. आज भी यह अन्तर साफ देखा जा सकता है. गुजरात के युवा विस्फोट की सीमाओं को जान चुकने के बाद बिहार आंदोलन पहला आंदोलन है, जिसमें युवा शक्ति शांतिपूर्ण उपायों से दूरगामी लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए जुटी है. इस प्रयास में न सिर्फ उसने पिछले कुछ वर्षों में प्रचलित और सरकारी हिंसा से निरंतर प्रोत्साहित तोड़-फोड़ के मार्ग को छोड़ा है, वरन बड़े शहरों से दूर, बिहार के गांवों कस्बों को अपना शक्ति-केन्द्र भी बनाया है. आजादी के बाद पहली बार राजनीति राजनगरों का मोह छोड़कर लोक बस्तियों की ओर अभिमुख हुई है—मत बटोरने के लिए नहीं, मन और मत बदलने के लिए. आजादी के बाद से चली आ रही यथास्थितिवादी राजनीति की धारावाहिकता इससे खंडित हुई है.

पर देश में यथास्थितिवादी धारावाहिकता के स्रोत अनेक हैं. तीन बड़े स्रोत, जिनसे देश के मौजूदा राजतंत्र, समाजतंत्र और अर्थतंत्र के भोगीवर्ग को शक्ति मिलती है वे हैं—जाति, संपत्ति और अंग्रेजी ऊंची जाति, असाधारण संपत्ति और अंग्रेजी शिक्षा-दीक्षा में पला-पुसा फूला शासकवर्ग वर्तमान तंत्र का आधारस्तंभ भी है और उसका स्वामी भी. यद्यपि मार्क्सवादी शैली का वर्ग संघर्ष कभी गांधी जी का अभीष्ट नहीं रहा, पर अस्पृश्यताउन्मूलन और लोकभाषाओं के प्रोत्साहन के माध्यम से उन्होंने अंग्रेजी-अभिमुख उच्चवर्ग की अजीविकी में फंसी कांग्रेस को राष्ट्रीय संग्राम के शक्तिशाली अस्त्र में बदला था. स्वातंत्र्य प्राप्ति के अंतिम दौर में गांधी की उपेक्षा के साथ ही देश में एक बार फिर धारावाहिकता, सामाजिक-राजनीतिक-आर्थिक-सांस्कृतिक स्थितियों, संबंधों, संस्थानों को ज्यों का त्यों बनाये रखने, परंपरा-प्रेम की शांति कहने, पूंजीवाद-पोषक अर्थनीतियों पर समाजवाद का मुलम्मा चढ़ानेवाली शक्तियां भी दृढ़ होती गयीं.

पिछड़ेपन की रस्सी

स्वाभाविक ही है कि बिहार आंदोलन अपनी शक्ति बढ़ने के साथ जाति और संपत्ति के साथ चिपके निहित स्वार्थों को चुनौती देने लगा है. जनेऊ तोड़ो अभियान उसकी एक अभिव्यक्ति है. दूसरा महत्वपूर्ण कार्यक्रम जनता सरकार तथा युवा-छात्र जन संघर्ष समितियों में पिछड़ी जातियों, हरिजनों, आदिवासियों, अल्पसंख्यकों और महिलाओं को कोशिश करके आगे लाने का है. बिहार को जातिवाद का अभेद्य दुर्ग कहा गया है. स्त्रियों की भी स्थिति वहां देश के कई राज्यों से खराब है. राजनीतिक भ्रष्टाचार में ना अग्रणी रहा है ही. यहीं सबसे लंबा और शक्तिशाली भ्रष्टाचार-विरोधी अभियान चला है. कोई कारण नहीं कि वहां जाति-विरोधी अभियान तेजी से आगे न बढ़े. आखिर रस्सी वहीं टूटती है, जहां से वह सबसे अधिक खिंचती है. जाति-दबदबे, स्त्रियों के पिछड़ेपन की इस रस्सी को तोड़े बिना न तो भारतीय समाज में सबसे दबे कुचले, मार्क्सवादियों के सर्वहारा से भी अधिक वंचित-प्रताड़ित को क्रांति कर्म के लिए प्रेरित किया जा सकता है और न ही ग्रामीण तथा शहरी अर्थशक्ति के समान वितरण एवं विकेंद्रीकरण को कारगर रूप ही दिया जा सकता है. जैसे-जैसे बिहार आंदोलन के क्रांतिकारी लक्ष्य ठोस कार्यक्रमों की शक्ल अख्तियार करते जायेंगे, जाति-दबदबे की दीवार से उनका टकराव और उस पर निर्णायक प्रहार अनिवार्यता में बदलता जायेगा.

शासक वर्ग का दूसरा बड़ा संबल संपत्ति है—उत्पादन के साधन के रूप में भी, अनुत्पादक संचय के रूप में भी. गो कि मार्क्सवादी साम्यवादियों के मन को संतोष

> "...ऐसे ठीक है कि कायरता और हिंसा में चुनाव करना हो तो मैं किस खेत की मूली हूं, महात्मा गांधी ने स्वयं कहा है, अगर यही दो तुम्हारे पास विकल्प हों, हिंसा या कायरता तो हिंसा चुनो, कायर मत बनो. इसका क्या मतलब, गांधीजी हिंसा बता रहे थे? यही दो विकल्प हैं, आपके सामने? विकल्प तो हिंसा और अहिंसा का भी है न? उसको क्यों भूल जाते हो? क्यों भूल जाते हो? जोश से ही काम नहीं चलेगा. हिंसा की शक्तियों का मुकाबला नहीं कर सकोगे.'
>
> —जयप्रकाश नारायण
>
> पटना सिटी (६-४-७५)

मोतीहारी

१८ मार्च '७४ की सुबह छात्रों ने एक जुलूस निकाला. २३ मार्च '७४ को छा० स० स० के आह्वान पर शहर बंद रहा. ३ अप्रैल से अनशन एवं उपवास का कार्यक्रम चला जो ७ अप्रैल तक चला. इसमें सभी वर्ग के लोगों ने भाग लिया. ८ अप्रैल ७४ को विशाल मौन जुलूस निकाला गया तथा आम सभा हुई.

मई माह में विधान सभा विघटन के पक्ष में हस्ताक्षर संग्रह का अभियान चला. ५ जून के प्रदर्शन में भाग लेने काफी लोग पटना गये.

जून और जुलाई महीने में सगठन, प्रदर्शन एवं सभाओं का कार्यक्रम चला.

९ अगस्त को शहीद दिवस तथा १५ अगस्त को समानान्तर स्वतंत्रता दिवस मनाया गया

सितंबर माह में शराब की दुकानों पर पिकेटिंग का कार्यक्रम चला तथा तीन दिनों के बिहार बंद की तैयारी चलती रही.

३ अक्तूबर से ५ अक्तूबर तक संपूर्ण बंदी रही ट्रेनें भी बंद रहीं.

४ अक्तूबर को पताही प्रखंड पर धरना के दौरान पुलिस ने गोली चलायी. इस दौरान लगभग ३०० लोग जेल में गये.

२३ अक्तूबर को जेल में सत्याग्रहियों पर निर्ममतापूर्वक लाठी चार्ज किया गया.

संघर्ष के सभी कार्यक्रम चले और अब जनता सरकार के गठन का प्रयास चल रहा है.

बिहपुर

यहां आंदोलन की शुरुआत ५ अप्रैल ७४ से हुई जब महिलाओंसहित २० सत्याग्रही प्रखंड कार्यालय के सामने अनशन पर बैठे. ६ अप्रैल को एक विशाल मौन साइकिल जुलूस तथा ७ अप्रैल को विशाल जुलूस निकाला गया. अप्रैल माह में यहां अनशन तथा सरकार ठप का कार्यक्रम चला जिसमें अनेकों ने भाग लिया. महिलाओं, बच्चों की संख्या काफी थी.

सरकार ठप के दौरान खड़ीक बाजार में लाठी चार्ज हुआ तथा नारायणपुर में गोली कांड हुआ जिसमें तीन घायल हुए.

एक वर्ष में

पूरा प्रांत संघर्ष

[हमने हर जगह से, हर साथी से आंदोलन की वार्षिक रपट मांगी थी. पत्र भी लिखे, मिलकर भी मांग की. पर बहुत कम साथियों ने इसे अपना दायित्व माना कि अपने कामों की जानकारी दूसरे मित्रों को भी देनी चाहिए. आंदोलन का यह मोर्चा बहुत कमजोर है.

नारायणपुर बाजार में 'दाम बांधो' कार्यक्रम भी कुछ दिनों तक सफलतापूर्वक चला

दो पंचायतों में जनमत संग्रह भी किया गया जिसमें कुल मिलाकर सात वोट विघटन के विपक्ष में तथा ८८३ वोट पक्ष में डाले गये

विधायक से इस्तीफे की मांग पर लगभग २० बड़ी-छोटी सभाएं आयोजित की गयीं

इस क्षेत्र में करीब ३० छात्रों ने अब तक परीक्षा तथा कालेज का बहिष्कार कर रखा है

छपरा

मार्च-अप्रैल '७४ में अनशन का कार्यक्रम चला जिसमें महिलाओं बच्चों समेत लगभग ३००० लोगों ने भाग लिया. कई सप्ताह तक 'सरकार ठप' का कार्यक्रम जोरों से चला. लगभग सौ छात्रों ने कक्षा का बहिष्कार कर रखा है.

अबतक लगभग २००० छात्र तथा जन जेल जा चुके हैं. लगभग ५० छात्र एवं जन मीसा में पकड़े गये थे. जिनमें १० अभी भी जेल में हैं.

छपरा में जुलूस निकालने के क्रम में मार्च में एकमा. दिघवारा, डुमरी तथा मशरक में रेल बंदी के क्रम में अक्तूबर में तथा मढ़ौरा में वित्तमंत्री की सभा में काला झंडा दिखाने के क्रम में गोली कांड हुए जिनमें पांच व्यक्ति शहीद हुए.

जिले के ९ निर्वाचन क्षेत्रों में लगभग ५०० आम सभाएं हुईं जिनमें विधायकों से इस्तीफे की मांग की गयी.

स्थानीय रूप से आंदोलन की चार पत्रिकाएं भी समय-समय पर निकलती हैं.

डोमचांच

१७ अप्रैल से ५ मई '७४ तक अनशन के कार्यक्रम चले जिसमें कुल मिलाकर ८८ लोगों ने भाग लिया.

सरकार ठप के कार्यक्रम में लगभग १५ दिन सभी कार्यालय तथा शराबखाने बंद रखे गये.

३-५ अक्तूबर की बंदी भी पूर्णतः सफल और शांतिमय रही.

महिलाओं की भागीदारी प्रायः नगण्य रही

तीन छात्रों ने पूर्णतः कक्षा का बहिष्कार कर रखा है यहां 'गज हटाओ—मीटर लाओ तथा 'सेर हटाओ—किलोग्राम लाओ' अभियान भी सफलतापूर्वक चलाये गये

अधिकारियों, व्यापारियों आदि को रंगे हाथों पकड़ा गया.

२३ अगस्त से २ अक्तूबर तक निःशुल्क रात्रि पाठशाला भी चलायी गयी लेकिन छात्रों की गिरफ्तारी से यह काम अव्यवस्थित हुआ है.

हस्ताक्षर अभियान में लगभग ८००० हस्ताक्षर इकट्ठे किये गये. लगभग १६ आमसभाएं की गयीं जिनमें विधायक से इस्तीफे के प्रस्ताव पारित किये गये.

अगस्त माह में विधान सभा के सामने धरना देते हुए ८ छात्र गिरफ्तार हुए तथा विधायक के निवास स्थान पर भी धरना दिया गया.

समानान्तर स्वतंत्रता तथा गणराज्य दिवस भी मनाये गये.

सिंहवाड़ा

मार्च, अप्रैल माह में १५ स्थानों पर अनशन का काम चला जिनमें महिलाओं,

के ज्वार में !

जितनी जगहों से हमें रपट मिल सकी, वह यहां प्रस्तुत है . बाकी जगहों से आनेवाली रपट की हमें आज भी प्रतीक्षा है .

—संपादक]

बच्चों समेत लगभग लगभग २०० लोगों ने भाग लिया . सरकार ठप के कार्यक्रम भी व्यवस्थित ढंग से चले .

महिला संघर्ष समिति का गठन हुआ है जिसमें लगभग ५० महिलाएं हैं .

दो छात्र अभी पूरा समय देकर आंदोलन में लगे हैं. सभाएं, प्रदर्शन, घेराव के भी कई कार्यक्रम हुए .

मुरौन एवं सकरा

आंदोलन की शुरुआत हुई अनशन कार्यक्रम से, मई में .

मुहम्मदपुर पंचायत के मुखिया की धांधली के विरोध में धीरेंद्र कुमार ने पांच दिनों का अनशन किया .

जून और जुलाई में पंचायतों में संगठन का काम चला, सितंबर माह में पंचायत स्तर की कई आम सभाएं की गयीं तथा विधान सभा के विघटन की मांग पर जोर दिया गया .

अक्तूबर में बंदी के दौरान रेल पटरी पर धरना देते समय लाठी चार्ज किया गया. नाराज लड़कों ने रेल की पटरियां उखाड़ी एवं अधिकारियों को भी पीटा .

४ नवंबर के प्रदर्शन में भाग लेने लगभग ७० आदमी पैदल चलकर पटना पहुंचे .

अभी जनता सरकार के गठन हेतु संगठन का काम तेजी से चल रहा है . पूरा समय देनेवाले ६ कार्यकर्ता इस आंदोलन में काम कर रहे हैं .

बरियारपुर तथा गोविंदपुर पंचायतों में बाढ़ में राहत कार्य भी हुए .

कुरहनी

आंदोलन की शुरुआत तोड़फोड़ से हुई जब १८ मार्च को पटना से उत्तेजित होकर यहां के कुछ छात्रों ने स्थानीय विधायक के फार्म की फसल भूमिहीनों से लुटवा दी .

अप्रैल में अनशन का तथा सरकार ठप का कार्यक्रम चला. कुछ दिनों तक खुला विद्यालय भी चलाया गया . अक्तूबर बंदी के दौरान लगभग ४५ लोग गिरफ्तार किये गये सी० आर० पी० के सिपाही गावों में भी घुसना चाहते थे पर जनता के शांतिमय प्रतिरोध ने उन्हें वापस होने पर मजबूर कर दिया .

४ नवंबर के प्रदर्शन में यहां के लगभग २० युवक पटना में गिरफ्तार हुए .

११ दिसंबर को यहां के तब्बे व्यक्ति विधान सभा के सामने धरना देते हुए गिरफ्तार हुए .

जनता सरकार के गठन के सिलसिले में यहां के लगभग १२ युवक पूरा समय देकर काम कर रहे हैं .

लोगों ने ग्रामकोष भी इकट्ठा करना शुरू कर दिया है . प्राइमरी स्कूल की स्थापना भी होने को है .

मधुबनी

१८ मार्च '७४ को पटना के प्रदर्शन में यहां के ५४ छात्रों ने भाग लिया. १७-२२ मार्च '७५ तक विरोध दिवस, काला दिवस, शहीद दिवस आदि मनाये गये . मई में सदाचार सप्ताह में एक कस्टम इंस्पेक्टर तथा एक बी० डी० ओ० को विदेशी तस्कर सामानों के साथ पकड़ा गया . हस्ताक्षर अभियान में लगभग ४५०० हस्ताक्षर एकत्र किये गये

जुलाई में परीक्षा बहिष्कार के सिलसिले में ४ युवक मीसा में गिरफ्तार किये गये . बाढ़ के दौरान राहत कार्य भी किये गये .

रामगढ़वा (पूर्वी चंपारण)

२० मार्च '७४ को प्रखंड कार्यालय के के समक्ष प्रदर्शन, लाठी चार्ज तथा गोली चली

२८ अप्रैल को छा० सं० स० का गठन हुआ तथा २९ अप्रैल से एक सप्ताह तक अनशन कार्यक्रम में लगभग ११५ लोगों ने भाग लिया .

हस्ताक्षर अभियान में लगभग ४५०० हस्ताक्षर एकत्रित किये गये

पुराने कपड़ों की जांच, वर्ज तथा वितरण के कार्य भी चलाये गये →

● भागलपुर जेल में पीटे गये एक युवक से बातचीत करते जयप्रकाश जी .

जनवरी में संगठन के लिए पदयात्राएं की गयी .

आजकल जनता सरकार तथा संघर्ष वाहिनी के संगठन की तैयारी चल रही है.

औराई

अप्रैल '७४ में छा० स० स० का गठन हुआ. इस महीने में अनशन के कार्यक्रम में लगभग ५०० लोगों ने भाग लिया. सरकार ठप के कार्यक्रम अप्रैल तथा अगस्त में चले. लगभग ४० लोगों को गिरफ्तार किया गया था. मई में दो सप्ताह तक अध्यापनकार्य भी चलाया गया. अक्तूबर में तीन दिन की बंदी के बाद भी बंदी चली. लगभग ११९ लोगों को गिरफ्तार किया गया. शुरू में सौ-डेढ़ सौ छात्रों ने बहिष्कार किया पर अब पूरा समय देकर लगभग सात युवक काम काम कर रहे हैं. बाढ़ में सहायता तथा वितरण का काम किया गया. भूमिहीनों को बासगीत के पर्चे भी दिलवाये गये हैं.

ढाका (पू० चंपारण)

आंदोलन की शुरुआत १९ मार्च '७४ को हुई जब यहां एक जुलूस निकाला गया तथा उस पर लाठी चार्ज हुआ.

हस्ताक्षर अभियान में १६००० हस्ताक्षर एकत्रित किये गये तथा ५ जून के प्रदर्शन में लगभग ५० लोगों ने भाग लिया.

जुलाई में विधान सभा पर धरना देते हुए ११ सत्याग्रही गिरफ्तार हुए. परीक्षा के बहिष्कार का कार्यक्रम चला. अगस्त में सरकार ठप के कार्यक्रम में सैकड़ों लोग गिरफ्तार हुए. ३० अगस्त को इस दौरान लाठी चार्ज हुआ तथा गोली चली. १६ छात्र घायल हुए. सितंबर माह में बाढ़ पीड़ितों की सहायता का तथा संगठन का काम चला.

बरौनी

आंदोलन की शुरुआत २३ मार्च '७४ को हुई जब प्रखंड १८ मार्च की घटना के विरोध में बंद रहा. अप्रैल में अनशन के कार्यक्रम में लगभग २५ लोगों ने भाग लिया. कक्षा बहिष्कार करके अभी लगभग बारह युवक सक्रिय रूप से लगे हैं. पुलिस की ओर से तो नहीं पर साम्यवादियों की ओर से कई बार गोली चलायी गई.

छात्रों ने एक व्यापारी के यहां छापा मारकर जमा रखी गई एक लाख सलाइयों को जनता के बीच बेच दिया. सब्जी की दूकान भी खोली गई. नाप-तौल के पुराने मापों की जांच भी की गयी.

अक्तूबर में बंदी सफल रही. यहां के खाद कारखाना के तीस कर्मचारी भी इस दौरान जेल गये.

लक्ष्मीपुर

मार्च-अप्रैल में अनशन के कार्यक्रमों में लगभग १०० लोगों ने भाग लिया. गिरफ्तारियों के साथ सरकार ठप का कार्यक्रम भी चलता रहा.

अक्तूबर में बंदी के दौरान गोलियां चलाई गई

मार्च '७४ में दो छात्र शहीद हुए

लगभग बीस जन सभाएं की गयी जिनमें विधायक से इस्तीफे तथा विधान सभा के विघटन की मांग हुई.

जन-जाति के संगठन भी बने हैं. भूमिहीनों को भूमि दिलाने का काम भी हुआ है. रात्रि पाठशाला खोली गयी है.

भागलपुर

यहां आंदोलन २६ फरवरी '७४ को आरंभ हुआ जब छात्रों ने १८ सूत्री मांग-पत्र जिलाधीश को दिया तथा २४ घंटे का उपवास रखा.

१८ मार्च '७४ को लगभग डेढ़ सौ छात्र गिरफ्तार किये गये.

अप्रैल-मई में लगभग बीस दिनों तक सरकार ठप का कार्यक्रम चला जिसमें लगभग हजार लोग गिरफ्तार किये गये.

हस्ताक्षर अभियान में लगभग २ लाख हस्ताक्षर विधान सभा विघटन के पक्ष में एकत्रित किये गये.

जुलाई माह में विधान सभा के सामने धरना देते हुए यहां के लगभग दो सौ लोगों ने गिरफ्तारियां दीं. परीक्षा बहिष्कार का कार्यक्रम शत-प्रतिशत सफल रहा.

अक्तूबर में तीन दिनों की बंदी पूर्णत: शांतिमय और सफल रही. ३५० सत्याग्रहियों के साथ २५ महिलाएं गिरफ्तार हुईं. ४ नवंबर के प्रदर्शन में भाग लेने हजारों लोग पटना पहुंचे. हर क्षेत्र में औसतन ५० जन सभाएं की गईं जिनमें विधान सभा के विघटन के प्रस्ताव पारित किये गये.

अब तक ६०% से अधिक गांवों में संगठन बन चुका है. महिला संघर्ष समिति का भी गठन हो चुका है जिसमें लगभग १५ सक्रिय सदस्यायें हैं.

दाम बांधो कार्यक्रम भी चले. सांस्कृतिक कार्यक्रम भी आंदोलन के सिलसिले में चले.

यहां मैसा के अंतर्गत लगभग १५ लोग गिरफ्तार किये गये. लगभग २५ छात्रों ने कक्षाओं का बहिष्कार कर रखा है.

जरमुंडी

आंदोलन की शुरुआत ९ अप्रैल को धरना के कार्यक्रम से हुई. १३ अप्रैल को एक विशाल जुलूस निकाला गया. १५ अप्रैल से सरकार ठप का कार्यक्रम चला.

लाठी चार्ज भी किया गया. १२ मई को पुन: एक विशाल जुलूस निकाला गया.

अक्तूबर में तीन दिन की बंदी पूर्णत: सफल तथा शांतिमय रही.

संगठन का काम चल रहा है और आठ पंचायतों में यह काम हो चुका है.

चिरैया

अनशन का कार्यक्रम १८ अप्रैल से चला. इस कार्यक्रम में लगभग ढाई सौ लोगों ने भाग लिया.

सरकार ठप का कार्यक्रम अगस्त में चला जिसमें प्रखंड कार्यालय लगभग सात दिनों तक तथा शराब की दूकानें तीन दिनों तक बंद रहीं.

यहां के बाजार में आनेवाले गल्ले के टैक्स में कमी के लिए संघर्ष किया गया और उसमें काफी कमी करवाई गयी.

सितंबर माह में बाढ़ के दौरान यहां राहत का काम तेजी से चलाया गया. छा० सं० स० की ओर से रोटी, खिचड़ी, चूड़ा, कपड़ा, दवाएं आदि बाढ़-पीड़ितों में वितरित की गयीं.

दाम बांधो कार्यक्रम के अंतर्गत किरासन तेल का दाम वहां के प्रखंड विकास पदाधिकारी से मिलकर तय किया गया. बारह बोरे नमक पकड़ कर जनता में बीच वितरित किया गया. राशन के एक दूकानदार ने राशन का गेहूं बाजार में बेचना चाहा पर इसे जब्त कर लिया गया और अधिकारियों को तार से सूचना दी गयी, पर कारवाई नहीं हुई. सत्रह बोरे सीमेंट भी वितरित किये गये.

विधान सभा के विघटन की मांग के प्रस्ताव ११ जन सभाओं में पारित किये गये.

'लोक संपर्क' नामक बुलेटिन भी आंदोलन के दौरान निकाला गयी है.

'क्या परमात्मा आत्मा के कष्टों को जानता है !'

मैं इस समय गया जिले के मोहनपुर ब्लॉक में महिलाओं के संगठन का काम कर रही हूं. मेरे साथ जगदीश भाई हैं हम दोनों इस काम से गांव गांव घूम रहे हैं

दो फरवरी को दिन के करीब ३ बजे हमलोग डगरा गांव पहुंचे हालांकि उस समय शीत लहरी के मारे लोग परेशान थे, पर हमारे पहुंचने के साथ गांव के सब लोग जुट गये. अधनंगी औरतों को सामने देखकर जगदीश थोड़ा हिचका. एक तरफ हट गया बच्चे तो बिल्कुल नंगे थे बदन पर एक कपड़ा भी नहीं था. सारा गांव अधभूखा, अधनंगा नजर आ रहा था. सर्दी के मौसम की ठंडी हवाएं जैसे शरीर छेद रही थी

मैंने लोगों से बैठकर जयप्रकाशजी का संदेश सुनने को कहा. एक वृद्ध स्त्री ने अपने ठंड से कांपते हुए हाथों से मेरे हाथ पकड़ लिये और पूछा, 'क्या परमात्मा इस आत्मा के कष्टों को जानता है !' उसके इन सीधे-सादे दार्शनिक शब्दों ने मुझे हिला दिया और मैं उसकी गरीबी के कारणों पर सोचने लगी. जवाब के लिए मेरे पास शब्द नहीं थे. आंखों में केवल आंसू थे. ठंड से कांपती हुई उस बुढ़िया की काया देखकर नौजवान जगदीश का दिल भी हिल उठा होगा. उसने अपने कपड़े उतारकर उस बुढ़िया को दे दिये. सिवा एक लुंगी के उसने अपने सब कपड़े सामने खड़े लोगों में बांट दिये.

हमलोग वहां बैठकर उन लोगों की समस्याओं पर बातचीत कर रहे थे, इतने में एक आदमी वहां आया जिसका शरीर मिट्टी से सना हुआ था. उसके हाथ में उसकी एक दिन की कमाई थी—घटिया किस्म का ढाई सेर धान ! उस आदमी ने हमसे पूछा, 'इतनी सी आमदनी में एक परिवार का गुजारा कैसे होगा ?' हम चुप रहे, क्या कहते ? फिर हमें मालूम हुआ कि यहां एक धार्मिक संस्था है. इस गांव की अधिकांश जमीन बोधगया के श्री शंकराचार्य मठ की है. यह मठ जोंक की तरह इस गांव के लोगों का शोषण कर रहा है. मठ के साधु किसी बड़े मोटे जमींदार से कम नहीं है. हर संभव तरीके से वे गांव का शोषण करते रहते हैं. गांव के लोगों के दुखदर्द की कहानियां सुनकर हमलोग भारी हृदय से वापस डगरा लौटे. यह हमारा जनतंत्र है, और यह हमारा समाजवाद ! आज के कानून और व्यवस्था के द्वारा सत्ताधारी लोग यही हम पर लाद रहे हैं न !

शाम को भोजन के समय मुझे मालूम हुआ कि जगदीश ने यह संकल्प लिया है कि वह अब लुंगी के सिवा कोई कपड़ा नहीं पहनेगा उस रात भी सर्दी तीखी थी और हवाएं इतनी ठंडी चल रही थीं कि एक तरह से जान की बाजी लगी हुई थी हम सबने जगदीश को समझाने की कोशिश की लेकिन हमारा प्रयत्न बेकार गया तब से अभी तक जगदीश नंगे बदन घूम रहा है और गरीब लोगों के साथ अपना तादात्म्य साध रहा है निष्ठावान नौजवान उसके साथ हो गये हैं जगदीश ने उनको संघर्ष समितियां गठित करने के काम में लगाया है साथ ही उनसे यह भी कहा है कि वे कुछ पुराने कपड़े इकट्ठा करें, जो इन गांवों के कंगाल लोगों में बांटे जा सकें. इनलोगों ने तय किया है कि कम-से-कम ५०० नंगे-भूखे लोगों को वे इस प्रकार कपड़ा पहुंचायेंगे.

जगदीश ने इतना माना है कि जब वह ५०० लोगों को कपड़ा दे चुकेगा तब ही खुद कपड़ा पहनने पर विचार करेगा. इस कड़ाके की सर्दी में जब मैं जगदीश को नंगे बदन घूमते देखती हूं तब एक ओर तो मेरा दिल बैठ जाता है, लेकिन दूसरी ओर मेरा सिर गर्व से ऊंचा हो जाता है जगदीश के त्याग ने आस-पास के कई नौजवानों को प्रेरणा दी है वे गांव-गांव में संघर्ष समितियां बना रहे हैं ऐसे नौजवानों को देखकर ही भरोसा होता है कि संपूर्ण क्रांति सफल होगी.

डंगरा (गया), ५. २. ७५

—कृष्णम्मा जगन्नाथन्

तुम्हारे बाद

बापू,
तुम्हारी टोपी उतारकर,
ये ताज पहनना चाहते हैं.
तुम्हारी लाठी ये हम पर
बरसा रहे हैं.
खादी का टुकड़ा,
बारूद का पलीता बन गया है, और
तुम्हारी बकरी
छोड़ो भी !

पर, तुम्हारे बाद
तुम्हारा जयप्रकाश
हमें प्रकाश दे रहा है,
और हम उसी के सहारे
कष्टों को हटाने जा रहे हैं.

—संजय कुमार पाण्डे,
उम्र १४ वर्ष

एक मत

पिछले दस महीनों से जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में चल रहे बिहार आंदोलन ने निर्विवाद रूप से, देश में और बाहर खूब ध्यानाकर्षण किया है. स्वतंत्रता से पूर्व और उसके बाद भी अपनी निष्काम सेवा और त्याग के कारण जयप्रकाश जी संपूर्ण देश के आदर के पात्र हैं इसलिए स्वाभाविक है कि बिहार और देश के दूसरे प्रांतों में अपार भीड़ उनकी सभाओं में उमड़ पड़ती है संभव है उनके आंदोलन के कुछ एक पहलू से कोई असहमत हो. फिर भी इसमें लेशमात्र शंका नहीं की जा सकती है कि यदि वे नहीं होते तो बिहार में व्यापक हिंसा और खून-खराबी होती. यद्यपि बिहार आंदोलन में हिंसा की छिटपुट वारदातें हुई हैं. यह स्वीकार करना ही होगा कि जयप्रकाश जी ने अपने आंदोलन को प्रायः शान्तिपूर्ण रखा है. यद्यपि नवंबर के प्रारंभ में पटना में उन पर ही क्रूर लाठी चार्ज हुआ था फिर भी उन्होंने आंदोलनकारियों को अपनी पकड़ में ही रखा. इसलिए, जयप्रकाश जी को हिंसा भड़काने-वाला कहना अत्यंत निष्ठुरता है—वैसे मैं यह स्पष्ट कर दूं कि जयप्रकाश जी के आंदोलन में कई मुद्दों से मैं सहमत नहीं हूं.

—श्रीमन नारायण
अध्यक्ष, गांधी स्मारक निधि.

'तब कहीं नाव पार लगेगी..'

□ स्व० डॉ० जाकिर हुसैन

मुझे मालूम नहीं दुनिया में तुम क्या करना चाहते हो. हो सकता है तुम्हारा हौसला हो तिजारत का. कारोबार या नौकरी करके बहुत-सी धन-दौलत कमायें और चैन से अपनी और अपने खानदान की जिंदगी बसर करें. यदि ऐसा हो तो भगवान तुम्हारे मनोरथ सफल करे. लेकिन चाहे तुम धन-दौलत कमाने की फिक्र में लग जाओ इतना ध्यान रखना कि सफलता के लिये यह जरूरी नहीं है कि कर्तव्यों को त्याग कर और अपनी सारी इच्छाओं को पैरों तले रौंद कर ही उस तक पहुँचा जाये. **जो अपने स्वार्थ के लिये इतना अंधा हो जाये कि अपने और अपने राष्ट्र को हानि पहुँचाने से भी न चूके, वह आदमी नहीं जानवर है.**

अगर तुम अपना जीवन देश की सेवा में लगाना चाहते हो तो मुझे तुमसे बहुत कुछ कहना है. तुम जिस देश में यहां से निकलकर जा रहे हो वह बड़ा ही अभागा देश है. अनपढ़ों का देश है, अन्याय का देश है, कठोरताओं का देश है, क्रूर परम्पराओं का देश है, भाई-भाई में नफरत का देश है, बीमारियों का देश है, सस्ती मौत का देश है, गरीबी और अंधेरे का देश है, भूख और मुसीबत का देश है यानी बड़ा ही कमबख्त देश है. लेकिन क्या कीजियेगा? तुम्हारा और हमारा देश है इसी में मरना है और इसी में जीना है. **इसलिये यह देश तुम्हारे हिम्मत के इस्तेमाल, तुम्हारी शक्तियों के प्रयोग और तुम्हारे श्रम की परख की जगह है.**

हमारे देश को हमारी गर्दनों से उबलते खून की जरूरत नहीं, बल्कि हमारे माथे का पसीने की बारहमासी बहनेवाली दरिया की दरकार है. जरूरत है काम की—खामोश और सच्चे काम की. **हमारा भविष्य किसान की टूटी झोंपड़ी, कारीगर की धुएं से काली छत और देहाती मदरसे की फूस के छप्पर तले बन और बिगड़ सकता है. जिन जगहों का नाम मैंने लिया है उनमें सादगी तक के लिये हमारी किस्मत का फैसला होगा,— और इन जगहों का काम धीरज चाहता है और श्रम! इसमें थकान भी ज्यादा है और कदर कम होती है. जल्दी नतीजा भी नहीं निकलता है. हां, कोई धीरज रख सके तो जरूर फल मीठा मिलता है.**

नये हिंदुस्तान बनाने में तुमसे जहां तक बन पड़े हाथ बटाना. मगर याद रहे कि अगर स्वभाव में आतुरता है तो तुम इस काम को अच्छी तरह नहीं कर सकते हो. इस काम में बड़ी देर लगती है. अगर तबियत में जल्दीबाजी है तो तुम काम बिगाड़ दोगे. क्योंकि यह बड़ा पित्तमार काम है. अगर जोश में बहुत सा काम करने की आदत है और उसके बाद ढीले पड़ जाते हो तो भी यह कठिन काम तुमसे नहीं बन सकेगा. क्योंकि इसमें बहुत समय तक, बराबर एक-सी मिहनत चाहिये. अगर असफलता से निराश हो जाते हो तो इस काम को न छूना क्योंकि इसमें असफलताएं **जरूरी हैं—बड़ी असफलताएं और पग-पग पर असफलताएं!** इस देश की सेवा में कदम-कदम पर खुद देश के लोग ही तुम्हारा विरोध करेंगे. जिन्हें हर परिवर्तन से हानि होती है वे जो इस वक्त चैन से हैं और डरते हैं कि शायद परिस्थितियां बदल तो वे दूसरों की मिहनत के फलों से अपनी झोलियां न भर पायेंगे. **लेकिन याद रखो कि ये सब एक आंधी है इन सबका कम फल जायगा.** तुम ताजादम हो, जवान हो तुम्हारे मन में अगर संशय होगा और आत्म-विश्वास का अभाव होगा तो इस काम में बड़ी कठिनाइयां सामने आयेंगी क्योंकि संशय से वह शक्ति पैदा नहीं होती जो इस कठिन काम के लिये अपेक्षित है. **मरे हाथ और मैले मन से भी तुम इस काम को नहीं कर सकोगे, क्योंकि यह बड़ा पवित्र काम है.**

साराश यह है कि तुम्हारे सामने अपने जौहर दिखाने का अद्भुत अवसर है. मगर इस अवसर का उपयोग करने लिये बहुत बड़े नैतिक बल की आवश्यकता है. जैसे कारीगर होंगे वैसी इमारत होती है. काम चूंकि बड़ा है, एक की या थोड़े से आदमियों की कुछ दिनों की मिहनत से पूरा न होगा. दूसरों से मदद लेनी होगी और दूसरों की मदद करनी होगी. तुम्हारी पीढ़ी के सारे हिंदुस्तानी नौजवान अगर अपना सारा जीवन इसी एक धुन में बिता दें तब कहीं यह नाव पार लगे.

जब जात-पात, भाषा, धर्म, संप्रदाय, प्रांत आदि के झगड़ों के चलते देश टूटता नजर आ रहा है, जिस देश में स्टेशनों पर मुसलमान पानी और हिंदू दूध मिलता है; जिस देश में अनेक जातियां बसती हैं, जहां विभिन्न संस्कृतियां प्रचलित हैं; जहां एक का सच दूसरे का झूठ है, उस देश में नौजवानों से इस तरह मिलकर काम करने की आशा कुछ कम ही है. **वोट बिकते हैं, राजनीतिज्ञ बिकते हैं, वे देश को भी बेच सकते हैं.**

सेवा की राह में, जिसकी चर्चा मैं कर रहा हूं, सचमुच कठिनाइयां हैं इसलिये ऐसे क्षण भी आयेंगे कि तुम थककर शिथिल हो जाओगे, बदम से हो जाओगे और तुम्हारे मन में संदेह पैदा होने लगेगा कि यह जो कुछ किया सब बेकार तो नहीं था. उस समय उस भारत माता के चित्र का ध्यान करना जो तुम्हारे हृदय पट पर अंकित हो. यानी उस देश के चित्र का ध्यान जिसमें सत्य का शासन होगा, जिसमें सबके साथ न्याय होगा, जहां अमीर-गरीब का भेदभाव नहीं होगा, बल्कि सबको अपनी-अपनी क्षमताओं को पूर्णतया विकसित करने का अवसर मिलेगा, जिसमें लोग एक-दूसरे का भरोसा करेंगे और एक-दूसरे की मदद; जिसमें धर्म इस काम में न लाया जायेगा कि झूठी बातें मनवाये और स्वार्थों की आड़ बने बल्कि वह जीवन का सुधारक और सार्थक बनाने का साधन होगा, उस चित्र पर दृष्टि डालोगे तो तुम्हारी थकान दूर हो जायेगी और तुम नये सिरे से अपने काम में लग जाओगे. **फिर भी अगर चारों तरफ कमीनापन और खुदगर्जी, मक्कारी और धोखेबाजी और गुलामी से संतोष देखो तो समझना की अभी काम समाप्त नहीं हुआ है.** मोर्चा जीता नहीं गया है इसलिये संघर्ष जारी रखना चाहिये और जब वह वक्त आये जो सबका आता है और इस मैदान को छोड़ना पड़े तो यह संतोष तुम्हारे लिये पर्याप्त होगा कि तुमने यथाशक्ति **इस समाज को स्वतंत्र करने और अच्छा बनाने का प्रयत्न किया, जिसने तुम्हें आदमी बनाया था.** □

"......एक नया दौर शुरु हुआ है . सत्ताइस वर्ष का, पीछे का इतिहास करवट ले रहा है भारत का, और उस समय जिस प्रकार से गांधीजी ने 'यंग इंडिया' चलाया था, आज 'तरुण क्रांति चल रही है. तरुणों का आह्वान करके गांधीजी ने अपना संघर्ष शुरू किया था, उसी तरह से बूढ़ा जयप्रकाश नारायण तरुणों का आह्वान करके यह कर रहा है ."

— जयप्रकाश नारायण

दशकों से सोये इस देश मे सामाजिक चेतना की एक नयी लहर फूटी है, जो सारे देश के नक्शे पर फैलती जा रही है . बिहार आज उसका एक प्रतीक है . बिहार के गांव-गांव मे प्रज्वलित हो रहे इस आंदोलन की प्रमाणिक जानकारी के लिये पढ़ें—

बिहार संघर्ष की बुलेटिन

तरुण क्रांति

प्रति अंक २५ पैसे . वार्षिक. १० रुपया .

अधिक प्रतियाँ वी. पी. पी से मंगायी जा सकती हैं .
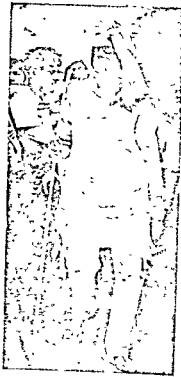
एजेंसी के लिये शीघ्र संपर्क करें .

'' ...खलक खुदा का, मुलुक बादशा का
हुकुम शहर कोतवाल का...
हर खासो-आम को आगाह किया जाता है
कि खबरदार रहें
और अपने-अपने किवाड़ों को अंदर से
कुंडी चढ़ाकर बंद कर लें.
गिरा लें खिड़कियों के पर्दे
और बच्चों को बाहर सड़क पर न भेजें
क्योंकि
एक बहत्तर वर्ष का बूढ़ा आदमी
अपनी कांपती कमजोर आवाज में
सड़कों पर सच बोलता हुआ निकल पड़ा है!

—धर्मवीर भारती

बिहार तरुण शांति सेना समिति, रोड नं०-१२, राजेंद्र नगर पटना-१६ के लिए कमल प्रिंटिंग प्रेस, नयाटोला, पटना-४ द्वारा मुद्रित।
* संपादक : कुमार प्रशान्त *

सर्व सेवा संघ का साप्ताहिक मुख पत्र
नई दिल्ली, सोमवार, १८ अगस्त '६९

विषय-सूची

युवा शक्ति विशेषांक

प्रकाशकीय

अखबारी कागज के अकाल के इन दिनों में 'भूदान यज्ञ' जैसे पत्र का विशेषांक निकालना अपने पावों पर कुल्हाड़ी मारना है। कुल्हाड़ी इसलिए कि विशेषांक जिस कागज पर छपता है वह साधारण अंकों का होता है। यानी विशेषांक के भोज के लिए रोज की रोटी छोड़नी पड़ती है। सेहत के लिए यह ठीक नहीं है लेकिन पन्द्रह अगस्त स्वयं एक ऐसा अवसर है जब कुछ विशेष किया जाना चाहिए। युवा शक्ति के अवतरण का लेखा जोखा इस अवसर पर जरूरी है क्योंकि आजादी का भविष्य उसे ही बनाना है।

इसलिए बावजूद कमी के यह विशेषांक आपके हाथों में है। हमारी योजना और इच्छा का यह प्रतिरूप नहीं है। हमारा इरादा सौ पेज का विशेषांक निकालने का था। हम युवाशक्ति के अवतरण के सभी पहलुओं पर सामग्री देना चाहते थे। उनकी आकांक्षाओं का नक्शा खींचना चाहते थे। और उनकी दिशा का संकेत भी देना चाहते थे। यह भी बताना चाहते थे कि उसके सामने कितने खतरे और कितनी चुनौतियाँ हैं। सर्वोदय आन्दोलन और युवा शक्ति के सपनों का मेल भी आपके सामने रखना चाहते थे। लेकिन कागज की कमी के कारण यह संभव नहीं हो सका। आपसे क्षमा चाहते हुए अपेक्षा करते हैं कि यह विशेषांक जैसा भी बन पड़ा है आपकी सहानुभूति और रुचि के योग्य होगा।

वैसे तो देश के विश्वविद्यालयों में कई वर्षों से छात्र असन्तोष पनप रहा था। वह प्रकट भी होता था लेकिन बिखरे संकीर्ण आन्दोलनों और छुटपुट हिंसक घटनाओं से ऊपर कभी उठ नहीं पाता था। असन्तुष्ट युवाशक्ति के निरर्थक जाने और उसके सामने कोई व्यापक लक्ष्य न होने से घुटन बढ़ती जा रही थी।

इस घुटन को तोड़ा गुजरात की घटना ने। महंगाई से परेशान अपनी मेस के बढ़े हुए बिल के खिलाफ आन्दोलन कर रहे छात्रों को नागरिकों ने कहा कि महंगाई तो हमें भी तोड़ रही है, हमारे लिए कौन लड़ेगा। छात्रों को एक व्यापक सामाजिक प्रयोजन मिला और उनका आन्दोलन जन-आन्दोलन बन गया। अगर जन असन्तोष को रचनात्मक दिशा देने की क्षमता विद्यार्थियों में होती तो गुजरात महज एक घटना बन कर नहीं रह जाता। बिहार में भी शुरुआत छात्रों ने ही की थी और अगर जयप्रकाश नारायण का नेतृत्व प्राप्त करने में वे सफल नहीं होते तो बिहार भी गुजरात के रास्ते ही जाता। अब वहाँ युवकों को पूरे समाज के साथ मिल कर व्यवस्था परिवर्तन करने का अवसर मिला है।

बिहार आन्दोलन का परिणाम चाहे जो हो उसकी सबसे बड़ी सफलता यही है कि युवा शक्ति को नया समाज बनाने की दिशा और लक्ष्य मिल गया है। पूरे देश के लिए यह स्वस्थ लक्षण है कि उसकी सबसे बड़ी शक्ति नये समाज के निर्माण में लगी है।

हम इस दिशा को स्पष्ट करना चाहते थे। हमने प्रयास किया भी है शायद आपको रुचे। यह विशेषांक तीन अंकों का कागज मिला कर बनाया है इसलिए अगला साधारण अंक यानी २६ अगस्त का अंक नहीं निकलेगा। आशा है इस असुविधा को आप आप हमारे साथ सहन करेंगे।

सम्पादक

राममूर्ति : भवानी प्रसाद मिश्र

कार्यकारी सम्पादक : प्रभाष जोशी

वर्ष २० १६ अगस्त, '७४ अंक ४६-४७

१६ राजघाट, गांधी स्मारक निधि, नई दिल्ली-११०००१

तरुणाई का सनातन रूप

अरस्तू ने २३०० वर्ष पहले ही तरुणों के विषय में इस तरह कहा था ,

जवानों की प्रवृत्ति मनसूबे बांधने और फिर उन बांधे हुए मनसूबों को साकार करने की होती है। शरीर से सम्बन्धित मनसूबों में युवती का युवक और युवक का युवती के प्रति आकर्षण इन्हें बहुत जल्दी आपा भूलने पर लाचार कर देता है। इस इच्छा के जागने पर उन्हें याद ही नहीं रहता कि संयम किस चिड़िया का नाम है।

वे अपने इरादों को बड़ी आसानी से बदल भी देते हैं, वे जितनी जोर से किसी बात की तरफ बढ़ते हैं, उसे उतने ही झटके से वे पीठ भी दे देते हैं। इस का कारण यह है कि उनकी इच्छाएं बीमार आदमी की भूख या प्यास की तरह एकाएक महसूस होने वाली चीजें हैं, उनमें तीव्रता होती है, स्थैर्य नहीं। वे आंधशील और जल्दी ही आवेश में आ जाने वाले होते हैं और भावनाएं उन्हें आसानी से बहाकर ले जाती हैं। वे अपनी उत्तेजना के बन्धनों से ही आगे बढ़ने या पीछे हटते हैं। उनकी महत्वाकांक्षा ऐसी जबरदस्त होती है कि उस पर आंच आने का ख्याल भी उन्हें उन्मत्त कर देता है और वे आंच पहुंचाने के लिए तत्पर शक्तियों के प्रति जरा भी सहनशील नहीं रह पाते। वे मान-सम्मान और गौरव के इच्छुक तो होते ही हैं, किन्तु इससे भी अधिक प्यार उन्हें जीत से है। क्योंकि तरुणों की इच्छा का उद्देश्य मुकाबले की शक्ति से ऊपर उठाना है। जीत इसी प्रकार के बड़प्पन या ऊपर उठने का एक प्रकार ही है। पैसे के प्रति गौरव और विजय को भेजते हुए वे लापरवाह होते हैं, धन का उन्हें मोह नहीं होता और हो सकता है कि इसका कारण यह हो कि उन्हें अपनी तरुणाई तक धन के अभाव का ठीक अनुभव नहीं हो पाता। इसलिए वे उदार होते हैं, संकीर्ण नहीं होते। वे भोले भी होते हैं, क्योंकि तब तक धूर्तों से उन्हें काम नहीं पड़ता है। इसलिए वे आसानी से विश्वास कर लेते हैं। वे केवल आशावादी ही नहीं अति-आशावादी तक होते हैं। क्योंकि प्रकृति उन्हें अपने हाथों से मानो शराब पिला देती है। इस अति-आशावाद की झोंक में वे असफलताओं को भी कुछ नहीं गिनते। इस तरह वे जीवन के दिन आस में आशा भरकर बिताते हैं। आशा भविष्य का रूप है और भूतकाल की स्मृति। तरुण व्यक्ति के सामने जो भविष्य होता है वह अल्पकालीन नहीं होता। दीर्घ काल तक उसकी आशा टिकी रह सकती है और भूतकाल की स्मृति तो क्षणिक है ही। हम जिस दिन पैदा होते हैं, उस दिन का हमें क्या याद रहता है। इसलिए जीवन तो आशा और भविष्य में ही है। सहज आशाशील होने के कारण उन्हें बार-बार धोखा भी खाना पड़ता है। क्योंकि उनके प्राणों में उत्साह का ज्वार रहता है, वे निर्भय होते हैं, वीर होते हैं, उनमें आत्म-विश्वास की प्रेरणा आसानी से जगाई जा सकती है और वे कल्याणकारी कामों के प्रति उन्मुक्त किये जा सकते हैं। उनके मन में एक झिझक भी होती है। परम्परागत पद्धतियों की गोद में पले, बड़े होने के कारण वे एकाएक कोई काम हाथ में उठाते हुए हिचकते हैं। यद्यपि उनकी महत्वाकांक्षाएं बड़ी होती हैं, किन्तु वे यह नहीं जानते कि उनकी ओर वे कैसे बढ़ें। अवसरवादिता से गौरवपूर्ण कार्य उन्हें अधिक आकर्षित करते हैं। वे हिसाब-किताब नहीं करते, सहज स्वभाव उनके जीवन को चलाता है। हिसाब-किताब, अवसरवादिता का हामी है और हृदय के गुण महत्वाकांक्षा के, सम्मान के, गौरव के।

तरुणाई एक ऐसी उम्र है जिसमें व्यक्ति अपने साथियों, सम्बन्धियों और मित्रों के प्रति अपने कर्तव्य का तीव्रता से अनुभव करता है। जवान आदमी जो गलती करता है, फिर वह चाहे प्रेम के क्षेत्र में हो, चाहे घृणा के क्षेत्र में अतिशयता की ओर झुकी रहती है। वे अपने को लगभग सर्वज्ञ समझते हैं और इसलिए उन्हें अपनी बातों का जबरदस्त आग्रह होता है। यही वह कारण है जो उन्हें किसी भी क्षेत्र में आसानी से अति की ओर ले जाता है। वे जो अपराध करते हैं उनमें संकीर्णता नहीं होती, आग्रह हो सकता है। उनका हृदय प्रेम, करुणा और ममता से भरा हुआ होता है, वे मानते हैं कि सब लोग भले हैं, कम से कम ऊपर से जितने बुरे दिखते हैं, उतने बुरे नहीं हैं। वे अपने निश्छल स्वभाव से अपने आसपास को निश्छल मानते हैं। यदि उनके सिर पर अभाग्य टूटता है तो वे निश्चय ही अपने को उसका पात्र नहीं समझते। अन्त में तरुण के बारे में यह याद रखना चाहिए कि उसे हंसी-खुशी पसन्द है और इसीलिए कभी-कभी मजाक उड़ाना भी उन्हें अच्छा लगता है। मजाक उड़ाना आखिरकार एक अनुशासित आग्रह है।

अरस्तू ने जवानों के बारे में ऊपर जो कुछ कहा है वह लगभग परिपूर्ण विवरण है। अरस्तू द्वारा जवान के खींचे गये इस चित्र में कुछ जोड़ना या घटाना कठिन है। आज के मानवशास्त्री ऊपर के विवरण में गिनाये गए गुणों या अवगुणों को विरोधी स्वभाव समुच्चय (एमबीवेलेन्स), भावनात्मक परिवर्तनशीलता (इमोशनल लायबिलिटी), अधिक ज्ञान-भ्रम (आइडेन्टिटी कन्फ्यूशन) आदि शब्दों द्वारा वर्णित करते हैं। किन्तु कुल मिलाकर अरस्तू ने तरुणों के स्वभाव का जो वर्णन किया है वह यथार्थ में आज की परिभाषा से भिन्न नहीं है। भिन्नता अगर है तो शब्द रूपों की ही है।

तरुणाई मनुष्य जीवनचक्र की एक स्पष्ट अवधि है। इस अवधि में शरीर भी बदलता है, मन भी बदलता है। किशोर से तरुण होने तक यदि ठीक मार्गदर्शक मिल जाये तो तरुण दुनिया को कल्याण की दिशा में बदलने की बड़ी से बड़ी शक्ति बन जाता है। इतिहास के किसी भी काल में जब-जब तरुणों को ठीक मार्गदर्शन मिले हैं, संसार ने बहुमुखी विकास किया है। तरुणों के अवगुण भी अगर बारीकी से देखें तो गुण ही हैं और यदि इन्हें उच्च उद्देश्यों के तटबन्धों में प्रवाहित किया जाये तो ये बड़े से बड़े बंजर को भी हरा-भरा कर सकते हैं। —भवानी प्रसाद मिश्र

युवाओं के एक-एक कदम से सपनों का भारत वास्तविक बन सकेगा

किसी भी विचारधारा के अनुयायी यह दावा नहीं कर सकते कि उनके ही निर्णय हमेशा सही होते हैं। हम सबसे गलतियां हो सकती हैं और हमें अक्सर ही अपने निर्णय बाद में बदलने पड़ते हैं। हमारे इस विशाल देश में सब ईमानदार विचारधाराओं के लिये गुंजाइश होनी चाहिये। और इसलिये अपने प्रति और दूसरों के प्रति हमारा कम से कम यह कर्त्तव्य तो है ही कि हम अपने विरोधी का दृष्टिकोण समझने की कोशिश करें; और यदि हम उसे स्वीकार न कर सकते हों तो उसका इतना आदर अवश्य करें जितना हम चाहेंगे कि वह हमारे दृष्टिकोण का करे। यह चीज स्वस्थ सार्वजनिक जीवन का और इसलिये स्वराज्य की योग्यता का एक अनिवार्य प्रमाण है।

—महात्मा गांधी

—

नहीं है। और इलाहाबाद नगर के निवासियों को प्रेम और स्नेह जरूर अपनी बेटी के लिए होना चाहिये क्योंकि इन्दिराजी यहां की बेटी हैं। इलाहाबाद की, सारे देश की हैं वह ठीक है। देश की नेता हैं। लेकिन आपको आमतौर पर समझ लेना चाहिए कि जयप्रकाश नारायण का कोई व्यक्तिगत झगडा नहीं है। उनकी नीतियों से झगडा है, उनकी करनियों से झगडा है। उनकी हुकूमत का जो ढंग है, जिस तरह से चल रहा है उसमें झगडा है, और वह झगडा रहेगा। जब तक कि इस देश में जनता को आजादी है, जनता को अधिकार है, नागरिकों को अधिकार है अपनी बात जनता के सामने रखने का

अब इस आंदोलन का क्या महत्व है यह संक्षेप में आपको समझाऊं। यह कहा जाता है, दीक्षितजी ने भी यहा आकर कहा, इंदिरा जी ने भी कहा, कांग्रेस के नेताओं ने बार-बार कहा कि यह जो आंदोलन बिहार में चल रहा है और उसके ढंग का आंदोलन और जगह चले, जो गुजरात में चल चुका था, ऐसे सारे आंदोलन लोकतन्त्र के विरुद्ध हैं। इस बात को मैं नहीं कबूल करता हू। यह आपको समझाना चाहता हू। यह गलत बात है। यह चिन्तन गलत है। यह सत्य के ऊपर पर्दा डालना है। अब आज जनता मुसीबत में है, तकलीफ में है, अन्याय को सहन कर रही है, भ्रष्टाचार का शिकार बनी हुई है। आम नागरिकों का कोई काम ही नहीं हो सकता है सरकारी दफ्तर में, बैंक में जहा राष्ट्रीयकरण हुआ, बगैर पैसा खर्च किये हुए बिना रिश्वत दिये हुए। भ्रष्टाचार का यह हाल है कि कोई नैतिक प्रश्न नहीं रहा है वह। करोडो रुपया जो गरीब की भलाई के लिए पचवर्षीय योजनाओं में या उनके बाहर भी उनके हित में खर्च करने का था, उनमें से न जाने कितना रुपया दूसरों की जेबों में चला गया। गरीब तक पहुंचा नहीं। अगर सारा गरीबो तक पहुंचा होता तो आज देश की गरीबी मिट तो नहीं गयी होती, लेकिन बडा अन्तर हुआ होता। इसलिए भ्रष्टाचार कोई नैतिक प्रश्न नहीं है देश की जनता का, खास करके गरीबों की रोटी का सवाल उनके साथ जुड़ा हुआ है।

अब यह जनता दुःख सह रही है। चुनाव होने वाला है बिहार में सन् ७७ में। आपके यहां चुनाव होने वाला है ७६ में। विधान सभा का चुनाव होगा। मैं नहीं जानता हू कि आपको कितना सन्तोष है शासन से वह आप जानें। लेकिन मान लीजिये कि आपका जो आज का शासन है, प्रशासन है, उससे आपको सन्तोष नहीं है, तो पांच वर्ष चुपचाप आपको बैठना है? यही लोकतन्त्र का तकाजा है? दुनिया के कई संविधानों में, जनता को अधिकार रहता है कि जिन लोगों ने चुनकर भेजा है, उनसे असन्तुष्ट हो जाय तो उनको वापस बुला ले। अब हमारे संविधान में यह अधिकार नहीं है जनता को इसलिए यह असवैधानिक है? यह लोकतन्त्र के खिलाफ है? जनता दुःखी है और पांच वर्ष तक चुपचाप गूंगे की तरह, असहाय की तरह तकलीफ सहती रहे? आह भी नहीं करे? चू भी नहीं करे? उनके सामने क्या दूसरा रास्ता नहीं है? रास्ता अवश्य है।

लेकिन जिस प्रकार से चुनाव आज हो रहे हैं, जितना चुनावों पर रुपयों का असर है, जितना बल प्रयोग होता है गरीब लोगों को वोट नहीं देने देते हैं, रोक लेते हैं गांवों में लोगों को, जितना मिथ्याचार होता है, बोगस वोट चलता है। यह सब रहते हुए पांच साल बाद भी क्या होगा? एक दिन में सारा चुनाव हो गया बिहार में। तीन दिन में उत्तरप्रदेश में सारा चुनाव हो गया। अब जो प्रिसाइडिंग आफिसर हैं, पोलिंग आफिसर हैं वे किस हैसियत के लोग हैं? वहां के जो नेता हैं उनके मुकाबले में वो खड़ा हो सकता है? उसकी हिम्मत होती है? उसे डरा दिया जाता है, धमका दिया जाता है लाठी के जोर से। तुम कैसे यहा रहोगे। आफिस में हम देख लेंगे तुमको हमारी बात मानना है। थप्पड लगा करके उसी के हाथों से ठप्पा लगवा के मतपत्र डाल दिये जाते हैं। कई जगह तो रिश्वत दी जाती है उन लोगों को, अब एक तरफ तो इस प्रकार का स्वरूप होता जाता है चुनाव का, उसमें से जनता जो चाहती है वह तो नहीं हो पाता है। कुछ का कुछ हो जाता है।

उत्तर प्रदेश के ही चुनाव में कांग्रेस का शासन बना। जो लोग वोट नहीं देने गये उनकी तो बात छोड़ दीजिए। कुछ ५० फीसदी से कम लोग वोट देने नहीं गये। लेकिन जो वोट देने गये उनमें से लगभग ३२ फीसदी लोगों ने कांग्रेस को वोट दिया और ६८ फीसदी लोगों ने कांग्रेस के विरुद्ध वोट दिया। ३२ फीसदी वोट पाकर उनकी हुकूमत बन गयी। ६८ फीसदी के वोट गायब हैं। बेकार, जाया हो गये। जनता तो कहेगी, मतदाता तो कहेगा कि क्या है ये चुनाव? ये विपक्षी दलों का दोष होगा। चुनाव की पद्धति का दोष होगा। जिसमें कोई परिवर्तन नहीं होगा, यही होगा। हमारी राय ली जाती है तो १०० में से ६८ फीसदी की राय तो बराबर थी। उसका कोई परिणाम निकला नहीं तो लोकतन्त्र जिस प्रकार का अपने देश में चल रहा उसमें भी हम आशा नहीं कर सकते हैं कि वह स्वस्थ रीति से काम करेगा। जनता का प्रतिनिधित्व हो सकेगा और न ये ही सम्भव है कि जनता जब तक फिर आम चुनाव हों दुःख सहती रहे, कष्ट सहती रहे, रोती रहे कि जब चुनाव होगा तो हम शासन बदलेंगे। फिर वही शासन आ गया। वही सब बातें हो गयी।

लोकतन्त्र की यह विफलता हो रही है। अगर लोकतन्त्र को कायम रखना है, उसको मजबूत रखना है तो लोकतन्त्र के आधार लोक हैं, जनता है। जनता अगर चाहती है आज तो एक एक चुनाव क्षेत्र के जो मतदाता हैं, सभायें करके वो कहें कि जो आप हमारे प्रतिनिधि यहां से गये हैं उन पर हमारा विश्वास नहीं रह गया तो वापस आइये। हम दूसरे को भेजेंगे। ये लोकतन्त्र नहीं हुआ? लोकतन्त्र के विरुद्ध हुआ ये। जिसको चाहती नहीं है जनता वह वहां कुर्सी पर बैठा रहे, वो लोकतन्त्र है? तन्त्र ही तन्त्र है, लोक का कहीं पता ही नहीं लगता है। तन्त्र तो बहुत है। इतना जोर है शासन का कि उसमें से समझ में ही नहीं आता कैसे निकला जाए। गांधीजी ने कहा कि वो शासन सबसे अच्छा शासन है, जो कम से कम शासन करता है। अब तो शासन चाहे समाजवाद के नाम पर हो या किसी भी वाद के नाम पर, ऐसा शासन बनता जाता है जिसमें सब कुछ शासन ही करे। कल का शायद शादी ब्याह भी लड़के-लड़कियों के शासन की ओर से तय

→

होगे, ऐसी परिस्थिति आ जायेगी कि हमारे घरेलू मामलों में भी शासन हस्तक्षेप करेगा।

एक दिशा हमारी गलत होती जा रही है, इस दिशा को बदलना है। स्वस्थ रीति से, शान्तिमय तरीके से जनता की शक्ति से, हुल्लड़बाजी और गुंडेबाजी से नहीं। जनता के मत का प्रदर्शन करके जनता की शक्ति का प्रदर्शन करके संगठित रूप से। लेकिन उस शक्ति का प्रदर्शन तभी सम्भव होगा जब वह रहेगा *शान्तिमय*। अगर ये नहीं होगा तो मुझे स्पष्ट दीख रहा है आपको दिखे या न दिखे कि आज की जो स्थिति है उसमें से तानाशाही का निर्माण होगा। कोई रास्ता मिलना नहीं है, जनता को, असंतोष प्रकट नहीं होता है, कोई विधायक रास्ता हम लोग नहीं देते हैं, चैनल नहीं देते—जैसा गांधीजी ने स्वराज्य की पिपासा को, स्वराज की भूख को, प्यास को एक विधायक दिशा दी और ऐसी दिशा दी कि करोड़ों लोग उस दिशा में चल पड़े, अगर आज यह नहीं किया जाता है तो क्या होगा? कहीं रेल की पटरी उखाड़ी जायेगी, कहीं रेलवे स्टेशन में आग लगा दी जायगी। कहीं थाने पर, थाने पर तो शायद मुश्किल हो, पुलिस चौकियों पर लोग हमला करेंगे। कहीं स्कूल में आग लगा देंगे, कहीं कालेज में हो जाये, कहीं ब्लाक के आफिस में आग लग जाये। जनता का असंतोष है यह प्रकट होगा, हिंसा होगी। क्रान्तिकारी हिंसा नहीं, अराजकता फैलेगी उससे।

मैंने कहा है और फिर दोहराता हूं कि देश की सभी क्रांतिकारी पार्टियों से मेरा सम्बन्ध है, केवल सबन्ध ही नहीं है मित्रता है। नक्सलपंथियों से, मार्क्सवादी कम्युनिस्टों से है। ये जो दक्षिणपंथी है उनसे कम है। क्यों है भगवान जाने। मगर वो मुझे बराबर गालियाँ देते रहते हैं। कांग्रेस में भी अनेक मित्र हैं। विपक्षी दलों में भी अनेक मित्र हैं। मैं कोई ऐसी संगठित शक्ति देखता नहीं हूं देश में जो हिंसा की शक्तियों का संग्रह करके हिंसक क्रांति-रक्त क्रांति को सफल बना सके। उससे अराजकता फैलेगी और फिर कोई भी शासक हो इन्दिराजी हों और कोई हो, सेना हो सकती है, वो कहेगी अब तो देश बिगड़ रहा है। मिट जायेगा देश में आग लगी हुई है, तानाशाही के सिवा रास्ता नहीं है। देश के बुद्धिजीवी लोग कह रहे हैं लोकतंत्र में कुछ होने जाने वाला नहीं है। तानाशाही चाहिए, डिक्टेटरशिप चाहिए, तो इसमें से तानाशाही निकलेगी।

इसलिए मेरा दावा है कि मैंने और मेरे साथियों ने, युवा साथियों ने, छात्र साथियों ने जनता में आज फैले हुए घोर असंतोष को एक स्वस्थ रास्ता दिया है। ऐसा रास्ता दिया है जिसमें समाज का परिवर्तन होगा। पटना की सभा में मैंने कहा कि ये मंत्रिमंडल के इस्तीफे के लिए और विधानसभा के विघटन के लिए संघर्ष नहीं है—यह तो पूर्ण क्रांति के लिए संघर्ष है। सम्पूर्ण क्रांति सारे जीवन की क्रांति है। उस तरफ हमें कदम बढ़ाना है।

अगर छात्र सैकड़ों की तादाद में नहीं हजारों की तादाद में कम से कम एक वर्ष के लिए पढ़ाई छोड़ कर संघर्ष के लिए अपना जीवन समर्पित नहीं करेंगे तो कुछ नहीं होगा, हजारों की तादाद में क्रांतिकारी विद्यार्थी जो क्रांति के नारे लगाते हैं क्रांति का सपना देखते हैं और सच्चे भाव से रखते हैं वे कालेज छोड़ करके एक वर्ष के लिए आयें—गांधीजी ने तो एक वर्ष में स्वराज कहा था, मैं तो उनके चरणों की धूल के बराबर हूं, मैं क्या कहूं—लेकिन अगर युवकों की ऐसी शक्ति मिल जाए, तो एक वर्ष में सारे समाज का रूप बदल जाएगा।

अब मैं लड़ाई के मैदान में आ गया हूं आज अपने देश में यह नई क्रांति हो रही है, लोकतान्त्रिक क्रांति, जनक्रांति, शान्तिमय क्रांति नये समाज के निर्माण के लिए। भ्रष्टाचार उन्मूलन, महंगाई पर रोक, शिक्षा में आमूल परिवर्तन, बेरोजगारी, ये इन सवाल का कोई एक दिन में हल नहीं होने वाला है। युवकों, छात्रों, जनता के और भी प्रश्न हों स्थानीय, वे सब शामिल होंगे। इनके लिए देश भर में देशव्यापी क्रांति होने वाली है, एक वर्ष में हो, दो वर्ष में हो, वह पक रही है। उसके लिए गुजरात पहला और बिहार दूसरा। गुजरात में एक माने में विफलता हुई लेकिन उस बात को बार-बार दोहराने की जरूरत नहीं है। इस माने में बहुत बड़ी सफलता भी हुई है कि युवकों, छात्रों ने अपनी शक्ति से, जनता के समर्थन से और वहां की गज्जन शक्ति के, रविशंकर महाराज जैसे पूज्य नेताओं के समर्थन से जो उन्होंने विजय प्राप्त की वह कोई छोटी बात नहीं है, विफलता इस माने में हुई कि इतनी बड़ी जीत के बाद आगे का काम नहीं हुआ। लेकिन मुझे विश्वास है कि वह आगे का काम होनेवाला है।

गांधीजी स्वराज्य की लड़ाई की तैयारी कर रहे थे, उनके अन्दर तो अजीब एक मिलन था शक्तियों का। ईश्वर ही सर्वशक्तिमान है लेकिन बापू के अन्दर भी इतनी शक्तियां मिली हुई थी कि वे ईश्वरीय अवतारी पुरुष थे ऐसा मानना पड़ेगा। उन्होंने ऐसा नहीं कहा था कि एकाएक सारे देश में आंदोलन शुरू हो जाय। वह उन्होंने करके देख लिया था १९२०-२१ में। एक वर्ष में स्वराज्य का नारा दिया था, उससे सबक लिया उन्होंने कि यह गलत हो गया। आगे जो देशव्यापी लड़ाई लड़ने वाले थे वे सिविलनाफरमानी की, सत्याग्रह की, उसके लिए जहां-तहां तैयारियां हुईं। चंपारण में उन्होंने स्वयं जाकर सत्याग्रह किया। बारडोली में किया सरदार वल्लभभाई पटेल ने, वहीं उनको सरदार की पदवी मिली। इस प्रकार से देश के कई स्थानों में प्रादेशिक या स्थानीय संघर्ष हुए जिससे जनता को अहिंसा की शक्ति का परिचय हुआ। एक विकल्प मिला। एक तरफ तो ये बम फेंकने वाले लोग थे जिनकी संख्या थोड़ी थी, बहादुर लोग थे, फांसी पर लटक गये, कालापानी उनको भेज दिया गया, लेकिन क्रांति नहीं हुई दूसरी तरफ ये लोग हैं जो सिर्फ प्रस्ताव पास करते हैं, गरम-गरम बात जरूर करते हैं। गरम दल और नरम दल का भेद मैं आपके सामने नहीं रख रहा हूं। लोकमान्य तिलक ने भी ऐसा कोई क्रांतिकारी कार्यक्रम जनता के सामने नहीं रखा जिससे देश में क्रांति पैदा हो जाय।

गांधीजी इस बात को देख रहे थे, एक नया हथियार उन्होंने इजाद किया था, जिसको उन्होंने अमोघ बनाया था। अमोघ हमारे पास हथियार है यह अहिंसा का असहयोग का, अहिंसक प्रतिकार का, जिसका कोई उत्तर नहीं है, कोई भी जवाब इसका नहीं दे सकता ऐसा उनका दावा था। उसकी तैयारी भी इसी प्रकार से हुई। चंपारण हुआ, बारडोली आदि हुआ, झंडा सत्याग्रह नागपुर आदि का हुआ और धीरे-धीरे हवा बनी देश में। वायसराय की कौंसिल में चर्चा होती थी कि मुद्दा

दिया गया तो फिर जनता के लिए कोई आशा नही है। जनता के सामने कोई दूसरा रास्ता ही नही रहेगा सिवा इसके कि अपने क्षोभ के कारण कोई पुरुषोत्तमदास पार्क मे जाकर के आत्महुति कर लेगा। और किसी ने जाकर थाने मे आग लगा दी, किसी ने और कुछ कर दिया। मै बार-बार दोहराऊगा नही, कह चुका हू उसमे से देश के निर्माण की विधायक शक्ति नही बनने वाली है।

स्वराज की लड़ाई के बाद आज सब से महत्व का कार्य हो रहा है। चूकि मैं उस कार्य मे लगा हू, इसलिए नही कह रहा हू। इसका सारा श्रेय छात्रो को है। थोड़ा बहुत आह्वान के रूप मे मुझे श्रेय दिया जाता है। काम तो उनका किया हुआ है। यह सबसे महत्व का काम है और सफल होना है तो नया भारत बनता है। इसमें हमें कोई शक नही है। आजादी की लड़ाई के हम सिपाहियो ने जो सपना देखा था वह २८ वर्ष के बाद नजर नही आ रहा है, वह भारत लोकशक्ति से पैदा होगा इसमें हमें कोई सन्देह नहीं।

☐ उ० प्र० के ८ सर्वोदय कार्यकर्त्ता बिहार पहुच गये हैं। कार्यकर्त्ता १६ जुलाई को पटना पहुचने पर जे० पी० से मिले, अगले कामो की चर्चा कर बिहार के विभिन्न भागो मे काम के लिए फैल गये हैं। उ० प्र० सर्वोदय मडल के अध्यक्ष महावीर सिंह ने जे० पी० को आश्वासन दिया है कि उ० प्र० के कार्यकर्त्ता बिहार पर भार नही बनेंगे। उ० प्र० सर्वोदय मडल का कैम्प कार्यालय फिलहाल कदम कुआ पटना मे रहेगा।

सर्व सेवा सघ का कैम्प कार्यालय पटना मे खुला है। पता इस प्रकार है : सर्व सेवा सघ, ७० रोड न० २ राजेन्द्र नगर, पटना—१६।

सघ मंत्री ठाकुरदास बग का भी अब यही पता रहेगा। सर्व सेवा सघ का मुख्यालय गोपुरी में ही रहेगा।

सेनानी निकल पड़ा है

श्रीधर महादेव जोशी

अब तक मन भर चर्चा और कण भर काम का रिश्ता था आज पर्याप्त काम और कम से कम चर्चा का सूत्र अपना कर तरुणों को अपना पुरुषार्थ प्रकट करना होगा।

करीब दो वर्ष पूर्व सर्वोदयी नेता जय प्रकाश नारायण ने 'इण्डियन एक्सप्रेस' मे एक लेख द्वारा भारतीय लोकशाही के भवितव्य के बारे मे अपनी व्यथा व्यक्त की थी। उसी के बाद विनोबा-जयन्ती के निमित्त मणिभवन बम्बई मे आयोजित एक सभा मे वे और मैं सभामच पर पास-पास बैठे थे। तब उन्होंने उक्त लेख के सबध मे मेरी प्रतिक्रिया जाननी चाही। मैंने कहा आपके लेख पर राजनीति का गहरा रग चढा हुआ है। (दैट इज फुल ऑफ पॉलिटिकल ओवरटोन्स) भारतीय राजनीति की गाडी कीचड मे फसी है, यह आपकी धारणा मुझे मान्य है। पर क्या इस सबध मे आपको अपनी जिम्मेवारी महसूस नहीं होती ? क्या लोकनीति के उपासक का राजनीति की तरफ लापरवाही बरतते रहना ठीक है। क्या राजनीति और लोकनीति मे कोई परस्पर सम्बन्ध नहीं है ? विनोबा तो अब वृद्ध हो गए हैं और उनका रुख तो मुख्यत अध्यात्म का है। इस अवस्था मे उनसे हमारी कोई अपेक्षा नहीं है। उनका आशीर्वाद ही हमारे लिए पर्याप्त है। पर आप राजनीति के बारे म निष्क्रिय नहीं रह सकते। मैं यह नहीं कहता कि आप चुनाव मे खडे हो, मन्त्री बनें या समाजवादी दल का नेतृत्व करें। वह ठीक भी नहीं है पर जब जनता म तीव्र असन्तोष फैल जाए और लोकक्षोभ प्रकट होने लगे तब जनता का नेतृत्व कर उसका मार्ग दर्शन करने की जिम्मेवारी आप उठायें हमारी अपेक्षा ऐसी क्या गलत मानी जायेगी ? लोकशाही का भविष्य खतरे मे है, केवल आक्रोश व्यक्त करने से काम नहीं चलेगा।

अब हमारा क्या कर्तव्य है ?

लगा, मेरी प्रतिक्रिया सुनकर जे० पी० का मन व्यथित हुआ। मैंने सोचा, व्यर्थ ही मैं इतना कठोर बोल गया। अब जयप्रकाशजी द्वारा बिहार-आदोलन का नेतृत्व ग्रहण करने और उनके खिलाफ शासकीय दल द्वारा उठाये गये बवडर मे मुझे दो साल पूर्व के उस प्रसग की बार बार याद आती रहती है। जयप्रकाश जी ने अपनी जिम्मेवारी सम्हाल ली है। तब फिर हमारा क्या कर्तव्य हो जाता है ? हम अपनी जिम्मेवारी स्वीकार करेंगे या नहीं ? जयप्रकाश नारायण और आचार्य विनोबा भावे के भूदान ग्रामदान आंदोलन मे मेरी आस्था है। देहातो मे पद-यात्रा कर ग्रामीण जनता को जागृत करने का जो अहर्निश प्रयत्न किया जा रहा है कोई भी इसके महत्व को अमान्य नहीं कर सकता इसलिए जयप्रकाशजी के आवाहन पर हडपसर सेवा दल की रैली मे मैंने राष्ट्र सेवा दल की ओर से भूदान आंदोलन के लिए एक वर्ष देने का आश्वासन दिया था और उसे अधिकाश पूर्ण भी किया। उस आश्वासन के कारण ही नाना साहब गोरे द्वारा प्रवर्तित गोवा-मुक्ति सत्याग्रह म मैं सक्रिय भाग नहीं ले सका। उस समय सेवादल के भूदान पथक के साथ मैं खानदेश मे घूम रहा था। एक सभा म किसी ध्येयवादी व्यक्ति ने चिल्लाकर कहा "जोशी जी आपका स्थान इस समय गोआ के कारागृह म है। यहा खानदेश म नहीं।" परन्तु मैं लाचार था। मुझे सेवा दल की ओर से दिए गए वचन की पूर्ति करनी थी।

सर्वोदय मे क्यों ?

भूदान आदोलन मे निहित सुप्त शक्तियों का मुझे अनजाने भान हो गया था। आगे चलकर आदोलन व्यापक होता गया। भूदान का रूपातर ग्रामदान मे किया गया पर सर्वोदयी कार्यकर्ताओ की नितांत श्रद्धा के बावजूद ग्रामदानी आदोलन जनता के मानस को नहीं पकड सका। भूदान आदोलन की मुख्य प्रेरणा नैतिकता की थी, शैक्षणिक थी और मुझे उसकी आवश्यकता महसूस हो रही थी। भारत मे यदि सच्ची क्रांति होनी है तो उसका प्रारभ ग्रामीण जनता के जीवन से ही होना चाहिए, यह मेरी भावना थी। जयप्रकाशजी को भी इस सम्बन्ध मे पूरी श्रद्धा थी। रंगून मे हुई एशियाई समाजवादी परिषद मे उन्होने कहा था कि एशिया की समाजवादी क्रांति व नींव कारखानोंमे काम करने वाले श्रमिको द्वारा नहीं, बल्कि खेतो मे काम करने वाले खेतिहर मजदूरों व छोटे किसानो द्वारा डाली जायेगी इसके लिए वे भूदान-ग्रामदान ग्राम स्वराज आदोलन म सतत कार्यरत रहे। उन्होंने उसके लिए 'जीवनदान' दिया, इसके लिए उन्होंने अपने दल से दूर होना भी स्वीकार किया और वे आचार्य विनोबा के शिष्य बने क्योंकि उन्हे अपना क्रांति का स्वप्न साकार करना था।

यह तो कर्तव्य ही था

उस दिन वर्धा के एक भाषण मे जय प्रकाशजी न कहा कि ग्रामदान-ग्राम राज्य की कल्पना जनता के मन मे रूढ करने के लिए मैं गत पन्द्रह बीस वर्षों से सतत् प्रयत्नशील हू। इसके लिए बिहार के मुसहरी ब्लाक मे जाकर मैं बैठा भी। वहा रचनात्मक कार्य द्वारा गरीब-पीडित जनता की सेवा की जा रही है, पर केवल इतने से काम नहीं चलेगा शासन की गलत नीति राजनैतिक लोगो की सत्ता-लोलुपता, देश की कुल परिस्थिति आदि के कारण गरीब जनता का दुःख घटने की बजाय बढता ही जा रहा है। भ्रष्टाचार की परिसीमा हो गई है। सामाजिक जीवन मे सतत सग्राम है। गुजरात मे कालेज के छात्रो के लिए सहनशीलता जब असह्य हो गयी तब उन्होंने शासन के विरुद्ध विद्रोह का झडा उठाया। उन्होंने मत्रिमण्डल को त्याग पत्र देने के लिए विवश किया और अन्तत सत्ता दल को विधानसभा बरखास्त करने पर मजबूर किया। इसके पश्चात नया कदम उठाने मे वे सफल नहीं हुए परन्तु जो पराक्रम उन्होंने जनमत के जोर पर किया, कम कीमती नहीं है। गुजरात के बाद बिहार मे विस्फोट हुआ। विद्यार्थियो ने अपनी बारह मागें पेश की जिनमे आठ उनकी अपनी दैनन्दिन कठिनाइयों के सम्बन्ध मे हैं और शेष चार व्यापक स्वरूप की हैं। भ्रष्टाचार का निर्मूलन करो, बेकारी दूर करो महगाई एव भाववृद्धि पर नियन्त्रण करो और शिक्षा पद्धति मे आमूलचूल परिवर्तन करो, इस प्रकार की उनकी मांगें हैं। इसके लिए उन्होंने जब आंदोलन आरम्भ किया तब शासन की

शिक्षा के मोर्चे पर पंजाब के बढ़ते चरण

पंजाब ने विगत दो वर्षों के दौरान शिक्षा के मोर्चे पर सराहनीय प्रगति की है

- ६ से ११ वर्ष की आयु वर्ग के ९३ प्रतिशत बच्चे प्राथमिक शालाओं मे दाखिल किये गये हैं, जबकि राष्ट्रीय लक्ष्य ९० प्रतिशत है।
- विगत दो वर्षो मे प्राथमिक स्तर पर ५ लाख से भी अधिक अतिरिक्त दाखिले हुए है।
- वर्ष १९७३ के दौरान एक हजार नयी प्राथमिक शालाए खोली गयी है जिससे प्रत्येक ग्राम से एक किलोमीटर की दूरी के भीतर एक शाला हो गई है।
- सरकार ने प्राथमिक शिक्षा के लिए निदेशालय स्थापित करने का निर्णय किया है।
- राज्य में १९७४-७५ मे शिक्षा के विस्तार के लिए ५२ करोड ४३ लाख रुपये की राशि निर्धारित की गई है जबकि १९७३-७४ मे निर्धारित राशि ४५ करोड ४९ लाख थी।
- शाला स्तर पर विज्ञान और खेलकूद के विषय अनिवार्य कर दिये गये है।
- पंजाब मे शिक्षा की रोजगारोन्मुख प्रणाली लागू करने के लिए कुलपतियो की एक समिति गठित की गयी है।

पांचवीं पंचवर्षीय योजना में पंजाब में शिक्षा का विस्तार नयी ऊँचाइयों का स्पर्श करेगा।

ओर से उन पर अमानुषी अत्याचार हुए। उस समय जयप्रकाशजी पटना में रुग्ण शय्या पर पड़े थे। उन्हें कैसे चैन पड़ती? युवकों के इस आंदोलन का नेतृत्व लेना उनके लिये अनिवार्य हो गया। सर्वोदयी नेता के नाते भी उनका यह कर्त्तव्य ही था।

प्रच्छन्न आरोप

जयप्रकाशजी अब देहातों में काम करने से ऊब गये हैं। अब वे आंदोलनवादी बन गये हैं, सर्वोदय की उदात्त भूमिका छोड़कर अब वे पुन: राजनीति में कूद पड़े हैं, इस प्रकार के प्रच्छन्न आरोप उन पर इन्दिरा गांधी से लेकर छोटे-बड़े सभी कांग्रेस नेताओं की ओर से किये जाने लगे। परन्तु वर्धा के सर्वसेवा संघ सम्मेलन में भी जब इस प्रकार का प्रतिपादन कुछ सर्वोदयी नेताओं द्वारा किया गया तब मुझे बड़ा क्लेश हुआ। उस समय मुझे मणिभवन के उस प्रसंग की याद पुन: एक बार अनायास ही आ गयी।

कल्पना दृढ़ हुई

जयप्रकाशजी ने सर्वोदयी भूमिका को लेकर ही छात्र-आंदोलन का समर्थन किया है। उन्होंने विद्यार्थियों का नेतृत्व कुछ शर्तों के साथ ही मान्य किया है। इसके लिए वे विनोबाजी की सम्मति लेने हेतु रुके नहीं। उन्होंने लोकनिन्दा की भी परवाह नहीं की। विनोबाजी के कुछ निकटवर्ती अनुयायियों का लगा कि उनको विनोबाजी से विचार-विनिमय करने के पश्चात् ही यह जिम्मेदारी उठानी चाहिए थी। ऐसा न करने के कारण कुछ लोग उनसे नाराज हैं। जयप्रकाशजी ने विधानसभा भंग करने की माग का जो समर्थन किया है, वह विनोबा जी को पसन्द नहीं है, यह स्पष्ट है। फिर भी जयप्रकाश जी अपनी प्रतिभा के अनुसार ही चलें, ऐसा उन्हें लगता होगा, यह मेरी कल्पना थी। वर्धा के सर्वसेवा संघ के सम्मेलन में उपस्थित रहने के पश्चात् मेरी यह धारणा दृढ़ हुई है। विनोबाजी जयप्रकाश में प्रकट हुए प्रकाश को मिटा कर वहां अन्धकार करना नहीं चाहते वे वेदान्ती हैं, उन्हें अन्ध श्रद्धा से नफरत है। फिलहाल 'जयप्रकाश विरुद्ध जय अन्धकार' का सामना हो रहा है। ऐसे मौके पर जय प्रकाश जी के हाथ कमजोर करने का पाप विनोबा कैसे करते? इसीलिए उन्होंने अपने ढंग से समझौता करा दिया। उनकी यह धारणा है कि सर्वसेवा संघ में विभिन्न मतभेदों के बावजूद सबका हृदय एक है। मानवी अच्छाई के बारे में आस्तिक बुद्धि होने पर मतभेदों के रहते हुए भी सर्वसेवा संघ को सक्रिय रहना चाहिए और वह सक्रिय रहेगा, विनोबा जी को मन ही मन ऐसा विश्वास है और इसीलिए उन्होंने बड़ी युक्ति से उस समय के गत्यवरोध को दूर कर दिया। विनोबाजी से विचार विनिमय किये बिना बिहार आंदोलन का नेतृत्व स्वीकार कर लेने के कारण और खासकर विधानसभा भंग करने की माग को बढ़ावा देने के कारण सर्वसेवा संघ के जीवन में यह अत्यन्त नाजुक प्रसंग उपस्थित हुआ था। ऐसे समय मेरे जैसे संघ बाह्य कार्यकर्ता को सर्वसेवा संघ के मंत्री की ओर से सम्मेलन का निमन्त्रण मिला। तब मुझे अच्छा ही लगा क्योंकि इस बहाने मुझे परिस्थिति के प्रत्यक्ष अवलोकन, विचार-विनिमय का अवसर और विनोबाजी से भेंट का त्रिविध लाभ मिल रहा था।

सर्वसेवा संघ के अधिवेशन में उपस्थित रहने का मेरा यह प्रथम ही अवसर होने के कारण मुझे इसके बारे में विशेष उत्सुकता और जिज्ञासा थी। अधिवेशन के लिए सभी राज्यों के प्रतिनिधि और लोकसेवक आये हुए थे। दो-चार युरोपियन युवक युवतियां भी आयी हुई थीं। सम्मेलन की विविधता और विचित्रता मेरी कल्पना से भी अधिक मनोहारी थी। गेरुए वस्त्र धारण किये हुए सन्यासी मुनि भी यहां थे और छोटे बच्चों के साथ गृहस्थाश्रमी दम्पति भी। वहां तरुण भी थे और वृद्ध भी। आधुनिक पद्धति के बाल बढ़ाये हुए सन्यासी वृत्ति के तरुण भी वहां दिखाई दिये। भिन्न भेष, भिन्न भाषा, भिन्न जाति, भिन्न धर्म के इन सर्वोदय लोक सेवकों को एकत्र पिरोने वाला धागा था, महात्मा गांधी और विनोबा की सिखावन। सत्य, अहिंसा और संयम का पालन करते हुए लोकसेवा करने और उसी में जीवन साफल्य अनुभव करने की हमारे राष्ट्रपिता की सीख है। सर्वसेवा संघ के माध्यम से लोग उसे अमल में लाने का प्रयत्न कर रहे हैं। गांधीजी के पश्चात विनोबाजी द्वारा उन्हें भूदान, ग्रामदान एवं ग्राम राज्य की प्रेरणा मिली है। अधिवेशन का वह दृश्य देखकर मन में हमारी पुरानी कांग्रेस की स्मृति-जागृत हुए बिना नहीं रही। सारे भारत का चित्र मुझे वहां दिखाई दिया। विविधता में एकता का दर्शन हुआ।

आशा पल्लवित हुई।

सब दल टूट रहे हैं, फूट रहे हैं। क्या सर्वसेवा संघ में भी फूट पड़ेगी? बिहार में उठे हुए तूफान से सर्वसेवा संघ की नाव तो नहीं डूब जायेगी? इस आशंका से मन व्यथित हो रहा था। ऐसा न हो यह मनोगत था। इन सबकी इतने वर्षों की साधना तपस्या व्यर्थ चली जाय, ऐसा कौन सोचता होगा। सर्व सेवा संघ के इस हथियार का यदि जय प्रकाशजी ने कुशलता से प्रयोग किया, तो वह मौलिक क्रांति का साधन बन सकेगा ऐसी आशा भी मेरे मन में पल्लवित हुई। सुना है, गांधीजी ने एक बार कहा था कि विनोबा, जवाहरलाल और जयप्रकाश मेरी विरासत आगे चलायेंगे। अधिवेशन में समाचारपत्रों के संवाददाताओं से चर्चा के दरमियान एक प्रतिनिधि ने पूछा कि यहां का वाद-विवाद और आपसी टंटे बखेड़े देखकर क्या आपको ऐसा नहीं लगता कि विनोबा का भूदान-ग्रामदान आंदोलन असफल सिद्ध हो गया है। मैंने कहा—यहां के वाद-विवाद का स्वरूप झगड़े-झंझट का नहीं है। राजनैतिक दलों के अधिवेशनों में जैसा बवंडर आया करता है, यहां वैसा कुछ भी नहीं है। भूदान-ग्रामदान आंदोलन सफल हुआ या नहीं, इस का निर्णय ऐसे खड़े-खड़े नहीं किया जा सकता। फिर भी मैं एक प्रश्न पूछना चाहता हूं कि बिहार-आंदोलन के लिए एक सर्वमान्य नेता क्या इसी आंदोलन से नहीं मिला? इसी सर्वोदय आंदोलन में जयप्रकाश जी ने करीब बीस साल तक कठोर तपस्या और कठिन कर्मयोग की साधना की है और इसी लिए उनके चारित्र्य, सरलता और सद्हेतु के बारे में सन्देह प्रकट करने की हिम्मत उनके किसी विरोधी को भी नहीं हो सकी, क्या यह सत्य नहीं है? उनकी क्रेडिबिलिटी (विश्वसनीयता) यों ही सर्वमान्य नहीं हो गई है।

जयप्रकाशजी की कल्पना

भूदान-ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य की कल्पना

को यदि सत्याग्रह की प्रेरणा से अनुप्राणित किया गया तो वह भारत की आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक क्रांति का साधन बन जाएगी, ऐसी मुझे आशा है। चीन में कम्युनिस्ट पार्टी ने माओ-त्से-तुंग के नेतृत्व में किसानों के द्वारा क्रांति कर दिखाई। वहां की परिस्थिति बेशक भिन्न थी। वहां उन्हें प्रस्थापित राज्य एवं समाज व्यवस्था के खिलाफ सशस्त्र संघर्ष करना पड़ा। एक के बाद एक गांव और प्रांतों पर कब्जा किया गया। अधिकृत प्रदेश पर वे नये समाज की रचना करते गये। कृषि और किसान, यही उस नई व्यवस्था का मूलाधार था। भारत की परिस्थिति कुछ और है। यहां बंदूकों के बल पर ग्रामराज्य की स्थापना नहीं की जा सकती। यहां जन-जागृति के बल पर ही, सत्याग्रही संघर्ष समितियों के जरिये ही ग्रामसभा की सत्ता प्रस्थापित की जा सकती है। जो कार्यकर्ता ग्रामसभा के माध्यम से भूमि प्राप्ति और वितरण का कार्य करते हुए ग्रामीण जनता की सेवा कर रहे हैं, उनके प्रयत्नों को पर्याप्त सफलता नहीं मिल पाई है, यह स्पष्ट है, पर इससे ग्रामराज्य की कल्पना ही गलत है यह सिद्ध नहीं होता। उसके लिए वे आवश्यक लोकशक्ति निर्माण नहीं कर सके और उसके अनुकूल लोकाभिमुख शासन भी उपलब्ध नहीं हो सका। आज देश में जो क्रांतिकारी वातावरण निर्माण हुआ है, उसकी उपेक्षा न करके जनता के असंतोष को उचित दिशा देकर लोकशक्ति निर्माण की जाए, यह जयप्रकाशजी की कल्पना है। देश की अर्थव्यवस्था सरकार के काबू से बाहर हो रही है। सत्ताधारी दल की अवस्था प्रवाह पतित व्यक्ति जैसी हो गई है। बिहार में तो सत्ताधारी दल बिल्कुल भ्रष्ट हो गया है। फलस्वरूप गरीब जनता का जीवन असह्य हो गया है। जीवन की दृष्टि से वर्तमान शिक्षा सर्वथा निरुपयोगी सिद्ध होने के कारण विद्यार्थी समुदाय प्रचलित शिक्षा-पद्धति में आमूल-चूल परिवर्तन की मांग कर रहा है। भ्रष्टाचार और महंगाई के खिलाफ उसने रणभेरी बजा दी है। सरकार दमन द्वारा उनकी आवाज दबाने का भरसक प्रयत्न कर रही है। जयप्रकाशजी कह रहे हैं कि इन समस्याओं के निराकरण के लिए विद्यार्थियों को कम से कम एक साल तक कालेज का मोह छोड़ कर देहातों में जाकर रहना चाहिए और वहां ग्रामीण जनता को उनके मताधिकार के बारे में जागरूक बनाना चाहिए। वे अन्याय के खिलाफ सत्याग्रह आंदोलन खड़ा करें, जगह-जगह संघर्ष समितियां स्थापित करें और समय आने पर असहयोग का प्रयोग कर ग्रामसभा की सत्ता गांव-गांव में स्थापित करें। ऐसा होगा तभी हम आज के संदर्भ में किसान और कृषि मजदूर क्रांति के वाहक बन कर समाज व्यवस्था का कायाकल्प कर सकेंगे। भारतीय समाज-जीवन को भ्रष्टाचार, महंगाई और बेरोजगारी का विदोष हो गया है। उस पर सत्याग्रही ग्रामदानी ग्रामराज्य की 'मात्रा' लागू हो सकेगी, ऐसा जयप्रकाशजी का विश्वास है। बिहार आंदोलन का नेतृत्व स्वीकार करके उन्होंने अपने कर्तव्य का पालन किया है। अब युवकों को अपनी जिम्मेवारी संभालनी चाहिए। एक दो साल यदि वे कालेज की पढ़ाई बन्द रखेंगे तो उससे कुछ बड़ा नुकसान नहीं होगा। स्वतन्त्रता-संग्राम में हजारों विद्यार्थियों ने वर्षों तक कारावास का कष्ट सहन किया था, इस बात को वे न भूलें। उसकी तुलना में एक दो साल तक कालेज का मोह छोड़ना बड़ी बात नहीं है। कम से कम बिहार के कालेज विद्यार्थियों को मैदान में उतरना ही चाहिए। उन्हें देहातों में जाकर ग्रामीण जनता से समरस होने का प्रयत्न करना चाहिए। प्रस्थापितों के जाल में फंसी हुई प्रचलित शिक्षा-पद्धति को मुक्त करने का भी यही मार्ग है। अब तक मन भर चर्चा और कण भर काम का सिलसिला था आज भविष्य में पर्याप्त काम और कम से कम चर्चा का सूत्र अपना कर तरुणों को अपना पुरुषार्थ प्रकट करना होगा। उन्हें अपने बल और अपनी हिम्मत पर अपने जीवन में और समाज में क्रांति कर दिखानी होगी।

अभाव और गरीबी के पहाड़ों पर छात्रों की यात्रा

पदयात्री प्रताप शिखर की डायरी के कुछ पन्ने

युवा छात्रो द्वारा उत्तराखंड के एक कोने से दूसरे कोने तक की गयी पदयात्रा के समाचार आप पढते ही रहे हैं। पदयात्रा में कम-ज्यादा समय तक ४० छात्रों ने हिस्सा लिया। युवाओ के इस साहसिक अभियान मे कुंवर प्रसून चन्द्रशेखर, शमशेर तथा प्रताप शिखर शुरु से आखिर तक रहे। पदयात्रा के दौरान प्रताप शिखर द्वारा लिखी गयी डायरी के ये अंश (२५ मई से ६ जून) कही आपको कीमतो की तरह ऊंची चढ रही पहाडी चढाई पर चढायेंगे तो कही निराशा की घाटी मे जी रहे लोगों तक नीचे उतार जायेंगे। जैसा कि इन अंशो से मालूम होगा यह युवा अभियान समस्याओ के उत्तर खोजने या अपने बनाये उत्तर थोपने के लिए नही था, वह तो समस्याओ को समझने ही निकला था, सब की समस्याओ मे एक-एक दिन शामिल होने।

अस्कोट वन विश्राम भवन मे डेरा डाला दिया है। हम लोग बाजार की ओर बढे, सारा बाजार छान डाला पर कही चाय के साथ पकोडी तक नहीं मिली। कैमरा बी डी ओ के पास दे दिया, क्योकि वर्जित क्षेत्र मे ले जाने की अनुमति नही है। काली नदी के उस पार नेपाल व इस पार भारत सीमान्त के लोगों मे खूब रिश्तेदारियां होती हैं। व्यापार भी चलता है। वैवाहिक सबंधो मे नेपाल की लडकियां यहां अधिक आती हैं, भारत की कम।

बलमरा पर काली-गोरी के संगम जौलजीवी मे कार्तिक संक्राति से एक हफ्ते का दोनो देशों का सम्मलित मेला होता है।

लुम्ती में त्रिलोक चन्द्र जोशी भाव मे हैं, उनसे पता चला कि वनरौत पास ही वही रहते हैं। कहते हैं कि अस्कोट के राजा पहले वहीं थे। आज भी मनुष्यो से दूर भागते हैं। काष्ठ का अच्छा काम करते हैं। जोशी जी के घर पर उनका बनाया हुआ एक खूबसूरत काष्ठ का बरतन देखा था, वे जंगली मानवो का जीवन जीते हैं। आसमान रुठ गया, वर्षा आ गयी, चामी गाव के एक होटल मे टिके। यहां पर रामबाम के रेशे निकाल कर रस्सी बनायी जा रही थी खडगसिंह के घर पर रुके हुए हैं। यह भोटिया बस्ती है, इस डिब्बे जैसे छोटे से मकान की छत पर चटाई, केवल चटाई डाल रखी है। इन लोगो का तिब्बत के साथ व्यापार चलता था, लेकिन चीन आक्रमण से टूट गया, अब भी कालीन आदि बनाते रहते है। पंचाचोली पर सफेद चोटी गोरी नदी के दोनो ओर की घाटियों के विपरीत खडी है, लगता है किसी ने आगे का दरवाजा बंदकर दिया हो। रास्ते मे अनेक प्रकार के झरने मिलते हैं।

मुनस्यारी ६,५०० फीट की ऊंचाई पर स्थित है, सामने बर्फ से ढकी हुई सफेद चोटियां हैं, उस पार तिब्बत है। गांधी पार्क मे महिलाओ की सभा की गई। लगभग ५० महिलायें थी। वर्फ होने के कारण कार्यक्रम जल्दी समाप्त करना पडा। गुड सत्तू मिल गया। भोजन की कमी होने के कारण पानी मे सत्तू घोलकर खाया।

कालामुनि पहाड की चढाई और गिरगाव का ढाल। इस पर्वत का असली नाम काल-मेनी कहते हैं। बाजार में सभी चीजो का अभाव है। सीमान्त कहना भुलावे मे डालना है। जनता के लिये सीमान्त नहीं है। अब ८६०० फीट की ऊंचाई पर आ गये हैं। झरने के ऊपर से मुन्याल एक खूबसूरत पक्षी चहकता हुआ उड गया, यहां कस्तूरी मृग तो समाप्त हो रहा है। कुछ लोग अपने भैंसो को बुग्यालो (पहाड की चोटी पर मखमली घास के मैदान, जहां बर्फ पिघल जाती है) मे ले जा रहे हैं। जगतसिंह भौया कई घरो से रोटियां, सब्जी व दाल इकट्ठी करके ले आया। हमने बडे चाव से खाया। लुम्ती मे भी अनेक प्रकार की सब्जियां थी, पर रोटी खडगसिंह ने ही बनाई थी। ये सब लोग तिब्बत व्यापार से टूटे हुए आदमी हैं। भोटिया चाय जो घी और नमक से बनायी जाती है, हमे पिलायी।
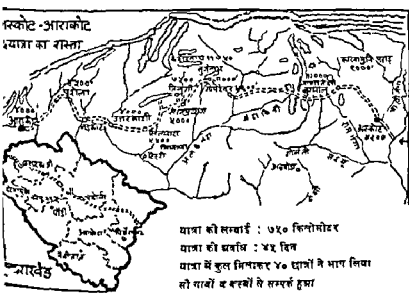
हरियाणा की प्रगति की कहानी तथ्यों एवं आंकड़ों की जबानी

हरियाणा ने भारतीय संघ के एक अलग राज्य के रूप में अस्तित्व में आने के बाद विकास के विभिन्न क्षेत्रों में असाधारण प्रगति की है। विकास के क्षेत्र में तेजी से हुई तरक्की एवं सफलता का श्रेय राज्य सरकार द्वारा बनाई गई सभी नीतियों तथा योजनाओं को है। यद्यपि हमने अभी विकास का एक लम्बा सफर तय करना है तद्यपि जनसाधारण को पेश आने वाली प्रमुख समस्याओं को हल करने में वायु की सी तेज गति से कदम उठाये गये हैं। हरियाणा की इस शानदार सफलता की कहानी आगे दिये तथ्यों एवं आंकड़ों की जबानी सुनिए—

अनाज की पैदावार

आज हरियाणा अपनी जरूरत का अनाज पैदा करने में न सिर्फ आत्म निर्भर हो गया है बल्कि अब यह अपनी जरूरत से भी अधिक अनाज पैदा करने लगा है जबकि वर्ष 1966 में यह अनाज की कमी वाला राज्य था।

सिंचाई सहूलियतें

हरियाणा में वर्ष 1972-73 के दौरान 37.16 लाख एकड़ भूमि (15.04 लाख हैक्टेयर) को नहरों से सिंचाई की सहूलियतें मिलने लगीं जबकि वर्ष 1967-68 के दौरान 33.57 लाख लाख एकड़ (13.59 लाख हैक्टेयर) भूमि को ही नहरों से सिंचाई की सहूलियतें उपलब्ध थी।

मई, 1968 में हरियाणा में 29,000 नलकूप थे लेकिन आज राज्य में नलकूपों की संख्या बढ़ कर 1,27,639 हो गई है।

गांव-गांव में बिजली

मई, 1968 में हरियाणा के हर पांच गांवों में से सिर्फ एक गांव में बिजली पहुंची थी लेकिन नवम्बर, 1970 के अन्त तक राज्य का गांव-गांव बिजली के प्रकाश से जगमगा उठा। हरियाणा देश का पहला राज्य है जिसने शत-प्रतिशत ग्राम-विद्युतीकरण का कीर्तिमान स्थापित किया है।

उद्योगों का प्रसार

राज्य में छोटे पैमाने की औद्योगिक इकाइयों की संख्या वर्ष 1973-74 के अन्त में 13,418 थी जबकि मई, 1968 में राज्य में 4598 छोटे पैमाने के उद्योग थे।

पीने का शुद्ध पानी

छः वर्ष पहले राज्य के केवल 203 गांवों में ही पीने के शुद्ध पानी की सप्लाई की सहूलियतें जुटाई गई थी लेकिन आज राज्य के अनुमानतः 700 गांव इस सुविधा का लाभ उठा रहे हैं और इस तरह पिछली स्थिति में 250 प्रतिशत सुधार हुआ है।

परिवहन

हरियाणा में यात्री परिवहन के राष्ट्रीयकरण का कार्य नवम्बर, 1972 में पूरा कर लिया गया था। इस समय हरियाणा राज्य परिवहन की 1,571 बसें हैं जब कि मई, 1968 में सिर्फ 567 बसें थी। आज हरियाणा परिवहन सेवा देश भर में सबसे अधिक कार्य-कुशल मानी जाती है।

कमजोर वर्गों का कल्याण

सामाजिक एवं शारीरिक रूप से अशक्त व्यक्तियों को राहत देने के उद्देश्य से अनेक योजनायें चालू की गई हैं। वृद्ध तथा अशक्त व्यक्तियों को हर सम्भव सहायता दी जा रही है। अनुसूचित जातियों एवं पिछड़े वर्गों के लोगों के उत्थान के कार्य को प्राथमिकता दी गई है।

सड़कें

राज्य के 60 प्रतिशत गांवों को पक्की सड़कों से मिला दिया गया है। पक्की सड़कों से मिलाये गए गांवों की संख्या अब 4210 हो गई है जब कि मई, 1968 में राज्य के केवल 1500 गांव ही पक्की सड़कों से मिले हुए थे।

निदेशक, लोक सम्पर्क, हरियाणा द्वारा प्रचारित।

डी० पी० आर०—हरियाणा 96-डी० (74)

लोग हमें ड्रामा पार्टी वाले समझ रहे हैं। खेतो मे ढढाला (कांटेदार हल) बैलों द्वारा नहीं, आदमियो द्वारा लगाया जाता है। छोटा जुआ है, उसे आदमी ही खींचता है। होकड़ा गाव के सभी लोग हमारी टोली की प्रतीक्षा मे थे। गाव की सीमा पर स्वागत करने आते हैं। आते ही समस्याएं सुनाने लगते हैं पीने का पानी नहीं मिलता, नदी पर पुल नहीं है अस्पताल से मरघट ज्यादा नजदीक है! यहा का बाजार लेजम है, गाव से १५ मील दूर कुछ भी समान उपलब्ध नहीं हो पाता। मिट्टी के तेल का बडा अभाव है। दो सौ परिवारों के बाड़े मे एक ही लडका इण्टर पास है। सामान बकरी की पीठ पर ढोया जाता है।

रामगंगा पर ग्रामीणो द्वारा बनाया गया लकडी का कच्चा पुल है। पार करते समय थोडी-सी असावधानी होती तो हम सब सैकडो फुट नीचे गिर पडते। जोकें पैरों मे चिपक गयीं। निकालने पर पैरो से खून निकलता ही रहा। मानसिंह जी के साथ रातिर गाव की ओर बढते है। तग रास्ते से जगल के बीच से होकर गुजरना पडता है। यों कहिए कि रास्ता है ही नहीं। हमारे गुजरने से ही पहली बार रास्ता बन रहा था।

"साब, हमारी खेती नदी पार (पिथौरागढ) भी है। वहाँ जाने के लिये डीडीहाट से परमिट बनाकर लाना पडता है। साब, नदी पर पुल भी नही है। हमारी तो कोई पूछ-गाछ ही नहीं ठहरी। १२ मील दूर श्यामाधुरी से सामान लाना पड़ता है खच्चरो के लिए भी रास्ता नही। बकरियों पर सामान आता है। रिंगाल के तैयार माल को बेचने में डर लगता है,' (वनो से निकाला गया रिंगाल चटाई आदि बनाने के काम आता है, रिश्वत न मिलने पर बने बनाये माल को वन विभाग वाले जब्त कर लेते है।)

'साब, आदमखोर चीता लगातार ८ साल तक इलाके मे घूमता रहा। उसका हमला १८ साल तक के बच्चो और स्त्रियों पर होता था। जाँघें और बाजू पहले खाता था। पीछे से हमला करता था। स्त्रियों के कुचों को तो सर्वप्रथम खाता था। साब, याद करके तो बस,'''क्या याद करें साब,'''''और फिर उसकी नजरें शून्य में फैल जाती। उस चीते के कारण कई सन्तानहीन हो गये हैं। पहले पहले तो बचाव के लिए जितना इतज़ाम कर सकते थे, किया लेकिन फिर बाद मे अभ्यस्त हो गये थे, लोग अपनी-अपनी बारी का इतजार करने लगे।

अतत जब चीता मारा गया तो भी लोगो को यकीन नही हुआ कई दिनों तक, वह तो उनकी जिन्दगी और मौत का एक हिस्सा बन गया था।

तल्ला जाहार और मल्ला दानपुर के नाले को लट्ठे से पार करते हुए दो आदमी मर गये और एक घायल हो गया। यहा कुछ जमीन ऐसी है, जिसमे एक साल फसल बोते हैं और तीन साल तक उर्वरा शक्ति वापस लाने के लिए परती छोड देते हैं।

१२ सौ नाली (पहाड मे जमीन का नाप) रिंगाल का वृक्षारोपण करने के लिए गाँव के लोग गड्ढे बना रहे है। नन्दाकोट चोटी की एक श्रृंखला यहा तक आती है, जहा के नाविक ग्लेशियर से रामगगा निकलती है। घने जगल के मध्य मे कुछ झोपडियाँ हैं और आगन मे बैठे ५-७ लोग हुक्का पी रहे हैं। ये पर्वसिंह जी के दोस्त है। आज के हमारे गाइड पर्वसिंह जी कोई छोटे-मोटे आदमी थोडे ही हैं। ११ भैंस, २५ गाय और ७५ भेड बकरियो का मालिक है। जी भर कर मट्ठा पी जाते हैं।

पहाड की चोटी मूल्य रेखा की भाति ऊपर की ओर बढती जा रही है। चोटी मे दर्रे पर लकडियो का एक ढेर है। जिसे देवता के नाम चढाया जाता है। प्रत्येक पहाड की चोटी पर एक दर्रा होता है। यहा पर देवता अवश्य रहता है। देव दर्शन कर रहे थे कि लोक-दर्शन हो गया। एक फटे कपडों में हाफ्ता हुआ आदमी पास आया। हमें भरोसे का जान कर गिडगिडाने लगा, ' 'साब, रिंगाल की चटाइया बेचने ले गया था, फारेस्टर व रेंजर ने जब्त कर ली। तीन सौ रुपये देने पर छोडा। रसीद केवल ४० रुपये की ही दी।' वनवासियों को वन सपदा से जीवनयापन का मौका बिना रिश्वत दिये भी मिल सकेगा क्या ?

आज बुरांस के वन से होकर काफी आगे आने पर गाव के दर्शन होते हैं। धूप के साथ साथ थकान और भूख लग रही है। स्कूल तो अभी बहुत ऊपर पहाड़ी पर है। मुँह में लार तक नही बची। बहुगुणा जी ने इलाइची दी। लगातार चक्कर आते रहे।

बदियाकोट—वर्षा मे यहा के लिये कच्ची सडक है। उसी सडक से बकरियो की पीठ पर राशन जाते हैं। वर्षा के दिनों बादल खुलते हैं, सडक बद हो जाती है। पुलों के बह जाने पर नदी के आर-पार रस्सा लगाते हैं। उस पर डोली से या बोरे मे बाँध लोगों को इधर-उधर खींचते हैं। भराडी कफकोट से एक कुन्तल का भाडा २६ रुपये है। ऐसी हालत मे आप चीज का दाम चुकायेंगे कि भाड़ा!

गाँवो मे मुख्य पैदावार जौ, फाफरा, चौलाई व मँडुवा है। आलू व छेमी (सेम) भी होती है। लोगों की शिकायत है कि कोई भी अधिकारी यहाँ नही आता। अंग्रेजी राज्य के दौरान एक सब डिविजनल मजिस्ट्रेट यहाँ आया था। उसके बाद किसी भी उच्च अधिकारी के वहाँ आने की ५२ वर्षीय प्रधान को कोई जानकारी नही है। क्षेत्र से चुने गये कोई भी विधायक यहाँ आज तक नही आये। पूछा तो कहने लगे इतनी बर्फ पर विधायक कैसे हो सकता है साहब ? कोई मामूली आदमी भी आता है तो गाँव भर को डरा धमका जाता है।

मल्ला विनाक की चोटी पर भेड-बकरी वाला अपने कुत्तो के साथ मिलता है। नीचे उतरते हैं। धूप की किरणें बुरांस के घने जगल से छन कर नीचे आ रही हैं। बोरा नदी में नीचे उतरते हैं। एक पुराना व टूटा हुआ पुल दिखायी दे रहा है। दूसरे के लिये ऊचे पत्थरो पर चीड के लट्ठे रखे हुए हैं। एक ही चारा रह जाता है। बडी नदी को तैर कर पार करते हैं।

बलडा मे पर्यटक भी कभी-कभी आते हैं। एक बार बम्बई से एक टोली वेदिनी बुग्याल उपकुण्ड देखने आयी थी। गाँव वालो की माँग है कि जू० हा० स्कूल बने, बोरा नदी पर पुल व सडक चाहिए। अस्पताल १८ मील दूर है।

माणातोली बुग्याल घास का मैदान करीब १२००० फीट की ऊँचाई पर है। चट्टानें बिलकुल नगी हैं। बुग्यालों पर भेडो

के साथ भेड पालको के दर्शन होते हैं। बुग्याल्गो पर नयी घास और फूल उग रहे हैं। बर्फीली हवा चल रही है, हमारे बेहद गरम कोट भी उसके आगे ठंडे पड जाते हैं। सामने त्रिशूल की हिमाच्छादित चोटी है गोत्र बहुत ही दूर है। घाटी की गहराई नीचे को धंसती ही जा रही है। यहा के लोग दूर ग्वालदय से बकरियो की पीठ पर सामान लाते हैं, ३५ रु० कम्बल भाडा पडता है। आलु भी ग्वालदय तक बकरी की पीठ पर जाते है। कुमाऊ के लोग धान देकर आलु ले जाते थे लेकिन अब दो जिलो के धान के व्यापार पर प्रतिबंध लग गया है। बुग्याल मे चलते हुए ऐसे लग रहा था जैसे मखमल के गद्दो पर चल रहे हों।

इस सारे इलाके के अधिकाश जवान फौज मे नौकरी करते हैं। मुक्ताल बुग्याल मे बिजली गिर जाने से—११० भेड बकरिया मर गयी। फिर एक बार भेड की बीमारी फैली थी। तब से यहा के लोग भेड ही नहीं पालते। इस सारे क्षेत्र मे महिलाओ के वस्त्र काले रग के होते हैं। एक भी घर मे मिट्टी का तेल नहीं हैं, सूरज आता है उजाला लाता है, सूरज जाता है उजाला भी चला जाता है।

आज हमारे साथ अमरासिह हैं, आजाद हिन्द फौज मे रहे हैं ६४ साल की उम्र मे भी गजब का उत्साह है। लम्बी और खडी मूछ। श्री अमरासिह ने बताया कि एक बार पेनाग मे जब वे पत्थर के ऊपर भोजन कर रहे थे तो नेता जी ने पूछा पत्थर पर क्यों खा रहे हो। उत्तर दिया, "भारत आजाद होने पर सोने की थाली मे खाऊंगा। २५ साल बाद उन्हे ३५ रु० पेन्शन मिल रही है।

कन्नोज गाव मे स्व0 हवलदार खीमसिंह की विधवा बहुली देवी ने पेंशन का प्रार्थना पत्र भेजा है उनके छोटे से दो बच्चे हैं। गरीबी ने इनके घर को अपना घर ही मान लिया है। यही के स्व0 शिवसिंह अमरासिह जी के साथ रहे हैं। पत्नी भी मर गयी हैं। ७ बच्चे हैं। पहला १२ साल का। आजादी के लिए जान दे देने वाले मा बाप के बाद इन सात बच्चो को मानो गरीबी ने ही गोद ले लिया। बूरा गाव मे हमारी टोली पहुंचने पर कुछ बच्चे और लोग ऐलान करते हैं, हम लोग गीत गाते हैं, सभा के लिए लोग जुट जाते हैं। एक शराबी व्यक्ति भी वहा पहुंच कर बक-भक करने लगता है। वह यहा का प्रतिष्ठित व्यक्ति है। हवलदार व दुकानदार बालसिंह रावत है। नशे मे भूमता हुआ वह सभा की ओर मुंह कर पूछता है, ये लोग इस इलाके मे घुस कैसे गये? इनके पास कोई परमिट है यहा आने का? मेरे पास तो इनके सम्बन्ध मे कोई कागज नहीं आया? इनको कैद करलो। ये चीन के जासूस है। इनको कत्ल करदो। गाव के लोग हसते रहे, कुछ ने उसे सभा से थोडा अलग लेजाकर हमारे बारे मे बताया। उसने समभा कि हम सरकारी लोग हैं, तेजी से डगमगाते कदमों से सभा तक आया, गाली बकते हुए कहने लगा, "अब तक क्या किया है किसी ने हमारे लिये ये, हैं खा पी कर चले जाते है। हमारा इलाका पिछडा हुआ है। हमारे लिए कुछ नहीं करता कोई। तुम नीचे जाना, हमारे सब अनुदान काट देना व मागे रद्द कर देना। पानी के लिए दरख्वास्त दी थी अभी तक कुछ नही हुआ। कुछ ने फिर समझाया कि हम सरकारी विभाग से नही हैं, घूम रहे हैं लोगो के दुख सुख मे हिस्सा बटाने आये हैं। वह फिर चिल्लाने लगा' ये नेता क्या कर रहे हैं। वोट लेने आ जाते हैं, बाहर करो इनको।

O
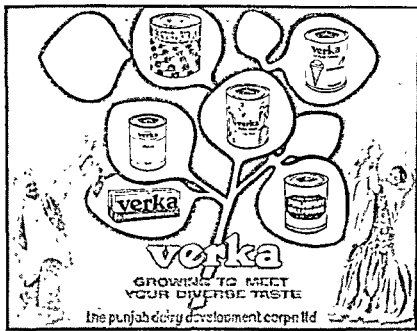
छात्र संगठनों की राजनीति और भारतीय संदर्भ

"छात्र आंदोलनों ने राष्ट्रवादी नेताओं की एक पूरी पीढ़ी को प्रशिक्षित किया था और उन अनेकों को सिद्धांतों की दीक्षा दी थी, जो बाद में राजनीति तथा रचनात्मक कामों में लगे थे। अब छात्र आंदोलन इस प्रकार की कोई भूमिका नहीं निभा पा रहे हैं। यद्यपि सक्रियता की परम्परा अभी पूरी तरह विलीन नहीं हुई है, समाज में अनुकूल परिस्थितियां दीख पड़ने पर वह पुनर्जीवित हो सकती है। फिलहाल तो जो छात्र अनुशासनहीनता सामने आ रही है वह गहरी निराशा और शिक्षा-संस्थाओं की बदतर होती जा रही हालत का ही प्रतिबिम्ब है।" बिहार आंदोलन से काफी पहले लिखे गये इस लेख में जिस अनुकूल परिस्थिति का संकेत किया था, वह आज सामने है।

छात्र संगठन अनेक प्रकार के होते हैं। इनमें एक छोर पर सुदृढ़ सैद्धांतिक आधारों पर संगठित जुझारू छात्रों के राजनीतिक गुट हैं तो दूसरे पर सीमित सदस्य वाले विशुद्ध सामाजिक अथवा सांस्कृतिक ऐसे संगठन, जिनका प्रभाव समाज अथवा छात्र समुदाय पर नाम मात्र का ही होता है। इन दोनों छोरों के बीच कई तरह के अन्य संगठन आते हैं। छात्रों के आंदोलन के स्वरूप से परिचित होने के लिए राजनीतिक संगठनों में से कुछ का संक्षिप्त विवेचन आवश्यक है जिनका छात्र समुदाय में महत्वपूर्ण स्थान है।

छात्रों के सर्वाधिक महत्वपूर्ण राजनीतिक आंदोलन में से कई को विशेष रूप से तदर्थ समूहों द्वारा संगठित किया जाता है। जब आंदोलन से संबंधित विशेष मामले पर जो शिक्षण शुल्क में वृद्धि से लेकर सरकारी नीतियों के प्रति विरोध के प्रदर्शन तक कुछ भी हो सकता है, समझौता हो जाता है तो ये संगठन प्रायः निष्क्रिय होकर समाप्त हो जाते हैं और आंदोलनकारी छात्र कक्षाओं में चले जाते हैं। लेकिन कभी-कभी किसी एक मामले को लेकर बना आंदोलनकारी संगठन उस मामले के हल हो जाने पर भी स्थायी छात्र संगठन का रूप ले लेता है और उसके सैद्धांतिक आधार निश्चित हो जाते हैं।

छात्रों के कुछ अति प्रभावशाली संगठन भले ही उनकी अपनी प्रेरणा की उपज हों लेकिन उनके राजनीतिक संगठन हमेशा स्व-प्रेरणा से ही नहीं बनते हैं। कई देशों में, विशेष रूप से विकासरत देशों में, वयस्कों के राजनीतिक दल छात्रों के बीच सक्रिय रहते हैं, छात्रों को महत्वपूर्ण साथी मानते हैं तथा छात्रों का समर्थन पाने के लिए काफी प्रयास करते हैं। फलस्वरूप विश्वविद्यालय अथवा महाविद्यालय के प्रांगण राजनीतिक संघर्ष के अखाड़े बन जाते हैं। विकसित और विकासरत दोनों ही प्रकार के देशों में राजनीतिक दलों से सम्बद्ध छात्र संगठन भी होते हैं। इन संगठनों से प्रायः आंदोलनों और विचारधारा के प्रचार का काम लिया जाता है। ये संगठन छात्रों के बीच दल विशेष के सिद्धांतों का प्रसार करने के प्रति सचेष्ट रहते हैं और छात्रों में उस दल के अनुयायी बनाने अथवा तलाश करने में लगे रहते हैं।

राजनीति से सीधे सम्बद्ध छात्र संगठनों के अलावा कई देशों में विविध प्रकार के पाठ्यक्रमेतर गतिविधियों का संचालन करने वाले संगठन भी होते हैं। ये संगठन आंशिक रूप से राजनीतिक हो सकते हैं जैसे कि अन्तर्राष्ट्रीय मामलों अथवा ऐसे ही किसी विषय का संगठन। दूसरी ओर वे पूरे तौर पर सांस्कृतिक, सामाजिक, धार्मिक या मैत्री संगठन हो सकते हैं जैसे नाट्य मंच, धार्मिक समाज अथवा साहित्य समिति। कुछ संगठन ऐसे भी होते हैं जो विभिन्न अवसरों पर राजनीतिक तथा मैत्री संगठन दोनों ही होते हैं जैसे कि जर्मनी का 'कारपोरेशन'। अधिकांश देशों में ये गैर-राजनीतिक संगठन प्रकट रूप में राजनीतिक संगठनों की अपेक्षा छात्रों को अधिक आकर्षित करते हैं। ये संगठन प्रायः शैक्षणिक कार्यक्रम में बड़े सहायक होते हैं और छात्रों को कई प्रमुख क्षेत्रों में उपयोगी प्रशिक्षण प्रदान करते हैं। उदाहरण के लिए कुछ देशों में वाद-विवाद समितियां राजनीतिज्ञों की प्रशिक्षण शालाएं हैं क्योंकि उन में सार्वजनिक भाषण कला और संसदीय तौर-तरीकों का प्राथमिक अनुभव मिल जाता है।

पाठ्यक्रमेतर संगठन अनेक प्रकार से बनाये जा सकते हैं। कुछ देशों में सरकार अथवा विश्वविद्यालय के अधिकारी इस प्रकार की गतिविधियों को संगठित करने तथा उनके लिए वित्तीय साधन जुटाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। सोवियत गुट के अधिकांश देशों और मिस्र, ताईवान तथा अन्य विकासरत देशों सहित कुछ देशों में वयस्क अधिकारी इन पाठ्यक्रमेतर संगठनों पर पर्याप्त कड़ा नियंत्रण रखते हैं। अन्य देशों में छात्र संगठनों के गठन का कार्य स्थानीय छात्रों की पहल पर छोड़ दिया जाता है और उन्हें कोई सहायता भी नहीं दी जाती। कई देशों में जिनमें ब्रिटेन के अधिकांश भूतपूर्व उपनिवेश शामिल हैं, छात्रों के सामाजिक या सांस्कृतिक संगठनों को शिक्षा विभाग अथवा सरकार के अधिकारियों से कभी पर्याप्त समर्थन या सहयोग नहीं मिला और न उन पर ध्यान दिया गया। यह हालत अब बदल रही है। अमेरिका जैसे कुछ अन्य देशों में स्थानीय विश्वविद्यालयों के अधिकारी तथा सरकारी तन्त्र अनेक प्रकार की पाठ्यक्रमेतर गतिविधियों को सहायता देते हैं। इस बात का सामान्यीकरण इतना कहने से अधिक नहीं किया जा सकता कि अधिकांश देशों में गैर-राजनीतिक कार्यों में संलग्न छात्र संगठनों का अस्तित्व है और ये संगठन छात्र समुदाय के लिए पर्याप्त महत्व के हैं।

आधुनिक समाज में युवापीढ़ी को अनेक →

प्रकार के दबावों के बीच रहना पड़ता है। ये दबाव विश्वविद्यालय प्रांगण में स्थित राजनीतिक संगठनों के स्वरूप, छात्र की, अपने समुदाय के बीच उभरने वाली छवि और युवक के राजनीतिक तथा अन्य प्रकार से सामाजीकरण के ढंग को प्रभावित करते हैं। छात्रों को अपने शिक्षण काल में कई दबावों और तनावों को सहन करना होता है। इनमें से कुछ सीधे विश्वविद्यालय से ही संबधित होते हैं जबकि अन्य कुछ का सम्बन्ध सामान्य रूप से युवा वर्ग से होता है। किशोरावस्था और आरंभिक युवावस्था के साथ आने वाले शारीरिक तथा मानसिक तनावों का सामना सभी युवजनों को करना पड़ता है और उनके आचरण पर विचार के समय यह एक महत्वपूर्ण तथ्य होता है। युवजनों को अपने शरीर में होने वाले परिवर्तनों, नई तथा तीव्र आकांक्षाओं और बदलती हुई अपनी रुचि के अनुकूल अपने आपको ढाल लेना चाहिए। युवाओं की यौनेच्छा तथा स्वतन्त्र व्यक्तित्व के एहसास की समस्या युवा वर्ग में बहुत महत्वपूर्ण है। विभिन्न समाज इस मामले को अपने-अपने तरीके से निपटाते हैं। उच्च शिक्षा का अनुभव इस समस्या को और गहरा कर सकता है क्योंकि इस स्तर पर दोनों ही लिंगों के युवा व्यक्तित्व प्रायः एक दूसरे के निकट आते हैं, नर-नारी संबंधों के मामले में पश्चिमी प्रभावों से ग्रसित भी होते हैं और उसी समय वे परम्परागत आचारों का पालन करने को भी विवश होते हैं। विकासरत देशों में परम्परागत एवं आधुनिक यौनाचार के बीच संघर्ष का मामला एक प्रमुख मुद्दा है। विकसित देशों में भी नर-नारी सम्बन्ध एक शाश्वत समस्या बने हुए हैं और छात्रों में भारी मात्रा में व्याप्त निराशा तथा उथल-पुथल के कारण हैं। विश्वविद्यालय इन समस्याओं से अपने-अपने ढंग से निपटते हैं। इनमें एक ओर तो स्कैंडेनेविया के विश्वविद्यालय हैं जो अपने छात्रों को इस मामले में पूरी छूट दिए हैं तो दूसरी ओर विकासरत देशों तथा अमेरिका के भी कुछ महाविद्यालय हैं जिनमें इस संबंध में बहुत कठोर नियम हैं।

उच्च शिक्षा के छात्रों की वय अलग-अलग देशों में अलग-अलग है। भारत में यह १६ वर्ष है तो स्वीडन में २१ वर्ष। इस अन्तर के बावजूद उच्च शिक्षा का समय सभी जगह एक जैसा ही तालमेल बैठाने, भविष्य की योजना तैयार करने तथा आत्माभिव्यक्ति के विकास का काल होता है। विशेष रूप से कला-संकाय अथवा मानविकी में 'सत्य' तथा 'न्याय' का अन्वेषण होता है और यह प्रायः उस सैद्धांतिक चेतना की ओर अग्रसर करता है जिसकी चर्चा छात्रों की राजनीतिक सक्रियता के लिए आवश्यक तत्व के रूप में की जा चुकी है। अतः यह स्पष्ट है कि युवाओं के स्वभावगत मनोवैज्ञानिक एवं शारीरिक पहलुओं का प्रभाव महाविद्यालयीन अनुभव, राजनीतिक सक्रियता के विकास तथा छात्र उप-संस्कृति पर पड़ता है। छात्रों की राजनीतिक सक्रियता से सम्बद्ध की जाने वाली पीढ़ियों के संघर्ष की समूची धारणा अनेक समाजों में इस बात से जुड़ी है कि महाविद्यालय में बिताया गया समय परिवार से स्वतन्त्र रहने का काल है। अभिभावकों और बच्चों के बीच प्रायः बढ़ने वाले तनाव का प्रतिबिम्ब अनेक मामलों में सभी प्रकार के अधिकार जताने वालों के प्रति बगावत की प्रतिक्रिया के रूप में सामने आता है। अमेरिका में महाविद्यालय ने छात्रों के सामाजिक और बौद्धिक विकास के मामले में 'अभिभावक के समान' भूमिका निभाने की चेष्टा परम्परागत रूप से की है और अमेरिकी छात्र समुदाय के स्पष्टवादी तत्वों ने इस चेष्टा का उत्तरोत्तर अधिक प्रतिरोध किया है।

आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्रों में युवाओं का अनिश्चित स्तर अनेक देशों में महाविद्यालय की अवधि को कठिन बना देता है। यह राजनीतिक सक्रियता के लिए उत्प्रेरक का काम करता है क्योंकि राजनीति में आने के फलस्वरूप छात्र को जो कुछ भी गवाना पड़ता है वह जनता के अन्य किसी भी वर्ग की तुलना में बहुत कम होता है। अधिकांश मामलों में छात्र को न तो परिवार का पालन पोषण करना होता है और न किसी व्यवसाय की जिम्मेदारी,—यह तथ्य उसकी राजनीतिक तथा अन्य क्षेत्रों में जोखिम उठा सकने की क्षमता को प्रबल रूप से बढ़ा देता है। अनेक देशों में युवा वर्ग के लिए आर्थिक अवसर अनुकूल बढ़ जा सकने की तुलना में बहुत कम हैं और इसका प्रभाव राजनीतिक सक्रियता में वृद्धि के रूप में सामने आ सकता है जबकि साथ ही साथ यह स्थिति छात्रों को अपने कार्यकलापों के प्रति अधिक सतर्क रुख अपनाने की ओर भी ले जा सकती है। भारत में जहाँ कि शिक्षित बेरोजगारी की समस्या बहुत विकराल है, यही अनुभव हुआ है कि उपर्युक्त परिस्थितियों के कारण छात्रों में व्यापक निराशा है और इस स्थिति के परिणाम छात्रों की असंगठित रूप से अब तक यत्र तत्र भड़क उठने वाली हिंसा के रूप में आते हैं किन्तु इसका रूपांतर शक्तिशाली राजनीतिक आंदोलन के रूप में सामान्यतः नहीं हो पाता।

हमारे देश का उदाहरण इस सिलसिले में विशेष मनोरंजक है। यहां स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद की अवधि में उच्च शिक्षा का विस्तार बहुत तेजी से हुआ है। बहुसंख्यक छात्र जिन स्थितियों में अध्ययन करते हैं वे दुनिया में सर्वाधिक बुरी कही जा सकती हैं। उनको मिलने वाली पुस्तकालय की सुविधाएं नाममात्र की हैं, शिक्षक अपर्याप्त हैं और उनमें भी बहुत से अयोग्य हैं, छात्रों की आवास स्थिति दयनीय है और इन सबसे बढ़-चढ़कर है, लगभग सभी क्षेत्रों में रोजगार की सम्भावनाओं का अभाव।

केवल तकनीकी और प्राकृतिक विज्ञानों में रोजगार की कुछ आशा होती है। चूंकि बहुसंख्यक छात्र कला संकाय अथवा मानविकी में प्रवेश लेते हैं, इसलिये स्थिति विशेष रूप से गंभीर है। यहां छात्रों की सक्रियता की परम्परा भी सुदीर्घ है। छात्रों ने स्वाधीनता संग्राम में भाग लिया और हजारों को अपने राष्ट्रवादी कार्यकलापों के लिए कारावास भुगतना पड़ा। अधिकांश विश्वविद्यालय प्रांगणों में शक्तिशाली राजनीतिक छात्र संगठन थे जिनमें न केवल गांधी के नेतृत्व में कार्यरत राष्ट्रवादी ही शामिल थे बल्कि समाजवादी, साम्यवादी तथा साम्प्रदायिक तत्वों का भी प्रतिनिधित्व था। छात्र समुदाय की सैद्धान्तिक चेतना ऊँची थी। उस समय की अपेक्षाकृत छोटी छात्र संख्या का एक बड़ा भाग सम्पन्न शहरी परिवारों से जुड़ा होने के कारण छात्रों के पास राजनीतिक गतिविधियों के लिए पर्याप्त समय होता था। सन् १९४७ में स्वाधीनता प्राप्त

होने के बाद छात्रों के राजनीतिक जीवन में बड़ी सीमा तक परिवर्तन आ गया। स्वाधीनता के पूर्व छात्र आन्दोलन के समक्ष भारत की स्वतन्त्रता का एक सुस्पष्ट और निश्चित लक्ष्य था जिसके आधार पर बड़ी संख्या में छात्रों को संगठित किया जा सकता था। छात्र आन्दोलन को प्रमुख राष्ट्रीय नेताओं का समर्थन भी प्राप्त था। स्वाधीनता का लक्ष्य पूरा हो जाने के बाद छात्र सगठनों में से अनेक ने सैद्धान्तिक राजनीति पर वाद विवाद आरम्भ कर दिया। इसके साथ ही वे राष्ट्रीय नेता जो छात्रों की गतिविधियों को बढ़ावा देते रहे थे, सरकारी नेता बनकर अपना रुख बदलने लगे और छात्रों को समर्थन देने से हाथ खींचने लगे। स्वाधीनता के पूर्व तटस्थ रहने वाले शिक्षा अधिकारियों ने भी नकारात्मक रुख अपना लिया और शिक्षा संस्थाओं के प्रांगण से राजनीतिक सगठनों को दूर रखने का प्रयास करने लगे। इन दबावों के अलावा कालेजों में प्रवेश संख्या में तीव्र गति से विस्तार तथा परिणाम स्वरूप छात्रों में समुदाय भावना की शिथिलता से स्वाधीनता पूर्व के छात्र आन्दोलन का दम उखड़ गया।

भारत के उच्च शिक्षा संस्थानों के प्रांगणों में अब जुझारू तथा सुसगठित छात्र आन्दोलनों के स्थान पर उन उपद्रवों का उभार सामने आता है जिन्हें छात्र अनुशासन हीनता कहा जाता है। इनका आधार छात्रों में बढ़ती जा रही निराशा से संबंधित स्थानीय मामले होते हैं। छात्रों ने जहाँ अपने अनेक मुद्दों पर जिनमें भाषा की समस्या तथा राजनीतिक भ्रष्टाचार प्रमुख है, प्रभावी रूप से सगठित करने में सफलता प्राप्त की है, वहीं दूसरी ओर कोई प्रभावशाली छात्र आन्दोलन भी अस्तित्व में नहीं रह गया है। भारतीय विश्व विद्यालयों के प्रांगण में यद्यपि पाठ्यक्रमेतर गैर-राजनीतिक संगठन बड़ी संख्या में हैं किन्तु वे महत्वपूर्ण नहीं हैं। इसका एक आंशिक कारण यह है कि अनेक भारतीय छात्रों के सामने काम करके कमाने की विवशता भी है और इसीलिए उनके पास इन गतिविधियों के लिए समय नहीं बच पाता। आंशिक रूप से इसके लिए सुदृढ परम्परा का अभाव भी जिम्मेदार है। स्रोत के अभाव का सामना कर रहे तथा छात्रों को अधिक स्वतन्त्रता दिये जाने के प्रति सशंकित शिक्षा प्रशासकों ने सभी इलाकों में इन सगठनों के निर्माण की आवश्यकता की ओर से आँख मूंदकर उपेक्षा का रुख ही प्रदर्शित किया है।

छात्र आन्दोलन ने भारत के राजनीतिक जीवन तथा शिक्षा संस्थाओं के प्रांगणों में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। इन आन्दोलनों ने राष्ट्रवादी नेताओं की एक पूरी पीढ़ी को प्रशिक्षित किया तथा उन अनेकों को सिद्धांतों की दीक्षा दी जो बाद में राजनीति में आये। अब ये आन्दोलन इस प्रकार की कोई भूमिका नहीं निभा रहे हैं, यद्यपि सक्रियता की परम्परा अभी पूरी तरह विलीन नहीं हुई है समाज में अनुकूल परिस्थितियाँ दीख पड़ने पर वह पुनर्जीवित हो सकती है। फिलहाल तो जो छात्र अनुशासनहीनता सामने आ रही है वह गहरी निराशा और शिक्षा संस्थाओं की बदतर होती जा रही हालत का ही प्रतिबिम्ब है।

तरुण शांति सेना : नयी सांस्कृतिक क्रांति के लिए

—कुमार प्रशांत

तरुण शान्ति सेना न तो कोई राजनैतिक सगठन है और न छात्र सगठन है। इन अर्थों मे देश के तमाम युवा सगठनों मे एक अलग चरित्र है इसका। यह उन युवको का भाई-चारा है, जिन्होंने विचार-पूर्वक अपने आगे 'युवक' के अतिरिक्त और किसी विशेषण को मानने से इनकार कर दिया है। लोकतन्त्र मे उस नागरिक की निर्णायक भूमिका है और होनी चाहिए जो किसी राजनीतिक दल के सदस्य नहीं हैं, प्रत्येक परिस्थिति का विवेचन अपनी तटस्थ बुद्धि से करते हैं। तरुण शान्ति सेना इस उपाधिहीन नागरिक की प्रतिष्ठा का सकेत देती है और इसलिए तरुणों का आवाहन करती है।

१९६७ में बिहार मे भयकर सूखा और अकाल पडा था। एक तरफ लाखो लोग मौत की ओर बेबस घिसटते जा रहे थे और दूसरी तरफ जारी थे हिन्दी विरोधी या अग्रेजी विरोधी आन्दोलन, दगे और तोड-फोड। भाषा का प्रश्न देश के लिए बडे महत्व का प्रश्न है, लेकिन मनुष्य के जिन्दा रहने के बाद। पर लाखो मौतों की सुध न लेकर जो आन्दोलन चल रहा था वह जनाकाक्षा कम राजनीतिक धकमपेल, अधिक थी (या आज जनाकाक्षा के प्रगटीकरण का अवसर इतना कम रह गया है कि वह प्राय. राजनीतिक धक्कमपेल में हिस्सेदार हो जाती है) उस वक्त जयप्रकाश नारायण ने युवको के नाम एक अपील निकाली थी और यह पूछा था कि युवक देश के लिए नयी विपदायें खडी करेंगे या इस और इन जैसी अनेक विपदाओ से लडेंगे? बिहार के अकाल मे आकर काम करने का उनका आवाहन कई युवको को खींच लाया। देश विदेश से आये युवको ने उन दिनों जो काम किये उसने तरुण शान्ति सेना की कल्पना मे मदद की। युवा शक्ति के नाम पर आज जो कुछ चलता उससे अलग भी युवको की एक अच्छी संख्या है जिनके लिए कोई मच नही है। तरुण शान्ति सेना का जन्म अकाल की विभीषिका और उससे लडने के सकल्प के बीच से हुआ।

तरुण, शान्ति, सेना—ये तीन शब्द इस भाई-चारे की विशेषताओं के द्योतक हैं। उम्र तरुणाई की कसौटी नहीं है, एक विशेषता है। जीवन से जो आशा रखता हो और उसके लिए पिल पडने का सकल्प करता हो वह तरुण है। तरुणाई की एक विशेषता—उम्र—का इसी कारण सदस्यता के लिए आग्रह है पर तरुण की परिधि मे अस्सी साल का बूढा भी आता है। शान्ति शब्द इतना ज्यादा अवमूल्यित हुआ है कि शान्ति को कायरता का पर्याय मानते है। गतिशील शान्ति जो क्रान्ति के मूल्यो पर खडी होगी, हमारी आकाक्षा है। सैनिक की तत्परता और आत्मानुशासन तरुण शान्ति सैनिक के गुण हैं। फौज और सेना म इस दृष्टि से गुणात्मक अतर है। किसी विशेष लक्ष्य के प्रति प्रतिबद्ध, सगठित जमात सेना है। तरुण शान्ति सेना, युवको की वैसी ही सेना है।

तरुण शान्ति सेना के कार्यक्रमों के तीन लक्ष्य हैं—श्रम, सेवा और स्वाध्याय। तरुण शान्ति सेना की यह निष्ठा भी है और अनुशासन भी। आज व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन से इन तीन मूल्यो का लोप हो गया है। इन तीन निष्ठाओ के अभाव ने समाज को पगु और परमुखापेक्षी, कठोर और पलायनवादी तथा मूढ और अविवेकी बनाया है। श्रमिक की प्रतिष्ठा उसके श्रम मे भागीदार होकर ही की जा सकती है। सारा का सारा छात्र समुदाय अपने जीवन के बेहतरीन वर्ष इस समाज की अनुत्पादक इकाई बन कर गुजार दे चूँकि उसने 'पढ रहा हूँ' की तख्ती लगा रखी है, यह तरुणाई की अपमानजनक अवस्था है। श्रम की प्रतिष्ठा सेवा का मूल है और किसी भी सामाजिक व्यक्ति के लिए प्रमाणपत्र है। सकट की अवस्था मे यह प्रमाणपत्र काम देता है। स्वाध्याय और आज की पढाई मे अतर है। जो दूसरो का बनाया इतिहास पढते भर हैं वे बराबर पूछते है कि जो आज तक नही हुआ वह होगा कैसे? स्वाध्याय समस्याओं के बीच से नये इतिहास के सृजन का नाम है। श्रम, सेवा और स्वाध्याय की कमी ने समाज मे पहचान का सकट—पैदा कर दिया है। एक बडा युवक समुदाय यह पहचान नही पा रहा कि वह किस बिन्दु पर आ कर समाज से जुड सकता है। पहचान बोध का यह सकट इन तीन निष्ठाओ को जीवन मे उतारे बगैर मिटने वाला नही है, तरुण शान्ति सेना इन मूल्यो पर व्यक्तिगत और सामूहिक आचरण कर इन्हे इस देश के अतिम व्यक्ति की लडाई का हथियार बनाना चाहती है।

राष्ट्रीय एकता, स्वधर्म, समभाव, लोकतन्त्र सामाजिक समता, आर्थिक न्याय तथा विश्वशान्ति मे विश्वास रखने वाली तरुण-शान्ति सेना के नियम कायदे बहुत ढीले हैं। कोई भी युवक जो इनमे आस्था रखता है फार्म भर कर इसका सदस्य बन सकता है। देश के लगभग प्रत्येक प्रान्त मे तरुण शान्ति सेना का सगठन है। प्रत्येक केन्द्र अपने मे स्वतन्त्र है और अपने कार्यक्रमो का निर्धारण वहा के साथी स्वय करते है, न कोई आदेश देता है और न कोई वैधानिक नियत्रण लाना जाता है। साल भर मे दो-चार कार्यक्रम अखिल भारतीय स्तर पर उठाये जाते हैं। साल में एक या दो बार राष्ट्रीय शिविर सम्मेलन होता है और इसी क्रम मे तीसरे की इकाइया अपना शिविर सम्मेलन करती रहती है।

शिक्षा मे क्रान्ति का एक समग्र विचार लेकर तरुण शान्ति सेना ने १९७० से युवकों के बीच सतत काम प्रारम्भ किया। तरुण शान्ति सेना के इन्दौर सम्मेलन मे कई युवको ने पढाई छोड कर एक वर्ष इसके लिए देना तय किया। उसी वर्ष ९ अगस्त को कई प्रान्तीय राजधानियों मे शिक्षा मे क्रान्ति के लिए युवकों के जुलूस निकले। ९ अगस्त को शिक्षा मे क्रान्ति दिवस मान कर, तरुण शान्ति सेना का प्रत्येक केन्द्र विशेष कार्यक्रमो का आयोजन करता है, जिसमे सेमिनार, गोष्ठिया, समानान्तर महाविद्यालय, समस्याओं से मध्य लडको को ले जाना आदि काम प्रमुख रहते हैं। शिक्षा बदलनी चाहिए यह सभी कहते है किन्तु इसे छोडने को तैयार नहीं होते हैं। यह मोह नहीं टूटेगा तो शिक्षा मे बुनियादी परिवर्तन विद्यार्थी, शिक्षक और

अभिभावक स्वीकार करेंगे नही। विनोबा बार-बार कहते हैं कि प्राइमरी स्कूलों से लेकर विश्वविद्यालयों तक के तमाम लडके यह घोषणा करके निकल आयें कि ऐसी शिक्षा हमें स्वीकार नही है तो शिक्षा-पद्धति में तुरन्त परिवर्तन हो सकता है। यह बगैर भावना-निर्माण के सम्भव नही है। समाज मे दोष के अनगिनत बिन्दु हैं। उनका सम्मिलित परिणाम है कि आज समाज मनुष्य को मनुष्य के नाते न पहचानता है और न सम्मान देता है। आज मनुष्य से ज्यादा कीमत उसकी उपाधि की मानी जाती है। मनुष्य डिग्रीयों द्वारा पहचाना जाता है, झण्डों द्वारा सम्मान पाता है। मनुष्य के इस घोर अपमान को आज की शिक्षा-पद्धति पाल रही है। समाज मे गैर-बराबरी कायम करने का एक प्रमुख हथियार आज की शिक्षा पद्धति है। तरुण शान्ति सेना इसे जड से बदलना चाहती है। शिक्षा में क्रान्ति का आन्दोलन तरुण शान्ति सेना ने आमूल परिवर्तन की दृष्टि से छेड़ा है।

तरुण शान्ति सेना अपनी नीचे की इकाइयों द्वारा बुनियादी महत्व के कार्यक्रम चला रही है। शान्ति की शक्ति ही नागरिक की शक्ति हो सकती है यह मानते हुए तरुण शान्ति सेना ने भिवण्डी-जलगाव और अहमदाबाद मे हुए दगों के अवसर पर, बगला देश के शरणार्थियों के सवाल पर, पिछले वर्ष देशव्यापी सूखे और अकाल के अवसर पर "दुर्भिक्ष बनाम तरुण" का कार्यक्रम लेकर कार्य किया है। यह उसकी सेवा का पक्ष है।

समस्याओं की जड तक ले जाने का तरुण शान्ति सेना का प्रयास प्राय कम असरकारक लगता है। पहले गुजरात और अब बिहार के आन्दोलन मे इन दिनो तरुण शान्ति सेना सक्रिय रूप मे जुडी है तो इसका कारण यह नही है कि वह इसे अवसर मानती है। अपना प्रभाव बढाने की निर्दलीय युवकों की सामाजिक भूमिका की दिशा मे तरुण शान्ति सेना शुरू से प्रयास रत रही है। आज ज्यादा स्पष्टता के साथ समाज की पकड मे आ रहा है कि आज की व्यवस्था मे यह दल चुन कर आये या वह दल, कोई अन्तर नही पडता है। दलीय लोकतन्त्र से आगे की खोज समाज को करनी चाहिये और यही उसकी समस्याओं का जवाब हो सकता है। आज तक तरुण शान्ति सेना जो करती आई है, अब उसकी ग्रहणशीलता बढ गई है। परिस्थिति ने समाज को खुद इसकी प्रतीती करा दी है, इसलिए तरुण शान्ति सेना ने *इस आन्दोलन को व्याप बढाने की चेष्टा की* है। सरकारों को उलटने या विधानसभाओं को भग करवाने का कार्यक्रम चलाने मे तरुण शान्ति सेना की रुचि नही है, चूंकि समस्याओं का यह समाधान नहीं है, मुहल्ला और गाव स्तर पर नागरिकों की ऐसी समितियां बनें जो सरकार की पहुच सीमित करें। और इस प्रकार क्रमश समाज चले और 'सरकार' मदद करे—इसकी विस्तृत रूपरेखा चर्चा का विषय हो सकती है।

तरुण शान्ति सेना के लक्ष्य और कार्यक्रमों मे उत्तरोत्तर नये विचार जुड़े हैं। कोई वाद, कोई ग्रन्थ, कोई व्यक्ति तरुण शान्ति सेना के लिए प्रमाण नहीं है। समस्याओं का विवेचन और उनका हल खोजना—सारे पूर्व अनुभवों की सहायता लेकर—तरुण शान्ति सेना की निष्ठा है। एक जीवंत सगठन के विकास के लिए यह सर्वथा आवश्यक है। *तरुण शान्ति सेना का लक्ष्य सामाजिक* कुण्ठाओं, बुराइयों और सांस्कृतिक रूढियों से संघर्ष करना और एक नई सांस्कृतिक क्रान्ति का सूत्रपात करना है।

गांधी को पुनर्जीवित करो

दत्तात्रेय सरमंडल

दत्तात्रेय सरमण्डल उन अनुभवसिद्ध व्यक्तियों में से हैं जो विचार यात्रा के दौरान कई पड़ावों से गुजरे हैं। भूदान-ग्रामदान आन्दोलन में भी रहे और रचनात्मक कार्य भी किया हालांकि इसके पहले वे मार्क्सवादी थे। उनका यह लेख हम एक नजरिये के नाते प्रकाशित कर रहे हैं और कतई जरूरी नहीं है कि उनके विश्लेषण से सहमत हों। सम्पादक

ईसा को सूली पर चढ़ाने के पश्चात् गांधीजी की हत्या एक युगान्तरकारी घटना थी। विश्व इतिहास में राजनीतिक हत्यायें कई हुई हैं, लेकिन गांधीजी की हत्या सही अर्थ में राजनीतिक नहीं कही जा सकती। गांधीजी किसी राजनयीक या शासकीय पद पर आसीन नहीं थे। और उनकी हत्या कर गोडसे भी किसी राजनीतिक लाभ का अभिलाषी नहीं था। मुस्लिम-द्वेष पर आधारित अपनी विचार प्रणाली के लिए शहीद होने, तथाकथित आदर्शवाद से प्रेरित हो उसने यह जघन्य कार्य किया। अपनी कृति के परिणाम को वह अच्छी तरह जानता था। और उसका फल भोगने को भी वह तैयार था। परम्परागत हत्यारों की तरह उसने यह हत्या छिप कर नहीं की। दिन के उजाले में हजारों की उपस्थिति में उसने यह हत्या की। शायद उसकी यह धारणा रही हो कि गांधीजी का शरीर नष्ट कर वह उनका नैतिक तथा आध्यात्मिक साम्राज्य भी नष्ट कर देगा। लेकिन जैसा कि इन हत्याओं में अक्सर होता आया है हत्यारों द्वारा हनन किये गये महान् व्यक्ति अनोखी अमरता प्राप्त कर लेते हैं।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद छः माह के अन्दर उनका चल बसना भारत के लिए एक कठोर अभिशाप था। नई-नई प्राप्त सत्ता की चकाचौंध ने हमें अंधा बना दिया। और हमने हमारी धरोहर को भुला दिया। शासकीय उलझनों तथा तात्कालीन समस्याओं ने गांधीजी के वरिष्ठ शिष्यों को व्यावहारिक यथार्थ में उलझा दिया। जिन आदर्शों के लिये गांधी जीवनभर और जीवित रहे उसको उन्होंने तुरन्त भुला दिया। गांधीजी की स्थिति एक पवित्र पूर्वज की बन गई। वे एक सरकारी देवता बना दिये गये जिसकी महापूजा का व्यय तो उठाया जायेगा। पर वे एक मूक और मृत प्रतिमा मात्र बनके रहेंगे।

गांधीजी के निकटवर्ती शिष्यों के लिए जो देश की राजनीति या शासन में नहीं थे और उनके द्वारा निर्देशित रचनात्मक कार्य में संलग्न थे गांधी को भुला देना इतना आसान नहीं था। गांधीजी से बिछुड़ने के बाद वे एक ऐसे व्यक्ति की खोज में थे जो गांधीजी की नैतिक प्रतिमा बन सके और उनकी रचनात्मक प्रणाली से प्रतिबद्ध हो। इसीलिए गांधीजी की सभी रचनात्मक संस्थाओं का एकीकरण कर सर्वसेवा संघ बना दिया गया। विनोबाजी को गांधीजी का एक संत से उत्तराधिकारी मान लिया गया।

भूदान के बारे में विनोबाजी की अंतरध्वनि जिसे वे भगवान का आदेश कहते हैं एक सामयिक तथा सही कदम था। उनके हाथ में धुरा आते ही सभी रचनात्मक कार्यों को दूसरा या तीसरा स्थान देकर भूदान को ही प्राथमिकता दी गई। सर्वोदयी कार्यकर्त्ताओं के लिए भूदान कार्य ही सर्वोपरि माना गया, उसे उत्साह और समर्पण भाव से करने का निश्चय हुआ।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारतीय जनता की मूलभूत आकांक्षा को पहचान भूदान को बुनियादी कार्यक्रम बनाने के लिए विनोबाजी अभिनन्दन के पात्र हैं। उन्होंने यह बराबर महसूस किया कि भारत में यदि कृषि की ओर दुर्लक्ष्य किया तो कितना ही औद्योगीकरण क्यों न हो भारत का विकास असम्भव है, और कृषि में उन्नति तभी सम्भव है जब भारत की जमीन सामन्ती बंधनों से मुक्त की जाय। विनोबाजी कहते हैं कि उन्हें भूदान का आदेश प्राप्त होने तक लगातार तीन दिन नींद नहीं आई। बीमारी की ठीक-ठीक चिकित्सा करने के बाद विनोबाजी ने स्वयं को भूदान कार्य में प्राणपण से समर्पित कर डाला। क्षेत्र सन्यास लेने तक वे लगातार २० वर्ष उसमें जुटे रहे।

भूदान की कल्पना के आविष्कार का थोड़ा बहुत श्रेय तेलंगना में पोचमपल्ली के उन रामचन्द्रन को भी देना होगा जिन्होंने, विनोबाजी द्वारा भूदान आंदोलन की शुरुआत होने के पहले अपने मृत्यु पत्र में भूमिहीनों के लिए १०० बीघा जमीन दान देने की इच्छा लिख रखी थी। वैसे कुछ श्रेय तेलंगना के उन साम्यवादियों को भी देना होगा जिन्होंने विनोबाजी द्वारा तेलंगाना में प्रवेश करने के पहले हजारों एकड़ जमीन देशमुखों से छीन भूमिहीनों में वितरित कर दी थी। इसी कल्याणकारी लेकिन हिंसामय वातावरण में विनोबाजी भूमिहीनों के लिए भूमि प्राप्त करने का अहिंसक मार्ग खोज रहे थे। सैनिक तथा साम्यवादी हिंसा से धूमिल वातावरण ने विनोबाजी को भूदान आंदोलन की प्रेरणा दी। और वहीं से शुरुआत कर अपने हजारों अनुयायियों के साथ पन्द्रह वर्ष तक उन्होंने भारत की समूची भूमि पादाक्रान्त की।

विनोबाजी की पदयात्रा स्वयं में एक महान उपलब्धि रही है। गांधीजी भी इतना साहस भरा कार्य कर पाते या नहीं इसमें शंका है। हो सकता है कि गांधीजी के दांडी मार्च से ही विनोबाजी ने यह प्रेरणा प्राप्त की हो। भारत भर में गांव से गांव तक सर्वोदयी कार्यकर्ताओं द्वारा भूदान का संदेश पहुंचाया गया लेकिन विनोबाजी के इन भगीरथ प्रयासों के बावजूद यह मानना पड़ेगा कि भूदान कभी भी और कहीं भी जन-आंदोलन नहीं बन पाया। यह सही है कि धनिकों ने अपनी भूमि का थोड़ा अंश भूदान में दिया। उस दान के पीछे समाज परिवर्तन या गरीबों के प्रति करुणा की भावना नहीं थी। दान देने के मूल में या तो समाज में प्रतिष्ठा प्राप्त करने की लालसा रही या फिर पुण्य प्राप्ति की।

जैसे ही आंदोलन आगे बढ़ा प्रारंभिक सफलता के साथ कार्यकर्ताओं में उत्साह के साथ एक क्रान्ती मनोवृत्ति निर्माण हो गई। समूचे भारत में भूक्रान्ति के आसार वे देखने लगे। सही या गलत हिसाबों के वश में भूदान से ग्रामदान और ग्रामदान से प्रखंडदान, प्रखंडदान से जिला दान और जिला दान से

→

बिहारदान तक के सपने उन्हें साकार होते दीखने लगे सर्व सग परित्यागी, विनोबाजी भी शिष्यो की इस रूमानियत मे सहभागी हो गये। केवल भारत ही नही दुनिया भर की भूमि समस्या के हल की कुंजी प्राप्त हो गई ऐसा लगने लगा। लेकिन शुरू का तेजोवलय जैसे ही मद होने लगा उस परागति के कारणो की मीमासा करने के बजाये विनोबाजी अपने अद्वितीय शाब्दिक चमत्कारों से कार्यकर्त्ताओं का उत्साह टकाते रहे।

बिहार के सहरसा जिले मे भूदान की आखरी लड़ाई लड़ी जाने वाली थी। समूचे भारत के सर्वोदयी कार्यकर्ताओ की सघन शक्ति से इस जिले मे आखरी अभियान शुरू किया गया। अप्रैल ७४ तक पूरी शक्ति लगा इसे पूर्ण करने की कल्पना थी। इसके बाद भी जैसा कि अपेक्षित था भूदान आंदोलन की यहा इतिश्री हो गई। कार्यकर्ता अपने उत्साह तथा श्रद्धा की वजह कितने ही अन्धे रहे हो, सर्व साधारण लोग शुरू से यह जानते थे कि सहरसा मे कार्यकर्ताओ के हड्डी गलाने, गड जाने आदि सकल्पो के बावजूद यह आदोलन असफल ही होने वाला था। इस आदोलन का अन्त बडा शोकदायी है। विनोबाजी इस अत के दो वर्ष पहले ही अपने आश्रम मे सूक्ष्म मे प्रवेश कर चुके थे। भूदान आदोलन जिसे वरिष्ठ नेता उसके मन्द—मन्दतर होने के बावजूद अपने भाषणो द्वारा बढावा देते गये लेकिन सर्वोदयी विचारको के मूर्धन्य दादा धर्माधिकारी द्वारा उसके असफल होने की स्वीकृति अपने गुजरात के भाषण मे दी जा चुकी है।

इतने महान आदोलन की असफल परिसमाप्ति का कारण उसके प्रवर्तक के व्यक्तित्व में ढूढा जा सकता है। सन् १९४० के वैयक्तिक सत्याग्रह के पहले विनोबाजी आश्रम परिवार के बाहर पूर्णतया अज्ञात थे। वे शुरू से ही एक तपस्वी, स्वाध्यायलीन, मठवासी साधक ही रहे हैं। गाधीजी की अनपेक्षित हत्या और उससे निर्मित एकाकी रिक्तता की वजह से वे एकदम आगे आये। उन्होंने न कभी किसी जन आदोलन का नेतृत्व किया और न किसी कार्य के लिए जनता को प्रेरित ही किया। वे एक महान विद्वान व्यक्ति हैं। लेकिन उनकी विद्वता भी प्राचीन शास्त्रों से जुडी हुई है। भूमि आंदोलन के बनिस्बत किसी शकराचार्य के पीठ की वे अधिक श्री वृद्धि कर पाते। जन सेवा के बनिस्बत उनकी प्रवृति मुक्ति—साधना की ओर अधिक रही है। गाधीजी के सानिध्य मे सेवावृत्ति उनमे जरूर आई' लेकिन वह कर्तव्यपरक रही, जनता के प्रति प्रेम की वजह से नहीं।

अपनी बीमारी और वृद्धावस्था की परवाह न करते हुए जयप्रकाशजी ने जिस प्रकार भारत के इस पतन को रोकने के लिये कदम उठाया उसी प्रकार गाधी-मार्ग मे श्रद्धा रखने वाले लोगों को उठाना चाहिए। आज जिस सकट मे से भारतीय गरीब जनता गुजर रही है उस दयनीय हालत को देखकर स्वय गाधी जी एक मूक दर्शक तो नही बने रहते। उनके बडे-बडे शिष्य जब सत्ता की लालसा मे बेचैन थे तब नोआखाली मे उनकी एकला चलोरे पदयात्रा हमे नही भूलनी चाहिए।

पिछले २६ वर्ष तक कांग्रेस द्वारा स्थायी शासन के बावजूद हमारे देश की हो रही दयनीय स्थिति और उसी कालखड मे हमारे पड़ोसी चीन द्वारा की गई प्रगति का लेखा जोखा कर तुलना करना हमारे चीन विरोधी रवैये के बावजूद भी लाभदायक होगा

पडित सुन्दरलाल तथा जे० सी० कुमारप्पा को चीन से लौटे बहुत वर्ष गुजर चुके हैं। उनके बाद भारतीय या विदेशी जो भी यात्री चीन गये वे माओ और गाधी के विचारो की समानता देख बहुत आश्चर्य चकित हुए हैं। माओ ने तो गांधी का केवल नाम ही सुना होगा। रूस तथा विश्व की अन्य साम्यवादी पार्टिया माओ पर मार्क्सवाद के प्रति बेवफा होने का इल्जाम लगाती हैं। लेकिन माओ मार्क्सवाद के नाम पर जिन मान्यताओ की पहल करते हैं वे गांधी प्रणित आदर्श समाज रामराज्य की धारणाओ से बहुत मिलती-जुलती हैं।

विनोबाजी के भूदान आदोलन को प्रदीर्घ अवसर देने के पश्चात गाधी विचारो पर श्रद्धा रखने वालों का यह कर्तव्य है कि वे गाधी को पुनर्जीवित करें, और उन्हें नये परिप्रेक्ष्य मे इस प्रकार प्रस्तुत करें कि देश मे फैली हुई मौजूदा गतिहीनता और निराशा से लोग कुछ राहत प्राप्त कर सकें। परम्परागत तरीको से, जिसे देश के अनेक अवसरवादी राजनीतिक नेताओं ने अपने जीवन का मुखौटा बना लिया है, गाधीजी को प्रस्तुत करना महान गलती होगी। गान्धीवाद की उस गतिमान तरीके से व्याख्या करनी होगी जो देश के वर्तमान सदर्भ मे सन्तोष दे सके।

अपनी अनेकानेक सदिच्छाओ के बावजूद मौजूदा शासन भारत के दरिद्रनारायण के लिए कुछ भी करने मे असमर्थ सिद्ध हुआ है। यह सही है कि नये—धनवानों का एक छोटा सा वर्ग उन्होने पैदा किया है जिसके पद चिन्हों पर चलकर पश्चिम के प्रति हमारी सांस्कृतिक गुलामी और भी बढ गई है। जो कुछ समृद्धि नजर आ रही वह भारत की पृष्ठभूमि मे नगण्य होने के बावजूद एक ऐसी माया है जो श्रीमन्त या गरीब दोनो वर्गों के युवको को भ्रष्ट करती है, वह जीवन का एक ऐसा आदर्श पेश करती है जो उत्पादन प्रक्रिया से कोसो दूर है। तुरन्त धनवान होने की अभिलाषा अपने मोह जाल मे अच्छे-अच्छे लोगो को फास लेती है।

भारत की जनता अपने अनुभव से काफी कुछ सीख चुकी है। पश्चिम की नकल और अधपके समाज ने हमे मुद्रास्फीति और मूल्य-वृद्धि की गर्त मे ढकेल दिया है। दूसरी ओर श्रीमती तारा अलीबग जैसी राजनीति से कतई सम्बन्ध न रखने वाली महिला यह प्रशसा करते नही अघाती कि गान्धी विचारो को अपना कर ही चीन इन २५ वर्षों मे समृद्ध और सुखी हो गया। हमारे शासको को चीन के साथ मैत्री या दुश्मनी के झूले पर झूलने दीजिए। हम साधारण जनता को तो वह अगीकार करना चाहिए जो देश के हित मे हो। अत हमे कहने मे कतई सकोच नही होना चाहिए कि गांधी जी ने अपनी अन्त प्रज्ञा द्वारा उस आदर्श समाज की रूपरेखा प्रस्तुत की थी जो उनके समय तो एक स्वप्न जैसी लगती थी, लेकिन आज चीन मे यथार्थ बन चुकी है। जीवन के कितने ही पहलू आज चीन मे दृष्टिगोचर हो रहे हैं, और गाधी विचारो की प्रतिध्वनि से लगते है। उनका तुलनात्मक अध्ययन हमारे लिए अवश्य फलदायी होगा।

सबके अधिक लक्षणीय है 'कम्यून' जो गाधीजी के सपने के स्वयपूर्ण-आत्मनिर्भर स्वयशासित-देहाती क्षेत्र मात्र है। उसमें भविष्य के समाज की झाकिया हैं जहा साम्यवाद का सूत्रपात हो रहा है और जहा सभी स्त्री-पुरुष, वृद्ध-बच्चे, शिक्षित-अशिक्षित, बन्धु-

गांधीजी की अहिंसा जनसाधारण के दुखों की मूक दर्शक नहीं थी

भाव से उत्पादन तथा सहजीवन में सलग्न हैं। चीन में न केवल वर्ग और उससे उत्पन्न वरिष्ठता को नष्ट किया जा रहा है, अपितु विद्या, प्रतिष्ठा आदि पर आधारित वरिष्ठता को भी नष्ट किया जा रहा है। इससे जनता में सचमुच समता का प्रादुर्भाव हो रहा है। धन प्रलोभन द्वारा अधिक काम की प्रथा, जो दूसरे समाजवादी देशों में अभी प्रचलित है, चीन में खत्म कर दी गई है। हरेक को स्वयं और अपने कुटुम्ब के लिए ही नहीं, जन सेवा के लिए भी रहना है, काम करना है—यह शिक्षा भी दी जाती है। स्त्रियाँ पुरुषों के साथ हर क्षेत्र में निर्माण कार्य में जुटी हुई है। स्त्रियां और युवकों की पूजनीय देवता फैशन तथा चकाचौंध का वहाँ सामाजिक बहिष्कार है। सादगी और श्रमप्रतिष्ठा वहां पूजनीय माने जाते हैं। गाधीजी की प्रिय बुनियादी शिक्षा वहां परिष्कृत हो लम्बे लम्बे डग भर रही है। शिक्षा अब धनिकों का विलास न रह कर हर क्षेत्र में जीवन तथा उत्पादन से जोड़ दी गई है। जनता का स्वावलम्बन तथा अभिक्रम वहां की सर्वाधिक विशेषता है। ये कुछ पहलू हैं जहां गाधीजी के सपने, दूसरे देश में क्यों न हों, साकार होते दिख रहे है। हमें उनका नम्रता पूर्वक अध्ययन करना चाहिए।

गाधी जी की अहिंसा को जिसने केवल सूत्र रूप में रट डाला और गाधी विचारों को जिसने औपचारिक रूप से ग्रहण किया, ऐसे कट्टर गाधीवादी को चीन में इन सब कामों की बुनियाद में हिंसा ही हिंसा नजर आयेगी और वह नाक सिकोड़ेगा। लेकिन ये सब प्राप्त करने के लिए हमें जन युद्ध अनिवार्यत करना है ऐसा तो नहीं है। उस जन युद्ध की जगह हम जन सत्याग्रह अपना सकते है। गाधी जी की अहिंसा अन्याय तथा जन साधारण के दुःखों की असहाय और मूक दर्शक तो कभी नहीं रही थी।

वृद्धावस्था और बीमारी के बावजूद जयप्रकाश नारायण ने अपने अहिंसक तथा दृढ़ एक मात्र सकेत से देश में हो रहे पतन को ललकारा है। क्या यह सकेत केवल शासन के लिए था? या गाधी के भक्तों के लिए भी। अब गांधी पूजकों को सोचना है कि वह जे० पी० के आवाहन को स्वीकार करें या अपनी सत्प्रवृत्ति में ही लीन रहें।

जब हमने हिंसा के बदले अहिंसा अपनायी

(सन १९७० में सुधीर कक्कर और कमला चौधरी की 'संघर्ष के विकल्प' नाम से बदलते हुए भारतीय समाज में युवकों का जो स्थान है उस पर एक अध्ययन-पूर्ण पुस्तक प्रकाशित हुई थी। लेखक द्वय ने अनेक युवक और युवतियों से सम्पर्क साधकर विभिन्न क्षेत्रों में उनसे संघर्षों के दौरान आने वाले अनुभवों से संबंधित प्रश्न पूछे। अध्ययन का जो नतीजा आया यह लेखों के रूप में प्रकाशित भी हुआ। अप्रेल-जून १९६९ के क्वेस्ट में ऐसा ही एक अध्ययन प्रकाशित हुआ था। बाद में थोड़े परिवर्तन के साथ पुस्तक में लिया गया। हम लेख के कुछ अंश क्वेस्ट से रूपान्तरित करके दे रहे हैं—सं०)

अप्रैल १९६५ में दक्षिण भारत के एक राज्य में कला, विज्ञान और वाणिज्य महाविद्यालयों में ली जाने वाली फीस एकदम दुगनी कर दी। छात्रों में क्षोभ की एक लहर दौड़ी, किन्तु उसकी तत्काल कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई, क्योंकि विश्वविद्यालय ग्रीष्मावकाश के लिए बन्द हो चुके थे और समाचार पत्रों ने इस खबर को कोई महत्त्व नहीं दिया था। एक महीने बाद एक पत्रकार ने राजन और शेषन नाम के दो छात्रों से प्रश्न किया कि शुल्क में शत प्रतिशत वृद्धि के बारे में छात्रों की क्या राय बनी है। राजन इंजीनियरिंग कालेज का छात्र था और शेषन कानून का अध्ययन कर रहा था। इस प्रश्न का राजन पर जो असर पड़ा, उसे उसने इस तरह लिखा है शुल्क में वृद्धि का मेरे मन पर खराब असर स्वाभाविक था। मेरा कुटुम्ब सम्पन्न नहीं है। उसे मध्यम वर्ग में भी नीचे दरजे का कहा जा सकता है और हमें हर महीने मिलने वाले पिता के वेतन पर ही अपना निर्वाह करना पड़ता है। मैं अभी तक ज्यादातर छात्र वृत्ति पाने या फीस माफ हो जाने के बल पर पढ़ा था। मैंने मैट्रीक्युलेशन अस्सी प्रतिशत अंक लेकर पास किया था फिर भी लगता नहीं था कि मैं आगे पढ़ सकूंगा। मैंने देखा था कि मेरे कई मित्र ऐसे ही किसी कारण से किसी छोटे-मोटे दफ्तर या कारखाने में नौकरी करने लगे थे। अगर गरीब हो और पढ़ना है तो तुम्हें हमेशा बहुत अच्छे नम्बर लेकर पास होते रहना चाहिए और नहीं तो फिर आगे पढ़ने की कोई गुंजाइश नहीं बचती। मुझे लगा कि मेरे जो साथी फीस के मामले में मेरी तरह भाग्यवान नहीं हैं उन्हें राज्य सरकार के इस निर्णय से बड़ा कष्ट होने वाला है और इस लिए यह मेरा कर्त्तव्य हो जाता है कि मैं विद्यार्थियों के बीच में जाऊं और उनसे कहूं कि वे सरकार से मांग करें कि फीस पहले की तरह ही फिर रखी जाए। शेषन ने भी मेरी इस बात को बिल्कुल ठीक माना। वह भी मेरे ही जैसी आर्थिक स्थिति में था और इसलिए उसके और मेरे सोचने में कोई फर्क नहीं हुआ।

राजन और शेषन दोनों विद्यार्थियों में अपनी बुद्धिमत्ता और उत्तम स्वभाव के कारण जाने-माने छात्र थे। वे लिखने-पढ़ने के सिवाय दूसरे क्षेत्रों में भी आगे बढ़ कर हाथ बटाते थे। राजन अनेक सांस्कृतिक और साहित्यिक मंचों का पदाधिकारी था तथा कई बार विश्वविद्यालय की ओर से वादविवाद प्रतियोगिताओं में भाग लेकर सबके गौरव का कारण बना था। यद्यपि राजन और शेषन दोनों को छात्रवृत्तियाँ मिलती थीं, इसलिए फीस बढ़ने का उनके ऊपर कोई प्रभाव पड़ने वाला नहीं था, फिर भी उन्होंने विश्वविद्यालय के विभिन्न महाविद्यालयों में घूम कर कुछ साथियों से बातचीत की और शिक्षामन्त्री से मिलना तय किया। शिक्षा मन्त्री ने मिलने का समय दे दिया किन्तु जो हुआ उसे राजन के शब्दों में सुनिए—

मन्त्री महोदय ने हम से कहा और सो भी बहुत ही संक्षेप में कि तुम लोगों का इस मामले से कोई सरोकार नहीं है। हमारे बदन में आग लग गई। हमने यह जरूर नहीं माना था कि युद्ध हो ही जायेगा, मगर यह भी नहीं सोचा था कि हमारी बात सुनी ही नहीं जायेगी हमारा ख्याल था कि इस मीटिंग के बाद दूसरी मीटिंग भी होगी और बातचीत चलेगी। मगर ऐसा कुछ नहीं हुआ और हम लोगों का खून खौल उठा। किन्तु फिर भी हम लोगों ने सोचा कि धीरज से काम लेना चाहिए। विद्यार्थियों और समाचारपत्रों में हमने चर्चा चलाई। अखबार में शिक्षामन्त्री से जो बात हुई थी, उसको छपवाया और शहर तथा राज्य में विद्यार्थियों को अपने पक्ष में आने के लिए कहने लगे।

उस राज्य के विश्वविद्यालय में पचास हजार विद्यार्थी दर्ज थे। केवल राजधानी के कालेजों में पढ़ने वाले विद्यार्थियों की संख्या पच्चीस हजार थी। राज्य के नम्बर दो शहर में दस कालेज थे, उसमें भी पढ़ने वालों की संख्या बहुत बड़ी थी। दूसरे नगरों में प्रचार करना उतना आवश्यक नहीं था। इस विश्वविद्यालय में पिछले अनेक वर्षों से छात्र हिंसक आंदोलन करते चले आ रहे थे। जिनमें परीक्षा की तारीखें बढ़ाने से लेकर कन्सेशन टिकट तक के झगड़े शामिल थे। राजन के दिमाग में वह चित्र घूम गया जब उसने अन्तर विश्वविद्यालय युवक समारोह के दौरान जगह की कमी के कारण विद्यार्थियों को समारोह में मनमानी संख्या में आने से रोकने के अवसर पर पुलिस को लाठी चार्ज करते हुए देखा था। उसे याद आया कि एक लड़की ने जब भीड़ में से चिल्लाकर यह कहा कि अगर हम लोग आयें तो क्या तुम हमको भी मारोगे, तब पुलिस वाले ने जवाब दिया था, जैसा एक नारियल वैसा दूसरा नारियल। हनुमानजी की मूर्ति पर सबको तड़ातड़ फोड़ा जाता है। बात यहीं तक नहीं रही, बाद में गोलियां तक चली थीं। राजन ने मन ही मन दांत पीसकर कहा कि हम अब की बार नारियल नहीं फूटने देंगे। मगर हम खुद भी कोई नारियल नहीं फोड़ेंगे। विद्यार्थियों में घूम-घूम कर हमें अहिंसक रहकर प्रचार करना चाहिए। राजन और शेषन ने इसी बात को लेकर विद्यार्थियों से मिलना शुरू कर दिया।

राजधानी के अतिरिक्त जो बड़ा शहर था, उसमें छात्रों की एक बड़ी सभा हुई। जोशीले व्याख्यान हुए। इस नगर के छात्रों का विचार था कि अहिंसा वहिंसा से कुछ नहीं होता। जब सड़कों के लैम्प फूटेंगे और

बसों में आग लगाई जायेगी, तभी ये चोर के बच्चे चेतेंगे। किन्तु राजन और शेषन ने हार नहीं मानी। उन्होंने एड़ी-चोटी का जोर लगा कर छात्रों को शान्त किया और इस बात पर राजी किया हम सब एक बार फिर शिक्षा-मन्त्री से मिलें। कोई ठीक नतीजा निकलेगा, इस पर अन्य छात्र नेताओं को भरोसा नहीं था, किन्तु फिर भी उन्होंने राजन की बात मान ली। राजन ने कहा—

"मान लीजिये हम लोग सफल नहीं होते। मन्त्री महोदय हमारी बात नहीं सुनते। उस हालत में हम लोग हड़ताल करेंगे और सारे कालेजों को बन्द करवा देंगे, मगर खून-खराबी के पिछले तरीके बिलकुल नहीं अपनायेंगे। आप सब लोग वचन दीजिए कि हड़ताल का मौका आया तो आप सब लोग शान्तिपूर्वक हड़ताल करेंगे, किसी तरह की मारपीट में भाग नहीं लेंगे और अगर राज्य के किसी भी हिस्से के छात्र हिंसक हो उठें तो हम लोग अपना आन्दोलन वापस ले लेंगे।

सब छात्रों ने इस शर्त को माना और एक प्रतिनिधि मण्डल फिर शिक्षा मन्त्री से मिलने के लिए रवाना हुआ। जाने के पहले विद्यार्थियों ने समाचार पत्रों में खबर भी छपवाई और वह इसलिए कि कहीं मन्त्री महोदय विधान सभा में यह बयान न दे बैठें कि हड़ताल करने के पहले विद्यार्थियों ने हमसे बातचीत करना भी जरूरी नहीं समझा। राजन का कहना है कि सफेद झूठ बोलने में आज के नेताओं का सानी नहीं है। शिक्षा-मन्त्री महोदय के साथ विद्यार्थियों की औपचारिक सी बैठक हुई। राज्य के शिक्षा सचिव भी उपस्थित थे। उन्होंने दूसरे राज्यों में वसूल की जाने वाली फीस के आंकड़े पढ़कर सुनाये और कहा कि हमारे यहाँ का प्रस्तावित शुल्क ज्यादा नहीं है। विद्यार्थियों ने उत्तर में कहा कि हमारे प्रान्त की औसत आमदनी इन दूसरे प्रान्तों की औसत आमदनी से कम है और हमारे प्रान्त में कुटुम्ब ज्यादा बड़े हैं। शुल्क वृद्धि का असर लड़कों की शिक्षा पर भी पड़ेगा, किन्तु माता-पिता लड़कियों को पढ़ाने का विचार ही छोड़ देंगे। मन्त्री महोदय के रुख में कोई परिवर्तन नहीं हुआ, वे केवल मधुर वचन बोलते रहे और फीस कम करने में अपनी असमर्थता प्रकट कर दी। उन्होंने कहा कि इस पर पुनर्विचार हो ही नहीं सकता। विद्यार्थियों ने मन्त्री महोदय को बताया कि इस परिस्थिति में वे हड़ताल करने के लिए बाध्य हो जायेंगे।

प्रान्त की राजधानी में जाकर आन्दोलन की बागडोर राजन, शेषन और उनके एक अधिक समझदार साथी कृष्ण ने सभाल ली। हड़ताल का नोटिस दिया गया और विद्यार्थियों की एक बड़ी सभा बुलाई गई। मगर सभा में विद्यार्थी इकट्ठे नहीं हुए, बड़ी निराशा हुई। कोई डेढ़-सौ छात्र ही सभा में आये। इनमें से अधिकांश को तो यह भी नहीं मालूम था कि सभा किस लिए बुलाई गई थी? कालेज दस दिन पहले खुल चुके थे, अधिकांश छात्रों ने फीस अभी तक नहीं दी थी। इसलिए उन्हें मालूम भी न था कि फीस बढ़ गई है। सभा बुलाने वालों को निराशा हुई, किन्तु उन्होंने सोचा कि अगर हम हड़ताल शुरू कर दें तो हजारों विद्यार्थी साथ हो जायेंगे। इन तीनों छात्र नेताओं ने हड़ताल को सफल करने के लिए रात-दिन एक कर दिया। उनके पास न पैसा था, न जाने के लिए कोई वाहन। तीनों के बीच में एक साइकिल थी। अवश्य ही इन तीनों की हर कालेज के विद्यार्थियों में पैठ थी, सब उन्हें अच्छी तरह जानते थे और सबको उनकी ईमानदारी पर भरोसा था।

राजन, शेषन और कृष्णन—तीनों ने डण्डों में चिथड़े लपेट कर ब्रुश बनाये, बाल्टियों में रंग घोला और सारे शहर को हड़ताल के नारों से रंग डाला। एक मित्र का छोटा-सा प्रेस भी था, उससे मदद लेकर हड़ताल की जरूरत के कारणों से सम्बन्धित एक पर्चा छपवाया और कुछ साथियों से मदद लेकर उन्हें शहर के सब कालेजों में बटवा दिया। राजन और शेषन इसके बाद सबसे पहले लॉ कालेज पहुँचे। लॉ कालेज छात्र आन्दोलन में सबसे आगे रहने के लिए मशहूर था। वहाँ के सारे छात्रों ने राजन और शेषन को सुना और क्लासों से बाहर आ गये। छात्रों ने जुलूस की शक्ल में विभिन्न कालेजों के सामने नारे लगाना शुरू कर दिया। इसके बारे में राजन ने लिखा है—

"हमने हर जगह बिलकुल एक-सा तरीका अख्तियार किया। जुलूस कालेज के फाटक से बाहर थोड़ी दूर पर रुक जाता था, फिर हम में से एक कालेज के प्रिंसीपल के पास जाता और उनसे विद्यार्थियों के सामने भाषण की इजाजत मांगता। ज्यादातर प्रिन्सिपल तो ऐसे थे जो फीस का बढ़ाया जाना स्वयं अनुचित मानते थे। हम लोगों के सौजन्यपूर्ण व्यवहार से हमें बिना बहस किये प्रायः छात्रों से बातचीत करने की इजाजत मिल गई। कुछ लोग शायद भीड़ देख कर डर गए हों। विद्यार्थियों को तो हमारी बात मानने में देर ही नहीं लगी। हम जिस कालेज में गये उसी कालेज के विद्यार्थी नारे लगाते हुए हमारे साथ हो लिये।

लड़कियों के एक कालेज में जरूर थोड़ी दिक्कत का सामना करना पड़ा। वहाँ की प्रिन्सिपल सख्त थी। लड़कियाँ बाहर तो आना चाहती थीं, लेकिन फाटक पर प्रिन्सिपल खड़ी थी और वे बाहर जाने की हिम्मत नहीं कर पा रही थीं। हड़ताल में लड़कियों का शामिल होना जरूरी था। राजन का कहना है कि जब तक किसी आन्दोलन में स्त्रियों का साथ भी नहीं मिल पाता, तब तक उस आंदोलन में न तो सच्चा शौर्य आ पाता, न शक्ति और न पवित्रता। इसलिए मैंने सोचा कि लड़कियों को तो किसी न किसी तरह जुलूस में शामिल करना ही चाहिए। अगर वे जुलूस में आयेंगी तो लड़के अपने आप संयत हो जायेंगे और सारी जनता की सहानुभूति हर हालत में हमारी होगी। राजन का कहना है कि लड़कियों को साथ लेने के लिए मैं एक झूठ तक बोल गया। मैंने कहा कि आप जानती हैं कि मुख्य मन्त्री ने क्या कहा है? जब हमने मुख्य-मन्त्री से कहा कि अगर फीस कम नहीं की गई तो माता-पिता पहले लड़कों को ही पढ़ायेंगे, लड़कियां घर की चारदीवारी में बन्द कर रह जायेंगी तो मुख्य-मन्त्री ने जवाब दिया कि यह तो अच्छा ही है, वे शादी करें और अपना-अपना घर बसायें। अब आप ही तय कीजिए कि आप को शादी करना है या पढ़-लिख कर काबिल बनना है। इतना सुनते ही लड़कियाँ प्रिन्सिपल की परवाह किए बिना ही फाटक से बाहर निकल गईं और इन्कलाब जिन्दाबाद के नारों से वातावरण गूंज उठा।

दोपहर तक सारे राज्यों में समाचार फैल

* भूदान-यज्ञ सोमवार, १९ अगस्त ७४

गया कि विद्यार्थियों की हड़ताल पूरी तरह सफल हुई है। बीस हजार विद्यार्थी जुलूस बनाकर विधानसभा पर गए। और फिर शाम को एक छात्रालय के कमरे में जो अब विद्यार्थियों का कार्यालय हो गया था आन्दोलन को तरतीब देने के लिए कुछ विद्यार्थी बैठे। राजन, शेषन और कृष्णन सब जाति से ब्राह्मण थे राज्य में ब्राह्मण विरोधी वातावरण था। इसलिए उन्होंने तय किया कि छात्र संघर्ष समिति ऐसी बनायी जाय जिसमें अब्राह्मणों का प्रतिनिधित्व हो और जिसका अध्यक्ष भी अब्राह्मण ही हो। ऐसा करने से आन्दोलन पर साम्प्रदायिक होने का जो धब्बा लगाया जा सकता था, उसकी संभावना खतम हो गई। बराबर चार दिन तक सारे कालेज बंद रहे और विद्यार्थी शान्तिपूर्वक सड़कों पर जुलूस निकाल कर अपनी मांगें दुहराते रहे। नागरिक समिति और कुछ राजनैतिक दलों ने भी हमारा साथ देने की इच्छा प्रकट की, किन्तु हम लोगों ने सहानुभूति के अतिरिक्त किसी को साथ लेना अनुचित माना।

राजन का कहना है कि इन दलों में से कुछ विरोधी दल थे और खुद कांग्रेस के ही कुछ ऐसे लोग जो भीतर ही भीतर पद पाने की इच्छा से सत्तारूढ़ व्यक्तियों को नीचा दिखाना चाहते थे। कम्युनिस्ट और जनसंघ ने भी सहयोग का हाथ बढ़ाया। हमने हाथ मिलाने से इन्कार कर दिया। हमने सोचा कि हमारे आन्दोलन में अभी जिस सौजन्य की सुगन्ध है, वह इस प्रकार का सहयोग लेने से नष्ट हो जायेगी। *इसके बावजूद मंत्री महोदय* ने वक्तव्य दिया कि हम विरोधी दलों के हाथ में खेल रहे हैं। किन्तु इस तरह के दोष लगाना तो एक आम रवैया है, इसलिए हम विद्यार्थी और *नागरिकों को आसानी से समझा सके कि* छात्र अपना आन्दोलन स्वयं चला रहे हैं, वे न किसी से मदद ले रहे हैं और न किसी के इशारे पर नाच रहे हैं।

चार दिन के बाद एक नगर से खबर आई कि वहां विद्यार्थियों ने उग्र रूप धारण कर लिया है और पथराव किया है। वे विद्यार्थी थे या किसी राजनैतिक दल के सदस्य-यह कहना कठिन है, किन्तु पुलिस विद्यार्थियों पर टूट पड़ी और अनेक विद्यार्थी गिरफ्तार कर लिए गये। राजन को लगा कि आन्दोलन हाथ से बाहर जा रहा है। सारे प्रान्त में आन्दोलन पर काबू रखना कठिन है, इसलिए उसे अधिक से अधिक दो शहरों तक सीमित रखना चाहिए। उसका विश्वास था कि जिला स्तर के नगर भी इन दोनों बड़े शहरों के ढंग से आन्दोलन करेंगे, किन्तु पैसे की कमी थी, व्यक्तिगत रूप से शहर-शहर में जाकर *विद्यार्थियों को समझाना कठिन था, इसलिए* छात्र आन्दोलन के नेताओं के मन पर यह डर छा गया कि सारे आन्दोलन को हिंसक कहकर कहीं कुचल न दिया जाय। इसके सिवाय ऐसा भी लगा कि अवसर का लाभ उठाकर विरोधी राजनीतिक दल जहां-तहां घुसपैठ करने की कोशिश कर रहे हैं। राजन का कहना है कि इन सारी आशंकाओं के रहते हुए भी हम लोगों ने मुख्य दो बड़े नगरों में अपना आन्दोलन शान्तिपूर्वक जारी रखा और भगवान् की दया से दो दिन के बाद राज्य के मुख्यमंत्री ने घोषणा की कि फीस वृद्धि के मामले पर पुनर्विचार किया जा रहा है। हड़ताल गौरव के साथ चली और गौरव के साथ समाप्त हुई। ❩

शिक्षा को कमरे की चारदीवारी से बाहर निकालना होगा

—वंशीधर श्रीवास्तव

"मैं जवाहर लाल की हैसियत से कहता हू, मेरे दिमाग मे कोई शक नही है कि बुनियादी तालीम के रास्ते पर ही हमे चलना है—सात वर्ष की बुनियादी तालीम, इसके पहले पूर्व बुनियादी और इसके बाद भी।"

बुनियादी तालीम का यह रास्ता है–किसी समाजोपयोगी उत्पादक उद्योग के माध्यम से छात्रो के व्यक्तित्व का सस्कार और विकास-एक ऐसे व्यक्तित्व का विकास, जो समाजवादी समाज के लिए, जिसमे कोई दूसरे के शोषण पर न पले, आवश्यक है। लोकतत्रीय समाजवाद का यह तकाजा है कि समाज का प्रत्येक नागरिक समाज की उत्पादक इकाई हो और यह तभी सम्भव है जब विद्यार्थी शिक्षा काल के प्रारम्भ से ही कोई समाजोपयोगी उत्पादक काम सीखे जैसा बेसिक शिक्षा मे है। "सब लडके हाथ से काम करें—सब लडके पढ़ें—आधे वक्त काम करें, आधे वक्त पढ़ें—सब लडको की समान शिक्षा हो, चाहे लडका अमीर का हो या गरीब का, ऐसी बेसिक शिक्षा की मान्यता है। समाजवादी समाज बनाना है तो सामान्य शिक्षा सबके लिए समान होनी चाहिए। सामान्य शिक्षा की यह अवधि हाई स्कूल स्तर तक की यानी ढाई-तीन वर्ष से लेकर पन्द्रह सोलह वर्ष तक की होनी चाहिए।

सामान्य शिक्षा की इस अवधि मे शिक्षा की कोई दूसरी समानान्तर प्रणाली नहीं चलेगी, जैसी आज नर्सरी शिक्षा, कान्वेन्ट शिक्षा अथवा पब्लिक स्कूल शिक्षा के रूप मे देश मे चल रही है जहा पाठ्यक्रम, माध्यम और शुल्क का ढाचा भिन्न है। कोठारी कमीशन के इस सुझाव को दृढता पूर्वक तत्काल मान्य करना चाहिए कि देश मे लोक शिक्षा की एक समान प्रणाली चलनी चाहिए। इसके लिए यदि सविधान मे सुधार करना हो तो करना चाहिए, आवश्यक हो तो आदोलन भी चलाना चाहिए।

लोक शिक्षा की यह सामान्य प्रणाली बेसिक शिक्षा ही हो सकती है जिसकी शुरुआत गाधीजी ने शोषण-मुक्त, वर्ग-विहीन समाज की रचना के लिए की थी। प्रारम्भिक शिक्षा से उच्च स्तर तक के लिए बेसिक शिक्षा ही आज की वर्तमान शिक्षा का विकल्प है। आज की नर्सरी शिक्षा का विकल्प है पूर्व बुनियादी, आज की प्रारम्भिक शिक्षा का विकल्प है बेसिक शिक्षा, आज की माध्यमिक शिक्षा का विकल्प है उत्तर बुनियादी और आज की उच्च शिक्षा का विकल्प होना चाहिए उत्तर बुनियादी का प्रसार।

ऐसा इसलिए कि बेसिक शिक्षा के आधारभूत सिद्धान्त अर्थात (१) समाजोपयोगी उत्पादक कार्य कलाप (२) पाठ्य विषयो का उत्पादक कार्यकलापो और प्राकृतिक और सामाजिक वातावरण से सह-सम्बन्ध और (३) विद्यालय का स्थानीय समुदाय से निकट का सम्पर्क शिक्षा के, ऐसे महत्वपूर्ण सिद्धान्त हैं जो समाजवादी शिक्षा नीति के शाश्वत सत्य हैं और जिनसे राष्ट्र की सभी स्तरो की शिक्षा प्रणाली का मार्ग-दर्शन होना चाहिए।

परन्तु बेसिक शिक्षा का कार्यान्वयन करते समय नीचे लिखी बातो का ध्यान रखना होगा

पूर्व प्रारम्भिक शिक्षा (पूर्व बुनियादी स्तर)—हमारे सविधान मे शिशु शिक्षा सरकार का उत्तरदायित्व नहीं है। परन्तु इस स्तर की शिक्षा (ढाई से पांच वर्ष तक) का अत्यन्त महत्व है। अत. जहा भी सभव हो बेसिक शिक्षा की पूर्व तैयारी के रूप मे दो तीन घटे की बालवाडिया चलाई जायें। इन बालवाडियो मे शिक्षा का माध्यम अनिवार्य रूप से बच्चो की मातृभाषा हो और पाठ्यक्रम स्थानीय समुदाय के जीवन से सम्बन्धित हो। गुजरात के तालीम सघ ने बालवाडी की एक बहुत ही अच्छी प्रणाली का विकास किया है जो अपनी सस्कृति और बेसिक शिक्षा के सिद्धान्तो के अनुरूप है। इसका उपयोग करना चाहिए। पूर्व प्रारम्भिक स्तर पर आज देश मे जो नर्सरी या मान्टेसरी स्कूल चल रहे हैं वे वास्तव मे देश मे चलने वाले कान्वेन्ट और पब्लिक स्कूलो मे फीडर मात्र हैं। इनमे शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी है और इनके पाठ्यक्रम भी प्राय विदेशी हैं, जिससे ये स्कूल प्रारम्भ से ही अलगाव की प्रवृत्ति को जन्म देते हैं। इनका बहिष्कार होना चाहिए और गुजरात के ढग की बालवाडिया चलनी चाहिए। यह लोकतत्रीय समाजवाद के हित मे होगा।

प्रारम्भिक शिक्षा (बेसिक शिक्षा)—वह केवल खेती-बागवानी, कताई, बुनाई, गत्ते का काम, सिलाई-कढ़ाई आदि कुछ परम्परागत दस्तकारियो तक ही सीमित न रहे। इन उद्योगो के अतिरिक्त सडक और बाध बनाने के काम, गृह विज्ञान, प्राथमिक वैद्युती, सामान्य रेडियो यात्रिकी, आदि-आदि जो आज सामान्य जीवन के अग होते जा रहे हैं, बेसिक शिक्षा के पाठ्यक्रम मे शामिल किये जायें जिससे शिक्षा का यथार्थ जीवन से सम्बन्ध बना रहे। बेसिक शिक्षा मे उत्पादक उद्योग शिक्षा का माध्यम है। अत अगर समाज के →

→

सभी विद्यार्थियों को किसी समाजोपयोगी उत्पादक हुनर की शिक्षा देनी है तो बेसिक स्कूलों को पर्याप्त साधन (कच्चा माल और उपस्कर) देने होंगे जो किसी भी सरकार के लिए सम्भव नहीं है। अत यह अनिवार्य हो जाता है कि उद्योग शिक्षण के लिए हम छात्रों को समुदाय के खेतों—खलिहानों, कृषि-फार्मों, दुकानों, कारखानों पर ले जाएं। दुनिया में शिक्षा का नया विचार अब यह नहीं मानता कि शिक्षा विद्यालय में बंधकर आज के युग के सार्वजनिक शिक्षण के लक्ष्य को पूरा कर सकती है। इसीलिए यूनेस्को का का अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा आयोग खुले विश्व-विद्यालयों की संस्तुति करता है। अविद्यालयी-करण आज की शैक्षिक विचारधारा का अंग हो रहा है।

अत अगर बेसिक शिक्षा को सार्वजनिक बनाना है तो शिक्षा को संस्था की चहार दीवारी से बाहर निकाल कर उसका नियोजन उन स्थानों पर करना होगा जो समुदाय के उत्पादन केन्द्र हैं अथवा जहां समुदाय के लिए विकास का काम हो रहा है। यदि सामान्य विषयों के शिक्षण का पूरा शैक्षिक मूल्य प्राप्त करना है तो बौद्धिक शिक्षा और हाथ के काम की शिक्षा का समन्वय होना चाहिए और अध्ययन और काम को निरन्तर अनुबंधित करने की चेष्टा होनी चाहिए। यह सिफारिश यूनेस्को के शिक्षा-आयोग की है, मात्र गांधीजी की नहीं। सामुदायिक जीवन की सामान्य प्रवृत्तियां जैसे मेल-जूल नाच-गाने, मेले-ठेले, पर्व-त्योहार आदि बेसिक शिक्षा के अभिन्न अंग हों, जिससे छात्र में इस भावना का विकास हो कि वह समाज का अंग है और उसका समाज के प्रति रचनात्मक उत्तरदायित्व है। पाठ्यक्रम के इस अंग की प्रयोगशाला भी समाज होगा।

इस स्तर की शिक्षा का पाठ्यक्रम माध्यमिक शिक्षा संस्थाओं में प्रवेश मात्र की तैयारी न होकर जीवन की तैयारी हो। इस दृष्टि से यह पाठ्यक्रम अपने में पूर्ण हो और इससे उन छात्रों का, जो तात्कालिक परिस्थितियों के कारण आगे नहीं बढ़ सकते हैं इतना बौद्धिक विकास भी हो जाए कि अवसर मिलने पर वे उच्च स्तर की माध्यमिक शिक्षा प्राप्त करने योग्य बन जाए।

शिक्षा का माध्यमिक स्तर—(उत्तर बुनियादी शिक्षा) शिक्षा का माध्यमिक स्तर सही माने में उत्तर बुनियादी शिक्षा होनी चाहिए। अर्थात माध्यमिक शिक्षा को नीचे की बुनियादी शिक्षा का प्रसार होना चाहिए। सही माने में माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायीकरण, जो आज का तकाजा है, तभी होगा। आज की माध्यमिक स्तर की शिक्षा में एक औद्योगिक अथवा व्यावसायिक वर्ग जोड़ने मात्र से और इस वर्ग की शिक्षा को सबके लिए अनिवार्य बना देने से भी माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायीकरण नहीं हो जाएगा। आज की माध्यमिक शिक्षा बहुवर्गीय है। जिसमें साहित्यिक, वैज्ञानिक, कृषि, टेकनिकल, वाणिज्य आदि वर्ग हैं। आवश्यकता इस बात की है कि इन वर्गों के भेद को मिटाकर सामान्य शिक्षा की सकल्पना को ही इतना व्यापक बना दिया जाए कि उसमें साहित्यिक, वैज्ञानिक, टेकनिकल, व्यावसायिक आदि शिक्षा भी आ जाए। पोस्ट बेसिक शिक्षा इस प्रकार की शिक्षा है, अत माध्यमिक स्तर पर उसको अपनाना चाहिए। किन्तु इसके कार्यान्वयन के समय नीचे लिखी बातों को ध्यान में रखना चाहिए

बेसिक शिक्षा की भांति जब हम उत्तर बुनियादी शिक्षा को सर्व साधारण तक उपलब्ध कराने की कोशिश करेंगे तो विद्यालय का प्रांगण बहुत छोटा साबित होगा और हम को समुदाय में स्थित कृषि फार्मों और औद्योगिक कारखानों का व्यापक शैक्षिक उपयोग करना होगा। चूंकि किसी व्यवसाय की ट्रेनिंग इस स्तर की शिक्षा का अनिवार्य अंग होगी अत व्यावसायिक और टेकनिकल ट्रेनिंग का उत्तरदायित्व केवल विद्यालयी प्रणाली का नहीं होना चाहिए। विद्यालय के शिक्षकों, उद्योगों के मालिकों या प्रबन्धकों श्रमिकों और सरकार के सहयोग के बिना और उत्पादन और वितरण से संबंधित राज्य के विभिन्न विभागों में समन्वय स्थापित किये बिना, बुनियादी शिक्षा का ठीक कार्यान्वयन यानि माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायीकरण नहीं हो सकता है।

उत्तर बुनियादी शिक्षा के बाद प्रत्येक विद्यार्थी को कम से कम एक वर्ष के लिए अपनी रुचि और व्यवसाय के अनुसार समुदाय के उत्पादन केन्द्रों में काम करना चाहिए। इस काम के लिए सरकार को छात्रवृत्ति देनी चाहिए। चूंकि ये छात्र किसी न किसी समाजोपयोगी उत्पादक धन्धे में समुदाय की सहायता कर रहे होंगे, अत यह राष्ट्र को महंगा नहीं पड़ेगा। इस काम का दोहरा लाभ होगा—समुदाय में काम करने से सामाजिक व्यक्तित्व का विकास होगा- जो समाजवादी समाज का प्रमुख लक्ष्य है और श्रम-प्रतिष्ठा की भावना मजबूत होगी।

पोस्ट बेसिक स्तर पर शिक्षा का माध्यम मातृभाषा अथवा क्षेत्रीय भाषा होगी।

पोस्ट बेसिक स्तर पर शिक्षा का व्यावसायीकरण तभी सफल होगा जब शिक्षा विभाग और योजना विभाग का घनिष्ठ समन्वय हो। ऐसा होगा तभी समुदाय की उत्पादक प्रक्रिया में व्यवसाय सीखे हुए विद्यार्थियों को खपाया जा सकेगा और शिक्षित बेरोजगारी कम होगी। इस स्तर की शिक्षा का लक्ष्य विश्वविद्यालयों में प्रवेश उतना नहीं होना चाहिए जितना कि क्रियाशील जीवन की तैयारी। फिर भी पाठ्यक्रम इस तरह का हो जिससे छात्रों में ऐसी क्षमता का विकास हो कि वे अवसर मिलने पर उच्च शिक्षा अथवा उच्चतर व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त करने के योग्य हो सकें।

उच्च शिक्षा (शिक्षा का विश्वविद्यालयी स्तर) उच्च शिक्षा ऐसी हो जिससे व्यक्ति और समुदाय की अधिकाधिक आवश्यकताओं की पूर्ति हो। इसलिए उच्च शिक्षा के स्तर पर भी व्यावसायिक और तकनीकी शिक्षा को सामान्य शिक्षा का अभिन्न अंग बनाया जाए। इसका अर्थ यह हुआ कि आज के परम्परागत डिग्री कालेजों के स्थान पर, जो किसी हुनर की शिक्षा न देने के कारण *बेरोजगारी के कारखाने बन रहे हैं*, छोटे छोटे व्यावसायिक कालेजों और तकनीकी संस्थानों की स्थापना की जाय और इस प्रकार जीवन-केन्द्रित व्यवसाय मूलक उत्तर बुनियादी शिक्षा को आगे बढ़ाया जाए। भारत गांवों में बसा है। अत इन कालेजों और संस्थानों के अध्ययन का क्षेत्र इतना व्यापक हो जितना व्यापक

→

उन्नत ग्राम-जीवन और औद्योगिक विकासशील भारत की आवश्यकताएं हों। देश में उन्नत कृषि—विधियों और आधुनिक लघु उद्योगों के सचालन के लिए, सिंचाई योजनाओं के प्रबन्ध के लिए, नलकूपों के चलाने के लिए, बिजली की मरम्मत के लिए, यातायात क्रय-विक्रय, प्रशासन आदि विविध सेवा के क्रियाकलापों के लिए और इनके अतिरिक्त राष्ट्र के विकास के लिए जो व्यवसाय चलेंगे ये कालेज उन व्यवसायों की प्रायोगिक शिक्षा के केन्द्र होंगे। इनमें जो शिक्षा दी जायेगी उसका जीवन की और बाजार की आवश्यकताओं से मेल होगा। शिक्षा के क्षेत्र में ये कालेज बुनियादी और बुनियादी स्तर की संस्थाओं के लिए शिक्षक और व्यवस्थापक तैयार करेंगे और उद्योगों के क्षेत्र में ये उत्पादन और वितरण की पद्धतियों में सुधार के लिए अध्ययन और अन्वेषण करेंगे।

विश्वविद्यालय स्तर पर बेसिक शिक्षा का रूप क्या हो- अभ्यास-क्रम क्या हो, इस का भरपूर चित्र राधाकृष्णन विश्वविद्यालय आयोग के एक सदस्य डाक्टर आर्थर ई० मार्गन ने 'हायर एजूकेशन इन रिलेशन टू रूरल इण्डिया' नाम की पुस्तिका में दिया है। इस पुस्तिका में दिये गये सुझावों को आधार मान कर उच्च शिक्षा का नया ढांचा तैयार करना चाहिए। वर्तमान शहरी विश्वविद्यालयों में सुधार से काम नहीं चलेगा। आज जब देश का व्यावसायिक और आर्थिक ढांचा बदल रहा है तो उच्च शिक्षा को बदलना होगा, जिससे उच्च शिक्षा युग की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके—उन्हीं विद्यार्थियों की आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं जो किसी कारखाने कार्यालय या आधुनिक फार्मों पर काम करेंगे वरन् उनकी भी जो किसी कारखाने या फार्म पर काम नहीं करेंगे परन्तु जिन्हें आज के औद्योगिक समाज में पग पग पर टेक्निकल ज्ञान की आवश्यकता पड़ेगी।

इस परिवर्तन की रूपरेखा कुछ इस प्रकार होनी चाहिए—उच्च शिक्षा की इन संस्थाओं में प्रवेश पाने की कसौटी अनौपचारिक और उदार हो और यह विद्यार्थियों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए उनकी क्षमता, अभिरुचि और ज्ञान पर निर्भर करे और कालेज में प्राप्त डिग्रियों और डिप्लोमाओं का परिणाम न हो। उच्च शिक्षा की संस्थाओं में प्रवेश के लिए यह सिफारिश यूनेस्को के अंतरराष्ट्रीय शिक्षा आयोग की भी है।

शिक्षा की इन संस्थाओं में ऐसे साधनों का आयोजन हो जो व्यक्ति को स्वयं सीखने में सहायता दें, जैसे नाना प्रकार की प्रयोगशालाएं (भाषा, समाज विज्ञान, सामान्य विज्ञान और तकनीकी आदि की), पुस्तकालय, सूचना केन्द्र, श्रव्य दृश्य उपकरण, प्रोग्राम्ड शिक्षण के साधन आदि।

समुदाय को उच्च शिक्षा के इन संस्थानों की प्रयोगशाला होना चाहिए। संस्था के भीतर प्राप्त ज्ञान, तकनीकी ज्ञान को तब तक पर्याप्त और लाभप्रद नहीं माना जा सकता जब तक कि समुदाय में उनको लागू न कर लिया जाये। जो लोग संस्था के बाहर उत्पादन और समाज के विकास की अन्य क्रियाओं में लगे हैं, उनके साथ काम किये बिना उत्पादन और विकास की प्रक्रियाओं के रहस्यों को समझा नहीं जा सकता। अतः इन संस्थाओं का टाइमटेबुल इस प्रकार बनाया जाय कि विद्यार्थियों को समुदाय के उत्पादन और विकास केन्द्रों पर काम और प्रयोग करने का मौका मिले। इसके बिना पढ़ाई अधूरी मानी जाय।

उच्च शिक्षा भी विश्वविद्यालय की चहार दीवारी में बंधकर सार्वजनिक शिक्षा का लक्ष्य पूरा नहीं कर सकती। अतः यूनेस्को के अन्तर्राष्ट्रीय आयोग ने जहां एक ओर खुले विश्वविद्यालयों की सिफारिश की है वहीं दूसरी ओर संस्थागत शिक्षा को अपर्याप्त मानकर यह भी कहा की है कि उच्च शिक्षा को कालेजों की चहार दीवारी से निकाल कर उसका नियोजन उन स्थानों पर किया जाय जहाँ समुदाय के उत्पादन केन्द्र हैं अथवा जहां समुदाय के लिए विकास के काम हो रहे हैं। *इतना ही नहीं, जहाँ विकास के लिए उपयुक्त* विधान मौजूद हो वहां विकास और उत्पादन के लिए शिक्षा संस्थाएं पहल करें। इससे उच्च शिक्षा लोक जीवन के साथ एक रस हो सकेगी।

विनोबा कहते हैं कि नौकरियों के लिए कालेज की डिग्रियों को अनावश्यक करार दे दिया जाय। नौकरियों के लिए नौकरी देने वाले विभाग अपनी-अपनी परीक्षायें लें। डिग्री का नौकरी से संबंध विच्छेद हो। अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा आयोग सिफारिश करता है 'विद्यार्थी परम्परित अनिवार्य शिक्षा को पूर्ण किये बिना ही उच्च शिक्षा ग्रहण करने के लिए स्वतंत्र हों और उसे शिक्षा की एक

शिक्षा कमरे से खलियान तक . छात्र और शिक्षक एक साथ काम करते हुए।

शाखा से दूसरी शाखा में जाने की पूरी स्वतन्त्रता हो।' अत हमारा सुझाव है कि डिग्रियो और प्रमाण-पत्रो को किसी अध्ययन के कोर्सों को पूरा करने के लिए अथवा नौकरी पाने के लिए आवश्यक न माना जाय।

ऐसा मानना ठीक नही होगा कि उच्च शिक्षा के इन नये सस्थानों मे तुलसी-सूर या शेक्सपीयर-मिल्टन अथवा सूक्ष्म गणित और विज्ञान के सिद्धान्तो का अध्ययन नही होगा या शकराचार्य और काण्ट के दर्शन छूट जायेंगे। ये तो मानव सस्कृति की महान उपलब्धियाँ हैं। इनसे वचित होकर मानव सभ्यता पगु और सकीर्ण हो जायेगी। अत इन सस्थानों मे छात्र अपनी श्रेष्ठतम मानव विरासत का पूरा अध्ययन और मनन करेंगे।

शैक्षिक प्रशासन शैक्षिक प्रशासन स्वायत्त शैक्षिक निगमो के हाथ मे हो। शिक्षा सस्थाओ पर सरकार का नियन्त्रण नहीं हो। धन सरकार दे परन्तु पाठ्यक्रम क्या हो, परीक्षा पद्धति क्या हो, इनका सचालन कैसे हो इस विषय मे सरकार दखल न दे। विगत कुछ वर्षों से निजी प्रबन्ध प्रणाली के भ्रष्टाचारो से ऊब कर स्वयं शिक्षा जगत से ही शिक्षा के सरकारीकरण की माग उठती रही है। यह स्वायत्तता छीनने के साथ समाज को स्थाई दासता का कारण होगी। शिक्षा सरकार के हाथ में गई तो वह लोक मानस को अपने अनुकूल एक ढाचे मे ढालने की कोशिश करेगी, जिसका परिणाम लोकतंत्र के लिए घातक होगा।

शैक्षिक प्रशासन का दूसरा निर्देशक सिद्धान्त होगा-विकेन्द्रीकरण। स्कूल स्तर से राष्ट्रीय स्तर तक शैक्षिक निगमो की प्रशासन नीतिया इसी सिद्धान्त से निर्देशित होगी।

वयस्क शिक्षण - शिक्षित वयस्क लोकतन्त्र की रीढ है। अत लोकतन्त्र को सफल बनाने के लिए व्यस्क शिक्षण को प्राथमिकता देनी चाहिए। साक्षरता वयस्क शिक्षण का एक अनिवार्य किन्तु बहुत छोटा अ श है। अत वयस्क शिक्षण का लक्ष्य व्यावहारिक साक्षरता ही होनी चाहिए। गाँधीजी ने वयस्क शिक्षण के लिए भी बेसिक शिक्षा को हितकर बताया था। उनका कहना था कि माता-पिता के व्यक्तित्व का सस्कार जब बेसिक शिक्षा से होगा तभी उनकी सन्तान भी बेसिक शिक्षा में निष्ठावान छात्र बन सकेगी।

प्रतिवर्ष ग्रीष्म और शरद अवकाश मे महीने डेढ महीने के लिए कालेज के विद्यार्थी गावो मे वयस्क शिक्षण का काम करें। यह कोरी साक्षरता न होकर व्यावहारिक साक्षरता हो। बेसिक शिक्षा के छात्रो के लिए यह काम आसान होगा। जहां भी बेसिक स्कूल हो वहा शाम को एक डेढ घन्टे के लिए वयस्क शिक्षा का प्रबन्ध हो। इस काम को बेसिक अथवा उत्तर बुनियादी स्कूल के अध्यापको की सेवा का एक अ ग बना दिया जाय।

परीक्षा-पद्धति आज की शिक्षा परीक्षा पूरक है। शिक्षा की एक शाखा से दूसरी शाखा मे जाने के लिए अथवा नौकरियो के लिए अगर डिग्री और प्रमाण-पत्र अनावश्यक हो जायें तो परीक्षा का महत्व घट जायेगा और आज की शिक्षा मे जो भ्रष्टाचार है वह बहुत अ श तक समाप्त हो जायेगा। वैसे बेसिक शिक्षा मे छात्र के व्यक्तित्व का दिन प्रतिदिन मूल्यांकन होना चाहिए नही तो उस के साथ न्याय नही होगा। आन्तरिक मूल्यांकन अधिक से अधिक और बाह्य परीक्षा कम से कम और वह भी आज के ढग की नही एकदम ताजी, यह आज की परीक्षा पद्धति का विकल्प होगा। प्रमाण-पत्र केवल वर्णनात्मक होगा, उसमें पास फेल या डिवीजन नहीं लिखा जायेगा।

शिष्टाचार के मुखौटे में भ्रष्टाचार

मुनिश्री महेन्द्र कुमार प्रथम

प्रतिदिन भ्रष्टाचार बढ़ रहा है। इसके साथ आंखमिचौनी नहीं की जा सकती। पर प्रश्न यह है कि भ्रष्टाचार क्या है? एक ग्वाला दूध में पानी मिलाता है, एक दूकानदार निर्धारित मूल्य से अधिक पैसे लेकर वस्तु बेचता है, कभी-कभी वह मूल्य सूची दुकान पर लटकाना भूल जाता है, या एक सिपाही किसी से दो-चार रुपये रिश्वत ले लेता है—क्या यही भ्रष्टाचार है? चोरबाजारी, जमाखोरी, मिलावट तथा रिश्वत को भ्रष्टाचार के बड़े रूपों में गिना जाता है। इन्हें मिटाने के लिये सार्वजनिक क्षेत्र से कई आन्दोलन चलाये गये, सरकार ने भी अपने कई प्रतिष्ठान स्थापित किये पर, भ्रष्टाचार-रूपी सुरसा का मुंह अब तक भी बन्द नहीं हो पाया है। वह क्रमश फैलता जा रहा है। अन्ततः इसका कारण क्या है? सार्वजनिक क्षेत्र के आन्दोलनों और सरकारी उपक्रमों के विफल हो जाने का परिणाम भी तो भयंकर आ सकता है।

लगता है, भ्रष्टाचार के मूल तक अब भी पहुंचा नहीं जा रहा है। वर्तमान में भ्रष्टाचार को मिटाने के लिए हल्ला अधिक मचाया जा रहा है पर सतह पर उतर कर प्रयत्न कुछ भी नहीं किया जा रहा है। यदि वैसा प्रयत्न होता; तो भ्रष्टाचार को मिटाने में आज पच्चीस वर्ष नहीं लगते, वह क्रमश बढ़ता हुआ भी नजर नहीं आता। ऐसा लगता है, भ्रष्टाचार के विरुद्ध बोलना आजकल फैशन बन गया है। धर्माचार्य भी भ्रष्टाचार के विरुद्ध बोलते हैं, रिश्वत और सिफारिशों के बीच घिरे रहने वाले मन्त्री भी भ्रष्टाचार को कोसते हैं, अनहद शोषण कर के पैसा कमाने वाले उद्योगपति भी भ्रष्टाचार के विरुद्ध झण्डा उठा कर अगुआ हो रहे हैं, सार्वजनिक कार्यकर्ता भी भ्रष्टाचार के विरुद्ध अनशन तक कर बैठते हैं, पत्रकारों की कलम आए दिन होने वाले भ्रष्टाचार की कलई खोलने में पीछे नहीं है, अधिकारियों को तो भ्रष्टाचार का नाम भी अच्छा नहीं लगता और यहां तक कि जन-जन के मुख पर भ्रष्टाचार की खुली निन्दा है। ऐसी परिस्थिति में शायद भ्रष्टाचार को भला-बुरा कह कर सभी उसके फलने-फूलने में परोक्ष सहयोग दे रहे हैं।

बुरा बता देने मात्र से उसकी जड़ें हिलने वाली नहीं हैं। उसके लिए तो व्यवस्था-परिवर्तन के कुछ ठोस आधार खोजने होंगे। भ्रष्टाचार ने अपने पैर इतनी मजबूती से जमा लिए हैं कि मात्र निन्दा करने से पलायन करने वाला नहीं है। इस रोग के प्रतिकार के लिए गहराई से चिन्तन और तदनुकूल प्रयत्न अपेक्षित है। ऊपरी उपचार से यह भयंकर रोग समाप्त होने वाला नहीं है।

भारत में बहुत सारी विदेशी एजेन्सियां प्रच्छन्न काम कर रही हैं। चुनावों तथा अन्य अवसरों पर यहां कुछ संगठनों को करोड़ों रुपये देती हैं और उनके माध्यम से अपने-अपने देश के प्रति सद्भावना बनाये रखने के साथ-साथ भारतीय व्यवस्था को अस्त-व्यस्त भी करती रहती हैं। कुछ देश नहीं चाहते कि भारत अपने पैरों पर खड़ा हो जाए। उनका प्रयत्न है कि वह सैनिक दृष्टि से कमजोर रहे, आर्थिक व्यवस्था लड़खड़ाती रहे, उत्पादन बढ़ने न पाये, महंगाई बढ़ती रहे। खाद्य की दृष्टि से भी आत्म-निर्भर न बने, वैज्ञानिक तथा तकनीकी ज्ञान के क्षेत्र में भी पिछड़ा हुआ रहे, जनता में असन्तोष चरम छोर पर पहुंच जाए, जिससे राजनैतिक अस्थिरता बनी रहे। यह एक ज्वलंत प्रश्न बन जाता है कि क्या उन संगठनों के द्वारा अर्थ के लोभ में भारत की स्वतन्त्रता को उन देशों को गिरवी रखने का यह अनधिकृत प्रयत्न नहीं है? इतने बड़े भ्रष्टाचार की ओर कभी किसी ने अंगुली उठाने का साहस भी किया?

भारत ने जनतन्त्र पद्धति को अपनाया है। तानाशाही यहां के नागरिकों को अभिप्रेत नहीं है। जनतन्त्र पद्धति भी स्वतन्त्र चिन्तन के साथ विकसित हो सकती है। जब उसकी डोर किसी देश के छोर के साथ बांध दी जाती है, तो स्वतन्त्र विकास की सम्भावना समाप्त हो जाती है। मतदाता दस-बीस रुपये लेकर मतदान करता है, उसे अत्यन्त बुरा कहा जाता है और राजनैतिक दल विदेशी एजेन्सियों से करोड़ों रुपये लेकर दूध के नहाये रह जाते हैं, यह चिन्तन का अत्यन्त आवश्यक पहलू है।

राजनैतिक दल भी अपनी विफलता सामने आने पर शासक दल पर अनेक आरोप लगाने लगते हैं। वहां वे दर्पण में अपना मुंह नहीं देखते। साथ ही अन्य दलों के द्वारा होने वाली अनैतिकता भी उन्हें नहीं कचोटती। यह एकांगी दृष्टिकोण जनतन्त्र को स्वस्थ नहीं रहने देता। मतदाताओं में जातीय तथा साम्प्रदायिक भावना भरना, अनेक प्रकार के प्रलोभन तथा दबाव देना, शराब आदि वितरित करना आदि जो बुराइयां हैं, उनसे बढ़कर बुराई है, विदेशी एजेन्सियों से धन लेना और उनके संकेत पर भारत की व्यवस्था को अस्त-व्यस्त करने का प्रयत्न करना। यही कारण है, पच्चीस वर्षों की लम्बी अवधि में भी देश न तो जनतन्त्र को ही प्रशस्त बना पाया है और न किसी दिशा में गतिशील व आत्मनिर्भर ही हो पाया है।

जनतन्त्र में प्रशासन का सम्बन्ध मतदाता से लेकर मन्त्री तथा मुख्य मन्त्री तक जुड़ जाता है। मुख्य मन्त्री वह रह सकता है, जो बहुसंख्यक विधायकों का विश्वास प्राप्त किए रहे। विधायक वह रह सकता है, जो मतदाताओं में अपनी लोकप्रियता कम नहीं होने दे। ऐसी स्थिति में बहुत कुछ मतदाता के हाथ में केन्द्रित हो जाता है। वह विधायक पर उचित-अनुचित दबाव डालता है। विधायक को विवश हो कर उसे मानना पड़ता है। यदि वह नहीं मानता है तो अगले चुनावों में उसे हरी झण्डी दिखाई जा सकती है। मतदाता के प्रस्ताव को क्रियान्वित करने के लिए विधायक सम्बन्धित अधिकारी तथा मन्त्री पर दबाव डालता है। मुख्य मन्त्री भी विधायकों के प्रस्ताव में इतना उलझ जाता है कि प्रान्त की प्रगति की योजनाएं एक ओर रह जाती

→

→

हैं और उसे अपने दल के विधायकों के प्रस्तावों को मूर्त रूप देने के लिए पहल करनी होती है। फिर सम्बन्धित अधिकारियों पर दबाव पड़ता है। वे यदि उन प्रस्ताव को क्रियान्वित कर देते हैं, तो उन्हें स्थानान्तरण के समय अच्छे कार्यालय में भेज दिया जाता है, अन्यथा ऐसे कार्यालय में भेजा जाता है, जहां कि वह स्वत: अकेला पड़ जाता है। कुछ कार्यालय अधिकारियों के लिए कारावास की यन्त्रणा जैसे होते हैं। ऐसी परिस्थिति में नैतिकता में पगे रहने वालों के लिए चारों ओर अन्धेरे के अतिरिक्त कुछ नहीं रहता।

कुछ अधिकारी पहले से ही सावधान होते हैं। वे समझते हैं, विधायक, मन्त्री या मुख्यमन्त्री की सिफारिश पर काम करना होगा, तो क्यों न उस काम को पहले से ही सम्पन्न कर पांचों अंगुलियां घी में ही डाल दी जाएं। सम्बद्ध व्यक्ति उपकार भी मानेगा और रिश्वत में होने वाली आय में भी कमी न होगी। यह भी देखा जाता है कि शासक पक्ष के विधायक द्वारा सुझाया गया काम सुगमता से होता है। विरोधी पक्ष के विधायक के कार्य बहुत समय तक टलते ही रहते हैं। अधिकारियों की पदोन्नति में भी शासक पक्ष के विधायक की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। बहुत बार तो शासक पक्ष के विधायक अपने प्रभाव को व्यापक बनाने के लिए अपने अनुकूल अधिकारियों का सम्बद्ध मन्त्रियों पर दबाव डाल कर अपने चुनाव क्षेत्र में स्थानान्तरण भी करवा लेते हैं। फिर वे उनके माध्यम से जो चाहे, करवाते हैं। क्या कभी इस प्रकार के भ्रष्टाचार के विरुद्ध भी किसी ने आन्दोलन छेड़ा?

अधिकारियों से सम्बद्ध एक अन्य प्रकार का भ्रष्टाचार भी है। पद-यात्रा मेरा जीवन व्रत है, अत: अनेक प्रदेशों के छोटे-बड़े नगरों, देहातों, जिला-मुख्यालयों तथा प्रान्तीय राजधानियों में जाने का अवसर मिला है। सैकड़ों उच्चाधिकारियों एवं अधिकारियों से मुक्त चर्चाएं हुई हैं। उन सब के आधार पर निष्कर्ष यह है—पटवारी को उप-तहसीलदार, उप-तहसीलदार को तहसीलदार, तहसीलदार को उप-जिलाधीश और उप-जिलाधीश को जिलाधीश के घर पर अनाज, फल, शाक सब्जी, दूध, घी आदि दैनिक आवश्यकता की वस्तुएं बिना मूल्य पहुंचानी होती हैं। यहां तक कि किसी को गाय, भैंस रखने का शौक होता है, तो उनके घर बिना मूल्य लिए गाय-भैंस तथा घास-चारे आदि की व्यवस्था भी उन्हें ही करनी होती है। सहज ही निष्कर्ष निकलता है, वे अधीनस्थ अधिकारी उसकी पूर्ति किस प्रकार करते हैं? रिश्वत का यह खुला प्रसाधन जिलाधीश से भी अज्ञात नहीं रहता।

मन्त्रियों को जो वेतन मिलता है, कहा जाता है, वह उनके लिए अपर्याप्त होता है। उनका घरेलू खर्च भी उससे पूरा नहीं चल पाता, जब कि कोठी, कार, कर्मचारी, बिजली-पानी आदि का व्यय सरकारी होता है। कुछ केन्द्रीय तथा प्रांतीय मन्त्रियों ने बतलाया कि चुनाव क्षेत्र से बहुत बार सैकड़ों व्यक्ति अपने-अपने काम लेकर आते हैं। उनका यदि आतिथ्य नहीं किया जाता है, तो वे बुरा मानते हैं। आतिथ्य करने पर उस खर्च की पूर्ति की समस्या खड़ी हो जाती है। समय-समय पर सांसद, विधायक तथा अन्य मित्र भी काफी संख्या में आते रहते हैं। उनका आतिथ्य तो अनिवार्य होता ही है। इस खर्च का सहज अनुमान ही नहीं किया जा सकता। मन्त्रियों की इस दुर्बलता का आभास सुगमता से पूंजीपति लगा लेते हैं। मन्त्रियों की सहानुभूति प्राप्त करने तथा उसे स्थायी बनाये रखने के लिए बहुत सारे पूंजीपति प्रतिमास हजार दो हजार रुपये मन्त्रियों के घर पहुंचाते रहते हैं। पूंजीपति मंत्रियों के लिए प्रतिदिन काम आते हैं और सङ्कटापन्न स्थिति से फिर मन्त्री पूंजीपतियों को उबारते हैं। जो पूंजीपति मन्त्रियों के काम में सहयोगी नहीं होते, वे समय पर बुरी तरह फंस भी जाते हैं और जो सहयोगी होते हैं वे बुरी तरह फंस हुए भी कुशल क्षेम से रह जाते हैं। वे पूंजीपति इस आशंका में कि न मालूम किस समय किस दल की सरकार बन जाए। इसलिए विरोधी दलों के नेताओं को भी प्रतिमास गांठते रहते हैं। इनकी मित्रता का पहला स्थान वित्तमन्त्री तथा वित्त सचिव होते हैं। ये दोस्ती गांठने में कुशल होते ही हैं। बारह महीने प्रतीक्षा में निशान देते हैं। जिस समय बजट प्रस्तुत होने वाला होता है, वित्त मन्त्रियों एवं वित्त सचिवों के सहायकों को अपने साथ मिला लेते हैं और सगुप्त बजट का कोई रहस्य प्राप्त कर लेते हैं। एक दो दिन करोड़ों रुपये स्वयं बटोर लेते हैं और अपने अनन्य मित्रों को भी एक दिन में करोड़पति बना देते हैं। क्या भ्रष्टाचार की जहरीली ग्रन्थियों को नष्ट करने के लिए तथा कभी किसी धर्माचार्य, सार्वजनिक कार्यकर्ता या अन्य किसी ने आवाज उठाई?

कुछ मन्त्रालय ऐसे हैं, जिन्हें एक प्रकार से टकसाल कहा जा सकता है। जिन मन्त्रियों के अधीन वे मन्त्रालय हो गए या इन मन्त्रालयों में जो अधिकारी नियुक्त हो गये कुछ ही दिनों में बिना किसी प्रयत्न के वे लाखों-करोड़ों रुपये सगृहीत करने में सुगमता से सफल हो जाते हैं। ऐसा लगता है, उनके लिए धन छप्पर फाड़ कर बरसता है। लाइसेंस और परमिट प्राप्त करने के लिए उद्योगपतियों को उनके द्वार पर ही पहुंचना होता है। खाली हाथ पहुंचने वालों के लिए वहां प्रवेश निषिद्ध है। लाखों रुपयों की खनक ज्यों ही कान में पड़ती है, अधिकारी और मन्त्री तत्काल तत्पर हो जाते हैं और बिना किसी व्यवधान के उनका वह काम हो जाता है। कुछ लाख रुपये देकर करोड़ों की प्रतिवर्ष आय का लाइसेंस प्राप्त कर लेना क्या घाटे का सौदा है?

लाइसेंस देने में किस प्रकार का न्याय बरता जाता है यह भी छुपा हुआ नहीं है। सरकार को चाहे जितनी हानि उठानी पड़े, मन्त्रियों और अधिकारियों को कोई पीड़ा नहीं होती, यदि कुछ लाख रुपये सम्बन्धित मन्त्री या अधिकारी के घर पहुंच जाते हैं। पूंजीपति दस लाख रुपये यदि इस प्रकार देते हैं तो एक करोड़ अपने लिए पहले से ही सुरक्षित रख लेते हैं। उनका सिद्धान्त होता है, तुम भी खाओ हम भी खाएं। सरकारी योजनाएं पूरी हो पायें या नहीं, इसकी चिन्ता किसे है?

सरकार के प्रति व्याप्त असन्तोष तथा क्षोभ को व्यक्त करने के लिए विरोधी दल समय-समय पर हड़ताल, व धीमे काम करो का अभियान चलाते रहते हैं। ऐसे अवसरों पर छात्रों तथा बेकार युवकों को विशेषत: औजार बनाया जाता है। छात्र तथा युवक

दिल्ली

विकास तथा चुनौतियों का नगर

प्रगति के पथ पर

विगत दो वर्षों के विकास की झाँकी

उद्योग

नरेला में नई विशाल औद्योगिक बस्ती का निर्माण हो रहा है। एक हजार बेरोजगार इंजीनियरो के लिए ८६२ औद्योगिक शेडो का निर्माण।

पांच लाख बेरोजगारों के लिए कारोबार

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत लगभग १६,००० शिक्षित बेरोजगारों को कारोबार देने के लिए ५६ नई योजनाएं प्रस्तावित और कार्यान्वित की गई हैं। ग्रामीण बेरोजगारो के लिए सघन कार्यक्रम चालू किये गये हैं। इस वर्ष २० लाख रुपये की लागत से विशेष रोजगार योजनाए चालू की गई हैं।

शिक्षा

दिल्ली में शिक्षा को कार्य-अनुभव व विज्ञान सम्पन्न बनाने के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रारम्भ किये गये हैं।

हरिजन कल्याण

हरिजन तथा पिछडो जातियो के कल्याण की कई नई योजनाए चलाई है जिन पर चौथी योजना के मूल परिव्यय से दुगुना धन खर्च किया जा रहा है।

चिकित्सा सुविधाएं

सन् १९७३-७४ के दौरान पिछडे तथा झुग्गी-झोपड़ी क्षेत्रों में १० नये औषधालय खोले गये। इस प्रकार अब तक ५० औषधालय खुल चुके है। ५००-५०० बिस्तरों वाले दो अस्पताल निर्माणाधीन है।

किसानों को सुविधाएं

छोटे तथा भूमिहीन किसानो को अनुदान तथा सस्ती दर पर कर्ज देने के लिए 'मार्जिनल फार्मर्स एग्रीकल्चरल लैण्डलैस लेबरर्स एजेंसी' स्थापित की गई है।

पशु सवर्धन के लिए 'वीर्य बैंक' तथा बहुत दूध देने वाली आस्ट्रेलिया की गायों के फार्म की स्थापना की गई है।

दिल्ली की पाचवी पचवर्षीय योजना में अधिकाधिक नागरिक सुविधाए जुटाने, गृह-निर्माण तथा गन्दी बस्तियों की सफाई, बेरोजगारी को समाप्त करने तथा कमजोर वर्गों के कल्याण आदि कार्यक्रमों को प्राथमिकता दी गई है।

दिल्ली को आदर्श राजधानी बनाने में अपना भरसक योगदान करें।

सूचना एवं प्रचार निदेशालय, दिल्ली प्रशासन, दिल्ली द्वारा प्रकाशित

कुछ ही समय में क्रुद्ध हो जाते हैं। वे अपना रोष बमों, डाकघरों, व स्टेशनों को जलाने, दुकानें लूटने, रेल को क्षति पहुंचाने, फैक्टरियों को स्वाहा करने आदि में व्यक्त करते हैं। पुलिस उन पर नियंत्रण करने के लिए लाठी, अश्रुगैस तथा गोली आदि का प्रयोग भी कर लेती है। प्रश्न यह है कि असन्तोष और क्षोभ व्यक्त करने के लिए क्या राष्ट्रीय सम्पत्ति को नष्ट करना चाहिए? बुराई के विरुद्ध क्रांति अपेक्षित हो तो उससे कोई भी मुकर नहीं सकता, पर क्रांति के नाम पर राष्ट्रीय सम्पत्ति को नष्ट कर देना कहाँ तक उचित कहा जा सकता है। जो देश गरीब है। जिसे विदेशों से मांग-मांग कर अपनी बहुत सारी आवश्यकताओं की पूर्ति करनी पड़ती हो, वहां के नागरिक आंदोलन के नाम पर एक ही दिन में करोड़ों-अरबों की सम्पत्ति नष्ट कर देते हों, क्या यह एक प्रकार का स्वैराचार नहीं? मान लीजिए, आंदोलन के फलस्वरूप वर्तमान सरकार अपदस्थ हो जाती है और आंदोलन-कर्ता दल पदारूढ़ हो जाता है, तो उसी दल को उस क्षति को पूर्ण करने में कितना समय, श्रम और साधन जुटाने आवश्यक हो जायेंगे और उसमें कितनी शक्ति का व्यय होगा? विरोधी दल सोचें। उनके विरोध में रचनात्मक रूप होना चाहिए। देश की सम्पत्ति का विनाश नहीं होना चाहिए

संस्थाओं, राजनैतिक दलों के कामों तथा धर्माचार्यों की योजनाओं को आगे बढ़ाने में काले धन वाले सहयोग करते हैं और उसके विनिमय में वे सम्मान, पद तथा बड़ी-बड़ी उपाधियां पाते हैं। एक दूसरे की यह सांठ-गांठ भ्रष्टाचार को बढ़ावा देने में निमित्त बनती है। काला धन देने वाले उन्हीं के माध्यम से शोषण कर फिर काला धन बटोरते हैं और सम्मान पाकर बगुले की तरह उजले भी रह जाते हैं। उनके अहं का पोषण होता रहता है और उनकी शोषण मूलक जहरीली जड़ ज्यों की त्यों हरी रह जाती है। यदि भ्रष्टाचार को समाप्त करना है, तो सार्वजनिक कार्यकर्ताओं, राजनयिकों तथा धर्माचार्यों को काला धन बटोरने वालों से अपनी सांठ गांठ समाप्त करनी होगी और आम जनता के साथ घुलना मिलना होगा। वे ही योजनाएं और कार्यक्रम सफल हो सकेंगे जिनका सीधा सम्बन्ध समाज की व्यापक जनता के साथ जुड़ा हो, काला बाजारियों के साथ नहीं।

आजकल धर्माचार्य, राजनेता तथा सार्वजनिक कार्यकर्ता जनता से कटे हुए नजर आ रहे हैं। जनता के हृदय में उनके लिए जो स्थान होना चाहिए, वह नहीं है। इसका एक मुख्य कारण है काले धन के साथ उनका सीधा सम्बन्ध। समाज को नई करवट देने के लिए यह आवश्यक है कि काले धन वाले

अधिकारी रिश्वत लेते हुए सकुचाता, एक व्यापारी अनहद लाभ से कतराता तथा एक श्रमिक काम से जी चुराने से अपने को बचाता। पर स्थिति उल्टी है। प्रत्येक व्यक्ति अपने घर को भरने में अधिक व्यग्र है, चाहे पड़ोसी को कितनी भी हानि क्यों न उठानी पड़े। यदि राष्ट्रीयता होती, तो भाषा, जाति, सम्प्रदाय तथा प्रान्त के प्रश्न उभर कर सामने न आते। एक सैनिक देश की स्वच्छन्द भूमि की रक्षा के लिए प्राणों का बलिदान दे सकता है पर एक व्यापारी या अधिकारी ऐसे अवसर पर भी अपने घर को भरने की ही सोचता है।

व्यक्ति के स्वार्थ को धर्म ने परमार्थ में बदला था। धर्म ने व्यक्ति को सिखाया था कि *वह स्वयं ही अन्तिम इकाई नहीं है।* उसके परिपार्श्व में भी और कुछ है और उसका विस्तार अनन्त तक है। उसकी दृष्टि स्व के छोटे से घेरे में ही सिमट कर न रह जाए। उसका अनन्त विस्तार हो। वह हुआ भी। व्यक्ति बहुत लम्बे समय तक स्वार्थ से विमुख रहता रहा। किन्तु जब से धर्म ने सम्प्रदाय का मुखौटा लगा लिया, उसकी परमार्थता समाप्त हो गई और जिस दोष से वह समाज को बचाता था, उसी दोष का शिकार वह स्वयं हो गया। उसकी तेजस्विता समाप्त हो गई। आज उसे विकार मुक्त करने में बहुत अधिक प्रयत्न अपेक्षित हो गया

एक चुनौती

अशोक कुमार ढड्ढा

जयप्रकाश नारायण जी के नेतृत्व मे बिहार का जन-आन्दोलन ज्यो-ज्यों जोर पकड़ता जा रहा है, त्यो-त्यो न मालूम क्यों, देश की सत्तारूढ पार्टी के एडी से लेकर चोटी तक के नेताओ मे एक अजीब सी बौखलाहट पैदा होती जा रही है। देश भर मे जहा कही भी इन नेताओ के भाषण, शिविर, सम्मेलन आदि होते हैं उनमे पूरा नही तो आधा समय तो अवश्य ही जयप्रकाशजी के ऊपर गुस्सा उतारने अथवा उस जन आन्दोलन से लोहा लेने के उपाय सोचने मे चला जाता है। शायद पडोसी देशों के समय-समय पर हुए हमलो मे भी ये लोग उतने चिंतित नही हुए होगे जितने आज हैं। यही नही वे लोग किसी भी मूल्य पर जयप्रकाश के द्वारा चलाये जा रहे आन्दोलन को कुचल देना चाहते हैं। इन्दिरा विरोध का तो इस समय यह एक मूलभूत उद्देश्य हो गया है।

• जयप्रकाश जी ने साफ तौर से जाहिर किया है कि वे अपना पूरा समय और शक्ति बिहार शासन मे व्यापक रूप से फैले भ्रष्टाचार रूपी गदगी की सफाई मे ही देंगे, अन्य प्रान्तो के शासको-विधायको मे न जाने क्यो यह भय घर करता जा रहा है कि कही जे.पी इधर न चले आयें। अत जे पी को गिरफ्तार करने एव प्रात मे प्रवेश पर रोक लगाने की अप्रजातांत्रिक माग करने लग गये हैं अथवा विभिन्न सगठनो व लोगो के माध्यम से करवा रहे हैं। क्या जे पी का भ्रष्टाचार आदि को मिटाने का सकल्प इतना 'अक्रांतिकारी' है कि वे जे पी को नम्बर एक का 'दुश्मन' भी समझने लग गये हैं? आजादी के बाद सत्तामोह को त्याग कर जे पी ने समय समय पर जो भी सकल्प एव कदम उठाये हैं, वे इस देश की सस्कृति के अनुरूप और देश की अक्षुणता को बनाये रखने के लिये ही थे और उनके परिणाम शत-प्रतिशत देश के गौरव को बढाने वाले ही साबित हुए हैं।

जो काम हमारे 'इन' शासनकर्ताओ अथवा इनके पूर्वजो को गाधी जी के कहे अनुसार आजादी के साथ ही कर लेना चाहिए था वह क्यो नही किया? गाधी के नाम पर दुहाई दे देकर वोट प्राप्त करके राज्य चलाने और 'घर भरने' तक ही क्यो सीमित रखा? और आज जबकि 'स्वतत्रता सग्राम' के अग्रणी जयप्रकाश जी तथा उनके निकट तम सहयोगियो का एक सगठन, देर से ही क्यो नही, पर एक छोटा सा काम बडी निष्ठता एव बिना किसी प्रकार की लालसा के सत्य, अहिंसा और सयम के साथ करने जा रहा है तो वे प्रजातत्र विरोधी, क्रांति विरोधी प्रतिक्रियावादी आदि नामो से देश मे बदनाम किये जा रहे हैं? क्या यह इस बात का प्रमाण नहीं कि देश के मन मे कहीं चोर घुसा हुआ है। और अब जब जे पी. असली जनतत्र रक्षक के रूप मे सामने आये हैं तो अपनी कलई खुल जाने के भय से ये बुरी तरह घबरा गये हैं। लेकिन यदि इन शासको के मन मे जरा भी खोट नही है तो फिर गांधी जी के बताये 'रामराज्य' को लाने मे जे पी के साथ कधे से कधा भिडाकर काम करने से क्यों हिचकिचा रहे हैं? ४

"बीकानेर के खादी ग्रामोद्योग प्रतिष्ठान में लगी एक हजार की पूंजी एक परिवार को रोजगार देती है, जबकि भारत सरकार के अन्य किसी भी उद्योग में १५ से ५० हजार तक की पूंजी लगाने पर भी एक व्यक्ति को काम मिलता है।"

श्री जगजीवन राम
केन्द्रीय रक्षामंत्री

खादी ग्रामोद्योग प्रतिष्ठान बीकानेर (राजस्थान)

साहित्य आन्दोलन के साथ जाये

प्रकाशन सयोजक का पत्र

प्रिय महोदय,

विचार प्रचार और विचार शिक्षण का सबसे बड़ा सम्बल साहित्य है। आन्दोलन मे गति आये—इसके लिए अधिक से अधिक सर्वोदय साहित्य समाज मे बसनेवाले प्रत्येक प्रबुद्ध नागरिक के हाथ जायें। शहरो मे वकील, डाक्टर, व्यापारी, सरकारी कर्मचारी शिक्षक और छात्रो के हाथ किताबें पहुचें, इसकी योजना बनानी चाहिए। सर्वोदय पर्व सामने है। ११ सितम्बर से २ अक्तूबर तक पूरी शक्ति के साथ प्रत्येक शहर मे इसका आयोजन किया जाय। देश की खादी संस्थाओ ने आधा परसेन्ट अपने कास्ट चार्ट मे बढाकर इस रकम का उपयोग—सर्वोदय साहित्य के व्यापक प्रचार हेतु साहित्य पर विशेष छूट देने का निर्णय किया है। जिन-जिन प्रान्तो मे यह आधा परसेन्ट कास्ट चार्ट मे नही जुडा है वहा तत्काल यह कार्य पूरा करवाना चाहिए। आज पैसे के अभाव मे कार्यकर्ताओ की कमी होगयी है। इस योजना से कई जिलो मे सक्षम कार्यकर्ताओ की प्राप्ति हुई है। इस योजना के अन्तर्गत खादी संस्थाएं कार्यकर्ता को ४० से ५० प्रतिशत तक कमीशन देती है इसमे सक्षम कार्यकर्ताओ को आसानी से २०० से ३०० रुपये मासिक की आय हो जाती है। विचार प्रचार भी होता है, लोगो से सम्पर्क और मिलन भी होता है आन्दोलन भी आगे बढ़ता है। जिले मे जितने सर्वोदयी-जन है—उतने कार्यकर्त्ता तो आसानी से खडे किये जा सकते हैं। चूं कि प्रान्तीय सर्वोदय मण्डल और जिला सर्वोदय मण्डल पूजी की रकम जमाकर साहित्य का स्टाक रखते हैं—कार्यकर्त्ताओं को सहूलियत पहुचाते हैं इसलिए कार्यकर्त्ताओं की त्रैमासिक बैठकें भी कर सकते हैं और आन्दोलन की मुख्य कड़ी, साहित्य प्रचार के मार्फत खडी कर सकते हैं।

सर्व सेवा संघ प्रकाशन समिति की बैठक ब्रह्म विद्या मंदिर पवनार मे १२ जुलाई को हुई थी। कुछ देर के लिए प्रकाशन समिति पू० बाबा के निकट भी बैठी थी। उस बैठक मे साहित्य प्रचार और बिक्री सम्बन्धी अनेक योजनाओं पर विस्तार मे चर्चा हुई और निम्नलिखित मुद्दे तय किये गये —

(क) आन्दोलन मे लगे ६० प्रतिशत कार्यकर्त्ताओं को साहित्य प्रचार कार्य में जरूरी मदद नही मिल रही है। उनसे भी सहयोग लेने का वातावरण बनाया जाय। विभिन्न सम्मेलनो अधिवेशनों, गोष्ठियो, और प्रबन्ध समिति की बैठको मे समय-समय पर इसमे अवगत कराया जाय तथा साहित्य प्रचार को एक विषय के रूप मे रखा जाय।

(ख) १—पदयात्राओ मे विचार-प्रचार हेतु साहित्य की बिक्री की जाय।

२—जिला सर्वोदय मण्डलों और प्रान्तीय सर्वोदय मण्डलो द्वारा स्थानीय स्रोतो से पूंजी खडी कर साहित्य का स्टाक रखा जाय और उसकी बिक्री की योजनाएं बनायी जाय। ऐसा सुझाव मण्डलों को दिया जाय।

(ग) अपने देश म २ लाख से ऊपर की आबादी वाले शहर की सख्या ६७ है और धार्मिक नगर ३५-४० हैं। इन १०० नगरो मे सघन साहित्य प्रचार का आयोजन किया जाय। इसके अलावा छात्रो, मजदूरो और मिल मालिको के माध्यम से साहित्य बिक्री का अभियान चलाया जाय।

(घ) संशोधित नमूना योजना स्वीकार की गयी —

१—इस योजना के अनुसार १२ रुपये की पुस्तकें १० रुपये की वी० पी० द्वारा भेजी जाय और प्रति सदस्य ५० पैसे प्रति वी० पी० उस कार्यकर्त्ता के नाम जमा किया जाय जिसने सदस्य बनाया।

२—२० रुपये की पुस्तकें १६ रुपये की वी० पी० द्वारा भेजी जाय और प्रति सदस्य एक रुपया प्रति वी० पी० उस कार्यकर्त्ता के नाम जमा किया जाय जिसने सदस्य बनाया। इस योजना के अधिकाधिक ग्राहक बनें इस ओर अपनी शक्ति लगनी चाहिए।

३—साथ ही साथ हर वर्ष की तरह इस वर्ष भी सर्वोदय पर्व को सफल बनाने की कार्यवाई की जाय।

अतः आपसे साग्रह निवेदन है कि जल्द से जल्द सभी जिला सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष मत्री अपने प्रान्तीय सर्वोदय मण्डल के कार्यक्रमो को जोडते हुए एक बैठक बुलायें और विस्तार से चर्चा करें। आशा है इस पुनीत कार्यक्रम मे लग जायेंगे। इस प्रयत्न से फिर एक बार साहित्य के मार्फत समूचे प्रान्त मे आन्दोलन के लिए कार्यकर्त्ताओं को अपने पैर पर खड़ा कर सकेंगे। एक खयाल रहे कि सर्वोदय पर्व के पहले कार्यक्रम बने तो दोनो काम एक साथ हल हो सकेंगे। महिला पदयात्रा का कार्यक्रम सर्वोदय पर्व के अवसर पर अवश्य किया जाय।

कृष्णराज मेहता

अंतर्ध्वनि

हे नम्रता के सम्राट !
दीन भंगी की हीन कुटिया के निवासी !
गंगा, यमुना और ब्रह्मपुत्र के जलों से सिंचित
इस सुन्दर देश में
तुझे सब जगह खोजने में हमें मदद दे।
हमें ग्रहणशीलता और खुला दिल दे,
हिन्दुस्तान की जनता से
एकरूप होने की शक्ति और उत्कंठा दे।
हे भगवन् !
तू तभी मदद के लिये आता है,
जब मनुष्य शून्य बनकर तेरी शरण लेता है।
हमें वरदान दे,
कि सेवक और मित्र के नाते
जिस जनता की हम सेवा करना चाहते है,
उससे कभी अलग न पड जायें।
हमें त्याग, भक्ति और नम्रता की मूर्ति बना,
ताकि इस देश को हम ज्यादा समझें
और ज्यादा चाहें !

महात्मा गांधी

वार्षिक शुल्क—१५ रु० विदेश ३० रु० या ३५ शिलिंग या ५ डालर, इस अंक का मूल्य ६० पैसे।
प्रभाष जोशी द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं एन० जे० प्रिंटर्स, नई दिल्ली-१ में मुद्रित।